पुस्तक संख्या 8 खण्ड X से XII -06 अक्टूबर,1949 से 24 जनवरी,1950

खण्ड X से XII (क) पुस्तक संख्या-8 दिनांक 06.10.1949 से 17.10.1949

भारतीय संविधान सभा

(भारतीय विधान परिषद)

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली द्वारा पुनर्मुद्रित

Con. 3. X.10.49
320

अंक 10

संख्या 10

सोमवार
17 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट
(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
सदस्यों के भत्ते सम्बन्धी प्रस्ताव	3333-3338
संविधान का मसौदा-(जारी) [अनुच्छेद 59, 62, 147, 175, 13 तथा अनुच्छेद 302 ककक, अनुसूची 3 क, भाग 18, अनुच्छेद 315, 306 क, और प्रस्ताव पर विचार]	3338-3448

भारतीय संविधान सभा

सोमवार, 17 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रात: 9 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत् हुई।

सदस्यों के भत्ते संबंधी प्रस्ताव

***अध्यक्ष:** सबसे पहले श्री मुनिस्वामी पिल्ले के प्रस्ताव को हम लेंगे।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपकी अनुज्ञा से मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि भारतीय संविधान सभा के सदस्यों के भत्तों को शासित करने वाले नियमों में निम्नलिखित संशोधन किये जायें:

'(1) That in rule (D), relating to daily allowance, in paragraph 4 of the Handbook for members, and in paragraph 8 (relating to allowances admissible to members residing at the place where the Assembly meets) of the said Handbook, for the figure, brackets and words 'Rs. 45 (Rupees forty-five)', The figure, brackets and words 'Rs. 40 (Rupees forty)' be substituted.

(2) That exception (c) to Note 1 under rule (A) in paragraph 4 of the Handbook for members, be deleted.'

[(1) कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में दैनिक भत्ते संबंधी नियम (घ) में और उपरोक्त गुटका की कंडिका 8 में (जो उन भत्तों के संबंध में है जो सभा समवेत् होने के स्थान में रहने वाले सदस्यों को ग्राह्य हैं) 'Rs. 45 (Rupees forty-five)' संख्या, कोष्ठक और शब्दों के स्थान में 'Rs. 40 (Rupees forty) संख्या कोष्ठक और शब्द रखे जायें।

(2) कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में नियम (क) के अधीन टिप्पणी 1 का अपवाद (ग) अपमार्जित किया जाये।]"

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

श्रीमान, कुछ कारणवश इस प्रस्ताव को सभा के सामने लाया गया है। इस महान सभा का प्रत्येक सदस्य भारत की वर्तमान सामान्य आर्थिक स्थिति से परिचित है तथा वर्तमान वित्तीय संकट से भी परिचित है। समस्त देश में इस बात की चीख पुकार मची हुई है कि सरकार को मदद करने के लिये इधर-उधर से कुछ बचत करनी चाहिये। यह जो संशोधन मैंने पेश किया है उसमें ये बात है कि दैनिक भत्ते के रूप में जिन सदस्यों को 45 रुपये प्रति दिन पाने का हक है वे उसमें से 11 प्रतिशत छोड़ देंगे और इस प्रकार वह 40 रुपये रह जायेगा। यद्यपि मैं यह मानता हूं कि यह एक छोटा-सा त्याग है। आज जो आर्थिक स्थिति वर्तमान है उसको सुधारने के लिये इस महान निकाय को देश के समक्ष एक मार्ग प्रदर्शन करना है।

श्रीमान, यह 40 रुपये की राशि, जिसे हम अपने दैनिक भत्ते के रूप में कम करके रखने का प्रस्ताव कर रहे हैं हमारा वेतन नहीं है। यह विषय कर्मचारी-वृन्द और वित्त समिति के सामने आया था और इस समिति के सदस्यों ने यह सोचा कि इस विषय को संविधान सभा के समक्ष रखा जाये। सदस्य स्वेच्छापूर्वक अपने दैनिक वेतन में से 11 प्रतिशत की कमी कर रहे हैं। इस महान सभा के कई सदस्यों से मैंने बातें कीं और मुझे विदित हुआ कि वे सब इस विचार से सहमत थे कि दैनिक भत्ते में से पांच रुपये की कमी से कोई कठिनाई नहीं होगी। ऐसी दशा में मैं आशा करता हूं कि सदस्यों के दैनिक वेतन को 45 रुपये से घटा कर 40 करने में यह सभा अपनी सम्मति देगी।

मेरे संशोधन का दूसरा भाग यह है कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में के नियम (क) के अधीन टिप्पणी 1 के अपवाद (ग) को अपमार्जित किया जाये। मद्रास से आने के कारण मैं जानता हूं कि दिल्ली से बलहरशाह तक तथा बलहरशाह से दिल्ली तक गाड़ी में उपाहार के लिये एक डिब्बा लगाने का प्रबन्ध है। इस प्रबन्ध से सदस्यों को भोजन तथा अन्य बातों में कुछ सुविधा मिलती है। एक बार यह समझा गया था कि इस उपाहार के लिये लगाये गये डिब्बे में अधिकतर पाश्चात्य ढंग की मांगों की पूर्ति नहीं होती है। पर वर्तमान प्रबन्ध जो अधिकांश रूप में भारतीय ढंग का है वह शाकाहारी तथा मांसाहारी दोनों प्रकार के भोजनों की व्यवस्था करता है। मेरी राय से दिल्ली से मद्रास और वापसी यात्रा के लिये किया गया यह प्रबन्ध संतोषजनक है। बलहरशाह से मद्रास तक प्रबन्ध पूर्णतया संतोषजनक नहीं है, क्योंकि बलहरशाह पर उपाहार का डिब्बा काट दिया जाता है। पर मार्ग में प्रथम कोटि के उपाहारगृह मिलते हैं और प्रत्येक महत्वपूर्ण स्टेशन पर भोजन का प्रबन्ध करने वाले सेवक यात्रियों से मिलते हैं और उनसे आदेश प्राप्त कर व्यालू तथा अन्य बातों का प्रबन्ध या तो गाड़ी ही में या गाड़ी के रुकने के स्थानों पर करते हैं।

अत: नियमों में ये दो परिवर्तन आवश्यक हैं और मैं आशा करता हूं कि सदस्य इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से स्वीकार करेंगे।

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव पर श्री शंकरराव देव ने एक संशोधन की सूचना दी है।

*श्री **शंकरराव देव** (बम्बई : जरनल): श्रीमान, मैं अपने संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं।

*श्री **एच.जे. खांडेकर** (सी.पी. और बरार : जनरल): सभापति महोदय, मैंने श्री मुनिस्वामी पिल्ले जी के इस मोशन पर एक अमेंडमेंट भेजी है उसे मैं पेश करता हूं और वह इस तरह है। श्री मुनिस्वामी जी का मोशन है कि इस असेम्बली के सदस्यों को जो 45 रुपये रोज का डेली अलाउंस मिलता है उसके बजाय 40 रुपया मिले। मैंने श्री मुनिस्वामीजी के इस मोशन पर कि 40 रुपया मिले यह अमेंडमेंट भेजी है कि 40 रुपये के बजाय इस हाउस के हर सदस्य को 20 रुपया रोजाना भत्ता मिले। मेरी इस अमेंडमेंट के भेजने का खास कारण है, वह यह कि जब हम इस देश को स्वतंत्रता प्राप्त कराने के लिये लड़ते थे उस वक्त हममें से हर एक व्यक्ति ने और इस देश के लाखों और करोड़ों व्यक्तियों ने इस देश को स्वतंत्र बनाने के लिये जितना चाहिये उतना त्याग किया। और त्याग करने के बाद महात्मा जी की कृपा से हमें स्वराज्य मिला और हमने इस देश को स्वतंत्र बनाया। स्वतंत्र बनाने के बाद, सभापति जी, इस देश में इस प्रकार का वातावरण पैदा हुआ कि जो कोई भी स्वतंत्रता की लड़ाई में भाग लेने वाला था वह हर आदमी अब यह चाहता है कि मैं कुछ न कुछ ज्यादा कमाऊं और अब मैं अपना जीवन सफल और सुखी करूं। परन्तु स्वतंत्रता मिलने के बाद भी उसको निभाने के लिये इस देश के हर एक व्यक्ति को त्याग करने की जरूरत है। अगर हम इस देश की स्वतंत्रता निभाने के लिये त्याग न करें और आज जो देश की परिस्थिति है यही परिस्थिति आगे चलती रही तो मुझे डर मालूम होता है कि देश की स्वतंत्रता कब तक ठीक रहेगी और कब तक टिकेगी। देश की सरकार की आर्थिक दशा भी बहुत बुरी होती जा रही है और इसलिये उस आर्थिक दशा को दुरुस्त करने के लिए जितना ज्यादा हो उतना ज्यादा त्याग करना चाहिये।

हम तो पहले ही सब त्यागी पुरुष हैं। श्री शंकरराव देव जी ने अपनी अमेंडमेंट मूव नहीं की। मैं चाहता था कि वे मूव करते और उन जैसे आदमी को, जो सात हाथ धोती नहीं पहनते, कुरता और टोपी भी नहीं पहनते उन्होंने जो अमेंडमेंट भेजी है वह खास उनके लिये ठीक नहीं थी। उनकी अमेंडमेंट तो ऐसी होनी चाहिये थी कि इस हाउस के सदस्य को एक पैसा भी नहीं लेना चाहिये। वह तो बैचलर हैं, यानी उनकी शादी नहीं हुई। दूसरे, उनके कोई घर और द्वार नहीं है। तीसरे, वह जो कपड़ा पहनते हैं वह मेरे जैसा नहीं हैं। मैं तो उन्हें महान् त्यागी पुरुष कहूंगा। इतना ही नहीं, वह तो बैरागी हैं। ऐसे बैरागी और त्यागी पुरुष को इस तरह की अमेंडमेंट भेजना ठीक नहीं था।

*श्री **एम. सत्यनारायण** (मद्रास : जनरल): मैं पूछना चाहता हूं कि क्या इस तरह किसी व्यक्ति के बारे में कहा जा सकता है?

श्री एच.जे. खांडेकर: नहीं, नहीं। मैं तो उनकी तारीफ कर रहा हूं। मैं तो उन्हें त्यागी, बैरागी, सब कुछ कह रहा हूं। उनके खिलाफ तो मैं कुछ भी नहीं कह रहा हूं। मैं तो यही कहना चाहता हूं कि उन जैसे नेता को इस प्रकार की अमेंडमेंट लानी थी कि हम में से किसी को भी एक पाई नहीं लेनी चाहिये। मैं यही कहना चाहता हूं।

[श्री एच.जे. खांडेकर]

लेकिन मैं तो घरबारी आदमी हूं, मैं कपड़े पहनने वाला हूं, मेरे बाल बच्चे हैं, मेरे मकान हैं और मेरा संसार है। इसलिये मैं तो कुछ न कुछ लेना चाहूंगा। लेकिन उसके साथ-साथ कुछ त्याग भी करना चाहूंगा। तो इन दोनों बातों को मद्देनजर रखते हुए मैंने ऐसी अमेंडमेंट पेश की है कि इस हाउस के हर सदस्य को जो मेरे जैसा है और शंकरराव जी जैसा नहीं है उसको कम से कम 20 रुपये डेली अलाउंस लेना चाहिये। इन शब्दों के साथ, सभापति जी, मैं कहना चाहता हूं कि मेरा जो यह अमेंडमेंट है वह बहुत रीजनेबुल है और हर सदस्य को जिसने आज तक इतना त्याग किया है उसे आगे भी त्याग करने की कोशिश करनी चाहिये और त्यागियों के लिये मेरी ही अमेंडमेंट ठीक है ऐसा मेरा विश्वास है। हर त्यागी को इसे पसन्द करना चाहिये।

त्याग की बातें तो हम इस सभागृह के बाहर हर इन्सान से और हर व्यक्ति से, इस असेम्बली के सदस्यों से और कांग्रेस मंच से सुनते हैं और हमारे नेतागण यह कहा करते हैं कि हमको देश के लिये जितना ज्यादा हो सके उतना अधिक त्याग करना चाहिये। लेकिन अगर हम मुनिस्वामी पिल्ले जी की इस अमेंडमेंट को जिसमें सिर्फ पांच रुपये का त्याग है—इससे ज्यादा का त्याग तो उसमें है नहीं—हम स्वीकार करें तो यह इस हाउस के बड़े-बड़े सदस्यों के लिये बहुत अच्छी बात नहीं है। यह आपके योग्य त्याग नहीं है और अगर आप देहात में जायेंगे और कहेंगे कि हमने अपनी आमदनी में से 5 रुपये रोज का त्याग किया है तो सब लोग हंसेंगे।

*__श्री शंकरराव देव__ (बम्बई : जनरल): क्या इस प्रश्न पर वाद-विवाद करना आवश्यक है?

*__श्री एच.जे. खांडेकर:__ श्रीमान, अब मैं अपने भाषण को समाप्त कर रहा हूं। इसलिये, सभापति जी, मेरी जो अमेंडमेंट है वह बहुत ठीक है और मैं आशा करता हूं कि इस अमेंडमेंट को हाउस मंजूर करेगा।

(श्री आर.के. सिधवा भाषण देने के लिये खड़े हुये।)

*__अध्यक्ष:__ क्या कोई वाद-विवाद आवश्यक है?

*__माननीय सदस्यगण:__ इस विषय पर अब मत लिया जाये।

*__श्री आर.के. सिधवा__ (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान, इस प्रस्ताव का मैं हार्दिक समर्थन करता हूं जिसको..........

*__अध्यक्ष:__ इस वाद-विवाद से क्या लाभ?

*__श्री आर.के. सिधवा:__ श्रीमान, केवल एक बात जिसे मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि यह कमी स्वेच्छापूर्वक होनी चाहिये। मंत्री स्वेच्छापूर्वक कमी कर रहे हैं। हम सर्वसम्पति से यह घोषणा कर सकते हैं कि हम भी 5 रुपये प्रति

दिन छोड़ देंगे। नियमों में संशोधन करने तथा इसे अनिवार्य बनाने की अपेक्षा यह अधिक अच्छा होगा। और कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा का आशय यह है कि नियमों में संशोधन करने की बजाय इसे एक संकल्प के रूप में रहने दीजिये जिसका प्रत्येक सदस्य पालन करेगा। उनका आशय यह है कि नियमों के संशोधन द्वारा इसे अनिवार्य बनाने की बजाय इसे संकल्प के रूप में रहने दिया जाये जिसे प्रत्येक सदस्य स्वीकार कर लेगा।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** श्री खांडेकर द्वारा पेश किये गये संशोधन पर क्या मैं कुछ शब्द कह सकता हूं। जहां तक श्री सिधवा की बात का संबंध है एक संकल्प का व्यवहार में वही अर्थ होता है।

***अध्यक्ष:** कार्यालय बिल किस प्रकार बनायेगा?

***श्री आर.के. सिधवा:** संकल्प के आधार पर।

***अध्यक्ष:** जी नहीं, स्वेच्छित संकल्प के आधार पर कार्यालय बिल नहीं बना सकता। जब तक कि सम्बद्ध सदस्य लिखित रूप में न दे। क्या यहां के प्रत्येक सदस्य के लिये आप ऐसा कर सकते हैं? प्रत्येक सदस्य को व्यक्तिगत रूप से ऐसा करना पड़ेगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** मंत्रियों के वेतन एक अधिनियम द्वारा अधिनियमित हैं। उस अधिनियम का संशोधन नहीं किया गया है। फिर भी कटौती स्वेच्छापूर्वक की गई है। इस दशा में भी ऐसी ही प्रक्रिया स्वीकार कर लेनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** मंत्री संख्या में बहुत कम हैं और सब इस बात को लिख कर दे सकते हैं। परन्तु हम यहां पर 300 से भी अधिक हैं। हम सब यहां उपस्थित भी नहीं हैं।

***सेठ गोविन्द दास** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): एक बात और है, हमारे बहुत से सदस्य यहां नहीं हैं। इस कारण सभा को ही इस प्रश्न पर विनिश्चय करने दीजिये।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** श्रीमान, इन नियमों को इस सभा ने बनाया था और मैं समझता हूं कि यही ठीक है कि एक प्रस्ताव पेश किया जाये और वह पारित किया जाये। श्री खांडेकर इस प्रश्न का उल्लेख कर रहे थे कि सदस्यों को क्या कोई अतिरिक्त व्यय मिलता है। मैं भी यह समझता हूं कि यह बात संगत है। इस सभा में हमने जब मूल प्रस्ताव स्वीकार किया था तो किसी व्यक्ति विशेष का न कोई संबंध था न उल्लेख किया गया था। कुछ सदस्य ऐसे थे जिनके परिवार तथा सेवक यहां थे। इस प्रकार बहुत खर्च वाली दो व्यवस्थायें उनकी थीं। जिस समय नियम बनाये गये थे सत्ता ने सर्वसम्मति से 45 रुपये भत्ता स्वीकार किया था अब इस प्रस्ताव द्वारा उसमें से 5 रुपये कम करके 40 रखने का प्रयास किया जाता है और बम्बई होकर चक्करदार मार्ग के बजाय तथा इस प्रकार सरकार से अधिक रुपया देने की बजाय हम सबसे छोटे मार्ग के लिये व्यवस्था कर रहे हैं और जो राशि वास्तव में है उसे देने की व्यवस्था कर रहे हैं।

***अध्यक्ष:** सबसे पहले मैं श्री खांडेकर के संशोधन पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि नियम (घ) और कंडिका 8 पर के संशोधन में प्रस्थापित 'Rs. 40 (Rupees forty)' संख्या, कोष्ठक और शब्दों के स्थान में 'Rs. 20 (Rupees twenty)' संख्या, कोष्ठक और शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि भारतीय संविधान सभा के सदस्यों के भत्तों को शासित करने वाले नियमों में निम्नलिखित संशोधन किये जायें:

'(1) That in rule (D), relating to daily allowance, in paragraph 4 of the Handbook for members, and in paragraph 8 (relating to allowances admissible to members residing at the place where the Assembly meets) of the said Handbook for the figure, brackets and words 'Rs. 45 (Rupees forty-five)' the figure, brackets and words 'Rs. 40 (Rupees forty)' be substituted.

(2) That exception (c) to Note 1 under rule (A) in paragraph 4 of the Handbook for members, be deleted.'

[(1) कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में दैनिक भत्ते संबंधी नियम (घ) में और उपरोक्त गुटका की कंडिका (8) में (जो इन भत्तों के संबंध में हैं जो सभा समवेत् होने के स्थान में रहने वाले सदस्यों को ग्राह्य हैं) 'Rs. 45 (Repees forty five)' संख्या, कोष्ठक और शब्दों के स्थान में 'Rs. 40 (Rupees forty)' संख्या, कोष्ठक और शब्द रखे जायें।

(2) कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में नियम (क) के अधीन टिप्पणी 1 का अपवाद (ग) अपमार्जित किया जाये।]"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संविधान का मसौदा–(जारी)

अनुच्छेद 59

***अध्यक्ष:** इसके बाद हम कार्यावली के अनुच्छेदों पर विचार करना आरम्भ करेंगे। अनुच्छेद 59 संशोधन संख्या 445।

***माननीय श्री के. सन्तानम** (मद्रास: जनरल): क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि हम उन अनुच्छेदों को लें जिन पर संशोधन कुछ समय पहले घुमा दिये गये थे। ये संशोधन तो हमें आज सुबह ही दिये गये हैं।

***अध्यक्ष:** सदस्यों में ये कल सायंकाल को, जब कि हम सभा में बैठे हुए थे, बांट दिये गये थे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 59, 62, 141, 175 और 13 पर संशोधनों का अर्थ यह होगा कि जो अनुच्छेद पास हो चुके हैं उनको फिर से लिया जाये। क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि सभा की अनुज्ञा ले ली जाये?

***अध्यक्ष:** क्या इन अनुच्छेदों को फिर से ले लेने के लिये सभा अनुमति देती है।

***माननीय सदस्यगण:** जी हां।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 59 के खंड (1) के उपखंड (ख) के स्थान में निम्नलिखित उपखंड रखा जाये:

'(b) in all cases where the punishment or sentence is for an offence under any law relating to a matter to which the executive power of the Union extends;

[(ख) उन सब अवस्थाओं में जिनमें कि दंड अथवा दंडादेश ऐसे विषय सम्बन्धी किसी विधि के अधीन अपराध के लिये दिया गया हो जिस विषय तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है;]"

मूल अनुच्छेद 59 का उपखंड (ख) जो राष्ट्रपति की क्षमा प्रदान करने की शक्ति के संबंध का है वह इस प्रकार है:

"(ख) उन सब अवस्थाओं में जिनमें कि दंड अथवा दंडादेश ऐसे विषय संबंधी किसी विधि के अधीन अपराध के लिये दिया गया हो जिस विषय के लिये विधि बनाने की शक्ति संसद को है और उस राज्य के विधान मंडल को नहीं है जिसमें कि अपराध किया गया हो।"

इसका अर्थ यह है कि समवर्ती क्षेत्र एक बहुत ही अस्पष्ट स्थिति में छोड़ दिया जायेगा। अनुच्छेद 60 में यह उपबंध किया गया है कि जिन विषयों के लिये संसद ऐसा विनिश्चित करे उन विषयों में संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार समवर्ती क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले विषयों के संबंध में राज्यों तक होगा। यह

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

स्थिति अस्पष्ट रह जायेगी। अत: इस संशोधन द्वारा इस दोष के निराकरण का प्रयत्न किया गया है और राष्ट्रपति के क्षमा करने की शक्ति का विस्तार उन सब विषयों तक कर दिया है जिन तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है।

अनुच्छेद 141 में, जिसमें कि राष्ट्रपति को क्षमा करने की शक्ति दी गई है, एक आनुषंगिक संशोधन करना पड़ेगा जिसे मैं, यदि सभा द्वारा यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो, अभी पेश करूंगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** श्रीमान इस पर मैंने एक संशोधन रखा है। पर मैं इसे इस समय से पूर्व न भेज सका।

मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 20 के संशोधन संख्या 445 में अनुच्छेद 59 के खंड (1) के प्रस्थापित उप-खंड (ख) में 'offence under any law' शब्दों के पश्चात् 'made by Parliament' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन संख्या 445 के प्रयोजन को मैं समझता हूं, पर वह अपने उद्देश्य से भी अधिक व्यापक हो गया है। क्योंकि संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार संसद द्वारा निर्मित विधियों तक ही नहीं होता है वरन् राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई हुई कुछ विधियों तक भी होता हे। उदाहरणार्थ अनुच्छेद 234 और 234 क में, जो निदेश देने के संबंध में हैं, संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार राज्य के विधान मंडल द्वारा निर्मित विधियों तक है। कल वित्त संबंधी आपात के विषय में हमने यह उपबंध किया है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार उन विषयों तक है जिनका संबंध मुद्रा विधेयकों तथा वित्तीय विषयों से है। हम यह नहीं चाहते हैं कि राज्य के विधानमंडल द्वारा निर्मित विधि के अधीन अपराधों की अवस्था में क्षमा करने का अधिकार राष्ट्रपति को हो। इस कारण मैं इसे संसद द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन अपराधों तक ही समिति रखना चाहता हूं। बात यह है कि जब संसद कोई विधि समवर्ती सूची के अधीन बनाती है और संघ की कार्यपालिका को कार्यपालिका शक्ति दे देती है तब तो क्षमा की शक्ति राष्ट्रपति को होनी चाहिये। परन्तु राष्ट्रपति को क्षमा करने का अधिकार हम नहीं देना चाहते हैं चाहे कार्यपालिका शक्ति का विस्तार राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधियों तक हो। अत: मैं समझता हूं कि संशोधन बहुत अधिक व्यापक है और मैं उसे संसद द्वारा निर्मित विधियों तक सीमित रखना चाहता हूं।

मसौदा समिति जो कि बहुत थकी हुई है जल्दी में बनाये हुए संशोधनों को पुन:स्थापित करने का प्रयास कर रही है। न तो जांच करने का उसके पास समय है और न हमारे पास ही।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान् औचित्य प्रश्न पर क्या मैं यह कह सकता हूं कि माननीय सदस्य को अपने प्रति कहने का पूर्ण अधिकार है। उनके पास समय नहीं था, हम इस बात से सहमत हैं। पर यह कह कर कि मसौदा समिति के पास जांच करने के लिए समय नहीं था, मैं नहीं समझता हूं, कि उन्हें मसौदा समिति की निन्दा करनी चाहिये। यदि इन संशोधनों की जांच करने का समय हमारे पास नहीं होता तो हम इन्हें प्रस्तुत न करते।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई : जनरल): यह कहना कि मसौदा समिति के पास समय नहीं था मसौदा समिति की किसी प्रकार से निन्दा करना नहीं है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** उनके उद्देश्य या योग्यता के प्रति मैं शंका नहीं कर रहा हूं, मैं तो केवल यह कह रहा हूं कि वे जल्दी में हैं जो कि एक सच बात है।

***अध्यक्ष:** अब हम खंडों की समाप्ति पर हैं और चार या पांच खंडों पर हमें झगड़ा नहीं करना चाहिये।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** पर जो संशोधन प्रस्तुत किये गये हैं उनमें से कुछ ऐसे सारवत् विषय के हैं कि मैं समझता हूं कि उन पर देर तक वाद-विवाद करना होगा। श्रीमान् इस विषय को मैं आप पर छोड़ता हूं, परन्तु जहां तक इस वर्तमान विषय का संबंध है, मैं समझता हूं कि "made by Parliament" शब्द अर्थ को स्पष्ट तथा ठीक करने के लिए नितान्त आवश्यक है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, मेरे मित्र श्री सन्तानम द्वारा पेश किया गया संशोधन बिल्कुल अनावश्यक है। चूंकि वे अनुच्छेद 60 में दिये गये उपबन्धों को ध्यान में रखना भूल गये इस कारण उन्होंने यह पेश किया है। अनुच्छेद 60 में यह कहा गया है कि संघ की कार्यपालिका का विस्तार उन सब विषयों तक होगा जिनके लिये संसद को विधियां बनाने की शक्ति है, परन्तु जब तक संसदीय विधि इस प्रकार उपबंधित न करे उसका विस्तार उन विषयों तक इस प्रकार से नहीं होगा जिनके सम्बन्ध में विधि बनाने की शक्ति राज्य के विधान मण्डल को भी है अर्थात् समवर्ती सूची के विषयों तक। अत: अनुच्छेद 59 के खंड (1) के उप-खंड (ख) में जो संशोधन मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने पेश किया है वह संसद की विधि बनाने की शक्ति से परे नहीं जा सकता है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** इस अनुच्छेद में केवल उन्हीं विधियों तक सीमित रखने की बात नहीं कही गई है, उसका और आगे तक भी विस्तार हो सकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** नहीं, उसका और आगे तक विस्तार नहीं हो सकता है। उपखंड (ख) में संशोधन करने की यह आवश्यकता है कि केन्द्र की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार केवल सूची 1 में दिये हुए विषयों तक ही

[माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर]

नहीं है वरन् सूची 3 में दिये हुए विषयों तक भी है। और मसौदा समिति की स्थिति यह है कि जब कभी संसद द्वारा कोई विधि बनाई जाती है तो सूची 3 में दिये हुए किसी विषय के सम्बन्ध में यदि वह विधि केन्द्र को कार्यपालिका शक्ति देती है तो राष्ट्रपति को प्राविलम्बन मंजूर करने की शक्ति का विस्तार उस विधि तक होना चाहिये। इस कारण ये शब्द आवश्यक हैं। श्री सन्तानम का संशोधन पूर्णतया अनावश्यक तथा प्रसंग विरुद्ध है क्योंकि अनुच्छेद 60 के अंतर्गत वह बात आ जाती है।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 20 के संशोधन संख्या 445 में अनुच्छेद 50 के खंड (1) के प्रस्थापित उपखंड (ख) में 'offence under any law' शब्दों के पश्चात् 'made by Parliament' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 59 के खंड (1) के उपखंड (ख) के स्थान में निम्नलिखित उपखंड रखा जाये:

'(b) In all cases where the punishment or sentence is for an offence under any law relating to a matter to which the executive power of the Union extends;

[(ख) उन सब अवस्थाओं में जिनमें कि दंड अथवा दंडादेश ऐसे विषय सम्बन्धी किसी विधि के अधीन अपराध के लिए दिया गया हो जिस विषय तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है।]"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 62

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (5) में 'who from the date of his appointment is, for a period of six consecutive months, not a member' शब्दों के स्थान में 'who for any period of six consecutive months is not a member' शब्द रखे जायें।"

मंत्रियों की योग्यता अथवा कदाचित् निर्योग्यता के संबंध में यह एक कोरा शाब्दिक परिवर्तन है। यदि मेरी स्मरण शक्ति ठीक है तो जिस समय हम इस

अनुच्छेद को पारित कर रहे थे तो उस समय मेरे माननीय मित्र श्री गुप्ते ने यह कहा था कि यह श्ब्दावली अधिक उपयुक्त है। और मैं समझता हूं कि इस स्थिति का परीक्षण करने का विचार डॉ. अम्बेडकर के मन में था। हम समझते हैं कि यह शब्दावली अधिक उपयुक्त है और इसी कारण हमने इस संशोधन का सुझाव रखा है।

इस प्रसंग में मैं यह भी कह दूं कि एक संशोधन मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम ने दिया है जो बिल्कुल सही हो सकता है, पर वह भी भाषा परिवर्तन करने का ही विषय है। वास्तव में संशोधन में कोई सार-विषय नहीं है वरन् शब्दों को एक ऐसे ठीक रूप में रख दिया है कि जिससे भविष्य में किसी भ्रमपूर्ण निर्वचन से बच सकें।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** जैसा कि मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने कहा है वह बिल्कुल ठीक बात है कि मेरा संशोधन विषयों के स्पष्टीकरण मात्र के लिए है, क्योंकि जिस रूप में सरकारी संशोधन है उसमें यह बात स्पष्ट नहीं है कि छ: महीने की अवधि को कहां से आरम्भ किया जाये और उसकी किस प्रकार गणना हो। यह भी अर्थ लगाया जा सकता है—यद्यपि वह अर्थ ठीक प्रतीत न हो—कि उसके मंत्री होने के पूर्व से ही इस अवधि की गणना की जाये क्योंकि यह कहा जा सकता है कि यदि कोई व्यक्ति संसद् का सदस्य नहीं है तो उसे मंत्री नियुक्त नहीं किया जा सकता। हमारा उद्देश्य यह है कि कोई व्यक्ति, जो संसद का सदस्य नहीं है मंत्री नियुक्त किया जा सकता है, पर इस नियुक्ति के पश्चात् वह छ: महीने के अन्दर सदस्य हो जाये और बाद में सदस्य बना रहे। इस कारण मेरा संशोधन यह है:

"कि सूची 20 के संशोधन संख्या 446 में प्रस्थापित 'who for any period of six consecutive months is not a member' शब्दों के स्थान में 'who, 'after the date of his appointment is for any period of six consecutive months not a member' शब्द रखे जायें।"

जब हमने भारत शासन अधिनियम, 1935 की शब्दावली में परिवर्तन किया था तो उस समय मुझे याद है कि इस बात पर हमने वाद-विवाद किया था और उस अवधि के आरम्भ के लिए हमने 'नियुक्ति तिथि से' शब्द रखे थे। पर उस का यह भी निर्वचन हो सकता था कि बाद में छ: महीने के पश्चात् वह सदस्य न रहे और ऐसी अवस्था उसके अंतर्गत न आ सके। अत: मैं इस बात से सहमत हूं कि संशोधन वांछनीय है। परन्तु यदि नियुक्ति तिथि के बाद' शब्द रख दिये जायें तो वह और अधिक ठीक हो जायेगा।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि श्री सन्तानम ने जिस 'बाद' शब्द का सुझाव दिया है उसके स्थान में 'से' शब्द अधिक उपयुक्त होगा? 'बाद' सही नहीं है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** 'से' का यह अर्थ हो सकता है कि प्रथम छ: महीने तक वह सदस्य रहे और उसके बाद यदि वह सदस्य न रहे तो भी मंत्री बना रह सकता है। इस कमी को दूर करने का हम प्रयास कर रहे हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्री सन्तानम के संशोधन के संबंध में केवल एक बात मैं कहना चाहूंगा। उनका संशोधन लगभग वैसा ही है केवल एक जरा-सा अन्तर है वह यह कि कोई व्यक्ति मंत्री है और उचित रीति से निर्वाचित होने के पश्चात् और बाद में मूल निर्वाचन के चार या पांच महीने के पश्चात् निर्वाचन में कोई अनियमितता मालूम हुई और उस निर्वाचन को रद्द कर दिया तो श्री सन्तानम के संशोधन के अंतर्गत ऐसी अवस्था के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। अत: मैं यह सुझाव दूंगा कि हमें ऐसी गलती करनी चाहिये जिसमें कम क्षति हो और सभा को वह संशोधन स्वीकार कर लेना चाहिये जिसे मैंने पेश किया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम :** मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्ष:** तो फिर मैं संशोधन संख्या 446 पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (5) में 'who from the date of his appointment is, for a period of six consecutive months, not a member' शब्दों के स्थान में 'who for any period of six consecutive months is not a member' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 147

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं संशोधन संख्या 447 को पेश करता हूं, जो इस प्रकार है:

"कि अनुच्छेद 147 में 'with respect to which the Legislature of the State has power to make laws' शब्दों के स्थान में 'to which the executive power of the State extends' शब्द रखे जायें।"

संशोधन संख्या 445 पेश करते समय मैं इस स्थिति की व्याख्या कर चुका हूं और उस संशोधन को इस सभा ने कृपापूर्वक स्वीकार कर ही लिया है। इसमें जहां तक राज्यपाल की क्षमा करने की शक्तियों का संबंध है वहां तक उस स्थिति को संभालने का प्रयास किया गया है।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 147 में 'with respect to which the Legislature of the State has power to make laws' शब्दों के स्थान में 'to which the executive power of the State extends' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 175

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 175 के साथ निम्नलिखित परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided further that the Governor shall not assent to, but shall reserve for consideration of the President, any Bill which in the opinion of the Governor would, if it became law, so derogate from the powers of the High Court as to endanger the position which that Court is by this Constitution designed to fill.' "

[परन्तु यह और भी कि जिस विधेयक से, यदि वह विधि हो गया तो, राज्यपाल की राय में उच्च न्यायालय की शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण हो कि वह स्थान, जिसकी पूर्ति के लिए वह न्यायालय इस संविधान द्वारा बनाया गया है, संकटापन्न हो जायेगा, उस विधेयक पर राज्यपाल अनुमति न देगा, किन्तु उसे राष्ट्रपति के विचारार्थ रक्षित रखेगा।]

इस स्थिति में हमें यह संशोधन क्यों लाना पड़ रहा है इसका कारण यह है कि संशोधनों पर संशोधनों के अंक 2 के संशोधन संख्या 3406 को डॉ. अम्बेडकर ने भेजा है जिसमें अनुसूची 4 को फिर से बनाने का प्रयास किया गया है, पर सभा ने इस समय उस अनुसूची को छोड़ देने का विनिश्चय किया है और इस कारण डॉ. अम्बेडकर उस संशोधन को पेश न कर सके। उस संशोधन के खंड (7) में इस परन्तुक के संबंध में उपबंध कर दिया था जिसे मैंने अभी पेश किया है। यदि चतुर्थ अनुसूची होती तो यह संशोधन आवश्यक न होता। जब हमने अनुच्छेद 175 पर विचार किया था हमें पूर्ण विश्वास नहीं था कि चतुर्थ अनुसूची संविधान का अंग होगी या नहीं। इस संशोधन को प्रस्तुत करने के पक्ष में मेरी यह व्याख्या है।

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

औचित्य के आधार पर सभा यह स्वीकार करेगी कि जहां तक उच्च न्यायालय की नियुक्ति, क्षेत्राधिकार तथा ऐसी ही बातों का संबंध है यह केन्द्रीय सक्षमता का ही विषय होता है। पर ऐसे भी विषय हैं जिनमें प्रान्त भी हस्तक्षेप कर सकते हैं और यह परन्तुक उच्च न्यायालय की शक्तियों के संबंध में प्रान्तों द्वारा जल्दी में की गई कार्यवाही से बचने के उद्देश्य से है और इसमें यह निदेश है कि राज्यपाल ऐसे विधेयकों को राष्ट्रपति की अनुमति के लिए रक्षित रखे।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय मैं अपने मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी से यह निवेदन करूंगा कि इस विषय के एक अस्पष्ट पहलू पर वे कुछ प्रकाश डालें—जो कि मेरे लिये अस्पष्ट है। मैं उनके इस तर्क को न समझ सका जब कि उन्होंने यह कहा था कि कुछ ऐसे उपक्रम तथा विधेयक पुर:स्थापित हो सकते हैं जो स्थिति को संकटापन्न बना दें। सर्वप्रथम यदि ऐसे विधेयक पुर:स्थापित किये जाते हैं तो क्या आरम्भ में ही यह कार्य विधान मंडल की शक्तियों के परे नहीं होगा। क्या उस विधेयक का पुर:स्थापन संविधान द्वारा नहीं रोका जा सकेगा? और फिर इस संशोधन के अंन्तिम भाग में प्रयुक्त की गई भाषा पर मुझे कुछ आपत्ति है। वह बहुत जटिल है। उसको सरल बनाया जा सकता है जिससे कि उन सबको फायदा हो सके जिनका उससे संबंध है। "वह स्थान....संकटापन्न हो जायेगा" यह सब कहने की अपेक्षा क्या "उच्च न्यायालय की संविधान द्वारा (या अधीन) दी गई शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण होगा" शब्द कहना पर्याप्त नहीं होगा? इससे अनुच्छेद का अर्थ स्पष्ट हो जायेगा, संशोधन के अंत में इस जटिल शब्दावली की मुझे कोई आवश्यकता नहीं दिखाई देती है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी द्वारा पेश किया गया संशोधन बहुत पुराना है। भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन प्रांतों के राज्यपालों को दिये गये अनुदेशों की लिखत में वह मिलता है। अनुदेशों की लिखत की कंडिका 17 में यह कहा गया है:

"विधेयकों को रक्षित रखने की उसकी शक्तियों की व्यापकता का विरोध किये बिना हमारा गवर्नर यहां उल्लिखित किसी विधेयक की या किसी खंडों की अनुमति नहीं देगा वरन् हमारे गवर्नर जनरल के विचारार्थ रक्षित रखेगा, अर्थात्–

(ख) किसी विधेयक को जिससे, यदि वह विधि हो गया तो उसकी राय में उच्च न्यायालय की शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण होगा कि वह स्थान जिसकी पूर्ति के लिए वह न्यायालय इस अधिनियम द्वारा बनाया गया है, संकटापन्न हो जायेगा।"

यह खंड अनुदेशों की पुरानी लिखत में है, जिसे मसौदा समिति ने चतुर्थ अनुसूची में ज्यों का त्यों रख दिया है। इस अनुसूची का पुर:स्थापन करने का मसौदा समिति

का विचार था और यह संशोधनों की सूची अंक 2 के 368-369 पृष्ठों पर मिलेगा। इस तथ्य के कारण कि मेरी सिफारिश पर सभा इस परिणाम पर पहुंची कि उस समय मैंने जो कारण बताये थे उनके आधार पर भाग 1 में के राज्यों के राज्यपालों के लिए अनुदेशों वाली किसी अनुसूची को रखना अनावश्यक था, अतः मसौदा समिति ने यह समझा कि किसी न किसी तरह से प्रस्थापित अनुदेशों की लिखत का यह विशेष भाग अर्थात् कंडिका 17 संविधान में रखी जाये। श्रीमान् ऐसा करने के कारण ये हैं:

उच्च न्यायालय केन्द्रों के तथा प्रान्तों के भी अधीन रखे गये है। जहां तक उच्च न्यायालय के संगठन और प्रादेशिक क्षेत्राधिकार का संबंध है वे निस्सन्देह रूप से केन्द्र के अधीन है और उच्च न्यायालय के संगठन तथा प्रादेशिक क्षेत्राधिकार में परिवर्तन करने का प्रान्तों को कोई अधिकार नहीं है। परन्तु अर्थ संबंधी क्षेत्राधिकार के संबंध की और सूची 2 में दिये गये किसी विषय संबंधी क्षेत्राधिकार के संबंध की शक्ति नये संविधान के अधीन राज्यों को है। उदाहरणार्थ इस बात की पूरी संभावना है कि राज्य का विधान मंडल उस दावे का मूल्य बढ़ाकर जो उच्च न्यायालय में जा सकता है उच्च न्यायालय के अर्थ संबंधी क्षेत्राधिकार को कम कर दे। यह एक प्रकार है जिसके द्वारा राज्य उच्च न्यायालय के प्राधिकार को कम करने की स्थिति ग्रहण कर सकता है।

दूसरी बात यह है कि सूची 2 में दी हुई किसी प्रविष्टि के अधीन किसी उपक्रम को अधिनियमित करने में, उदाहरणार्थ ऋण रद्द करने अथवा ऐसे किसी विषय में प्रान्त यह कह सकते हैं कि किसी ऐसे न्यायालय अथवा मंडल द्वारा दी गई आज्ञप्ति अंतिम होगी, और उच्च न्यायालय का इस विषय में कोई क्षेत्राधिकार नहीं होगा।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि किसी ऐसे अधिनियम का अर्थ यह होगा कि वह उच्च न्यायालय के उस प्राधिकार का अल्पीकरण करेगा जिसे यह संविधान उच्च न्यायालय को देना चाहता है। इस कारण यह आवश्यक समझा गया कि ऐसी विधि के अंतिम स्वरूप ग्रहण करने के पूर्व राष्ट्रपति को इन बातों का परीक्षण करने का अवसर मिले कि क्या ऐसी किसी विधि को प्रभाववर्ती होने दिया जाये अथवा क्या यह विधि उच्च न्यायालय के प्राधिकार का इतना अल्पीकरण करती है कि उच्च न्यायालय एक निर्जीव शरीर की भांति रह जाता है।

अतः मैं निवेदन करता हूं कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उच्च न्यायालय एक ऐसी महत्वपूर्ण संस्था है जो संविधान द्वारा विधान मंडल और कार्यपालिका में तथा नागरिकों में परस्पर अभिनिर्णय करने के उद्देश्य से बनाई गई है इस कारण संविधान द्वारा सृजित इस महत्वपूर्ण संस्था के पोषण के लिए राष्ट्रपति को ऐसी शक्ति देना बहुत आवश्यक है। इस प्रयोजन के लिए यह संशोधन पुरःस्थापित किया जा रहा है।

***श्री एच.वी. कामतः** भाषा को सरल बनाने के हेतु मेरे सुझाव पर क्या विचार है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** इस समय मैं मसौदा संबंधी किसी संशोधन पर विचार नहीं कर सकता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** बहुत ठीकः बाद में ही करिये।

***अध्यक्षः** अब मैं इस प्रश्न पर मत लूंगा।

प्रश्न यह हैः

"कि अनुच्छेद 175 के साथ निम्नलिखित परन्तुक जोड़ दिया जायेः–

'Provided further that the Governor shall not assent to, but shall reserve for the consideration of the President, any Bill which in the opinion of the Governor would, if it became law, so derogate from the powers of the High Court as to endanger the position which that court is by this Constitution designed to fill.'

[परन्तु यह और भी कि जिस विधेयक से, यदि वह विधि हो गया तो, राज्यपाल की राय में उच्च न्यायालय की शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण हो कि वह स्थान, जिसकी पूर्ति के लिए वह न्यायालय इस संविधान द्वारा बनाया गया है, संकटापन्न हो जायेगा, उस विधेयक पर राज्यपाल अनुमति न देगा किन्तु उसे राष्ट्रपति के विचारार्थ रक्षित रखेगा।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 13

***अध्यक्षः** एक पहले का संशोधन है जिसकी सूचना दी जा चुकी है—संशोधन संख्या 415 ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मैं उसे पेश करना नहीं चाहता हूं। श्रीमान् मैं प्रस्ताव पेश करता हूंः

"कि अनुच्छेद 13 के खंड (2) में 'defamation' शब्द के पश्चात् 'contempt of court' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

श्रीमान् सभा को यह विदित होगा कि पहले संशोधन सं. 415 रखा गया था, चूंकि हमारे विधि संबंधी मंत्रणा देने वालों ने यह मंत्रणा दी थी कि जहां तक अनुच्छेद 13 के खंड (1) के उपखंड (क) का संबंध है अनुच्छेद 13 के उपखंड (2) के अपवादों पर कुछ कठिनाइयां होंगी। पर, श्रीमान् इस सभा के कई माननीय सदस्यों ने इस संशोधन के बारे में मसौदा समिति के सदस्यों को कहा, और उन्होंने सोचा कि यह संशोधन केवल किसी कमी को पूरा करने वाला ही नहीं है वरन् वह पूर्णतया उस खंड की रूप रेखा को बदलने वाला भी है। उन्होंने "सार्वजनिक व्यवस्था" इन दो शब्दों के सम्मिलित करने पर आपत्ति की

थी। उस संशोधन के एक भाग के संबंध में विचार यह था कि वाक् स्वातंत्र्य तथा अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य के प्रयोग में तत्कथित कमियों की एक श्रेणी उसके अंतर्गत आ जाये: अर्थात् कोई व्यक्ति एक ऐसे विषय पर भाषण दे जो न्यायालय के अधीन हो और इस प्रकार न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप करे। यह उस श्रेणी के अपराध हैं जो अनुच्छेद 13 के खंड (2) में दिये हुए अपवादों के अन्तर्गत नहीं आते हैं जहां तक कि वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य का संबंध है। इस सभा के माननीय सदस्य यह स्वीकार करेंगे कि हमारा उद्देश्य यह नहीं था कि बिना किसी रुकावट के न्यायालय का अवमान होने दिया जाये, और हमारा विचार यह भी नहीं है कि अनुच्छेद 13 के खंड (1) के उपखंड (क) का इस प्रयोजन के लिए प्रयोग हो।

अत: श्रीमान्, हमने यह सोचा कि खंड (2) में दिये हुए अपवादों के क्षेत्र को विस्तृत करने की अपेक्षा हम केवल इस कमी को दूर करने तक ही अपने आपको निर्बन्धित रखें और इसी कारण हमने मूल संशोधन 415 को छोड़ देने का निश्चय किया और संशोधन संख्या 449 को रखा है जिसमें न्यायालय-अवमान को अपमान-लेख, अपमान-वचन, मानहानि के अथवा किसी ऐसे विषय के जो शिष्टता तथा शील के विरुद्ध है अथवा जो राज्य की सुरक्षा को दुर्बल करने वाले अथवा राज्य को उलटने की प्रवृत्ति वाले विषय हैं उनके बराबर रख दिया है। वास्तव में न्यायालय-अवमान पहली तीन बातों के साथ रहेगा और मैं आशा करता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार करने में सभा को कोई आपत्ति नहीं होगी।

*__अध्यक्ष:__ प्रो. सक्सेना का एक संशोधन है। मैं उसे नहीं समझ सका हूं। क्या वे उसकी व्याख्या कर देंगे?

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना__ (संयुक्त प्रान्त : जनरल): "न्यायालय-अवमान" के स्थान में "अथवा न्यायालय अवमान" पढ़ा जाये। वह भूल से रह गया है।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ "न्यायालय-अवमान अथवा कोई विषय": यह बाद में आता है। पारिभाषिक रूप से "मानहानि" के पश्चात् अर्द्ध-विराम होना चाहिये।

*__पंडित ठाकुर दास भार्गव__ (पूर्वी पंजाब : जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपकी अनुज्ञा से मैं संशोधन संख्या 435 पेश करता हूं जो संशोधन संख्या 415 में संशोधन करने के लिए था पर यह संशोधन पेश नहीं किया गया। मेरे संशोधन द्वारा "किसी विधि" शब्दों के स्थान में "किसी युक्तियुक्त विधि" शब्द रख दिये जायें। संशोधन संख्या 415 के संबंध में यह एक पुराना संशोधन था। अब संशोधन संख्या 415 के स्थान में श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने 'मानहानि' शब्द के पश्चात् 'सदाचार, सार्वजनिक व्यवस्था अथवा न्याय-प्रशासन' के स्थान में 'न्यायालय-अवमान' शब्द रखने का संशोधन पेश किया है: और जब मैंने यह संशोधन भेजा था तो वह 'सार्वजनिक व्यवस्था अथवा न्यायप्रशासन' शब्दों को ध्यान में रखकर भेजा था। यह सब कुछ होते हुए भी मेरे संशोधन का मूल्य इस रूप में कम नहीं हुआ है

[पं. ठाकुर दास भार्गव]

कि मैंने यह चाहा था कि अनुच्छेद 13 में संशोधन किया जाये। श्री कृष्णमाचारी के संशोधन में परिवर्तन से मेरे संशोधन में कोई अन्तर नहीं आता। अतः आप की अनुज्ञा से मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि 'any law' शब्दों के स्थान में 'any reasonable law' शब्द रख दिये जायें।"

***एक माननीय सदस्य:** विधि सदैव युक्तियुक्त है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** विधि की परिभाषा केवल एक उपक्रम के रूप में की है जिसे विधान मंडल पार करता है। विधि दोनों प्रकारों की हो सकती है युक्तियुक्त तथा अयुक्तियुक्त भी। यह विधि कि सब नीली आंखवालों को मार डाला जाये एक अच्छी विधि हो सकती है यद्यपि है अयुक्तियुक्त। हम किसी भी विधि को पार करने के लिए सक्षम हैं जो युक्तियुक्त हो अथवा अन्यथा हो। यह सत्य है कि अज्ञानता, आवेश विप्लव तथा ईर्ष्या के कारण हम ऐसी विधि पारित करते हैं जो कुछ को युक्तियुक्त प्रतीत हो और कुछ को अयुक्तियुक्त। इसलिए न्यायालयों को यह देखने की शक्ति दी गई है कि विधियां युक्तियुक्त हैं अथवा अन्यथा। मूल अनुच्छेद 13 में आपने कुछ संशोधन किये हैं, संशोधित रूप में अनुच्छेद 13 में यह कहा गया है कि न्यायालयों को यह देखने की शक्ति दी जाती है कि कोई निर्बन्धन युक्तियुक्त है या नहीं। विधानमंडल को किसी भी प्रकार की विधि पारित करने की क्षमता है और इस कारण कुछ विषयों में न्यायालय को यह देखने की शक्ति है कि विधान मंडल द्वारा प्रयोग में लाई गई शक्तियां युक्तियुक्त हैं। जहां तक मूल रूप का संबंध है मैं नहीं समझता हूं कि कोई भी व्यक्ति इस बात में संदेह करेगा कि न्यायालयों को इस प्रकार की शक्ति से सुसज्जित किया जा सकता है क्योंकि इन शक्तियों से हम न्यायालयों को सुसज्जित पहले ही कर चुके हैं।

अब श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन को लीजिये—वे यह चाहते हैं कि अनुच्छेद 13(2) में "मानहानि" के पश्चात् "न्यायालय अवमान" शब्द जोड़ दिया जाये और फिर वह खंड इस प्रकार पढ़ा जायेगा:–

"इस अनुच्छेद के खंड (1) के उपखंड (क) की कोई बात अपमान-लेख, अपमान-वचन, न्यायालय अवमान से अथवा शिष्टाचार या सदाचार पर आघात करने वाले, अथवा राज्य की सुरक्षा को दुर्बल करने अथवा राज्य को उलटने की प्रवृत्तिवाले किसी विषय से, जहां तक कोई वर्तमान विधि संबंध रखती हो वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव, अथवा सम्बन्ध रखने वाली किसी विधि को बनाने में राज्य के लिए रुकावट न डालेगी।"

इस न्यायालय-अवमान के संबंध में मेरा विचार यह है कि ये शब्द अनुच्छेद 13 में जोड़ने नहीं चाहियें क्योंकि वास्तव में जिस रूप में न्यायालय-अवमान को हम समझते हैं वह एक ऐसा व्यवहार है जिसके लिए यह आवश्यक नहीं कि

उसका संबंध वाक-स्वातन्त्र्य से हो, क्योंकि जब आप न्यायालय-अवमान संबंधी विधि को पढ़ेंगे तो आप दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 480 में देखेंगे कि बहुदा सामान्य न्यायालय अवमान भारतीय दंड संहिता की धारा 175, 178, 179 और धारा 180 तथा 288 के भंग करने में है। ये सब धारायें व्यक्ति विशेष के एक खास प्रकार के व्यवहार से संबंध रखती हैं। उदाहरणार्थ धारा 175 का संबंध न्यायालय के चपरासी से आह्वान पत्र के न लेने से तथा लेख्य प्रस्तुत न करने से है; धारा 178, 179 और 180 का संबंध न्यायालय द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर देने से इंकार करने अथवा शपथ लेने से इन्कार करने से है। इसी प्रकार से धारा 288 तब लागू होती है जबकि किसी न्यायिक कार्यवाही में हस्तक्षेप हो अथवा जबकि न्यायालय का कोई अपमान हो; अपमान कई प्रकार से हो सकता है और यह आवश्यक नहीं है कि वह भाषण द्वारा ही हो।

अत: मेरा निवेदन यह है कि इनमें से किसी भी धारा का सार यह है कि किसी गलत बात, गलत व्यवहार या प्रवृत्ति पर दंड दिया जाता है न कि स्वयं भाषण पर। अवमान कार्य पर कार्यवाई करने की शक्ति न्यायालयों को है और वे तुरन्त उन अपराधों का निपटारा कर सकते हैं। अत: मेरी प्रथम बात यह है कि ये 175, 178, 180 और 288 धारायें जो धारा 480 में अवमान का विषय हैं इनका वाक्-स्वातन्त्र्य से कोई संबंध नहीं है अत: यह संशोधन वाक्-स्वातन्त्र्य अभिव्यक्ति-स्वातन्त्र्य के विषय से संगत नहीं है।

और फिर श्रीमान्, इस संविधान में हम अनुच्छेद 118 पार कर चुके हैं। उस का संबंध उच्चतम न्यायालय की शक्तियों से है, और जहां तक उच्चतम न्यायलय के अवमान का सम्बन्ध है वह विधि के अन्तर्गत आ चुका है और अवमान के मामलों को निपटाने का उच्चतम न्यायालय को पूर्ण हक है। श्रीमान्, अन्य न्यायालयों के संबंध में यह विधि सामान्यतया या तो मानहानि विधि के या 1926 के अधिनियम 12 के अंतर्गत है। जैसा कि भारतीय दंड विधि की धारा 480 में है न्यायालय के सामने किये गये प्रत्यक्ष अवमान के अलावा न्यायालय तथा दंडाधिकारियों के न्यायिक कार्यों की टीका टिप्पणियां एक प्रकार का पारिभाषिक अवमान है, और यदि आप इस विधि को बदलना चाहते हैं जिनका ऐसे अवमान से संबंध है, यदि आप वाक्-स्वातन्त्र्य की शक्तियों को छीनना चाहते हैं तो आप को यह अधिनियम बनाना चाहिये कि यदि विधान मंडल ऐसी कोई विधि पार करता है तो वह न्यायालयों के परीक्षण के अधीन रहनी चाहिये।

'मानहानि' जिसके अधीन बहुधा ऐसे अवमान आते हैं वह दंड संहिता के उपबंधों के अंतर्गत आ जाती है। मानहानि का प्रश्न बड़ा जटिल है जहां तक व्यवहार सम्बन्धी मानहानि का सम्बन्ध है सत्य पूर्ण प्रतिरक्षा है पर जहां तक अपराध संबंधी मानहानि का संबंध है उसका जितना अधिक सत्यरूप होता जाता है उतनी ही अधिक मानहानि बढ़ती जाती है। जब आप विधान मंडल को कोई भी विधि बनाने की मुख्य शक्ति से सुसज्जित करते हैं और उस विधि की न्यायालय जांच नहीं कर सकते हैं तो इसका यह अर्थ है कि विधान मंडल को बहुत अधिक स्वतंत्रता दी जा रही है और वाक्-स्वातन्त्र्य एक तमाशा-सा हो जायेगा। अभी कुछ दिनों पहले एक अधिनियम पूर्ववर्ती सरकार ने बनाया था और उस अधिनियम द्वारा न्यायालयों को उन व्यक्तियों को दंड देने का अधिकार दिया गया था जो कुछ निर्णयों की टीका टिप्पणी करते थे। वह न्यायिक-पदाधिकारी-रक्षक अधिनियम कहा

[पं. ठाकुर दास भार्गव]

जाता था और उस अधिनियम के उपबंध बहुत ही विस्तृत तथा व्यापक थे। यह भी हो सकता है कि न्यायालय-अवमान के अन्तर्गत ऐसे अवमान भी आ जायें। ऐसे अवमान के मामलों में जो पारिभाषिक रूप में अवमान के मामले हैं और जो न्यायालय के समक्ष उसी समय नहीं किये जाते है वे विधि-अवमान के अंतर्गत आ सकते हैं और इसी प्रकार से उन पर नियंत्रण होना चाहिये। और उनके निर्वचन का उत्तरदायित्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार में होना चाहिये। यदि हम ऐसा नहीं करते तो मुझे इस बात का भय है कि वाक्-स्वातन्त्र्य अथवा अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य प्राय: नष्ट हो जायेगा।

यदि आप अनुच्छेद 13 के छ: खंडों को कृपा कर देखेंगे तो आपको "युक्तियुक्त निर्बन्धन" शब्द मिलेंगे। पर खंड (2) में "युक्तियुक्त निर्बन्धन" जैसे शब्द नहीं हैं। जिसका अर्थ यह है कि विधान मंडल को किसी प्रकार के भी निर्बन्धन लगाने की शक्ति दी गई है युक्तियुक्त अथवा अयुक्तियुक्त। जबकि खंड (2) का मूल विषय कुछ विषयों तक ही सीमित था तब तो मैं समझ सकता था कि "युक्तियुक्त" शब्द लुप्त कर दिया होगा। फिर भी जहां तक राजद्रोह का संबंध है जबकि मूल अनुच्छेद हमारे सामने था हमने इस विधि का संशोधन किया था और हमने यह देखा था कि "राजद्रोह" के अंतर्गत वे मामले नहीं आते थे जिन पर इसके अंतर्गत विचार नहीं हो सकता था। इस कारण हमने शब्दों में इस प्रकार परिवर्तन कर दिया था: "जो राज्य की सुरक्षा को दुर्बल बनाने अथवा राज्य को उलटने की प्रवृत्ति वाले" और चूंकि इन शब्दों में परिवर्तन कर दिया गया था इस कारण "युक्तियुक्त" शब्द खंड (2) में नहीं रखा गया था। अब खंड (2) द्वारा केवल सामान्य विषयों पर ही विचार नहीं किया जायेगा बल्कि न्यायालयों के कार्यपालिका प्राधिकार संबंधी वाक्-स्वातन्त्र्य के प्रश्न का पुर:स्थापन भी इसमें किया जा रहा है।

अत: चूंकि हम खंड (2) के क्षेत्र को बढ़ा रहे हैं, यह बात युक्तियुक्त प्रतीत होती है कि विधान मंडल की शक्तियों पर निर्बन्धनों के क्षेत्र को हम यहां तक विस्तृत कर दें कि यदि हम "विधि" शब्द के पूर्व "युक्तियुक्त" शब्द रख दें तो हम अपने उद्देश्य की पूर्ति कर लेंगे और मानहानि, अपमान-लेख तथा अपमान-वचन, इत्यादि की अथवा किसी ऐसे विषय की जो शिष्टाचार या सदाचार पर आघात करने वाला है, परिभाषा करने में विधान मंडल के क्षेत्र को निर्बन्धित करने के उद्देश्य की भी हम पूर्ति कर लेंगे। ये सब विषय किसी सीमा तक तर्कसम्मत हो जायेंगे और गणराज्य के नागरिकों के अधिकार तथा विशेषाधिकारों को कम करने की अपेक्षा यदि हम उनकी स्वाधीनता के क्षेत्र विस्तृत कर दें तो अधिक अच्छा होगा और इस कारण मैं यह सुझाव देता हूं कि "किसी विधि" शब्दों के स्थान में "किसी युक्तियुक्त विधि" शब्द रख दिये जायें। यदि इन शब्दों को जोड़ कर हम इसमें और आगे संशोधन करने से सहमत नहीं हैं तो मुझे इस बात का भय है कि हम फिर उसी रीति को अपनाने में अग्रसर होंगे जिसे दुर्भाग्यवश हम अपनाते रहे हैं अर्थात् यह कि अनुच्छेद 13 में जो कुछ दिया गया है उसे किसी न किसी रूप में छीन लिया जाये। अनुच्छेद 24, 241, 278 और 307 तथा अन्य अनुच्छेदों को अधिनियमित करके हम ऐसा कर चुके हैं।

अतः मेरा विनम्र निवेदन यह है कि वाक्-स्वातन्त्र्य तथा अभिव्यक्ति संबंधी इस अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय में हमारा इस प्रकार का प्रबन्ध हो कि जो दिया जा चुका है वह छीना न जाये और विधान मंडल को हमने जो शक्तियां दी हैं उनकी यहां तक कमी कर दी जाये कि वे न्यायालय के परीक्षण के अधीन हों। आखिर जिस सरकार ने जिस प्रकार से विधान मंडल का सृजन किया है उसी सरकार ने उसी प्रकार से न्यायालयों का सृजन किया है। अतः जब आप स्वयं विधान मंडल को यह शक्ति दे रहे हैं कि वह न्यायालय को अवमान के अपराध में लोगों को दोषी ठहराने का अथवा न्यायालय-अवमान के संबंध में उन पर कार्यपालिका रीति से कार्यवाही करने का अधिकार दे तो न्यायालयों के प्राधिकार के प्रति शंका करने की कोई बात नहीं है। इस संशोधन द्वारा आप न्यायालयों को यह देखने की शक्ति दे रहे हैं कि न्यायालय-अवमान के संबंध में अधिनियमित की हुई विधि ठीक है या नहीं। वास्तव में एक प्रकार से आप न्यायालयों की सहायता कर रहे हैं और दूसरे प्रकार से न्यायालयों के प्राधिकार को विस्तृत कर रहे हैं। इसलिए मैं निवेदन करता हूं कि सभा मेरे इस संशोधन को स्वीकार करे।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ अध्यक्ष महोदय, यह संशोधन अनुच्छेद 13 खंड (1) (क) के संबंध में है। खंड (1) (क) में कहा गया है कि समस्त नागरिकों को वाक्-स्वातन्त्र्य तथा अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य का अधिकार होगा। खंड (2) भाषण देने तथा किसी ऐसे शब्द के प्रयोग करने पर जिसमें अपमान-वचन, अपमान-लेख तथा मानहानि हो, निर्बन्धन आरोपित करता है। मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी यह चाहते हैं कि "मानहानि" शब्द के पश्चात् "न्यायालय-अवमान" शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।

सर्वप्रथम मुझे यह कह लेने दीजिये कि यह आनुषंगिक संशोधन नहीं है। यह एक मूल प्रस्थापना है जो सभा के समझ प्रस्तुत की जा रही है। श्रीमान्, हम जानते हैं कि इस न्यायालय-अवमान के संबंध में न्यायाधीश पहले अपनी शक्तियों का किस प्रकार प्रयोग करते थे–मानों वे त्रुटि कर ही नहीं सकते। यहां तक कि तीसरे दर्जे के दंडाधिकारी, प्रथम दर्जे के दंडाधिकारी, और उपन्यायाधीश ऐसी निन्दा किया करते थे कि जिसको उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों तक ने कई बार निन्दा की है। मैं यह भी कहना चाहूंगा कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश स्वयं अभियोजक के रूप में बैठते हैं। वे स्वयं यह चाहते हैं कि न्यायपालिका और कार्यपालिका के कृत्यों को पृथक्-पृथक् कर दिया जाये। न्यायालय-अवमान के मामले में उच्च न्यायालय का न्यायाधीश अभियोजक होता है और वह स्वयं उन मामलों का निर्णय करने बैठता है जिनमें वह स्वयं यह समझता है कि न्यायालय-अवमान किया गया है। हमारे सामने ऐसे कई मामले आये हैं। मैं दो मामलों के दृष्टान्त दूंगा, श्री बी.जी. हैरीमेन 'सेन्टिनल' के संपादक और श्री देवदास गांधी 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के संपादक। इन दोनों व्यक्तियों द्वारा की गई बहुत ही युक्तियुक्त आलोचना की निन्दा इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने की। उच्च न्यायालय के एकतरफा निर्णय को मानने की बजाय उन्होंने जेल जाना अच्छा समझा और वे जेल गये। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि मेरे वकील मित्र जो यहां पर हैं वे न्यायाधीशों के प्रति इतने

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

उदार क्यों हैं। न्यायाधीशों के कोई सींग तो लगे नहीं हैं, वे भी आखिर मनुष्य ही हैं। उनसे भी त्रुटियां हो सकती हैं। हम उनके प्रति इतने कोमल क्यों बनें? हमें लोकहित की रक्षा करनी चाहिये। यदि कोई नागरिक भाषण के रूप में किसी उस तीसरी श्रेणी या चौथी श्रेणी के दंडाधिकारी के कार्य को निन्दा करता है जिसने जनता की निन्दा की है तो क्या उस व्यक्ति को भाषण देने और उस कार्य की आलोचना करने का हक नहीं है?

यह अनुचित है कि न्यायालय-अवमान के विषय में यह खंड जोड़ा जाये। मैं इसका कड़ा विरोध करता हूं। यह बहुत अनुचित है कि नागरिक को कुछ अधिकार देने के पश्चात् और उसे इतने खंडों द्वारा निर्बन्धित कर आप "न्यायालय-अवमान" की प्रविष्टि कर उसे और भी अधिक निर्बन्धित करना चाहते हैं। न्यायालय-अवमान में हम जानते हैं कि जब कोई असाधारण बात हो जाती है तो उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को कुछ शक्ति होती है। यहां आप दंडाधिकारियों से लेकर उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों तक शक्ति देते हैं। उस दशा में भी मैं यह कहता हूं। कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ऐसे नहीं हैं कि उनसे त्रुटि न हो; उन्होंने भी बहुत-सी त्रुटियां की हैं। वे यह नहीं चाहते हैं कि जब लोक-जीवन के हित में आलोचना आवश्यक है तब भी उच्च-न्यायालय के न्यायाधीशों के विरुद्ध आलोचना न की जाये।

श्रीमान इन शब्दों के सहित इस समय मैं यह समझता हूं कि मसौदा समिति इन "न्यायालय-अवमान" शब्दों को छोड़ दें जो दोनों समाचार पत्र तथा लोक की ओर से सदैव झगड़े की जड़ रही है। मैं यह जानना चाहता हूं कि किस संविधान में न्यायालय-अवमान रखा गया है। मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर यह बतायें कि क्या संसार के किसी संविधान में न्यायालय अवमान समाविष्ट है। यह शक्ति सदैव न्यायाधीश के साथ रहती है। आप इसे संविधान में क्यों रखना चाहते हैं और न्यायाधीशों को सर्वोपरि क्यों बनाना चाहते हैं? आप उसे ईश्वर से भी बड़ा बनाना चाहते हैं।

*__अध्यक्षः__ इसका न्यायालय से कोई संबंध नहीं है। यदि आप अनुच्छेद को पढ़ेंगे तो आपको मालूम होगा कि उसमें यह कहा गया है कि उपखंड (क) की किसी बात से अवमान संबंधी किसी विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव, अथवा अवमान संबंधी किसी विधि के बनाने में राज्य के लिये रुकावट न होगी।

*__श्री आर.के. सिधवाः__ उसका संबंध नागरिकों से है। नागरिकों को वाक्-स्वातन्त्र्य और अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य का अधिकार होगा पर वे कोई ऐसा भाषण न दे सकेंगे जिसमें अपमान लेख अपमान-वचन या न्यायालय-अवमान हो। कोई निर्णय न्यायालय द्वारा दिया गया हो.....

*__अध्यक्षः__ एक ऐसी विधि पार की जा सकती है जो किसी गैर सरकारी व्यक्ति की मानहानि करने में रुकावट डाले, पर ऐसी विधि पार न की जाये जो न्यायालय

की मानहानि या उसके प्रति अपमान-लेख को रोके। आपके तर्क का यह आशय है।

* **श्री आर.के. सिधवा:** न्यायालय-अवमान के संबंध में, मैं नहीं चाहता हूं कि कोई विधि बनाई जाये। इस विषय में मैं बहुत स्पष्ट हूं क्योंकि न्यायालय-अवमान के बारे में मेरा पिछला अनुभव है कि छोटे से लेकर बड़े न्यायालयों तक के न्यायाधीश निष्पक्ष नहीं रहे हैं। इसलिए मैं इस संशोधन के विरोध में हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, न्यायालय-अवमान पर गरमागरम बहस चल रही है। मैं निवेदन करता हूं कि उच्च न्यायालयों को तात्कालिक रीति से अवमान के लिए दंड देने की शक्ति होनी चाहिए। इसका यह कारण है कि किसी मामले में जांच शांत तथा निष्पक्ष वातावरण में केवल साक्ष्य के आधार पर होनी चाहिए। यदि न्यायालय-अवमान को लेकर आगे बढ़ने की शक्ति नहीं है तो न्यायालय में लम्बित किसी मामले की समाचार पत्र द्वारा जांच कोई भी व्यक्ति आरम्भ कर सकता है और यह भी हो सकता है कि मामले के गुणावगुणों के बारे में वह जनता में धुंआधार भाषण देने लगे और इस प्रकार मामले की ठीक तथा निष्पक्ष जांच में बहुत हानि पहुंचाये। इस कारण न्यायालय-अवमान को हमारी विधि पुस्तक में स्थान मिला है। न्यायालय-अवमान अधिनियम के नाम से 1926 का एक अधिनियम है। कुछ ऐसे अवमान है जिनके लिए छोटे से छोटे दंडाधिकारी द्वारा दंड दिया जा सकता है। श्री सिधवा ने ऐसे दंडाधिकारी को चौथी श्रेणी का दंडाधिकारी कहा है; ऐसी कोई श्रेणी है ही नहीं। यदि कोई व्यक्ति न्यायालय की कार्रवाई में हस्तक्षेप करता है तो किसी भी न्यायालय द्वारा उसे उसी समय दंड मिलना चाहिये। अवमान के कई अन्य घोर प्रकार भी हैं जिनके लिए केवल उच्च न्यायालय द्वारा ही दंड दिया जा सकता है।

यह कहा गया है कि उच्च न्यायालय अभियोगी या अभियोजक बन जाता है। वास्तव में न्यायालय की प्रतिष्ठा कम हो जाती है और उसकी निरपेक्षता पर संदेह होता है, इस कारण अवमान के लिए दंड देने की शक्ति केवल उच्च न्यायालय को होनी चाहिये। उदाहरण के रूप में यदि हम राष्ट्रपति का अवमान करें तो केवल राष्ट्रपति को ही उसे निपटाने की तात्कालिक शक्ति होनी चाहिये। यह केवल समानता के रूप में है कि न्यायालय अवमान विधि का अंग हो। विधि का अंग तो वह है ही। पंडत ठाकुर दास भार्गव ने यह बताया था कि अन्य स्थान में हम यह उपबंध पहले कर चुके हैं कि न्यायालय-अवमान को न्यायालय द्वारा निपटाया जाये और इस संशोधन पर उनकी आपत्ति केवल यह है कि क्या इसे अनुच्छेद 13 के खंड (2) में स्थान दिया जाये। इसी समय यह मालूम करना कठिन है कि जो उपबन्ध हम बना चुके हैं उसका क्या प्रभाव है। हम अपने विचारों में बार-बार परिवर्तन करते हैं और बार-बार रद्दी प्रकार के नये संशोधन

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

पुर:स्थापित करते हैं कि यह मालूम करना बहुधा असम्भव हो जाता है कि संशोधन का आशय क्या है। अधिक से अधिक यह होगा कि एक बात दो स्थानों पर आ जाये। यदि ऐसा हो भी जाये तो इस संविधान में वह कोई बड़ा दोष नहीं होगा क्योंकि अन्य स्थानों में एक बात दो स्थानों पर बहुत आई हैं। अत: मैं निवेदन करता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार कर लिया जाये।

पंडित ठाकुर दास भार्गव का संशोधन कि "किसी विधि" के स्थान में, "किसी युक्तियुक्त विधि" रखा जाये।, व्यवहार में व्यर्थ सिद्ध होगा। यदि कोई विधि पार की जायेगी तो वह विधान मंडल द्वारा पार की जायेगी। यह हमेशा मानना पड़ेगा कि विधान मंडल ऐसी विधि पारित करता है जो युक्तियुक्त होती है न कि अयुक्तियुक्त—कम से कम विधान मंडल तो यही समझता है। आखिर विधान मंडल पूर्णतया स्वतंत्र है। परन्तु, "युक्तियुक्त" शब्द कोई प्रतिबन्ध नहीं हो सकता है। ऐसा प्रतिबन्ध तो उनकी शक्ति ही में निहित मान लेना चाहिये और इस तथ्य में कि निर्वाचित सदस्य विधि बनायेंगे यह भाव निहित है कि बनाई गई विधि युक्तियुक्त है। परन्तु मान लीजिये कि हम इस पद का पुर:स्थापन करें और उसे "युक्तियुक्त विधि" बना दें तो विधान मंडल पर उसका कोई बन्धनकारी बल नहीं होगा। "युक्तियुक्त" शब्द उनकी शक्ति में कोई कमी नहीं करेगा या उनके स्वविवेक में कोई रुकावट नहीं डालेगा। इन परिस्थितियों में 'युक्तियुक्त' शब्द बिल्कुल अनावश्यक होगा और व्यवहार में व्यर्थ सिद्ध होगा और इस कारण यह संशोधन स्वीकार नहीं होना चाहिये। जहां तक न्यायालय-अवमान का संबंध है इस समय उसे स्वीकार कर लेना चाहिये पर मसौदा समिति द्वारा यह विचार होना चाहिये कि दो स्थानों में एक बात न आने पाये।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान, मसौदा समिति की क्रूरता से बचने के लिए मैं आपकी शरण चाहता हूं। मूलाधिकारों को हमने बहुत दृढ़ संकल्प होकर पारित किया था—मैं वकील नहीं हूं पर साधारण व्यक्ति होने के कारण इतनी समितियों में विचार होने के पश्चात् और इस सभा में गम्भीर विचार करने के पश्चात् जो मूलाधिकार हमको दिये गये थे उनको मैं समझता हूं। पिछले दो या तीन दिनों में ऐसा क्या हुआ है जिसके कारण हम मसौदा समिति की क्रूरता से पीड़ित हैं? 15 तारीख को हमें इन्हीं दो सज्जनों डॉ. अम्बेडकर तथा श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के अनुच्छेद 13 पर संशोधन प्राप्त हुए और आज श्री कृष्णमाचारी ने एक दूसरा संशोधन पेश किया है। गत रात्रि को हमें यह वर्तमान संशोधन मिला जिस पर यह सभा विचार कर रही है। मूलाधिकारों को यकायक नहीं बदला जा सकता है। यदि और अधिक संशोधनों पर विचार करने के लिए आज का दिन ही सभा का अंतिम दिन न था तो संविधान में किसी परिवर्तन के लिए अनुच्छेद 304 लागू किया जा सकता था; संविधान के किसी परिवर्तन के लिए उसमें कहा गया है:

"संसद के किसी सदन में तदर्थ विधेयक पुर:स्थापित करके संविधान के संशोधन का सूत्रपात किया जा सकेगा, और जब प्रत्येक सदन में उस सदन की समस्त

सदस्य संख्या के बहुमत से तथा उस सदन में उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो-तिहाई बहुमत से इत्यादि इत्यादि।"

जब डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं सभापति के रूप में इतने दृढ़ संकल्प होकर भाग 16 में 'संविधान के संशोधन' की व्यवस्था की है तो फिर रातों-रात यह परिवर्तन कैसे हो जाते हैं।

मैं उनमें से नहीं हूं जो न्यायाधीशों के प्रति उच्च धारणा रखते हैं, विशेषकर जबकि उन्हें अंग्रेजी परम्परा के अधीन शिक्षा मिली है और उन्होंने न्याय का दुरुपयोग किया है और हमारा दमन किया है। किसी भी सार्वजनिक भाषण के सम्बन्ध में मैंने यह नहीं पढ़ा है कि भारत के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों अथवा अन्य न्यायालय के न्यायाधीशों या दंडाधिकारियों में अगस्त 1947 से परिवर्तन हो गया है और वे अपने कृत्यों और कर्तव्यों को पहले से अच्छे रूप में समझ गये हों। अवकाश प्राप्त करने के दस वर्ष पश्चात् यदि डॉ. अम्बेडकर न्यायालयों की धांधलियों पर तथा न्यायालय-अवमान के बारे में पुस्तक लिखें तो वे यह देखेंगे कि इन दंडाधिकारियों और न्यायाधीशों को कुछ अधिक शक्तियां देने का उनका यह यकायक किया गया पक्षपात आवश्यक नहीं था। वह एक बहुत ही आश्चर्यजनक पुस्तक होगी क्योंकि बहुत से कंगाल वकील न्यायाधीश हुए और उन्होंने विदेशी राज के कारबार तथा शासन को न्यायालय-अवमान शब्द के द्वारा विनियमित तथा नियंत्रित किया और डरपोक वकील उनसे डर के मारे कांपते थे।

***अध्यक्षः** जहां तक उच्च न्यायालयों का संबंध है इस देश के सब पक्ष तथा व्यक्ति उनकी प्रशंसा करते रहे और उनकी इस प्रकार निन्दा करने से कोई लाभ नहीं। कोई एकाध ऐसा न्यायाधीश होगा जिसने मूल की हो, पर समूची न्यायपालिका की हमें निन्दा नहीं करनी चाहिये।

***श्री बी. दासः** श्रीमान्, मैं आपके आदेश को शिरोधार्य करता हूं। मैं चाहता हूं कि मेरा मन साफ होता और भारत के न्यायाधीशों की उनके महान पद तथा उनके उचित रूप से कर्तव्य पालन के लिए मैं उनका सम्मान करता। फिर भी मैं आपकी शरण लेता हूं। यदि मैं अपने व्यक्तिगत विचार का पालन कर सकूं तो सत्र के इस अंतिम समय में मूलाधिकारों के अनुच्छेदों में किसी प्रकार के भी परिवर्तन का विरोध करूंगा जब कि हम सभा समाप्त करने जा रहे हैं और शीघ्र ही संविधान के तृतीय पठन को ले रहे होंगे। मूलाधिकारों के परिवर्तन के विषय में हमारी भावनायें पवित्र होनी चाहियें। यदि यह ऐसी ही त्रुटि थी तो फिर इस माह की 15वीं तारीख को वह क्यों नहीं बताई गई? वह कल ही मालूम हुई। डॉ. अम्बेडकर को इस शताब्दी का मनु कहा गया है। क्या मनु रातों रात परिवर्तन कर देते हैं? ऐसी दशा में से हर एक मनु है न कि केवल डॉ. अम्बेडकर। मैं समझता हूं कि यदि अनुच्छेद 13 में यह संशोधन न किया जाये तो कोई हानि नहीं होगी। संसद को समवेत होने दीजिये और डॉ. अम्बेडकर को स्वयं एक विधेयक प्रस्तुत करने दीजिये और हम उसके गुणावगुण के आधार पर उसकी परीक्षा करेंगे। परन्तु मूलाधिकारों में परिवर्तन क्यों? यह मेरा निवेदन है और श्रीमान मैं आशा करता हूं कि हमारे अध्यक्ष के रूप में आप मूलाधिकारों पर संशोधन जैसे विषय पर आदेश देंगे।

***श्री कृष्णचन्द्र शर्मा** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, न्यायाधीशों की प्रतिष्ठा तथा सम्मान से मुझे ईर्ष्या है। मेरी यह धारणा है कि लोकतंत्र में न्यायाधीशों का सम्मान जनता के सब वर्गों द्वारा होना चाहिये और इन व्यक्तियों तथा इनके कृत्यों की प्रतिष्ठा होनी चहिये। पर एक बात जिस पर मैं आपत्ति करता हूं वह यह है कि न्यायालय-अवमान की यह प्रविष्टि अनावश्यक है क्योंकि उस अनुच्छेद में "वर्तमान विधि" शब्द हैं और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 480 में एक उपबंध है जो कार्यवाई के समय न्यायालय-अवमान के संबंध में है जबकि स्वयं न्यायालय को अवमान करने वाले व्यक्ति को दंड देने की शक्ति है। एक और न्यायालय-अवमान संबंधी अधिनियम है जो कहीं के किसी भी न्यायालय-अवमान पर कार्यवाई करने की शक्ति उच्च न्यायालय को देता है। अत: वर्तमान उपबंधों को ध्यान में रखते हुए और अधिक रक्षा की आवश्यकता नहीं है और मैं समझता हूं कि परिस्थिति को संभालने के लिए ये उपबंध काफी हैं। अत: यह प्रविष्टि अनावश्यक तथा अवांछनीय है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** श्रीमान मैं नहीं समझता हूं कि अन्तिम वक्ता का तर्क सही है क्योंकि अनुच्छेद 13 वर्तमान विधि में रूपभेद करेगा। इस कारण न्यायालय-अवमान का उपबन्ध आवश्यक है पर मेरी कठिनाई यह है कि अनुच्छेद 13 (2) के अधीन प्रत्येक राज्य के विधान मंडल को न्यायालय-अवमान संबंधी विधि अधिनियमित करने की शक्ति दी गई है। यदि कई विधान मंडल न्यायालय-अवमान संबंधी कई भिन्न-भिन्न विधियां बनाते हैं तो मैं समझता हूं स्थिति और विशेषकर समाचार पत्रों की स्थिति बड़ी कठिन हो जायेगी।

उदाहरणार्थ यदि मद्रास का विधान-मंडल न्यायालय-अवमान संबंधी कोई विधि बनाता है तो वास्तव में वह विधि क्षेत्राधिकार के अनुसार मद्रास में प्रकाशित पत्रों पर ही लागू होगी। परन्तु वह विधि उन सब पत्रों पर लागू नहीं होगी जो भारत के किसी अन्य स्थान से आते हैं और जिनका मद्रास में प्रचार है और यह सब प्रान्तों में होगा। जहां तक मानहानि, अपमान-वचन इत्यादि का संबंध है ये अभियोज्य अपराध हैं जिनको समवर्ती सूची में रखा गया है। जब कोई गड़बड़ होती है तो संसद आड़े आ जाती है और एकरूपता कर देती है। परन्तु न्यायालय अवमान के संबंध में मैं नहीं समझता हूं कि एकरूपता करने का अधिकार संसद को है। अत: यदि वे इसे अनुच्छेद 13 में रखना चाहते हैं तो समवर्ती सूची में एक पृथक् मद होना चाहिये जिससे कि किसी भी समय संसद दखल दे सके और विधि में कुछ एकरूपता कर सके। अन्यथा, मेरा यह सुझाव है कि अनुच्छेद 13 के खंड (2) में "न्यायालय-अवमान" की यह प्रविष्टि का परिणाम न्यायालय-अवमान की भिन्न-भिन्न विधियों के रूप में निकलेगा और इससे समस्त देश में गड़बड़ी होगी। मैं यह सुझाव रखता हूं कि न्यायालय-अवमान के लिए विधि बनाने को या यह देखने को, कि न्यायालय-अवमान संबंधी विधि में कुछ न कुछ एकरूपता हो, संसद के लिए कम से कम शक्ति रक्षित करने का उपक्रम करना चाहिये। यदि "न्यायालय-अवमान" शब्द अनुच्छेद 13 के खंड (2) में प्रविष्ट किये जाते हैं तो उसे समवर्ती सूची में रखा जाये।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर, क्या आप उत्तर देना चाहेंगे?

*माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, यह अनुच्छेद अनुच्छेद 8 के साथ-साथ पढ़ा जायेगा।

अनुच्छेद 8 में कहा गया है:

"इस संविधान के प्रारम्भ होने से ठीक पहले भारत के राज्य-क्षेत्र में प्रवृत्त सब विधियां, उस मात्रा तक शून्य होंगी, जिस तक कि वे इस भाग के उपबंधों से असंगत हैं।"

और इस अनुच्छेद में जो कुछ कहा गया है वह यह है कि अपमान-लेख, अपमान-वचन, मानहानि अथवा शिष्टाचार या सदाचार पर आघात करने वाले, अथवा राज्य की सुरक्षा को दुर्बल करने वाले, किसी विषय पर अनुच्छेद 8 का प्रभाव नहीं पड़ेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि वे विधियां प्रवृत्त रहेंगी। यदि "न्यायालय-अवमान" शब्द वहां न होते तो न्यायालय-अवमान संबंधी किसी विधि पर अनुच्छेद 8 लागू होता और वह निराकृत हो जाता। इस प्रकार की स्थिति से बचने के लिए "न्यायालय-अवमान" शब्दों को रखा जा रहा है, अतः इस संशोधन को स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं है।

मेरे मित्र श्री सन्तानम द्वारा उठाये गये प्रश्न के प्रति यह बात बिल्कुल सत्य है कि जहां तक मूलाधिकारों का संबंध है "राज्य" शब्द का प्रयोग दो अर्थों में हुआ है केन्द्र के अर्थ में तथा प्रान्तों के भी अर्थ में। पर मैं समझता हूं कि उनको इस बात का ध्यान होगा कि इस तथ्य के होते हुए भी राज्य कोई विधि बना सकता है तथा केन्द्र भी कोई विधि बना सकता है।

कुछ शीर्षक जिनका यहां वर्णन है, जैसे कि अपमान-लेख, अपमान-वचन, मानहानि, राज्य की सुरक्षा इत्यादि, समवर्ती सूची में दिये हुए हैं अतः यदि इन विषयों के संबंध में निर्मित विधियों में कोई बड़ा भरी अन्तर है तो केन्द्र को हस्तक्षेप करने तथा ऐसी एकरूपता करने का अधिकार होगा जैसी केन्द्र इस प्रयोजन के लिए उचित समझे

*माननीय श्री के. सन्तानमः परन्तु न्यायालय अवमान समवर्ती सूची अथवा अन्य किसी सूची में सम्मिलित नहीं है।

*माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः वह तो सम्मिलित किया जा सकता है।

*अध्यक्षः मैं इन दो संशोधनों पर मत लूंगा। वास्तव में पंडित ठाकुर दास भार्गव का संशोधन श्री कृष्णामाचारी के संशोधन पर संशोधन नहीं है। वह पूर्णतया स्वाधीन रूप का संशोधन है। मैं उनको अलग-अलग रखूंगा। सर्वप्रथम में श्री कृष्णमाचारी के संशोधन पर मत लूंगा।

[अध्यक्ष]

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 13 के खंड (2) में 'defamation' शब्दों के पश्चात् 'Contempt of Court' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** इसके बाद मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव के संशोधन पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 415 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

"कि 'any law' शब्दों के स्थान में 'any reasonable law' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् हम नया अनुच्छेद 302 ककक को लेते हैं अर्थात् संशोधन संख्या 450। श्री सन्तानम ने एक सुझाव दिया है कि जो संशोधन अभी पारित किया गया है उसे पूर्ण रूप देने के लिए "न्यायालय-अवमान" को समवर्ती सूची में सम्मिलित कर देना चाहिये। और मैं समझता हूं कि यह आनुषंगिक बात है और अच्छा हो हम इसे ले लें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं एक संशोधन पेश करूंगा: श्रीमान् मैं पेश करता हूं:

"कि समवर्ती सूची में प्रविष्टि 15 के पश्चात् निम्नलिखित जोड़ दिया जाये: '15A. Contempt of Court.'

(15क. न्यायालय-अवमान।)"

***अध्यक्ष:** मैं नहीं समझता हूं कि इस पर कोई आपत्ति हो सकती है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** ऐसी बहुत-सी बातें होंगी।

***अध्यक्ष:** हो सकती है, पर वे समय पर प्रस्तुत होंगी। अत: मैं इस पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि समवर्ती सूची में प्रविष्टि 15 के पश्चात् निम्नलिखित जोड़ दिया जाये '15-A. Contempt of Court.'

(15 क. न्यायालय-अवमान।)"

संशोधन स्वीकार किया गया।

प्रविष्टि 15क संविधान में प्रविष्ट की गई।

नया अनुच्छेद 302 ककक

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् हम संशोधन संख्या 450 लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 302 कक के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

Special provisions as to major ports and aerodromes.

'302AAA. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution, the President may by public notification direct that as from such date as may be specified in the notification—

(a) any law made by Parliament or by the Legislature of a State shall not apply to any major port or aerodrome or shall apply thereto subject to such exceptions or modifications as may be a specified in the notification, or

(b) any existing law shall cease to have effect in any major port or aerodrome except as respects things done or omitted to be done before the said date, or shall in its application to such port or aerodrome have effect subject to such exceptions or modifications as may be specified in the notification.

(2) In this article—

(a) 'major port' means a port declared to be a major port by or under any law made by Parliament or any existing law and includes all areas for the time being included within the limits of such port;

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

(b) 'aerodrome' means aerodrome as defined for the purposes of the enactments relating to airways, aircraft and air navigation.'

महापत्तनों और विमान क्षेत्रों के लिए विशेष उपबन्ध।

[302ककक (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति लोक-अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि ऐसी तारीख से लेकर जैसी कि अधिसूचना में उल्लिखित हो-

(क) संसद या राज्य के विधान-मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि किसी महापत्तन या विमान-क्षेत्र को लागू न होगी अथवा ऐसे अपवादों या रूपभेदों के अधीन रह कर जैसे कि लोक-अधिसूचना में उल्लिखित हों, लागू होगी; अथवा

(ख) कोई वर्ममान विधि किसी महापत्तन या विमान-क्षेत्र में उक्त तारीख से पहले की हुई या किये जाने से छोड़ दी गई बातों के संबंध से अतिरिक्त अन्य बातों के लिए प्रभावी न होगी, अथवा ऐसे पत्तन या विमान-क्षेत्र में ऐसे अपवादों या रूपभेदों के अधीन रहकर, जैसे कि लोक-अधिसूचना में उल्लिखित हों, प्रभावी होगी।

(2) इस अनुच्छेद में-

(क) "महापत्तन" से अभिप्रेत है कोई पत्तन जो संसद द्वारा निर्मित किसी विधि या किसी वर्तमान विधि के द्वारा या अधीन महापत्तन घोषित किया गया है तथा उसके अंतर्गत वे सब क्षेत्र हैं जो तत्समय ऐसे पत्तन की सीमाओं के अन्तर्गत हैं;

(ख) "विमान-क्षेत्र" से अभिप्रेत है वायु-पथों, विमानों और विमान-परिवहन से संबंद्ध अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिए परिभाषित विमान-क्षेत्र।]"

श्रीमान इस अनुच्छेद को पेश करने का कारण यह है कि तत्कथित अन्तर्राष्ट्रीय विमान-क्षेत्रों के संबंध में कुछ कठिनाइयों का अनुभव किया गया है—वे कठिनाइयां उन यात्रियों—परराष्ट्र व्यक्तियों के आवागमन में व्यवस्था करने के प्रयत्न के कारण उत्पन्न होती हैं जो वहां आते हैं पर जो सामान्यतया उस समय उस प्रांत की विशेष विधियों के क्षेत्र के अंतर्गत नहीं आते हैं। जिनमें वे विमान-क्षेत्र स्थित हैं। मैं समझता हूं कि विचार यह है कि बम्बई के सान्ताक्रूज विमान-क्षेत्र तथा कलकत्ते के डमडम विमान क्षेत्र को अब अन्तर्राष्ट्रीय विमान-क्षेत्र समझा जायेगा। यह भी हो सकता है कि शीघ्र ही अन्य विमान-क्षेत्र भी इसी श्रेणी में आ जायें। मान लीजिये किसी प्रांत में मद्य के संबंध में पूर्ण प्रतिषेध विधि प्रवृत है तो जिस समय वह व्यक्ति जहाज पर से उतरता है और यदि उसके पास कुछ मद्य है तो वह उस प्रान्त की विधि के क्षेत्र के अंतर्गत आ जाता हैं जबकि उचित केवल यह है कि उसे उस राज्य की विधि के क्षेत्रान्तर्गत तब आना चाहिये जबकि वह विमान-क्षेत्र के बाहर जाकर राज्य-क्षेत्र में प्रवेश करे। और फिर कुछ विशिष्ट प्रतिभूति विनिमय

है जो विमान-क्षेत्रों में आवश्यक हो सकते हैं पर जो उस राज्य में प्रचलित प्रतिभूति-विनियमों की योजना के अनुकूल न हों। उदाहरणार्थ सैनिक विमान-क्षेत्रों में प्रतिभूति-विनियम बड़े कठोर होते हैं क्योंकि समूचा विमान-क्षेत्र सैनिक नियंत्रण के अधीन रहता है। असैनिक विमान-क्षेत्रों में स्थिति कुछ भिन्न होती है। जहां तक प्रतिभूति संबंधी प्रबन्धों तथा अन्य ऐसे ही विषयों का संबंध है केन्द्रीय सरकार को, जो असैनिक विमान-क्षेत्रों पर नियंत्रण रखती है, अधिकतर स्थानीय विधियों पर निर्भर करना पड़ता है और केवल निवारक कर्मचारी वृन्द को ही रखना आवश्यक नहीं है जिसके रखने की शक्ति अर्थसंबंधी विधान के द्वारा केन्द्रीय सरकार को है वरन् अंतर्राष्ट्रीय यातायात से तथा उनसे जो हस्तक्षेप करते हैं सुलझने के लिए विशेष शक्तियों युक्त विशेष आरक्षी भी रखनी पड़ती है।

महापत्तनों को भी यही आकस्मिकता लागू होगी विशेषकर नये पत्तनों को जो उन क्षेत्रों में स्थापित किये जायेंगे जिनको पहले देशी रियासतें कहा जाता था। इन पत्तनों के विषय में कुछ कठिनाइयां अनुभव की जा चुकी हैं और संभव है भविष्य में कुछ और कठिनाइयां हों। यह केवल एक शक्तिप्रदायक उपबन्ध है जो राष्ट्रपति को जो कठिनाइयां उत्पन्न होंगी उनको दूर करने की परिमित शक्तियां देता है और जिसके कारण प्रांतों को किसी विमान-क्षेत्र या पत्तन संबंधी विशेष परिस्थितियों के अनुकूल अपनी विधियों में परिवर्तन करना आवश्यक नहीं होगा। इस तथ्य के होते हुए भी कि राज्य में कोई महापत्तन या विमान क्षेत्र है यह प्रांतों को विधि बनाने में सहायता देगा और इसके द्वारा केन्द्र यदि चाहता है तो प्रांत में वर्तमान विधियों के अतिरिक्त विधियां पार कर या उस स्थिति की विशेष परिस्थितियों के अनुकूल उन विधियों में रूप भेद कर वह उन क्षेत्रों पर नियंत्रण करने की सहायता प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार के अनुच्छेद की उपयोगिता के विरुद्ध उदाहरण दिये जा सकते हैं पर उनकी मान्यता परिमित है। भविष्य में भिन्न प्रकार के उदाहरण पैदा होने की संभावना है। मैं फिर दुहराता हूं कि यह एक शक्तिप्रदायक उपबन्ध है जो प्रांतों की शक्तियों में किसी प्रकार का भी हस्तक्षेप नहीं करता है। महापत्तन तथा विमान क्षेत्र निर्विवाद रूप से केन्द्रीय नियंत्रण के अधीन है और राष्ट्रपति द्वारा की गई कार्यवाही के द्वारा केन्द्र को अतिरिक्त विधायी नियंत्रण रखने की भी शक्ति है।

इस अनुच्छेद का प्रयोजन साधारण-सा है और मुझसे यह कहा गया है कि अंतर्राष्ट्रीय यातायात संबंधी विमान क्षेत्र और महापत्तनों के प्रशासन के संबंध में यह बहुत आवश्यक है। मैं आशा करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करेगी।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** क्या सप्तम अनुसूची में कोई परिवर्तन करना आवश्यक नहीं होगा?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** जी नहीं, महापत्तन और विमान क्षेत्र केन्द्रीय विषय हैं।

***अध्यक्षः** प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना ने एक संशोधन की सूचना दी है। वे अपनी जगह पर नहीं हैं और इस कारण वह पेश नहीं किया जाता है।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि यह अनुच्छेद साधारण-सा क्यों कहा गया है और यह क्यों कहा गया है कि इसके द्वारा केवल आनुषंगिक परिवर्तन करने का प्रयास किया गया है।

***अध्यक्ष:** यह नहीं कहा गया था कि यह आनुषंगिक परिवर्तन है।

***श्री आर.के सिधवा:** प्रस्तावक महोदय ने कहा था कि यह एक साधारण-सा अनुच्छेद है और इसका संबंध अन्तर्राष्ट्रीय यातायात से है और यह सभा द्वारा स्वीकृत हो जाना चाहिये।

श्रीमान, प्रस्तावना में यह नहीं कहा गया है कि राष्ट्रपति को असाधारण शक्तियां क्यों दी जायें और उस विधि के अतिक्रमण करने की शक्ति क्यों दी जाये जिसे विमान क्षेत्र तथा महापत्तन के संबंध में संसद बनायेगी। वे विषय संघ सूची में आते हैं। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि खंड (क) में यह उपबन्ध क्यों किया गया है कि "संसद द्वारा या राज्य के विधान मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि"। मैं नहीं समझता हूं कि महापत्तनों तथा विमान क्षेत्रों के संबंध में विधि बनाने की शक्ति किसी राज्य को है।

श्रीमान यदि यह अनुच्छेद युद्ध अथवा ऐसे ही अन्य आपातों के लिए हो तब तो मैं इसे समझ सकता हूं। विगत दो महायुद्धों में जनता का महापत्तनों तथा विमान क्षेत्र में प्रवेश प्रतिषिद्ध है और उनके यातायात पर अनेक निर्बन्धन लगा दिये गये हैं। इन बातों को मैं समझ सकता हूं। पर मैं यह नहीं समझ पाता कि जब संसद सामान्य रूप से विधि निर्मित करती है तो उन विधियों का राष्ट्रपति द्वारा अतिक्रमण क्यों हो। राष्ट्रपति को ऐसा करने के लिए शक्तियां देने के कारण क्या हैं? इस संबंध में कुछ भी नहीं कहा गया है। आज अन्तर्राष्ट्रीय विमान पत्तनों में यदि कोई यात्री विदेश से आता है तो उसकी तलाशी होती है। उसका सामान और यहां तक कि स्वयं उसकी तलाशी ली जाती है। इस प्रयोजन के लिए चुंगी में दोनों पुरुष और स्त्री निरीक्षक होते हैं। ये सब निर्बन्धन अब भी हैं और इस कारण मैं नहीं समझता हूं कि राष्ट्रपति को यह शक्ति देने की कोई आवश्यकता है। जैसाकि मैं कह चुका हूं इस शक्ति की आवश्यकता को आपात में मैं मान सकता हूं। परन्तु जबकि संसद द्वारा निर्मित विधियां इस प्रयोजन के लिए सामान्यतया हैं तो इन विधियों के अतिक्रमण करने की शक्ति राष्ट्रपति को क्यों हो? मैं इस बात से सहमत हूं कि आपात में स्थिति भिन्न हो जायेगी। मुझे इसका व्यक्तिगत अनुभव है। पत्तनों पर उतरने चढ़ने वाले यात्रियों के संबंधियों का प्रवेश वहां नहीं होने दिया जाता है। ऐसे निर्बन्धन वहां आपात काल में होते हैं। राष्ट्रपति में यह शक्ति सौंपने की मैं कोई आवश्यकता नहीं देखता हूं। इसके स्थान में निम्नलिखित उपबन्ध का सुझाव दूंगा "इस संविधान में किसी बात के होते हुये भी राष्ट्रपति लोक अधिसूचना द्वारा यह निदेश देगा कि उस तिथि से जो उल्लिखित होगी आपात या युद्ध होने पर कोई विधि निर्मित की जा सकेगी।" यदि ये पंक्तियां जोड़ दी जायें तो इस अनुच्छेद का भिन्न अर्थ हो जायगा और वह आवश्यक हो सकता है। अन्यथा इसका यह आशय होगा कि आप संसद को विधि निर्माण करने की शक्ति से वंचित करना चाहते हैं। मैं इस बात का स्पष्टीकरण चाहता हूं कि "राज्य का विधान मंडल" शब्द क्यों रखे गये हैं। क्या किसी राज्य को विमान क्षेत्र संबंधी विधि बनाने की शक्ति है?

***माननीय डॉ. बी.आर अम्बेडकर:** श्रीमान् मैं समझता हूं कि मेरे मित्र श्री सिधवा ने स्थिति को बिल्कुल गलत समझा है। यदि वे अनुसूची सात सूची 2 के मद 30 और 35 को देखेंगे, जो उस विषय से संबंध रखते हैं जो मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा पेश किये संशोधन के अंतर्गत आता है तो उनको विदित होगा कि मद 30 और 35 के अधीन विधान बनाने की शक्ति जो केन्द्र को दी गई है वह बहुत ही परिमित रूप की है। मद 30 के अधीन दी गई शक्ति विमान यातायात के विनियमन तथा संगठन के प्रयोजन के लिए है। मद 35 के अधीन दी गई शक्ति विधान के परिसीमन के तथा पत्तन प्राधिकारियों की शक्ति के प्रयोजन के लिए है। उनको तुरन्त यह विदित हो जायेगा कि जहां तक विमान क्षेत्रों या विमान–पत्तनों तथा पत्तनों द्वारा घेरे गये राज्य क्षेत्र का संबंध है वह प्रांत के राज्य क्षेत्र का भाग है अत: राज्य द्वारा निर्मित कोई विधि विमान–क्षेत्र या पत्तन द्वारा घेरे गये क्षेत्र पर प्रयोज्य है। ये 30 और 35 प्रविष्टियां केन्द्र को उन सब विषयों के लिये विधान बनाने की शक्ति नहीं देती है जो इन प्रविष्टियों के अधीन केन्द्रीय सरकार के क्षेत्र के अंतर्गत हैं। ये शक्तियों परिमित हैं। अत: इस अनुच्छेद के अधीन प्रस्थापना यह है: यद्यपि विमान क्षेत्रों द्वारा तथा पत्तनों द्वारा घेरे गये क्षेत्रों को वह प्रांतों के क्षेत्र के भाग के रूप में रहने देता है–वह उनको अपवर्जित नहीं करता है—पर वह सूची 2 में दिये गये किसी मद के अधीन विधि बनाने की राज्य की शक्ति को बनी रहने देता है और ये विधियां विमान–क्षेत्रों तथा पत्तनों द्वारा घेरे गये क्षेत्रों पर प्रयोज्य होंगी। संशोधन में जो कुछ कहा गया है वह यह है कि यदि केन्द्रीय सरकार समझती है कि किसी विशेष कारणवश, जैसेकि स्वच्छता, निरोध इत्यादि, उस राज्य द्वारा कोई विधि बनाई जाती है जिसके अधिकार क्षेत्र में वह विमान–क्षेत्र तथा पत्तन स्थित है तो राष्ट्रपति को यह कहने का अधिकार होगा कि उस राज्य की वह विशेष विधि उस अथवा किसी अन्य अधिसूचना के अधीन विमान क्षेत्रों या पत्तनों को लागू होगी। जहां तक विमान क्षेत्रों और पत्तनों का संबंध है इससे अधिक केन्द्र की ओर से सूची 2 में दी हुई प्रविष्टियों के संबंध में राज्य की विधि बनाने की शक्तियों पर कोई आक्रमण नहीं होगा। मैं आशा करता हूं कि मेरे मित्र श्री सिधवा अब अपना विरोध वापस ले लेंगे।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधन संख्या 450 पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 302 कक के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

Special provisions as to major ports and aerodromes.

'302AAA. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution, the President may by public notification direct that as from such date as may be specified in the notification—

(a) any law made by Parliament or by the Legislature of a State shall not apply to any major port or aerodrome or shall apply thereto subject to such exceptions or

[अध्यक्ष]

modifications as may be specified in the notification, or

(b) any existing law shall cease to have effect in any major port or aerodrome except as respects things done or omitted to be done before the said date, or shall in its application to such port or aerodrome have effect subject to such exceptions or modifications as may be specified in the notification.

(2) In this article—

(a) 'major port' means a port declared to be a major port by or under any law made by Parliament or any existing law and includes all areas for the time being included within the limits of such port;

(b) 'aerodrome' means aerodrome as defined for the purposes of the enactments relating to airways, aircraft and air navigation.'

[302ककक. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति लोक अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि ऐसी तारीख से लेकर जैसी कि अधिसूचना में उल्लिखित हो–

महापत्तनों और विमान क्षेत्रों के लिए विशेष उपबन्ध।

(क) संसद या राज्य के विधान-मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि किसी महापत्तन या विमान-क्षेत्र को लागू न होगी अथवा ऐसे अपवादों या रूप भेदों के अधीन रहकर, जैसे कि लोक-अधिसूचना में उल्लिखित हों, लागू होगी, अथवा

(ख) कोई वर्तमान विधि किसी महापत्तन या विमान-क्षेत्र में उक्त तारीख से पहले की हुई या किये जाने से छोड़ दी गई बातों के संबंध से अतिरिक्त अन्य बातों के लिए प्रभावी न होगी, अथवा ऐसे पत्तन या विमान-क्षेत्र में ऐसे अपवादों या रूप भेदों के अधीन रहकर, जैसे कि लोक-अधिसूचना में उल्लिखित हों, प्रभावी होगी।

(2) इस अनुच्छेद में–

(क) "महापत्तन" से अभिप्रेत है कोई पत्तन जो संसद द्वारा निर्मित किसी विधि या किसी वर्तमान विधि के द्वारा या अधीन महापत्तन घोषित किया गया है तथा उसके अंतर्गत

वे सब क्षेत्र हैं जो तत्समय ऐसे पत्तन की सीमाओं के अंतर्गत हैं;

(ख) "विमान-क्षेत्र" से अभिप्रेत है वायु-पथों, विमानों और विमान-परिवहन से संबद्ध अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिए परिभाषित विमान-क्षेत्र।]"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 302 ककक संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्षः** इसके पश्चात् हम अगले मद अनुच्छेद 306 क पर आते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि हम अगले मद को इस समय छोड़ दें ओर अनुसूची 3 क को ले लें।

***अध्यक्षः** हां, हम उसे ले सकते हैं।

अनुसूची 3क

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदयः

"कि अनुसूची 3 के पश्चात् यह अनुसूची प्रविष्ट की जायेः

'SCHEDULE III-A

[ARTICLES 4(1) & 67(1A)]

ALLOCATION OF SEATS IN THE COUNCIL OF STATES

To each State or States specified in the first column of the table of seats appended to this Schedule there shall be allotted the number of seats specified in the second column of the said table opposite to that State or States, as the case may be.

TABLE OF SEATS

THE COUNCIL OF STATES

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART I OF THE FIRST SCHEDULE

	States	Total Seats
	1	2
1.	Assam	6
2.	Bengal	14

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

	1	2
3.	Bihar	21
4.	Bombay	17
5.	Koshal-Vidarbh	12
6.	Madras	27
7.	Orissa	9
8.	Punjab	8
9.	United Provinces	30
	Total	144

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART II OF THE FIRST SCHEDULE

	States and Groups of States	Total Seats
1.	Ajmer }	1
2.	Coorg }	
3.	Bhopal	1
4.	Bilaspur }	1
5.	Himachal Pradesh }	
6.	Cooch-Behar	1
7.	Delhi	1
8.	Kutch	1
9.	Manipur }	1
10.	Tripura }	
11.	Rampur	1
	Total	8

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART III OF THE FIRST SCHEDULE

	States	Total Seats
	1	2
1.	Hyderabad	11
2.	Jammu and Kashmir	4
3.	Madhya Bharat	6

1		2
4.	Mysore	6
5.	Patiala and East Punjab States Union	3
6.	Rajasthan	9
7.	Saurashtra	4
8.	Travancore-Cochin	6
9.	Vindhya Pradesh	4
	Total	53
	Total of all Seats	205' "

[अनुसूची 3क
[अनुच्छेद् 4 (1) और 67 (1क)]

राज्य-परिषद में के स्थानों का बंटवारा

इस अनुसूची से संलग्न स्थान-सारिणी के प्रथम स्तम्भ में उल्लिखित प्रत्येक राज्य या राज्यों को यथास्थिति उतने स्थान बांट में दिये जायेंगे जितने कि उक्त सारिणी के दूसरे स्तम्भ में उस राज्य या राज्यों के सामने उल्लिखित हैं।

स्थान-सारिणी

राज्य-परिषद्

प्रथम अनुसूची के भाग (1) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य	कुल स्थान
	1	2
1.	आसाम	6
2.	उड़ीसा	9
3.	पंजाब	8
4.	बंगाल	14
5.	बिहार	21
6.	मद्रास	27
7.	कौशल-विदर्भ	12
8.	मुम्बई	17
9.	युक्त प्रदेश	30
	कुल	144

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

प्रथम अनुसूची के भाग (2) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य और राज्य समूह	कुल स्थान
1.	अजमेर	1
2.	कोड़गु	
3.	कच्छ	1
4.	कोच-बिहार	1
5.	दिल्ली	1
6.	बिलासपुर	1
7.	हिमाचल प्रदेश	
8.	भोपाल	1
9.	मनीपुर	1
10.	त्रिपुरा	
11.	रामपुर	1
	कुल	8

प्रथम अनुसूची के भाग (3) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य	कुल स्थान
1.	जम्मू और कश्मीर	4
2.	तिरुवांकुर-कोचीन	6
3.	पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य	3
4.	मध्य भारत	6
5.	मैसूर	6
6.	राजस्थान	9
7.	विन्ध्य प्रदेश	4
8.	सौराष्ट्र	4
9.	हैदराबाद	11
	कुल	53
	कुल स्थानों का जोड़	205]"

श्रीमान्, ये तीन सारिणियां हैं, एक उन राज्यों के संबंध में है जो भाग 1 में उल्लिखित है, दूसरी भाग 2 में उल्लिखित राज्यों के संबंध में है और तीसरी भाग 3 में उल्लिखित राज्यों के संबंध में है और बांट में दिये जाने वाले स्थानों की कुल संख्या 205 होती है। श्रीमान, संविधान में तत्संबंधी अनुच्छेद 67

खंड (1), (2), (3) और (4) हैं और माननीय सदस्यों ने यह देखा होगा कि खंड (1) के अधीन अधिकतम संख्या 250 नियत की गई है जिनमें बारह सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत होंगे और शेष राज्यों के प्रतिनिधि होंगे इन सारिणियों की योजना का आधार संघ संविधान समिति का पहली दिसम्बर सन् 1948 की बैठक का विनिश्चय है जिसमें इस सभा के निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे:

माननीय श्री जवाहर लाल नेहरू,

माननीय श्री जगजीवन राम,

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर,

श्री के.एम. मुंशी,

प्रो. के.टी. शाह,

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी, और

श्री बी.एच. जैदी।

यदि मुझे अनुमति दी जाये तो मैं इस समिति के प्रतिवेदन के सुसंगत भाग को पढ़कर सुनाऊंगा।

"कार्यालय द्वारा तैयार की गई राज्य-परिषद् में स्थानों के बंटवारे की पुनरीक्षित योजना के विवरण को इस समिति ने नहीं लिया क्योंकि भिन्न-भिन्न प्रकार के विलयन के कारण देशी राज्यों की स्थिति अभी अनिश्चित है। उसका यह विचार है कि स्थानों के विवरण पूर्ण बंटवारे पर किसी बाद की तिथि तक विचार स्थगित कर दिया जाये। अपने पहले विनिश्चय को दुहराते हुए कि राज्य-परिषद में एककों का प्रतिनिधान प्रत्येक दस लाख जनसंख्या से लेकर पचास लाख जनसंख्या तक एक प्रतिनिधि के हिसाब से और उसके पश्चात् प्रत्येक बीस लाख जनसंख्या पर एक और प्रतिनिधि के हिसाब से होगा, समिति ने एक और विनिश्चय को मानना आवश्यक समझा कि किसी एक एकक से प्रतिनिधियों की अधिकतम संख्या 25 तक परिमित होगी। यह देखा गया कि केवल दो राज्य मद्रास और संयुक्त प्रांत पर ऐसे परिसीमन के आरोपण का प्रभाव पड़ेगा और एकरूपता लाते हुए इस परिसीमा के निराकरण से स्थानों की समस्त संख्या में सात स्थानों की वृद्धि होगी जो उस समस्त 250 सदस्यों की अधिकतम संख्या के अंतर्गत होगी जो संविधान के मसौदे के अनुच्छेद 67(1) में उपबंधित है।"

श्रीमान्, संघ संविधान समिति के इस प्रतिवेदन के आधार पर प्रत्येक दस लाख से पचास लाख जनसंख्या तक एक स्थान और प्रत्येक बीस लाख की और अधिक जनसंख्या पर एक और स्थान के हिसाब से स्थान बांटे जाने चाहियें और इसका कुल जोड़ लगा लिया गया है और जैसा कि माननीय सदस्य देखेंगे कि कुल जोड़ 205 जिसमें 12 राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत और जोड़कर 217 हो जाता है। हमारे पास अभी अनुच्छेद 67(1) में उल्लिखित अधिकतम संख्या तक पहुंचने के लिए 33 स्थान शेष हैं।

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

मैं यह कहना चाहूंगा कि यह क्यों आवश्यक है क्योंकि हम कोई और योजना भी अभिस्वीकृत कर सकते थे चाहे वह संघ संविधान समिति की सिफारिशों के विरुद्ध होती। सभा के माननीय सदस्य यह समझ जायेंगे कि यह हो सकता है कि भाग 1 में के एककों में आगे और जोड़ तोड़ हो। यदि ऐसा होगा तो यह स्वाभाविक है कि संख्या में वृद्धि होगी क्योंकि एककों के प्रत्येक जोड़ तोड़ से कम से कम 5 सदस्य संख्या और बढ़ जायेगी। इस संविधान के अनुच्छेद 3 के अधीन भावी सरकारों द्वारा की गई कार्यवाही के आधार पर फिर बंटवारा करने से इस संख्या 217 को और भी अधिक बढ़ाना आवश्यक हो जायेगा इसलिए संघ संविधान समिति द्वारा बताई गई योजना के अनुसार यह उपबंध कर दिया गया है कि दस लाख से पचास लाख तक एक स्थान और इसके बाद प्रत्येक बीस लाख पर एक स्थान जो मैं समझता हूं कि एक बहुत ही उचित प्रबन्ध है और जहां तक भविष्य का संबंध है इसके कारण कार्य में स्वतंत्रता हो जायेगी। जहां तक इन संख्याओं का संबंध है मैं इनके सही होने का दावा नहीं करता हूं। यह भी हो सकता है कि व्यवस्था किसी दूसरी प्रकार से हो। उदाहरणार्थ भाग 2 में के राज्यों के पुनर्सामुहिककरण पर आपत्ति की जाये। यह सम्मति पर निर्भर करता है।

मैं समझता हूं कि यह योजना ठीक है पर यदि इस सभा के सदस्यों तथा बाहर की जनता को कोई आपत्ति है तो उन आपत्तियों की जांच की जायेगी और वे आपत्तियां आपके सामने रखी जायेंगी और यदि आप मुझे आज्ञा देंगे तो बाद में आवश्यक संशोधन पेश कर दिये जायेंगे, पर मैं नहीं समझता हूं कि अब से लेकर तृतीय पठन तक सभा के समक्ष रखे गये इस प्रबंध में किसी भी गंभीर परिवर्तन की आवश्यकता हो।

मैं एक और बात का जिक्र करना चाहूंगा कि इस संशोधन के करने से मुझे तीन आनुषंगिक संशोधन करने पड़ेंगे क्योंकि कुछ परिवर्तन हो गये हैं। एक बात यह है कि अनुच्छेद 67 (1क) अनुसूची 3ख के संबंध में है। इस अनुच्छेद के इस विशिष्ट उपखंड में एक संशोधन आवश्यक होगा। अनुच्छेद 4 में भी एक संशोधन आवश्यक होगा क्योंकि अनुच्छेद 4 पर विचार करते समय प्रथम अनुसूची के साथ हम राज्य-परिषद् में स्थान-सारिणी संबंधी अनुसूची का वर्णन करना भूल गये। अनुच्छेद 4 इस प्रकार है:

> "इस संविधान के अनुच्छेद 2 अथवा 3 में निर्दिष्ट किसी विधि में, प्रथम अनुसूची के संशोधनार्थ, ऐसे उपबंध होंगे, जो उस विधि के उपबंधों को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक हों, तथा ऐसे प्रासंगिक तथा आनुषंगिक उपबन्ध भी हो सकेंगे जैसे संसद आवश्यक समझे।"

प्रथम अनुसूची में कोई परिवर्तन अनुसूची 3 में परिवर्तन आवश्यक कर देगा। प्रथम अनुसूची और तृतीय अनुसूची को साथ-साथ लेना आवश्यक है। बाद में अनुसूची 3क को अनुच्छेद 4 में रखने का संशोधन पेश करूंगा। यदि वह संशोधन, जिसे मैंने अभी अनुसूची 3क को समाविष्ट करने के लिए पेश किया है जिसमें राज्य-परिषद् की स्थान-सारिणी दी हुई है, सभा द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो बाद में ये संशोधन पेश किये जायेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं यह नहीं जानता हूं कि मेरे माननीय मित्र ने एक बार फिर मेरे माननीय साथियों को "इस सभा में के लोग" के रूप में उल्लेख क्यों किया।

***अध्यक्षः** उन्होंने "माननीय सदस्य और बाहर की जनता" कहा था।

प्रश्न यह है:

"कि अनुसूची 3 के पश्चात् निम्नलिखित अनुसूची प्रविष्ट की जाये

'SCHEDULE III-A

[ARTICLES 4(1) & 67(1a)]

ALLOCATION OF SEATS IN THE COUNCIL OF STATES

To each State or States specified in the first column of the table of seats appended to this Schedule there shall be allotted the number of seats specified in the second column of the said table opposite to that State or States, as the case may be.

TABLE OF SEATS

THE COUNCIL OF STATES

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART I OF THE FIRST SCHEDULE

	States	Total Seats
1.	Assam	6
2.	Bengal	14
3.	Bihar	21
4.	Bombay	17
5.	Koshal-Vidarbh	12
6.	Madras	27
7.	Orissa	9
8.	Punjab	8
9.	United Provinces	30
	Total	144

[अध्यक्ष]

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART II OF THE FIRST SCHEDULE

States and Groups of States	Total Seats
1. Ajmer 2. Coorg	1
3. Bhopal	1
4. Bilaspur 5. Himachal Pradesh	1
6. Cooch-Behar	1
7. Delhi	1
8. Kutch	1
9. Manipur 10. Tripura	1
11. Rampur	1
Total	8

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART III OF THE FIRST SCHEDULE

States	Total Seats
1. Hyderabad	11
2. Jammu and Kashmir	4
3. Madhya Bharal	...6
4. Mysore	6
5. Patiala and East Punjab States Union	3
6. Rajashtan	9
7. Saurashtra	4
8. Travancore-Cochin	6
9. Vindhya Pradesh	4
Total	53
Total of all Seats	205'

[अनुसूची 3क

[अनुच्छेद 4(1) और 67(1क)]

राज्य-परिषद् में के स्थानों का बंटवारा

इस अनुसूची से संलग्न स्थान-सारिणी के प्रथम स्तम्भ में उल्लिखित प्रत्येक राज्य या राज्यों को यथास्थिति उतने स्थान बांट में दिये जायेंगे जितने कि उक्त सारिणी के दूसरे स्तम्भ में उस राज्य या राज्यों के सामने उल्लिखित हैं।

स्थान-सारिणी

राज्य-परिषद्

प्रथम अनुसूची के भाग (1) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य	कुल स्थान
1.	आसाम	6
2.	उड़ीसा	9
3.	पंजाब	8
4.	बंगाल	14
5.	बिहार	21
6.	मद्रास	27
7.	कौशल-विदर्भ	12
8.	बम्बई	17
9.	युक्त प्रदेश	30
	कुल	144

प्रथम अनुसूची के भाग (2) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य और राज्य समूह 1	कुल स्थान 2
1.	अजमेर }	1
2.	कोड़गु }	
3.	कच्छ	1

[अध्यक्ष]

1	2
4. कोच-बिहार	1
5. दिल्ली	1
6. बिलासपुर 7. हिमाचल प्रदेश	1
8. भोपाल	1
9. मनीपुर 10. त्रिपुरा	1
11. रामपुर	1
कुल	8

प्रथम अनुसूची के भाग (3) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

राज्य	कुल स्थान
1. जम्मू और कश्मीर	4
2. तिरुवांकुर-कोचीन	6
3. पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य	3
4. मध्य भारत	6
5. मैसूर	6
6. राजस्थान	9
7. विन्ध्य प्रदेश	4
8. सौराष्ट्र	4
9. हैदराबाद	11
कुल	53
कुल स्थानों का जोड़	205]"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुसूची 3-क संविधान में प्रविष्ट की गई।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 67 के खंड (1क) में 'Schedule III B' शब्द, संख्या और अक्षर के स्थान में 'Schedule IIIA' शब्द, संख्या और अक्षर रखे जायें।"

इस संशोधन की आवश्यकता मैं बतला ही चुका हूं। मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

*__अध्यक्षः__ यह केवल आनुषंगिक है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 67 के खंड (1क) में 'Schedule III B' शब्द, संख्या और अक्षर के स्थान में 'Schedule III A' शब्द, संख्या और अक्षर रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'First Schedule' शब्दों के पश्चात्, 'and Schedule III A' शब्द, संख्या और अक्षर रखे जायें।"

इस संशोधन की आवश्यकता को भी मैं बता चुका हूं। मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

*__अध्यक्षः__ यह भी आनुषंगिक है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'First Schedule ' शब्दों के पश्चात्, 'and Schedule III A' शब्द, संख्या और अक्षर जोड़ दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'incidental and consequential provisions' शब्दों के स्थान में 'supplemental, incidental and consequential provisions (including provisions as to representation in Parliament and in the Legislature or Legislatures of the State or States to be affected by such law)' शब्द और कोष्ठक रख दिये जायें।"

यह उन शब्दों का रूप भेद है जिन्हें हम हटाना चाहते हैं। इस संशोधन में ऐसी यथार्थ बात कोई नहीं है जो अनुच्छेद 4 में दिये हुए किसी सिद्धांत का परिवर्तन करती हो।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमदः__ क्या इससे मूल पाठ के क्षेत्र का परिवर्द्धन हो जाता है?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ केवल इस सीमा तक कि अनुच्छेद 4 अनुच्छेद 3 के संबंध में एक प्रवृतनीय खंड है, और यह परिवर्तन केवल उसी सीमा तक निर्बन्धित है जिस तक वह नितांत आवश्यक है।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'incidental and consequential provisions' शब्दों के स्थान में 'supplemental, incidental and consequential provisions (including provisions as to representation in Parliament and in the Legislature or Legislatures of the State or States to be affected by such law)' शब्द और कोष्ठक रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

भाग 18

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि भाग 18 के स्थान में निम्नलिखित भाग रखा जाये:

'Part XVIII

Short Title, Commenement and Repeals.

Short title 313A. This Constitution may be called the Constitution of India.'

[भाग 18

संक्षिप्त नाम, प्रारम्भ और निरसन।

संक्षिप्त नाम 313क—यह संविधान भारत का संविधान नाम से ज्ञात हो सकेगा।]"

***श्री बी. दास:** आपको "इंडिया अर्थात् भारत" कहना चाहिये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** जैसे हमने संविधान में अन्यत्र इंडिया का प्रयोग किया है उसी प्रकार से इस शब्द का हमने यहां प्रयोग किया है।

" '314. This article and articles 5, 5A, 5AA, 5B, 303, 311' 311A and 312F of this Constitution shall come into force at once, and the remaining provisions thereof shall come into force on the twenty-sixth day of January, 1950, which date is referred to in this Constitution as the date of commencement of this Constitution.

Commencement

315. The Indian Independence Act, 1947, in so far as its provisions are repugnant to this Constitution and the Government of India Act, 1935, including the India (Central Government and Legislature) Act, 1946 and, all other enactments amending or supplementing the Government of India Act, 1935, shall cease to have effect: Repeals

Provided that nothing in this article shall affect the provisions of the Abolition of Privy Council Jurisdiction Act, 1949.'

[314—यह अनुच्छेद और अनुच्छेद 5, 5क, 5कक, 5ख, 303, 311, 331क और 312 (च) तुरन्त प्रवृत्त होंगे, तथा इस संविधान के अवशिष्ट उपबन्ध 1950 की 26 जनवरी के दिन प्रवृत होंगे जो दिन कि इस संविधान में इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि के रूप में निर्दिष्ट किया गया है। प्रारम्भ

315—भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947, उस सीमा तक जहां तक कि उसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध है, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935, भारत (केन्द्रीय शासन और विधान-मंडल) अधिनियम, 1946 के सहित, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935 को संशोधन और अनुपूरण करने वाली सब अधिनियमितियां प्रभाव-शून्य हो जायेंगे: निरसन

परन्तु इस अनुच्छेद की किसी बात से प्रिवी कौंसिल क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1949 के उपबन्धों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।]

श्रीमान, प्रथम खंड 313 क औपचारिक है। दूसरा खंड अनुच्छेद 314 के संबंध में है जिसके लिए संविधान के मसौदे में "यह संविधान भारत का संविधान... ....." शब्दों के पश्चात् खाली स्थान छोड़ दिया गया था। इस खंड में नागरिकता संबंधी अनुच्छेद 5 (क), 5 कक और 5 ख, (परिभाषायें) अनुच्छेद 303 और अनुच्छेद 311, 311क और 312 (च) जो अन्तर्कालीन उपबंद हैं, रखे गये हैं। 311क अन्तर्कालीन संसद के निर्वाचन के और 311 क अन्तर्कालीन राष्ट्रपति के निर्वाचन के संबंध में हैं और अनुच्छेद 312(च) अन्तर्कालीन संसद के संबंध में है जिससे कि उपनिर्वाचनों में पालन की जाने वाली रीति का तथा इस प्रयोजन के लिये पालन किये जाने वाले नियमों का विनिश्चयन हो सके। चूंकि ये अनुच्छेद तुरन्त ही प्रवृत होंगे इसलिए ये रख दिये गये हैं। अवशिष्ट अनुच्छेद एक नियत किये हुए दिन को प्रवृत होंगे जो 1950 की 26 जनवरी है।

जहां तक अनुच्छेद 315 का संबंध है, यह न्यूनाधिक रूप से संविधान के मसौदे की योजना के अनुसार है केवल इस अपवाद के कि हमने यह उपबन्ध

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

करना आवश्यक समझा कि इस सभा द्वारा पारित प्रिवी कौंसिल क्षेत्राधिकार अधिनियम के प्रवर्तन पर इस निरसन का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। मैं नहीं समझता हूं कि इन अनुच्छेदों के आशय को समझाना आवश्यक है क्योंकि ये अनुच्छेद स्वयं व्याख्यात्मक है।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन के लिए एक आयोग की नियुक्ति के बारे में क्या विचार है?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** उसको हमने नहीं रखा है। मैं उसे जोड़ना चाहूंगा। उदाहरणार्थ अनुच्छेद 290 के अधीन निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन का प्रश्न हो सकता है। इसके पूर्व अन्तर्कालीन संसद द्वारा एक विधान पारित होना चाहिये। मैं नहीं समझता हूं कि अब से लेकर 26 जनवरी 1950 तक इस संबंध में कुछ किया जा सकता है। यदि आपकी अनुज्ञा हो तो यहां मैं एक और विषय का जिक्र करूंगा। ये वे अनुच्छेद हैं जिनका अनुच्छेद 314 में रखना अब हमें आवश्यक प्रतीत होता है। इस स्थिति की जांच कुछ समय बाद की जायेगी। मैं समझता हूं कि भारत सरकार से सम्बद्ध विधि मंत्रालय इस समूचे विषय पर विचार कर रहा है और संविधान के उन उपबंधों की सावधानीपूर्वक जांच कर रहा है जिनको नियुक्त तिथि से पूर्व प्रवृत्त करना होगा। यदि हमने यह अनुभव किया कि इन अनुच्छेदों में कुछ बातें जोड़ी जायें तो बाद में उन बातों को रखने के लिए हम आपकी तथा इस सभा की अनुज्ञा ले लेंगे। अनुच्छेदों का अध्ययन करने के बाद और उन अनुच्छेदों के आशय की जांच करने के बाद इस समय ये ही ऐसे अनुच्छेद हैं जिन पर, जहां तक हम देख सकते हैं, प्रभाव पड़ा है। परन्तु अन्य आनुषंगिक विषय उत्पन्न हो सकते हैं, और यदि अनुच्छेदों की जांच और परीक्षण करने पर हमें ऐसे विषय दिखाई दिये तो आपकी अनुज्ञा प्राप्त कर हम उन विषयों को अवश्य सभा के समक्ष रखेंगे।

***अध्यक्षः** मूल अनुच्छेद संबंधी कुछ संशोधन हैं। यदि सदस्य चाहते हैं और यदि वे इस समय रखे गये संशोधन में ठीक बैठते हैं तो मैं उन्हें ले लूंगा। ऐसे संशोधन तीन ये हैं। एक डॉ. देशमुख का है। वे यहां पर नहीं हैं इस कारण वह पेश नहीं किया जाता है। दूसरा श्री ब्रजेश्वर प्रसाद का है वे भी यहां नहीं हैं। इसलिए वह भी पेश नहीं किया जाता है। इसके बाद अनुच्छेद 315 के संबंध में डॉ. देशमुख का एक और संशोधन है। अतः वह भी पेश नहीं किया जाता है। क्या और भी हैं?

***श्री एच.वी. कामतः** मुद्रित सूची के अंक 2 में मेरे कुछ संशोधन हैं।

***अध्यक्षः** आप उन्हें पेश कर सकेंगे। पर मैं समझता हूं कि हम उन्हें आरम्भ से लें। सर्वप्रथम 314, इस पर कुछ संशोधन हैं। एक श्री एन. अहमद का, इस अध्याय की क्रम संख्या के संबंध का है। यह शाब्दिक है और इसको लेना आवश्यक नहीं है। श्री प्रकाशम् यहां नहीं हैं। श्री लारी अब सदस्य नहीं हैं। 314 पर और कोई संशोधन नहीं है। 315 पर कामत द्वारा एक संशोधन संख्या 3325 है। वे उसे पेश कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मैं मुद्रित सूची 2 के संशोधन 3325 और 3327 का उल्लेख करता हूं। संशोधन संख्या 3325 को मैं पेश करना नहीं

चाहता हूं क्योंकि जिस रूप में यह अनुच्छेद अब मेरे माननीय मित्र श्री कृष्णमाचारी ने पेश किया है। उसमें जिस तिथि को यह संविधान प्रवृत होगा उस तिथि के संबंध में अनुच्छेद 314 में परिवर्तन कर दिया गया हैं अत: मेरा वह संशोधन जो संविधान की आरम्भ तिथि के संबंध में था अब कोई मान्यता नहीं रखता है। संशोधन संख्या 3327 शाब्दिक अथवा औपचारिक है। सभा ने यह देखा होगा कि अनुच्छेद 315 का हाशिये में शीर्षक "निरसन" है और इसके अनुरूप मैंने सोचा कि इस अनुच्छेद के अंत में "प्रभावशून्य होंगे" के स्थान में "निरसित किये जायेंगे" कहना अधिक ठीक होगा। वास्तव में मैं न तो वकील हूं और न संविधानिक शब्दावलियों तथा पदावलियों के विषय का माना हुआ विद्वान हूं। मैं इस विषय को मसौदा-समिति की सामूहिक बुद्धिमता पर छोड़ने से संतुष्ट हूं।

पर श्रीमान्, अभी मेरे माननीय मित्र श्री कृष्णमाचारी ने जो संशोधन 463 पेश किया है उसके संबंध में मैं कुछ बातें कहना चाहूंगा। पहली बात जिस रूप में उन्होंने अनुच्छेद 315 पेश किया है उसके संबंध में है। यह भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947 के संबंध में है। यदि सभा इसकी तुलना इस अनुच्छेद के मूल मसौदे से करेगी तो उनको यह विदित हो जायेगा कि "उस सीमा तक जहां तक कि इसके उपबंध इस संविधान के विरुद्ध हैं" शब्द नये प्रविष्ट किये गये हैं। मूल मसौदा इस विषय में मौन था। मैं यह जानना चाहूंगा कि इन शब्दों का वास्तविक महत्व क्या है। क्या हम साफ, स्पष्ट तथा निश्चित रूप में यह नहीं कहते हैं कि इस संविधान के आरम्भ की तिथि से भारत स्वाधीनता अधिनियम निरसित हो जायेगा तथा भारत शासन अधिनियम और जो कुछ हो वह भी? जब यह संविधान प्रवृत होता है तो उस तिथि तक जो विधियां प्रवृत थीं वे सब अपने आप रद्द तथा शून्य हो जाती हैं। अत: "उस सीमा तक जहां तक उसके उपबंध इस संविधान के विरुद्ध हैं" शब्द अनावश्यक हैं और इनको अपमार्जित किया जाये। मुझे खेद है कि मेरे पास संशोधन की सूचना देने का समय नहीं था।

अनुच्छेद 314 इस संविधान के आरम्भ की तिथि का निर्देशन करता है। यह ठीक है कि कुछ अनुच्छेद तुरन्त प्रवृत होंगे। इस विषय पर मुझे कुछ भी नहीं कहना है। पर इस अनुच्छेद के दूसरे भाग के बारे में जिसमें यह कहा गया है कि शेष संविधान 1950 की 26 जनवरी से प्रवृत होगा मैंने कुछ समय पूर्व एक सुझाव दिया था कि हमारे राष्ट्रीय पत्र में 26 जनवरी की अपनी निराली पवित्रता है इस बात को अपने संपूर्ण हृदय से मानते हुए यह सुझाव दिया था कि फिर भी हम कोई और दिन रखें और वह दिन वस्तुस्थिति के अनुकूल तथा एक बहुत ही उपयुक्त रूप में हमारी पूर्ण स्वतंत्रता तथा गणतंत्रात्मक रूप का प्रतीक हो। हम उसका नाम "गणराज्य दिवस" रख सकते हैं। 26 जनवरी तो फिर भी "स्वाधीनता दिवस" के रूप में माना जा सकता है, वह दिन जिस दिन हमने प्रसिद्ध स्वाधीनता शपथ ग्रहण की थी, जिसे हम अपने राष्ट्रीय पत्रे में अन्य दिवस के समान मान सकते हैं। "स्वाधीनता दिवस" और "गणराज्य दिवस" के एक

[श्री एच.वी. कामत]

होने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है, पर मैं समझता हूं कि यदि हम "स्वाधीनता दिवस" 26 जनवरी को रखें और जनवरी या दिसम्बर के किसी और दिन "गणराज्य दिवस" रखें तो इससे हमारे राष्ट्रीय पत्रे का महत्व और अधिक बढ़ जायेगा। यदि हो सके तो 9 दिसम्बर 1949 को हम "गणराज्य दिवस" रखें क्योंकि इस ऐतिहासिक सभा का आरम्भ हमने 9 दिसम्बर को किया था। पर शायद उस समय तक ये सब बातें तैयार नहीं हो सकती हैं अतः जनवरी के किसी दिन के लिए सुझाव दूंगा और उस दिवस को "स्वाधीनता दिवस" या "गांधी जयंती" या अन्य किसी राष्ट्रीय दिवस के समान "गणराज्य दिवस" के रूप में मनाया जाये। सभा से अपने एक इस प्रकार के छोटे से निवेदन पर विचार करने के लिए प्रार्थना करूंगा कि हम यह भी कह सकते हैं कि इस संविधान के अवशिष्ट उपबन्ध 25-26 की अर्द्ध-रात्रि से प्रवृत होंगे। जिस प्रकार से हमने स्वतंत्रता का स्वागत 14-15 अगस्त 1947 की रात्रि को किया था उसी प्रकार से यदि हम यहां निश्चित रूप से यह कह दें कि इस संविधान के अवशिष्ट उपबंध 25-26 जनवरी की रात्रि से प्रवृत होंगे तो यह वस्तुस्थिति के अनुकूल होगा और यदि आज यह स्वीकार कर लिया जाता है तो इससे एक और ऐतिहासिक उत्सव मनाने का मार्ग खुल जायेगा।

मैं यह नहीं जानता हूं कि ज्योतिषी लोग इस विषय में क्या कहेंगे, क्योंकि पिछली बार जब उनसे परामर्श किया गया था तो उस तिथि के शुभ होने के बारे में मतभेद था।

*__अध्यक्षः__ उन्होंने अपना मत बिना पूछे दिया था।

*__श्री एच.वी. कामतः__ बाहर के मित्रों ने उनसे परामर्श किया था और वे इस बात से पूर्णतया सहमत न थे कि वह पूर्णरूप से शुभ है। मैं नहीं समझता हूं कि हमें सदैव ज्योतिषियों की सम्मति पर निर्भर करना चाहिये, पर अन्य बातें समान होने पर हम उसे 25-26 जनवरी 1950 की अर्द्ध रात्रि को भी मना सकते हैं।

मैं आशा करता हूं कि श्री टी.टी. कृष्णमाचारी मेरी बातें सुन रहे थे और जो सुझाव मैंने दिये हैं उनका उत्तर देने का वे भरसक प्रयत्न करेंगे।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः__ मैं अपना संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं, पर श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो संशोधन पेश किया है उसके प्रति प्रस्थापित अनुच्छेद 315 के बारे में मुझे कुछ कठिनाई है। अनुच्छेद 315 में यह कहने का प्रयत्न किया गया है कि भारत स्वाधीनता अधिनियम उस सीमा तक जिस तक कि वह इस संविधान के विरुद्ध है प्रभाव शून्य होगा। मैं समझता हूं कि यह बात पुराने अनुच्छेद 307 के अंतर्गत आ जानी चाहिये। मैं यह नहीं जानता हूं कि उस अनुच्छेद का क्या हुआः उसको पेश करने का विचार है या नहीं। पर संविधान के मसौदे में अनुच्छेद 307.....

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ दूसरा अनुच्छेद 307 पेश किया जा चुका है। तथा स्वीकार हो गया है और इस संविधान का अंग है।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः__ इस अनुच्छेद 307 के अंतर्गत 315 आ जाता है। मैं पुराने अनुच्छेद को निर्दिष्ट कर रहा हूं और मैं समझता हूं कि नया अनुच्छेद 307 का सार उसी प्रकार का है।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ सिवा खण्ड (2) के।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** खण्ड (1) में कहा गया है "इस संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए इस संविधान के प्रारम्भ के ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में सब प्रवृत विधियां तब तक प्रवृत्त होंगी जब तक.......

अतः "भारत के राज्यक्षेत्र में सब प्रवृत्त विधियां" के अंतर्गत भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947 भी आ जाता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** वह विशेष रूप से उल्लिखित है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** वह आवश्यक नहीं हैः अन्यथा आपको उन सब अन्य अधिनियमों का जिक्र करना चाहिये जो उसके अंतर्गत आ जाते हैं। भारत स्वाधीनता अधिनियम पूर्णतया भारतीय विधानमंडल के हाथों में है। उस अधिनियम में कहा गया है कि नियुक्त तिथि से भारत स्वाधीनता संबंधी सब विधियों पर और भारत में प्रयोज्य सब ब्रिटेन की विधियों पर न तो कोई प्रभाव पड़ना चाहिये अथवा न उनका रूपभेद होना चाहिये अथवा न उन पर ब्रिटिश संसद द्वारा किसी प्रकार का कोई विचार होना चाहिए पर उन पर भारतीय विधानमंडल द्वारा विशिष्ट रूप से विचार होना चाहिये। यदि ऐसी बात है तो मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि भारत स्वाधीनता अधिनियम किस प्रकार से एक ऐसा अधिनियम है जिसका विशेष उल्लेख उपेक्षित है। वह वास्तव में हमारी क्षमता के अंतर्गत है। ब्रिटिश संसद का अब इस पर कोई क्षेत्राधिकार नहीं है। उसने आत्म-वंचित अध्यादेश अधिनियमित किया है और वह वास्तव में भारत राज्य-क्षेत्र में प्रवृत्त एक विधि है। ये विधियां जो इस समय वर्तमान हैं उनको अनुच्छेद 307 के अधीन स्वीकार करना पड़ेगा। मैं यह नहीं जानता हूं कि कार्यालय ने इस विषय में कितनी प्रगति की है, क्योंकि 26 जनवरी को हम एक पूर्ण अनुकूल आदेश की आशा करते हैं जो उस तिथि को प्रयोज्य होगा। उस तिथि को तथा उस तिथि से वर्तमान संविधान से असंगत सब विधियां इस संविधान के अनुकूल स्पष्ट रूप से अनुकूलित हो जानी चाहिये।

मैं समझता हूं कि "निरसन" शब्द जो हाशिये की टिप्पणी में है वह अप्रयोज्य है क्योंकि हम "स्वाधीनता अधिनियम" का निरसन नहीं कर रहे हैंः हम केवल यह कह रहे हैं कि जहां तक वह वर्तमान संविधान से असंगत है वहां तक वह प्रभावशून्य होगा। हम वास्तव में इस अधिनियम का रूपभेद कर रहे हैं या उसे वर्तमान संविधान के अनुकूल बना रहे है और इस प्रयोजन की पूर्ति अनुच्छेद 307 द्वारा अवश्य हो जायेगी। इसलिए मैं अनुच्छेद 315 का विरोध करता हूं। हम जो कुछ चाहते है वह वास्तव में अनुकूलन है न कि निरसन।

अनुच्छेद 314 में एक ऐसी पदावली है जो बार-बार इस सभा के समक्ष आ रही है अर्थात् "इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि"। कभी हम "इस संविधान का प्रारम्भ" कहते हैं और कभी "इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि"। मैं समझता हूं कि "की तिथि" शब्द अनावश्यक तथा इनमें पुनरुक्ति है। हम यहां यह कहते हैं कि "जनवरी 1950 का 26वां दिन", जिस तिथि को इस अनुच्छेद में इस संविधान के प्रारम्भ 'की तिथि' के रूप में निर्दिष्ट किया है।

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

जनवरी 1950 का 26वां दिन वास्तव में एक "तिथि" है, और यदि उसको इस संविधान के प्रारम्भ के रूप में निर्दिष्ट किया गया है तो "की तिथि" शब्द पूर्णतया अनावश्यक हैं। इस पदावलि का प्रयोग कदाचित् इस रूप में अव्यवस्थित है कि कई स्थानों पर ये शब्द पाये जाते हैं और कई स्थानों पर नहीं। मैं समझता हूं कि मसौदा समिति द्वारा ये शब्द अपमार्जित कर दिये जायें जिससे कि यह पदावली शुद्ध और स्पष्ट हो जाये और फिर भी पूर्ण रहे।

मै यह जानना चाहूंगा कि वर्तमान विधियों के अनुकूलन में कितनी प्रगति हुई है क्योंकि यह बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है और इन बातों को 26 जनवरी के लिए तैयार कर लेना चाहिये इसका प्रभाव न्यायालयों, कार्यालयों तथा अन्य विभिन्न व्यक्तियों पर पड़ेगा। जैसा कि भारत शासन अधिनियम के लिए किया गया था हमारे पास अधिनियमों की पूर्ण अनुकूलित मालायें होनी चाहिए। भारत शासन अधिनियम के संबंध में सब विधियों को अनुकूलित कर लिया गया था और समय से पूर्व अनुकूलन आदेश मुद्रित करा लिया था और घुमा दिया गया था जिससे उस संविधान के प्रभाव में आने की तिथि अर्थात् 1 अप्रैल 1937 को पूरी तैयारी थी।

मैं यह जानना चाहूंगा कि अब तक क्या प्रगति हो चुकी है क्योंकि यदि इस कार्य को हाथ में नहीं लिया जाता है तो एक कठिन स्थिति तथा गड़बड़ी पैदा हो सकती है। अत: इस बात के स्पष्टीकरण की आवश्यकता है और यदि इस कार्य को हमने अपने हाथों में ले लिया है तो अनुच्छेद 315 पूर्णतया अनावश्यक हो जायेगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** श्रीमान, संशोधन संख्या 463 के सम्बन्ध में मुझे दो बातें कहनी हैं। मैं समझता हूं कि किसी अन्य अनुच्छेद के प्रवर्तन करने के पूर्व यह वांछनीय है कि कम से कम प्रस्तावना और अनुच्छेद 1 को भी प्रवृत्त किया जाये क्योंकि अन्य सब खंड भारत के संबंध में हैं और इस कारण अनुच्छेद 1 के प्रवृत्त होने के पूर्व मैं नहीं समझता हूं कि यह बात बिल्कुल ठीक है कि अन्य अनुच्छेद प्रवृत्त किये जायें। मैं यह सुझाव देता हूं कि प्रस्तावना और अनुच्छेद 1 को भी जोड़ दिया जाये। इन अनुच्छेदों को तो तुरन्त प्रवृत्त कर देना चाहिये और शेष 26 जनवरी को प्रवृत्त हो सकते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** कठिनाई यह होगी कि प्रस्तावना को तो अभी तक इस सभा ने स्वीकार नहीं किया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** संविधान को पूर्ण करने के पूर्व उसे स्वीकार करना पड़ेगा। मैं केवल यह सुझाव दे रहा हूं....

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या मैं यह जान सकता हूं कि आप प्रस्तावना को तुरन्त प्रवृत्त करना क्यों चाहते हैं?

***माननीय श्री के. सन्तानम:** पूरे संविधान को प्रवृत्त करने से पूर्व, हम संविधान के कुछ उपबन्धों को प्रवृत्त कर रहे हैं, और संविधान के किसी भाग को प्रवृत्त

करने से पूर्व संविधान का उद्देश्य और देश का नाम होना चाहिये। यह विचार जिस योग्य है उतना आप इस पर विचार करें।

प्रस्थापित अनुच्छेद 315 में ऐसे उपबन्ध हैं जो इस नये संविधान की प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं हैं। उसमें कहा गया है "भारत स्वाधीनता अधिनियम, उस सीमा तक जहां तक कि उसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध हैं, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935, भारत (केन्द्रीय शासन और विधानमंडल) अधिनियम, 1946 के सहित, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935 को संशोधन और अनुपूरण करने वाली सब अधिनियमितियां प्रभावशून्य हो जायेंगे।" जिस सीमा तक यह स्वाधीनता अधिनियम इन उपबन्धों के विरुद्ध नहीं है उस सीमा तक वह वर्तमान बना रहेगा और प्रवृत्त रहेगा। मेरे विचार से पूरा का पूरा स्वाधीनता अधिनियम निरसित हो जाना चाहिये। यह संविधान ही एकमात्र मूल विधि होनी चाहिये। अन्य सब विधियों को इस संविधान से मान्यता मिलनी चाहिये। जब भारत शासन अधिनियम, 1935 पार किया गया था पहले सब अधिनियम पूर्णतया निरसित कर दिये गये थे। मेरा यह विचार नहीं है कि हम भारत स्वाधीनता को इस रूप में छोड़ दें कि वह इस संविधान के साथ-साथ इस देश की मूलविधि के रूप में बना रहे जिसके कारण उच्चतम न्यायालय में यह तर्क प्रस्तुत किया जा सके कि भारत स्वाधीनता अधिनियम का कोई उपबन्ध इसलिये प्रवृत्त बना रहेगा चूंकि वह इस संविधान के विरुद्ध नहीं है। हमारा उच्चतम न्यायालय भारत स्वाधीनता अधिनियम से कोई प्राधिकार प्राप्त न करे: वह केवल इस संविधान से अपने प्राधिकार प्राप्त करे। मेरे विचार से यह एक ऐसा प्रारम्भिक सिद्धांत है जो इस समूचे संविधान की प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक है। हमें यह नहीं कहना चाहिए कि हमारा संविधान जो संविधान हमें अधिनियमित किया है वह और उतना भारत स्वाधीनता अधिनियम जितना कि वह इस संविधान के उपबंधों से विरुद्ध नहीं है इन दोनों से मिलकर बना है। अत: मैं समझता हूं कि यह विषय महत्व का है और मैं यह सुझाव देता हूं कि श्री अल्लादी तथा अन्य व्यक्ति मिलकर इस पर विचार करेंगे और इस बात का ध्यान रखेंगे कि हम कोई ऐसा खंड तो अधिनियमित नहीं करते हैं जो संभवत: जो संविधान हम बना रहे हैं उसकी प्रतिष्ठा के लिए हानिकर हो।

***श्री बी. दास:** अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 314 में यह कहा गया है "यह अनुच्छेद 311 तुरन्त प्रवृत्त होगा।" जब अनुच्छेद 311 पार किया गया था मैंने समझा कि प्रान्तीय विधानमंडलों के वे सदस्य जो इस सभा के सदस्य हैं वे 26 जनवरी 1950 तक सदस्य बने रहेंगे। मैं यह चाहता हूं कि यह स्पष्ट कर दिया जाये कि प्रान्तीय विधानमंडलों के सब सदस्य, यहां जो हमारे मित्र और साथी हैं वे हमारे साथ 26 जनवरी 1950 तक रहेंगे जिस दिन गणराज्य को घोषणा की जायेगी। यदि हम वर्तमान अनुच्छेद 314 को स्वीकार कर लेंगे तो मुझे आशा है कि इस विषय में कोई बाधा नहीं होगी। (*बाधायें*) मैं आप से सम्मानपूर्वक निवेदन करता हूं कि आप अनुच्छेद 311 का परीक्षण करें और मैं यह जानना चाहता हूं कि प्रान्तीय विधान मंडलों से आये हुए हमारे यहां के साथी हमारे साथ 26 जनवरी 1950 तक रहेंगे या नहीं जिस दिन कि गणराज्य की घोषणा की जायेगी। यदि यह विचार नहीं है तो मैं यहां अनुच्छेद 311 की प्रविष्टि का विरोध करता हूं।

***श्री आर.के. सिधवा:** वह तो स्पष्ट है।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम की प्रथम आपत्ति के संबंध में मैं केवल एक दो बातें कहना चाहता हूं। मैं यह बता दूं कि संविधान के मसौदे के अनुच्छेद 315 में अपने संविधान के प्रवृत्त हो जाने के पश्चात् अधिराज्य अधिनियम के किसी भी पुनरीक्षित रूप के बने रहने का निर्देश नहीं है। कथित मूल अनुच्छेद की भाषा को मैं पढ़ कर सुनाऊंगा। "भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935, भारत (केन्द्रीय शासन और विधान मंडल) अधिनियम, 1946 के सहित, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935 का संशोधन और अनुपूरण करने वाली अन्य सब अधिनियमितियां प्रभावशून्य हो जायेंगे।" सावधानीपूर्वक विचार करने पर मैं श्री सन्तानम से सहमत हूं कि हमारे नये संविधान के प्रवृत्त हो जाने के पश्चात् पहले अधिनियम के किसी भी उपबन्ध को बनाये रखने की कोई बात ही नहीं रहती है। इसमें संदेह नहीं कि उन कुछ विधियों को हम नया जीवन दान दें जो पुराने संविधान के अधीन पार की गई थीं और उनको, ये कहना चाहिये कि अपने संविधान की विधियों के रूप में हम ग्रहण कर लें। यह आवश्यक है और ऐसा उपबन्ध कर दिया गया है। मैं यह भी बता दूं कि इस बात के प्रति हम विशेष रूप से उत्सुक हैं कि जिस संविधान को हम बना रहे है या पारित कर रहे हैं उसके लिए स्वाधीनता अधिनियम की धारा 7 का अनुसरण नहीं करना चाहिये और हमने यह विचार अपनाया कि नये संविधान के लिए गवर्नर जनरल की अनुमति लेने की भी आवश्यकता नहीं है। यह नया संविधान भारत स्वाधीनता अधिनियम की धारा 7 या 8 के अधीन दी हुई वृहद् तथा व्यापक शक्तियों के अधीन अथवा उनके अनुसार पारित संविधान नहीं होगा। अत: जब हम एक बार संविधान पारित कर लेते हैं, किसी पहले अधिनियम से स्वतंत्र होकर तथा उसके बिना निर्देश के अपनी स्वतंत्र इच्छा का प्रयोग करते हैं तो फिर यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि स्वाधीनता अधिनियम प्रवृत्त बना रहेगा चाहे वह किसी भी सीमा तक हो। मैं यह कहूंगा कि जब भारत शासन अधिनियम, 1935 जैसा अधिनियम पारित किया गया था तो वह संसद के अधिनियम के अनुसार पारित किया गया था और पहला भारत शासन अधिनियम निरसित कर दिया गया था सिवा पहले भारत शासन अधिनियम के उन उपबंधों के जो भारत शासन, अधिनियम 1935 की विशेष धाराओं द्वारा ग्रहण कर लिये गये थे और चालू रखे गये थे। इन परिस्थितियों के अधीन श्री सन्तानम के सुझाव में बल है, पर उनका प्रकार एक मसौदा संबंधी संशोधन जैसा है। यदि अनुज्ञा दे दी जाये तो उनको बाद में हटाया जा सकता हैं मैं यह इसलिए कह रहा हूं कि मसौदा समिति से आने के कारण यही ठीक है कि उसका संशोधन फिर मसौदा समिति द्वारा ही हो। इस विषय के सम्बंध में कोई भी कठिनाई नहीं होगी।

इसके पश्चात् मेरे माननीय मित्र श्री कामत ने "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्दों पर एक पारिभाषिक प्रश्न उठाया था। उसी बात के कारण जिसके लिए वे लड़ते रहे हैं हमने सोच-समझकर "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्दों को रखा था। निरसन के विषय में हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि हमारा निकाय स्वाधीन है। स्वाधीनता अधिनियम एक दूसरी संसद से आया था। दूसरों के अधिनियम को हमारे द्वारा

निरसित किये जाने का कोई प्रश्न नहीं है। इसलिए सोच-समझकर संविधान के मसौदे में विशिष्ट उपबन्ध "प्रभावशून्य हो जायेंगे" रखा गया था। अतः अपने माननीय मित्र श्री कामत जो हमेशा इस देश की स्वाधीनता के समर्थक रहे हैं उनके विचारों सें संगत कि संविधान में ब्रिटिश संसद से आई हुई किसी बात का निर्देश न हो यही ठीक तथा उचित है कि "निरसित" शब्द के बजाय "प्रभावशून्य हो जायेंगे" पदावली ही रहे।

इसके पश्चात् श्रीमान अंतिम बात श्री सन्तानम द्वारा कहे गये विषय के संबंध में है जो प्रस्तावना तथा भारत राज्यों का संघ होगा के प्रवृत्त किये जाने के सम्बन्ध में है। मैं समझता हूं कि यदि अपने माननीय मित्र के प्रति, जो अपने विषय के बारे में सदैव बहुत सावधान रहते हैं, सम्मानपूर्वक यदि मैं कह सकता हूं तो यह कहूंगा कि इस आपत्ति में कोई बल नहीं है। जहां तक प्रस्तावना का सम्बन्ध है यद्यपि एक साधारण विधि पुस्तक की प्रस्तावना को हम कोई महत्व नहीं देते हैं पर संविधानिक विधि पुस्तक में प्रस्तावना को सारा महत्व देना पड़ता है, ऐसी कोई बात नहीं है कि प्रस्तावना तुरन्त ही प्रवृत्त की जाये। प्रस्तावना अपने पूर्ण रूप से उस समय प्रवृत्त होगी जब कि संविधान प्रवृत्त हो जायेगा। इस कथन में कोई युक्ति नहीं है कि संविधान के प्रवृत्त होने से पूर्व प्रस्तावना प्रवृत्त हो जायेगी।

दूसरी बात यह है मैं नहीं समझता हूं कि हम इस अनुच्छेद को कि भारत राज्यों का संघ होगा प्रवृत्त कर सकते हैं क्योंकि जिस रूप में राज्यों का संघ इस संविधान में आद्योपान्त समझा गया है उस रूप में भारत तुरन्त राज्यों का संघ नहीं हो जाता है। संघ को उस समस्त संविधानिक तंत्र के सहित समझना चाहिये जिसका उस संविधान के अधीन सृजन किया जा चुका है। जिसे हम पार कर रहे हैं। बिना अवयवों के हम शरीर अथवा आत्मा की कल्पना नहीं कर सकते हैं। यदि अवयव क्रियाशील नहीं होते हैं तो संघ की स्थापना कैसे हो सकती है। जहां तक इस बात का सम्बन्ध है एक प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति भी भूल कर जाता है, श्री सन्तानम की इस आपत्ति में कोई बल नहीं है कि यह अनुच्छेद तुरन्त प्रवृत्त किया जाये।

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 311 के सम्बन्ध में श्री दास ने एक प्रश्न उठाया था।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान वह बात तो बहुत ही स्पष्ट है।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** मैं उस प्रश्न को सुन न सका।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम : जनरल): श्रीमान्, मसौदा समिति से मैं यह समझना चाहता हूं कि अनुच्छेद 311(3) का अनुच्छेद 314 से किस प्रकार मेल मिलाया जा सकता है। अनुच्छेद 314 में कहा गया है कि वह तुरन्त प्रवृत्त होगा। मैं समझता हूं कि इन सदस्यों को तुरन्त स्थान रिक्त करने पड़ेंगे। मैं श्री कृष्णमाचारी से इस बात का उत्तर चाहता हूं। यदि यही परिणाम है तो हम इसका समर्थन नहीं कर सकते हैं।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** यह तीसरा पठन पारित हो जाने पर प्रवृत्त होगा।

***अध्यक्षः** यह ठीक वही प्रश्न है जिसे श्री बी.दास ने भी उठाया था।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान श्री बी. दास और श्री कुलधर चालिहा द्वारा उठाये गये प्रश्न के सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहूंगा। अनुच्छेद 311 (3) में यह कहा गया है:

> "यदि भारत डोमिनियन की संविधान सभा का कोई सदस्य 1949 के अक्तूबर के छठे दिन अथवा तत्पश्चात् इस संविधान के प्रारम्भ के पहले किसी समय किसी राज्यपाल प्रान्त.....के विधान मंडल के सदन का सदस्य था... तो इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर संविधान सभा में ऐसे सदस्य का स्थान, यदि उसका उस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त जो जायेगा......।"

यहां अनुच्छेद 314 में यह कहा गया है कि इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि 26 जनवरी 1950 होगी। चाहे ये अनुच्छेद तुरन्त प्रवृत्त होने को है पर इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि ही प्रवर्तन की तिथि होगी। मैं नहीं समझता हूं कि इस विषय में कोई सन्देह है। माननीय सदस्यों को मैं यह बताना चाहता हूं। विचार यह है कि जिन सदस्यों को दुहरी सदस्यता है वे 25 जनवरी तक सदस्य रहेंगे। (*बाधायें*)। माननीय सदस्य सब्र से मेरी बातें सुनें। हमें इस स्थिति की फिर से जांच करनी होगी कि "संविधान के प्रारम्भ की तिथि" के स्थान में "नियुक्त तिथि" अधिक उपयुक्त शब्द होंगे। क्योंकि नियुक्त दिन 26 जनवरी है। इस स्थिति की जांच डॉ. अम्बेडकर तथा मसौदा समिति द्वारा की जायेगी और यदि यह अनुभव किया गया कि सदस्यों पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ेगा तो इस सभा को मैं यह आश्वासन दूंगा कि एक उपयुक्त संशोधन द्वारा हम उसका परित्राण करने का प्रयत्न करेंगे। मैं समझता हूं कि इस विषय में माननीय सदस्यों को कोई शंका नहीं होनी चाहिए।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रास : जनरल): मैं यह जानना चाहूंगा कि किस उद्देश्य से यह सम्मिलित किया गया था। संविधान के प्रारम्भ की तिथि प्रकट है तथा उस तिथि तक ही पदावधि रहेगी यह भी प्रकट है तो फिर उन अनुच्छेदों के वर्णन में जो तुरन्त प्रवृत्त किये जा रहे हैं इस अनुच्छेद के सम्मिलित करने में क्या उद्देश्य है? शायद यह निर्वाचन को प्रवर्तन में लाने के उद्देश्य से है। यदि यह बात है तो क्या आप ऐसे निहित प्रयोजन तथा घोषित प्रयोजन रख सकते हैं जो परस्पर एक-दूसरे से विभिन्न हों? इस बात की फिर से जांच होनी चाहिए।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** माननीय डॉक्टर ने इस बात को ठीक समझा है। बात यह है कि इस तथ्य के होते हुए भी कि 25 जनवरी तक रिक्तियां न हों निर्वाचन करने होंगे जिससे कि नये सदस्य 26 जनवरी को अपने स्थान ग्रहण कर सकें जिस तिथि को रिक्तियों का होना अवश्यमभावी है। विचार यह है कि संविधान सभा के अध्यक्ष को इन निर्वाचनों के करने की शक्ति हो इस तथ्य के होते हुए भी कि रिक्तियां बाद में होंगी। अनुच्छेद 311 की शब्दावली स्पष्ट है। दोनों अनुच्छेद 311 और 312 (च) इस आधार पर निर्वाचन कर सकने के प्रयोजन के लिए समुचित नियम बनाने की अनुज्ञा संविधान सभा के अध्यक्ष को

देते हैं कि 25 जनवरी को स्थान रिक्त हो जायेंगे। इस स्थिति को जिस रूप में डॉक्टर ने समझा है वह सही है और यह स्थिति है भी बिल्कुल स्पष्ट। मैं नहीं समझता हूं कि किसी सदस्य पर इस तथ्य के कारण विपरीत प्रभाव पड़ेगा कि इन अनुच्छेदों का ठीक उस समय से प्रवर्तन किया जा रहा है जब कि संविधान अंतिम रूप में पारित कर दिया जायेगा या तृतीय पठन पारित कर दिया जायेगा। यदि हम ऐसा नहीं करेंगे तो संविधान सभा के अध्यक्ष को अनुच्छेद 311 और 312 (च) के अधीन कोई कार्रवाई करने की शक्ति नहीं होगी।

अनुच्छेद 315 की शब्दावली के सम्बन्ध में मुझे अपने माननीय साथी श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर को उच्च बुद्धिमत्तापूर्ण बात को शिरोधार्य करना चाहिये। यदि अब वे यह समझते हैं कि शब्दावली जैसी होनी चाहिये वैसी नहीं है तो यह निश्चित है कि इस विषय पर फिर से विचार होना चाहिये। मैं केवल यही कहूंगा। जब विशेषज्ञों में मतभेद हो जाता है तो साधारण व्यक्ति असमंजस में पड़ जाता है। संविधान के मसौदे के इस अनुच्छेद में हमने यह परिवर्तन क्यों किया इसका कारण वह मंत्रणा है जो इस आदरणीय सभा के संविधानिक परामर्शदाताओं ने हमें दी थी जो इस प्रकार है "यह अनुच्छेद बिना किसी प्रतिबन्ध के यह उपबन्ध करता है कि भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947 और कुछ अन्य अधिनियमितियां प्रभावशून्य हो जायेंगी। पर भारत स्वाधीनता अधिनियम के कुछ उपबन्ध ऐसे हैं जो प्रभावशून्य नहीं होंगे। उदाहरणार्थ ऐसी कोई बात नहीं है कि उस अधिनियम के उपबन्ध जिसमें यह कहा गया है कि युनाइटेड किंगडम में की बादशाह की सरकार पर अब ऐसी किसी राज्यक्षेत्र के शासन का उत्तरदायित्व नहीं रहेगा जो अगस्त 1947 से ठीक पहले ब्रिटिश भारत में सम्मिलित कर लिया गया था और यह अधिनियम कि देशी राज्यों पर से बादशाह का अधिपत्य व्यपगत होता है इत्यादि इत्यादि क्यों प्रवृत्त नहीं रहेंगे। इस उपबन्ध में ऐसी कोई बात नहीं है जो इस संविधान के विरुद्ध हो। इस कारण यह अनुच्छेद प्रस्थापित किया गया है।" मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का यह विचार है कि चूंकि इस संविधान का रूप पूर्णतया स्वतंत्र है, यह अपने संकल्प पर ही प्रवृत्त हो जायेगा और इस कारण इसके पूर्व की अन्य सब अधिनियमितियां अपने आप प्रभावशून्य हो जायेंगी। मैं इस बात से पूर्णतया सहमत हूं। पर संविधानिक परामर्शदाताओं ने हमें यह सम्मति दी थी और इस सम्मति के आधार पर ही हमने "उस सीमा तक जिस तक इसके उपबंध इस संविधान के विरुद्ध नहीं है" शब्द रखे थे।

आरम्भ में मैंने यह सुझाव देने का विचार किया था कि इस विशेष अनुच्छेद के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए हम इसको दो भागों में बांट दें और निम्नलिखित शब्दों के सहित इसे 314(1) कहें "भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947, उस सीमा तक जिस तक इसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध नहीं हैं", और इसके बाद अंक (2) रखें, और उसके बाद निम्नलिखित शब्द रखें "भारत शासन अधिनियम, 1935, भारत (केन्द्रीय सरकार और विधानमंडल) अधिनियम, 1946 और भारत शासन अधिनियम का संशोधन और अनुपूरण करने वाली अन्य सब अधिनियमितियां", और इसके पश्चात् नीचे "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्द रखें जो दोनों (1) और (2) को लागू होंगे। मेरे माननीय मित्र भी अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने जो

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

स्थिति ग्रहण की है उसको ध्यान में रखते हुए आपकी अनुज्ञा से मैं यह सुझाव दूंगा कि सभा इसी रूप में इस अनुच्छेद को पारित करे और हम इस स्थिति पर फिर विचार करेंगे। मेरे माननीय साथी मसौदा समिति के सभापति यहां नहीं हैं। हम इस स्थिति पर फिर विचार करेंगे और यदि आवश्यक हुआ तो "उस सीमा तक जिस तक इसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध हैं" शब्द निकाल दिये जायेंगे। इन शब्दों को हम तृतीय पठन के समय निकाल देंगे।

अतः मैं सुझाव देता हूं कि इस अनुच्छेद को हम वर्तमान रूप में पास करें और यदि कोई परिवर्तन आवश्यक हुआ तो हम विधि संबंधी उचित मंत्रणा प्राप्त करेंगे और मसौदा समिति के विख्यात वकील सदस्य इसकी जांच करेंगे। हम अपने माननीय साथी श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर को डॉ. अम्बेडकर और श्री मुन्शी के विपक्ष में रखेंगे और जहां तक इन शब्दों का सम्बन्ध है संभव है कि हम किसी निश्चय तक पहुंच सकें। मैं यह आशा करता हूं कि......

***माननीय श्री के. सन्तानम:** क्या यह अधिक अच्छा नहीं होगा कि विपरीत मार्ग ग्रहण किया जाये?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैंने एक मार्ग का सुझाव दिया है। मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम इसके विरुद्ध विचार रखते हैं। यह विनिश्चय करना सभा का काम है कि मेरा विचार ठीक है या विरोधी विचार ठीक है। मैं यह भी सुझाव दूंगा कि इस अनुच्छेद की शब्दावली को अंतिम रूप देने से पूर्व इस विषय के प्रति हम श्री बी.एन. राव के विचारों से भी लाभ उठायें। हम उनको तुरन्त पत्र लिखेंगे और उनसे यह पूछेंगे कि सभा में जो विपरीत विचार प्रकट किये गये हैं उनको ध्यान में रखते हुए क्या वे अपने विचारों का पुनरीक्षण करेंगे। इसलिए मैं यह सुझाव देता हूं कि यह अनुच्छेद इसी रूप में इस सभा द्वारा स्वीकार किया जाये इस शर्त के अधीन कि इस पूरे के पूरे विषय पर पुनःविचार किया जायेगा और विचार करने पर हमें यह विदित हुआ कि मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम द्वारा उठाई गईं तथा मेरे माननीय साथी द्वारा समर्पित आपत्तियों में कोई मान्यता है तो यह अनुच्छेद सभा के समक्ष पुनरीक्षित रूप में प्रस्तुत होगा।

जहां तक "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्दावली पर आपत्ति का सम्बन्ध है मेरे माननीय मित्र श्री कामत यह चाहते हैं कि इसके स्थान में "निरसित हो जायेंगे" शब्द रखे जायें। मैं समझता हूं कि मेरे माननीय साथी श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने उनको ठीक उतर दे दिया है। अतः सभा को "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्दों को स्वीकार करने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए।

***श्री एच.वी. कामत:** एक अलग गणराज्य दिवस तथा अर्द्धरात्रि के उत्सव के बारे में भी मेरे जो दो सुझाव थे उनके बारे में क्या हुआ?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** वह विषय समुचित प्राधिकारियों के लिये है न कि मसौदा समिति के लिये।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः__ क्या पुनर्विचार के अधीन इस अनुच्छेद को स्वीकार करना ठीक है? यदि ये विवादास्पद विषय तृतीय पठन के लिए छोड़े जायेंगे तो अन्य विषयों के लिए समय नहीं रहेगा। मैं सुझाव देता हूं कि इसे छोड़ दिया जाये। वह अनुच्छेद 307 में सम्मिलित है।

*__अध्यक्षः__ यह भी तो विवादास्पद विषय है। किसी न किसी रूप में आज इसे पारित करना ही है जिससे कि द्वितीय पठन समाप्त हो जाये। यदि पुनरीक्षण के लिए कोई प्रश्न उठेगा तो वह तृतीय पठन के समय कर लिया जायेगा और जैसा कि श्री कृष्णमाचारी ने कहा है वे इस विषय की फिर से जांच करायेंगे और यदि उनको यह विदित हुआ कि कोई संशोधन आवश्यक है तो उस समय हम उसे ले लेंगे। यदि हम उसे छोड़ दें तो उस समय हम कोई नई बात नहीं रख सकेंगे।

*__माननीय श्री के. सन्तानमः__ यदि "उस सीमा तक जिस तक इसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध हैं" शब्दों को निकाल दिया जाये तो उसे सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया जायेगा। और यदि ये शब्द आवश्यक समझे जायें तो इनका पुनः पुरःस्थापन करने में कोई रुकावट नहीं हैं इस समय हमसे उसे एक ऐसे रूप में स्वीकार करने के लिए कहा जा रहा है जिसे हम नहीं चाहते हैं और ये कहा जाता है कि वे उस पर बाद में विचार करेंगे। यदि इन शब्दों को आवश्यक समझा जाये तो इनके पुनः पुरःस्थापन करने में मसौदा समिति को कोई कठिनाई नहीं होगी।

*__अध्यक्षः__ यह विषय वास्तव में सभा के विनिश्चय करने का है। मैं दोनों विचारों को पृथक्-पृथक् रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि भाग 18 के स्थान में निम्नलिखित भाग रखा जाये:

'Part XVIII

Short Title, Commencement and Repeals.

313- This Constitution may be called the Constitution of India.'

भाग 18

संक्षिप्त नाम, प्रारम्भ और निरसन।

313—यह संविधान भारत का संविधान नाम से ज्ञात हो सकेगा।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

" 'This article and articles 5, 5A, 5AA, 5B, 303, 311, 311A and 312F of this Constitution shall come into force at once, and the remaining provisions thereof shall come into force on the twenty-sixth

[अध्यक्ष]

day of January, 1950, which date is referred to in this Constitution as the date of commencement of this Constitution.'

[यह अनुच्छेद और अनुच्छेद 5, 5क, 5कक, 5ख, 303, 311, 311क और 312च तुरन्त प्रवृत्त होंगे, तथा इस संविधान के अवशिष्ट उपबन्ध 1950 की 26 जनवरी के दिन प्रवृत्त होंगे जो दिन कि इस संविधान में इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि के रूप में निर्दिष्ट किया गया है।]"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 315

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्थापित अनुच्छेद 315 में से 'in so far as its provisions are repugnant to this Constitution' शब्द अपमार्जित किये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** यह बात मान ली गई है कि यह पुनर्परीक्षण के अधीन है।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** जी हां, यह बात मान ली गई है।

***श्री एच.वी. कामतः** मुद्रित सूची में के अपने संशोधन को मैं मसौदा समिति की बुद्धिमानी पर छोड़ता हूं। उस पर मत न लिया जाये।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में प्रस्थापित अनुच्छेद 315 इस संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 315 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 306 क

***अध्यक्षः** हम अनुच्छेद 306क पर आते हैं।

यह सुझाव दिया गया है कि अच्छा हो यदि हम प्रस्तावना को आरम्भ करें। उसे पेश किया जा सकता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** उसको पेश करना आवश्यक नहीं है। प्रस्तावना पर विचार किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** प्रस्तावना पेश हो चुकी है। अब मुझे प्रस्तावना पर भिन्न-भिन्न संशोधनों को लेना होगा। मेरे पास संशोधनों की एक बहुत बड़ी संख्या है—उनमें से बहुत से मुद्रित सूची में छपे हुए हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): मैं समझता हूं कि आप यह विनिश्चित कर चुके हैं कि प्रस्तावना सबके अंत में ली जायेगी। यह किस प्रकार है कि कुछ अनुच्छेदों पर अभी वाद-विवाद नहीं हुआ है और आप प्रस्तावना पर चले गये?

***अध्यक्ष:** बहुत से अनुच्छेद तो नहीं रहे हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी:** चाहे एक ही अनुच्छेद रहे, जब तक उन अनुच्छेदों को समाप्त नहीं कर लेते तब तक आप प्रस्तावना को नहीं उठा सकते हैं।

***अध्यक्ष:** बहुत अच्छा। हम अनुच्छेद 306क को ले लें।

***माननीय श्री सत्यनारायन सिंह** (बिहार : जनरल): श्रीमान, क्या आप प्रस्तावना को ले रहे हैं?

***अध्यक्ष:** जी नहीं, मौलाना हसरत मुहानी अन्य सब अनुच्छेदों के समाप्त होने से पूर्व प्रस्तावना के लेने पर आपत्ति करते हैं।

एक और अनुच्छेद है जिसकी सूचना दी गई थी और वह स्थगित रहा है, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा संशोधन संख्या 472 और मैं समझता हूं कि वह एक अन्य उस अनुच्छेद के समान है जिसकी सूचना पं. ठाकुर दास भार्गव ने दी थी।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** श्रीमान, तीन जून को आपके आदेश से वह स्थगित किया गया था।

***अध्यक्ष:** तो क्या हम उसे अब ले लें? उनमें से हम किसको लें, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद के को या पंडित ठाकुर दास भार्गव के को?

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** श्रीमान मैं प्रस्ताव पेश करता हूं.....

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, अन्य ऐसे अनुच्छेद और भी हैं जिनकी सूचना अन्य सदस्यों द्वारा दी जा चुकी है।

***अध्यक्ष:** मसौदा समिति द्वारा अन्य कोई संशोधन नहीं है।

***श्री आर.के. सिधवा:** पर इन दो सदस्यों के अतिरिक्त अन्य सदस्य भी हो सकते हैं जिनके संशोधन हों।

***अध्यक्षः** नये अनुच्छेद प्रविष्ट करने के लिए संशोधन?

***श्री आर.के. सिधवाः** जी हां।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि उनकी अब आवश्यकता नहीं है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** श्रीमान मैं समझता हूं कि श्री गोपालास्वामी आयंगर अभी आये हैं, इसलिए जब वे अपना प्रस्ताव पेश कर लें उसके बाद मुझे पेश करने की आज्ञा दी जाये।

***अध्यक्षः** ऐसे बहुत से अनुच्छेद हैं जिनकी सूचना दी गई थी और जो छोड़ दिये गये हैं। प्रत्येक दृष्टिकोण से हम समस्त संविधान पर विचार कर चुके हैं, और अब हम नये अनुच्छेद लेना आरम्भ नहीं कर सकते हैं। मैं जानता हूं कि पंडित ठाकुर दास भार्गव का संशोधन स्थगित कर दिया था, पर वह अन्य संशोधनों के अंतर्गत आ जाता है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** श्रीमान, वह किसी संशोधन के अंतर्गत नहीं आता है।

***अध्यक्षः** बहुत अच्छा, अब हम अनुच्छेद 306क को लेते हैं। श्री गोपालास्वामी आयंगार।

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान, प्रस्ताव पढ़ने से पूर्व मैं मद 379 को पेश न करने की तथा उसके स्थान में मद 450 को पेश करने की अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए निवेदन करूंगा। श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 379 के निर्देशानुसार अनुच्छेद 306 के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:—

'306A. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution,—

(a) the provisions of article 211A of this Constitution shall not apply in relation to the State of Jammu and Kashmir;

(b) the power of Parliament to make laws for the State shall be limited to

(i) those matters in the Union List and the Concurrent List which in consultation with the Government of the State, are declared by the President to correspond to matters specified in the Instrument of Accession governing the accession of the State to the Dominion of India as the matters with respect to which the Dominion Legislature may make laws for the State; and

(ii) such other matters in the said List as, with the concurrence of the Government of the State, the President may by order specify.

Explanation.—For the purposes of this article, the Government of the State means the person for the time being recognised by the Union as the Maharaja of Jammu and Kashmir, acting on the advice of the Council of Ministers.......”

[306क (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी,–

(क) अनुच्छेद 211क के उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य के सम्बन्ध में लागू न होंगे;

(ख) उक्त राज्य के सम्बन्ध में विधि बनाने की संसद की शक्ति–

(1) संघ-सूची और समवर्ती सूची में के जिन विषयों को राज्य की सरकार से परामर्श करके राष्ट्रपति उन विषयों को तत्स्थानी विषय घोषित कर दे जो भारत डोमिनियन में उस राज्य के प्रवेश को शासित करने वाली प्रवेश-लिखित में उल्लिखित ऐसे विषय है जिनके बारे में डोमिनियन-विधान मण्डल विधि बना सकता है उन विषयों तक; तथा

(2) उक्त सूचियों में के जिन अन्य विषयों को उस राज्य को सरकार की सहमति से राष्ट्रपति आदेश द्वारा उल्लिखित करे उन विषयों तक सीमित होगी।

व्याख्या—इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए राज्य की सरकार से अभिप्रेत है वह व्यक्ति जिसे संघ 1948 की मार्च के पांचवें दिन निकाली गई महाराजा की उद्घोषणा के अधीन....]”

श्रीमान, आपकी अनुमति से मैं यहां एक परिवर्तन कर रहा हूं। “नियुक्त” शब्द के स्थान में मैं “तत्समय पदस्थ” शब्द रख रहा हूं, इसके बाद शेष व्याख्या पूर्ववत् है।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** माननीय सदस्य को हम ठीक-ठीक नहीं सुन सके।

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर**—

Explanation.—For the purposes of this article, the Government of the State means the person for the time being recognised by the Union as the Maharaja of Jammu and Kashmir, acting on the advice of the Council of Ministers for the time being in office, under the Maharaja’s proclamation, dated the fifth day of March, 1948.’ ”

[माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर]

[*व्याख्या*—इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए राज्य की सरकार से अभिप्रेत है वह व्यक्ति जिसे संघ 1948 की मार्च के पांचवें दिन निकाली गई महाराजा की उद्घोषणा के अधीन तत्समय पदस्थ मंत्रि-परिषद् की मंत्रणा के अनुसार कार्य करने वाला जम्मू और कश्मीर का महाराजा तत्समय अभिज्ञात करता है;]"

अत: मैंने "नियुक्त" शब्द के स्थान में "तत्समय पदस्थ" शब्द रख दिये हैं।

"(c) the provisions of article 1 of this Constitution shall apply in relation to the State;

(d) such of the other provisions of this Constitution and subject to such exceptions and modifications shall apply in relation to the State as the President may by order specify:

Provided that no such order which relates to the matters specified in the Instrument of Accession of the State aforesaid shall be issued except in consultation with the Government of the State:

Provided further that no such order which relates to matters other than those referred to in the last preceding Proviso shall be issued except with the concurrence of that Government.

(2) If the concurrence of the Government of the State referred to in sub-clause (b) (ii) or in the second proviso to sub-clause (d) of clause (1) was given before the Constituent Assembly for the purpose of framing the Constitution of the State is convened, it shall be placed before such Assembly for such decision as it may take thereon.

(3) Notwithstanding anything in the preceding clauses of this article, the President may, by public notification, declare that this article shall cease to be operative or shall be operative only with such exceptions and modifications and from such date as he may specify:

Provided that the recommendation of the Constituent Assembly of the State shall be necessary before the President issues such a notification."

[(ग) इस संविधान के अनुच्छेद 1 के उपबन्ध उस राज्य के सम्बन्ध में लागू होंगे;

(घ) इस संविधान के उपबन्धों में से ऐसे अन्य उपबन्ध ऐसे अपवादों और रूपभेदों के साथ उस राज्य के बारे में लागू होंगे जैसे कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा उल्लिखित करे:

परन्तु ऐसा कोई आदेश जो राज्य के प्रवेशलिखत में उल्लिखित विषयों से सम्बद्ध हो राज्य की सरकार से परामर्श किये बिना न निकाला जायेगा:

परन्तु यह और भी कि ऐसा कोई आदेश, जो अन्तिम पूर्ववर्ती परन्तुक में निर्दिष्ट विषयों से भिन्न विषयों से सम्बद्ध हो, उस सरकार की सहमति के बिना न निकाला जायेगा।

(2) यदि उस राज्य की सरकार द्वारा खंड (1) के उपखंड (ख) की कंडिका (2) में अथवा उस खंड के उपखंड (घ) के दूसरे परन्तुक में निर्दिष्ट सहमति उस राज्य के लिए संविधान बनाने के प्रयोजन वाली संविधान सभा के बुलाये जाने से पहले, दी जाये तो उसे ऐसी सभा के समक्ष ऐसे विनिश्चय के लिए रखा जायेगा जैसा कि वह उस पर ले।

(3) इस अनुच्छेद के पूर्ववर्ती उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति लोक-अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकेगा कि यह अनुच्छेद ऐसी तारीख से प्रवर्तनहीन, अथवा ऐसे अपवादों और रूपभेदों के सहित ही प्रवर्तन में, होगा जैसे कि वह उल्लिखित करे:

परन्तु ऐसी अधिसूचना को राष्ट्रपति द्वारा निकाले जाने से पहले उस राज्य की संविधान सभा की सिफारिश आवश्यक होगी।]"

श्रीमान, ये विषय, इस विशेष प्रस्ताव का विषय जम्मू और कश्मीर राज्य से सम्बद्ध है। यह सभा इस बात से पूर्णतया परिचित है कि यह राज्य भारत डोमिनियन में प्रवेश कर गया है। प्रवेश होने का इतिहास भी प्रसिद्ध है। प्रवेश 26 अक्तूबर 1947 को हुआ उस समय से राज्य का रंग बिरंगा इतिहास रहा हैं राज्य में अब तक हालत शांतिपूर्ण नहीं है इस प्रवेश का अर्थ यह है कि इस समय वह राज्य फेडरल राज्य अर्थात् भारत डोमिनियन का एकक है। यह डोमिनियन गणराज्य में परिवर्तित की जा रही है जिसका उद्घाटन 26 जनवरी 1950 को होगा। अत: जम्मू और कश्मीर राज्य को भारत गणराज्य का एकक होना चाहिए।

जैसाकि सभा को विदित है डोमिनियन में प्रवेश सदैव एक लिखत द्वारा हुआ है जिस पर राज्य के शासक को हस्ताक्षर करने पड़ते है और जिसे भारत के गवर्नर जनरल द्वारा स्वीकार किया जाता है। इस विषय में यह हो चुका है। जैसा कि सभा को विदित है प्रवेश-लिखत नये संविधान में पिछली बीती हुई बात हो जायेगी। फेडरल गणराज्य में राज्यों का प्रवेश इस रीति से हुआ है कि उनको

[माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर]

गणराज्य के एकक होने के प्रयोजन के लिए प्रवेश करना अथवा कोई प्रवेश-लेख लिखना नहीं पड़ेगा, वरन् उनका स्वयं संविधान में वर्णन किया गया है और जम्मू और कश्मीर को छोड़कर लगभग सब राज्यों का संविधान समस्त भारत के संविधान में निहित भी कर दिया गया हैं अन्य सब राज्य इस प्रकार अपने आपको प्रवेश करने के लिये सहमत हो गये हैं और उपबंधित संविधान को स्वीकार करते हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी:** तो फिर यह अन्तर क्यों?

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर:** यह अन्तर कश्मीर की विशेष दशा के कारण है। यह विशेष राज्य अभी इस प्रकार के प्रवेश के लिए पूर्ण-रूपेण तैयार नहीं है। यहां उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति को यह आशा है कि समय आने पर जम्मू और कश्मीर उसी प्रकार के प्रवेश के लिए पूर्णरूपेण तैयार हो जायेगा जैसे अन्य राज्यों ने प्रवेश किया है (*तालियां*)। अभी इस प्रकार से प्रवेश करना सम्भव नहीं है। ऐसा इस समय संभव क्यों नहीं है इसके अनेक कारण हैं। इस विषय का मैं थोड़ी देर बार फिर निर्देश करूंगा।

अन्य देशी राज्यों या राज्य-संघों के विषय में दो या तीन बातें ऐसी हैं जिनको ध्यान में रखना होगा। उन सब ने नये संविधान में भाग 1 में के राज्यों के लिए बने हुए संविधान को स्वीकार कर लिया है और उन उपबंधों को इस प्रकार अनुकूलित कर लिया गया है जिससे कि वे देशी राज्यों या राज्य-संघों की परिस्थितियों के अनुकूल हो जायें। दूसरी बात यह है कि केन्द्र अर्थात् गणतंत्रात्मक फेडरल केन्द्र को सब संघ तथा समवर्ती विषयों के लिए ऐसे प्रत्येक राज्य या संघ को लागू होने वाली विधियां बनाने के शक्ति होगी। तीसरी बात यह है कि इन राज्यों तथा संघों और केन्द्र के बीच में एक समान सम्बन्ध स्थापित हो चुका है। जैसा कि मैं कह चुका हूं कश्मीर की परिस्थिति विशेष है और उसके लिए विशेष व्यवहार अपेक्षित है।

सभा का मैं अधिक समय नहीं लेना चाहता हूं, पर मैं संक्षेप में यह बताऊंगा कि विशेष परिस्थितियां क्या हैं। सर्वप्रथम यह कि जम्मू और कश्मीर राज्य की सीमाओं के भीतर युद्ध हो रहा है।

इस वर्ष के आरम्भ में युद्ध बन्द करना निश्चित हो चुका था और युद्ध अब तक बन्द है। पर अब भी राज्य की हालत असामान्य तथा अशान्त है। अभी शांति नहीं हुई है। अत: यह आवश्यक है कि इस राज्य के प्रशासन का संचालन तब तक इन असामान्य परिस्थितियों के अनुकूल किया जाये जब तक वैसी शांति स्थापित न हो जैसी कि अन्य राज्यों में है।

राज्य का कुछ भाग अब भी राजद्रोहियों तथा दुश्मनों के हाथ में है।

जम्मू और कश्मीर के सम्बन्ध में हम संयुक्त राष्ट्र संघ में उलझे हुये हैं और अभी यह नहीं कहा जा सकता कि इस उलझन से हमें कब छुटकारा मिलेगा। यह तभी हो सकता है अब कि कश्मीर की समस्या संतोषजनक रूप से निश्चित हो जाये।

और फिर भारत सरकार कुछ बातों में कश्मीर की जनता से स्वयं वचनबद्ध है। उसने स्वयं इस बात के लिए वचन दे रखा है कि राज्य की जनता को स्वयं यह विनिश्चित करने का अवसर दिया जायेगा कि वह गणराज्य के साथ रहना चाहती है या उससे बाहर जाना चाहती है। जनमत द्वारा जनता की इस इच्छा को मालूम करने के लिए भी हम वचन दे चुके हैं बशर्ते कि शान्तिमय वातावरण स्थापित हो जाये और निष्पक्ष जनमत की प्रत्याभूति की जा सके। हमने यह भी मान लिया है कि एक संविधान सभा द्वारा जनता की इच्छा से राज्य का संविधान निश्चित किया जायेगा तथा राज्य पर संघ के क्षेत्राधिकार की सीमा भी निश्चित की जायेगी।

राज्य में जो विधानमंडल प्रजा सभा को मन से ज्ञात था अब नहीं रहा। वह विधानमंडल और संविधान सभा तब तक समवेत् नहीं हो सकते या कार्य नहीं कर सकते जब तक कि राज्य में शांति स्थापित नहीं होती। अत: हमें उस सरकार के साथ व्यवहार करना है जो अपने मंत्रिपरिषद् के रूप में राज्य के सबसे बड़े राजनैतिक दल की सम्मति को प्रतिबिम्बित करती है। जब तक संविधान सभा स्थापित नहीं होती तब तक अन्तर्वर्ती प्रबन्ध ही हो सकता है और वह प्रबन्ध तुरन्त नहीं किया जा सकता है जो अन्य राज्यों में वर्तमान है।

यदि आप इन बातों को ध्यान में रखें जो मैंने कही हैं तो निश्चित परिणाम यह निकलता है कि वर्तमान समय में हम केवल अन्तर्वर्ती प्रणाली की ही स्थापना कर सकते हैं। अनुच्छेद 306क में एक ऐसी प्रणाली की स्थापना का प्रयास है।

अब मैं इस सभा का ध्यान इस अनुच्छेद के उपबंधों की ओर ले जाऊंगा। माननीय सदस्यों को यह याद होगा कि देशी राज्यों का संविधान विशेषकर इस संविधान के अनुच्छेद 211क द्वारा शासित है जो अनुसूची सहित भाग 6क में दिये हुए रूपभेदों के अधीन देशी राज्यों को यह संविधान लागू होता है। जहां तक इस भाग का सम्बन्ध है मैं आपको यह बता चुका हूं कि अन्य राज्यों संबंधी उपबंध अभी जम्मू और कश्मीर राज्य को लागू नहीं किये जा सकते हैं। अत: इस अनुच्छेद के खंड (1)क में यह कहा गया है कि इस संविधान के अनुच्छेद 211क के उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य को लागू नहीं होंगे।

इस अनुच्छेद का दूसरा भाग जम्मू और कश्मीर राज्य पर संसद की विधायी शक्ति से सम्बद्ध है। यह मुख्यतया प्रवेश-लिखत द्वारा शासित है। मोटे रूप से वह विधायी शक्ति प्रतिरक्षा, विदेशी विषय और संचार के तीन विषयों तक सीमित है, पर वास्तव में इन तीन व्यापक श्रेणियों में कुछ ऐसे मद सम्मिलित हैं जो प्रवेश-लिखत में सूचीबद्ध कर दिये गये हैं। मेरा विश्वास है कि उनकी संख्या बीस पच्चीस के लगभग है। इन मदों के विवरण, क्रम संख्या और प्रबन्ध में नये संविधान की सूची 1 और सूची 3 से कुछ परिवर्तन हो गया है। अत: यह आवश्यक है कि प्रवेश-लिखत में दिये हुए मदों को नये संविधान की सूची 1 और 3 की प्रविष्टियों के परिवर्तित नामों के अनुसार कर दिया जाये। इसलिए अनुच्छेद 306क के खंड (1) (ख) में यह कहा गया है कि राज्य की सरकार के परामर्श से राष्ट्रपति द्वारा नये संविधान के नामों के अनुसार मदों को सूचीबद्ध किया जाये।

खंड (ख) (2) प्रवेश-लिखत की सूची में सम्भाव्य परिवर्धनों का निर्देश करता है और इस अनुच्छेद के उपबंधों के अनुसार ये परिवर्धन राज्य की सरकार की

[माननीय श्री एन. गोपलास्वामी आयंगर]

सहमति से किये जा सकेंगे। विचार यह है कि संविधान-सभा के समवेत् होने से पूर्व राज्य और केन्द्र दोनों के हित में यह आवश्यक हो सकता है कि कुछ मदों को, जो प्रवेश-लिखत में नहीं है, लिखत की सूची में समुचित रूप से रख दिया जाये जिससे कि प्रशासन, विधान-निर्माण और कार्यपालिका कार्रवाई आगे बढ़ाई जा सके और संभव है कि संविधान-सभा के समवेत् होने से पूर्व ऐसी आवश्यकता आ पड़े तो इस परिवर्तन के लिए हम जिस प्राधिकार से सम्मति ले सकते हैं वह केवल राज्य की सरकार ही है। यह उपबन्ध कर दिया गया है।

इसके बाद व्याख्या है जिसमें यह परिभाषित किया गया है कि राज्य की सरकार का क्या अर्थ है। जो संविधान इस समय जम्मू और कश्मीर में राज्य प्रवृत्त माना जाता है उसमें तथा इस उद्घोषणा में भी जिसे महाराजा ने 5 मार्च 1948 को निकाला था राज्य की सरकार की परिभाषा की गई है।

जहां तक इस उद्घोषणा के निबन्धन राज्य के संविधान-अधिनियम के उपबन्धों से असंगत हैं वहां तक के माने जायेंगे न कि संविधान-अधिनियम और इसी कारण इस व्याख्या में उद्घोषणा को ही निर्दिष्ट किया गया हैं इस उद्घोषणा के निबन्धों के अधीन महाराजा ने एक अंतर्कालीन लोकप्रिय सरकार का गठन किया था और कहा था:

"मैं एतद्द्वारा निम्नलिखित नियुक्तियां करता हूं:-

(1) मेरा मंत्रिपरिषद् प्रधान मंत्री और उन अन्य मंत्रियों से मिलकर बनेगा जिनकी नियुक्ति प्रधान मंत्री की मंत्रणा पर की जायेगी। मैंने शाही अधिपत्र द्वारा शेखमुहम्मद अबदुल्ला को मार्च 1948 के प्रथम दिन से प्रधान मंत्री के रूप में नियुक्त किया।"

वे आगे और कहते हैं-

"प्रधान मंत्री और अन्य मंत्री मंत्रिमंडल के रूप में प्रकार्य करेंगे और संयुक्त उत्तरदायित्व के सिद्धांत के अनुसार कार्य करेंगे।"

उस समय कोई विधानमंडल नहीं था इसलिए उन्होंने एक प्रधान मंत्री और उसके साथियों के सहित एक प्रकार की उत्तरदायित्व सरकार की स्थापना की जो अपने कार्यों के लिए संयुक्त उत्तरदायित्व को अपनायेंगे और सब सरकारी कार्यों के लिए अपने आपको संयुक्त रूप से उत्तरदायी समझेंगे। इस व्याख्या में यह बात लाई गई है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** व्याख्या में कहा गया है कि महाराजा संघ द्वारा अभिज्ञात होगा बजाय इसके कि राष्ट्रपति द्वारा।

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर:** इसे हम तृतीय पठन के लिए छोड़ दें। जैसाकि आप जानते हैं संविधान अधिनियम की योजना यह है कि राजप्रमुख राष्ट्रपति द्वारा अभिज्ञात होना चाहिये। और इसमें भी यही कहा गया है कि जम्मू और कश्मीर का महाराजा ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जो उस समय अभिज्ञात हो।

मंत्रिपरिषद् के सम्बन्ध में उद्घोषणा में एक प्रणाली निर्धारित है जिसके अधीन यह परिषद् स्थापित की जाने को थी। वह यह है सर्वप्रथम महाराजा प्रधान मंत्री नियुक्त करता है और फिर उसकी मंत्रणा से उसके सहयोगी नियुक्त करता है और जिस रूप में मैंने इस व्याख्या को इस समय संशोधित किया है उसमें कहा गया है कि तत्समय जो भी मंत्रिपरिषद् हो वह महाराजा सहित जिसके प्रति कि वह उत्तरदायी है उन विषयों पर अपनी सहमति या मंत्रणा देगी जो उसको इस अनुच्छेद के अधीन निर्दिष्ट किये गये हैं।

खंड (ग) और (घ) सूची 1 और 3 में सूचीबद्ध विषयों के अतिरिक्त संविधान के अन्य उपबंधों का निर्देश करता है। इन विभिन्न उपबन्धों को कुछ श्रेणियों में विभाजित कर दिया गया है। इस मसौदे के अनुसार प्रथम श्रेणी यह है कि संविधान का अनुच्छेद 1 अपने आप लागू होगा। जैसाकि आप को विदित है इस अनुच्छेद में भारत के राज्य-क्षेत्र का वर्णन है और राज्यक्षेत्रों में यह उन सब राज्यों को सम्मिलित करता है जो भाग 3 में दिये हुए हैं और जम्मू और कश्मीर भाग 3 में दिये हुए राज्यों में से एक राज्य है। संविधान में के अन्य उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य को ऐसे संशोधनों और रूपभेदों के सहित लागू होंगे जैसे उस समय विनिश्चित हों जबकि राष्ट्रपति इस हेतु आदेश निकाले। प्रवेश-लिखित में दिये हुए विषयों के सम्बन्ध में यह आदेश राज्य की सरकार के परामर्श के पश्चात् ही निकाला जा सकता है। अन्य विषयों के सम्बन्ध में सरकार की सहमति लेनी होगी।

यह बात नहीं है और इस मसौदे को अंतिम रूप देने से पूर्व कश्मीर सरकार के सदस्यों से परामर्श करने का मुझे अवसर मिला था तो न उनकी ही यह मंशा है कि संविधान के अन्य उपबन्ध लागू नहीं होंगे। उनका विशेष दृष्टिकोण यह है कि ये उपबन्ध केवल उन मामलों में लागू हों जिनमें वे उपयुक्त प्रकार से लागू हो सकते हैं और केवल ऐसे संशोधनों, तथा रूपभेदों के अधीन जैसे जम्मू और कश्मीर राज्य की विशेष परिस्थितियों के लिए अपेक्षित हों। इस समय मैं इस विशेष प्रश्न पर और अधिक कुछ नहीं कहना चाहता हूं।

इसके बाद हम खंड (2) पर आते हैं। आपको यह याद होगा कि इन खंडों में से अनेक में जम्मू और कश्मीर राज्य की सरकार की सहमति के लिए उपबन्ध हैं। इनका सम्बन्ध विशेषकर उन विषयों से है जो प्रवेश-लिखित में दिये हुए नहीं हैं और कश्मीर की जनता और सरकार को हमने एक यह वचन भी दिया था कि उस संविधान सभा की सम्मति के बिना कोई परिवर्धन न किया जाये जिसको संविधान बनाने के प्रयोजन के लिए राज्य में बुलाया जायेगा। दूसरे शब्दों में हमने जो कुछ वचन दिया है वह यह है कि ये परिवर्धन ऐसे विषय है जो राज्य की संविधान सभा के निश्चय करने के लिए हैं।

आपको यह याद होगा कि इस अनुच्छेद के कुछ खंडों में हमने राज्य की सरकार की सहमति के लिए उपबन्ध किया है। राज्य की सरकार यह समझती है कि राज्य और केन्द्र में जो वचन हो चुके हैं उनको ध्यान में रखते हुए इस सहमति को देने के लिए वह अंतिम प्राधिकारी के रूप में नहीं समझी जा सकती है यद्यपि अन्तर्वर्ती काल में वह सहमति देने के लिए तैयार है, परन्तु यदि वह ऐसी सहमति देती है तो जब संविधान सभा समवेत् हो उस समय यह सहमति

[माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर]

उसके समक्ष रखी जाये और उन विषयों पर संविधान सभा जो चाहे विनिश्चित करे।

अन्तिम खंड बाद में जो कुछ हो उसका निर्देश करती है। हमने यह कहा है कि अनुच्छेद 211क जम्मू और कश्मीर राज्य को लागू नहीं होगा। पर वह राज्य के संविधान का एक स्थायी रूप नहीं हो सकता है और आशा है कि न वह होगा ही। अतः यह उपबन्ध किया गया है कि जब राज्य की संविधान सभा समवेत् हो चुके और राज्य के संविधान के लिए तथा राज्य पर फेडरल क्षेत्राधिकार की सीमा के सम्बन्ध में अपना विनिश्चय कर चुके तो इस संविधान सभा की सिफारिश पर राष्ट्रपति एक आदेश निकालेंगे कि यह अनुच्छेद 306क या तो प्रवृत्त न रहेगा या केवल ऐसे अपवादों और रूपभेदों के अधीन प्रवृत्त होगा जैसे राष्ट्रपति द्वारा उल्लिखित किये जायें। परन्तु ऐसे किसी आदेश के निकालने से पूर्व संविधान सभा की सिफारिश प्राप्त करने की शर्त पहले पूरी करनी होगी। यह इस अनुच्छेद की पूरी व्याख्या है।

इस अनुच्छेद का यह प्रभाव है कि जम्मू और कश्मीर राज्य जो इस समय भारत का एक भाग है वह भारत का भाग बना रहेगा और भारत के भावी फेडरल गणराज्य का एक एकक होगा और संघविधानमंडल को प्रवेश-लिखित में उल्लिखित विषयों पर और बाद में राज्य की सहमति से परिवर्धित विषयों पर विधियां अधिनियमित करने का क्षेत्राधिकार मिल जायेगा। और इस समय में संविधान सभा बुलाने के प्रयोजन हेतु कदम उठाने पड़ेंगे जो इन विषयों पर विचार करेगी जिनको मैं निर्दिष्ट कर चुका हूं। यह सभा जब इन भिन्न-भिन्न विषयों पर विनिश्चय कर चुकेगी तो वह राष्ट्रपति से सिफारिश करेगी जो या तो अनुच्छेद 306क को निराकृत कर देंगे या वह निदेश देंगे कि वह ऐसे रूपभेदों तथा अपवादों सहित लागू होगा जैसे संविधान सभा सिफारिश करे। श्रीमान, इस अनुच्छेद के प्रभाव का यह संक्षिप्त विवरण है और मैं आशा करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करेगी।

(संशोधन संख्या 459, 460 और 461 पेश नहीं किये गये।)

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): इन खंडों की शब्दावली से मैं सहमत नहीं हूं, पर मैं संशोधनों को पेश नहीं करना चाहता हूं।

(संशोधन संख्या 462 पेश नहीं किया गया।)

अध्यक्षः एक और संशोधन है जिसकी सूचना आज प्रातःकाल मिली थी। वह श्री महावीर त्यागी द्वारा भेजा हुआ संशोधन इस प्रभाव का है "कि सूची 20 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 451 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 306क के खंड (3) के परन्तुक में 'सिफारिश' शब्द के स्थान में 'परामर्श' शब्द रख दिया जाये।"

***श्री महावीर त्यागीः** मैं उसे भी पेश नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** इस अनुच्छेद पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** श्रीमान् आरम्भ में ही मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि न तो मैं इन सब रियायतों को अपने मित्र शेख अबदुल्ला को देने के विरोध में हूं और न मैं महाराजा को कश्मीर के शासक के रूप में स्वीकार किये जाने के विरोध में हूं और यदि कश्मीर के महाराजा को और भी अधिक शक्तियां तथा रियायतें मिल जायें तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। पर जिस बात पर मैं आपत्ति करता हूं वह यह है शासकों में आप यह विभेद क्यों करते हैं? भी आयंगर ने स्वयं यहां यह स्वीकार किया है कि कश्मीर राज्य का प्रशासन एक बहुत अच्छे आधार पर नहीं है।

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर:** यह गलत बात है। मैंने ऐसा कभी नहीं कहा।

***मौलाना हसरत मोहानी:** और यह भी कहा कि वह बाद में स्वाधीनता प्राप्त करेगा। पर क्या मैं एक प्रश्न पूछ सकता हूं? जब आप कश्मीर के लिए यह सब रियायतें करते हैं तो मैं बड़ोदा राज्य को बम्बई में मिलने के लिए बाध्य करने वाले आपके मनमाने कार्य पर घोर आपत्ति करता हूं। बड़ोदा राज्य का प्रशासन अन्य कई भारतीय प्रान्तों के प्रशासन से अच्छा है। यह दुष्टता है कि बड़ोदा राज्य को बम्बई में मिलाने के लिए आप बड़ोदा महाराज को बाध्य करें और उसको निवृत्ति वेतन देकर दूर करें। कुछ लोग कहते हैं कि उन्होंने स्वयं अपनी इच्छा से राज्य को बम्बई में मिलाना स्वीकार किया है। मैं जानता हूं और यह रहस्य खुल गया है कि उसे इंग्लैंड से बुलाया गया और उसकी इच्छा के विरुद्ध विवश किया गया....

***अध्यक्ष:** मौलाना साहब, यहां हमारा महाराजा बड़ोदा से कोई सम्बन्ध नहीं है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** बहुत अच्छा, मैं इसके किसी विवरण में नहीं जाऊंगा। पर मैं यह कहूंगा कि मैं ऐसी बातों का विरोध करता हूं। यदि आप कश्मीर के महाराजा को ये रियायतें मंजूर करते हैं तो बड़ोदा को बम्बई में मिलाने के अपने विनिश्चय को भी आप वापस करें और ये तथा और भी अधिक रियायतें बड़ोदा महाराज को दें।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 379 के निर्देशानुसार अनुच्छेद 306 के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:—

'306A. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution,—

(a) the provisions of article 211A of this Constitution shall not apply in relation to the State of Jammu and Kashmir;

[अध्यक्ष]

(b) the power of Parliament to make laws for the State shall be limited to

(i) those matters in the Union List and the Concurrent List which, in consultation with the Government of the State, are declared by the President to correspond to matters specified in the Instrument of Accession governing the accession of the State to the Dominion of India are the matters with respect to which the Dominion Legislature may make laws for the State; and

(ii) such other matters in the said Lists as, with the concurrence of the Government of the State, the President may by order specify.

Explanation.— For the purposes of this article, the Government of the State means the person for the time being recognised by the Union as the Maharaja of Jammu and Kashmir, acting on the advice of the Council of Ministers, for the time being in office, under the Maharajas Proclamation, dated the fifth day of March, 1948.

(c) the provisions of article 1 of this Constitution shall apply in relation to the State;

(d) such of the other provisions of this Constitution and subject to such exceptions and modifications shall apply in relation to the State as the President may by order specify:

Provided that no such order which relates to the matters specified in the instrument of accession of the State aforesaid shall be issued except in consultation with the Governmnet of the State:

Provided further that no such order which relates to matters other than those referred to in the last preceding proviso shall be issued except with the concurrence of that Government.

(2) If the concurrence of the Government of the State referred to in sub-clause (b) (ii) or in the second proviso to sub-clause (d) of clause (1) was given before the Constituent Assembly for the purpose of framing the Constitution of the State is convened, it shall be placed before such Assembly for such decision as it may take thereon.

(3) Notwithstanding anything in the preceding clauses of this article, the President may, by public notification, declare that this article shall cease to be operative or shall be operative only with such exceptions and modifications and from such date as he may specify:

Provided that the recommendation of the Constituent Assembly of the State shall be necessary before the President issues such a notification.'

[306क (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी,—

(क) अनुच्छेद 211क के उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य के सम्बन्ध में लागू न होंगे;

(ख) उक्त राज्य के सम्बन्ध में विधि बनाने की संसद् की शक्ति–

(i) संघ-सूची और समवर्ती सूची में के जिन विषयों को राज्य की सरकार से परामर्श करके राष्ट्रपति उन विषयों को तत्स्थानी विषय घोषित कर दे जो भारत डोमिनियन में उस राज्य के प्रवेश को शासित करने वाली प्रवेश-लिखित में उल्लिखित ऐसे विषय हैं जिनके बारे में डोमिनियन विधान-मण्डल विधि बना सकता है उन विषयों तक; तथा

(ii) उक्त सूचियों में के जिन अन्य विषयों को उसे राज्य की सरकार की सहमति से राष्ट्रपति आदेश द्वारा उल्लिखित करे उन विषयों तक सीमित होगी।

व्याख्या–इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए राज्य की सरकार से अभिप्रेत है वह व्यक्ति जिसे संघ 1948 की मार्च के पांचवें दिन निकाली गई महाराजा की उद्घोषणा के अधीन तत्समय पदस्थ मंत्रिपरिषद की मंत्रणा के अनुसार कार्य करने वाला जम्मू और कश्मीर का महाराजा तत्समय अभिज्ञात करता है;

[अध्यक्ष]

(ग) इस संविधान के अनुच्छेद 1 के उपबन्ध उस राज्य के सम्बन्ध में लागू होंगे;

(घ) इस संविधान के उपबन्धों में से ऐसे अन्य उपबन्ध ऐसे अपवादों और रूपभेदों के साथ उस राज्य के बारे में लागू होंगे जैसे कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा उल्लिखित करे:

परन्तु ऐसा कोई आदेश जो राज्य के प्रवेश लिखित में उल्लिखित विषयों से सम्बद्ध हो राज्य की सरकार से परामर्श किये बिना न निकाला जायेगा:

परन्तु यह और भी कि ऐसा कोई आदेश, जो अन्तिम पूर्ववर्ती परन्तुक में निर्दिष्ट विषयों से भिन्न विषयों से सम्बन्ध हो, उस सरकार की सहमति के बिना न निकाला जायेगा।

(2) यदि उस राज्य की सरकार द्वारा खंड (1) के उपखंड (ख) की कंडिका (2) में अथवा उस खंड के उपखंड (3) के दूसरे परन्तुक में निर्दिष्ट सहमति, उस राज्य के लिये संविधान बनाने के प्रयोजन वाली संविधान सभा के बुलाये जाने से पहले, दी जाये तो उसे ऐसी सभा के समक्ष ऐसे विनिश्चय के लिये रखा जायेगा जैसा कि वह उस पर ले।

(3) इस अनुच्छेद के पूर्ववर्ती उपबन्धों में किसी बात के होते हुये भी राष्ट्रपति लोक-अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकेगा कि यह अनुच्छेद ऐसी तारीख से प्रवर्तनहीन, अथवा ऐसे अपवादों और रूपभेदों के सहित ही प्रवर्तन में, होगा जैसे कि वह उल्लिखित करे:

परन्तु ऐसी अधिसूचना को राष्ट्रपति द्वारा निकाले जाने से पहले उस राज्य की संविधान सभा की सिफारिश आवश्यक होगी।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 306क संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्ष:** मसौदा समिति से हमें ये ही सब संशोधन प्राप्त हुये थे। संशोधनों की सूची में कुछ संशोधन मुद्रित हैं और शायद कुछ अन्य संशोधन संशोधनों की उन अनेक सूचियों में की एकाध सूचियों में हैं जो बाद में घुमाई गई थीं। प्रश्न यह है कि इन संशोधनों में से हम किसी को लें या नहीं। हमने एक-एक अनुच्छेद को लेकर, एक एक खंड को लेकर विस्तारपूर्वक समस्त संविधान पर विचार कर लिया है और मैं नहीं समझता हूं कि नये संशोधन प्रस्तुत करके इस समय हम उन बातों में से किसी बात को फिर विचार के लिए रख सकते हैं। पंडित ठाकुर दास भार्गव का एक संशोधन संख्या 472 पर है जिस पर श्री नज़ीरुद्दीन अहमद ने एक संशोधन की सूचना दी है और यह पंचम सप्ताह की सूची 1 में सम्मिलित कर लिया गया था। वह स्वयं अपने रूप में संशोधन नहीं था वह एक बहुत लम्बा अनुच्छेद था और उसका सम्बन्ध उस अनुच्छेद की केवल एक कंडिका

से था। मैं समझता हूं कि यही विषय अनुच्छेद 109 के अंतर्गत आ जाता है जिसे हम पारित कर चुके हैं। अनुच्छेद 109 सर्वोच्च न्यायालय को मूल क्षेत्राधिकार देता है और अनुच्छेद 121 यह निर्धारित करता है कि सर्वोच्च न्यायालय प्रक्रिया के अपने नियम रखेगा, और अनुच्छेद उन उपचारों के सम्बन्ध में है जो न्यायालय में मूलाधिकार प्रवृत्त कराने के लिए पक्ष को दिये गये हैं। मैं समझता हूं कि इन तीन अनुच्छेदों में वे सब बातें आ जाती हैं जो श्री नज़ीरुद्दीन अहमद और पंडित भार्गव के संशोधनों में हैं। अत: पंडित भार्गव के संशोधन को मैं नियम विरुद्ध ठहराता हूं।

अब हम प्रस्तावना को लेंगे।

***एक माननीय सदस्य:** क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि जब हम नवम्बर में तृतीय पठन के लिये समवेत् हों उस समय प्रस्तावना ली जाये? तब तक मसौदा समिति भी सभा को अपना प्रतिवेदन भेज चुकेगी।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं इस बात का विरोध करता हूं क्योंकि जब तक आप आज प्रस्तावना पारित नहीं करेंगे तब तक आप द्वितीय पठन पर कोई प्रतिवेदन किस प्रकार प्रस्तुत कर सकेंगे।

***श्री के.एम. मुंशी:** अपने जीवन भर में इस बार मैं मौलाना साहब का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि हमें प्रस्तावना आज पारित कर देनी चाहिये। द्वितीय पठन में संविधान को सम्पूर्ण रूप में पारित करना है और प्रस्तावना संविधान का अंग है। अत: प्रस्तावना को स्थगित नहीं रखा जा सकता हैं यदि आवश्यक होगा और यदि पन्द्रह मिनट में हम इसे समाप्त नहीं कर पायेंगे, जो एक बजने में अभी बाकी है, तो हम दोपहर बाद बैठेंगे।

मैं देखता हूं कि मुद्रित सूची के अंक 1 में प्रस्तावना पर बहुत से संशोधन हैं। इनमें से बहुत से उन विषयों को प्रस्तुत करते हैं जो वास्तव में प्रस्तावना के अनुकूल नहीं हैं वरन् प्रस्तावना में पुर:स्थापन स्वरूप हैं। पर मैं देखता हूं कि मौलाना हसरत मुहानी का संशोधन सारयुक्त है और उसमें पूर्णतया नये विचार प्रस्तुत करने का प्रयास है। अत: यदि वे चाहते हैं तो मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे सर्वप्रथम अपना संशोधन पेश करें।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मेरे पास तीन संशोधन हैं। मैं उनको पृथक्-पृथक् पेश करना चाहता हूं न कि इकट्ठे मिलाकर एक।

***अध्यक्ष:** आप सर्वप्रथम किसको पेश करना चाहते हैं?

***मौलाना हसरत मोहानी:** सर्वप्रथम मैं 453 को पेश करना चाहता हूं। वह इस प्रकार है:

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 8 के स्थान में निम्नलिखित संशोधन रखा जाये:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:–

'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Federal Republic.'

[मौलाना हसरत मोहानी]

अथवा विकल्पत:

'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Independent Republic.' "

इन संशोधनों के प्रस्थापित करने के मैं अभी अपने कारण बताऊंगा। इस बात को ध्यान में रखकर कि सार्वजनिक स्मरण शक्ति लोक-प्रसिद्ध रूप में अल्प-कालीन है सर्वप्रथम मैं सदस्यों को एक बहुत ही मौलिक तथ्य की याद दिलाना चाहता हूं जो वर्तमान संविधान तथा डॉ. अम्बेडकर द्वारा तैयार किये गये मसौदे में ले आया गया है। इस सभा की कार्रवाई की सरकारी रिपोर्ट के अंक 4 संख्या 6—सूची 738, भाग 1: फेडरल राज्य क्षेत्र तथा क्षेत्राधिकार का मैं निर्देश करता हूं। "राज्य-क्षेत्र तथा फेडरेशन का नाम" शीर्षक के अन्तर्गत यह कहा गया है कि जो फेडरेशन स्थापित किया जा रहा है वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न स्वाधीन गणराज्य होगा। अत: यह स्पष्ट निर्धारित कर दिया गया है कि हम केवल फेडरेशन रखेंगे और वह भारतीय गणराज्यों को फेडरेशन होगा। पर मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर ने मैं समझता हूं कि बड़ी चतुराई से 'फेडरल' शब्द को बिल्कुल छोड़ दिया तथा "स्वाधीन" शब्द को भी छोड़ दिया और "लोकतंत्रात्मक राज्य" कहा है। अभी उस दिन जब मैंने भाषण दिया था मैंने इस बात का विरोध किया था।

*श्री देशबन्धु गुप्त (दिल्ली): एक औचित्य सम्बन्धी प्रश्न है: यदि ये संशोधन पारित हो जाते हैं तो इनका प्रभाव यह होगा कि समस्त संविधान को फिर से बनाना पड़ेगा।

*मौलाना हसरत मोहानी: इसके लिए कौन उत्तरदायी होगा?

*श्री देशबन्धु गुप्त: इस समय ऐसा संशोधन पेश करना नियम विरुद्ध है अत: इसको पेश नहीं होने देना चाहिये।

*मौलाना हसरत मोहानी: मैं यह निवेदन करूंगा कि आरम्भ में ही आपको रोकने का मैंने भरसक प्रयत्न किया था। मैंने कहा था कि यदि आप भारत की तकदीर का फैसला करना चाहते हैं तो पहले आपको यह निश्चित रूप से जान लेना चाहिये और इस बात की घोषणा कर देनी चाहिये कि आप किस प्रकार के संविधान का निर्माण कर रहे हैं। पर मेरी बात नियम विरुद्ध ठहराई गई। हां, मैंने यह अवश्य कहा था कि यदि आप मेरा सुझाव स्वीकार नहीं करते हैं तो न करिये पर आपको गुर्राना नहीं चाहिये, अब जब कि प्रस्तावना प्रस्तुत की जा रही है तो क्या मैं कोई आपत्ति न उठाऊं? तब तो यदि आप ये कहें कि चूंकि हमने अमुक-अमुक बातें पारित कर दी हैं तो मैं आपकी बात नहीं सुनूंगा.....

*श्री देशबन्धु गुप्त: क्या मैं आपका आदेश प्राप्त कर सकता हूं?

*मौलाना हसरत मोहानी: मैं कहता हूं कि आरम्भ में इस बात पर वाद-विवाद करने में मुझे रोकने का उत्तरदायित्व आप पर है और इस कारण यदि आपको

सारा संविधान फिर से बनाना पड़े तो कोई बात नहीं है। मैं इस बात पर आग्रह करूंगा। प्रस्तावना पर कोई भी संशोधन प्रस्थापित करने का मुझे पूर्ण अधिकार है, और यदि आपको यह विदित हो कि आप कोई बिल्कुल ही भिन्न बात पहले ही पारित कर चुके हैं तो मैं आपको यह कह दूं कि प्रस्तावना आपके गलत विनिश्चयों के अधीन नहीं होगी और आपको उन विनिश्चयों को ही सही करना होगा चाहे इस कार्य में एक या दो वर्ष लगें। यह कोई चिन्ता की बात नहीं है। परन्तु जब तक आप उन स्वीकृत सिद्धान्तों के अनुसार नहीं चलते जो समस्त संसार में प्रचलित हैं तब तक मैं समझता हूं कि इसको इतनी असावधानीपूर्वक पारित करना हास्यास्पद होगा।

*श्री देशबन्धु गुप्तः** क्या मैं अध्यक्ष का ध्यान उस औचित्य प्रश्न की ओर आकर्षित कर सकता हूं जिस मैंने पेश किया है? मैं उसके प्रति गम्भीर हूं।

*अध्यक्षः** वे संशोधन संख्या 453 पेश कर रहे हैं जो इस प्रकार है:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute Inda into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:

'We, the people of India, 'having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Federal Republic.'

या

'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Independent Republic.'"

जहां तक संशोधन का सम्बन्ध है मुझे इसमें ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती है जो नियम विरुद्ध हो।

आप केवल इसी संशोधन को ले रहे हैं, मौलाना साहब?

*मौलाना हसरत मोहानीः** जी नहीं। समय पर मैं दूसरे को प्रस्थापित करूंगा।

*अध्यक्षः** अभी तो आप इसे ही पेश कर रहे हैं।

*मौलाना हसरत मोहानीः** जी हां, पर मैं दूसरे संशोधन को छोड़ नहीं रहा हूं।

*अध्यक्षः** इस समय तो आप किसी अन्य संशोधन को नहीं ले रहे हैं। आपने संशोधन संख्या 453 पेश किया है।

*मौलाना हसरत मोहानीः** जी हां, यह और एक और।

*अध्यक्षः** कौन-सा और? हमारे पास केवल एक संशोधन है।

*मौलाना हसरत मोहानीः** इसके विकल्प में दूसरा।

*अध्यक्षः** उससे कोई अन्तर नहीं आता।

*__डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया__: आपने पहले यह कहा था कि यदि वैकल्पिक संशोधन हैं और उनमें से एक पेश हो चुका है तो दूसरा रोक दिया जायेगा।

*__अध्यक्ष__: दोनों संशोधनों में मुझे कोई अधिक अन्तर नहीं दिखाई देता है न्यूनाधिक रूप से वे एक समान हैं। अत: चाहे वह स्वीकार किया जाये या वह, इसमें कोई बात नहीं है।

*__डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया__: अत: यदि वे दोनों एक समान हैं तो केवल एह ही स्वीकार किया जा सकता है।

*__अध्यक्ष__: जिसको वे पेश करेंगे उस पर मैं सभा का मत लूंगा।

*__मौलाना हसरत मोहानी__: अत: मैंने सरकारी रिपोर्ट पढ़ कर सुना दी है। मैं अंक 4...

*__अध्यक्ष__: प्रस्तावना को अन्त में रखने का उद्देश्य यह है कि जिस रूप में विधेयक स्वीकार किया जाता है प्रस्तावना उसके अनुरूप हो।

*__मौलाना हसरत मोहानी__: जब मैंने आरम्भ में ही प्रस्तावना पर वाद-विवाद करना चाहा था तो आपने कहा था कि हम इस पर वाद-विवाद नहीं होने देंगे। अत: मैंने यह कहा था कि मुझे इस बात की शंका है कि जब आप अपनी इच्छा के अनुसार अन्य सब अनुच्छेदों को पारित कर लेंगे और यदि कोई अन्य व्यक्ति प्रस्तावना के बारे में कोई बात प्रस्थापित करेगा तो आप कह देंगे कि जो कुछ हम पारित कर चुके हैं उससे पीछे हटना अब सम्भव नहीं है; वह अब एक निश्चित तथ्य है और उस समय आप मुझे नियम विरुद्ध ठहरायेंगे। आपने मुझे वचन दिया था कि आप ऐसा नहीं करेंगे और ये बात मेरे पास छपी हुई रिपोर्ट में है।

*__डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया__: आपने तो औचित्य प्रश्न को नहीं माना, पर वे उसे मानते हैं, इसलिए उन्हें अब नियम विरुद्ध ठहराया जाये।

*__मौलाना हसरत मोहानी__: औचित्य प्रश्न क्या है?

*__अध्यक्ष__: मौलाना साहब, आप इस बात का निर्देश कर रहे हैं जिसका मैंने वचन दिया था। मैं उसे जानना चाहता हूं कि वह क्या वचन था।

*__मौलाना हसरत मोहानी__: एक बार पिछली दफा आपने जो कुछ कहा था उसे मैं आपको पढ़ कर सुनाऊंगा। डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं एक बार ऐसा कहा था, वह भी यहां मेरे पास है: मैं अंक 7 संख्या 6 पृष्ठ 418 का निर्देश करता हूं जहां वे यह कहते हैं कि इस समय मेरे संशोधन पर वे आपत्ति नहीं करेंगे।

आपके सम्बन्ध में मैं अंक 4 संख्या 6 पृष्ठ 733 का निर्देश करता हूं। यह वह अवसर था जब प्रस्थापित संघ संविधान की रिपोर्ट पंडित नेहरू द्वारा प्रस्तुत की जा रही थी। उस समय मैंने एक आपत्ति उठाई थी और आपने यह कहा था "इस समय आप उसके मार्ग में रुकावट न डालें।" आपने कहा था कि इस आपत्ति को मैं बाद में उठा सकता हूं। "जैसाकि मैं समझता हूं मौलाना का प्रश्न यह है कि इस समय मैं उनको यह वचन दे दूं कि उनका संशोधन नियम विरुद्ध

नहीं ठहराया जायेगा।" इसके बाद आपने कहा था "इससे अधिक मैं इस समय और कुछ नहीं कह सकता हू।" "मैंने कुछ ऐसा वचन दे दिया है जो मौलाना साहब चाहते हैं। मैं यह मानता हूं कि सभा यह चाहती है कि हम इस रिपोर्ट पर विचार करें।" मैने आपत्ति की थी और कहा था कि मैं इस रिपोर्ट पर विचार नहीं होने दूंगा और तब आपने यह कहा था कि मैं अपनी आपत्ति बाद में रख सकता हूं और इस समय मैं पंडित जवाहरलाल नेहरू को वह रिपोर्ट लेने दूं, और इस विचार से ही उस समय मैंने यह सब बातें नहीं कहीं।

*__अध्यक्षः__ वचन देना तो दूर रहा मैंने निश्चित रूप से वचन देना अस्वीकार किया। उस वाद-विवाद के विषय-संगत अंश को मैं पढ़कर सुनाता हूं। "जैसाकि मैं समझता हूं मौलाना का प्रश्न यह है कि इस समय मैं उनको यह वचन दे दूं कि उनका संशोधन नियम विरुद्ध नहीं ठहराया जायेगा। यह स्पष्ट है कि जब तक विषय प्रस्तुत न हो तब तक मैं किसी सदस्य को कोई वचन नहीं दे सकता हूं। पर आप सबने यह देखा होगा कि चाहे संशोधन समय बीत जाने पर आयें फिर भी उन संशोधनों को पेश करने देने में मैं बहुत उदार हूं। जब तक कोई परिभाषिक आधार न हो तब तक मुझे ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता कि उनका संशोधन क्यों नियम विरुद्ध ठहराया जाये। इससे अधिक मैं इस समय और कुछ नहीं कह सकता हूं।"

*__मौलाना हसरत मोहानीः__ मुझे कुछ वचन दिया गया था। बहुत अच्छा, श्रीमान्। उस रिपोर्ट के अनुसार विधान-निर्माण के लिए नियुक्त की गई समिति को यह स्पष्ट निदेश दिया गया था कि संविधान का निर्माण इस सभा द्वारा पारित लक्ष्यमूलक संकल्प के अनुसार होना चाहिए। यह बहुत ही आश्चर्यजनक है कि लक्ष्यमूलक संकल्प के अनुसरण करने की अपेक्षा डॉ. अम्बेडकर जो चाहते हैं सो पार कर रहे हैं। वे चाहते हैं कि लक्ष्यमूलक संकल्प उनके त्रुटिपूर्ण विनिश्चय के अनुरूप हो। उन्होंने व्यवस्था उलट दी है और यही बात है जिसका मैं घोर विरोध करता हूं क्योंकि इसके कारण संविधान का प्रकार ही बदल गया। जैसा मैंने यहां बताया था लक्ष्यमूलक संकल्प का तथा उस रिपोर्ट का क्या उद्देश्य था। इनमें कहा गया था कि वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न स्वाधीन गणराज्यों का फेडरेशन होगा। गणराज्य के बहुवचन रूप पर ध्यान दीजिये। और अब उन्होंने पूरी की पूरी बात उलट दी। उन्होंने 'फेडरेशन' शब्द को छोड़ दिया; उन्होंने 'गणराज्य' शब्द को छोड़ दिया और किसी अन्य उद्देश्य के लिए जिसे मैं इस समय बताना नहीं चाहता हूं उन्होंने 'स्वाधीन' शब्द को भी छोड़ दिया। मैं इस बात को किसी भावी अवसर के लिए रक्षित रखता हूं और जब समय आयेगा मैं उनके सामने यह बात कहूंगा। इस समय मैं केवल यही कहता हूं कि लक्ष्यमूलक संकल्प के अनुसार तथा पंडित जवाहर लाल नेहरू के अनुदेशों के अनुसार वे कम से कम इस अनुच्छेद को इस रूप में बदल दें कि जो कुछ नेहरू ने सुझाव दिया है वह डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्थापित अनुच्छेद में सम्मिलित कर लिया जाये। सच तो यह है कि उन्होंने यह बात स्वीकार कर ली थी; और अब से 'स्वाधीन' शब्द को निकालते हैं। 'स्वाधीन' शब्द के स्थान में मैं 'फेडरल' शब्द रखना चाहता हूं अर्थात् एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न फेडरल गणराज्य; यह कोई बात नहीं है कि वह गणराज्य नहीं है जब मैं एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न फेडरल गणराज्य कहता हूं तो उसका अर्थ एक गणराज्य से है और उसके एकक राज्य भी गणराज्य होंगे या वह एक फेडरेशन होगा, कम से कम वह नहीं हो जो वे चाहते है। गणराज्य या कोई फेडरेशन रखने

[मौलाना हसरत मोहानी]

की अपेक्षा वे केवल राज्यों का संघ रखना चाहते हैं और 'संघ' को भी फेडरेशन के अर्थ में रखना चाहते हैं। मैं कहता हूं 'नहीं', वे इस शब्द को इस कारण भी ग्रहण करते हैं कि इसमें एक प्रकार की एकात्मक प्रणाली का भाव निहित है, पर उन्होंने जैसा चाहा वैसा उलट दिया है और इस संविधान के सम्पूर्ण रूप को बदल दिया है हमारा यह आशय है और लक्ष्यमूलक संकल्प का भी यह आशय है कि भारत स्वाधीन गणराज्यों का फेडरेशन बनाया जायेगा पर वे कहते हैं "नहीं"। भारत का स्वरूप बदल जायेगा और ब्रिटिश साम्राज्य के स्थान में आप एक भारतीय साम्राज्य स्थापित करेंगे जिसमें केवल वे राज्य होंगे जिनको कोई शक्ति नहीं होगी और राज्यों में आपने प्रान्तों को भी उनका स्तर गिराकर अन्तर्विष्ट कर लिया है। पहले मैंने यह सोचा था कि इस प्रकार अन्तर्विष्ट करने से राज्यों को लाभ होगा पर आपने तो प्रान्तों के स्तर को भी गिरा दिया और आपने उनको सब बातों से वंचित कर दिया और यहां तक कि प्रान्तीय स्वायत्तता भी छीन ली गई और वास्तव में प्रान्तों को आपने कुछ भी नहीं दिया है। आपने यह निश्चय किया था कि आप प्रान्तों में निर्वाचित राज्यपाल रखेंगे। मैंने 'राज्यपाल' शब्द पर आरम्भ में ही आपत्ति की थी और उस समय पंडित नेहरू ने कहा था "मौलाना को मैं सन्तुष्ट नहीं कर सकता हूं; उनके विचार बड़ी गहराई तक जाते हैं। वे 'राज्यपाल' शब्द से भयभीत हैं।" मैंने सुझाव दिया था कि प्रान्तों के लिए भी 'राज्यपाल' शब्द के स्थान में हम 'राष्ट्रपति' शब्द रखें। उन्होंने कहा कि वे यह नहीं करेंगे। उस समय मैंने इस विषय पर जोर नहीं दिया था, पर अब डॉ. अम्बेडकर द्वारा की गई व्याख्याओं को सुनकर मैं देखता हूं कि उन्होंने सारी की सारी बात उलट दी और उन्होंने रहस्य प्रकट कर दिया। वे साफ कह चुके हैं: "भारत अर्थात् इंडिया क्या होगा? वह राज्यों का संघ होगा।" इसका क्या अर्थ है? आपने 'गणराज्य' शब्द को छोड़ दिया; आपने 'फेडरेशन' शब्द को छोड़ दिया; आपने 'स्वाधीन' शब्द को छोड़ दिया और मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर कहते हैं "इससे क्या फर्क पड़ता है? जब हम गणराज्य कहते हैं तो कोई फर्क नहीं आता है। यह अनावश्यक है चाहे आप उसे स्वाधीन कहें या न कहें।" मैं कहता हूं कि यदि यह अनावश्यक है तो वे 'स्वाधीन' शब्द को 'लोकतंत्रात्मक' शब्द में बदलने के लिए क्यों इतने चिन्तित हैं? परदे की आड़ में कोई न कोई शिकार खेली जा रही है और एक बार पहले मैंने यह कहा था कि जब पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपने विचार बदल दिये और ब्रिटिश कामनवेल्थ से किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध रखने के लिए इंग्लैंड गये तब उन्होंने यह सोचा था कि हम एक गणराज्य बनायेंगे और वह 'स्वाधीन' भी होगा। अत: उन्होंने अपने लिये एक मार्ग खोज निकालना चाहा क्योंकि अब वे यह कह सकते हैं "हमारा राज्य एक गणराज्य है ही।" हमारा राज्य एक स्वाधीन गणराज्य नहीं है। हमारा किस प्रकार का गणराज्य है? एक इस प्रकार का गणराज्य जिसे इन यूरोप के देशों में इन साम्राज्यवादियों ने, जो इस वाग्जाल के प्रसिद्ध रचयिता हैं, नये पद गढ़े हैं: और ये नये पद क्या हैं? हालैंड ने एक "गणतंत्रात्मक डोमिनियन" पर की खोज की है और फ्रांस ने एक नया पद वीटनाम गढ़ा है जिसका अर्थ है कि वह औपनिवेशिक गणराज्य होगा। हम यह मानते है कि वीटनाम एक गणराज्य है और हालैंड यह कहता है कि उसने हिन्देशिया को एक गणराज्य के रूप में स्वीकार कर लिया है पर हिन्देशिया कहता है कि वह एक गणतन्त्रात्मक डोमिनियन है। डोमिनियन की अपेक्षा

वह एक साम्राज्यशाही राज्य में अन्तर्विष्ट किया जायेगा और ये धोखा हालैण्ड तथा फ्रांस ने किया है और क्या आप भी यही प्रस्थापना करते हैं कि आप भी उसी धोखे का अधिनियम यहां बनायेंगे? आपने यह कहा था कि हमने गणराज्य शब्द रखा है। आपने फेडरेशन शब्द को छोड़ दिया है। आप यह भी कहेंगे कि जवाहरलाल नेहरू ने ब्रिटिश कामनवेल्थ में रहना स्वीकार कर लिया है क्योंकि वे यह स्वीकार करते हैं कि हम स्वाधीन हैं। पर यह किस प्रकार की स्वाधीनता है? वह एक गणतन्त्रात्मक डोमिनियन राज्य होगा। क्योंकि यदि वह वास्तविक गणराज्य है और गणतन्त्रात्मक डोमिनियन नहीं है तो किसी विषय में भी आपका बादशाह या सम्राट से कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं रहेगा। जब एक बार पंडित जवाहरलाल ने ब्रिटिश कामनवेल्थ में रहना स्वीकार कर लिया तो मैं समझता हूं कि उन्होंने भारत को गणराज्य के रूप में पुकारे जाने के अपने अधिकार को खो दिया। यह गणराज्य नहीं है। यदि वह गणराज्य है तो जैसा मैंने अभी कहा था वह गणतंत्रात्मक डोमिनियन है।

अत: मेरी वैकल्पिक प्रस्थापना यह है। या तो "लोकतंत्रात्मक" शब्द के स्थान में "फेडरल" शब्द पुर:स्थापित करिये। इससे कुछ अर्थ स्पष्ट हो जायेगा। यदि आप 'फेडरेशन' शब्द पुर:स्थापित नहीं करना चाहते हैं, यदि आप इससे भयभीत हैं तो जाने दीजिये, मैं डॉक्टर अम्बेडकर के साथ एक रियायत कर दूंगा और आपने जो लक्ष्यमूलक संकल्प यहां दिया हुआ है उसके मूल शब्दों को अपनाइये। वह एक "स्वाधीन सम्पूर्ण प्रभुत्व गणराज्य" होगा। मैं यह कहता हूं कि इस "लोकतन्त्रात्मक" शब्द को छोड़िये और लक्ष्यमूलक संकल्प में के मूल शब्दों को रखिये। मैं आगे बढ़ कर यह कहता हूं कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जो कुछ किया है वह एक पूर्णतया गलत नीति है।

***अध्यक्ष:** क्या कोई अन्य व्यक्ति इस संशोधन के बारे में कुछ कहना चाहता है? मैं इस पर मत लूंगा। प्रथम विकल्प।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:–

'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Federal Republic.'"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** मैं दूसरे विकल्प पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:–

'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Independent Republic.'"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

अध्यक्ष: अन्य बातों को, जब हम छ: बजे समवेत् होंगे, लेंगे।

इसके पश्चात् सभा दोपहर बाद के भोजन के लिए सायंकाल के छह बजे तक स्थगित हुई।

सभा दोपहर बाद के भोजन के पश्चात् सायंकाल के छह बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में पुन: समवेत् हुई।

अध्यक्ष: अब हमें अन्य संशोधनों को लेना है। एक मौलाना हसरत मुहानी के नाम में संख्या 9 पर है।

मौलाना हसरत मोहानी: अध्यक्ष महोदय, में प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Union of Indian Socialistic Republics to be called U.I.S.R. on the lines of U.S.S.R.' रख दिये जायें।"

श्री देशबन्धु गुप्त: क्या मैं पुन: औचित्य प्रश्न उठा सकता हूं और यह निवेदन कर सकता हूं कि यह संशोधन व्यवस्था के विरुद्ध है क्योंकि यह उस संविधान का विरोध करता है जिसे हम पार कर चुके हैं।

अध्यक्ष: यह यह औचित्य प्रश्न उठा दिया गया है कि वह सारा का सारा संविधान, जिसे इस सभा ने निर्माण तथा स्वीकार किया है, इस संशोधन से असंगत है अत: इस संशोधन को व्यवस्था के विरुद्ध ठहराया जाये।

मौलाना हसरत मोहानी: इसी बात के लिये मैंने आपसे निवेदन किया था कि आप मेरी इस प्रकार के कपटयुक्त प्रयोगों से रक्षा करें। उन्हीं बातों को मैं दुहरा नहीं रहा हूं। अनुच्छेद 1 के सम्बन्ध में अभी उस दिन मैंने यही बात प्रस्थापित की थी। आज मैं जो कुछ प्रस्थापित करने जा रहा हूं वह एक भिन्न आधार पर है। यदि आप मुझे उन्हीं तर्कों को दुहराते हुए देखें तो आप मुझे व्यवस्था के विरुद्ध घोषित कर सकते हैं, पर यदि मैं कोई बिलकुल नई बात कहूं जिसका इस संविधान के प्रथम अनुच्छेद से कोई सम्बन्ध न हो तो मैं समझता हूं कि मैं आपकी ओर से कुछ अनुग्रह प्राप्त करने का अधिकारी हूँ। जैसाकि मैंने अपने पहले कथन में सिद्ध किया था आपने एक प्रकार का वचन दिया था कि आप एक दम या बिना किसी विचार के मुझे नियम विरुद्ध नहीं ठहरायेंगे। हां, यदि आप यह समझें मैं कोई नवीन बात नहीं कह रहा हूं और आप मुझे पुरानी बातों को फिर से कहते हुए पायें तो आप मुझे नियम विरुद्ध ठहरा सकते हैं; पर यदि अनुच्छेद 1 के सम्बन्ध में मैंने जो कुछ कहा था उससे बिल्कुल ही भिन्न विषय हो तो मुझे ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता कि मेरा संशोधन व्यवस्था के विरुद्ध क्यों ठहराया जाये?

डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैय्या: क्या मैं यह जान सकता हूं कि आज प्रात: काल जो मत लिया गया था वह मौलाना के संशोधन को अस्वीकार कराने के लिए मतदान था? प्रस्तावना की शब्दावली पर कोई मत नहीं लिया गया था।

***अध्यक्षः** हां, उस पर मैंने कोई मत नहीं लिया था।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैय्याः** अतः जो कुछ हुआ था वह 'लोकतंत्रात्मक' शब्द के स्थान में 'स्वाधीन' या 'फेडरल' रखने वाले संशोधन को अस्वीकार कराने के लिए था।

***अध्यक्षः** मौलाना, मुझे जो कुछ विनिश्चय करना है वह यह नहीं है कि आप अपनी बातें दुहरायेंगे या नहीं। प्रश्न यह है कि यह व्यवसथा के अंतर्गत है या नहीं। आपत्ति यह है कि यह उस समस्त संविधान से असंगत है जिसे हम पारित कर चुके हैं। इसके बारे में आपको क्या कहना है?

***मौलाना हसरत मोहानीः** मैं नहीं समझता हूं कि यह किस प्रकार असंगत है। क्योंकि प्रस्तावना में 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य' है। मैं यह कहता हूं कि इन शब्दों की जगह आप 'स्वाधीन गणराज्यों का संघ' कहें। तो फिर असंगति कहां है? इसमें मुझे कोई असंगति नहीं दिखाई देती है।

***अध्यक्षः** क्या आप वास्तव में यही सुझाव रखते हैं कि जो संविधान हमने पारित किया है वह सोवियत रूस के संयुक्त राज्य के आधार पर है?

***मौलाना हसरत मोहानीः** इस प्रकार की मैं कोई बात नहीं कहूंगा। मैं यह नहीं कहता कि हम सोवियत राज्य में जाकर मिल जायें और न मैं यह कहता हूं कि आप वैसा संविधान स्वीकार करें, पर जो कुछ मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि हमें अपने संविधान को सोवियत रूस के आधार तथा शैली के अनुसार क्रियान्वित करना चाहिये। वह एक विशेष शैली है तथा गणतंत्रात्मक शैली है और वह विकेन्द्रीयकरण शैली भी है।

***श्री जयनारायण व्यास** (राजस्थान): क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि माननीय सदस्य भाषण दे रहे हैं या औचित्व प्रश्न का उत्तर दे रहे हैं?

***अध्यक्षः** वे औचित्य प्रश्न का उत्तर दे रहे हैं।

***मौलाना हसरत मोहानीः** जब मैं यह विचार प्रस्तुत करता हूं कि हम रूस से नहीं मिलेंगे या हम सोवियत रूस का संविधान ग्रहण नहीं करेंगे तो मैं केवल यह सुझाव दे रहा हूं कि द्वितीय पठन में यहां हम जिस संविधान और प्रस्तावना को ग्रहण कर रहे हैं वह उसी प्रकार के उसी शैली के होने चाहियें जैसे सोवियत रूप के हैं और मैं नहीं समझता हूं कि इसमें कोई असंगति है। वे बातें क्या हैं? सोवियत रूस के मूल सिद्धांत क्या हैं? वे सिद्धान्त तीन हैं। सर्वप्रथम यह कि उनका संविधान फेडरल होगा। दूसरा यह कि वह विकेन्द्रीयकरण के सिद्धांत का फेडरेशन होगा और साथ ही साथ केन्द्र ने कुछ केन्द्रीय शक्तियां पाकर फिर उन शक्तियों को अपने अंगभूत एककों को दे दिया यह घोषणा करते हुए कि वे....

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि यदि मैं मौलाना साहब को बिना नियम-निर्देश के उनका संशोधन पेश करने की आज्ञा दे दूं तो समय की बचत होगी। अतः आप अपना भाषण समाप्त करें।

***मौलाना हसरत मोहानीः** यहां उपस्थित मेरे कुछ मित्र जब 'सोवियत' शब्द को सुनते हैं तो कहते हैं कि "यह सोवियत सरकार का अभिकर्त्ता है और यह सोवियत सरकार से वेतन पाता है।" मैं नहीं समझता हूं कि इस संसार में कोई भी व्यक्ति मुझ पर ऐसा दोषारोप कर सकता है।

***अध्यक्ष:** सभा में ऐसा किसी ने नहीं कहा।

***मौलाना हसरत मोहानी:** सोवियत के विश्वस्त अनुचर हैं, और वे सोवियत सरकार से प्राप्त आदेशों का पालन करते हैं। मेरा उनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरा भारत के साम्यवादी पक्ष से भी कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि मैंने इस आधार के कारण उनमें सम्मिलित होने से इंकार कर दिया कि एक बार उन्होंने यह कहने की गलती की कि चूंकि हमारा और इंग्लैंड का राष्ट्र दोनों वीर राष्ट्र हैं और इसलिए इंग्लैंड का और हमारा आधार एक ही है। उस समय मैंने यह कहा था और अब भी कहता हूं "कोई भी व्यक्ति किन्हीं भी निबन्धनों के अधीन अथवा किसी उद्देश्य के लिए किसी विदेशी सरकार को और विशेषकर ब्रिटिश सरकार को सहायता करता है तो मैं कहता हूं कि वह गलती करता है....

***अध्यक्ष:** मौलाना साहब, मैं आपको यह याद दिला दूं कि हमारा इन जीवन सम्बन्धी विवरणों से कोई सम्बन्ध नहीं है। आप कृपा कर अपने संशोधन पर भाषण दें।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं ऐसी कोई बात नहीं कहूंगा जिस पर कोई आपत्ति कर सके। सोवियत सरकार अथवा सोवियत संविधान से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं केवल यह चाहता हूं कि हमारा संविधान और हमारी प्रस्तावना उस आधार का अनुसरण करे जिसे सोवियत सरकार ने ग्रहण किया है और ये वे तीन आधार हैं जिनका मैं जिक्र कर चुका हूं। कहने का तात्पर्य यह है कि हमारा संविधान फेडरल होना चाहिये और फेडरल होने के साथ-साथ ऐसा भी होना चाहिये कि केन्द्र को अधिक शक्तियां न हों और अंगभूत राज्य या गणराज्य अपनी इच्छा से कुछ केन्द्रीय शक्तियां केन्द्र को दे दें। और इसके पश्चात् अंगभूत एककों को सद्भावना प्राप्त करने के लिए वह फिर, मेरा आशय यह है, कि सोवियत सरकार फिर अपने अंगभूत एककों या गणराज्यों को स्वतन्त्रता दे। यह कह दे कि "यदि आप किसी समय यह देखें कि केन्द्र आपके हित के विरुद्ध विनिश्चय कर रहा है तो केन्द्र से मतभेद रखने की आपको स्वतन्त्रता है।" और इस प्रकार उसने उसे उसी समय अधिकार दे दिया और यदि उन्होंने कोई बात गलत होते देखी, केन्द्र का कोई प्रस्ताव गलत देखा तो वे एक दम उससे बाहर हो सकते थे और उसने यह उस समय भी कहा जब युद्ध हो रहा था। उसने सोवियत रूस के सब मुस्लिम गणतंत्रों से यह कह दिया था "यदि आप चाहते हैं तो आप जिस पक्ष में युद्ध करना चाहते हैं आप उस पक्ष में जाकर युद्ध कर सकते हैं। यदि आप हमारे लिये युद्ध करना नहीं चाहते तो हम आप पर दबाव नहीं डालते।" इसका क्या फल हुआ? सोवियत रूस ने उनमें अपने प्रति विश्वास पैदा किया और फल यह हुआ कि एक भी मुसलमान सोवियत गणराज्य के विरुद्ध नहीं हुआ। प्रत्येक ने सोवियत सरकार की ओर से अपनी पूरी सहानुभूति से युद्ध किया। इसका क्या कारण था? उन्होंने यह इसलिए किया कि उन्होंने देखा कि सोवियत सरकार ने उन्हें अपना विश्वासपात्र बना लिया है। सोवियत समूह को छोड़ देने का उन्हें अवसर नहीं दिया। और वे उसे छोड़ते भी क्यों? वह भी सावधान थी। उसने कभी कोई ऐसी बात नहीं रखी जो स्पष्टतया अपने अंगभूत एककों के विरुद्ध हो।

अत: इस प्रकार की सान्तवनाप्रदायक प्रवृत्ति ग्रहण करने से उन्हें इस प्रकार की स्वतंत्रता और इस प्रकार की सफलता मिली जो इससे पूर्व संसार में किसी को नहीं मिली थी। श्रीमान, मैं यह कहता हूं कि हम भी इसी नीति का अनुसरण

करें और हम भी इसी प्रवृत्ति को ग्रहण करें। हम भी अपने अल्पसंख्यक वर्गों को अपना विश्वासप्रद बनायें। ऐसा करने की अपेक्षा आप तो उन्हें बिल्कुल बाहर निकाल फैंक रहे हैं। आप अपने राजनैतिक अल्पसंख्यक वर्गों तक के हितों पर किंचित मात्र विचार किये बिना जो चाहते हैं वह पारित कर रहे हैं। आपको हमारी कुछ भी चिंता नहीं। आप देखते हैं कि आपकी बंगाल सरकार और आपकी मद्रास सरकार ने इस आधार पर कि साम्यवादियों ने कुछ अवैध उपायों को अपनाया है—वे लड़ रहे हैं, मार काट कर रहे हैं, हत्या कर रहे हैं और लूटमार कर रहे हैं—साम्यवादी पक्ष को अवैध घोषित कर दिया है। ठीक है, मैं कहता हूं कि साम्यवादी भी यही बात कह सकते हैं। वे कह सकते है "आप हमें कोई अवसर नहीं देते हैं, आप हमें स्वाधीन तथा संविधानिक विचार नहीं रखने देते हैं और आप.....

*__अध्यक्ष:__ क्या मैं आपको यह याद दिला सकता हूं कि यह विधान सभा नहीं है, बल्कि यह संविधान सभा है और इस समय देश में क्या हो रहा है उससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है।

*__मौलाना हसरत मोहानी:__ बहुत अच्छा श्रीमान, इस सम्बन्ध में मुझे कुछ थोड़े से वाक्य और बोलने हैं और उनमें मैं अधिक समय नहीं लगाऊंगा।

मान लीजिये कि आप यह कहें कि आगामी निर्वाचन में संयुक्त निर्वाचक मंडल सहित तथा अन्य सब बातों के सहित बिना किसी निबंधन के साम्यवादी स्वतंत्र रूप से चुनाव लड़ सकते हैं। पर आप ऐसा कैसे करेंगे? मान लीजिए कि साम्यवादी पक्ष इस संविधानिक उपाय को काम में लेना चाहते हैं क्या उन्हें आप अपना घोषणापत्र निकालने देंगे जो अवश्य ही आपके सिद्धान्तों के प्रतिकूल होगा? निर्वाचनों के लिए क्या आप उन्हें अपने अभिकर्ता रखने देंगे? क्या आप उन्हें अपने कार्यकर्ता रखने देंगे जो प्रत्येक मतदाता के सम्पर्क में आयेंगे? आप ऐसी कोई बात नहीं करेंगे। एक बार यदि उन्होंने अपना घोषणापत्र निकाला आप उन्हें तुरन्त कारावास में डाल देंगे। अत: यह एक ऐसा प्रश्न है कि पहले मुर्गी हुई या अंडा। आप उन्हें कारावास में इसलिये बन्द करते हैं कि वे हिंसात्मक उपाय काम में लाते हैं और वे यह कहते हैं "कि हमें बाध्य होकर हिंसात्मक उपायों की शरण लेनी पड़ती है क्योंकि संविधानिक उपायों की आप हमारे लिये कोई गुंजाइश नहीं रहने देते हैं।"

*__अध्यक्ष:__ मौलाना साहब, आप अपने संशोधन पर भाषण नहीं दे रहे हैं।

*__मौलाना हसरत मोहानी:__ बहुत अच्छा। मुझे डॉ. अम्बेडकर और इस सभा से केवल यह निवेदन करना है कि सब राजनैतिक अल्पसंख्यक वर्गों के प्रति वैसी ही सान्तवनाप्रदायक प्रवृत्ति ग्रहण की जाये और वैसे ही सिद्धान्त ग्रहण किये जायें जैसे सोवियत संघ द्वारा ग्रहण किये गये हैं। मैं आपसे यह निवेदन नहीं कर रहा हूं कि आप सोवियत संघ में सम्मिलित हों या उनके संविधान को स्वीकार करें। इन चन्द शब्दों के सहित में अपना संशोधन पेश करता हूं और डॉ. अम्बेडकर से प्रार्थना करता हूं कि वे इसे स्वीकार करें।

*__अध्यक्ष:__ क्या कोई व्यक्ति इस संशोधन पर कुछ कहना चाहता है?

*__माननीय सदस्यगण:__ जी नहीं।

***अध्यक्षः** तो मैं इस पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Union of Indian Socialistic Republics to be called U.I.S.R. on the lines of U.S.S.R.' शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** हमारे पास अब ऐसे बहुत से संशोधन हैं जिनकी सूचना अन्य सदस्यों ने दी है। इन संशोधनों में से कुछ संशोधन दो बातों से सम्बद्ध हैं। उनमें से कुछ में ईश्वर का नाम प्रस्तावना में किसी न किसी रूप में लाया गया है। अन्य संशोधनों में महात्मा गांधी का नाम किसी न किसी रूप में लाया गया है। और कुछ संशोधन ऐसे हैं जिनमें शब्दावली पर कुछ संशोधनों का सुझाव दिया गया है। पर कदाचित् ये बातें साधारण हैं, और मुख्य संशोधन वास्तव में वे हैं जिनमें ईश्वर का या महात्मा गांधी का या दोनों का नाम लाया गया है। अब मैं सदस्यों से यह पूछना चाहूंगा कि क्या वे इन संशोधनों को पेश करने का आग्रह करेंगे क्योंकि मैं उनको संशोधन पेश करने से रोक नहीं सकता हूं; पर मैं यह सुझाव दूंगा कि इस सभा में न तो ईश्वर पर और न महात्मा गांधी पर वाद-विवाद हो (*वाह-वाह*)।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, क्या मैं अपने संशोधन संख्या 430 को पेश कर सकता हूं?

***अध्यक्षः** यदि वह पेश किया जायेगा तो उस पर मत भी लिया जायेगा।

***श्री देशबन्धु गुप्तः** श्रीमान, इसके पूर्व कि श्री कामत अपना संशोधन पेश करें क्या मैं सभा का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित कर सकता हूं कि जब इस सभा ने सत्यनिष्ठ होकर लक्ष्यमूलक संकल्प सब सदस्यों ने खड़े होकर पारित किया था और उस समय प्रधान मंत्री ने इन शब्दों में अपील की थी:

फिर भी'

"यह एक संकल्प है और यह एक संकल्प से बहुत कुछ अधिक भी है। यह एक घोषणा है। यह एक दृढ़ संकल्प है। यह एक प्रतिज्ञा है, एक बीड़ा है और मुझे आशा है कि यह हम सबके लिए एक समर्पण है....और यदि मैं सम्मानपूर्वक ऐसा कह सकता हूं तो मैं यह चाहता हूं कि यह सभा इस संकल्प पर संकीर्ण विधि सम्बन्धी शब्दावली के रूप में विचार न करे वरन् इस संकल्प के पीछे जो भावना है उस पर विचार करे"

प्रस्तावना किसी रूप में भी कम महत्वपूर्ण नहीं है और प्रधान मंत्री के वाक्य समान रूप से उस पर प्रयोज्य हैं। अतः मैं श्री कामत से निवेदन करता हूं कि इस बात पर ध्यान रखा जाये।

***अध्यक्षः** क्या श्री कामत को मैं एक बात बता सकता हूं? अनुसूची 3 में जिसे हम पारित कर चुके हैं मंत्रियों तथा अन्य व्यक्तियों के लिए जो कि पद धारण करेंगे एक शपथ या प्रतिज्ञान विहित कर दिया गया है। हमने इसे वैकल्पिक रूप में रख दिया है जैसे कि "ईश्वर की शपथ लेता हूं" या "सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं" और इस प्रकार आस्तिकों और नास्तिकों के लिए शपथ लेने अथवा प्रतिज्ञान करने की स्वतन्त्रता दी है। यहां भी क्या आप इस बात को वैकल्पिक रूप में लायेंगे?

***श्री एच. वी. कामतः** यहां हम व्यक्तिगत रूप में नहीं हैं यहां हम सब भारत की जनता के रूप में हैं। इन दोनों में बहुत कुछ अन्तर है।

***अध्यक्षः** भारत की जनता के अंतर्गत व्यक्ति सम्मिलित हैं। यदि आप अपने संशोधन को पेश करने का आग्रह करेंगे तो आपको मैं रोक नहीं सकता हूं। पर मैं आपको यह सुझाव देता हूं कि आप इसका आग्रह न करें।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं....

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): मैं आपसे इस बात पर ध्यान रखने के लिए निवेदन करूंगी कि बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक वर्गों में ईश्वर सम्बन्धी विषय को वाद-विवाद का विषय नहीं बनाया जाये। इस विषय में बड़ी उलझने हैं। हममें से अधिकांश व्यक्तियों को चाहे वे आस्तिक हों अथवा नास्तिक हों ईश्वर की सत्ता को सिद्ध तथा असिद्ध करना कठिन होगा। उसके नाम को व्यर्थ लाने का प्रयत्न हम न करें। यहां उसका नाम न लाया जाये। संसार में प्रत्येक राष्ट्र ईश्वर की स्तुति करता है और ईश्वर एक निष्पक्ष सत्ता है और उसका रूप निष्पक्ष है और सदस्यों को इस विषय पर किसी न किसी पक्ष में मत देना होगा। उसकी संज्ञा इसी रूप में रहने दी जाये। इन शब्दों में मैं श्री कामत से अपील करती हूं कि ईश्वर पर मत देने की उलझन में हमें न डालें।

***श्री एच.वी. कामतः** मुझे खेद है कि मैं इस अपील को स्वीकार नहीं कर सकता। अपने नाम के संशोधन संख्या 430 को मैं पेश करूंगा। श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 2 में प्रस्थापित प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जाये:–

'In the name of God,

We, the people of India,

having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic, and to secure to all her citizens

Justice, social, economic and political;

[श्री एच.वी. कामत]

Liberty of thought, expression, belief, faith and worship;

Equality of status and of opportunity; and to promote among them all;

Fraternity, assuring the dignity of the individual and the unity of the nation;

in our Constituent Assembly do hereby adopt, enact and give to ourselves this Constitution.'

[ईश्वर का नाम लेकर हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए

दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।]"

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैय्या:** श्रीमान, आप देख लीजिये, संशोधन केवल प्रथम पंक्ति में है।

***अध्यक्ष:** वह ठीक वैसा ही है जैसी कि प्रस्तावना है सिवा इसके कि उसका आरम्भ 'ईश्वर का नाम लेकर' शब्दों द्वारा हुआ है।

माननीय सदस्यगण: इस विषय पर कृपया भाषण न हों।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** मैं एक औचित्य प्रश्न रखने के लिए खड़ा होता हूं। पेश किये गये संशोधन का कुछ अर्थ होना चाहिए।

***अध्यक्ष:** वास्तव में यह औचित्य प्रश्न नहीं है।

***श्री एच. वी. कामत:** श्री सन्तानम को मैं उत्तर दे सकता हूं। मेरे संशोधन का अर्थ यह है कि ईश्वर का नाम लेकर हम अमुक कार्य करते हैं। इस प्रस्ताव को प्रस्तुत करने के लिए किसी लम्बे भाषण की आवश्यकता नहीं है। ईश्वर का नाम लाने के साथ-साथ मैंने केवल एक शब्द के लिए कुछ थोड़ी-सी स्वतन्त्रता और ले ली है, और वह यह है मैंने 'its' citizens के स्थान में 'her' citizens शब्द रखे हैं।

***श्री ए. थानू पिल्ले** (तिरुवांकुर और कोचीन राज्य): श्रीमान, क्या मैं एक औचित्य प्रश्न रख सकता हूं। यद्यपि मैं आस्तिक हूं, परन्तु यदि श्री कामत का संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो क्या उसका अर्थ विश्वास के विषय में विवश करना नहीं होगा? क्या इस प्रकार का प्रस्ताव पेश करना व्यवस्था के विरुद्ध नहीं है? यह विश्वास स्वातन्त्र्य के मूलाधिकार पर प्रभाव डालता है। संविधान के अनुसार किसी व्यक्ति को ईश्वर में विश्वास करने या न करने का अधिकार है। इस दृष्टिकोण से यह संशोधन नियम विरुद्ध ठहराया जाना चाहिये, यद्यपि मैं स्वयं कट्टर आस्तिक हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** श्री थानू पिल्ले के लिए मेरा उत्तर यह है कि इस संविधान को हम भारतीय जनता के नाम में तथा उसकी ओर से पारित कर रहे हैं। इस सभा में हमने जो कुछ किया है वह सब भारतीय जनता के नाम से और उसकी ओर से किया है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): क्या मैं श्री कामत के संशोधन पर यह संशोधन पेश कर सकता हूं कि "ईश्वर का नाम लेकर" के स्थान में "देवी का नाम लेकर" रखना श्री कामत स्वीकार करें। (*हंसी*)

***श्री एच.वी. कामतः** इस सभा में जो कुछ हमने किया है वह सब भारतीय जनता की ओर से भारतीय जनता के लिए ही किया है और यहां सब विनिश्चय सभा का मत लेकर किये गये हैं। यह विषय चाहे सभा के मत के लिए हो या न हो, पर मुझे यह विश्वास है कि वह भारत की जनता जिसके लिए हम विगत तीन वर्षों से यहां काम तथा परिश्रम कर रहे हैं वह पूर्ण रूप से इस संशोधन की पुष्टि करेगी। यहां तक तो श्री पिल्ले द्वारा उठाये गये प्रश्न के सम्बन्ध में है।

प्रस्तावना के मूल पाठ के सम्बन्ध में मैने केवल थोड़ी-सी स्वतन्त्रता बरती है। जैसाकि मैं बता चुका हूं, मैं पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा दिसम्बर 1946 में पेश किये गये लक्ष्यमूलक संकल्प की शब्दावली का ही अनुसरण कर रहा हूं। उसके प्रथम भाग में देश के शासन के निर्देश में भावी शब्द के साथ "her future governance" शब्दों का प्रयोग किया गया है; 'her' मातृभूमि के लिए उपयुक्त प्रयोग है। ऐसा होने से प्रस्तावना में हमें 'her citizens' कहना चाहिये न कि 'its citizens'। इस विषय को मैं मसौदा समिति पर छोड़ दूंगा।

प्रस्ताव के सार के सम्बन्ध में मैं कोई लम्बा भाषण नहीं देना चाहता हूं। यह देश जो प्राचीन होते हुए भी सदैव तरुण रहा है, जो ईश्वरीय ज्ञान के निर्मल स्रोत की शरण लेकर युग-युगान्तरों से अपना कायाकल्प करता रहा है उस देश की इस विशाल सभा में, जो भारत की—हमारे भारतवर्ष की प्रथम संविधान सभा है, इस संविधान के पवित्र संस्कार को गीता के निम्नलिखित श्लोक के अनुसार हम ईश्वर के प्रति सम्पूर्ण दृढ़ संकल्प द्वारा करें।

यत्करोसि यदश्नासि
यज्जुहोसि ददासियत्
यत्तपस्यसि कौन्तेय
तत्कुरुष्व मदर्पणम्।

[श्री एच.वी. कामत]

हमारी कमियां चाहे जो कुछ भी हों, इस संविधान में चाहे जो कुछ दोष और त्रुटियां हों हम ईश्वर से यह प्रार्थना करें कि वह हमें ऐसी शक्ति, साहस और बुद्धि दे जिससे हम भारत और भारत की जनता के लिए कठोर परिश्रम करके कष्ट सहकर और त्याग करके अपने लोहे को सोना बना दें। हमारी प्राचीन सभ्यता का यही मत है और इन समस्त शताब्दियों में भी यही मत रहा है—यह एक ऐसा मत है जो विशिष्ट, प्रमुख तथा सृजनात्मक है और यदि हम, भारत के लोग, इस मत पर ध्यान दें तो हमारा कल्याण होगा।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास : जनरल): श्री कामत द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव का मैं जोरदार समर्थन करता हूं।

(प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना बोलने के लिए खड़े हुये।)

***अध्यक्ष:** क्या आप कोई संशोधन पेश करना चाहते हैं?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** जी हां, संशोधन संख्या 3।

***अध्यक्ष:** क्या श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन पर कोई बोलना चाहता है?

***श्री एम. थिरुमल राव** (मद्रास : जनरल): क्या आप श्री सक्सेना को अपना संशोधन पेश करने दे रहे हैं? मैं श्री कामत के संशोधन पर चन्द शब्द कहना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** इस समय हम श्री कामत के संशोधन पर हैं।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या मैं डॉ. अम्बेडकर को उस वचन की याद दिला सकता हूं जो उन्होंने मुझे एक बार दिया था। श्रीमान, क्या मैं चन्द पंक्तियां पढ़ सकता हूं? श्रीमान, 15 नवम्बर 1948 को जब इस प्रश्न पर विचार हो रहा था, डॉ. अम्बेडकर ने सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के इस प्रश्न के बारे में याद दिलाने के लिए मुझसे कहा था। मैंने कहा था–

"मैं आशा करता हूं.....कि उनके मसौदे का अभिप्राय है कि वह (सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता) जनता में निहित है, और उनकी व्याख्या अभिलेखों में भावी निर्देशन के लिए अंकित होगी।"

इसका उन्होंने यह उत्तर दिया था–

"नि:सन्देह वह जनता में निहित है। मैं अपने मित्र को यह भी बता दूं कि यदि यह विषय उस समय उठाया जाये जबकि हम प्रस्तावना की चर्चा कर रहे हों तो मैं इस पर कोई भी आपत्ति नहीं करूंगा।"

***अध्यक्ष:** यह बात नहीं है। इस समय हमारे सामने श्री कामत का संशोधन है, यह बात नहीं है। इस समय हम इस प्रश्न को नहीं ले रहे हैं।

*__श्री एम. थिरुमल रावः__ यह दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि श्री कामत ने इस संशोधन पर जोर न देने के मार्ग को नहीं अपनाया है। यह बात इतने प्रमुख महत्व की है और समस्त राष्ट्र के जीवन पर इतनी प्रभाव डालता है कि वह तीन सौ व्यक्तियों की सभा के मत के अधीन नहीं होनी चाहिये चाहे भारत ईश्वर को चाहे या न चाहे। हमने यह स्वीकार कर लिया है कि शपथ में ईश्वर का नाम होना चाहिये, पर जो लोग ईश्वर में विश्वास नहीं करते उनके लिये वहां एक विकल्प है, पर प्रस्तावना में इन दोनों बातों का उपबन्ध करने की कोई सम्भावना नहीं है। इसलिए मैं समझता हूं कि यह अच्छा होगा कि श्री कामत अपना संशोधन वापस कर लें और उस ईश्वर को इस सभा के मत के अधीन न लायें जिसके प्रति उन्होंने इतने सम्मानसूचक शब्दों में भाषण दिया है और यदि इस पर मत लिया जाता है तो न तो यह हमारे लिये उचित है और न राष्ट्र के लिये।

*__डॉ. वी. पट्टाभि सीतारमैय्याः__ क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूं कि किसी अन्य कार्य के लेने के पूर्व उस संशोधन को पहले समाप्त कर दिया जाये।

*__पंडित हृदयनाथ कुंजरूः__ यह बड़े ही खेद का विषय है कि वह विषय, जिसका हमारी आन्तरिक तथा बहुत ही पवित्र भावनाओं से सम्बन्ध है, चर्चा का विषय बनाया जाये। अपने सर्वोच्च सद्विश्वासों और अपनी निश्चित धारणाओं के प्रति यह अधिक सुसंगत होगा कि हम उन पर आरूढ़ रहें और हम अपने विश्वासों को दूसरों पर लादने का प्रयास न करें। श्री कामत तथा उन लोगों की, जो उनसे सहमत हैं, निष्ठा को मैं अभिज्ञान करता हूं, पर मैं नहीं समझता हूं कि एक ऐसे विषय में, जिसका प्रत्येक व्यक्ति से वैयक्तिक सम्बन्ध है, क्यों सामूहिक विचार किसी व्यक्ति पर लादा जाये। इस प्रकार की कार्रवाई प्रस्तावना से असंगत है जिसमें विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता का वचन प्रत्येक व्यक्ति को दिया गया है। इस प्रश्न पर संकीर्ण रूप में हम कैसे विचार कर सकते हैं? हम ईश्वर का आह्वान करते हैं, पर मैं यह साहसपूर्वक कह सकता हूं कि जब हम ऐसा करते हैं तो हम एक संकीर्ण साम्प्रदायिक भावना का प्रदर्शन करते हैं जो संविधान की आत्मा के विरुद्ध है और जिसे हमें इस समय भूल जाना चाहिए जबकि हम अपने परिश्रम के इस महत्वपूर्ण अंत तक पहुंच गये है।

*__श्री रोहिणी कुमार चौधरीः__ श्रीमान, मेरे मित्र श्री कामत ने जो संशोधन पेश किया है उसका विरोध करने में मैं अपने मित्र पंडित कुंजरू के साथ हूं। अपने मित्र श्री कामत में मुझे बड़ी श्रद्धा है। जहां तक राजनैतिक विषयों का सम्बन्ध है मैं वह व्यक्ति हूं जो श्री कामत में असीम विश्वास रखता है। मुझे यह कहना पड़ेगा कि आज सायंकाल को मुझे उनसे बड़ी निराशा हुई। इस संशोधन से उन्होंने कई व्यक्तियों की भावनाओं को कुचल डाला जबकि उन्होंने उस संशोधन को बड़ी जोरदारी से अस्वीकार किया जिसको मैंने प्रस्थापित किया था। श्रीमान, मेरे लिये यह हंसी का विषय नहीं है। मैं देवी में विश्वास करता हूं। मैं कामरूप का रहने वाला हूं जहां कामाख्या देवी की उपासना की जाती है।

*__एक माननीय सदस्यः__ ईश्वर के अंतर्गत देवी आ जाती है।

*__अध्यक्षः__ यह उतना ही बुरा है जितना कि इस चर्चा में हम ईश्वर के नाम को ले आये हैं। इस विषय में हमें अविनीत नहीं होना चाहिए।

*__श्री रोहिणीकुमार चौधरीः__ हमें स्मरण रखना चाहिए कि जब हमने अपना राजनैतिक आन्दोलन आरम्भ किया था हमने बन्देमातरम् के गान से उसे आरम्भ किया था। बन्देमातरम् का क्या अर्थ है? वह देवी की स्तुति है। उसका अर्थ है देवी में विश्वास। श्रीमान, हम लोग जो शक्ति सम्प्रदाय के हैं देवी की पूर्णतया उपेक्षा कर केवल ईश्वर का आह्वान करने में विरोध करते हैं। मेरा यह निवेदन है। यदि हम ईश्वर का नाम लाते ही हैं तो हमें देवी का नाम भी लाना चाहिये। जैसा कि मैंने कहा था इस संशोधन को लाना ही न चाहिये था। पर चूंकि यह ले आया गया है मेरे विचार ये हैं।

*__माननीय श्री सत्यनारायन सिन्हा__ (बिहार : जनरल): श्रीमान, इस विषय पर अब मत लिया जाये।

*__पंडित गोविन्द मालवीय__ (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान, मैं कुछ बातें कहना चाहता हूं।

*__अध्यक्षः__ और भी बहुत से व्यक्ति बोलना चाहते हैं। पर यह सुझाव दिया गया है कि इस विषय पर अब वाद-विवाद समाप्त किया जाये।

*__पंडित गोविन्द मालवीयः__ यह कहा गया है कि हमें अपनी इच्छा को किसी पर लादना नहीं चाहिये। मैं आशा करता हूं कि इस सभा का दूसरा वर्ग भी ऐसा नहीं करेगा। इस विषय पर आपकी अनुज्ञा से मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं।

*__अध्यक्षः__ पर विवादान्तक प्रस्ताव पेश हो चुका है। मैं विवादान्तक प्रस्ताव पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अब मत लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

*__अध्यक्षः__ अब मुझे श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन पर मत लेना पड़ेगा। मेरे लिये और कोई विकल्प नहीं है।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः__ उनसे वापस कर लेने के लिए कहा जाये।

*__अध्यक्षः__ मैंने उनसे न पेश करने के लिए कहा था। इसको वापस लेना उन पर निर्भर करता है।

*__श्री एच.वी. कामतः__ मैं इसे वापस नहीं ले रहा हूं।

***अध्यक्ष:** वे कहते हैं कि वे वापस नहीं लेते।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन 2 में प्रस्थापित प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जाये:-

'In the name of God,

We, the people of India,

having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic, and to secure to all her citizens

Justice, social, economic and political;

Liberty of thought, expression, belief, faith and worship;

Equality of status and of opportunity; and to promote among them all;

Fraternity, assuring the dignity of the individual and the unity of the nation;

in our Constituent Assembly do hereby adopt, enact and give to ourselves this Constitution.'

[ईश्वर का नाम लेकर हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए

दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।]"

***श्री एच.वी. कामत:** मैं मत-विभाजन की मांग करता हूं।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** इस प्रश्न पर मैं मत-विभाजन चाहता हूं।

***मौलाना हसरत मोहानी:** इस प्रश्न पर मैं भी मत-विभाजन चाहता हूं।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** मैं इसलिए मत-विभाजन चाहता हूं कि मैं समझता हूं कि हम उस देश और उसकी जनता के साथ अन्याय कर रहे हैं और मैं यह जानना चाहता हूं। कि कौन इस विषय पर क्या कहता है।

सभा में हाथ उठा कर मत-विभाजन हुआ।

पक्ष में: 41

विपक्ष में: 68

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान, हमारे इतिहास में आज का दिन कलंक का दिन है। ईश्वर भारत की रक्षा करे।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** श्रीमान, यह बड़ा ही महत्वपूर्ण विषय है और मैं आपसे फिर निवेदन करता हूं कि हम इस विषय पर मत-विभाजन करें।

***अध्यक्षः** मैंने अभी मत-विभाजन किया था।

***श्री ए. थानू पिल्लेः** श्रीमान, श्री कामत को वह कथन नहीं करना चाहिये और उन्हें उसे वापस कर लेना चाहिये।

***अध्यक्षः** पंडित गोविन्द मालवीय को मैं यह कहूंगा। हमारे नियमों में इस प्रकार की व्यवस्था है:

"जिस विषय के लिये सभा का विनिश्चय अपेक्षित हो वह विषय सभापति द्वारा मतदान के लिए रखे गये प्रश्न के द्वारा प्रस्तुत किया जायेगा।

उन सब विषयों में जिनके लिये सभा के सदस्यों द्वारा विनिश्चय किया जाना अपेक्षित है सभापति मत बराबर होने की दशा में ही मत का प्रयोग करेगा।

मत शब्द द्वारा या मत-विभाजन द्वारा लिया जायेगा और यदि कोई सदस्य चाहता है तो मत-विभाजन द्वारा लिया जायेगा।"

यहां मैंने शब्द द्वारा मत लिया है और उसके पश्चात् इसकी अपेक्षा कि सदस्यों से अपने-अपने स्थानों में खड़े होने के लिए कहा जाये मैंने उनसे अपने-अपने हाथ उठाने के लिए कह कर मत-विभाजन की विशिष्ट रीति को अपनाया है। मैं समझता हूं कि नियमों में जो कुछ अपेक्षित है उसकी मैंने सारवत् रूप में पूर्ति की है।

***श्री महावीर त्यागीः** एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान, अध्यक्ष एक स्थायी आदेश द्वारा यह निर्धारित कर चुके हैं कि मत-विभाजन की क्या रीति होगी। मेरे पास वह आदेश नहीं है चूंकि वह पृथक् रूप में निकाला गया थ। उस स्थायी आदेश में यह कहा गया है कि जब कोई सदस्य मत-विभाजन की मांग करता है तो अध्यक्ष सब दरवाजों को बन्द करा देंगे और कहेंगे "समर्थक दाईं ओर को और

विरोधी बाईं ओर को।" और इसके पश्चात् सदस्य अपने-अपने पक्ष में पंक्ति में खड़े होंगे। यह स्थायी आदेश इसी सत्र में निकाला गया था और उस स्थायी आदेश में जो अपेक्षित है उसकी पूर्ति नहीं हुई।

*__अध्यक्ष:__ आपने उस नियम को ठीक से नहीं पढ़ा। नियम 30 की कंडिका (4) में कहा गया है "मत-विभाजन द्वारा मत लेने की रीति को सभापति विनिश्चित करेगा।" मैंने इसका पालन किया है।

*__श्री महावीर त्यागी:__ मेरा प्रश्न यह है कि एक बार स्थायी आदेश निकाल देने पर वह जबानी नहीं बदला जा सकता।

*__अध्यक्ष:__ क्या यह सुझाव दिया जा रहा है कि नियम 30 की कंडिका (4) का उल्लंघन हुआ है?

*__श्री एच. वी. कामत:__ आपकी कार्यालय की गश्ती चिट्ठी में उसको विस्तृत तथा स्पष्ट कर दिया गया है।

*__अध्यक्ष:__ उसके लिए कोई स्पष्टीकरण अपेक्षित नहीं है। वह बहुत ही स्पष्ट है। मत-विभाजन द्वारा मत लेने की रीति को सभापति विनिश्चित करेगा।

"यदि सभापति का आसन ग्रहण करने वाले व्यक्ति की सम्मति में मत-विभाजन की मांग व्यर्थ की गई है (अर्थात्, जब कि किसी विशिष्ट विषय में उसको यह समाधान हो जाये कि उसकी घोषणा के समर्थन में तथा आपत्तिकर्त्ता के विरुद्ध स्पष्ट बहुमत है) तो वह मत-विभाजन लाबियों में मतों को लेखबद्ध करने की साधारण रीति का पालन नहीं करेगा वरन् सदस्यों से यह कह कर कि जो 'पक्ष में' हैं और जो 'विपक्ष में' हैं वे क्रमशः अपने-अपने स्थानों में खड़े हो जायें, सभा का मत प्राप्त करेगा और उसके आधार पर जैसा वह ठीक समझे या तो तुरन्त ही सभा के विनिश्चय की घोषणा कर देगा या मत-विभाजन करने का आदेश देगा। जबकि सभापति सभा के विनिश्चय की घोषणा उसी समय कर देगा तो साधारणतया मतदाताओं के नाम अंकित नहीं किये जायेंगे।"

*__एक माननीय सदस्य:__ "मत-विभाजन" शब्द का पदावली के अनुसार एक विशिष्ट अर्थ है। मत-विभाजन की मांग का अर्थ है कि नाम अंकित किये जायेंगे। उसका अर्थ केवल हाथों को गिन लेना ही नहीं है। विधान सभा में इसी प्रथा का पालन किया जाता है।

*__अध्यक्ष:__ किसी अन्य स्थान की प्रक्रिया से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। हमारी प्रक्रिया हमारे अपने नियमों द्वारा शासित है और मैंने मत-विभाजन को उसी रूप में लिया है जो आदेश द्वारा अभिप्रेत है। यह मेरा अंतिम नियम-निर्देश है।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** नियमों के बारे में मुझे कोई सन्देह नहीं है। यह अध्यक्ष का कार्य है कि वह उस रीति को विनिश्चित करे जिसके अनुसार सभा के विचार प्राप्त किये जा सकें। जब मैंने आपसे यह प्रार्थना की थी उस समय मेरे मन में ऐसी कोई शंका नहीं थी। परन्तु चूंकि यह एक ऐसा महत्वपूर्ण विषय है जिसके प्रति हममें से बहुतों की धारणायें बड़ी प्रबल हैं, मैं आपके विनिश्चय पर छोड़ता हूं कि इस विषय में कुछ और किया जाये या नहीं। यदि आपको यह समाधान हो गया है कि जो कुछ कहा गया है वह पर्याप्त नहीं है तो हमारी प्रार्थना और भावनाओं पर ध्यान देते हुए यदि आप मत-विभाजन के लिए किसी अन्य रीति को उचित समझें तो हम बड़े कृतज्ञ होंगे।

***अध्यक्षः** मुझे पूर्ण समाधान हो गया है कि मैंने सभा के सही विचार जान लिये हैं, और मेरा सम्बन्ध केवल इसी बात से है। अब हम अगले मद को लेंगे।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** इस प्रश्न पर मेरे नाम से एक संशोधन था। आपने यह विनिश्चय किया है कि केवल श्री कामत का संशोधन पेश किया जायेगा, पर मेरा संशोधन बिलकुल अलग है। उसमें ईश्वर का नाम नहीं है और हो सकता है कि वह किसी भी व्यक्ति को बुरा न लगे।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों को उस रूप में ले रहा हूं जैसेकि वे कार्यावली में हैं। जब हम आपके संशोधन पर आयेंगे उस समय मैं यह देखूंगा कि उसका क्या किया जाये। प्रो. शाह यहां पर नहीं हैं अतः उनका संशोधन पेश नहीं किया जाता है। इसके पश्चात्, श्री सक्सेना का संशोधन है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान् मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जाये:

'In the name of God the Almighty, under whose inspiration and guidance, the Father of our Nation, Mahatma Gandhi, led the Nation from slavery into Freedom, by unique adherence to the eternal principles of Satya and Ahimsa, and who sustained the millions of our countrymen and the martyrs of the Nation in their heroic and unremitting struggle to regain the Complete Independence of our Motherland,

We, the people of Bharat, having solemnly resolved to constitute Bharat into a Sovereign, Independent; Democratic, Socialist Republic, and to secure to all its citizens:

Justice, social, economic and political,

LIBERTY of thought, expression, belief, faith and worship, EQUALITY of status and of opportunity; and to promote among them all

FRATERNITY assuring the dignity and freedom of the individual and the unity of the country and the nation;

In our Constituent Assembly this.....day of Vikrami Samvat 2006 (the 26th day of January, 1950 A.D.) do hereby enact, adopt and give to ourselves this Constitution.'

[सर्वशक्तिमान् ईश्वर के नाम पर जिसकी प्रेरणा तथा मार्ग प्रदर्शन के अधीन हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने सत्य और अहिंसा के शाश्वत् सिद्धान्तों पर अटल रहकर राष्ट्र को दासत्व से मुक्त कर स्वतन्त्रता प्राप्त कराने का मार्ग दिखाया और जिन्होंने हमारे करोड़ों देशवासियों तथा राष्ट्र पर प्राणोत्सर्ग करने वाले व्यक्तियों को अपनी मातृभूमि की खोई हुई पूर्ण स्वाधीनता को पुनः प्राप्त करने के लिए उनके वीरोचित तथा निरन्तर होने वाले संघर्ष में, सहारा दिया,

हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न, स्वाधीन, लोकतंत्रात्मक, समाजवादी गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता, प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और स्वतन्त्रता और देश तथा राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए

दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज मिति.....संवत् 2006 विक्रमी (26 जनवरी, 1950 ई.) को एतद्द्वारा इस संविधान को अधिनियमित, अंगीकृत और आत्मार्पित करते हैं।]"

अपने संविधान के आरम्भ में ईश्वर के पवित्र नाम और राष्ट्रपिता के पुरःस्थापन करने के सम्बन्ध में अपने कुछ मित्रों की प्रवृत्ति देखकर मुझे बहुत दुःख हुआ है। जबकि उनको अपने विचार प्रकट करने का अधिकार है तो अन्य व्यक्तियों को भी अपने विचार प्रकट करने का पूर्ण अधिकार है। आत्मज्ञान के क्षेत्र में अपने अन्वेषणों पर इस देश को सदैव गर्व रहा है और अब हम अपने संविधान के आरम्भ में ईश्वर का नाम रखने तक में डरते हैं। मैं उन लोगों में से हूं जिनका यह विचार है कि इस संविधान को तैयार करके हमने एक महान् कृति की रचना

[प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना]

की है। सम्भव है इसमें कुछ दोष हों। पर मुझे यह विश्वास है कि हमने कुछ बहुत बड़ी बातें निश्चित की हैं। यही उचित और ठीक है कि अपने संविधान के आरम्भ में ईश्वर और राष्ट्रपिता के नाम रखे जायें। मुझे दुख है कि कुछ लोगों का यह विचार हुआ कि हम इस बात को उन पर लाद रहे हैं। संसार में ऐसे और संविधान हैं, उदाहरणार्थ आयरलैंड का संविधान जिसके आरम्भ में, प्रस्तावना में ईश्वर का उल्लेख किया गया है और जिन वीरों ने प्राणोत्सर्ग पर स्वतन्त्रता प्राप्त की उनके प्रति श्रद्धांजलि भेंट की गई है। अत: मुझे यह देखकर बड़ा दुख हुआ कि ईश्वर के नाम और राष्ट्रपिता के उल्लेख मात्र से कुछ सदस्यों ने यह समझा कि किसी पर कुछ लादने का प्रयास किया जा रहा है। यदि उनके इस प्रकार के विचार हैं तो इन विचारों के रखने की उन्हें स्वतन्त्रता है, पर जिन लोगों के इस विषय में बड़े दृढ़ विचार हैं उनको ईश्वर का नाम हटाने के लिए क्यों बाध्य किया जाये? अपने मित्रों की इस प्रवृत्ति पर मुझे बड़ा खेद है। मैं आशा करता हूं कि वे इस विषय पर फिर विचार करेंगे। कदाचित् यह संविधान हमारे देश का एक नये रूप में राष्ट्रपिता द्वारा निश्चित आदर्शों के आधार पर निर्माण करेगा। अत: यह उचित और ठीक है कि संविधान के आरम्भ में इनके नाम रख कर ईश्वर के समक्ष हम अपनी विनम्रता प्रकट करें और राष्ट्रपिता के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करें।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसाद__ (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र प्रो. शिब्बन-लाल सक्सेना द्वारा पेश किये गये संशोधन का विरोध करने के लिए मैं खड़ा होता हूं। मैं यह नहीं चाहता हूं कि महात्मा गांधी का नाम इस संविधान में लाया जाये क्योंकि यह संविधान गांधी जी के सिद्धांतों के आधार पर नहीं है। इस संविधान की आधारशिला अमरीका के उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय हैं। यह संविधान भारत शासन अधिनियम, 1935 की पुनरावृत्ति है। यदि हमारा संविधान गांधी जी के सिद्धांतों के आधार पर होता तो इसका समर्थन करने में सर्वप्रथम व्यक्ति मैं होता। मैं नहीं चाहता हूं कि महात्मा गांधी का नाम इस रद्दी संविधान के साथ घसीटा जाये।

*__अध्यक्ष:__ अब मैं इस संशोधन पर मत लूंगा।

*__आचार्य जे.बी. कृपलानी__ (संयुक्त प्रान्त : जनरल): क्या इस संशोधन के प्रस्तावक महोदय से मैं यह निवेदन कर सकता हूं कि वे इसे वापस ले लें? इस संशोधन पर मत देना हमें शोभा नहीं देता है। महात्मा गांधी के नाम का प्रयोग हमें बहुत बचा-बचा कर करना चाहिये। मेरे मित्र शिब्बनलाल जानते हैं कि गांधी जी के प्रति प्रेम और सम्मान में मैं किसी से पीछे नहीं हूं। मैं समझता हूं कि उस सम्मान के प्रति यह बात सुसंगत होगी कि हम उनका नाम इस संविधान में न लायें जो किसी समय भी बदला या पुनर्निर्मित किया जा सकता है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ चूंकि आचार्य कृपलानी ने अपील की है, मैं अपने संशोधन को वापस लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।

(संशोधन संख्या 4 पेश नहीं किया गया।)

***पंडित गोविन्द मालवीय:** जिस संशोधन की मैंने सूचना दी थी वह इस प्रकार था:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India' (हम, भारत के लोग) शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:

'By the Grace of Parameshwar, The Supreme Being, Lord of the Universe (called by different names by different peoples of the world),

From Whom emanates all that is good and wise, and

Who is the Prime Source of all Authority,

We the people of Bharata (India),

Humbly acknowledging our devotion to Him;

And gratefully remembering our great leader Mahatma Mohandas Karamchand Gandhi and the innumerable sons and daughters of this land who have laboured, struggled and suffered for our freedom, And.'

[परमेश्वर की कृपा से, जो पुरुषोतम तथा ब्रह्मांड का स्वामी है (जो संसार के भिन्न-भिन्न लोगों द्वारा भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है),

जिससे समस्त सत् और ज्ञान प्रस्फुटित होता है और जो समस्त प्राधिकार का मूल स्रोत है,

हम, भारत (इंडिया) के लोग,

उसके प्रति अपनी भक्ति विनयपूर्वक स्वीकार करते हुये,

और अपने महान् नेता महात्मा गांधी और इस देश के उन असंख्य पुत्र पुत्रियों का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण कर जिन्होंने स्वतन्त्रता के लिए घोर परिश्रम तथा संघर्ष किया और कष्ट सहे,

और]

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** मैं एक औचित्य प्रश्न करने के लिए खड़ा होता हूं। इस संशोधन में दो विशेष बातें हैं। इसमें ईश्वर का नाम रखा गया है और महात्मा गांधी का नाम लाया गया है। इन दोनों बातों का सभा विनिश्चय कर चुकी है। एक बात पर जो कुछ वाद-विवाद भी हुआ था और मत भी लिया गया था; दूसरी बात को माननीय सज्जन ने वापस ले लिया। अत: मैं इस बात का आग्रह करता हूं कि इस संशोधन को व्यवस्था के विरुद्ध ठहरा दिया जाये क्योंकि इस संशोधन की मुख्य बातों पर सभा पहले ही विनिश्चय कर चुकी है।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** जिन शब्दों का मैंने प्रयोग किया था यदि उन शब्दों पर ध्यान दिया जाता तो यह स्पष्ट विदित हो जाता कि मैंने यह कहा था कि मैं उस संशोधन को पढ़ रहा हूं जिसको मैंने पेश करना चाहा था। मैंने कहा

[पंडित गोविन्द मालवीय]

था कि "वह इस प्रकार था।" यदि सभा मुझे एक क्षण का अवसर देती तो मैं यह कहने वाला था श्रीमान, कि मैंने इस संशोधन की सूचना दी थी, पर इस समय जो वाद-विवाद हुआ है उसको ध्यान में रखते हुए जो कुछ मैं पेश करना चाहता था वह यह है:

महात्मा गांधी और अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध रखने वाले अन्तिम अंश को मैं निकाल दूंगा और आरम्भ में के परमेश्वर शब्द को भी निकाल दूंगा। जो विचार यहां प्रकट किये गये हैं उनके अनुसार मैं यह कहने वाला था।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वे शब्द निकाल दिये गये।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** इसके बाद संशोधन इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

"By the Grace of the Supreme Being, Lord of the Universe, called by different names...."

***मौलाना हसरत मुहानी:** क्या वे कोई नया संशोधन रख रहे हैं? मैं एक औचित्य प्रश्न करने के लिए खड़ा होता हूं। वे कोई नया संशोधन प्रस्थापित कर रहे हैं।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** इससे उस अयुक्तियुक्त बात का भी समाधान हो जायेगा जो यहां व्यक्त की गई थी। न तो हम ईश्वर का ईश्वर के रूप और न किसी व्यक्ति के विशिष्ट ईश्वर के रूप में उल्लेख करेंगे क्योंकि मेरे संशोधन में यह कहा गया है "संसार के भिन्न-भिन्न लोग भिन्न-भिन्न नाम से पुकारते हैं" और इस प्रकार हम अपनी प्रस्तावना में एक ऐसी बात रख सकेंगे जो अनादि काल से इस देश के लोगों के विचार और विश्वास का, परम्परा का, सभ्यता का तथा सम्पूर्ण जीवन के इतिहास का अति विशिष्ट तथा स्थायी लक्षण रही है। श्रीमान मैं निवेदन करता हूं कि हम यहां भारतीय जनता के प्रतिनिधियों के रूप में आये हुये हैं। ईमानदारी का यह तकाजा है कि हम यहां उनके विचारों का प्रतिपादन करें। इस प्रस्तावना में, श्रीमान......

***अध्यक्ष:** मैं औचित्य प्रश्न का निर्णय करूंगा। पहला प्रश्न यह है कि जो संशोधन अस्वीकार किया जा चुका है क्या यह उसके अंतर्गत है या नहीं। मैं समझता हूं कि यह उसके अंतर्गत है।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** अपमार्जनों के बाद भी, यदि आपका ऐसा विचार है तो मैं अपना स्थान ग्रहण करूं।

***अध्यक्ष:** परमेश्वर शब्द को केवल हटा कर ही आप उस संशोधन के क्षेत्र से बाहर नहीं निकल जाते हैं जिसे अस्वीकार किया जा चुका है।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** मैंने समझा था कि हमारे कुछ मित्रों की आपत्ति 'ईश्वर' शब्द पर थी। श्रीमान्, मैं आपके नियम निर्देश का पालन करूंगा।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं अपने संशोधन संख्या 11 को पेश करना नहीं चाहता हूं, पर मैं डॉ. अम्बेडकर से यह पूछना चाहता हूं कि उन्होंने जो वचन दिये थे क्या वे उनका निर्वाह करेंगे।

***अध्यक्षः** यह एक अन्य विषय है।

***श्री महावीर त्यागीः** उन्होंने मुझ से कहा था कि जब प्रस्तावना पर वाद-विवाद हो उस समय मैं उनको याद दिला दूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यदि वचन-भंग किया जाता है तो मेरे मित्र को न्यायालय की शरण लेनी चाहिये।

***श्री महावीर त्यागीः** यह वचन-भंग करने का प्रश्न नहीं है। सम्पूर्ण प्रभुता निहित करने के बारे में जो कुछ डॉ. अम्बेडकर ने कहा था उस कार्रवाई के अनुसार मुझे आश्वासन दिया गया था। मैंने एक संशोधन पेश किया था और उन्होंने यह उत्तर दिया था कि उसका अर्थ "जनता में निहित" है, पर इस बात को इन शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं किया गया था, मैंने यह आग्रह किया था कि इसको सुनिश्चित कर देना चाहिये। डॉ. अम्बेडकर ने कहा "आपको इसमें संदेह है कि वह जनता में निहित है। मैं अपने मित्र को यह बता दूं कि मुझे कोई भी आपत्ति नहीं होगी।"

***अध्यक्षः** क्या कोई और संशोधन है?

***श्री महावीर त्यागीः** यह काम तो मसौदा समिति का है।

***श्री सतीश चन्द्र** (संयुक्त प्रान्त : जनरल)**:** सूची 21 में श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी और मेरे दोनों के नाम से एक संशोधन 452 इसी प्रकार का है।

***श्री महावीर त्यागीः** यदि आप मुझे अनुज्ञा दें तो मैं यह कहूंगा कि मसौदा समिति इस पर विचार कर लेगी।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि एक संशोधन इस प्रकार का है। जब हम उस पर आयेंगे तो हमें उसे लेना पड़ेगा। संशोधन संख्या 14 नाम के सम्बन्ध में कई संशोधन हैं। वे संशोधन अब पैदा ही नहीं होते।

क्या कोई सदस्य, जिसने प्रथम अंक में छपे हुये संशोधनों की सूचना दी है, अपना संशोधन पेश करना चाहता है?

***माननीय सदस्यः** जी नहीं।

***अध्यक्षः** मैं अनुपूरक सूची को लूंगा। मुद्रित अनुपूरक सूची में संशोधन हैं और मैं यह समझता हूं कि कोई भी सदस्य इन संशोधनों को भी पेश करना नहीं चाहते हैं।

***माननीय सदस्यः** जी नहीं।

(इस समय श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी बोलने के लिए खड़ी हुईं।)

***अध्यक्षः** आपका संशोधन तो अभी के संशोधनों में से है, मैं तो इस समय पुरानी मुद्रित सूची का विचार कर रहा हूं।

इसके बाद हम संशोधन संख्या 452 पर आते हैं।

*श्री ब्रजेश्वर प्रसाद: इसके पहले सूची 13 द्वितीय पृष्ठ पर संशोधन संख्या 313 है।

*अध्यक्ष: हां है, आप उसे पेश कर सकते हैं।

*श्री ब्रजेश्वर प्रसाद: अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम से आठ संशोधन हैं, मैं संशोधन संख्या 313, 314, 316, 317, 318, 319, 320 और 323 का निर्देश करता हूं। श्रीमान् मैं केवल एक संशोधन पेश करना चाहूंगा।

मैं संशोधन संख्या 313 का निर्देश करता हूं।

अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों की सूची (अंक-1) के संशोधन संख्या 1 के स्थान में निम्नलिखित संशोधन पेश किया जाये:

'कि प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जाये:–

'WE THE PEOPLE OF INDIA, having resolved to constitute India into a SECULAR CO-OPERATIVE COMMONWEALTH to establish SOCIALIST ORDER and to secure to all its citizens.

1. An adequate means of LIVELIHOOD

2. FREE AND COMPULSORY EDUCATION

3. FREE MEDICAL AID

4. COMPULSORY MILITARY TRAINING

do hereby ordain and establish this Constitution for India.' "

[हम, भारत के लोग, भारत को एक असाम्प्रदायिक सहयोगी राष्ट्र बनाने के लिए, समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को

1. जीविका के पर्याप्त साधन

2. नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा

3. चिकित्सा सम्बन्धी नि:शुल्क सहायता

4. अनिवार्य सैनिक शिक्षा प्राप्त कराने के लिए

इस संविधान को एतद्द्वारा विनियमित तथा स्थापित करते हैं]

*डॉ. पी.एस. देशमुख: ऊंट और मोटर साइकिल का क्या हुआ?

*श्री ब्रजेश्वर प्रसाद: इनके सम्बन्ध का सुझाव देना आपका काम है। श्रीमान्, 'असाम्प्रदायिक' शब्द को हमारे संविधान में स्थान नहीं मिला है। यह वह शब्द है जिस पर हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने सबसे अधिक जोर दिया है। मैं यह निवेदन करता हूं कि इस शब्द को अपनी प्रस्तावना में रखना चाहिये क्योंकि यह अल्पसंख्यक वर्गों की मानसिक तथा नैतिक अवस्था में मृदुलता उत्पन्न करेगा और

यह गुंडागीरी की उस भावना में रुकावट डालेगा जिसका राजनीति में बोलबाला है। मैंने एक और शब्द पर जोर दिया है। मैं 'समाजवादी' शब्द की ओर संकेत कर रहा हूं। मेरा विश्वास है कि भारत का भविष्य समाजवाद में ही है। मैं समाजवादी व्यवस्था में विश्वास करता हूं। जब मैं यह कहता हूं कि मेरा विश्वास समाजवादी व्यवस्था में है तो मेरा आशय यह नहीं है कि मैं इसके इतिहास के मार्क्सवादी निर्वचन को स्वीकार करता हूं। मैं न तो वर्ग युद्ध में विश्वास करता हूं और न भौतिकवादी दर्शन में जिनका समाजवादी क्षेत्रों में बड़ा व्यापक प्रचार है। समाजवाद से मेरा अभिप्राय एक समतल सामाजिक व्यवस्था से है। आय-समता के बिना अवसर-समता केवल कोरा नारा ही है। मेरा विश्वास है कि भारत में हमें एक नये प्रकार के समाजवाद का विकास करना है जो इस देश की परम्परा और इतिहास के अनुकूल हो। भौतिकवाद का सिद्धान्त एक सुदृढ़ सिद्धांत है। मैं समझता हूं कि हम भारत के लोगों को दार्शनिक बातों में जर्मनी से कोई शिक्षा नहीं लेनी है।

इसके बाद मैं कुछ और उन शब्दों को लेता हूं जो प्रस्तावना में रखे गये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ विचार-अस्पष्ट हैं। मेरी यह धारणा है कि 'स्वातन्त्रय' और 'समता' शब्द साथ-साथ नहीं आते हैं। ये बेमेल शब्द हैं। वे एक दूसरे के शत्रु हैं। एक की हानि ही दूसरे के लाभ का कारण हो सकती है। आपकी दयापूर्ण अनुज्ञा से मैं एक पुस्तिका से एक छोटा-सा कुछ पंक्तियों का अंश उद्धृत करूंगा।

मूरियल जैगर की "स्वातंत्र्य और समता" (Liberty versus Equality) नामक पुस्तक का मैं उल्लेख कर रहा हूं।

"यह बात अब अधिकाधिक व्यापक रूप में स्वीकार होती चली जा रही है कि सम्पत्ति पर स्वामित्व उन स्वतन्त्रताओं में से है जो अन्य व्यक्तियों को स्वतन्त्रता का खंडन करता है और इस कारण इसे मिटा देना चाहिये या बहुत अधिक निर्बन्धित कर देना चाहिये। और इस स्थल पर आकर यह कहा जा सकता है कि "स्वातन्त्र्य का यह आत्मविरोध" बड़ा तीव्र रूप धारण कर लेता है। यदि ऐसी प्रत्येक स्वतन्त्रता को छीन लिया जाता है जो अपने साथियों को हानि पहुंचाती है या पहुंचा सकती है तब तो स्वतन्त्रता नाम की कोई वस्तु ही न रहेगी। निजी सम्पत्ति के मिटाने या उसको निर्बन्धित करने में एक प्रकार के लोक-नियंत्रण का भाव निहित है। लोक-नियंत्रण से अभिप्रेत है सार्वजनिक योजना, क्योंकि सम्पत्ति पर से निजी अधिकार छीनने का पूर्ण उद्देश्य सार्वजनिक कल्याण ही है इस निरर्थक सिद्धान्त की खूब धज्जियां उड़ चुकी हैं; पर इसके विवरण और उस प्रभाव में हमारी रुचि हो जाती है जो इस निरर्थक सिद्धान्त के प्रयोग करने से हमारे दिन प्रतिदिन, वर्ष प्रतिवर्ष और पीढ़ी दर पीढ़ी के जीवन पर पड़ेगा।

"सार्वजनिक योजना का अर्थ है कि उद्यम, श्रम और वितरण को कठोरतापूर्वक विनियमित कर देना चाहिये। अत: इसका अर्थ यह हुआ कि व्यक्ति को अपनी उप-जीविका पसन्द करने के कम अवसर होने चाहियें क्योंकि सम्भवत: योजना जब तक क्रियान्वित नहीं की जा सकती तब तक कि जहां आवश्यकता है वहां, बिना इस बात के विचारे कि पर्याप्त संख्या में लोग उस प्रकार के कार्य को करना चाहते हैं या नहीं, उस वृत्ति में श्रमिकों को लगाया जाये।"

श्रीमान्, कुछ चन्द मिनटों के लिए आप मुझ पर अनुग्रह करेंगे।

*__अध्यक्ष:__ क्या आप पूरी पुस्तक पढ़ना चाहते हैं?

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:__ जी नहीं।

*__अध्यक्ष:__ मैंने समझा था कि आपने यह कहा था कि मैं एक वाक्य ही पढ़ूंगा, पर आपने तो कम से कम एक पूरी की पूरी कंडिका पढ़ डाली।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:__ मैंने कुछ पंक्तियां ही पढ़ी है। मैं 12 पंक्तियों की एक कंडिका समाप्त करना चाहता था।

मैं अभी एक और बात पर जोर दूंगा। मेरी यह धारणा है कि स्वातन्त्र्य और समता केवल असंगत ही नहीं है, वरन् उनको केवल एक वर्गविहीन समाज में ही संगत बनाया जा सकता है और इस सम्बन्ध में मैं एक और कंडिका का उल्लेख करूंगा और आपकी अनुज्ञा से मैं कुछ पंक्तियां पढ़ कर सुनाऊंगा:

"अंतिम लक्ष्य के लिए मार्क्सवादी, जो काल्पनिक साम्यवादियों के प्रति बहुत उग्र हैं, सदैव कदाचित् करुणाजनक रूप से अस्पष्ट रहे हैं। पर कोई भी व्यक्ति यह मालूम कर सकता है कि उन्होंने एक ऐसे राज्य की पूर्वकल्पना कर ली थी जिसमें प्रत्येक व्यक्ति सार्वजनिक कल्याण के लिए हर्षपूर्वक कार्य करेगा, यदि वह कोई वस्तु चाहता है तो सार्वजनिक भंडार से वह स्वयं प्राप्त कर सकता है और वह भंडार इतना परिपूर्ण होगा कि किसी स्पर्धा या स्वार्थ-संघर्ष का संकट नहीं होगा। उनका विचार है कि जिस समाज पर बल का प्रयोग नहीं है और जो दासता के अधीन नहीं है उसका इसी रूप में स्वाभाविक विकास होगा और एक वर्गहीन समाज में शुभ सामाजिक आचरणों की स्वयं वृद्धि होती रहेगी और इस प्रकार राज्य के विशेष तंत्र शनैःशनैः व्यर्थ होते जायेंगे इससे यह प्रकट होता है कि अंतिम साम्यवादी विचार पूर्णसमता से संयुक्त पूर्ण स्वातन्त्र्य है।"

राष्ट्र के समक्ष मैं असम्भव आदर्श नहीं रखना चाहता हूं। श्रीमान, केवल वर्ग-हीन समाज में ही हम इन दो स्वातन्त्र्य और समता के विचारों में सन्धि कर सकते हैं।

मैंने यह सुझाव दिया है कि प्रस्तावना में इन आदर्शों के रखने के स्थान में हमें अपने समक्ष कुछ व्यावहारिक आदर्श रखने चाहिये। यदि हम जीविका के पर्याप्त साधन, निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा, चिकित्सा सम्बन्धी निःशुल्क सहायता और अनिवार्य सैनिक शिक्षा की व्यवस्था करने में सफल हुये तो मैं समझूंगा कि हमारे प्रयत्न सार्थक हुये हैं। राष्ट्र के समक्ष मैं ऐसे असम्भव आदर्श नहीं रखना चाहता हूं जिनके सम्बन्ध में हमें पूर्ण विश्वास है कि हम उनको न अपने जीवन काल में और न अपने नाती पोतों के जीवन काल में प्राप्त कर सकेंगे। समाप्त करने से पूर्व मैं एक और प्रश्न का उल्लेख करना चाहूंगा। इस प्रस्तावना में मैं "सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता" शब्दों पर आपत्ति करता हूं। मेरी यह धारणा है कि आस्टिन के सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के समूचे सिद्धान्त का खंडन हो चुका हैं किसी विधि सम्बन्धी विचारधारा का वास्तविक तथ्यों से कुछ न कुछ सम्बन्ध होना चाहिये। यदि ऐसा नहीं है तो उस विचारधारा का कुछ भी मूल्य नहीं है।

श्रीमान यह कहना ठीक नहीं है कि नेपाल की सरकार सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न है। उसे अधिकार है; वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न है और वह संयुक्त राज्य अमरीका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर सकती है। सोवियत रूस की सरकार को रूस के साम्यवादी पक्ष को खत्म करने की स्वतन्त्रता है। हम जानते हैं, कि दोनों आन्तरिक और बाह्य विषयों में कई बातों के कारण राज्य को एक घेरे में डाल दिया जाता है। यदि नेपाल सरकार अमरीका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करती है या सोवियत रूस साम्यवादी पक्ष को खत्म करने का प्रयत्न करता है तो हम जानते हैं कि परिणाम क्या होगा। इसलिए मेरी यह धारणा है कि हमें "सम्पूर्ण-प्रभुत्व सम्पन्न" शब्द पर अनुचित रूप में जोर नहीं देना चाहिये। मेरा यह विचार है कि यह आदर्श न तो आवश्यक है और न वांछनीय है क्योंकि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता युद्ध की ओर ले जाती है वह साम्राज्यवाद का कारण बनती है (*तालियां तथा बाधायें*)।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि माननीय सदस्य को संकेत मिल गया होगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** आपसे रक्षा पाने का मुझे अधिकार है। इस तरह से मुझे नहीं दबाया जा सकता है। मैं अपना भाषण देता रहूंगा और सदस्य अपने हाथ पीटते रहें, मैं भाषण देता रहूंगा और जब तक आप भाषण समाप्त करने को नहीं कहेंगे मैं बोलता रहूंगा। श्रीमान् अपना विरोध प्रकट किये बिना.....

***श्री महावीर त्यागीः** एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान् मैं आशा करता हूं कि माननीय सदस्यों के अधिकारों के संरक्षण होने के नाते आप इस बात का ध्यान रखेंगे कि सदस्य को इस प्रकार शोर मचा कर चुप नहीं किया जाये।

***अध्यक्षः** शोर मचा कर चुप करने का प्रयास नहीं है। वे ताली बजा कर वक्ता को निरुत्साहित करना चाहते है। अच्छा हो कि माननीय सदस्य अपना भाषण समाप्त कर दें।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** श्रीमान, अब मैं इस विषय के केवल एक पहलू को लूंगा। 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्द इस प्रस्तावना में हैं। मैं भी मोटा बेशरम हूं। मैं अपना स्थान कभी इस प्रकार ग्रहण नहीं करूंगा। अपनी बातें कह कर ही मैं अपना स्थान ग्रहण करूंगा। मैं समझता हूं कि यह 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्द का प्रयोग सर्वथा गलत है। राज्य का निर्माण व्यक्तियों द्वारा होता है। क्या किसी प्रकार से भी व्यक्ति सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न है? यदि व्यक्ति सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न नहीं है तो वह राज्य जिसका निर्माण व्यक्तियों से होता है किस प्रकार सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न हो सकता है। यह एक प्रसिद्ध तथ्य है कि मनुष्य की अपनी कोई स्वतन्त्र इच्छा नहीं होती और वह वंश तथा वातावरण सम्बंधी बातों के घेरे में पड़ जाता है। दोनों मानसिक तथा शारीरिक रूप में इस विश्व में उसका स्थान नगण्य सा है। जबकि मनुष्य इतना नगण्य है, जबकि संसार में मनुष्य की सत्ता कुछ भी नहीं है तो राज्य जिसका निर्माण व्यक्तियों से होता है वह किस प्रकार सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न हो सकता है? अतः श्रीमान, सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के इस विचार के मैं विरुद्ध हूं।

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

हम सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न हैं। हम केवल वहीं तक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न हैं जहां तक कि किसी आधुनिक राज्य का सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न होना सम्भव है। हम आस्टिन की उस सीमा तक पहुंचने की आकांक्षा नहीं करते हैं जो जैसाकि मैं कह चुका हूं एक गलत विचारधारा पर आश्रित हैं और भ्रमात्मक हैं। 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्दों के निकाल देने से उस सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के प्रकार्यों के प्रयोग में हमें कोई बाधा नहीं होगी जो भारत सरकार में निहित कर दी गई है। इससे सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता में लेशमात्र की कमी नहीं आती है। पर इन 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्दों के रहने देने से हम राष्ट्र के समक्ष एक गलत आदर्श, एक भ्रमात्मक आदर्श रख रहे हैं। इस कारण मैं इस प्रस्तावना के विरुद्ध हूं। हम कुछ व्यावहारिक आदर्श रखें जिनको हम अपने या अपनी संतानों के जीवन काल में प्राप्त कर सकें।

***अध्यक्ष:** क्या कोई व्यक्ति इस संशोधन पर कुछ कहना चाहता है? मैं इस संशोधन पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 1 के स्थान में निम्नलिखित संशोधन पेश किया जाये:

कि प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जाये:

"WE THE PEOPLE OF INDIA, having resolved to constitute India into a SECULAR CO-OPERATIVE COMMONWEALTH to establish SOCIALIST ORDER and to secure to all its citizens—

1. An adequate means of LIVELIHOOD
2. FREE AND COMPULSORY EDUCATION
3. FREE MEDICAL AID
4. COMPULSORY MILITARY TRAINING

do hereby ordain and establish this Constitution for India."

[हम, भारत के लोग, भारत को एक असाम्प्रदायिक सहयोगी राष्ट्र बनाने के लिए, समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को—

1. जीविका के पर्याप्त साधन
2. नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा
3. चिकित्सा सम्बन्धी नि:शुल्क सहायता
4. अनिवार्य सैनिक शिक्षा

प्राप्त कराने के लिए

इस संविधान को एतद्द्वारा विनियमित तथा स्थापित करते हैं]

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम उस संशोधन को लेंगे जिसकी सूचना श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी ने दी है, संशोधन संख्या 452।

***श्री एच.वी. कामत:** एक औचित्य प्रश्न है, श्रीमान, क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूं कि मैंने अपना संशोधन संख्या 2 पेश नहीं किया है? यह मेरे संशोधन के सम्बन्ध में है। अत: वह पेश नहीं हो सकता है।

श्री महावीर त्यागी: एक औचित्य प्रश्न है, श्रीमान, क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूं.....

***अध्यक्ष:** औचित्य प्रश्न कर दिया गया है। मैं उस पर विचार कर रहा हूं। मुझे यह देख लेने दीजिये कि उन्होंने क्या पेश किया है और क्या पेश नहीं किया है।

***श्री महावीर त्यागी:** मेरे माननीय मित्र श्री कामत द्वारा उठाये गये औचित्य प्रश्न पर मैं निवेदन करना चाहता हूं कि पूर्व अवसरों पर सभा में ऐसे संशोधनों को पेश होने दिया गया है। समय निकल जाने के कारण जब संशोधन भेजने का अवसर नहीं रह जाता था तो हम में से बहुतों ने अपने संशोधनों को पहले संशोधनों से जोड़ कर या उनसे सम्बन्ध स्थापित कर उनको रखने का अवसर प्राप्त किया था। यदि वे सदस्य अपने संशोधन पेश नहीं करते थे तो यह उन अन्य सदस्यों का दोष नहीं है जो अपने विचार और अपने संशोधन लेकर आये हैं। क्योंकि अपने संशोधनों को समयान्तर्गत सुसंगत बनाने के लिए अन्य कोई चारा नहीं है सिवा इसके कि वे अपने संशोधनों को उन पहले संशोधनों से सम्बद्ध करें जिनकी सूचना आ चुकी है। अत: श्रीमान्, मैं निवेदन करूंगा कि वाद-विवाद के इस अंतिम काल में आप कृपया कोई ऐसा नियम निर्देश न करें जिससे इस संशोधन के पेश होने में बाधा पड़ जाये।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान, क्या मैं यह बता सकता हूं कि यह किसी अन्य संशोधन पर संशोधन नहीं है जिस दशा में कि नियमों द्वारा यह रोका जा सकता था, वरन् यह तो किसी अन्य संशोधन के निर्देश सहित एक संशोधन है। इस कारण यह संशोधन व्यवस्था के अनुकूल है।

***अध्यक्ष:** मैंने वास्तव में ऐसे संशोधनों को पेश होने दिया है। इस कारण मैं इसे नियम विरुद्ध नहीं ठहरा सकता हूं।

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करती हूं:

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 2 में प्रस्थापित प्रस्तावना की प्रथम कंडिका के स्थान में निम्नलिखित कंडिका रखी जाये:

'We on behalf of the people of India from whom is derived all power and authority of the Independent India....."

(हम, भारत की जनता की ओर से जिससे स्वाधीन भारत को...)

[श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी]

श्रीमान, आपकी अनुज्ञा से मैं 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्द को छोड़ देना चाहूंगी।

" 'Its constituent parts and organs of Government, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic and to secure to all its citizens:—' "

(उसके अंगभूत भागों को तथा सरकार के अंगों को सब शक्ति और प्राधिकार प्राप्त होते हैं, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को:)

श्रीमान, मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी ने मेरे संशोधन को एक बात से सबल बना दिया है और मेरे पक्ष को और भी अधिक दृढ़ बना दिया है। मैं समझती हूं कि जिस प्रस्तावना पर इस समय हम विचार कर रहे हैं वह संविधान का एक बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है और हम जैसे व्यक्तियों के लिये, जिनकी मानसिक प्रवृत्तियां विधि सम्बन्धी बातों की ओर नहीं हैं, यह हमारी स्वतन्त्रता के अधिकार पत्र के रूप में है तथा हमारी सफलताओं और असफलताओं के मापदंड के रूप में है। यह उस लक्ष्य को निर्धारित करता है जिसकी ओर से हम अग्रसर हो रहे हैं और इस कारण यदि इस सभा के सदस्य कुछ धैर्य धारण कर मुझे जो कुछ हम इस विषय के सम्बन्ध में समझते हैं उसे व्यक्त करने देंगे तो मैं स्वयं उनकी बड़ी कृतज्ञ होऊंगी।

श्रीमान, मैं समझती हूं कि जो संविधान हमने बनाया है उसके द्वारा राष्ट्रपति और संसद में व्यापक शक्तियां निहित की गई हैं। इस समय मैं यह नहीं समझती हूं कि हमें यह सोच समझ कर ही सन्तुष्ट हो जाना चाहिये कि हमारी जनता ही वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न प्राधिकार है जिससे समस्त शक्ति प्राप्त होती है और जिसमें समस्त सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न प्राधिकार निहित रहते हैं केवल इस बात में विश्वास करके कि पांच वर्ष में केवल एक बार वह निर्वाचन स्थल पर मत देने जायेगी इसलिए उसकी सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता सुरक्षित है। अत: मैं समझती हूं कि प्रस्तावना में उस सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता का उल्लेख कर देना चाहिये। जो कुछ सभा पारित कर चुकी है मैं उससे परे नहीं गयी हूं। जिस शब्दावली को मैंने उद्धृत किया है वह अक्षरश: उस लक्ष्यमूलक संकल्प में से ली गई है जिसे इस सभा में 1947 में पहले पारित किया था। जैसाकि मैंने पहले कहा था कि इस संविधान के तीन भाग अथवा सम्भवत: इस संविधान में की तीन घटनायें, एक लक्ष्यमूलक संकल्प, दूसरी राज्य की नीति सम्बन्धी लक्ष्यों के सम्बन्ध का कथन और यह प्रस्तावना, ऐसी समझी जाती हैं कि इनका संविधान पर कोई विधि सम्बन्धी बन्धन नहीं है। पर वास्तव में वे ही जिस संविधान का हमने यहां निर्माण किया है उसका प्राण हैं। मैं आपका अधिक समय लेना नहीं चाहती हूं। मैं अपने तर्क को अपने माननीय मित्र श्री त्यागी द्वारा उद्धृत उस भाषण से पुष्ट करूंगी जिसको उन्होंने डॉ. अम्बेडकर के उस भाषण में से लिया था जिसे उन्होंने प्रस्तावना पेश करते समय दिया था। उस समय मैं सभा में उपस्थित न थी। पर उससे मेरे विचार की पुष्टि होती है कि जनता की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता का संविधान में कहीं न कहीं उल्लेख होना चाहिये। इन शब्दों के सहित मैं अपना संशोधन पेश करती हूं।

***श्री महावीर त्यागी:** अपनी माननीया मित्र श्रीमती बनर्जी के संशोधन का समर्थन करते हुए मैं सभा को 15 नवम्बर 1948 की कार्रवाई की याद दिलाऊंगा जब मैंने एक ऐसा ही संशोधन पेश किया था। उसके शब्द इस प्रकार के थे कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित होगी। उस पर खूब वाद-विवाद हुआ था और मुझे यह आश्वासन दिया गया था कि जिस अनुच्छेद पर मैं वह संशोधन पेश कर रहा था वह उस संशोधन के लिये ठीक अनुच्छेद न था और मुझे यह वचन दिया गया था कि जब प्रस्तावना पर वाद-विवाद होगा उस समय इस संशोधन पर विचार किया जायेगा। अब वह समय है जबकि मैं सभा को उस वचन की याद दिलाऊं जो मसौदा समिति के सभापति ने मुझे दिया था। मैं इस बात के लिए बड़ा उत्सुक हूं कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के स्थल की परिभाषा हो जानी चाहिये। मैं इसके प्रति और भी अधिक उत्सुक इस कारण हूं कि अब तक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता इंग्लैंड के राजा में निहित है। वह एक अंग्रेज है जिसमें पिछली शताब्दि से हमने सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता निहित कर दी है। अत: यदि हम शब्दों में यह नहीं कहेंगे कि यह संपूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता कहां निहित होगी तो वह एक अंग्रेज में निहित बनी रहेगी। हम उसे उससे पृथक् करना चाहते हैं। अत: हमें निश्चित रूप से यह कह देना चाहिये कि इंग्लैंड के राजा के साथ अब सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता नहीं है।

और फिर मैं यह भी नहीं चाहता हूं कि इस या किसी भावी सरकार के लिये संयुक्त राष्ट्र या संयुक्त बन्धुता या संयुक्त नागरिकता अथवा वह चाहे जो कुछ भी हो—उसके नाम से देश की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के सौदा करने का कोई संदेह या संकट बना रहें। अत: स्पष्ट शब्दों में सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित होनी चाहिये। चीन ने अपने संविधान में यह रखा है कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता चीन की समस्त जनता में निहित है। चाहे साम्यवादियों का चीन पर अधिकार रहे या न रहे जनता तो रहेगी ही। यदि जनता साम्यवादी हो जाती है या किसी अन्य पक्ष को अपना लेती है तो पशु तो नहीं हो जाती। भारत में लोग तो रहेंगे ही और भारत के लोगों में सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता निहित रहेगी। इसकी परिभाषा हो जानी चाहिये जिससे कि सरकार इसका दुरुपयोग न कर सके। वह सरकार में भी निहित नहीं होती है। सरकार केवल जनता का प्रतीक है। क्योंकि डॉ. अम्बेडकर ने इसे संविधान में रखना स्वीकार कर लिया है मैं इस विषय को बढ़ाना नहीं चाहता हूं और मैं आशा करता हूं कि वे कृपा कर इन शब्दों को स्थान देंगे और सदैव के लिए यह स्पष्ट कर देंगे कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित है न कि किसी विदेशी में जैसी कि इस समय वह है और न किसी राज्य में चाहे उस राज्य का नाम "सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राज्य" हो।

***आचार्य जे.बी. कृपलानी:** अध्यक्ष महोदय, मेरा विचार भाषण देने का नहीं था। पर कुछ मित्र यह चाहते थे कि इस अंतिम समय में जबकि हम अपना संविधान प्राय: समाप्त कर रहे हैं मैं चन्द शब्द कहूं। मेरे कुछ मित्रों ने यह भी कहा कि एक औपचारिक भाषण द्वारा मैंने इस सभा की कार्यवाही का सूत्रपात किया था और इस द्वितीय पठन के समय जो समस्त व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए अंतिम पठन ही है मैं कार्रवाई को अपने भाषण द्वारा समाप्त करूं।

[आचार्य जे.बी. कृपलानी]

श्रीमान, एक अच्छे यजमान की तरह आपने बढ़िया से बढ़िया शराब को अन्त के लिए रख छोड़ा है। इस प्रस्तावना को संविधान के आरम्भ में आना चाहिये था और वह संविधान के आरम्भ में दी भी गई है। इसके लिए एक कारण भी था कि प्रत्येक विवरणपूर्ण उपबन्ध के लिए जिसे हम संविधान में रखना चाहते थे यह हमारे सामने रहती। यह हमें सावधान करती रहती कि कहीं हम उन आधारभूत सिद्धान्तों से दूर तो नहीं हो रहे है जिनको हम प्रस्तावना में निर्धारित कर चुके हैं। अभी हाल ही में हम लोकतन्त्र के महान सिद्धान्त के विरुद्ध चले गये थे। यह अभागा देश कई जातियों तथा आर्थिक वर्गों में विभाजित है। ये विभाजन असंख्य हैं। मैं समझता हूं कि संसार के संविधानों में यह प्रथम अवसर है कि दो प्रशासकों की एक नई जाति बनाई गई है और उसको एक विशेषाधिकार प्राप्त स्थिति में रखा गया है। उसको ऐसी स्थिति में रखा गया है कि जनता के प्रसिद्ध प्रतिनिधि भी उसके विशेषाधिकारों को नहीं छू सकते चाहे वे जनता विरुद्ध ही हों। मैं निवेदन करता हूं कि यह हमारे संविधान के प्रथम मूलभूत सिद्धान्तों के विरुद्ध है।

श्रीमान, इस गम्भीर समय में मैं सभा को यह याद दिलाना चाहता हूं कि इस प्रस्तावना में हमने जो सिद्धांत रखे हैं वे केवल नैतिक तथा राजनैतिक सिद्धांत ही नहीं हैं महान् नैतिक तथा आध्यात्मिक सिद्धांत भी हैं और यदि मैं कह सकता हूं तो यह कहूंगा कि ये गहन सिद्धांत हैं। वास्तव में ये प्रथम विधि सम्बन्धी तथा संविधानिक सिद्धान्त नहीं थे वरन् ये यथार्थ में नैतिक तथा आध्यात्मिक सिद्धान्त थे। यदि हम इतिहास की ओर ध्यान दें तो हमें विदित होगा कि चूंकि वकीलों और राजनीतिज्ञों ने अपने सिद्धांतों को विधि सम्बन्धी तथा संविधानिक रूप दिया इस कारण उनका जीवन और उनकी शक्ति क्षीण हो गई और अब भी क्षीण होती जा रही है। लोकतन्त्र को ही लीजिये। यह क्या है? उसमें मानव समता का भाव निहित है, उसमें बन्धुता का भाव निहित है। और सबसे बड़ी बात यह है कि उसमें अहिंसा के महान् सिद्धान्त का भाव निहित है। जहां हिंसा है वहां लोकतन्त्र कैसे हो सकता है? लोकतन्त्र की साधारण परिभाषा तक यह है कि सर तोड़ने की अपेक्षा हम सर गिनते हैं। तो फिर लोकतन्त्र के मूल में यह अहिंसा है। और मैं यह निवेदन करता हूं कि अहिंसा का सिद्धान्त एक नैतिक सिद्धांत है। वह एक आध्यात्मिक सिद्धान्त है वह एक गहन सिद्धान्त है। यह वह सिद्धान्त है जो यह बताता है कि जीव एक है, आप उसका विभाजन नहीं कर सकते हैं और हम सबों में वही एक जीव स्पंदन करता है। बाइबिल इसे इस रूप में कहती है कि "हम सब ईश्वर की संतान हैं इसलिये एक हैं" और वेदान्त इसे इस रूप में कहता है "यह सब एक ही ब्रह्म है"। यदि हम लोकतन्त्र का प्रयोग केवल एक विधि सम्बन्धी संविधानिक और औपचारिक योजना के रूप में करना चाहते हैं तो मैं निवेदन करता हूं कि हम असफल होंगे। चूंकि लोकतन्त्र को हमने संविधान के मूल में रखा है श्रीमान्, मैं चाहता हूं कि समस्त देश 'लोकतन्त्र' के नैतिक, आध्यात्मिक और गहन भाव को समझ ले। यदि नहीं समझा तो हम उसी प्रकार असफल होंगे जैसे और लोग अन्य देशों में असफल हुये हैं। लोकतंत्र को स्वैरतंत्र बना दिया जायेगा और फिर उसको साम्राज्यतंत्र बना दिया जायेगा और फिर एकतन्त्र हो जायेगा। पर एक नैतिक सिद्धान्त के रूप में उसे जीवन में चरितार्थ करना चाहिये। यदि उसको जीवन में चरितार्थ नहीं किया जाता है और समूचे सिद्धान्त

को जीवन के सब अंगों में चरितार्थ नहीं किया जाता है तो वह केवल एक औपचारिक तथा विधि सम्बन्धी सिद्धान्त रह जाता है। हमें इस बात पर ध्यान रखना है कि हम इस लोकतन्त्र को अपने जीवन में चरितार्थ करें। लोकतन्त्र को केवल विधि सम्बंधी और राजनैतिक क्षेत्र में रखना लोकतन्त्र से असंगत बात होगी। राजनैतिक रूप में हम लोकतंत्रवादी हैं पर आर्थिक रूप में हम इतने वर्गों में विभाजित हैं कि इन वर्ग भेदों को मिटाया नहीं जा सकता है। यदि हमको लोकतन्त्रवादी बनना है तो हमें आर्थिक स्थिति में भी ऐसा ही बनना है।

मैं यह भी कहता हूं कि लोकतंत्रवाद जाति-व्यवस्था से असंगत है। जाति-व्यवस्था सामाजिक शिष्ट-जन-सत्तावाद है। जातिभेद और वर्गभेद को हमें मिटा देना चाहिये। अन्यथा हम लोकतन्त्रवाद की शपथ ग्रहण नहीं कर सकते हैं। और हमें यह याद रखना चाहिये कि आर्थिक लोकतंत्र का केवल यही अर्थ नहीं है कि वर्गभेद न रहे, कोई गरीब तथा अमीर न रहे; वरन् यह कि यदि जनता दैवयोग से गरीब है तो राज्य स्वयं अपना जीवन इस रीति से बिताये कि वह उन गरीबों के जीवन के अनुसार हो। यह आर्थिक समता नहीं है कि शान शौकत के लिए हम हजारों लाखों रुपया खर्च कर दें। और यह भी लोकतन्त्र नहीं है कि राष्ट्रपति भवन के प्रत्येक कोने पर लोगों को निश्चल मूर्तिवत् खड़े होने के लिए बाध्य किया जाये। ऐसी बातें व्यक्तियों के गौरव के विरुद्ध हैं। यदि हम लोकतन्त्र स्थापित करना चाहते हैं तो उसे हमें अपने सम्पूर्ण जीवन में, उसके सब अंगों में चाहे उसका सम्बन्ध प्रशासन से हो समाज से हो या आर्थिक क्षेत्र से हो, स्थापित करना पड़ेगा। यह बात हमें जाननी चाहिये और समझ लेनी चाहिये।

हमने यह भी कहा है कि हम विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता रखेंगे। हमें इसकी जटिलता को भी समझ लेना चाहिये। इन सब स्वतन्त्रताओं की अहिंसा के आधार पर ही प्रत्याभूति हो सकती है। यदि हिंसा है तो आप विचार की स्वतन्त्रता नहीं पा सकते हैं, आप अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता नहीं पा सकते हैं, आप धर्म की स्वतन्त्रता या उपासना की स्वतन्त्रता नहीं पा सकते हैं। और इस अहिंसा का प्रसार इतना होना चाहिये कि वह हमें अन्य व्यक्ति के प्रति केवल सहिष्णु ही न बनाये जैसा कि लौकिक रूप में कहा जाता है वरन् किसी सीमा तक हम उसके विचारों को उसके लिए अच्छा समझें। केवल सहिष्णुता से ही हमें बहुत अधिक सहायता नहीं मिलेगी। बहुत से व्यक्ति सहिष्णु मात्र हैं। क्यों? क्योंकि वे उदासीन हैं। वे कहते हैं "इस व्यक्ति की उपासना हमारी उपासना से भिन्न है। वह गलत है। वह व्यक्ति अवश्य नरकगामी होगा; होने दीजिए, मुझे क्या मतलब।" यह सहिष्णुता नहीं है। यह तो असहिष्णुता है। यदि दैहिक रूप में अहिंसा प्रयोग में नहीं लाई जाती है तो इसलिये कि अहिंसा का प्रयोग सदैव सम्भव नहीं; पर मानसिक हिंसा तो है ही। हमें एक दूसरे के धर्म का सम्मान करना चाहिये। हमें उसका सम्मान इस रूप में करना चाहिये कि उसमें सत्य का तत्व है। संसार का कोई धर्म पूर्ण नहीं है परन्तु फिर भी ऐसा कोई धर्म नहीं है जिसमें ईश्वरीय सत्य का कुछ तत्व न हो।

इसके बाद हमने कहा है कि प्रतिष्ठा और अवसर की समता होनी चाहिये। इसका यह अर्थ है कि हमारे सरकारी कार्यों में हमको पूर्णतया कलंक मुक्त रहना चाहिये, कुल-पोषणता नहीं होनी चाहिये, पक्षपात नहीं होना चाहिये, "अपना" "पराया" नहीं होना चाहिये। यह हो सकता है। प्रतिष्ठा की समता और अवसर

[आचार्य जे.बी. कृपलानी]

की समता हम केवल तभी दे सकते हैं जबकि जिसे हम "अपना" समझते हैं उसे पीछे रखें और जिसे "अपना नहीं" समझते हैं उसे आगे रखें। जब तक हम ऐसा नहीं करते तब तक हम अपने संविधान के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकेंगे।

बन्धुता के महान सिद्धान्त को मैं फिर से लेता हूं जो लोकतन्त्र से सम्बंधित है। इसका अर्थ यह है कि हम सब उसी एक ईश्वर की सन्तान हैं जैसाकि कोई धार्मिक व्यक्ति कहेगा और एक रहस्यवादी यह कहेगा कि हम सबों में एक ही जीव है या बाइबिल यह कहती है "हम सब एक हैं"। इसके बिना बन्धुता हो ही नहीं सकती। अतः मैं चाहता हूं कि यह सभा इस बात को याद रखे कि जो हमने घोषित किये हैं वे केवल विधि सम्बन्धी संविधानिक और औपचारिक सिद्धान्त ही नहीं हैं वरन् नैतिक सिद्धान्त भी हैं, और नैतिक सिद्धान्तों को जीवन में चरितार्थ करना पड़ता है। उनको चरितार्थ करना पड़ेगा चाहे निजी जीवन हो या सार्वजनिक, चाहे वाणिज्यिक जीवन हो या राजनैतिक जीवन हो या एक प्रशासक का जीवन हो। उनको सर्वत्र चरितार्थ करना पड़ेगा। यदि अपने संविधान को सफल बनाना है तो हमें इन बातों को याद रखना होगा।

श्रीमान, एक बात और कह कर मैं समाप्त करने वाला हूं। मैं समझता हूं कि श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी द्वारा प्रस्थापित संशोधन स्वीकार कर लेना चाहिये, क्योंकि उसमें यथार्थ स्थिति का वर्णन है और इस कारण प्रस्तावना में उसको रख देना चाहिये। रस्मी मौकों पर, महान अवसरों पर, महत्वपूर्ण अवसरों पर हमें स्वयं अपने आपको यह याद दिलानी होती है कि हम यहां जनता के प्रतिनिधि के रूप में हैं। इतना ही नहीं बल्कि इससे भी अधिक। हमें स्वयं अपने आपको यह याद दिलानी होती है कि हम जनता के सेवक हैं। हम बहुधा यह भूल जाते हैं कि हम यहां प्रतिनिधि के रूप में हैं। हम बहुधा यह भूल जाते हैं कि हम जनता के सेवक हैं। सदैव यही होता है कि हमारे विचारों और कर्मों के कारण हमारी भाषा इस आधारभूत विचार के अनुसार नहीं होती है। एक मंत्री "हमारी सरकार" कहता है "जनता की सरकार" नहीं कहता। प्रधान मंत्री "मेरी सरकार" कहता है "जनता की सरकार" नहीं कहता। अतः इस गंभीर अवसर पर स्पष्ट तथा विशिष्ट रूप में यह निर्धारित करना आवश्यक है कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित है और वही उसका उद्गम है। (*तालियां*) अतः मैं आशा करता हूं कि यह सभा श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी के संशोधन को स्वीकार करेगी।

*__अध्यक्षः__ क्या कुछ अन्य व्यक्ति भाषण देना चाहते हैं?

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः__ श्रीमान, आचार्य कृपलानी के प्रभावपूर्ण शब्दों के कारण एक बात की व्याख्या आवश्यक हो जाती है। मैं यह सम्मानपूर्वक कहता हूं कि उनके ऐसे विचार प्रतीत होते हैं कि लोकतन्त्र की सफलता संविधान में कुछ मीठे तथा मधुर शब्दों के पुरःस्थापन पर निर्भर है। पर मैं निवेदन करता हूं कि लोकतन्त्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसको किस प्रकार व्यवहार में क्रियान्वित किया जाता है। उसका इस बात से कोई सम्बन्ध नहीं है कि हम प्रस्तावना या संविधान में क्या कहते हैं। लोकतंत्र के वास्तविक क्रियाकरण पर उसकी सफलता निर्भर करती है।

*__माननीय सदस्यः__ विवादान्त, विवादान्त।

*अध्यक्ष: मैं यह मान लेता हूं कि विवादान्तक प्रस्ताव स्वीकार हो चुका है। अब मैं डॉ. अम्बेडकर से उत्तर देने के लिए कहूंगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, संशोधन में की वह बात, जो उसे मसौदा समिति द्वारा बनाये गये मसौदे से भिन्न रूप प्रदान करती है, इन शब्दों के बढ़ाने में निहित है "जिससे समस्त शक्ति और प्राधिकार प्राप्त होते हैं"। अत: प्रश्न यह है कि जिस रूप में प्रस्तावना का मसौदा बनाया गया है उससे क्या इस सभा के सामान्य विचार से भिन्न कोई अन्य अर्थ निकलता है। वह सामान्य विचार यह है कि यह संविधान जनता से उद्भूत हो और इस बात को अभिज्ञात करे कि इस संविधान के बनाने की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित है। मैं समझता हूं कि ऐसी अन्य कोई बात नहीं है जो विवादास्पद हो। मेरा विचार यह है कि इस संशोधन में जो कुछ सुझाया गया है वह प्रस्तावना के इस मसौदे में पहले से ही है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** तो फिर आप उसे स्वीकार क्यों नहीं कर लेते?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** विवरणपूर्ण परीक्षण द्वारा अब मैं यह सिद्ध करूंगा कि मेरा विचार सही है।

श्रीमान, इस संशोधन का यदि कोई विश्लेषण करे तो उसके तीन विशिष्ट भाग होते हैं। एक भाग घोषणात्मक है। दूसरा भाग वर्णनात्मक है। तीसरा भाग यदि मैं उसके सम्बन्ध में यह कह सकता हूं तो वह लक्ष्यमूलक और आवश्यक है। घोषणात्मक भाग में निम्नलिखित पद है "हम, भारत के लोग, अपनी संविधान सभा में, अमुक दिवस अमुक मास......... एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।" इस सभा के वे सदस्य, जो इस बात के लिए चिन्तित हैं कि इस प्रस्तावना में यह कहा गया है या नहीं कहा गया है कि यह संविधान और इस संविधान के बनाने की शक्ति और प्राधिकार और सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित है, संशोधन के अन्य भागों को इस भाग से पृथक् कर दें जिसको मैंने पढ़ कर सुनाया है अर्थात् आरम्भ के शब्दों से पृथक् कर दें जो ये हैं "हम भारत के लोग, अपनी संविधान सभा में अमुक दिन, एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।" इस प्रकार से इसे पढ़ने पर.....

***श्री महावीर त्यागी:** लोग कहां से आ गये? इस कार्य में तो संविधान सभा के सदस्य हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वह विषय भिन्न है। इस समय मैं इस बारीक बात पर वाद-विवाद कर रहा हूं कि क्या इस संशोधन में यह कहा गया है या नहीं कहा गया है कि यह संविधान लोगों द्वारा निर्मित, अंगीकृत और अधिनियमित है। मैं समझता हूं कि यदि कोई व्यक्ति अन्य भागों से अर्थात् वर्णनात्मक तथा लक्ष्यमूलक भागों से पृथक् कर इसकी सरल भाषा को पढ़ता है तो उसे इस बात में कोई सन्देह नहीं हो सकता कि इस प्रस्तावना का अर्थ वही है।

मेरे मित्र श्री त्यागी ने यह कहा था कि यह संविधान जनता के एक ऐसे निकाय द्वारा पारित किया जा रहा है जिसका निर्वाचन एक संकीर्ण मताधिकार के आधार पर हुआ था। यह बिलकुल सत्य है कि यह वह संविधान सभा नहीं है

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

जिसमें इस देश का प्रत्येक वयस्क पुरुष और स्त्री सम्मिलित हो। पर यदि मेरे मित्र श्री त्यागी यह चाहते हैं कि यह संविधान तब तक प्रवृत्त न हो जब तक कि यह जनता के सामने जन-मत के रूप में न रखा जाये तो यह तो बिलकुल ही भिन्न विषय है जिसका उस विषय से कोई सम्बन्ध नहीं है जिस पर हम वाद-विवाद कर रहे हैं। चाहे इस संविधान को संविधान सभा द्वारा पारित होने पर मान्यता मिले या इसे मान्यता केवल तभी मिले जबकि यह जन-मत द्वारा पारित हो। यह बात बिल्कुल भिन्न है। इसका विवादान्तर्गत विषय से कोई सम्बन्ध नहीं है।

विवादान्तर्गत प्रश्न यह है। क्या यह संशोधन इस बात को स्वीकार, अभिज्ञात तथा घोषित करता है या नहीं कि यह जनता से उद्भूत है। मैं कहता हूं कि करता है।

मैं यह चाहूंगा कि माननीय सदस्य संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान को प्रस्तावना पर विचार करें। मैं उसके एक अंश को पढ़कर सुनाऊंगा। उसमें कहा गया है "हम, अमरीका के लोग"—मैं अन्य भागों को नहीं पढ़ रहा हूं—"हम, अमरीका के लोग, संयुक्त राज्य अमरीका के लिए इस संविधान को निर्मित तथा स्थापित करते हैं"। जैसाकि अधिकांश सदस्यों को विदित है इस संविधान का मसौदा एक छोटे से निकाय ने बनाया था। मैं इसका ठीक-ठीक विवरण और उन राज्यों की संख्या भूल गया हूं जिनका प्रतिनिधित्व उस छोटे से निकाय में था जिसकी बैठक फिलाडेल्फिया में संविधान बनाने के लिए हुआ था। (माननीय सदस्य-13 राज्य थे।) 13 राज्य थे। अतः यदि 13 राज्यों के प्रतिनिधि फिलाडेल्फिया में एक छोटे से सम्मेलन में एकत्रित होकर एक संविधान बना सके और यह कह सके कि जो कुछ उन्होंने किया वह जनता के नाम से था, उसके प्राधिकार पर था, उसकी सम्पूर्ण प्रभुता पर आधृत था तो मैं स्वयं तो यह नहीं समझता हूं—हां यदि कोई व्यक्ति पूर्णरूप से विद्याभिमानी हो तो बात दूसरी है—कि इस महान् महाद्वीप का प्रतिनिधित्व करने वाले 292 व्यक्तियों का निकाय अपनी प्रतिनिधित्व सामर्थ्य के अनुसार यह न कह सकें कि वह इस देश की जनता के नाम से कार्य कर रहे हैं। (*वाह, वाह*)।

*__मौलाना हसरत मोहानी:__ मैं ऐसा नहीं समझता हूं। यह सब केवल एक सम्प्रदाय कर रहा है।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ यह विषय ही दूसरा है, मौलाना, मैं इस विषय को नहीं ले सकता हूं। अतः जहां तक इस विचार का सम्बन्ध है मैं निवेदन करता हूं कि किसी प्रकार के भय या शंका के लिए कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिये। इस सभा में कोई व्यक्ति यह नहीं चाहता है कि इस संविधान में ऐसी कोई भी बात हो जिससे ऐसा किंचित मात्र भी आभास हो कि यह संविधान ब्रिटिश संसद की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता से उद्भूत है। इसके लिए किसी व्यक्ति की कोई अभिलाषा नहीं हैं हम वास्तव में ब्रिटिश संसद की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जिस रूप में इस संविधान के प्रवर्तन से पूर्व वर्तमान थी हर प्रकार के अवशेष का अपमार्जन करना चाहते हैं। जहां तक इस विषय का सम्बन्ध है मसौदा समिति के किसी सदस्य और इस सभा के किसी सदस्य में कोई मतभेद नहीं है।

मैं समझता हूं कि कुछ सदस्यों को कुछ भय या शंका इस तथ्य के कारण है कि इस वर्ष के आरम्भ में संविधान सभा ने यह घोषणा निकालने में साथ दिया था कि यह देश ब्रिटिश कामनवेल्थ के साथ रहेगा। उनका विचार है कि इस मेल ने जनता की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता का कुछ अल्पीकरण किया है। श्रीमान, मैं नहीं समझता हूं कि ऐसा विचार करना ठीक है। प्रत्येक स्वाधीन देश को किसी अन्य देश से किसी न किसी प्रकार की संधि रखनी चाहिये। यदि एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न देश दूसरे सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न देश से संधि करता है तो इसके कारण वह देश कोई कम सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न नहीं हो जाता। मैं सबसे भद्दा उदाहरण ले रहा हूं। मैं जानता हूं कि कुछ लोगों को इस प्रकार का भय है। (*बाधायें*)।

श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी: श्रीमान, क्या मैं....

अध्यक्ष: डॉ. अम्बेडकर को भाषण देने दीजिये। उन्होंने किसी के प्रति उत्तेजनात्मक बात नहीं कही है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं यह कहता हूं कि इस प्रस्तावना में वह बात है जिसके लिए इस सभा का प्रत्येक सदस्य इच्छुक है कि यह संविधान अपना मूल स्रोत, अपना प्राधिकार और अपनी सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता से प्राप्त करे। यह बात उसमें है।

इस कारण मैं इस संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूं। संशोधन के मूलपाठ के सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कहना चाहता हूं। यदि मैं कह सकता हूं तो सम्मानपूर्वक यह कहूंगा कि शायद इस संशोधन की रचना कुछ ऐसी है कि जिस रूप में प्रस्तावना का मसौदा हमने मनाया है उस रूप में वह उसमें ठीक नहीं बैठेगी, अत: इन दोनों बातों के कारण मैं समझता हूं कि मसौदा समिति द्वारा प्रयोग में लाई गई भाषा में परिवर्तन करना उचित नहीं है।

अध्यक्ष: प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 2 में प्रस्थापित प्रस्तावना की प्रथम कंडिका के स्थान में निम्नलिखित कंडिका रखी जाये:

'We, on behalf of the people of India from whom is derived all power and authority of the Independent India, its constituent parts and organs of Government, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic and to secure to all its citizens.'

[हम, भारत की जनता की ओर से जिससे स्वाधीन भारत को, उसके अंगभूत भागों को तथा सरकार के अंगों को सब शक्ति और प्राधिकार प्राप्त होते हैं, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को]"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अन्य कोई संशोधन नहीं है। यदि कोई सदस्य कुछ कहना चाहता है तो प्रस्तावना जिस रूप में है उस पर वाद-विवाद हो सकता है।

***माननीय सदस्यः** अब मत ले लिया जाये।

***अध्यक्षः** यदि कोई नहीं बोलना चाहता तो मैं प्रस्तावना पर मत लूंगा। प्रश्न यह है "कि प्रस्तावना संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

प्रस्तावना संविधान में प्रविष्ट की गई।

***अध्यक्षः** अब हम इस सत्र को समाप्त करने वाले हैं। इससे पूर्व कि मैं इस सभा को स्थगित करूं कुछ ऐसी बातें हैं जिनका इस समय निश्चित करना आवश्यक है। एक प्रश्न जिसको निश्चित करना है वह इस संविधान के तृतीय पठन के लिए आगामी सत्र के सम्बन्ध में है, और पूर्व अवसरों पर सभा मुझे अनुज्ञा दे देती थी कि मैं किसी भी समय आवश्यक समझूं बुला लूं, और इस बार भी मैं समझता हूं कि सभा मुझे वैसी अनुज्ञा दे देगी, पर मैं श्री सत्यनारायण सिंह से निवेदन करूंगा कि वे इस प्रकार का एक औपचारिक संकल्प पेश कर दें।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हाः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि यह सभा नवम्बर 1949 की की किसी ऐसी तिथि तक स्थगित की जाये जिसे राष्ट्रपति नियत करे।"

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि यह सभा नवम्बर 1949 किसी ऐसी तिथि तक स्थगित की जाये जिसे अध्यक्ष नियत करे।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि जिन संशोधनों की सूचना हमारे पास आई थी उन सबको हम समाप्त कर चुके हैं, और उनके बारे में मुझे कुछ और अधिक नहीं कहना चाहिये। अब हमने संविधान का द्वितीय पठन समाप्त कर दिया है। अभी हाल में इस सभा द्वारा पारित नियम 38-द के अधीन मुझ में सौंपी गई शक्ति के आधार पर अनुच्छेदों का फिर से मसौदा बनाने के लिए, विराम चिह्नों के पुनरीक्षण के लिए, हाशिये की टिप्पणियों के पुनरीक्षण और पूर्ण करने के लिए और संविधान में उन औपचारिक या आनुषंगिक या आवश्यक संशोधनों की सिफारिश करने के लिए, जो आवश्यक समझे जायें, संशोधनों सहित इस संविधान के मसौदे को मसौदा समिति के पास भेजूंगा। इस कार्य को समाप्त करने के लिए यह करना होगा और यह मैं जो प्राधिकार आपने मुझे दिया है उसके आधार पर करूंगा। इन बातों के सहित हम उस तिथि तक स्थगित होते हैं जिसे मैं घोषित करूंगा।

इसके पश्चात् सभा नवम्बर, 1949 की किसी उस तिथि तक के लिए स्थगित हो गई जिसे अध्यक्ष नियत करेगा।

GIPD–HS-271 PSD–6-12-52–320

Con. 3. X.1.49
320

अंक 10
संख्या 1

बृहस्पतिवार
6 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
सभा का स्थगन	2665
सभा की बैठक का समय	2665-2666

भारतीय संविधान सभा

बृहस्पतिवार, 6 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टिट्यूशन हाल नई दिल्ली, में प्रात: 11 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

सभा का स्थगन

*__अध्यक्ष:__ माननीय सदस्यों को ज्ञात है कि उन्होंने साथ वाले कक्ष में अपनी अन्य हैसियत से एक बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार किया है और मुझे सुझाव दिया गया है कि आज सभा स्थगित की जाए ताकि उस प्रश्न पर चर्चा हो सके और आज सायंकाल तक उसे पूरा कर लिया जाए। मैंने कहा है कि यदि सभा के सदस्यों को इस पर आपत्ति न हो तो मुझे भी व्यक्तिगत रूप से इस पर कोई आपत्ति नहीं होगी। अत: मैं जानना चाहूंगा कि क्या माननीय सदस्यों को इस पर कोई आपत्ति है?

*__माननीय सदस्य:__ हमें कोई आपत्ति नहीं है।

*__अध्यक्ष:__ तब सभा स्थगित कर दी जायेगी। अब अगला प्रश्न यह है कि हम कितने बजे मिलें?

सभा की बैठक का समय

*__कुछ माननीय सदस्य:__ 10 बजे।

*__अन्य माननीय सदस्य:__ 9 बजे।

*__सेठ गोविन्द दास__ (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): हम नौ बजे से 1 बजे तक बैठें।

*__अध्यक्ष:__ मैं नहीं कह सकता कि अधिकांश सदस्यों का क्या मत है, परन्तु यह मैं अवश्य देख रहा हूं कि इस विषय में मतभेद है।

*__श्री एम. थिरुमल राव:__ (मद्रास: जनरल): सभा से परामर्श किए बिना आज बैठक 11 बजे बुलाई गई थी। कल के लिए भी यही समय रहने दीजिए।

*__अध्यक्ष:__ नियमों में उपबन्ध है कि साधारणतया सभा 11 बजे प्रारम्भ होगी। मैंने नियमों के अनुसार ही सभा 11 बजे बुलाई है।

*__श्री एम. थिरुमल राव:__ तो फिर अब सभा से परामर्श क्यों किया जा रहा है?

*__अध्यक्ष:__ मैं स्थगन के विषय में सभा से परामर्श कर रहा हूं। अब सभा स्थगित होती है। कल से कोई भी समय निर्धारित किया जा सकता है। परन्तु मुझे सदस्यों से परामर्श करने में प्रसन्नता होगी कि उनके लिए कौन-सा समय सुविधाजनक है।

---

* इस चिन्ह का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रांत व बरार: जनरल): मेरा सुझाव है कि सभा 9.30 बजे से 1.30 बजे तक बैठे।

***अध्यक्ष:** यह 9 और 10 बजे के बीच का समझौता है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (असम: जनरल): 9 बजे, 12.30 बजे, या 1 बजे म.प. का समय निश्चित कर लें क्योंकि 1.30 बजे बहुत भूख लग जाती है।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): मेरा सुझाव है कि यदि आप चार घण्टे का समय रखना चाहते हैं तो आप 10 बजे से 1 बजे तक या 9 बजे से 1 बजे तक का समय निश्चित कर लें, परन्तु 9.30 बजे से 1.30 बजे तक समय निश्चित न करें।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** (मद्रास: जनरल): 10 बजे का समय ठीक होगा। मेरा समझौते के तौर पर 10 बजे का सुझाव है। हम मद्रास में रहने वाले प्राय: 10 बजे तक भोजन कर लेते हैं, हम दोपहर का भोजन आदि नहीं लेते हैं। अत: 10 बजे का समय रखना अधिक उचित रहेगा, क्योंकि 11 बजे बहुत देर हो जाएगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): महोदय, मैं समझता हूं कि 10 बजे से 1 बजे तक का समय ठीक रहेगा।

***अध्यक्ष:** यह इस पर निर्भर करता है कि हमें कितना कार्य निबटाना है।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई: जनरल): हो सकता है कि कभी-कभी हमें दिन में दो बार बैठक करनी पड़े।

***अध्यक्ष:** मुझे उस पर कोई आपत्ति नहीं है। जितना काम हमें निबटाना होगा उसी के अनुसार हम समय निश्चित कर लेंगे।

***श्री विश्वनाथ दास:** (उड़ीसा: जनरल): 9 बजे से 1 बजे तक का समय हमें स्वीकार्य नहीं है। मेरा सुझाव है 3 बजे से 7 बजे तक का समय रखा जाए।

***श्री आर.के. सिधवा:** हमें बाद में दिन में दो बार बैठक रखनी होगी।

***अनेक माननीय सदस्य:** 9 बजे से 1 बजे तक का समय रख लें।

***अध्यक्ष:** यदि सदस्य बुरा न मानें तो मैं एक सुझाव दूं। मेरा सुझाव है कि आरम्भ में हम कल से 10 बजे कार्यवाही आरम्भ करें और फिर देखें कि हम कितना कार्य निबटाते हैं। यदि हम देखते हैं कि प्रतिदिन तीन घण्टे बैठकर हम कार्य निबटा सके हैं तो हम 10 बजे से 1 बजे तक का समय रखेंगे। यदि हम देखते हैं कि हमारी प्रगति सन्तोषजनक नहीं है तब हम समय में परिवर्तन करने पर विचार करेंगे। यदि आप इस सुझाव पर सहमत हों तो हम कल 10 बजे कार्यवाही करेंगे।

***अनेक माननीय सदस्य:** हम सहमत हैं।

***अध्यक्ष:** सभा कल 10 बजे तक के लिए स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा शुक्रवार, 7 अक्तूबर, 1949 के 10 बजे म.पू. तक के लिए स्थगित हुई।

————————

Con. 3. X.2.49
320

अंक 10
संख्या 2

शुक्रवार
7 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	2667
संविधान का प्रारूप-(जारी)	
[अनुच्छेद 306, 309, नये अनुच्छेद 310-क, 310-ख, 311-क, 311-ख, अनुच्छेद 312, नये अनुच्छेद 312-क से 312-ङ, 312-छ, 312-ज और अनुच्छेद 313 पर विचार]	2667-2712

Con. 3. X.2.49
320

अंक 10
संख्या 2

शुक्रवार
7 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	2667
संविधान का प्रारूप-(जारी)	
[अनुच्छेद 306, 309, नये अनुच्छेद 310-क, 310-ख, 311-क, 311-ख, अनुच्छेद 312, नये अनुच्छेद 312-क से 312-ङ, 312-छ, 312-ज और अनुच्छेद 313 पर विचार]	2667-2712

भारतीय संविधान सभा

शुक्रवार, 7 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टिट्यूशन हाल नई दिल्ली, में प्रातः 10 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्य ने शपथ ग्रहण की और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किए:

श्री सामलदास लक्ष्मीदास गांधी (जूनागढ़)

संविधान का प्रारूप —(जारी)

अनुच्छेद 306

***अध्यक्ष:** अब हम अस्थायी उपबंधों संबंधी अनुच्छेदों पर विचार करेंगे। अनुच्छेद 306।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): महोदय मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 306 के खण्ड (क), खण्ड (ख) और खण्ड (ग) स्थान पर ये खण्ड रखे जाएं:

(a) trade and commerce within a State in, and the production, supply and distribution of, cotton and woollen textiles, raw cotton (including ginned cotton and unginned cotton or kapas) cotton seed, paper (including newsprint), foodstuffs (including edible oilseeds and oil), coal (including coke and derivatives of coal), iron, steel and mica.

(b) offences against laws with respect to any of the matters mentioned in clause (a) jurisdiction and powers of all courts except the Supreme Court with respect to any of those matters, and fees in respect of any of those matters but not including fees taken in any court.'

['(क) सूती और ऊनी वस्त्रों, कच्ची रूई (जिसके अंतर्गत धुनी हुई रूई और बिना धुनी रूई या कपास है), बिनौले, कागज (जिसके अंतर्गत समाचारपत्र का कागज है), खाद्य पदार्थ (जिसके अन्तर्गत खाद्य तिलहन और तेल है), कोयले (जिसके अंतर्गत कोक और पत्थर-कोयला-जन्य पदार्थ हैं), लोहे, इस्पात और अभ्रक का किसी राज्य के अन्दर व्यापार और वाणिज्य तथा उनका उत्पादन, सम्भरण और वितरण;

---

* इस चिन्ह का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(ख) खण्ड (क) में वर्णित विषयों में से किसी से सम्बद्ध विधियों के विरुद्ध अपराध, उच्चतम न्यायालय से भिन्न सब न्यायालयों का उन विषयों में से किसी के बारे में क्षेत्राधिकार और शक्तियां, तथा उन विषयों में से किसी के संबंध में किसी न्यायालय में ली जाने वाली फीसों से अन्य फीसें।' "]

इस संशोधन द्वारा मूल अनुच्छेद में जो परिवर्तन किए जा रहे हैं वे इस प्रकार हैं: उप-खण्ड (क) से अब पेट्रोलियम तथा पेट्रोलियम उत्पादों का तथा यंत्र-चालित वाहनों को निकाल देने का प्रस्ताव है। पेट्रोलियम तथा पेट्रोलियम उत्पादों का उप-खण्ड (क) से लोप इस कारण किया जा रहा है कि अब वह मद सातवीं अनुसूची की सूची 1 में सम्मिलित कर दी गई है। यंत्र-चालित वाहनों का लोप इस कारण किया गया है कि उन पर इस समय नियंत्रण नहीं है और उन्हें समवर्ती सूची में रखा गया है। यदि केन्द्र चाहे तो वह विधान बना सकता है। मूल अनुच्छेद का उप-खण्ड (ख)—विस्थापित व्यक्तियों को राहत तथा उनका पुनर्वास—अब आवश्यक नहीं है चूंकि उसे भी समवर्ती सूची में रख दिया गया है। उप-खण्ड (ग) के संबंध में, जांच पड़ताल और सांख्यिकीय को भी समवर्ती सूची में रखा गया है और इसलिए इसका भी लोप किया जा रहा है। यह केवल पारिणामिक संशोधन है। मूल अनुच्छेद 306 में इस संशोधन द्वारा यही परिवर्तन किए जा रहे हैं।

***अध्यक्ष:** क्या मैं डॉ. अम्बेडकर से एक बात पूछ सकता हूं? मेरा विचार है कि ढोरों का चारा जिसके अंतर्गत खली और अन्य सारकृत चारे हैं, एक ऐसी वस्तु थी जिस पर पर्याप्त नियंत्रण रखना किसी समय आवश्यक समझा गया था। भारत सरकार अधिनियम में संशोधन करने का प्रस्ताव था, परन्तु उसका संशोधन उस समय किया नहीं जा सका था और काफी कठिनाई का अनुभव हो रहा था। मैं नहीं जानता कि आपने उस पर विचार किया है अथवा नहीं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उद्योग तथा आपूर्ति विभाग के परामर्श से इस अनुच्छेद का प्रारूप पुन: तैयार किया गया था। उन्होंने जिन विषयों पर केन्द्र का नियंत्रण रखना आवश्यक समझा था वे हमने पांच वर्षों की अवधि के लिए इसमें सम्मिलित कर लिए हैं। यदि सभा का ऐसा विचार है कि उप-खण्ड (क) में और कोई विशिष्ट मद सम्मिलित की जानी चाहिए तो मुझे उस पर निश्चय ही कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्ष:** मैं अपने अनुभव से कह रहा हूं जो अब कुछ पुराना पड़ गया है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं समझता हूं कि उस वस्तु को सम्मिलित करना निश्चय ही वांछनीय है।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): कृषि विभाग के साथ परामर्श करके उसे सम्मिलित कर लिया जाए।

***अध्यक्ष:** मेरा भी यही सुझाव है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं समझता हूं कि हम उसे सम्मिलित कर लेंगे। मैं ढोरों के लिए चारा सहित खाद्य पदार्थ सम्मिलित कर सकता हूं।

***अध्यक्ष:** ढोरों का चारा जिसके अंतर्गत खली और अन्य सारकृत चारे हैं। इसके कुछ संशोधन हैं। संशोधन संख्या 2. डॉ. देशमुख।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 1 में, अनुच्छेद 306 के प्रस्तावित खण्ड (क) में, 'State in' **शब्दों के स्थान पर** 'State with respect to' शब्द रखे जाएं।"

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 1 में, अनुच्छेद 306 के प्रस्तावित खण्ड (क) में 'Coal (including coke and derivatives of coal' कोयले 'जिसके अंतर्गत कोक और पत्थर-कोयला जन्य पदार्थ हैं।' **शब्दों तथा कोष्ठकों के स्थान पर** 'coal, coke and derivatives of coal' 'कोयला, कोक और पत्थर-कोयला जन्य-पदार्थ' शब्द रखें जाएं।"

ये संशोधन लगभग प्रारूपण सम्बन्धी हैं, यद्यपि मेरे द्वारा प्रस्तुत पहले संशोधन से, यदि मेरी शब्दावली स्वीकार की गई तो, कुछ अन्तर पड़ेगा। तथापि, मैं इन पर जोर देना नहीं चाहता और मैं इसके लिए तैयार हूं कि प्रारूप समिति इन पर विचार करे।

***अध्यक्ष:** खण्ड दो में पंडित कुंजरू के नाम में एक संशोधन मुद्रित है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): महोदय, मेरा भी एक संशोधन है।

***अध्यक्ष:** जी हां, आप इसे पेश कर सकते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधन सूची (खण्ड दो) के संशोधन संख्या 3286 और 3287 के संदर्भ में अनुच्छेद 306 में, 'five (पांच)' शब्द के स्थान पर 'fifteen (पन्द्रह)' **शब्द रखा जाए।'**

प्रारूप समिति के सदस्यों की राय है कि जो आर्थिक कठिनाइयां हमारे समक्ष हैं उन पर वे पांच वर्षों के संक्रमण काल में काबू पा सकेंगे। इस प्रारूप संविधान में अनुच्छेद 306 सम्मिलित करने का यही एकमात्र उद्देश्य है। मेरा विचार है कि वे पांच वर्षों की अवधि में अपने प्रयास में सफल नहीं होंगे। जो आर्थिक संकट हमारे समक्ष है वह केवल राष्ट्रीय स्वरूप का नहीं है, बल्कि इसका अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप भी है। मेरा विचार है कि पूंजीवादी समाज के आर्थिक ढांचे के कारण और युद्ध के परिणामस्वरूप, मानव समाज का समूचा ढांचा ढह रहा है। और भारत विशेष रूप से अवनति एवं ह्रास के काल से गुजर रहा है। हमारे समाज का सम्पूर्ण ढांचा बदल रहा है। मैं समझता हूं कि हम क्रांति के द्वार पर खड़े हैं। खाद्य पदार्थों और खनिजों जैसे विषय भारत सरकार के अधिकार क्षेत्र में रहने चाहिए थे, परन्तु अब हम केवल इतना ही कर सकते हैं कि इन्हें कम से कम संक्रमण काल के लिए भारत सरकार के क्षेत्राधिकार में रखें। संक्रमण काल पन्द्रह वर्षों का होगा, न कि पांच वर्षों का। परन्तु कोई भी संकट लम्बे समय तक चल नहीं सकता और यदि चलता है तो उसका परिणाम होगा राज्य का अन्त। या तो हम संकट पर काबू पा लें या फिर संकट हम पर हावी हो जाएगा। यदि संकट पन्द्रह वर्षों से अधिक समय तक चलता है तो इससे पूर्ण अराजकता फैल जाएगी, जैसा कि हम आज चीन में देख रहे हैं। अत: यह आवश्यक है कि हम इस अवधि में इन कठिनाइयों पर काबू पा लें।

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

इस संविधान का आधार संघीय ढांचा है। मेरा विचार है अपकेन्द्री शक्तियां इतनी प्रबल हो जाएंगी कि इस संविधान में परिवर्तन करने के लिए संशोधन की प्रक्रिया अपनानी पड़ेगी। हमें अपने जीवन के राजनीतिक तथ्यों पर विचार करना होगा। इसी पृष्ठभूमि में अनुच्छेद 306 में रूप-भेद किया जाना चाहिए। मेरा संशोधन बहुत तर्कसंगत है। अनुच्छेद 306 के अन्तिम भाग में कहा गया है कि इस अनुच्छेद के अन्तर्गत पारित की जाने वाली सभी विधियां उस सीमा तक प्रवर्तन में नहीं रहेंगी जिस सीमा तक कि वे इस संविधान के मुख्य उपबंधों के अनुरूप नहीं हों। मैं समझता हूं कि यह अनावश्यक एवं अवांछनीय है। केन्द्रीयकरण का जो काम पांच वर्षों में किया जाना है उसे व्यर्थ नहीं किया जाना चाहिए। यदि सदन मेरा संशोधन स्वीकार कर लेता है तो प्रान्तीय सरकारों को पांच वर्षों या पन्द्रह वर्षों की अवधि में पारित विधियों को स्वीकार करना ही होगा। अनुच्छेद 306 का कार्यक्षेत्र का एक अन्य दृष्टि से भी सीमित है। हमने इन वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण आदि संबंधी शक्तियां संसद को दी हैं। इन विषयों का सम्पूर्ण क्षेत्र भारत सरकार के अधिकार क्षेत्र में रखना चाहिए था। इतना सीमित क्षेत्र में क्यों रखा गया है। यह सीमित शक्ति वांछनीय नहीं है। मैं समझता हूं कि यदि हमें शक्तिशाली राष्ट्र बनना है तो विखण्डनकारी शक्तियों पर नियंत्रण रखना चाहिए।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 306 के खण्ड (क) में, 'Coal (कोयला)' शब्द के पश्चात् 'Charcoal, firewood (लकड़ी का कोयला, जलाऊ लकड़ी)' **शब्द अन्तःस्थापित किये जाएं"**

मुझे विश्वास है कि सदन यह भली-भांति जानता है कि भारत प्रतिरक्षा अधिनियम के अन्तर्गत लकड़ी के कोयले और जलाऊ लकड़ी के मूल्यों पर नियंत्रण था। यदि भारत सरकार प्रान्तों को शक्ति प्रत्यायोजित न करती तो प्रान्त इन दो वस्तुओं के मूल्यों पर नियंत्रण रखने की स्थिति में न होते। भारत प्रतिरक्षा अधिनियम अब लागू नहीं है और इस कारण डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत अनुच्छेद के खण्ड (क) में संशोधन करना वांछनीय है ताकि इन दो वस्तुओं को सम्मिलित किया जा सके। मैंने सुना है कि भारत प्रतिरक्षा अधिनियम के समाप्त हो जाने के पश्चात्, संसद द्वारा 1946 में पारित भारत सरकार अनिधियम, 1935 के एक संशोधनकारी अधिनियम के उपबंधों के अन्तर्गत ये वस्तुएं बराबर भारत सरकार के नियंत्रण में चली आ रही हैं। उसमें लकड़ी के कोयले अथवा जलाऊ लकड़ी का कोई उल्लेख नहीं है। परन्तु ऐसा विश्वास किया जाता है कि वे कोयलों से उत्पन्न पदार्थों में सम्मिलित हैं। मैं इस व्याख्या को स्वीकार करने में पूरी तरह असमर्थ हूं। लकड़ी के कोयले और जलाऊ लकड़ी के मूल्य निर्धारित करने में प्राधिकारियों द्वारा की गई कार्यवाही को किसी ने भी चुनौती नहीं दी है। परन्तु यदि किसी ने चुनौती दी होती तो मैं नहीं समझता कि कोई न्यायालय यह तर्क स्वीकार करता कि लकड़ी का कोयला या जलाऊ लकड़ी कोयले से उत्पन्न पदार्थ हैं। सामान्य रूप से हम कोयले का अर्थ "एन्थ्रेसाईट" से लेते हैं। लकड़ी का कोयला लकड़ी का उत्पाद है, न कि कोयले का न तो लकड़ी का कोयला और न लकड़ी ही कोयले का उत्पाद है। अतः इन दोनों वस्तुओं के संबंध में स्पष्ट रूप से भारत सरकार के नियंत्रण की व्यवस्था करना आवश्यक है। ये जन सामान्य के काम की वस्तुएं

हैं। जब हम अनेक वस्तुओं पर भारत सरकार के नियंत्रण के लिए व्यवस्था कर रहे हैं तो हमारे लिए आवश्यक एवं वांछनीय है कि हम निर्धनों की आवश्यकताओं के बारे में भी विचार करें और इन वस्तुओं के मूल्यों पर नियंत्रण रखने के लिए भी संविधान में शक्ति प्राप्त करें। हम सब जानते हैं कि युद्ध के दौरान इन वस्तुओं के बारे में स्थिति कितनी गम्भीर थी और हम यह भी जानते हैं कि अब भी इनके मूल्य कितने अधिक हैं। हम प्राय: खाद्य पदार्थों के अधिक मूल्यों के बारे में सोचते हैं और यह बात बहुत कम लोग महसूस करते हैं कि लकड़ी के कोयले और जलाऊ लकड़ी के अधिक मूल्य निर्धन व्यक्ति के लिए उतनी ही चिन्ता का विषय हैं जितने कि खाद्य पदार्थों के अधिक मूल्य, डॉ. अम्बेडकर चूंकि सदन के समक्ष प्रस्तुत खण्डों में संशोधन करने के सुझावों पर विचार करने की मुद्रा में हैं, अत: मैं आशा करता हूं कि वह इस विषय पर भी विचार करेंगे और खण्ड (क) में इस प्रकार संशोधन करने हेतु शक्ति प्राप्त करेंगे जिससे कि लकड़ी के कोयले और जलाऊ लकड़ी के व्यापार पर नियंत्रण रखने की पूरी शक्ति भारत सरकार को प्राप्त हो जाये।

*__अध्यक्ष:__ यही सब संशोधन हैं। क्या कोई माननीय सदस्य मूल अनुच्छेद अथवा किसी संशोधन के विषय में कुछ कहना चाहता है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना__ (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद में हमने व्यवस्था की है कि कुछ ऐसे विषय जो साधारणतया राज्य-सूची में शामिल होते हैं पहले पांच वर्षों में समवर्ती सूची में रहेंगे इस समय भी भारत सरकार अधिनियम (अनुकूलन) 1946 में इसी प्रकार की व्यवस्था है जिसका आशय वर्तमान स्थिति पर काबू पाना है। परन्तु मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस अनुच्छेद में निर्धारित अवधि बहुत कम है। इस अनुच्छेद में कहा गया है कि राज्य-सूची में उल्लिखित इन मदों को प्रथम पांच वर्षों के लिए समवर्ती-सूची में रखना शायद आवश्यक होगा ताकि संसद द्वारा आवश्यक कार्यवाही की जा सके। इस विषय में मैं अपने मित्र श्री बृजेश्वर प्रसाद द्वारा प्रस्तुत इस आशय के संशोधन का समर्थन करूंगा कि यह पांच वर्षों की अवधि बहुत कम है और कि यह अवधि और अधिक होनी चाहिए। यदि उस अवधि को अनावश्यक पाया गया तो हम उसे कम कर सकते हैं, परन्तु संविधान में ज्यादा अवधि के लिए उपबंध करने में कोई हानि नहीं है।

दूसरे, महोदय, मैं समझता हूं कि बेहतर होता यदि राहत एवं पुनर्वास के विषय को भी समवर्ती सूची में रखे जाने वाले विषयों की इस सूची में सम्मिलित कर लिया जाता। मुझे मालूम नहीं कि क्या इस विषय को समवर्ती सूची से निकाल देने का इरादा है। यदि वहां नहीं तो संविधान में किसी अन्य स्थान पर इस विषय का उल्लेख होना चाहिए, ताकि उन लाखों-लाखों लोगों को राहत और पुनर्वास के लिए उचित विधान बनाने की शक्ति संसद को प्राप्त हो जो...।

*__अध्यक्ष:__ समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33-ख में, विभाजन के कारण अपने मूल निवास स्थानों से विस्थापित हुए लोगों को राहत एवं पुनर्वास का विषय सम्मिलित है। अत: आप देखेंगे कि इसकी व्यवस्था की गई है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ महोदय, मुझे खुशी है कि संविधान में इसकी व्यवस्था है। मैं इस विषय में और कुछ नहीं कहूंगा। मैं आपना सुझाव वापस लेता हूं। परन्तु मैं समझता हूं कि पांच वर्षों की अवधि बहुत कम है, इसे बढ़ाया जाना चाहिए।

*__अध्यक्ष:__ क्या कोई अन्य सदस्य बोलना चाहता है? डॉ. अम्बेडकर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, मुझे केवल इतना ही कहना है कि मैं श्री ब्रजेश्वर प्रसाद द्वारा पेश किया गया संशोधन स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हूं। जहां तक आपके द्वारा और मेरे मित्र डॉ. कुंजरू द्वारा सुझाये गये दूसरे संशोधन का संबंध है, मैं यह कह सकता हूं कि मेरा इस विषय में खुला मन है और मैं उद्योग तथा आपूर्ति मंत्रालय से परामर्श करने के पश्चात् आवश्यक संशोधन पेश करने के लिए तैयार हूं। अत: अब मेरा संशोधन सभा के मतदान के लिए रखा जाए।

***अध्यक्ष:** और कृषि मंत्रालय भी आप उस मंत्रालय से भी परामर्श कर लें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जी हां, महोदय, मैं सम्बन्धित मंत्रालयों से परामर्श करूंगा।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर ने जो कुछ कहा है उसके अधीन रहते हुए, मैं अनुच्छेद को सभा के मतदान के लिए रखूंगा। पहले मैं संशोधनों को लूंगा। डॉ. देशमुख का संशोधन संख्या 2 लगभग शाब्दिक है और वह इसे प्रारूप समिति पर छोड़ दें और संशोधन संख्या 3 भी। संशोधन संख्या 4 की क्या स्थिति है?

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** मैं इसे पेश नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** तब मैं श्री ब्रजेश्वर प्रसाद का संशोधन संख्या 5 सभा के मतदान के लिए रखता हूं:

प्रश्न यह है:

"कि संशोधन-सूची (खण्ड दो) के संशोधन संख्या 3286 और 3287 के संदर्भ में अनुच्छेद 306 में, 'five (पांच)' **शब्द के स्थान पर** 'fifteen (पन्द्रह)' **शब्द रखा जाये**।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ

***अध्यक्ष:** अब मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किया गया संशोधन सभा के मतदान के लिए रखता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 306 के खण्ड (क), खण्ड (ख) और खण्ड (ग) के स्थान पर ये खण्ड रखे जाएं:

(a) trade and commerce within a State in, and the production, supply and distribution of, cotton and woollen textiles, raw cotton (including ginned cotton and unginned cotton or Kapas), cotton seed, paper (including newsprint), foodstuffs (including edible oil-seeds and oil), coal (including coke and derivatives of coal), iron, steel adn mica;

(b) offences against laws with respect to any of the matters mentioned

in clause (a), jurisdiction and powers of all courts except the Supreme Court with respect to any of those matters, and fees in respect of any of those matters but not including fees taken in any court.'

'[(क) सूती और ऊनी वस्त्रों, कच्ची रूई (जिसके अंतर्गत धुनी हुई रूई और बिना धुनी रूई या कपास है), बिनौले, कागज (जिसके अन्तर्गत समाचारपत्र का कागज है), खाद्य पदार्थ (जिसके अंतर्गत खाद्य तिलहन और तेल हैं), कोयला (जिसके अन्तर्गत कोक और पत्थर-कोयला-जन्य पदार्थ हैं), लोहे, इस्पात और अभ्रक का किसी राज्य के अन्दर व्यापार और वाणिज्य तथा उनका उत्पादन, सम्भरण और वितरण;

(ख) खण्ड (क) में वर्णित विषयों में से किसी से सम्बद्ध विधियों के विरुद्ध अपराध, उच्चतम न्यायालय से भिन्न सब न्यायालयों का उन विषयों में से किसी के बारे में क्षेत्राधिकार और शक्तियां तथा उन विषयों में से किसी के संबंध में किसी न्यायालय में ली जाने वाली फीसों से अन्य फीसें।' "।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ

***अध्यक्ष:** अब मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन द्वारा संशोधित रूप में, अनुच्छेद सभा के मतदान के लिए रखता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 306, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 306, संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 309

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 309 को लेते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** एक नया अनुच्छेद 307-क जोड़ने के बारे में भी ब्रजेश्वर प्रसाद का संशोधन है।

***अध्यक्ष:** परन्तु क्या अब हम उसे लें?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** इसे रोक रखा जाए।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास: जनरल): पंडित ठाकुर दास भार्गव द्वारा अपने संशोधन संख्या 3303, खण्ड दो, में नये अनुच्छेद का सुझाव दिया गया है, उसे भी मैं समझता हूं कि निबटा दिया जाए।

***अध्यक्ष:** अच्छा, पंडित ठाकुर दास भार्गव? वह सदन में नहीं हैं। दो अन्य सदस्यों द्वारा संशोधनों की सूचना दी गई है। लाला अचिंत राम? श्री देशबन्धु गुप्त?

इनमें से कोई भी अपना संशोधन पेश नहीं कर रहा है। श्री ब्रजेश्वर प्रसाद का संशोधन भी पेश नहीं किया जा सकता।

मैं अनुच्छेद 309 को सभा के मतदान के लिए रखूंगा। इसका कोई संशोधन नहीं है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 309 संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ

अनुच्छेद 309 संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 310-क तथा अनुच्छेद 310-ख

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अगला अनुच्छेद, अर्थात् अनुच्छेद 310 अनुच्छेद 308 से जुड़ा हुआ है। अत: इन दोनों पर एक साथ विचार कर लिया जाए।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 310 पर विचार स्थगित कर दिया गया है। अब सभा अगले अनुच्छेद 310-क तथा अनुच्छेद 310-ख पर विचार आरम्भ करेगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, आपकी अनुमति से मैं निम्नलिखित संशोधन संख्या 12, कुछ संशोधित रूप में पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 310 के पश्चात्, निम्नलिखित नये अनुच्छेद रखे जाएं:

Provisions as to Comptroller and Auditor General of India.

'310A. The Auditor General of India holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless he has elected otherwise become on that date the Comptroller and Auditor General of India and shall thereupon be entitled to such salaries and allowances and to such rights in respect of leave and pension as are provided for under clause (2) of article 124 of this Constitution in respect of the Comptroller and Auditor General of India and shall be entitled to continue to hold office until the expiration of his term of office as determined under the provisions which were applicable immediately before such commencement."

Provisions as to Public Service Commissions.

310B. (1) The members of this Public Service Commission for the Dominion of India holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected othersise, become on that date the members of the Public Service Commission for the Union and shall notwithstanding anything contained in clauses (1) and (2) of article 285 of this Constitution but subject to the proviso to clause (2) of that article continue to hold office until the expiration of their term of office as determined under the rules which were applicable immediately before such commencement to such members.

(2) The members of a Public Service Commission of a Province or of a Public Service Commission serving the needs of a group of Provinces holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall unless they have elected otherwise, become on that date the members of the Public Service Commission for the corresponding State or the members of the Joint Public Service Commission serving the needs of the corresponding States, as the case may be and shall, notwithstanding anything contained in clauses (1) and (2) of article 285 of this Constitution but subject to the proviso to clause (2) of that article, continue to hold office until the expiration of their term of office as determined under the rules which were applicable immediately before such commencement to such members."

भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक के बारे में उपबन्ध।

['310-क इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले पदस्थ भारत का महालेखापरीक्षक, यदि वह अन्यथा पसन्द न कर चुका हो, ऐसे प्रारम्भ पर भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक हो जाएगा तथा तत्पश्चात् ऐसे वेतनों तथा भत्तों तथा छुट्टी और निवृत्ति-वेतन के विषय में ऐसे अधिकारों का हक रखेगा जैसे भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के बारे में इस संविधान के अनुच्छेद 124 के खण्ड (2) के अधीन उपबंधित हैं तथा अपनी उस पदावधि की, जो कि ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उसे लागू होने वाले उपबंधों के अधीन निर्धारित हो, समाप्ति तक, पदस्थ बने रहने का हक रखेगा।

भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक के बारे में उपबन्ध।

310-ख (1) इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले भारत डोमिनियन के लोक सेवा आयोग के पदस्थ सदस्य, जब तक कि वे अन्यथा पसन्द न कर चुके हों, ऐसे प्रारम्भ पर संघ के लोक सेवा आयोग के सदस्य हो जाएंगे और अनुच्छेद 285 के खण्ड (1) और खण्ड (2) में किसी बात के होते हुए भी, किन्तु उस अनुच्छेद के खण्ड (2) के परन्तुक के अधीन रहते हुए, अपनी उस पदावधि की, जो ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले ऐसे सदस्यों को लागू होने वाले नियमों के अधीन निर्धारित हो, समाप्ति तक पदस्थ बने रहेंगे।

(2) इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले किसी प्रान्त के लोक सेवा आयोग के या प्रांतों के समूह की आवश्यकता के लिये सेवा करने वाले किसी लोक सेवा आयोग के पदस्थ सदस्य, जब तक कि वे अन्यथा पसन्द न कर चुके हों, ऐसे प्रारम्भ पर, यथास्थिति, तत्स्थानी राज्य के लोक सेवा आयोग के सदस्य अथवा तत्स्थानी राज्यों की आवश्यकताओं के लिये सेवा करने वाले संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य हो जायेंगे तथा अनुच्छेद 285 के खंड (1) और (2) में किसी बात के होते हुए भी, किन्तु उस अनुच्छेद के खण्ड (2) के परन्तुक के अधीन रहते हुए, अपनी उस पदावधि की, ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले ऐसे सदस्यों को लागू नियमों के अधीन निर्धारित हो, समाप्ति तक पदस्थ बने रहेंगे।']

महोदय, इन अनुच्छेदों में केवल कुछ ऐसे पदों के धारकों के बने रहने हेतु उपबंध किया गया है जिनका विनियमन संविधान द्वारा होता है, जैसे लोक सेवा आयोग के सदस्य और महालेखापरीक्षक। इन अनुच्छेदों में सिद्धान्त का कोई मामला अन्तर्ग्रस्त नहीं है।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** महादेय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

["That in amendment No. 12 of List 1 (First Week), in the proposed new article, 310 B, after the words 'commencement of this Constitution' wherever they occur, the words 'whose services have not, for any reason, been terminated' be inserted."]

["कि सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 310-ख में, 'पद धारण करने वाले सदस्य' **शब्दों के पश्चात्**, जहां कहीं भी ये प्रयुक्त हुए हों, 'जिन की सेवाएं किसी भी कारण से, समाप्त नहीं की गई हैं **शब्द रखे जाएं**।"]

अनुच्छेद 310 में भी इस प्रकार का संशोधन पेश करने का मेरा विचार है। मेरी कठिनाई यह है कि यदि प्रस्तावित नया अनुच्छेद इसी रूप में रहे तो यह प्रश्न उत्पन्न होगा कि क्या ऐसे प्रत्येक पद धारक को जो राज्य के सेवा आयोग का सदस्य है, उस स्थिति में भी जब एक से अधिक राज्यों का एक संयुक्त आयोग हो, उन राज्यों के समूह के आयोग का सदस्य बनाए रखना होगा। प्रस्तुत अनुच्छेद के अनुसार, जो इसकी वर्तमान शब्दावली है, सरकार के पास सिवाय इसके कोई शक्ति नहीं रहेगी कि संविधान के प्रारम्भ के पश्चात भी आयोग के वर्तमान पदधारक प्रत्येक व्यक्ति को उस पद पर बनाए रखा जाए। यदि प्रस्तुत अनुच्छेद की वर्तमान शब्दावली वही रही जो कि इस समय है तो उस सदस्य की सेवायें भी समाप्त नहीं की जा सकेंगी जिसकी सेवायें अनेक राज्यों के लिए संयुक्त सेवा आयोग बनने पर समाप्त की जा सकती थी। कुछ सदस्यों की सेवाएं समाप्त करने के लिए कोई उपबंध नहीं है, तो प्रत्येक पद धारक को उसके वर्तमान पद पर बनाए रखना होगा। मैं समझता हूं कि इससे व्यय बहुत बढ़ जाएगा। अतः मेरा प्रस्ताव है कि मेरे शब्द, जिनका मैंने सुझाव दिया है, अनुच्छेद में जोड़े जाएं ताकि किसी क्षेत्र विशेष के लोक सेवा आयोग के सदस्यों के रूप में उस क्षेत्र में पद-धारकों की संख्या कम की जा सके।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं, डॉ. देशमुख का संशोधन स्वीकार नहीं कर सकता। यह अनावश्यक है।

***अध्यक्षः** मैं पहले डॉ. देशमुख का संशोधन सभा के मतदान के लिए रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"That in amendment No. 12 of List I (First Week) in the proposed new article 310-B, after the words 'commencement of this Constitution' wherever they occur, the words 'whose services, have not, for any reason, been terminated' be inserted."

["कि सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 12, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 310-ख में, 'पद धारण करने वाले सदस्य' **शब्दों के पश्चात्**, जहां कहीं भी ये प्रयुक्त हुए हों, 'जिनकी सेवाएं, किसी भी कारण से, समाप्त नहीं की गई हों' **शब्द रखे जाएं**।"]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में अन्तर्विष्ट अनुच्छेद एक-एक करके सभा के मतदान के लिए रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 310 के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद रखा जाये:

['310A. The Auditor General of India holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless he has elected otherwise, become on that date the Comptroller and Auditor General of India and shall thereupon be entitled to such salaries and allowances and to such rights in respect of leave and pension as are provided for under clause (2) of article 124 of this Constitution in respect of the Comptroller and Auditor General of India and shall be entitled to continue to hold office until the expiration of his term of office as determined under the provisions which were applicable immediately before such commencement.'

Provisions as to Comptroller and Auditor General of India.

['310क. इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले पदस्थ भारत का महालेखापरीक्षक, यदि वह अन्यथा पसन्द न कर चुका हो, ऐसे प्रारम्भ पर भारत का नियंत्रक महालेखापरीक्षक हो जाएगा तथा तत्पश्चात ऐसे वेतनों तथा भत्तों तथा छुट्टी और निवृत्ति-वेतन के विषय में ऐसे अधिकारों का हक रखेगा जैसे भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के बारे में इस संविधान के अनुच्छेद 124 के खण्ड (2) के अधीन उपबंधित है तथा अपनी उस पदावधि की, जो कि ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उसे लागू होने वाले उपबंधों के अधीन निर्धारित हो, समाप्ति तक, पदस्थ बने रहने का हक रखेगा।"]

भारत के नियंत्रक-महालेखा-परीक्षक के बारे में उपबंध

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 310क के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद रखा जाए:

['310B. (1) The members of the Public Service Commission for the Dominion of India holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected otherwise, become on that date the members of this Public Service Commission for the Union and shall, notwithstanding anything contained in clauses (1) and (2) of article 285 of this Constitution but subject to the proviso to clause (2) of that article continue to hold office until the expiration of their term of office as determined under the rules which were applicable immediately before such commencement to such members.

Provisions as to Public Service Commissions.

[अध्यक्ष]

(2) The members of a Public Service Commission of a Province or of a Public Service Commission serving the needs of a group of Provinces holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected otherwise, become on that date members of this Public Service Commission for the corresponding State or the members of the joint Public Service Commission serving the needs of the corresponding States, as the case may be and shall notwithstanding any thing contained in clauses (1) and (2) of article 285 of this Constitution but subject to the proviso to clause (2) of the article, continue to hold office until the expiration of their term of office as determined under the rules which were applicable immediately before such commencement to such members."

लोक सेवा आयोगों के बारे में उपबंध

['310ख (1) इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले भारत डोमिनियन के लोक सेवा आयोग के पदस्थ सदस्य, जब तक कि वे अन्यथा पसन्द न कर चुके हों, ऐसे प्रारम्भ पर संघ के लोक सेवा आयोग के सदस्य हो जाएंगे और अनुच्छेद 285 के खण्ड (1) और खण्ड (2) में किसी बात के होते हुए भी, किन्तु उस अनुच्छेद के खण्ड (2) के परन्तुक के अधीन रहते हुए, अपनी उस पदावधि की, जो कि ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले ऐसे सदस्यों को लागू होने वाले नियमों के अधीन निर्धारित हो, समाप्ति तक पदस्थ बने रहेंगे।

(2) इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले किसी प्रांत के लोक सेवा आयोग के या प्रांतों के समूह की आवश्यकता के लिए सेवा करने वाले किसी लोक सेवा आयोग के पदस्थ सदस्य, जब तक कि वे अन्यथा पसन्द न कर चुके हों, ऐसे प्रारम्भ पर, यथास्थिति, तत्स्थानी राज्य के लोक सेवा आयोग के सदस्य अथवा तत्स्थानी राज्यों की आवश्यकताओं के लिए सेवा करने वाले संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य हो जाएंगे तथा अनुच्छेद 285 के खण्ड (1) और खण्ड (2) में किसी बात के होते हुए भी, किन्तु उस अनुच्छेद के खण्ड (2) के परन्तुक के अधीन रहते हुए, अपनी उस पदावधि की, जो कि ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले ऐसे सदस्यों को लागू नियमों के अधीन निर्धारित हो, समाप्ति तक पदस्थ बने रहेंगे।']

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 310-क और 310-ख संविधान में जोड़ दिए गए।

अनुच्छेद 311-क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 311 के पश्चात्, निम्नलिखित नया अनुच्छेद रखा जाए:

[311A. (1) Such person as the Constituent Assembly of the dominion of India shall have elected in this behalf shall be the Provisional President of India until a President has been elected in accordance with the provisions contained in Chapter I of Part V of this Constitution and has entered upon his office.

Provisions as to Provisional President.

(2) In the event of the occurrence of any vacancy in the office of the provisional President by reason of his death, resignation or removal, or otherwise it shall be filled by a person elected in this behalf by the Provisional Parliament functioning under article 311 of this Constitution and until a person is so elected, the Chief Justice of India shall act as the Provisional President."

[311क (1) ऐसा व्यक्ति, जिसे इस बारे में भारत डोमिनियन की संविधान सभा ने निर्वाचित कर लिया हो, भारत का तब तक अस्थायी राष्ट्रपति होगा जब तक कि इस संविधान के भाग-5 के अध्याय 1 में अन्तर्विष्ट उपबंधों के अनुसार राष्ट्रपति निर्वाचित न हो जाये तथा अपने पद को ग्रहण न कर ले।

अस्थायी राष्ट्रपति के बारे में उपबंध

(2) अस्थायी राष्ट्रपति के पद में, उसकी मृत्यु, पद त्याग या हटाये जाने के कारण या अन्यथा कोई रिक्तता होने पर उसकी पूर्ति इस संविधान के अनुच्छेद 311 के अन्तर्गत कृत्यकारिणी अन्तर्कालीन संसद द्वारा उस लिये निर्वाचित व्यक्ति से की जायेगी, तथा जब तक ऐसा व्यक्ति निर्वाचित न हो तब तक भारत का मुख्य न्यायाधीश अस्थायी राष्ट्रपति के रूप में कार्य करेगा।']

***अध्यक्षः** इस अनुच्छेद के दो संशोधन हैं। उनमें से एक संशोधन "राष्ट्रपति" शब्द से पहले "अस्थायी" शब्द हटाये जाने के लिए है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं: "कि सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 28 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311-क के खण्ड (1) में, 'provisional (अस्थायी)' **शब्द निकाल दिया जाए।**"

"कि सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 28 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311-क के खण्ड (2) में, 'Provisional President (अस्थायी राष्ट्रपति)' **शब्दों के स्थान पर**, जहां से ये प्रथम स्थान पर प्रयुक्त हुए हों 'President so elected by the Constituent Assembly of the Dominion of India (भारत डोमिनियन की संविधान सभा द्वारा इस प्रकार निर्वाचित राष्ट्रपति), शब्द रखे जाएं।"

"कि सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 28 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311-क के खण्ड (2) में 'Provisional President (अस्थायी राष्ट्रपति)' **शब्दों के स्थान पर**, जहां ये दूसरे स्थान पर प्रयुक्त हुए हों 'President (राष्ट्रपति)' **शब्द रखे जाएं।**"

*डॉ. पी.एस. देशमुख: मेरे संशोधन के सिद्धांत को चूंकि स्वीकार कर लिया गया है अत: मैं समझता हूं कि मेरा संशोधन पेश करने का कोई औचित्य नहीं है।

*अध्यक्ष: अब अनुच्छेद और संशोधनों पर चर्चा की जा सकती है।

*श्री आर.के. सिधवा (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): मेरे नाम में भी एक संशोधन है:

"कि संशोधन संख्या 13 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 311-ख में, 'Provisional (अस्थायी)' **शब्द के स्थान पर,** जहां कहीं भी यह प्रयुक्त हुआ हो, 'First (प्रथम)' **शब्द रखा जाए।**"

महोदय, मुझे खुशी है कि डॉ. अम्बेडकर "राष्ट्रपति" शब्द से पहले "अस्थायी" शब्द को हटा दिये जाने पर सहमत हो गये हैं, क्योंकि यह बात मेरी समझ से बाहर है कि आप स्थायी राष्ट्रपति कैसे रख सकते हैं। विधिवत रूप से गठित सभा राष्ट्रपति को निर्वाचित करेगी। उसे प्रथम राष्ट्रपति तो कहा जा सकता है परन्तु आप उसे "अस्थायी" नहीं कह सकते। "अस्थायी" शब्द का अर्थ होगा किसी ने उसे मनोनीत किया है। मैं नहीं चाहता कि हमारे प्रथम राष्ट्रपति पर कोई आक्षेप किया जाये और इसलिए मैंने सोचा कि "प्रथम" शब्द अपेक्षतया अधिक उचित होगा। भारत शासन अधिनियम 1935 के अन्तर्गत, संक्रमण काल के दौरान जब उड़ीसा को बिहार से अलग किया गया था और उत्तर-पूर्व सीमान्त प्रान्त नामक एक अलग प्रान्त का निर्माण किया गया था और जब सिन्ध को बम्बई से अलग किया गया था और उसका एक अलग प्रान्त के रूप में गठन किया गया था तो इन प्रान्तों के गवर्नरों को प्रथम गवर्नर कहा जाता था हालांकि वे मनोनीत किये गये थे। अत: मैं समझता हूं कि अपने प्रथम राष्ट्रपति के लिए, जिसे हम इस संविधान के उपबंधों के अन्तर्गत निर्वाचित करेंगे, "अस्थायी" शब्द का प्रयोग करना अन्यायसंगत और अनुचित होगा। इसलिए मैं बहुत खुश हूं कि प्रारूप समिति ने "अस्थायी" शब्द हटा दिया है। मैं तो "प्रथम" शब्द को बेहतर समझूंगा परन्तु "अस्थायी" शब्द हटा देने से मेरा प्रयोजन सिद्ध हो जाता है और मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है। इन्हीं शब्दों के साथ मैं सभा से कहूंगा कि मेरे संशोधन को स्वीकार किया जाए।

*प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना: अध्यक्ष महोदय, डॉ. अम्बेडकर ने जो अनुच्छेद 311-क का खण्ड (2) पेश किया है, उसमें यह उपबंध है कि अस्थायी राष्ट्रपति का पद रिक्त होने की स्थिति में उसे इस संविधान के अनुच्छेद 311 के अन्तर्गत कार्यरत अस्थायी संसद द्वारा इस हेतु निर्वाचित व्यक्ति द्वारा भरा जाएगा। मैं यह कहना चाहता हूं कि उस संसद को 'provisional (अस्थायी)' नहीं कहा जाना चाहिए। मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर इस सुझाव की तर्कसंगतता को समझेंगे और 'Parliament (संसद)' शब्द से पहले 'provisional (अस्थायी)' शब्द को निकाल देंगे, जैसा कि उन्होंने राष्ट्रपति के मामले में किया है।

*माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मैं नहीं समझा कि 'Provisional Parliament (अस्थायी संसद)' शब्द रखे जाने पर अधिक आपत्ति हो सकती है। मैं इसमें कोई परिवर्तन नहीं करना चाहता। इसे 'Provisional Parliament (अस्थायी संसद)' नहीं कहा जाएगा, परन्तु इस अनुच्छेद के भाषा के प्रयोजनार्थ मैं समझता हूं कि यह कहना आवश्यक है कि यह अस्थायी संसद है।

***श्री आर.के. सिधवाः** परन्तु मैंने यह समझा था कि डॉ. अम्बेडकर "अस्थायी" शब्द को हटाने के लिए सहमत हो गए हैं।

***अध्यक्षः** जी नहीं, यह संसद के संबंध में है। श्री शिब्बनलाल सक्सेना चाहते थे कि "संसद" शब्द से पहले "अस्थायी" शब्द हटा दिया जाए।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** यदि ऐसा है तो मैं अन्य स्थान पर भी "अस्थायी" शब्द हटाने के लिए अपना संशोधन पेश करना चाहूंगा।

***अध्यक्षः** क्या आप के संशोधन में संसद का भी उल्लेख है?

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** जी हां, महोदय।

***अध्यक्षः** श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने इसे पेश कर दिया है। उसे सभा के मतदान के लिए रखा जाए। अब मैं विभिन्न संशोधन सभा के मतदान के लिए रखता हूं। प्रश्न यह है:

"कि सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 23 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311-क के खण्ड (1) में 'provisional (अस्थायी)' **शब्द निकाल दिया जाए।**"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***माननीय श्री के. सन्थानम** (मद्रासः जनरल): क्या इसका यह अर्थ है कि "संसद" शब्द से पहले भी "अस्थायी" शब्द हटा दिया जाएगा?

***अध्यक्षः** जी नहीं, वह संशोधन बाद में आएगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 2 प्रथम सप्ताह के संशोधन संख्या 28 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311-क के खण्ड (2) में 'Provisional President (अस्थायी राष्ट्रपति)' **शब्दों के स्थान पर,** जहां ये प्रथम स्थान पर प्रयुक्त हुए हों 'President so elected by the Constituent Assembly of the Dominion of India भारत डोमिनियन की संविधान सभा द्वारा निर्वाचित राष्ट्रपति।' **शब्द रखे जाएं।**"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 2 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 28 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311-क के खण्ड (2) में the Provisional President (अस्थायी राष्ट्रपति)' **शब्दों के स्थान पर,** जहां ये दूसरे स्थान पर प्रयुक्त हुए हों 'President (राष्ट्रपति)' **शब्द रखा जाए।**"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** इसके बाद मैं उस संशोधन को लेता हूं जो डॉ. देशमुख पेश करना चाहते थे परन्तु जिसे वास्तव में श्री शिब्बन लाल सक्सेना ने पेश किया।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित नये अनुच्छेद 311-क के खण्ड (2) में, 'Parliament (संसद)' शब्द से पहले प्रयुक्त 'provisional (अस्थायी)' **शब्द निकाल दिया जाए।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 311-क, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 311-क, संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 311-ख

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 311-क के पश्चात् यह नया अनुच्छेद रखा जाए:

Council of Ministers of the Provisional President

'311B. Such persons as the provisional President may appoint in this behalf shall become members of the Council of Ministers of the provisional President under this Constitution and until appointments are made, all persons holding office as ministers for the Dominion of India immediately before the commencement of the Constitution shall become and shall continue to hold office as members of the Council of Ministers of the provisional President under the Constitution.'

अस्थायी राष्ट्रपति की मंत्रि-परिषद्

['311-ख, ऐसे व्यक्ति, जिन्हें अस्थायी राष्ट्रपति इस लिये नियुक्त करे, इस संविधान के अधीन अस्थायी राष्ट्रपति की मंत्रि-परिषद् के सदस्य होंगे तथा जब तक नियुक्तियां इस प्रकार न की जायें तब तक इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले भारत डोमिनियन के मंत्रियों के रूप में पदस्थ सब व्यक्ति संविधान के अधीन अस्थायी राष्ट्रपति की मंत्रि-परिषद के सदस्य हो जाएंगे तथा इस रूप में पदस्थ बने रहेंगे।"]

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** महोदय, मैं आपका आभारी हूं कि आपने मुझे अपना संशोधन पेश करने का अवसर प्रदान किया। मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 13 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 311-ख में 'provisional (अस्थायी)' **शब्द जहां कहीं** यह प्रयुक्त हुआ है, **निकाल दिया जाए।"**

मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि चूंकि माननीय डॉ. अम्बेडकर ने इस संशोधन के पीछे जो सिद्धान्त है उसे स्वीकार कर लिया है अतः मैं इससे अधिक कुछ कह कर सभा का समय लेना नहीं चाहता। यह लगभग पारिणामिक संशोधन है।

(संशोधन संख्या 15 प्रस्तुत नहीं किया गया।)

*__अध्यक्ष:__ मैं समझता हूं कि डॉ. अम्बेडकर इस संशोधन को स्वीकार करते हैं।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ जी हां, महोदय, मैं इसे स्वीकार करता हूं।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ महोदय, मैं इस उपबंध को समझ नहीं पाया। जिस दिन नया संविधान लागू हो जाएगा उसी दिन वर्तमान मंत्रालय विद्यमान नहीं रहेगा और एक नयी मंत्रि-परिषद को शपथ दिलाई जानी चाहिए। ऐसा कोई उपबंध नहीं होना चाहिए कि:

"इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले भारत डोमिनियन के मंत्रियों के रूप में पदस्थ सब व्यक्ति संविधान के अधीन अस्थायी राष्ट्रपति की मंत्रि-परिषद् के सदस्य हो जाएंगे तथा इस रूप में पदस्थ बने रहेंगे।"

मैं समझता हूं कि नया संविधान लागू होने के बाद पहला काम यही होना चाहिए कि नयी मंत्रि-परिषद् को शपथ ग्रहण करायी जाए। जब नया संविधान लागू हो जाये तो उचित यही होगा कि राष्ट्रपति नये मंत्रियों को पद ग्रहण करने हेतु बुलाएं। यदि हमें कोई उपबंध करना है तो वह प्रभारी (केअरटेकर) मंत्रियों के लिए होना चाहिए। पुराने मंत्रियों को हम नये राष्ट्रपति के मंत्रियों का नाम न दें। अतः मेरा सुझाव है कि इस अनुच्छेद में संशोधन किया जाए। आप यह कह सकते हैं कि जब तक राष्ट्रपति नई मंत्रि-परिषद् नियुक्त नहीं करता तब तक पुराने मंत्री प्रभावी (केअरटेकर) मंत्री के रूप में बने रहेंगे। यह अनोखी बात लगती है कि पुराने मंत्री अपने आप नये राष्ट्रपति की मंत्रि-परिषद् के सदस्य बन जाएं। इसमें कुछ त्रुटि है जिसमें सुधार किया जाना चाहिए, ताकि 26 जनवरी, 1950 को जब नया संविधान लागू हो तो पुराने मंत्री उसी दिन, नये मंत्रियों द्वारा शासन का प्रभार ग्रहण किये जाने तक, प्रभारी (केअरटेकर) मंत्री बन जाएं।

*__श्री एच.वी. कामत__ (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): महोदय, श्री सक्सेना का तर्क कुछ युक्तिसंगत है। वह यह कहना चाह रहे हैं कि जिस दिन नया संविधान लागू हो उस दिन समूची मंत्रि-परिषद् का अस्तित्व औपचारिक रूप से अवश्य समाप्त हो जाए, और उन्हें नये सिरे से शपथ ग्रहण कराई जा सकती है। मैं समझता हूं कि इस अवसर पर जब कि हम नया गणराज्य प्रख्यापित कर रहे हैं और इस नये संविधान का उद्घाटन कर रहे हैं तो ऐसा करना बहुत वांछनीय है। यह आवश्यक हो सकता है कि वही मंत्री उस दिन शपथ ग्रहण करें।

*__एक माननीय सदस्य:__ यह आवश्यक तो नहीं है।

*__श्री एच.वी. कामत:__ हो सकता है कि ऐसा आवश्यक न हो, परन्तु इस बात की काफी सम्भावना तो है कि वही मंत्री शपथ ग्रहण करें जो नये संविधान के प्रारम्भ से पहले मंत्री हों। परन्तु संवैधानिक मर्यादा एवं औचित्य की दृष्टि से मैं समझता हूं कि यदि मंत्रि-परिषद् उस दिन सामूहिक रूप से अपना त्याग पत्र दे दे तो बुद्धिमत्ता की बात होगी। प्रधान मंत्री को मंत्री-परिषद् का त्याग पत्र राष्ट्रपति

[श्री एच.वी. कामत]

को देना चाहिए और राष्ट्रपति को सदन के नेता से कहना चाहिए कि वह नये संविधान के संगत अनुच्छेद के अन्तर्गत नया मंत्रि-मंडल बनाए।

इस सम्बन्ध में एक अन्य बात भी है। मैं समझता हूं कि हमारे संविधान के अन्तर्गत अपनाई गई पद की शपथ उस पुरानी शपथ से कुछ भिन्न है। जिसके अनुसार मंत्रीगण शपथ ग्रहण किया करते थे। अब हमने ईश्वर को साक्षी मान कर शपथ की व्यवस्था की है, परन्तु यदि कोई मंत्री अज्ञेयवादी हो या नास्तिक हो तो वह प्रतिज्ञान कर सकता है। इस विषय पर विभिन्न पहलुओं से विचार करके मैं समझता हूं कि बुद्धिमता इसी में होगी कि हम इस सम्भाव्य स्थिति के लिए उपबंध करें और यह निर्धारित करें कि जिस दिन गणराज्य प्रख्यापित हो और संविधान का उद्घाटन हो उसी दिन मंत्रि-परिषद् औपचारिक रूप से त्याग पत्र दे दे और राष्ट्रपति सदन के नेता से कहे कि वह फिर से अपना मंत्रिमंडल बनाए।

एक अन्य बात भी है और मैं चाहूंगा कि डॉ. अम्बेडकर उस पर विचार करें। यह मात्र शाब्दिक आपत्ति है। क्या डॉ. अम्बेडकर को और प्रारूप समिति को पूरा विश्वास है कि यह अभिव्यक्ति 'Ministers for the Dominion of India' पूर्णतया सही है? मैं स्वयं इसे पसंद नहीं करता। मुझे "for" शब्द पर आपत्ति है। क्या ऐसा कहना अधिक उचित नहीं होगा: Ministers of the Dominion Government of India या 'Ministers of the Dominion of India. "for" शब्द का प्रयोग पूर्णतया उचित नहीं है, परन्तु यदि डॉ. अम्बेडकर और अन्य भाषाविदों का यह विचार हो कि "for" शब्द का प्रयोग सही है, तो मुझे कुछ नहीं कहना है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** महोदय, मेरा इस अवसर पर बोलने का विचार तो नहीं था परन्तु श्री शिब्बन लाल सक्सेना और श्री कामत मेरे इन दो मित्रों ने चूंकि इस विषय पर अपने विचार व्यक्त किए हैं अत: मैं भी इस संशोधन पर अपने विचार व्यक्त करना चाहूंगा। यदि इस अनुच्छेद से "dominion (डोमिनियन)" शब्द हटा दिया जाता तो बेहतर होता। मेरा व्यक्तिगत विचार है कि नये युग के आगमन और भारतीय गणराज्य की स्थापना के साथ हमें नये मंत्रिमंडल के लिए उपबंध करना चाहिए। मैं जानता हूं कि मंत्रिमंडल में तीन व्यक्ति ऐसे हैं जिनके बिना काम चल पाना लगभग असम्भव है। मैं पंडित नेहरू, साहसी सरदार और एशिया के सर्वोत्कृष्ट विद्वान, महान नेता मौलाना साहिब का उल्लेख कर रहा हूं। इन तीनों महान व्यक्तियों का मंत्रिमंडल में रहना परमावश्यक है। मंत्रिमंडल के अन्य सदस्य तो अधिकतर ऐसे हैं जो प्रवासी पक्षियों.......

***अध्यक्ष:** मैं नहीं समझता कि मंत्रियों का वैयक्तिक रूप से उल्लेख करना माननीय सदस्य के लिए न्यायोचित है। हमारा व्यक्तिगत रूप से उनसे कोई संबंध नहीं है। हम तो समूचे रूप में मंत्रिमंडल की बात कर रहे हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** महोदय, यदि "प्रवासी पक्षियों" शब्दों के प्रयोग से हमारे योग्य मंत्रियों पर आक्षेप होता है तो मुझे इसका खेद है। मेरा यह विचार था कि कि इस देश में वास्तविक गणराज्य की स्थापना होने से हम ऐसे व्यक्तियों को मंत्रिमंडल में रखें जिन्हें युवा भारत का भी उत्साहपूर्ण समर्थन प्राप्त हो। अत: यही उचित होगा कि राष्ट्रपति के लिए व्यापक विकल्प रहे और वह समयानुकूल नये-नये व्यक्तियों को मंत्रिमंडल में लें। जहां तक मंत्रिमंडल के वर्तमान सदस्यों का संबंध है, मुझे वैयक्तिक रूप से उनके विरुद्ध कुछ नहीं कहना है, परन्तु मैं समझता

हूं कि नये युग में नये व्यक्तियों की आवश्यकता है। नई बोतलों में पुरानी शराब भरने का कोई लाभ नहीं है।

*श्री **नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिम बंगाल: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, यह प्रश्न चाहे छोटा-सा है परन्तु इससे संवैधानिक स्वरूप का प्रश्न उत्पन्न होता है। मैं समझता हूं कि जब गवर्नर जनरल काम करना बंद कर दें और नया राष्ट्रपति उसका स्थान ले ले तो विद्यमान मंत्रियों को त्याग पत्र दे देना चाहिए और उनको फिर से नियुक्त किया जाना चाहिए। यही बात युक्तिसंगत लगती है। इसका पहला कारण यह है कि वर्तमान मंत्री "गर्वनर जनरल के प्रसाद-पर्यन्त" पद धारण करेंगे। "गवर्नर जनरल" का अर्थ है वह गवर्नर जनरल जो इस समय कार्य कर रहा है। संविधान के प्रारम्भ होने पर गवर्नर जनरल का यह पद समाप्त हो जाएगा और उसका स्थान एक अन्य अधिकारी—अस्थायी राष्ट्रपति ग्रहण कर लेगा। अत: आगामी 26 जनवरी को या जो भी तिथि अन्त में तय की जाए, जब नया संविधान लागू होगा, तो परिवर्तन आएगा। चूंकि मंत्री गवर्नर जनरल द्वारा नियुक्त किए जाते हैं और चूंकि वे संवैधानिक रूप से "उसके प्रसाद-पर्यन्त" पद धारण करते हैं, अत: जैसे ही गवर्नर जनरल का पद समाप्त हो जाता है तो उसके प्रसाद या पीड़ा का प्रश्न ही नहीं रहता और इस कारण मंत्री उसके प्रसाद-पर्यन्त पदासीन नहीं रहेंगे। तब किसी और के प्रसाद—उसके उत्तराधिकारी के प्रसाद—की बात आ जाती है। प्रसाद एक वैयक्तिक बात है और यह आवश्यक नहीं कि उसके उत्तराधिकारी का भी वही प्रसाद हो जो उसका है। अत: नया राष्ट्रपति अपने प्रसाद के अनुसार मंत्री नियुक्त या पुनर्नियुक्त करेगा। और जब तक कि उनकी नियुक्ति न हो जाए तब तक पुराने मंत्री ज्यादा से ज्यादा प्रभारी (केअरटेकर) मंत्री के रूप में काम कर सकते हैं।

यह मामला निस्संदेह संवैधानिक औपचारिकता है, परन्तु मैं समझता हूं कि यह मूलभूत महत्व का है।

*माननीय **डॉ. बी.आर. अम्बेडकर**: अध्यक्ष महोदय, यह अनुच्छेद 311-ख एक प्रकार से मात्र औपचारिक अनुच्छेद है जिसके द्वारा राष्ट्रपति को अधिकार दिया गया है कि वह संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले विद्यमान मंत्रिमंडल को आगे बनाए रख सके। यह अनुच्छेद उन अनुच्छेदों के समरूप है जो हम लोक सेवा आयोग के सदस्यों और महालेखापरीक्षक के संबंध में पहले ही स्वीकृत कर चुके हैं। अत: वास्तव में इन अनुच्छेदों और इस अनुच्छेद में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। जिन सदस्यों ने इस अनुच्छेद 311-ख के उपबंधों पर विचार व्यक्त किए हैं उनका यदि यह तर्क है कि 26 जनवरी 1950 को कोई मंत्रिमंडल नियुक्त न किया जाए या कार्य न करे जब तक कि उसे राष्ट्रपति का विश्वास प्राप्त न हो, तो मैं इस तर्क को मानने के लिए पूरी तरह तैयार हूं। परन्तु मैं इस बात को बिल्कुल समझ नहीं पाया कि इस अनुच्छेद के अन्तर्गत संसद के लिए या मंत्रिमंडल के लिए विश्वास मत प्राप्त करना कैसे असम्भव हो जाता है। यदि संसद सदस्य यह समझते हैं कि वर्तमान मंत्रिमंडल उन कृत्यों का निर्वहन करने में सक्षम नहीं है जिनका निर्वहन करना इसका कर्तव्य है तो यह सदन 26 जनवरी से पूर्व मंत्रि-परिषद् में विश्वास का अभाव व्यक्त कर सकता है और उसके द्वारा मंत्रि-परिषद् को भंग कर सकता है। इसी तरह प्रधान मंत्री भी अस्थायी राष्ट्रपति को मंत्रिमंडल के सदस्यों के नाम प्रस्तुत करने से पहले, सदन से अपने और अपने मंत्रिमंडल के लिए विश्वास का मत प्राप्त कर सकता है। यदि न तो प्रधान मंत्री और न ही सदन अविश्वास का या विश्वास का परीक्षण 26 जनवरी, 1950 से पहले—यह मानते हुए कि संविधान के लागू होने की यही तिथि होगी—करना चाहता हो तो इस अनुच्छेद 311-ख के अन्तर्गत सदन से यह अधिकार छिन नहीं जाता कि

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

वह 26 जनवरी के पश्चात् उस मंत्रिमंडल के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव लाये और उसे बर्खास्त कर दे और इस अनुच्छेद के अन्तर्गत प्रधान मंत्री पर भी कोई रोक नहीं है कि वह मंत्रिमंडल की नियुक्ति के पश्चात् अपने और अपने मंत्रिमंडल के लिए विश्वास का मत प्राप्त करे।

अतः मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जिन सदस्यों ने अनुच्छेद 311-ख के उपबंधों पर सम्भवतया इस धारणा से टिप्पणियां की हैं कि नये संविधान के अन्तर्गत वर्तमान मंत्रिमंडल को ही बनाये रखने का यह परोक्ष प्रयास है तो वे गलत आशंका में रहे हैं। सदन को इस समय भी और 26 जनवरी के पश्चात् भी इस बात का पूरा अधिकार है कि मंत्रिमंडल के संबंध में जो कार्यवाही वह करना चाहता है उसे करे और यदि वह मंत्रिमंडल को पसन्द नहीं करता तो उसे बर्खास्त कर दे। अतः जैसा मैंने कहा, यह अनुच्छेद औपचारिक मात्र है और राष्ट्रपति को यह अधिकार देता है कि यदि वह चाहे तो नये संविधान के लागू होने के बाद मंत्रिमंडल को बना रहने दे सकता है।

***श्री एच.वी. कामतः** माननीय डॉ. अम्बेडकर ने उन बातों का उत्तर नहीं दिया जो मैंने उठाई थीं। पद की शपथ की क्या स्थिति है जिसका मैंने उल्लेख किया था?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** वह निस्संदेह ली जायेगी। "नियुक्ति" का अर्थ है पद की शपथ लेना। अन्यथा कोई नियुक्ति नहीं हो सकती।

***श्री एच.वी. कामतः** उसी दिन?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** जी हां, निश्चय ही, उसी दिन "नियुक्ति' में पद की शपथ लेना सम्मिलित है।

***अध्यक्षः** मैं डॉ. देशमुख का संशोधन सभा के मतदान के लिए रखूंगा— मैं समझता हूं कि प्रस्तावक ने इसे स्वीकार कर लिया है।

प्रश्न यह है:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 13 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 311-ख में 'Provisional (अस्थायी)' शब्द, जहां कहीं यह प्रयुक्त हुआ है, **निकाल दिया जाए।"**

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 311-ख, संशोधित रूप में, विधेयक का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 311-ख संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

———————

अनुच्छेद 312

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 312 के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाए:

Provisions as to provisional Legislature in each State.

'312. (1) Until the House or Houses of the Legislature of each State for the time being specified in Part I of the first Schedule has or have been duly constituted and summoned to meet for the first session under the provisions of this Constitution the House or Houses of the Legislature of the corresponding Province functioning immediately before the commencement of this Constitution shall exercise the powers and perform the duties conferred by the provisions of this Constitution on the House or Houses of the Legislature of such State.

(2) Notwithstanding anything contained in clause (1) of this article where a general election to reconstitute the Legislative Assembly of a Province was ordered before the commencement of this Constitution the election may be completed after such commencement as if this Constitution has not come into operation and the Assembly so reconstituted shall be deemed to be the Legislative Assembly of that Province for the purposes of that clause.

(3) Any person holding office as Speaker of the Legislative Assembly or President of the Legislative Council of a Province immediately before the commencement of this Constitution shall after such commencement be the Speaker of the Legislative Assembly or the Chairman of the Legislative Council as the case may be of the corresponding State for the time being specified in Part I of the first schedule while such Assembly or Council functions under clause (1) of this article:

Provided that where general election was ordered for the reconstitution of the Legislative Assembly of a Province before the commencement of this Constitution and the first meeting of the Assembly as so reconstituted is held after such commencement the provisions of this clause shall not apply and the Assembly as reconstituted shall elect a member of the Assembly as the Speaker thereof.'

['312 (1) जब तक प्रथम अनुसूची के भाग 1 में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य के विधानमंडल का सदन या के सदन इस संविधान के उपबंधों के अधीन सम्यक रूप से गठित न हो जाएं तथा प्रथम सत्र में अधिवेशित होने के लिए आहूत न हो जाए, तब तक इस संविधान के प्रारम्भ में ठीक पहले तत्स्थानी प्रान्त के कृत्यकारी विधानमंडल का सदन, या के सदन, इस संविधान के उपबंधों द्वारा ऐसे राज्य के विधानमंडल के सदन या सदनों को दी गई सब शक्तियों का प्रयोग तथा कर्तव्यों का पालन करेगा या करेंगे।

(2) इस अनुच्छेद के खण्ड (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां कि इस संविधान के प्रारम्भ से पहिले किसी प्रान्त की विधान सभा के पुनर्गठन के लिए सामान्य निर्वाचन का आदेश दे दिया गया हो, वहां ऐसे प्रारम्भ के पश्चात्

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

निर्वाचन इस प्रकार पूरा किया जा सकेगा मानो कि यह संविधान प्रवर्तन में नहीं आया है तथा ऐसी पुनर्गठित सभा उस खण्ड के प्रयोजनों के लिए उस प्रान्त की विधान सभा समझी जाएगी।

(3) कोई व्यक्ति जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले किसी प्रान्त की विधान सभा के अध्यक्ष या विधान परिषद् के सभापति के रूप में पदस्थ था ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रथम अनुसूची के भाग 1 में इस समय उल्लिखित तत्स्थानी राज्य की विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् का सभापति, जो भी स्थिति हो, होगा जब तक कि वह सभा या परिषद् इस अनुच्छेद के खण्ड (1) के अधीन कृत्य करती है:

परन्तु जहां कि इस संविधान के प्रारम्भ से पहले किसी प्रान्त की विधान सभा के पुनर्गठन के लिए साधारण निर्वाचन का आदेश दे दिया गया हो और इस ऐसी पुनर्गठित सभा का प्रथम अधिवेशन ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् होता है वहां इस खण्ड के उपबंध लागू न होंगे तथा ऐसी पुनर्गठित सभा अपने किसी सदस्य को अपने अध्यक्ष के रूप में निर्वाचित करेगी।' "]

यह उपबंध पूर्णतया स्पष्ट है और मैं समझता हूं कि इनकी व्याख्या करना आवश्यक नहीं है।

***अध्यक्ष:** क्या इसके कोई संशोधन हैं? मैं समझता हूं कि कोई नहीं है।

***श्री महावीर त्यागी:** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): महोदय, मैं नहीं समझता कि उपखण्ड (3) की कोई आवश्यकता है। जब हम पहले ही कह चुके हैं कि किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् ज्यों कि त्यों बनी रहेगी तो यह आवश्यक नहीं है कि हम यह भी कहें कि सदनों के क्रमश: अध्यक्ष या सभापति भी ज्यों के त्यों रहेंगे, चूंकि वे तो सदनों के साथ ही होते हैं। दूसरे, मैं यह समझता हूं— परन्तु डॉ. अम्बेडकर फिर यह तर्क दे सकते हैं कि मैं चूंकि एक विशेषज्ञ नहीं हूं अत: वह मेरी बात पर ध्यान नहीं दे सकते—कि जिस शब्दावली का प्रयोग किया है उसके अनुसार सदनों के अध्यक्ष और सभापति निरन्तर अपने-अपने पद पर बने रहेंगे। हम उन्हें निरन्तर अपने-अपने पद पर बने रहने की बात क्यों करे? उन्हें अविश्वास व्यक्त करके पद से हटाया जा सकता है, परन्तु हम कहते हैं कि वे अध्यक्ष के रूप में और सभापति के रूप में बने रहेंगे। क्या इसका यह अर्थ नहीं होगा कि उन्हें हटाया ही नहीं जा सकेगा? मैं इस पर और अधिक बल नहीं देना चाहता। मैं केवल इन शब्दों की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूं:

"कोई व्यक्ति जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले किसी प्रान्त की विधान सभा के अध्यक्ष या विधान परिषद् के सभापति के रूप में पदस्थ था ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रथम अनुसूची के भाग 1 में इस समय उल्लिखित तत्स्थानी राज्य की विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् का सभापति, जो भी स्थिति हो, होगा..." हम ऐसा क्यों कहें? और फिर—

"...जब तक वह सभा या परिषद् इस अनुच्छेद के खण्ड (1) के अधीन कृत्य करती है।"

जब तक वे सभाएं और परिषदें कार्य करती रहेंगी तब तक उन विधायी निकायों के अध्यक्ष और सभापति रहेंगे। क्या इसका यह अर्थ नहीं निकाला जाएगा कि यदि सदन उन्हें न भी रखना चाहें और उनके स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को रखना चाहें तो भी वे ऐसा नहीं कर सकेंगे? मेरे मन में केवल यही शंका है जो मैं व्यक्त करना चाहता था।

*__माननीय श्री के. सन्तानम__ (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, स्पष्टतया मुझे इन संक्रमण कालीन उपबंधों के विषय में आशंका है। इन अस्थायी विधान सभाओं और संसद की कार्यावधि के लिए समय-सीमा निश्चित करने वाला कोई उपबंध नहीं रखा गया है। जब फ्रांस ने युद्ध के पश्चात् संविधान का निर्माण करने के लिए और अस्थायी संसद के रूप में भी कार्य करने के लिए संविधान सभा गठित करने का निश्चय किया तो उन्होंने सात मास की समय-सीमा निर्धारित की थी। उन्होंने कहा था कि "यह सभा सात मास के अन्दर-अन्दर संविधान अधिनियमित करेगी। यदि यह ऐसा न कर सकी तो यह संविधान सभा भंग हो जाएगी और उसका पुनर्निर्वाचन होगा।" यदि इस संविधान सभा का गठन करते समय भी कोई ऐसा ही उपबंध किया गया होता तो मैं समझता हूं कि इस संविधान का निर्माण बहुत पहले हो चुका होता। परन्तु इस संविधान सभा के स्वत: भंग हो जाने के विषय में कोई उपबंध न किये जाने के कारण अब हमने संविधान का निर्माण करने में तीन वर्षों का समय ले लिया है।

मैं नहीं जानता कि तथाकथित अस्थायी संसद और विधान सभाएं निर्वाचन कराने में कितने वर्ष लगा देंगी। मैं समझता हूं कि यदि ये अस्थायी संसद और विधान सभाएं निरंतर बनी रहती हैं तो इससे एक प्रकार का राष्ट्रीय विनाश ही होगा। ऐसा सद्भावना से किया जा सकता है, दुर्भावना से किया जा सकता है, किसी भी कारण किया जा सकता है। हम मानव स्वभाव को जानते हैं और वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचन होंगे तो इस बात की काफी सम्भावना है कि सदस्यों को यह आशंका रहे कि वे फिर से निर्वाचित नहीं हो सकेंगे, अत: छ: मास के लिए, एक वर्ष के लिये या दो वर्षों के लिए सदस्य बने रहना चाहेंगे।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ मंत्रियों की क्या स्थिति है? क्या उनको आशंका नहीं है?

*__माननीय श्री के. सन्तानम:__ महोदय, मंत्रीगण संसद पर निर्भर करते हैं। यदि संसद भंग की जाती है तो मंत्री स्वत: ही अपदस्थ हो जाते हैं। मैं यह तर्क नहीं समझ सका कि सदस्य तो बने रहना चाहते हैं और केवल मंत्री ही......

*__श्री एल. कृष्णास्वामी भारती__ (मद्रास: जनरल): महोदय, यह कहना सदन के सदस्यों पर आक्षेप करना है कि वे निर्वाचनों से डरते हैं यह आक्षेप है, जो करना आवश्यक नहीं है।

*__माननीय श्री के. सन्तानम:__ मैं किसी व्यक्ति विशेष की बात नहीं कर रहा हूं। मैं तो मानव स्वभाव की बात कर रहा हूं। मैं इस सदन के सदस्यों की ही नहीं, बल्कि सब प्रान्तों की विधान सभाओं के सदस्यों की बात कर रहा हूं। मैं यह समझता हूं कि हम यहां भारत के लोगों के संरक्षक हैं और हमें सबसे ज्यादा उनके हितों का ध्यान रखना चाहिए। मैं सिद्धान्त की बात कर रहा हूं। यदि आप किसी निकाय को शक्ति प्रदान करते हैं तो आप यह नहीं कह सकते कि वह उसका प्रयोग नहीं करेगा। समूचा संविधान रोकों एवं सन्तुलनों से भरा पड़ा है। हम

[माननीय श्री के. सन्तानम्]

उच्चतम न्यायालय के माध्यम से भावी संसदों की शक्ति सीमित करना चाहते हैं। हमने इसे सीमित करने के लिए मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की है। परन्तु यहां हम इन अस्थायी विधान सभाओं और संसद को प्राय: अनिश्चितकाल के लिए बने रहने की शक्तियां प्रदान कर रहे हैं। अत: हमें इस बारे में कुछ उपाय करने होंगे। इन अस्थायी विधान सभाओं की कोई अन्तिम और निश्चित सीमा निर्धारित करने के लिए या तो संविधान में उपबंध कीजिये या संकल्प पारित कीजिये या कोई अन्य उपाय कीजिये जिससे कि भारत के लोगों को पता चले कि वयस्क मताधिकार के अनुसार नई विधान सभाएं एक युक्तिसंगत समय के भीतर गठित हो जायेंगी। मैं समझता हूं कि ऐसा करना आवश्यक है। मैं तो नहीं समझता कि किसी व्यक्ति को इसे वैयक्तिक आक्षेप के रूप में लेना चाहिए, हम ऐसा उपबंध देश के भविष्य के लिए और संविधान के भविष्य के लिए करना चाहते हैं, चूंकि यदि वास्तविक संविधान के लागू होने में अनुचित विलम्ब होता है तो वह पुराना और व्यर्थ हो जाएगा और उससे संवैधानिक अराजकता भी उत्पन्न हो सकती है। मैं ऐसे लम्बे अन्तराल या अराजकता की स्थिति को रोकना चाहता हूं।

अत: मैं उत्सुक हूं कि जिस संविधान का हमने निर्माण किया है यह 26 जनवरी को संविधान के प्रारम्भ से छ: मास की अवधि में या अधिक से अधिक एक वर्ष की अवधि में पूरी तरह अस्तित्व में आ जाए। हमें भारत के लोगों को इस प्रकार का आश्वासन देना ही होगा कि 26 जनवरी, 1951 तक या किसी ऐसी तिथि तक नया संविधान प्रवृत्त हो जाएगा। मैं चाहता हूं कि यह ऐसा मामला है जिसके बारे में इस सदन का प्रत्येक सदस्य उतना ही उत्सुक है जितना कि मैं हूं। अत: मैं आशा करता हूं कि कोई भी सदस्य मेरे कथन को किन्हीं लोगों या लोगों के समूह पर वैयक्तिक आक्षेप के रूप में नहीं लेगा। मैं श्री भारती से पूछना चाहूंगा कि जिस आश्वासन का मैं उल्लेख कर रहा हूं क्या वह आश्वासन भारत के लोगों को देना उनका कर्तव्य नहीं है। मुझे आशा है कि उस आश्वासन को देने में वह भी मेरे सहयोगी होंगे।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** महोदय, क्या मैं माननीय सदस्य का ध्यान इस तथ्य की ओर दिला सकता हूं कि मैंने इसी सदन में निवेदन किया था कि निर्वाचन यथासम्भव शीघ्र होने चाहिये?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मेरे माननीय मित्र श्री सन्थानम ने प्रश्न के इस पहलू की ओर सदन का ध्यान आकर्षित किया है। मैं समझता हूं कि उन्होंने बिल्कुल ठीक ही कहा है कि संविधान में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि नयी विधान सभाएं कितने समय पश्चात् सत्ता में आ जाएंगी। यह बात बिल्कुल सही है कि यदि हम ऐसी व्यवस्था संविधान में नहीं करते सो हम निरन्तर अपना अस्तित्व बनाए रख सकते हैं, यद्यपि मुझे विश्वास है कि यह सदन ऐसा नहीं करेगा। हम इस आशय का एक संकल्प पारित कर चुके हैं कि वर्ष 1950 में हम निर्वाचन अवश्य करायेंगे। फिर भी वह मात्र एक प्रकार का परामर्श है। इस संविधान में एक समय-सीमा निर्धारित की ही जानी चाहिए। मेरे माननीय मित्र ने एक वर्ष के समय का सुझाव दिया है। परन्तु यह सब इस बात पर निर्भर कता है कि हमारी वर्तमान सरकार और जो नया मंत्रिमंडल हम नियुक्त करते हैं वह कितनी जल्दी निर्वाचन करा सकेंगे और संसद को पूर्ण बना सकेंगे। जो भी समय निर्धारित किया जाए, कोई अधिकतम सीमा अवश्य होनी चाहिए, एक वर्ष हो, डेढ वर्ष हो या अधिक से अधिक दो वर्ष हो। उन दो वर्षों की अवधि में नयी संसद और नये विधानमंडल अवश्य निर्वाचित होने चाहिएं। यदि

हम संविधान में इस आशय का उपबंध नहीं रखना चाहते तो हमें एक संकल्प पारित करना चाहिए जिसमें ऐसी व्यवस्था हो कि अमुक तिथि तक नई संसद का निर्वाचन हो जाएगा। देश के साथ और लोगों के साथ अन्याय होगा यदि उन्हें ज्ञात ही न हो कि कब तक...

*__डॉ. पी.एस. देशमुखः__ महोदय, मेरा एक व्यवस्था का प्रश्न है। इस आशय के संशोधन के अभाव में, मैं नहीं समझता कि इन टिप्पणियों का कोई परिणाम निकल सकता है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः__ मेरे माननीय मित्र श्री सन्थानम ने सुझाव दिया.......

*__अध्यक्षः__ माननीय सदस्य को पेश किये गए संशोधन पर सामान्य रूप से बोलने का अधिकार है। उन्होंने संशोधन से ही वह निष्कर्ष निकाला है और वह उस पर टिप्पणी कर रहे हैं।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः__ इस अनुच्छेद 312 में ऐसा कोई उपबंध नहीं है कि विधानमंडलों का कार्यकाल कब समाप्त होगा। यदि आप ध्यान से इस अनुच्छेद को देखें तो इसमें कहा गया है कि वे स्वतः ही नये विधानमंडल बन जाएंगे। आपने उनके लिए कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं की है। वे सदैव बने रह सकते हैं। इसीलिए मैं कहता हूं कि श्री सन्थानम ने सही प्रश्न उठाया है। हमें कोई समय-सीमा निर्धारित करनी ही चाहिए, चाहे संविधान में करें—और मैं समझता हूं कि ऐसा व्यवहार करना बेहतर होगा—चाहे किसी संकल्प द्वारा करें, जिससे कि उस समय-सीमा के समाप्त होने पर इन विधानमंडलों के पास कोई अधिकार न रह जाए और उनके स्थान पर नये विधानमंडल अस्तित्व में आएं। ऐसा करना न केवल संवैधानिक दृष्टि से आवश्यक है, अपितु देश के लोगों के लिए भी आवश्यक है, चूंकि वे कह सकते हैं कि इसमें विलम्ब होगा, इत्यादि, इत्यादि। यहां कोई समय-सीमा अवश्य निर्धारित की जानी चाहिए जिससे इस हेतु एक प्रकार से प्रोत्साहन मिलेगा कि ये विधानमंडल यथासम्भव शीघ्र अस्तित्व में लाए जाएं। मैं कह नहीं सकता कि समय-सीमा क्या हो, एक वर्ष, डेढ़ वर्ष या दो वर्षों की सीमा निर्धारित की जा सकती है। हाल ही में, नये राज्य संघ बनाए गए हैं। और वहां प्रबन्ध करने के लिए एक वर्ष की कालावधि अपर्याप्त हो सकती है। कुछ भी हो, कालावधि दो वर्षों से अधिक नहीं होनी चाहिए। दो वर्षों के अन्त में, हमारे देश में नई संसद और प्रत्येक राज्य का नया विधानमंडल अवश्य बने।

*__श्री बी. दास__ (उड़ीसाः जनरल)**:** महोदय, मुझे अपने माननीय मित्र श्री सन्थानम का यह विचार सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई कि संविधान एक निश्चित तिथि तक लागू हो जाना चाहिए। मेरा अपने कांग्रेस मंत्रिमंडल का यह अनुभव रहा है कि वे निर्धारित समय का पालन नहीं करते। उन्होंने उन उत्तरदायित्वों को निभाने से बचने का प्रयास किया है जो इस सदन के या संसद के नहीं अपितु मंत्रिमंडल के उत्तरदायित्व हैं। मान लीजिए हम जनवरी, 1951 की समय-सीमा निर्धारित करते हैं तो मंत्रिमंडल के मंत्रियों और प्रान्तों में मंत्रियों का कर्तव्य हो जाएगा कि वे निर्वाचन-क्षेत्रों का परिसीमन कराएं और मतदाता सूचियां तैयार कराएं। क्या मेरे माननीय मित्र श्री सन्थानम या यहां उपस्थित मंत्रिमंडल का कोई अन्य सदस्य मुझे बता सकता है कि इस माननीय सदन की इच्छाओं का पालन करने के लिए उन्होंने कहां तक प्रगति की है? हम, जो जनता के प्रतिनिधि हैं, देश की जागरूक लोकतांत्रिक राय व्यक्त करनी होती है। हमने प्रारूप संविधान के उन संवैधानिक पहलुओं को कार्य रूप देने के लिए इन मंत्रिमंडलीय मंत्रियों को और इनके सहयोगियों को कार्यपालिका के रूप में नियुक्त किया है। यदि वे अपने कर्तव्यों

[श्री बी. दास]

का पालन नहीं करते तो विधान सभाओं को भंग करने हेतु एक निश्चित तिथि निर्धारित करने के लिए इस सदन को कहने का कोई उपयोग नहीं है। मैं एक बात जानना चाहता हूं। मान लीजिए 1 जनवरी, 1951 की तिथि निर्धारित कर दी जाती है और मान लीजिए कार्यपालिका, चाहे वह हमारा अपना कांग्रेस मंत्रिमंडल हो या प्रांतों के मंत्रिमंडल हों, इस उत्तरदायित्व का निर्वहन नहीं करती तो क्या मेरे माननीय मित्र श्री सन्थानम या यहां उपस्थित अन्य मंत्री हमें बताएंगे कि इस संविधान में या उस संकल्प में, जो अन्त में इस सदन को पारित करना होगा, कैसे व्यवस्था की जाए कि यहां के मंत्रिमंडल को और प्रांतों के मंत्रिमंडल को ऐसे आदर्शों का पालन करना ही होगा? मैं घोड़े को पानी तक तो ले जा सकता हूं परन्तु मैं उसे पानी पीने के लिए बाध्य नहीं कर सकता। लोग मंत्री तो नियुक्त कर सकते हैं, परन्तु मंत्रियों को ही वे समस्याएं हल करनी होंगी जिनके लिए उन्हें भारत सरकार के कार्यपालिका प्रमुख के रूप में नियुक्त किया जाता है। भारत सरकार की और प्रांतीय मंत्रियों की अतीत की परम्पराओं से इस बात का पता नहीं चलता कि वे लोकतंत्र के लिए सब कुछ जल्दी-जल्दी करना चाहते हों। मैं किसी मंत्री पर आक्षेप नहीं कर रहा हूं परन्तु मैं यह अवश्य कहता हूं कि 15 अगस्त, 1947 के पश्चात् गरीबी दूर करने के लिए, सामाजिक न्याय करने के लिए, उनके सामूहिक काम से ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि वे इस संविधान में समाविष्ट उन लोकतांत्रिक सिद्धान्तों को कार्य रूप देने के लिए बहुत उत्सुक रहे हों। यह काम सरकार और मंत्रिमंडल के सदस्यों और उनके सहयोगी अन्य मंत्रियों का है कि वे इस विषय पर विचार-विमर्श करके एक संकल्प लाएं जिस पर यह सदन पूरी सहानुभूति से विचार करेगा। मेरी इच्छा तो यह है कि यह सदन 26 जनवरी, 1950 को भंग कर दिया जाए, परन्तु मुझे विश्वास नहीं है, और मैं नहीं समझता कि वर्तमान मंत्रिमंडल ने और उनके सहयोगी अन्य मंत्रियों ने इस संविधान को कार्य रूप देने सम्बंधी समस्याओं पर विचार किया है। सदन के भीतर और बाहर यह दायित्व मंत्रिमंडलीय मंत्रियों का है, न कि इस सदन के सदस्यों का। परन्तु मैं उनका इस बात पर समर्थन करने के लिए तैयार हूं कि सदन ऐसे संकल्प पर विचार करे और उसे पारित करें कि संविधान को कार्य रूप देने में विलम्ब नहीं किया जाना चाहिए। उसका उत्तरदायित्व, उसे कार्य रूप देने का उत्तरदायित्व, यहां के और प्रांतों के मंत्रिमंडलों के सदस्यों का है, न कि हमारा या इस लोकतांत्रिक सदन का।

*__श्री एच.वी. कामतः__ अध्यक्ष महोदय, पिछले कुछ दिनों में हमारी रेलगाड़ियों की, यहां तक कि प्रसिद्ध ग्रांड ट्रंक एक्सप्रैस की भी गति तेज हो जाने के साथ यही उचित था कि हमारे रेल राज्यमंत्री श्री सन्थानम सदन के समक्ष आएं और संविधान निर्माण की गति तेज करने के लिए कहें। यह अनिवार्य है, यह बहुत वांछनीय है कि वह ऐसा करें। परन्तु वह भी यह बात भूल नहीं सकते कि ग्रांड ट्रंक एक्सप्रैस आज भी निर्धारित समय के अनुसार नहीं चलती। पिछले इतवार जब मैं यहां पहुंचा तो ग्रांड ट्रंक एक्सप्रैस साढ़े पांच या छः घण्टे देर से चल रही थी।

*__एक माननीय सदस्यः__ पंजाब मेल भी।

*__श्री एच.वी. कामतः__ पंजाब मेल के बारे में तो मैं जानता नहीं, ग्रांड ट्रंक एक्सप्रैस निर्धारित समय से 6 घंटे पीछे चल रही थी, मैं 8.10 या 8.15 बजे की बजाय 2.30 बजे पहुंचा था।

*__माननीय श्री के. सन्थानमः__ माननीय सदस्य को याद होगा कि बाढ़ आई हुई थी।

*__श्री आर.के. सिधवाः__ नये इंजनों वाली गाड़ियां लेट हो जाती हैं।

***अध्यक्षः** मैं आशा करता हूं कि सदस्य बाढ़, रेलों के देरी से चलने और देरी से पहुंचने की चर्चा न करके, अपनी बात को संविधान तक सीमित रखेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं उसी बात पर आ रहा था। मेरे माननीय मित्र श्री सन्थानम ने जो प्रश्न उठाया है......

***अध्यक्षः** उन्होंने रेलों के समय और बाढ़ का प्रश्न नहीं उठाया।

***श्री एच.वी. कामतः** महोदय, मुझे आशा है कि जो उदाहरण मैंने दिया है वह आप समझ गये होंगे। मैं यह बात करना चाहता था कि हम अपने मन में निश्चय कर लेते हैं और बहुत अच्छे संकल्प भी पारित कर लेते हैं परन्तु कहीं न कहीं किसी न किसी कारण बाधाएं उत्पन्न हो जाती हैं। मैं सदन को स्मरण करा दूं कि संसार में ऐसी श्रेष्ठ शक्तियां भी हैं जो जन-जीवन की भाग्य-निर्माता हैं। मैं चाहता हूं कि राज्यमंत्री के नाते श्री सन्थानम यह बात ध्यान में रखें कि इस विशाल जगत में कहीं कुछ भी हो सकता है जिससे हमारी सब योजनाएं धरी-धराई रह सकती हैं। मान लीजिए—ईश्वर न करे—कल यूरोप में युद्ध छिड़ जाए, तब संविधान के अध्याय 11 के अन्तर्गत सब उपबंध स्थगित कर दिये जायेंगे और निर्वाचन नहीं होंगे। फिर, मान लीजिए कि देश में गड़बड़ हो जाती है या पुनरुत्थान हो जाता है, आपातकाल की घोषणा हो जाती है, तब राष्ट्रपति सब शक्तियां अपने हाथ में ले लेंगे।

मेरी शीघ्र निर्वाचन कराये जाने की इच्छा किसी से भी कम नहीं है। यदि आवश्यक हो तो आगामी फरवरी मास में निर्वाचन करा लीजिए, परन्तु निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होने चाहिएं, न कि "कैबिनेट मिशन" की पुरानी योजना के अनुसार। हमने गत वर्ष संकल्प पारित करके कहा था कि मतदाता सूचियां यथासम्भव शीघ्र तैयार की जाएं ताकि 1950 में निर्वाचन कराए जा सकें। क्या हमने शब्द एवं भावना में उस संकल्प को कार्यान्वित किया है? प्रान्तों तथा रियासतों की सरकारों ने मतदाता सूचियां तैयार करने के इस कार्य में कितनी प्रगति की है? पूर्व इसके कि श्री सन्थानम संविधान के अन्तर्गत निर्वाचनों के लिए समय-सीमा निर्धारित करने की बात कहें, उन्हें इस पर कुछ प्रकाश डालना चाहिए। मैं इस सभा को भंग करने के विरुद्ध नहीं हूं, परन्तु 1946 की पुरानी योजना के अनुसार निर्वाचन कराने का क्या उपयोग है? यदि निर्वाचन कराए जाने हैं तो वे निश्चय ही नये संविधान के अन्तर्गत होने चाहिएं।

***अध्यक्षः** श्री सन्थानम ने पुरानी योजना की बात नहीं सोची।

***श्री एच.वी. कामतः** उन्होंने सदन को भंग करने और फिर से निर्वाचन कराने की बात कही है।

***अध्यक्षः** "कैबिनेट मिशन" योजना के अंतर्गत नहीं।

***श्री एच.वी. कामतः** मुझे खेद है, महोदय। तब तो एक ही मार्ग है और वह है इस संविधान के अंतर्गत निर्वाचन कराने का, जिससे मैं सहमत हूं परन्तु इससे जो कठिनाइयां उत्पन्न होंगी उन्हें ध्यान में रखते हुए क्या उन्हें अपने मन में विश्वास है कि यदि हम समय-सीमा निर्धारित करते हैं तो हम निर्वाचन करा सकेंगे? हम एक संकल्प पारित करके विभिन्न सरकारों को निर्देश दे सकते हैं कि वे निर्वाचन के लिए तैयारियां कर लें। श्री सन्थानम ने फ्रांस के संविधान का

[श्री एच.वी. कामत]

उल्लेख किया। मैंने फ्रांस के नवीनतम संविधान का तो अध्ययन नहीं किया परन्तु मैं उन्हें बता सकता हूं कि बॉन संविधान में और इटली के नवीनतम संविधान में नए संविधान के अर्न्तगत निर्वाचन कराने के लिए कोई तिथि निर्धारित नहीं कर गई है।

जहां तक श्री त्यागी द्वारा उठाये गये प्रश्न का संबंध है, मैं उनसे सहमत हूं कि इस अनुच्छेद में खण्ड (3) का समावेश करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमने आदतन इसे सम्मिलत कर लिया है। क्या मैं डॉ. अम्बेडकर को और प्रारूप समिति को बता सकता हूं कि भाग छः के अध्याय 3 में राज्य विधानमंडलों का उल्लेख है? वह मुख्य शीर्षक है और राज्य विधानमंडल के अधिकारियों के विषय में उसका एक भाग है—एक उप-अध्याय। जब हम राज्य के सम्पूर्ण विधानमंडल की निरंतरता को अन्तरिम रूप से बनाये रखने के लिए उपबन्ध कर रहे हैं तो क्या विशेष रूप से अध्यक्ष का उल्लेख करने में कोई सार्थकता है, और यदि प्रारूप समिति और डॉ. अम्बेडकर ऐसा करना आवश्यक समझते हैं तो डिप्टी स्पीकर और उपरि सदन के डिप्टी प्रेजीडेंट का भी उल्लेख क्यों न किया जाए? भाग छः के अध्याय 3 में उनका उल्लेख किया गया है। अन्यथा इनको पूर्णतया हटा दिया जाए चूंकि ये सब समूचे रूप में विधानमंडल के अंग हैं और इस अनुच्छेद 312 के खण्ड (1) और खण्ड (2) में समूचे रूप में राज्य विधानमंडल का उल्लेख किया गया है, अतः अन्य सब कुछ यहां तक कि कार्य-संचालन आदि भी इस अध्याय 3 के अंग हैं। यदि इस खण्ड को आवश्यक माना जाता है तो सदस्यों के विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों के लिए भी यह कह कर कि वे संविधान के प्रारम्भ से पहले की भांति विद्यमान रहेंगी या इसी प्रकार की कोई अन्य बात कहकर उपबन्ध में क्यों नहीं किया जाए। अतः मेरा सुझाव है कि खण्ड (3) को हटा दिया जाए।

***अध्यक्षः** श्री भारती, बेहतर है कि आप इस विषय पर थोड़ा ही बोलें चूंकि यह वास्तव में प्रस्तुत अनुच्छेद से उत्पन्न नहीं होता।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारतीः** बहुत अच्छा, महोदय मेरा बोलने का बिल्कुल इरादा नहीं था। मैं संक्षेप में आपके और माननीय सदन के ध्यान में यह बात लाऊंगा कि हमने क्या किया है। क्या श्री सन्थानम का दृष्टिकोण यह है कि यदि हम एक निश्चित तिथि निर्धारित नहीं करते तो यह धारणा बन सकती है कि सम्भवतया यह सदन निरन्तर बना रहना चाहता है और निर्वाचन कराने में विलम्ब करना चाहता है, जिसके भीषण परिणाम हो सकते हैं। मैं यह बात आपके और इस सदन के ध्यान में लाना चाहता हूं कि यह सदन माननीय पंडत नेहरू द्वारा 8 जनवरी, 1949 को पेश किये गये एक संकल्प को पहले ही पारित कर चुका है, जब वाइस प्रेजीडेंट पीठासीन थे। मैं मामले के इस पहलू की ओर ही ध्यान आकर्षित करना चाहता था। संकल्प का पाठ इस प्रकार हैः

> "संकल्प किया जाता है कि मतदाता सूचियां तैयार करने और सभी आवश्यक कदम उठाने के लिए सम्बन्धित प्राधिकारियों को तुरन्त अनुदेश जारी किए जाएं ताकि नये संविधान के अर्न्तगत विधानमंडलों के निर्वाचन वर्ष 1950 में यथासम्भव शीघ्र हो सकें।"

8 जनवरी, 1949 को यह संकल्प हमने पारित किया था। इस संकल्प पर बोलते हुए डॉ. अम्बेडकर ने इस संकल्प के विस्तार का स्पष्ट उल्लेख किया है। मैं उसका केवल एक अंश पढ़कर सुनाऊंगाः

"इस संकल्प का उद्देश्य केवल यह घोषणा करना है कि इस सभा का इरादा यह है कि जहां तक सम्भव हो निर्वाचन वर्ष 1950 में किसी समय हों, परन्तु संकल्प का वास्तविक उद्देश्य यह है कि मतदाता सूचियां, जो सब निर्वाचनों का आधार होती हैं, तैयार करने वाले प्रभारी प्राधिकारियों को कुछ ठोस निर्देश दिये जाएं। मात्र यह घोषणा करना निरर्थक एवं उद्देश्यहीन होगा कि इस संविधान सभा की इच्छा है कि निर्वाचन 1950 में होने चाहिए, इत्यादि।"

अतः हम यह संकल्प पहले ही पारित कर चुके हैं और मैं नहीं सोच सकता कि श्री सन्थानम समझते हैं कि यह संकल्प नाम के लिए ही पारित किया गया है और इसे कार्य रूप देने का कोई इरादा नहीं है। मैं समझता हूं कि वह ऐसा नहीं सोचते। इस सभा ने यही सोचकर यह संकल्प पारित किया है कि यथासम्भव शीघ्र निर्वाचन कराए जाएं। मैं केवल इसलिए चिन्तित हूं कि बाहर यह धारणा न बने कि यह सभा किसी न किसी तरह अपना अस्तित्व निरन्तर बनाए रखना चाहेगी। हमारे मन में यह बात कभी नहीं आनी चाहिए कि निर्वाचन कराने में उस समय से एक मिनट भी विलम्ब हो जो परिस्थितियों के अनुसार पूर्णतया आवश्यक हो जाये, परन्तु यह व्यावहारिक कठिनाई तो है ही। मान लीजिए हम एक तिथि निर्धारित कर देते हैं, उसका क्या अर्थ है? यदि किन्हीं अप्रत्याशित परिस्थितियों के कारण हम निर्वाचन नहीं करा सके तो हम क्या करेंगे? इसीलिए मैं कहता हूं कि यह नहीं समझा जाना चाहिए कि कोई तिथि निर्धारित नहीं करने का अर्थ है कि यह सभा अपना अस्तित्व बनाए रखना चाहती है। पहले ही हम संकल्प पारित कर चुके हैं और हम इसके अनुसार कार्य करना चाहते हैं और इस सभा का यही इरादा है कि निर्वाचन यथासम्भव शीघ्र कराए जाएं। महोदय, मैं केवल यही बात सदन के ध्यान में लाना चाहता था।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता कि इस प्रश्न पर चर्चा जारी रखना आवश्यक है। यदि मुझे यह सूचना मिली होती कि यह प्रश्न उठाया जाएगा तो मैं इस बारे में उठाये गये कदमों के विषय में अद्यतन रिपोर्ट प्राप्त कर लेता और यदि सम्भव हुआ तो आज नहीं तो कल, मैं इस बारे में एक रिपोर्ट सभा के समक्ष रखूंगा जिसमें दर्शाया गया हो कि मतदाता सूचियां तैयार करने और निर्वाचनों सम्बन्धी अन्य मामलों के विषय में क्या कदम उठाए जा चुके हैं और कितनी प्रगति हो चुकी है। जैसा कि बताया जा चुका है, इस सभा ने इस आशय का संकल्प पारित किया है कि इस दिशा में कदम उठाए जाने चाहिए और संविधान सभा सचिवालय इस विषय में उठाये गये कदमों के सम्बन्ध में प्रान्तीय सरकारों के साथ पत्र-व्यवहार करता रहा है और कदम निस्संदेह उठाए गए हैं। मेरी केवल यही इच्छा है कि माननीय सदस्य यह याद रखें कि हमने वयस्क मताधिकार का प्रयोग करने का निश्चय किया है और यदि हम सोचें कि इसका निहित अर्थ क्या है तो यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि यह काम कितना बड़ा है। हमारी इस समय जितनी जनसंख्या है और मतदाताओं के पंजीयन पर आधारित जो जानकारी हमारे पास है उससे पता चलता है कि हमारी मतदाता सूचियों में 17 करोड़ और 18 करोड़ के बीच नाम होंगे। इतनी बड़ी मतदाता सूचियों के मुद्रण का ही काम बहुत बड़ा काम है जिसे करने में, इतना बड़ा काम करने वाले मुद्रणालयों का पता लगाने में हमारी सरकारों को काफी कठिनाई आ रही है। मैं स्वयं एक दिन हिसाब लगा रहा था कि सभी प्रांतों के लिए मतदाता सूचियों का आकार-प्रकार कितना बड़ा होगा और मैंने देखा कि वह लगभग तीन चौथाई फरलांग बैठेगी। यदि हम इस तथ्य को ध्यान में रखें तो आप मानेंगे कि यदि इस काम में विलम्ब होता है तो वह प्रान्तीय या केन्द्रीय सरकार द्वारा जानबूझ कर किया हुआ नहीं होगा अपितु इसलिए होगा कि यह काम ही इतना बड़ा है।

[अध्यक्ष]

मैं समझता हूं कि इस प्रश्न पर सभी प्रकार की अटकलबाजियां इससे समाप्त हो जानी चाहिए। हम भरसक प्रयास कर रहे हैं और वर्तमान परामर्श के अनुसार जो सूचना हमें प्रांतों से प्राप्त हुई है उससे हमें आशा हो गई है कि निर्वाचन 1950-51 की शरद ऋतु के दौरान, अर्थात् नवम्बर 1950 और फरवरी या मार्च 1951 के दौरान किसी समय होंगे। हम यही आशा करते हैं। परन्तु यदि अप्रत्याशित कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं तो यह नहीं कहा जा सकता कि हमें उस समय क्या करना पड़े।

***श्री आर.के. सिधवा:** महोदय, जो कुछ आपने कहा है कि उसके पश्चात् मैं कोई भाषण नहीं देना चाहता। परन्तु मैं केवल इतना ही कहना चाहूंगा कि श्री सन्थानम ने जो कुछ कहा है उससे इस सदन से बाहर जनता के मन में बहुत बुरी धारणा बन सकती है। अत: महोदय, मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि आपने स्थिति स्पष्ट कर दी है। मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि श्री सन्थानम को, जो एक जिम्मेदार मन्त्री हैं, इतने उत्तरदायी ढंग से नहीं बोलना चाहिए था। इस संविधान सभा के पश्चात् निर्वाचन की तिथि कौन निर्धारित करेगा? तब मंत्रिमंडल यह कार्य करेगा। वह छ: माह पश्चात् तिथि निर्धारित करे, परन्तु इसका निर्णय उन्हें करना होगा और उनके लिए यह कहना उचित नहीं है कि सदन अपना कार्यकाल निरन्तर बनाए रखना चाहता है। महोदय, मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि आपने इस बारे में काफी रुचि लेकर कहा है कि निर्वाचन यथासम्भव शीघ्र होंगे। मुझे यह बात कहनी पड़ी ताकि ऐसा न हो कि श्री सन्थानम के कथन से गलत धारणा बन जाए। मुझे बड़ा खेद है कि उन्होंने इस प्रकार की बात कही।

***अध्यक्ष:** मैं तो नहीं समझता कि उन्होंने ऐसा कहा है। मैं नहीं समझता कि यह टिप्पणी न्यायोचित है। मैं इस पर आगे चर्चा करना नहीं चाहता। मैं नहीं समझता कि यह आवश्यक है। यदि कोई सदस्य अनुच्छेद के विषय में बोलना चाहे तो वह बोल सकता है।

***श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर** (मद्रास: जनरल): महोदय, वर्तमान विधानमंडलों के सदन या सदनों को बनाये रखने के लिए विस्तृत उपबंध किए गए हैं और मंत्री नियुक्त करने के लिए उपबंध हैं। परन्तु इस संक्रमण-काल में, यदि आवश्यक हो जाए तो, किसी सदन को भंग करने के लिए कोई उपबन्ध नहीं है। महोदय, किसी सदन को भंग करने की आवश्यकता पड़ सकती है और उस दृष्टि से श्री सन्थानम द्वारा दिया गया सुझाव बहुत आवश्यक हो जाता है। क्या कोई यह चाहेगा कि इस सभा का कार्यकाल आगे बढ़े? जी, नहीं। परन्तु ऐसे किसी उपबंध के अभाव को देखते हुए.....

***श्री आर.के. सिधवा:** महोदय, आपने कहा है कि इस प्रश्न पर और चर्चा नहीं होनी चाहिए तो क्या यह संगत है?

***श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर:** मैं तो केवल यह कह रहा हूं कि विधानमंडलों के वर्तमान सदनों को भंग करने के लिए कोई उपबंध नहीं है। मुझे प्रसन्नता है कि श्री सिधवा ने यह कहने के लिए कि यह संगत है या नहीं है अध्यक्ष महोदय की जगह ले ली है। मैं तो केवल विधानमंडलों को भंग करने के लिए उपबंधों के न होने की बात कह रहा था। यदि सदन तीन या चार वर्षों तक चलता है तो आवश्यकता पड़ने पर इसको भंग करने के लिए भी कोई उपबंध होना चाहिए। अत: मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि वे इस बारे में गंभीरता

से विचार करें। क्या हमें वर्तमान सदनों को अधिक अवधि के लिए और सदा के लिए बने रहने का अधिकार देना है, चाहे ऐसा देश के हित में न हो? अनेक ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं जब सदस्यों को लिए मतदाओं का मत प्राप्त करना आवश्यक हो जाए। उदाहरण के लिए जिन प्रान्तों में मद्यनिषेध लागू नहीं है वहां इसे लागू करने का प्रश्न हो सकता है। या कोई अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न हो सकता है जिस पर हमें मतदाताओं का मत प्राप्त करना आवश्यक हो। तब क्या स्थिति होगी? यह एक कमी है जिसे दूर किया जाना चाहिए। मैं अब भी आग्रह करूंगा कि अभी समय है कि हम वर्तमान सदनों को भंग करने के बारे में उपबंध कर लें।

जहां तक विशेषाधिकारों का संबंध है जिसका मेरे मित्र ने उल्लेख किया है, मैं समझता हूं कि कार्य क्षेत्र, विषय-वस्तु इत्यादि के सम्बंध में वर्तमान सदनों का कार्य वर्तमान उपबन्धों के अनुसार चलता और विनियमित होता रहेगा। यह उन सूचियों के अनुसार होगा जो इस संविधान के साथ संलग्न हैं। विषय-वस्तु, कार्य-क्षेत्र और अन्य सभी क्रियाकलापों के विषय में तथा जिन नियमों एवं विनियमों के अनुसार वे कार्य करते हैं उनके विषय में संविधान के उपबन्ध लागू होंगे। अत: पहले की धाराओं में संसद सदस्यों को जो भी विशेषाधिकार हमने प्रदान किए हैं वे संसद सदस्यों को प्राप्त होंगे। एक ही अपवाद है कि संक्रमण-काल में निर्वाचन नहीं होंगे। संसद में प्रक्रिया संबंधी तथा प्रांतों में विधान-मंडलों की शक्तियों संबंधी अन्य सभी उपबंधों का विनियमन अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्तियों आदि द्वारा होगा।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र** (पश्चिम बंगाल: जनरल): महोदय, मैं चाहता हूं कि एक बात स्पष्ट की जाए माननीय सदस्य कौन से सदन को भंग करने की बात कर रहे हैं?

***श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर:** मैं विधानमंडल के सदन या सदनों को भंग करने की बात कर रहा हूं। कभी गम्भीर मतभेद हो सकते हैं कि देश के लोगों का मत प्राप्त करना पड़े। प्रधानमंत्री या गवर्नर विधानमंडल को भंग कर सकता है जिससे कि किसी महत्वपूर्ण विषय के बारे में लोगों का मत प्राप्त किया जा सके।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र:** क्या माननीय सदस्य के कहने का तात्पर्य यह है कि संक्रमण-काल में मतदाताओं को किसी विशिष्ट विषय पर अपना मत देने का अवसर मिलना चाहिए?

***श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर:** जी हां।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र:** संक्रमण-काल में भी? और सामान्य निर्वाचन भी हों? यह अनर्गल है।

***श्री अनन्तशयनम आयंगर:** यह इस पर निर्भर करता है कि संक्रमण-काल कितने समय तक रहता है। यदि थोड़ा रहता है तो हो सकता है कि विधानमंडल भंग करना आवश्यक ही न हो। परन्तु यदि संक्रमण-काल लम्बा हो तो क्या होगा? हम जानते हैं कि प्रत्येक वर्तमान सदस्य संसद या विधायक बने रहने के लिए उत्सुक होगा और प्रत्येक व्यक्ति जिसे अवसर नहीं मिला वह चाहेगा कि सदन भंग हो और उसे अवसर मिले। मैं किसी विशेष पर आक्षेप नहीं कर रहा हूं। मेरा तो इतना ही कहना है कि जिन परिस्थितियों का मैंने उल्लेख किया है उनमें कोई ऐसा उपबंध अवश्य होना चाहिए ताकि, यदि आवश्यक हो तो, विधान सभा को बदलने और मतदाताओं का मत प्राप्त करने का अवसर मिले।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, आपने जो कुछ कह दिया उसके पश्चात् मैं नहीं समझता कि मेरे लिए आगे कुछ कहना आवश्यक है। जहां तक संशोधित अनुच्छेद के गुण-दोषों का सम्बन्ध है इस बारे में मुझे कोई उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है, चूंकि किसी सदस्य ने कुछ कहा ही नहीं है।

***श्री एच.वी. कामत:** "स्पीकर" सम्बन्धी खण्ड की क्या स्थिति है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वह तो मूल प्रारूप में ही था।

***अध्यक्ष:** अब मैं अनुच्छेद 312 सभा के मतदान के लिए रखूंगा। प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 312 संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 312 संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 312-क से 312ङ, 312-छ और 312-ज

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 312 के पश्चात् निम्नलिखित नये अनुच्छेद रखे जाएं:

Provisions as to provisional Governor of Provinces.

'312A. Any person holding office as Governor in any Province immediately before the commencement of this Constitution shall after such commencement be the provisional Governor of the corresponding State for the time being specified in Part I of the First Schedule until a new Governor has been appointed in accordance with the provisions of Chapter II of Part VI of this Constitution and has entered upon his office.

Council of Ministers of Provisional Governors.

312B. Such persons as the provisional Governor of a State may appoint in this behalf shall become members of the Council of Ministers of the provisional Governor under this Constitution and until appointments are so made all persons holding office as Ministers for the corresponding State immediately before the commencement of this Constitution shall become and shall continue to hold office as members of the Council of Ministers of the provisional Governor of the State under this Constitution.

Provisions as to provisional Legislatures in States in Part III of the First Schedule.

312C. Until the House or Houses of the Legislature of a State for the time being specified in Part III of the First Schedule has or have been duly constituted and summoned to meet for the first session under the provisions of this Constitution the body or authority functioning immediately before such commencement as the

Legislature of the corresponding Indian State shall exercise the power and perform the duties conferred by the provisions of this Constitution on the House or Houses of the Legislature of the State so specified.

312D. Such persons as the Rajpramukh of a State for the time being specified in Part III of the First Schedule may appoint in this behalf shall become members of the Council of Ministers of such Rajpramukh under this Constitution and until appointments are so made all persons holding office as Ministers immediately before the commencement of this Constitution in the corresponding Indian State shall become and shall continue to hold office as members of the Council of Ministers of such Rajpramukh under this Constitution.

Council of Ministers for States in Part III of the First Schedule.

['312क. इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले जो व्यक्ति किसी प्रान्त में राज्यपाल के रूप में पदस्थ है वह ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रथम अनुसूची के भाग 1 में इस समय उल्लिखित तत्स्थानी राज्य का अस्थायी राज्यपाल तब तक होगा जब तक कि इस संविधान के भाग 6 के अध्याय 2 के उपबंधों के अनुसार नया राज्यपाल नियुक्त न हो गया हो और उसने अपना पद ग्रहण न कर लिया हो।

प्रान्तों के अस्थायी राज्यपालों के बारे में उपबंध

312ख. ऐसे व्यक्ति, जिन्हें किसी राज्य का अस्थायी राज्यपाल इस हेतु नियुक्त करे, इस संविधान के अधीन अस्थायी राज्यपाल की मंत्रिपरिषद के सदस्य होंगे तथा जब तक नियुक्तियां इस प्रकार की जायें तब तक इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी राज्य के लिए मंत्रियों के रूप में पदस्थ सब व्यक्ति इस संविधान के अधीन उस राज्य के अस्थायी राज्यपाल की मंत्रिपरिषद् के सदस्य हो जायेंगे तथा उस रूप में पदस्थ बने रहेंगे।

अस्थायी राज्यपालों की मंत्रिपरिषद

312ग. जब तक प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य के विधानमंडल का सदन या के सदन इस संविधान के उपबन्धों के अधीन सम्यक् रूप से गठित न हो जायें तथा प्रथम सत्र में अधिवेशित होने के लिए आहुत न हो जायें तब तक वह निकाय या प्राधिकारी जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी देशी राज्य के विधानमंडल के रूप में कृत्यकारी था, इस प्रकार उल्लिखित राज्य के विधानमंडल के सदन या सदनों को इस संविधान के उपबंधों द्वारा दी गयी शक्तियों का प्रयोग तथा कर्तव्यों का पालन करेगा।

प्रथम अनुसूची के भाग 3 में राज्यों में अस्थायी विधान-मंडलों के बारे में उपबंध

312घ. ऐसे व्यक्ति जिन्हें प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित किसी राज्य का राज्यप्रमुख इस हेतु नियुक्त करे, इस संविधान के अधीन ऐसे राजप्रमुख की मंत्रिपरिषद् के सदस्य होंगे तथा जब तक नियुक्तियां इस प्रकार की न जायें तब तक इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी देशी राज्य के लिए मंत्रियों के रूप में पदस्थ सब व्यक्ति इस संविधान के अधीन ऐसे राजप्रमुख की मंत्रिपरिषद् के सदस्य हो जायेंगे तथा इस रूप में पदस्थ बने रहेंगे।' "]

प्रथम अनुसूची के भाग 3 में राज्यों के लिए मंत्रिपरिषद

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

अनुच्छेद 312-ड. के स्थान पर मैं संशोधन संख्या 21 का प्रस्ताव करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 16 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 312-ड. के स्थान पर यह रखा जाए–

Provision as to Bill pending in the dominion Legislature and in the Legislatures of Provinces and Indian States.

'312E. For the purposes of elections held under any of the provisions of this Constitution during a period of three years from the commencement of this Constitution, the population of India or any Part thereof may not-withstanding anything contained in this Constitution be determined in such manner as the President may by order direct.'

312G. A Bill which immediately before the commencement of this Constitution was pending in the Legislature of the Dominion of India or in the Legislature of any Province or Indian State may subject to any provision to the contrary, which may be included in rules made by Parliament or the Legislature of the corresponding State under this Constitution be continued in Parliament or the Legislature of the corresponding State as the case may be as if the proceedings taken which reference to the Bill in the Cominion Legislature or in the Legislature of the Province or Indian State had been taken in Parliament or the Legislature of the corresponding State.

Transactions occurring between the commencement of the Constitution and 31st of March 1950.

312H. The provisions of this Constitution relating to the Consolidated Fund of India or of any State and appropriation of moneys out of such fund shall not apply in relation to moneys received or raised or expenditure incurred by the Government of India or the Government of any State between the commencement of this Constitution and the thirty first day of March 1950 both days inclusive and any expenditure incurred during that period shall be deemed to be duly authorised if the expenditure was specified in a schedule of authorised expenditure authenticated in accordance with the provisions of the Government of India Act, 1935 by the Governor General of the Dominion of India or the Governor of the corresponding Province or is authorised by the Rajpramukh of the State in accordance with such rules as were applicable to the authorisation of expenditure from the revenues of the corresponding Indian State immediately before such commencement.'

['312ड. इस संविधान के प्रारम्भ से तीन वर्ष की कालावधि में इस संविधान के उपबंधों में से किसी के अधीन किये गये निर्वाचनों के प्रयोजनों के लिए भारत या उसके किसी भाग की जनसंख्या का निर्धारण, इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, ऐसी रीति से किया जा सकेगा जैसाकि राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्देशित करे।']

[312-छ. कोई विधेयक जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले भारत डोमिनियन के विधानमंडल में अथवा किसी प्रांत या देशी राज्य के विधानमंडल में लम्बित था, किसी ऐसे प्रतिकूल उपबंध के अधीन रह कर जो यथास्थिति संसद अथवा तत्स्थानी राज्य के विधानमंडल द्वारा इस संविधान के अधीन निर्मित नियमों के अन्तर्गत किया जाए, यथास्थिति, संसद में अथवा तत्स्थानी राज्य के विधानमंडल में इस प्रकार चालू रखा जा सकेगा मानो कि डोमिनियम विधानमंडल में अथवा उस प्रान्त या देशी राज्य के विधानमंडल में उस विधेयक के बारे में की गई कार्यवाहियां संसद में या तत्स्थानी राज्य के विधानमंडल में की गई थीं।

डोमिनियन विधानमंडल में तथा प्रांतों और भारतीय राज्यों के विधानमंडलों में लम्बित विधेयकों के बारे में उपबंध।

312-ज. भारत की अथवा किसी राज्य की संचित निधि से ऐसी निधि में धनों के विनियोग से सम्बद्ध इस संविधान के उपबंध इन धनों के संबंध में लागू न होंगे जो धन कि इस संविधान के प्रारम्भ के दिन तथा 1950 की मार्च के 31वें दिन के बीच, इन दोनों दिनों को सम्मिलित करके, भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार द्वारा प्राप्त या उत्थापित या व्यय किये गये हों तथा उस कालावधि में किया गया कोई व्यय, प्राधिकृत व्यय की ऐसी अनुसूची में उल्लिखित है जो भारत डोमिनियन के गवर्नर-जनरल या तत्स्थानी प्रांत के राज्यपाल द्वारा भारत शासन अधिनियम, 1935 के उपबंधों के अनुसार प्रमाणीकृत है अथवा राज्य के राजप्रमुख द्वारा ऐसे नियमों के अनुसार जो ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी देशी राज्य के राजस्वों में से व्यय को प्राधिकृत करने के लिए लागू थे, प्राधिकृत कर दिया गया है तो वह व्यय सम्यक् रूप से प्राधिकृत किया गया समझा जायेगा।' "]

संविधान के प्रारम्भ और 31 मार्च, 1950 के मध्य सम्पन्न हुआ कार्य।

मैं नहीं समझता कि इन अनुच्छेदों को कष्ट करने के लिए कुछ कहना आवश्यक है।

'नोटिस पेपर' में दो संशोधन हैं, संशोधन संख्या 18 और संशोधन संख्या 19, जिनके द्वारा अनुच्छेद 312-क और अनुच्छेद 312-ख में 'provisional' (अस्थायी)' शब्द हटाने का प्रस्ताव है। जो कुछ हम कर चुके हैं उसके अनुरूप मेरा ये संशोधन स्वीकार करने का विचार है।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 16 में, नये अनुच्छेद 312-क में, 'provisional (अस्थायी)' शब्द, जहां कहीं भी यह प्रयुक्त हुआ है, **निकाल दिया जाए।"**

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 16 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 312-ख में, 'provisional (अस्थायी)' शब्द, जहां कहीं भी यह प्रयुक्त हुआ हो, **निकाल दिया जाए।"**

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि डॉ. अम्बेडकर को ये संशोधन स्वीकार्य हैं। इसके समर्थन में मेरा तर्क यह है कि प्रेजीडेंट या गर्वनर के लिए "अस्थायी" शब्द का प्रयोग करना उनकी गरिमा के लिए अपमानजनक है। मेरा अनुरोध है कि सदन इन्हें स्वीकार करे।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि उपरोक्त संख्या 16 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 312-ड. में, 'by order directs (आदेश द्वारा निदेशित करे)' **शब्दों के स्थान पर** 'may, with the approval of Parliament (संसद की स्वीकृति से निदेशित करे)' **शब्द रखे जाएं।"**

[श्री एच.वी. कामत]

यदि सदन मेरा यह संशोधन स्वीकार कर लेता है तो नये अनुच्छेद 312-ङ का पाठ इस प्रकार होगा:

"For the purpose of elections held under any of the provisions of this Constitution during a period of three years from the commencement of this Constitution the population of India or of any part thereof may notwithstanding anything contained in this Constitution be determined in such manner as the President may with the approval of Parliament direct."

['इस संविधान के प्रारम्भ से तीन वर्ष की कालावधि में इस संविधान के उपबंधों में से किसी एक के अधीन किये गये निर्वाचनों के प्रयोजन के लिए, भारत या उसके किसी भाग की जनसंख्या का निर्धारण, इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, ऐसी रीति से किया जा सकेगा जैसा राष्ट्रपति, संसद की स्वीकृति से, निदेशित करे।"]

यह अनुच्छेद 312-ड. उस नये अनुच्छेद के प्रारूप से कुछ भिन्न है जो हमें एक दिन पूर्व मिला था। कुछ भी हो, मेरा संशोधन इस प्रारूप अनुच्छेद पर लागू होगा। इस प्रस्तावित नये अनुच्छेद से इस संविधान के अन्तर्गत होने वाले निर्वाचनों का प्रश्न उत्पन्न होता है।

मुझे विश्वास है कि सदन मेरी इस बात से सहमत होगा कि निर्वाचनों का विषय एक ऐसा विषय है जिससे संसद का निकट का संबंध है और रहेगा और संसद को इसमें रुचि होगी। जहां तक भारत की या उसके किसी भाग की जनसंख्या के निर्धारण का संबंध है, मुझे ऐसा कोई कारण दिखाई नहीं देता जिससे कि संसद को इससे बिल्कुल अलग रखा जाए। हमने अभी एक अनुच्छेद स्वीकृत किया है जिसमें संविधान के उद्घाटन और गणराज्य की उद्घोषणा के बारे में विभिन्न विषयों के संबंध में उपबंध किया गया है और उस तारीख से अन्तरिम संसद भी कार्य करना आरम्भ करेगी। मैं समझता हूं कि राष्ट्रपति द्वारा इस संसद के साथ परामर्श करने के विषय में कोई अन्तर्निहित कठिनाई नहीं है। मैंने ऐसा उपबंध करना नहीं चाहा है कि इन सब विषयों के बारे में संसद अवश्य उपबंध करे। मैं तो केवल इतना चाहता हूं कि राष्ट्रपति इस संबंध में जो भी उपाय करे, जो भी कार्यवाही करे और जो भी कदम उठाये उन्हें संसद के समक्ष रखा जाए। मेरे संशोधन का केवल इतना ही उद्देश्य है कि राष्ट्रपति इस विषय में जो भी उपाय करे उनके लिए संसद की स्वीकृति अवश्य ली जाये।

जो संशोधन मैंने पेश किया है उसकी वांछनीयता और सुदृढ़ता के बारे में मैं विस्तार से कुछ कहना नहीं चाहता। मुझे विश्वास है कि इस अनुच्छेद का जिस विषय से संबंध है उसको देखते हुए यह संशोधन स्वयं ही सदन को स्वीकार्य होगा। मैं नहीं जानता कि भारत की या उसके किसी भाग की जनसंख्या के निर्धारण में राष्ट्रपति अपनी इच्छा से या अपनी मंत्रिपरिषद् के परामर्श से कार्यवाही करे। विधानमंडलों के निर्वाचनों सम्बन्धी यह विषय बहुत ही महत्वपूर्ण है और बेहतर यह होगा कि यह सदन इस आशय का उपबंध करे कि राष्ट्रपति द्वारा इस सम्बन्ध में किए गए कोई भी उपाय संसद के विचारार्थ और स्वीकृति या अस्वीकृति के लिए इसके समक्ष रखे जाने चाहिए। अन्यथा हम जिस संविधान का निर्माण कर रहे हैं उसकी जड़ों पर ही कुठाराघात करेंगे, जिसमें साधारणतया संसद की सर्वश्रेष्ठता को मान्यता दी गई है। हम प्रभुसत्तासम्पन्न लोकतंत्र गणराज्य के लिए व्यवस्था कर रहे हैं और मुझे इसका कोई औचित्य नहीं दिखाई देता कि निर्वाचनों जैसे महत्वपूर्ण

विषय में राष्ट्रपति द्वारा संसद को विश्वास में क्यों नहीं लिया जाना चाहिए। मुझे इसमें कोई अन्तर्निहित कठिनाई या कोई आपत्ति दिखाई नहीं देती कि राष्ट्रपति अपने द्वारा किये जाने वाले उपायों को संसद के समक्ष रखे। सीधा मार्ग यही होगा कि राष्ट्रपति इस विषय में अपने आदेश संसद के समक्ष रखे, उसकी स्वीकृति मांगे और प्राप्त करे।

*__अध्यक्ष:__ इस अनुच्छेद का अन्य कोई संशोधन नहीं है, एक संशोधन है जिसकी सूचना श्री सिधवा ने दी है परन्तु वह वास्तव में अनुच्छेद 311 से सम्बन्धित है जो केन्द्रीय विधानमंडल के बारे में है। जब वह अनुच्छेद लिया जायेगा तो वह संशोधन संगत हो जाएगा, परन्तु वह संशोधन इस अनुच्छेद से संगत नहीं है जो प्रान्तों के विधानमंडलों के संबंध में है। हम इस अनुच्छेद 311 के विचारार्थ लिए जाने तक इसे रोके रखेंगे। क्या कोई अन्य सदस्य इस अनुच्छेद के विषय में कुछ कहना चाहता है?

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ अध्यक्ष महोदय, यह बहु-प्रयोजनीय अनुच्छेद है, जिसमें संक्रमण काल की आवश्यकताओं के लिए उपबंध किया गया है। मैं तो केवल अनुच्छेद 312-ड. के बारे में कुछ कहना चाहता हूं और यहां मैं श्री कामत का समर्थन करता हूं जिन्होंने कहा कि राष्ट्रपति द्वारा जनसंख्या का निर्धारण तो किया जाए परन्तु उस पर संसद की स्वीकृति अवश्य प्राप्त की जाए। वास्तव में, मूल अनुच्छेद 312-ड. अधिक विस्तृत था। पुनरीक्षित अनुच्छेद 312-ङ में कहा गया है:

"इस संविधान के प्रारम्भ से तीन वर्ष की कालावधि में इस संविधान के उपबंधों में से किसी के अधीन किये गये निर्वाचनों के लिए भारत या उसके किसी भाग की जनसंख्या का निर्धारण, इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, ऐसी रीति से किया जा सकेगा जैसा कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्देशित करें।"

मैं समझता हूं कि ऐसा उपबंध करके राष्ट्रपति को अत्यन्त व्यापक शक्ति प्रदान की जा रही है। यही सदन, जैसा कि प्रस्ताव है, संसद का रूप लेने वाला है। यह सदन संविधान पारित कर रहा है और हम संक्रमण काल के लिए उपबंध कर रहे हैं। यदि संक्रमण काल में कोई ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसके लिए संविधान में कोई उपबंध नहीं है तो यह संविधान सभा नई संसद के रूप में फिर भी रहेगी। यदि कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो उसे संसद को निर्दिष्ट किया जा सकता है और संसद उस प्रयोजनार्थ आवश्यक विधि बना सकती है।

अत: मैं नहीं समझता कि हमें ऐसी बातों के लिए राष्ट्रपति को शक्तियां प्रदान करके अपने संविधान पर बोझ डालना चाहिए जिनके लिए स्वयं संविधान में उपबंध नहीं किया गया है। यह सम्भव है कि संक्रमण काल में ऐसे प्रश्न उठ खड़े हों जिनके लिए संविधान में कोई उपबंध नहीं हैं, परन्तु हमें यह अधिकार राष्ट्रपति को नहीं देना चाहिए कि वह उनके बारे में निर्णय लें। यही सभा संसद के रूप में विद्यमान होगी। यदि कोई त्रुटि दिखाई देती है तो राष्ट्रपति उसे इस सदन को निर्दिष्ट कर सकता है और यह सदन उस आकस्मिकता के संबंध में व्यवस्था करने वाली विधि बना सकता है। वास्तव में, संसद में, संसद सदस्य जनसंख्या के आधार पर निर्वाचित होंगे। कम से कम पांच लाख और अधिक से अधिक साढ़े सात लाख लोगों का इस सदन में एक प्रतिनिधि होगा। अत: जनसंख्या के निर्धारण का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न बन जाता है और यह बात राष्ट्रपति की इच्छा पर नहीं छोड़ी जानी चाहिए, क्योंकि राष्ट्रपति की इच्छा वास्तव में वही होगी जो मंत्रियों का परामर्श होगा।

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

मैं समझता हूं कि इतनी महत्वपूर्ण शक्ति राष्ट्रपति को सौंपना सदन के लिए और देश के लिए अनुचित होगा। श्री कामत ने जो संशोधन पेश किया है वह बहुत उचित है और यदि ऐसे अवसर पर राष्ट्रपति कोई कार्यवाही करता है तो उसे संसद के समक्ष अवश्य रखा जाना चाहिए।

महोदय, इसके अतिरिक्त, निर्वाचन-क्षेत्रों के बारे में कोई उपबंध नहीं है। मैं चाहूंगा कि डॉ. अम्बेडकर बताएं कि क्या कोई निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन के लिए संविधान में कोई उपबंध है, या क्या वह इस मामले को पूर्णतया निर्वाचन आयोग पर ही छोड़ना चाहते हैं? पहले, अनुच्छेद 312-ख के अन्तर्गत निर्वाचन-क्षेत्रों का परिसीमन भी राष्ट्रपति द्वारा किया जाना था। मुझे प्रसन्नता है कि उन्होंने वह उपबंध हटा दिया है मुझे मालूम नहीं कि क्या संविधान में इस आशय का उपबंध किया गया है कि परिसीमन आयोग का प्रतिवेदन स्वीकृति के लिए संसद के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए। साधारणतया तो उसे संसद के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए जो आगामी जनवरी में अस्तित्व में जाएगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता। मेरे मित्र श्री कामत और प्रो. सक्सेना ने इस अनुच्छेद 312-ड. का अति गहन अर्थ निकालने का प्रयास किया है। वास्तव में यह अनुच्छेद बहुत सीमित महत्व का है और इसमें जिस विषय पर उपबंध किया गया है वह है किसी क्षेत्र विशेष की जनसंख्या का निर्धारण। मेरे मित्र भली-भांति जानते हैं कि जो अनुच्छेद हम पारित कर चुके हैं उसके अनुसार निर्वाचन के प्रयोजनार्थ जनसंख्या वही मानी जाएगी जो विगत जनगणना द्वारा निर्धारित हुई हो। यह बात भी मान ली गई है कि भारत के विभाजन को देखते हुए 1941 की जनगणना के आंकड़ों को सही नहीं माना जा सकता और परिणामत: निर्वाचन-क्षेत्रों का परिसीमन और सीटों का निर्धारण कटे-छंटे प्रान्तों के आधार पर नहीं हो सकता जिनके जनसंख्या आंकड़ों में बहुत परिवर्तन आ चुका है। अत: किसी को तो यह निर्धारित करने की शक्ति देनी ही होगी कि कितनी जनसंख्या मानी जाये और कि क्या जनसंख्या वह मानी जाये जो पिछली जनगणना के अनुसार थी या फिर से गणना कराने पर बैठती है या फिर जैसा मैंने कहा, केवल मतदाताओं की संख्या के आधार पर जनसंख्या का निर्धारण किया जाए। ये सब बातें राष्ट्रपति पर छोड़ दी गई हैं और मैं नहीं समझ सका कि इस प्रकार के मामले में संसद की स्वीकृति से क्या होगा। यह एक मामले की विशिष्ट परिस्थितियों से उपजा पूर्णतया प्रशासनिक मामला है और मैं समझता हूं कि यदि हम वास्तव में चाहते हैं कि निर्वाचन शीघ्र हो तो वांछनीय यही है कि इसे राष्ट्रपति पर छोड़ दिया जाए। अत: मैं अपने मित्र श्री कामत का संशोधन स्वीकार करने में असमर्थ हूं।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या डॉ. अम्बेडकर को सिद्धांत रूप में मेरे संशोधन पर कोई आपत्ति है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं इसे स्वीकार नहीं करता। इस अनुच्छेद का उद्देश्य बहुत सीमित है। वह जनसंख्या के निर्धारण का प्रश्न है, न कि निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन का। निर्वाचन-क्षेत्रों का परिसीमन संविधान के उपबंधों के अनुसार होगा।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित नये अनुच्छेद 312-क में 'provisional (अस्थायी)' शब्द, जहां कहीं भी यह प्रयुक्त हुआ हो, **निकाल दिया जाए।"**

संशोधन स्वीकृत हुआ।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित नये अनुच्छेद 312-ख में 'provisional (अस्थायी)' शब्द, जहां कहीं भी यह प्रयुक्त हुआ है, **निकाल दिया जाए।"**

संशोधन स्वीकृत हुआ।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित नये अनुच्छेद 312-ड. में, 'by order directs (आदेश द्वारा निदेशित करे)' **शब्दों के स्थान पर** 'may, with the approval of Parliament (संसद की स्वीकृति से निदेशित करे)' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 312-क, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 312-क, संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 312-ख, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 312-ख, संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 312-ग और अनुच्छेद 312-घ संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 312-ग और अनुच्छेद 312-घ संविधान में जोड़ दिए गए।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 312-ड., संशोधित रूप में, संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 312-ड. संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 312-छ और अनुच्छेद 312-ज संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 312-छ और अनुच्छेद 312-ज संविधान में जोड़ दिए गए।

अनुच्छेद 313

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 313 के स्थान पर यह रखा जाए:

Power of the President to remove difficulties.

'313 (1) The President may for the purpose of removing any difficulties particularly in relation to the transition from the provisions of the Government of India Act 1935 to the provisions of this Constitution by order direct that this Constitution shall during such period as may be specified in the order have effect subject to such adaptations whether by way of modification, addition or omission as he may deem to be necessary or expedient:

Provided that no such order shall be made after the first meeting of Parliament duly constituted under Chapter II of Part V of this Constitution.

(2) Every order made under clause (1) of this article shall be laid before each House of Parliament.'

कठिनाइयों को दूर करने की राष्ट्रपति की शक्ति

['313 (1) राष्ट्रपति किन्हीं कठिनाइयों को, विशेषत: भारत शासन अधिनियम, 1935 के उपबंधों से इस संविधान के उपबंधों में संक्रमण के संबंध में कठिनाइयों को, दूर करने के प्रयोजन से आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि यह संविधान उस आदेश में उल्लिखित कालावधि में ऐसे अनुकूलनों के अधीन, चाहे वे रूप भेद या जोड़ या लोप के रूप में हों, रह कर जैसे कि वह आवश्यक या इष्टकर समझे, प्रभावी होगा;

परंतु भाग 5 के अध्याय 2 के अधीन सम्यक् रूप से गठित संसद के प्रथम अधिवेशन के पश्चात् ऐसा कोई आदेश नहीं निकाला जाएगा।

(2) इस अनुच्छेद के खण्ड (1) के अधीन निकाला गया प्रत्येक आदेश संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा।' "]

यह भारत सरकार अधिनियम में किए गए उपबंध का पुन: प्रस्तुतीकरण है जो संक्रमण काल के लिए आवश्यक है।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** महोदय मेरे नाम में चार संशोधन हैं, जिनका मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 23 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 313 में खण्ड (1) में कोष्ठक और अंक '(1)' तथा खण्ड (2) निकाल दिए जाएं।"

"कि सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 23 में प्रस्तावित अनुच्छेद 313 के खण्ड (1) में, 'The President may (राष्ट्रपति)' **शब्द के पश्चात्** 'on being moved by Parliament or any Provincial Legislature in that behalf (इस संबंध में संसद द्वारा या किसी प्रांत के विधान मंडल द्वारा कहे जाने पर)' **शब्द अंतः स्थापित किये जाएं।"**

"कि सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 23 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 313 के खण्ड (1) में 'whether by way of modification, addition or omission (रूप भेद या जोड़ या लोप के रूप में)' **शब्दों के स्थान पर** 'by way of modification (रूपभेद के रूप में)' **शब्द रखे जाएं।"**

"that in amendment No. 23 of List I (First week), in clause 2 of the proposed Article 313, the words 'for its approval' be added at the end."

"कि सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 232 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 313 के खण्ड (2) में, 'प्रत्येक सदन के समक्ष' **शब्दों के पश्चात्** 'उसकी स्वीकृति के लिए' **शब्द जोड़ दिए जाएं।"**

मेरे संशोधनों के स्वरूप से ही यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि इन संशोधनों के पीछे क्या आशय है। अनुच्छेद 313 में प्रस्तावित रूप में इस उपबंध के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियां निश्चित ही भारत शासन अधिनियम की धारा 310 द्वारा महामहिम नरेश को प्रदत्त शक्तियों के समान हैं। परंतु उस अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्तियां बहुत सीमित थीं और, कुछ भी हो, धारा 310 में छः मास की सीमित अवधि रखी गई थी। यहां ऐसा कोई उपबंध नहीं है और इस बात का सुनिश्चय कदापि नहीं किया जा सकता है कि नई संसद की प्रथम बैठक कब होगी, जब तक कि इस परंतुक "परंतु ऐसा कोई आदेश इस संविधान के भाग 5 के अध्याय 2 के अधीन सम्यक् रूप से गठित संसद के प्रथम अधिवेशन के पश्चात् नहीं किया जाएगा" का अर्थ 26 जनवरी, जिस दिन नया संविधान प्रभावी हो जाएगा, के पश्चात् जारी करने वाले इस सदन के अधिवेशन से नहीं है। उस स्थिति में मैं अपने संशोधन पर बल नहीं देना चाहूंगा।

परंतु यदि राष्ट्रपति को प्रदान की जाने वाली ये शक्तियां नयी संसद के गठित हो जाने और कार्य करना आरंभ कर दिये जाने तक इसे प्राप्त रहनी हैं, जैसाकि इस मामले में स्पष्ट प्रतीत होता है, तो मैं समझता हूं कि ये शक्तियां असाधारण रूप से व्यापक हैं और केवल यह सीमा निर्धारित करना पर्याप्त नहीं होगा कि ये आदेश संसद के समक्ष रखे जाएं। चूंकि संविधान के किसी एक उपबंध को वापस लिए जाने के संबंध में जो शक्तियां हमने राष्ट्रपति को प्रदान की हैं, उनके अतिरिक्त यह एक ऐसा उपबंध है जिसे विशेष रूप से कठिनाइयों को दूर करने के लिए समाविष्ट करने का विचार है। परंतु यदि इन उपबंधों का उद्देश्य कठिनाइयों को दूर करना है तो यह कहना क्यों संभव नहीं है कि प्रस्ताव या तो संसद से आए या प्रांतीय विधानमंडलों से आए? यदि ऐसा रक्षोपाय विद्यमान होगा तो न केवल

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

अनुकूलन द्वारा रूप भेद करने, अपितु इस संविधान में उपबंधों को जोड़ने या लोप करने की शक्ति राष्ट्रपति को प्रदान करने में भी कोई कठिनाई नहीं होगी। अतः मैंने अपने एक संशोधन में सुझाव दिया है कि ये रूप भेद या परिवर्धन या लोक संसद की सिफारिश पर या किसी प्रांत के विधानमंडल की सिफारिश या सुझाव पर ही किए जाने चाहिएं।

यह स्पष्ट है कि जो संशोधन मैंने पेश किए हैं वे वैकल्पिक स्वरूप के हैं। दो प्रकार के संशोधन हैं। यदि यह व्यवस्था की जा सकती है कि इस संबंध में राष्ट्रपति के आदेश ऐसे विषयों तक सीमित होंगे जिनका सुझाव संसद या प्रांतीय विधानमंडल दें तो अन्य संशोधन आवश्यक नहीं होंगे। परंतु यदि वह स्वीकार्य नहीं हैं तो यह व्यवस्था करना आवश्यक होगा कि ऐसे आदेश संसद के सभा-पटल पर केवल रखे ही न जायें, अपितु उनके लिये संसद का अनुमोदन भी लिया जाये।

मैंने जो विचार व्यक्त किए हैं उनके संबंध में यदि डॉ. अम्बेडकर कुछ प्रकाश डालें और इस मामले से संबंधित स्थिति को स्पष्ट कर दें तो मैं इन संशोधनों पर जोर नहीं दूंगा। परंतु मेरा निजी विचार यह है कि यद्यपि यह धारा 310 पर आधारित है, पर इस संबंध में कोई समय-सीमा नहीं है और यदि इस उपबंध को इसके प्रस्तुत रूप में रहने दें तो हम एक साधारण से तर्क के आधार पर, जो आसानी से दिया जा सकता है कि किसी अमुक उपबंध से कठिनाइयां पैदा होता हैं या किसी कठिनाई को दूर करने के लिये कोई अन्य उपबंध अपेक्षित है, समूचे संविधान में से कुछ लोप करने अथवा उसमें कुछ जोड़ देने की बहुत विशाल एवं व्यापक शक्तियां प्रदान कर रहे हैं। 'कठिनाई' शब्द की कोई परिभाषा नहीं है और कोई भी कठिनाई जिसे राष्ट्रपति अपने स्वविवेक से कठिनाई समझते हों इस अनुच्छेद का अनुचित लाभ उठाने का पर्याप्त कारण होगी और उसे किसी न्यायालय में चुनौती भी नहीं दी जा सकेगी। इस प्रकार इसका गलत अर्थ लगाया जा सकता है जो संविधान व देश के लिये अहितकर सिद्ध हो सकता है। अतः इस संबंध में मेरा सुझाव यह है कि इस पर यदि संभव हो तो कुछ अधिक ध्यानपूर्वक विचार किया जाये अथवा कुछ स्पष्टीकरण दिया जाये जिससे मैं यह निर्णय कर सकूं कि मुझे अपने संशोधनों पर जोर देना है या नहीं।

*__श्री एच.वी. कामतः__ मेरे नाम से एक संशोधन है। संशोधनों की मुद्रित सूची, खंड 2 में संख्या 3320—परंतु मेरा विचार उसको प्रस्तुत करने का नहीं है। तथापि मैं इतना अवश्य कहना चाहूंगा कि मुझे इस बात की आशंका है कि प्रारूप समिति ने इस संक्रमण काल की, जिससे हम गुजर रहे हैं, सही-सही व्याख्या नहीं की है। जो संक्रमण काल चल रहा है वह इससे कुछ भिन्न है। प्रारूप समिति ने इस प्रस्तावित अनुच्छेद में जिस संक्रमण काल का उल्लेख किया है वह भारत शासन अधिनियम 1935 और इस संविधान के बीच की अवधि है। कहीं कुछ भूल हुई है, मेरे विचार में प्रारूप समिति से कोई बात रह गयी है और उन्होंने संक्रमण काल की वर्तमान स्थिति का सही-सही विवेचन नहीं किया है। हम पर भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन शासन नहीं चलाया जा रहा है बल्कि भारत स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 द्वारा 1935 के उस अधिनियम के अनुकूलित रूप के अधीन चलाया जा रहा है। अतः मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर जिन्होंने संवैधानिक पहलुओं और उनके औचित्य पर सूक्ष्मता से विचार किया है और जो संविधान के पंडित हैं संक्रमण काल की इस समय की गयी व्याख्या से अधिक सही-सही व्याख्या करें तो बेहतर होगा। यह कहना अधिक उचित होगा—"भारत स्वतंत्रता

अधिनियम, 1947 के अधीन अनुकूलित रूप में भारत शासन अधिनियम, 1935 के उपबंधों से इस संविधान के उपबंधों तक संक्रमण।" यह बिल्कुल स्पष्ट है कि 1935 का मूल अधिनियम, अब प्रवर्तन में नहीं है और अब हम पर अनुकूलित अधिनियम लागू होता है। डॉ. अम्बेडकर के लिये व प्रारूप समिति के लिये इसमें संशोधन करना बेहतर रहेगा—इसमें संशोधन किया जा सकता है—और मुझे आशा है कि हम तीसरे वाचन में इसे भिन्न रूप में पायेंगे। मुझे विश्वास है कि सभा को इस संशोधन पर कोई आपत्ति नहीं होगी। मैंने इसकी सूचना नहीं दी है, परंतु जब डॉ. अम्बेडकर ने इसको पेश किया तब मेरे मन में विचार आया कि उनका भी ध्यान, जैसे कहा जाता है कि उत्कृष्टतम व्यक्तियों से भी भूलें हो जाती हैं, संक्रमण काल, जिससे हम गुजर रहे हैं, के विवरण की त्रुटि अथवा अनौचित्य की ओर नहीं गया है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद का उपबंध भारत शासन अधिनियम, 1935 से नये संविधान तक के संक्रमण काल के दौरान पैदा होने वाली किसी आकस्मिक स्थिति से निपटने के लिये ही किया गया है। यह सोचा गया है कि संविधान में, जिसका हमने मसौदा तैयार किया है, कोई कमी रह सकती है, अत: संक्रमण काल में राष्ट्रपति को संविधान के संबंध में कुछ उपबंध करने की शक्तियां दी जानी चाहिएं, परंतु मैं महसूस करता हूं कि इस अनुच्छेद में उनको दी जाने वाली शक्तियां बहुत ही व्यापक हैं। इसमें कहा गया है कि "यह संविधान... रूप भेद, जोड़ या लोप के रूप में ऐसे अनुकूलनों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगा जो वह आवश्यक या इष्टकर समझे।" इस प्रकार राष्ट्रपति को संविधान में परिवर्तन करने की, संविधान की किन्हीं धाराओं का लोप करने की या उनमें रूप भेद करने की शक्ति प्राप्त हो जाती है जिसके लिए वह यह तर्क दे सकता है कि ऐसा करना भारत शासन अधिनियम से नये संविधान तक के संक्रमण काल के लिये आवश्यक है। निस्संदेह इसका अर्थ यह है कि यदि संविधान सभा को ऐसी किसी आकस्मिक स्थिति का पहले से आभास मिल जाता तो वह उसके लिये उपबंध कर देती। मेरा सुझाव यह है कि यदि कोई ऐसी आकस्मिक स्थिति पैदा हो जाती है जिसका पहले से अनुमान नहीं लगाया जा सकता और उसके लिये डॉ. अम्बेडकर संविधान के भागों का रूप भेद करने, परिवर्धन करने या लोप करने की शक्तियां राष्ट्रपति को देना चाहते हैं तो संसद के रूप में यही इस काम को करने के लिए सक्षम होनी चाहिए। संविधान में पायी जाने वाली किसी कमी को दूर करने के लिये व्यवस्था करने हेतु इसी संसद का सत्र क्यों नहीं बुलाया जा सकता।

इसलिए मेरे विचार में इस शक्ति का दिया जाना बिल्कुल अनावश्यक है। वास्तव में किया यह जाना चाहिए कि इस संक्रमण काल में यदि किसी कमी अथवा त्रुटि का पता चलता है तो उसको दूर करने की व्यवस्था करने हेतु संसद को शक्ति प्राप्त होनी चाहिए। संविधान से किसी उपबंध का लोप करने अथवा उसमें जोड़ने की शक्ति राष्ट्रपति को प्रदान करने का दृष्टान्त किसी अन्य संविधान में नहीं मिलता। यह तो एकदम असंगत बात है कि यह शक्ति राष्ट्रपति को दी जानी चाहिए जबकि यह संविधान सभा राष्ट्र की संसद के रूप में अस्तित्व में रहेगी। इस शक्ति का राष्ट्रपति को दिया जाना पूर्णरूपेण अलोकतंत्रीय है और इसको दिये जाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। जो भी कमी या त्रुटि सामने आये उसको दूर करने के लिये व्यवस्था करने हेतु संसद का सत्र बुलाया जाना चाहिये।

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

यदि डॉ. अम्बेडकर ऐसा करने पर जोर देते हैं तो मैं यह सुझाव दूंगा कि हमें डॉ. देशमुख का संशोधन संख्या 33 स्वीकार कर लेना चाहिए कि यदि राष्ट्रपति परिवर्धन अथवा लोप द्वारा कोई रूपभेद करना चाहते हैं तो उनका अनुमोदन अथवा निरनुमोदन करने या रूपभेद करने हेतु एक मास या लगभग इतनी अवधि के भीतर संसद का सत्र बुलाया जाना चाहिए। राष्ट्रपति को इतनी व्यापक शक्तियां नहीं दी जानी चाहिए और सभा को उन्हें यह शक्ति देने की स्वीकृति नहीं देनी चाहिए।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, ऐसा प्रतीत होता है कि अनुच्छेद 313 में किये गये उपबंधों की आवश्यकता के संबंध में भारी शंका है। मेरे मित्र डॉ. देशमुख ने, जिन्होंने अपना संशोधन प्रस्तुत किया है, कहा है कि यदि मैं अनुच्छेद 313 में किये गये उपबंधों के सम्बन्ध में संतोषजनक स्पष्टीकरण दे दूं तो वह अपने संशोधन पर जोर नहीं देंगे। मेरे विचार में अनुच्छेद 313 के संबंध में कुछ तथ्यों को स्वीकार करना होगा। पहला तथ्य, जिसे मुझे आशा है कि सभी माननीय सदस्य स्वीकार करेंगे, इस प्रकार है। संक्रमण काल के दौरान कुछ कठिनाइयों का आना अवश्यम्भावी है जिनका प्रारूप समिति अथवा इस सभा के किसी सदस्य द्वारा इस समय पूर्वानुमान लगाया जाना संभव नहीं है और इसलिये उस संबंध में कोई उपबंध नहीं किया जा सकता। इसलिए ऐसी अप्रत्याशित कठिनाइयों के समाधान हेतु कुछ शक्ति किसी के पास अवश्य रहनी चाहिए।

अत: प्रश्न यह है कि किसी प्राधिकारी विशेष के पास ये शक्तियां किस सीमा तक व कितनी अवधि के लिये रहनी चाहिए। मेरे मित्र डॉ. देशमुख ने कहा कि भारत शासन अधिनियम की धारा 310 के अधीन इस शक्ति की अवधि 6 महीने रखी गई है। मेरे विचार से वह गलती पर हैं। यह शक्ति 6 महीने तक उसके बाद रहनी थी जब भाग 3 प्रवर्तन में आ गया हो। हमारा उपबंध बहुत सीमित है। संवैधानिक उपबंधों के माध्यम से कठिनाइयों का समाधान करने हेतु अनुच्छेद 313 द्वारा प्रदत्त उस दिन स्वत: समाप्त हो जायेगी जिस दिन नये उपबंधों के अधीन नई संसद अस्तित्व में आ जायेगी। इसलिए हमारा विचार इस अनुच्छेद के अधीन राष्ट्रपति को दी जाने वाली शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार, संशोधन करने के लिये सक्षम उचित प्राधिकार के अस्तित्व में आ जाने के बाद एक दिन के लिये भी देने का नहीं है। इस अनुच्छेद 313 की एक बात तो यह है।

इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कि कठिनाइयां अवश्य आयेंगी और उनका समाधान भी किया जाना चाहिए और इस प्रयोजन के लिये शक्ति किसी न किसी के पास होनी चाहिए, विचारणीय प्रश्न वस्तुत: यह है: क्या यह शक्ति राष्ट्रपति के पास होनी चाहिए अथवा अस्थायी संसद के पास। इसका कोई अन्य विकल्प नहीं है। प्रारूप समिति ने अनुच्छेद 313 में निविष्ट उपबंधों को स्वीकार करना और राष्ट्रपति को शक्ति देना इस कारण वांछनीय समझा कि संक्रमणकालीन संसद का कार्यकाल बहुत थोड़ा है और वह ऐसे अनेक मामलों में व्यस्त रहेगी जिनके लिये संसदीय विधान अपेक्षित है और संक्रमण काल के दौरान संसद के लिये किसी ऐसे मामले से निपटना संभव नहीं होगा जिसका तत्काल समाधान करने की आवश्यकता हो।

मैं ऐसी कठिनाइयों के एक या दो उदाहरण देता हूं जो पैदा हो सकती हैं। हमने संविधान बनाते समय राज्यों और केंद्र के कराधान की शक्तियों में भारी परिवर्तन किये हैं। आगामी 26 जनवरी को जब यह संविधान अस्तित्व में आ जायेगा, विद्यमान भारत शासन अधिनियम के अधीन भारतीय राज्यों को प्राप्त कराधान की शक्तियां

स्वतः समाप्त हो जायेंगी। इसके परिणामस्वरूप संकट की स्थिति पैदा हो जायेगी और इसलिये इस मामले को विनियमित करना होगा। यदि हम इस मामले को अस्थाई संसद द्वारा विनियमित करायेंगे तो मेरे मित्र यह बात मानेंगे कि उसमें बहुत समय लगेगा और संकट की स्थिति जारी रहेगी। इसलिये एक विधेयक प्रस्तुत करने, उसके तीन वाचन कराने, उसे प्रवर समिति को भेजने, उस पर विचार के लिये प्रस्ताव प्रस्तुत करने, उसका परिचालन करने आदि की साधारण संसदीय प्रक्रिया अपनाने के बजाय मेरे विचार में, संविधान को कठिनाइयों से बचाने के प्रयोजन से यह शक्ति राष्ट्रपति को दिया जाना वांछनीय होगा जिससे यह शीघ्रता से कार्यवाही कर सके। इसलिये जैसा मैंने कहा है कि गुणदोष के आधार पर यह प्रावधान आवश्यक है, धारा 310 में निविष्ट उपबंधों की तुलना में हमारा प्रस्ताव अत्यन्त सीमित है और मेरा निवेदन यह है कि इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए सभा को अनुच्छेद 313 को स्वीकार करने में कोई गंभीर या मूलभूत आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

मेरे मित्र श्री कामत द्वारा उठाये गये मुद्दे के संबंध में मुझे यह कहना है कि मेरे विचार में वह यह मानेंगे कि भारत शासन अधिनियम 1935 का उल्लेख करने में प्रारूप समिति ने मूल संविधि व अनुकूलित संविधि के बीच कोई अंतर न रखकर कोई गलती नहीं की है, क्योंकि वह देखेंगे कि अनुकूलित रूप में संविधि में इस बात की व्यवस्था है कि उसका संक्षिप्त नाम "भारत शासन अधिनियम, 1935" रहेगा और मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि जब इस अनुच्छेद की व्याख्या की जायेगी तब इसको उसी भावना से समझा जायेगा।

*__डॉ. पी.एस. देशमुख:__ क्या मैं एक प्रश्न पूछ सकता हूं? यदि राष्ट्रपति द्वारा दिये गये आदेश का संसद को अनुमोदन करने के लिए कहा जाये तो क्या इससे कोई हानि होगी?

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ परन्तु "अनुमोदन" का क्या अर्थ है? ऐसा कराने में राष्ट्रपति द्वारा की गयी कार्यवाही को रद्द भी किया जा सकता है, जबकि इस उपबंध का उद्देश्य प्रभावी समाधान की व्यवस्था करना है। उस तरीके से राष्ट्रपति का आदेश तुरंत लागू नहीं किया जा सकता, जबकि हम चाहते हैं कि वह तुरंत लागू हो जाये।

*__अध्यक्ष:__ अब मैं संशोधनों को सभा के मतदान के लिये रखूंगा। डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 37।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 23 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 313 के खंड (2) में 'each House of (के प्रत्येक सदन)' **शब्द निकाल दिये जायें।"**

संशोधन स्वीकृत हुआ।

*__डॉ. पी.एस. देशमुख:__ महोदय मुझे अपने संशोधन संख्या 33 को छोड़कर संशोधन संख्या 30, 31 और 32 को वापस लेने की अनुमति दी जाये।

सभा की अनुमति से संशोधन संख्या 30, 31 और 32 वापस लिये गये।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"that is amendment No. 23 of List I (First Week) in clause (2) of the proposed Article 313, the Words 'for its approval' be added at the end."

"कि सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 23 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 313 के खंड (2) "प्रत्येक सदन के समक्ष" शब्दों के पश्चात् "उसकी स्वीकृति के लिए" शब्द जोड़ दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मैं अब डॉ. अम्बेडकर के संशोधन द्वारा संशोधित रूप में, प्रस्तावित अनुच्छेद 313 को सभा के मतदान के लिये रखता हूं। प्रश्न यह है।

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 313, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बने।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 313, संशोधित रूप में संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में कार्य-सूची में कोई अन्य मद नहीं है। अब हम सभा को स्थगित करेंगे।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार): (सामान्य): हम सोमवार 10 बजे पुनः समवेत होंगे।

***अध्यक्षः** अब हम सभा को सोमवार, दस बजे तक के लिये स्थगित करते हैं।

तत्पश्चात् सभा सोमवार, 10 अक्तूबर 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हुई।

Con. 3. X.2.49
320

अंक 10
संख्या 3

शुक्रवार
10 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	2713
संविधान का प्रारूप-(जारी)	
[अनुच्छेद 306, 309, नये अनुच्छेद 310-क, 310-ख, 311-क, 311-ख, अनुच्छेद 312, नये अनुच्छेद 312-क से 312-ङ, 312-छ, 312-ज और अनुच्छेद 313 पर विचार]	2713-2824

भारतीय संविधान सभा

सोमवार, 10 अक्तूबर, 1949

———————

भारतीय संविधान सभा कॉन्स्टिट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में प्रात: दस बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

———————

शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्य ने शपथ ग्रहण की और रजिस्टर पर इस्ताक्षर किये:—

श्री हीरा वल्लभ त्रिपाठी (संयुक्त प्रान्त: जनरल)

संविधान का प्रारूप (जारी)

नवीन अनुच्छेद 283-क

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेदों पर विचार रखेंगे। अनुच्छेद 283क—श्री मुंशी।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं नवीन अनुच्छेद 283-क पेश करता हूं जो दूसरे सप्ताह की सूची में शामिल है। जिस अनुच्छेद को मैं सभा के सम्मुख प्रस्तुत कर रहा हूं। उसका पाठ इस प्रकार है:

Provision for protection of existing officers of certain services.

"283A. Except as otherwise expressly provided by this Constitution, every person who, being a member of a Service specified in clause (2) of article 282-B of this Constitution or a service which was known before the commencement of this Constitution as an All India service, continues on and after such commencement to serve under the Government of India or of a State shall be entitled to receive from the Government of India and the Government of the State which he is from time to time serving, the same conditions of service as respects remuneration, leave and pension, and the same rights as respects disciplinary matters or rights as similar thereto as changed circumstances may permit as that person was entitled to immediately before such commencement."

कतिपय सेवाओं के विद्यमान अधिकारियों के संरक्षण के लिये उपबंध।

["283क. इस संविधान द्वारा स्पष्टतापूर्वक उपबंधित अवस्था को छोड़कर प्रत्येक व्यक्ति को, जो इस संविधान के अनुच्छेद 282-ख के खण्ड (2) में उल्लिखित किसी सेवा अथवा इस संविधान के प्रारम्भ से पूर्व अखिल भारतीय सेवा के रूप में जानी जाने वाली सेवा का सदस्य होने के नाते, इस संविधान के प्रारम्भ पर और पश्चात् भारत की या किसी राज्य की सरकार के अधीन सेवा में बना रहता है, भारत सरकार और राज्य की सरकार से, जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है, पारिश्रमिक, छुट्टी और निवृत्ति-वेतन के

* इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेज़ी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री के.एम. मुंशी]

बारे में उन्हीं सेवा शर्तों का तथा अनुशासनीय विषयों में बारे में उन्हीं अधिकारों का अथवा उनके तुल्य ऐसे अधिकारों का, जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हों, हक होगा, जिनका कि उस व्यक्ति को ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले हक था।"]

महोदय, जैसा कि माननीय सदस्य पायेंगे, जो मूल प्रारूप परिचालित किया गया था, उसमें लिम्नलिखित शब्द रखे गये थे:

"इस संविधान के अनुच्छेद 282-ख के खण्ड (2) में उल्लिखित सेवा अथवा इस संविधान के प्रारम्भ से पूर्व अखिल भारतीय सेवा के रूप में जानी जाने वाली सेवा का सदस्य रहा है।"

इसमें सिविल कर्मचारियों का बहुत बड़ा वर्ग शामिल था और अब उसे भारत में क्राउन की सिविल सेवा के सदस्यों तक ही सीमित कर दिया गया है जो इस संविधान के प्रारम्भ पर और उसके पश्चात् भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अधीन सेवारत रहते आये हैं। इसलिए इसमें कोई वास्तविक अन्तर नहीं है सिवाय इसके कि स्वतंत्रता अधिनियम द्वारा सिविल सेवा के कतिपय सदस्यों को दी गई गारंटी जारी रखी गयी है और मूल रूप से प्रस्तुत खण्ड के व्यापक अभिप्रेत अर्थों को अब सीमित कर दिया गया है।

इस संबंध में, मैं सभा का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूं कि ब्रिटिश सरकार के साथ राष्ट्र के जिन नेताओं ने बातचीत की थी उनके द्वारा 15 अगस्त, 1947 से पूर्व दी गई कतिपय गारंटियों को ध्यान में रखते हुए कुछ आश्वासनों को स्वतंत्रता अधिनियम की धारा 10 में स्थान दिया गया। स्वतंत्रता अधिनियम की धारा 10 (2) इस प्रकार है:

मैं केवल विषय से सम्बन्धित भाग को पढ़ रहा हूं:

"प्रत्येक व्यक्ति जो सेक्रेटरी ऑफ स्टेट या सेक्रेटरी ऑफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा भारत में क्राउन की किसी असैनिक सेवा में नियुक्त होने के पश्चात् नियम दिन पर और उसके पश्चात् या तो नई डोमिनियनों का किसी प्रान्त अथवा उसके भाग की सरकार के अधीन सेवारत रहता है।"

(ख) इस अनुच्छेद के प्रयोजन के लिये महत्वपूर्ण नहीं है–

"उसको डोमिनियन सरकारों और प्रान्तीय अथवा उनके भागों की सरकारों से, जहां वह समय-समय पर सेवारत रहा हो, यथास्थिति... प्राप्त करने का अधिकार होगा"

उन्हीं शब्दों को अनुच्छेद 283-क में रखा गया है। वस्तुत: यह स्वतंत्रता अधिनियम की धारा 10 के खण्ड 2 (क) का ही पुन: प्रस्तुतीकरण है और उन आश्वासनों पर आधारित है जो हमारे राष्ट्रीय नेताओं द्वारा 15 अगस्त से पूर्व और हमारी सरकार द्वारा समय-समय पर दिये गये हैं। इसलिये मेरा निवेदन यह है कि इस अनुच्छेद को स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में अनेक संशोधन प्राप्त हुए हैं। 124-श्री कामत।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आज डॉ. अम्बेडकर दिखाई नहीं दे रहे और ऐसा लगता है कि उनकी तबीयत ठीक नहीं है......

***अध्यक्ष:** वह कहीं और व्यस्त हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं संशोधन संख्या 124 से 131 तक प्रस्तुत करता हूं।

***अध्यक्ष:** आपको उन्हें ऐसे पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। आप अपने संशोधनों को शामिल करके इस अनुच्छेद को पढ़िये।

***श्री एच.वी. कामत:** यदि मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधनों को सभा द्वारा स्वीकार कर लिया गया तब यह अनुच्छेद 183-क इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

"Except as otherwise provided by this Constitution, every person who, having been appointed by the Secretary of State or the Secretary of State in Council to the Civil Service of the Crown in India continues on and after the commencement of this Constitution to serve under the

---

"124. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'expressly (स्पष्टतापूर्वक)' **शब्द निकाल दिया जाये।**

125. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क की पंक्ति 9 में, 'and (और)' **शब्द के स्थान पर** 'or (अथवा)' **शब्द रखा जाये।**

126. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'which he is from time to time serving' (जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है)' **शब्दों के स्थान पर** 'as the case may be (यथास्थिति)' **शब्द रखा जाये।**

127. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'the same conditions (उन्हीं सेवा शर्तों)' **शब्दों के स्थान पर** 'conditions (शर्तों)' **शब्द रखा जाये।**

128. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'remuneration (पारिश्रमिक)' **शब्दों के स्थान पर** 'salary (वेतन)' **शब्द रखा जाये।**

129. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'and the same rights (उन्हीं अधिकारों)' **शब्दों के स्थान पर** 'and rules (और... नियमों)' **शब्द रखा जाये।**

130. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'as respects disciplinary matters or rights (अनुशासनीय विषयों के बारे में उन्हीं अधिकारों का अथवा उनके तुल्य ऐसे अधिकारों का)' **शब्दों के स्थान पर** 'of conduct and discipline (आचरण तथा अनुशासन के)' **शब्द रखे जायें।**

131. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'as similar thereto as changed circumstances may permit as that person was entitled to immediately before such commencement' **शब्दों के स्थान पर** 'as similar, as changed circumstances may permit to what that person was entitled to immediately before such commencement' **शब्द रखे जायें।**

[श्री एच.वी. कामत]

Government of India or of a State, shall be entitled to receive from the Government of India or the Government of the State as the case may be, conditions of service as regards salary, leave and pension and rules of conduct and discipline, as similar as the changed circumstances may permit, to what that person was entitled to immediately before such commencement."

["इस संविधान द्वारा उपबंधित अवस्था को छोड़कर प्रत्येक व्यक्ति को, जो सेक्रेटरी ऑफ स्टेट या सेक्रेटरी ऑफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा भारत में क्राउन की असैनिक सेवा में नियुक्त होने के पश्चात् इस संविधान के प्रारम्भ पर और पश्चात् भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन सेवा में बना रहता है, भारत सरकार या राज्य की सरकार से, यथास्थिति, वेतन, छुट्टी और निवृत्ति-वेतन संबंधी उन सेवा शर्तों का और आचरण तथा अनुशासन के नियमों का, जैसा कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हो, हक होगा, जिनका कि उस व्यक्ति को ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले हक था।"]

महोदय, जब मैंने इस अनुच्छेद 283-क को पढ़ा तो मेरी पहली प्रतिक्रिया यह थी कि इस अनुच्छेद का मसौदा तैयार करने में जल्दबाजी की गयी है। इस अनुच्छेद की रचना, मेरे विचार में, बहुत ही निकृष्ट तरीके से की गयी है और यदि मैं कहूं कि इसका अन्तिम भाग बुरी तरह से गड्डमड्ड कर दिया गया है तो मैं बहुत गलत नहीं होउंगा। मैं इसकी रचना की बात कर रहा हूं और मेरे विचार में यदि इसे ऐसा ही रखा जाये तो प्रारूप समिति की और अन्ततोगत्वा सभा की, जो इसको पास करेगी, खिल्ली उड़ाई जायेगी। शायद विदेशी भाषा होने के कारण ही अशंतः ऐसा हुआ है। इसीलिये यथाशीघ्र राष्ट्रभाषा को बढ़ावा दिया जाना चाहिये जिससे हम अपनी भाषा में अपने मत को भली भांति अभिव्यक्त कर सकें।

महोदय, मेरा पहला संशोधन शाब्दिक मात्र है और मैं उसके सम्बन्ध में कुछ अधिक नहीं कहना चाहूंगा। मैं उसे प्रारूप समिति की सद्बुद्धि पर छोड़ता हूं।

मेरा दूसरा संशोधन-संख्या 125-"भारत सरकार और किसी राज्य की सरकार" शब्दों की पूर्वगामिता से सम्बन्धित है। मेरे विचार में उनका क्रम उनकी पूर्ववर्तिता के अनुसार "भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार" होना चाहिए। "और" शब्द लगाने की क्या आवश्यकता है? सही शब्द "या" होना चाहिए।

संशोधन संख्या 126 में "जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है" के स्थान पर "यथास्थिति" शब्द रखने की बात कही गई है। यह कहना आवश्यक नहीं है कि "जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है।" सम्भव है कि वह भारत सरकार की या किसी राज्य सरकार की सेवा में हो। परन्तु यदि आप "यथास्थिति" शब्द का प्रयोग करें तो उनका अर्थ भी उतना ही सही है और मेरे विचार में संवैधानिक शब्दावली और बोलचाल की दृष्टि से भी यह कहीं अधिक अच्छी व सुन्दर अभिव्यक्ति है।

मेरा एक अन्य शाब्दिक संशोधन है जिसमें "पारिश्रमिक" शब्द के स्थान पर "वेतन" शब्द रखने की बात कही गयी है। मेरे विचार में जहां तक असैनिक कर्मचारियों और सरकारी कर्मचारियों का संबंध है "वेतन" शब्द "पारिश्रमिक" शब्द से अधिक सम्मानजनक है। मेरे विचार में अन्य सभी अनुच्छेदों में इस अर्थ के लिये "वेतन" शब्द का ही प्रयोग किया गया है। हम न्यायाधीशों का वेतन, राष्ट्रपति का वेतन, मंत्रियों का वेतन और "विधान सभाओं के सदस्यों का वेतन और भत्ते" शब्दों का प्रयोग करते आ रहे हैं। इसलिये मेरे विचार में यहां पर भी "पारिश्रमिक" शब्द का प्रयोग न करके "वेतन" शब्द का प्रयोग करना ही उचित रहेगा।

अब मैं उस भाग का उल्लेख करना चाहता हूं जिसे बुरी तरह से गड्डमड्ड कर दिया गया है। यदि मेरे मित्र श्री मुंशी व प्रारूप समिति के उनके अन्य सहयोगी सदस्य मेरी बात को समझने का प्रयत्न करेंगे जो मैं कहने जा रहा हूं तो यदि उनके दिमाग खुले हैं और वे कोई परिवर्तन किये जाने के विरुद्ध नहीं हैं तो मुझे विश्वास है कि वे समझ जायेंगे कि क्या गलती हुई है। यहां पर प्रयुक्त भाषा बहुत ही अशुद्ध है और शब्द विन्यास भी ठीक नहीं है। सभा समझ जायेगी जब मैं अनुच्छेद के उस भाग का हवाला दूंगा जो "उन्हीं सेवा शर्तों का..." शब्दों से आरम्भ होता है और अन्त तक जाता है। परन्तु उसके सम्बन्ध में कुछ कहने से पूर्व में "receive" शब्द के बारे में कुछ कहना चाहता हूं। मुझे ऐसा कोई उचित शब्द नहीं मिला जो इसके बजाय रखा जा सके परन्तु मैं महसूस करता हूं कि इस संदर्भ में यह शब्द बिल्कुल गलत है। क्या प्राप्त करना? सेवा की शर्तें प्राप्त करना? अनुशासनीय मामलों या अधिकारी के संबंध में अधिकर प्राप्त करना? यह बहुत ही अनुपयुक्त अभिव्यक्ति है। मैंने इस संदर्भ में "receive" शब्द का प्रयोग कहीं नहीं देखा यद्यपि, दुर्भाग्य से, मैं इसके लिये कोई अन्य शब्द नहीं ढूंढ सका। फिर भी मैं प्रारूप समिति से अनुरोध करूंगा कि वे इस पर पुनर्विचार करें और मैं आशा करता हूं कि तीसरे वाचन में "receive" शब्द के स्थान पर कोई दूसरा बेहतर शब्द रखा जायेगा।

यदि सभा वाक्य के अन्तिम भाग पर ध्यान देगी तो पायेगी कि इसकी रचना कितनी भद्दी है। इसमें उन्हीं शर्तों और उसी प्रकार की शर्तो अथवा अनुशासकीय मामलों के संबंध में उसी प्रकार के अधिकारों आदि का उल्लेख है। यदि यह "उन्हीं" है तो यह वैसी ही तो हो सकती है, परन्तु "तुल्य" नहीं है। "उन्हीं" और "तुल्य" का प्रयोग एक साथ नहीं किया जा सकता। अत: इसमें से एक का लोप करना होगा। इसलिये मैंने "तुल्य" शब्द का सुझाव दिया है क्योंकि परिस्थितियों के अनुरूप शर्तें यथासम्भव "तुल्य" हो सकती हैं। मेरे संशोधन संख्या 131 और 128 अनुच्छेद के इस भाग से सम्बन्धित हैं मैंने कहना चाहा है कि इसका आशय यह है संविधान के प्रारम्भ से पूर्व जो स्थिति थी उसके तुल्य वाली बात रखी जाये, वहीं वाली नहीं। मुझे विश्वास है कि प्रारूप समिति मेरे विचार से सहमत होगी कि उनका आशय नहीं है। इसलिये यह कहना अधिक उचित होगा—उन विद्यमान शर्तों और नियमों के तुल्य जो परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप हों।

संशोधन संख्या 130 अनुच्छेद के उस भाग से सम्बन्धित है जिसमें अनुशासनीय विषयों से सम्बन्धित अधिकारों अथवा अधिकारों का उल्लेख है। इससे सही-सही क्या अभिप्रेत है यह ईश्वर ही जानता है। "अधिकारों" शब्द दोहराया गया है: "अनुशासनीय विषयों के बारे में अधिकारों अथवा अधिकारों" परन्तु अनुशासनिक विषयों के सम्बन्ध में कोई अधिकार नहीं होते। अनुशासन के नियम, आचार संहिता है और अनुशासन सम्बन्धी विनियम है। परन्तु "अनुशासनिक विषयों के बारे में

[श्री एच.वी. कामत]

अधिकारों अथवा अधिकारों" से क्या तात्पर्य है? मैंने कुछ वर्ष तक सेवारत रह कर देखा है, परन्तु मुझे इस प्रकार के अधिकारों की कोई जानकारी नहीं है। केवल आचार संहिता होती है, अनुशासन सम्बन्धी अधिकार नहीं होते। मैंने इसको एक बार, दो बार, तीन बार पढ़ा और मुझे आश्चर्य हो रहा है कि क्या यह मसौदा प्रारूप समिति के विद्यमान सदस्यों ने तैयार किया है या किसी अन्य व्यक्ति ने तैयार किया है और समिति ने इसे बारीकी से नहीं देखा है।

एक बात और। श्री मुंशी ने हमें बताया है कि जब 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्रता अधिनियम पास किया गया था, उस समय सिविल अधिकारियों को सरकार द्वारा गारंटी दी गयी थी। इसलिये इस विषय पर कोई विवाद नहीं है। परन्तु इस पूरे अनुच्छेद का प्रारूप इतने गलत तरीके से तैयार किया गया है कि मैं अत्यंत विनम्र भाव से प्रारूप समिति से अनुरोध करना चाहूंगा कि वे इस समूचे विषय पर पुनर्विचार करें और तीसरे वाचन के समय इसे नये रूप में प्रस्तुत करे, जिसकी भाषा शुद्ध हो और रचना भी सुन्दर हो।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 132, श्री नजीरुद्दीन अहमद।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** (बिहारः जनरल): संशोधन संख्या 14 का क्या हुआ।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 14 पिछले प्रारूप के संबंध में था।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** (पश्चिम बंगालः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मेरे कुछ संशोधन यथार्थ हैं और औपचारिक-मात्र हैं। मैं केवल उप-संख्या (तीन), (चार) और (सात) प्रस्तुत करूंगा। महोदय मैं प्रस्ताव करता हूं "कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित अनुच्छेद 283-क "continues" **शब्द के स्थान पर** "shall continue" **शब्द रखे जायें;** "shall be entitled" **शब्दों के स्थान पर** "and shall be entitled" **शब्द रखे जायें;** और "he is from time to time serving" **शब्द रखे जायें।"** इन संशोधनों का सुझाव देने का मेरा आशय यह है कि हम कुछ सेवाओं के भविष्य के लिये यह व्यवस्था कर रहे हैं। मेरे विचार में इन उपबंधों में भविष्यत्काल का उपयोग किया जाना चाहिए। परंतु इसमें सब जगह वर्तमान काल का प्रयोग किया गया है। अनुच्छेद 283-क में अनेक शर्तों का लोप करते हुए मात्र वाक्य इस प्रकार है—"प्रत्येक व्यक्ति को, जो सेक्रेटरी ऑफ स्टेट या सेक्रेटरी ऑफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा भारत में क्राउन की किसी असैनिक सेवा में नियुक्त होने के पश्चात इस संविधान के प्रारम्भ पर और पश्चात भारत की या किसी राज्य की सेवा में बना रहता है...." मैंने "continues (बना रहता है)" के स्थान पर "shall continue (बना रहेगा)" शब्द रखे जाने का सुझाव दिया है। मेरा विचार यह है कि हम इन सेवाओं के सम्बन्ध में भविष्य के लिये व्यवस्था कर रहे हैं और इसलिये क्रिया का प्रयोग भविष्यकाल में होना चाहिए। अन्य संशोधन इस प्रकार के हैं और उनके संबंध में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।

अनुच्छेद 283-क का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद ऐसा प्रतीत होता है जैसा कि श्री कामत ने कहा है कि इस अनुच्छेद का प्रारूप तैयार करने में जल्दबाजी की गयी है। श्री कामत ने प्रारूप तैयार करने की दृष्टि से एक स्पष्ट असंगति अर्थात् "receive" शब्द के प्रयोग की ओर ध्यान दिलाया है। यह शब्द बिल्कुल अनुपयुक्त है। इस सभा में पेश किये गये कुछ संशोधनों व की गयी टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए प्रारूप समिति को इस अनुच्छेद के प्रारूप पर पुनर्विचार करना चाहिए।

इन अनुच्छेदों पर विचार करने वाले सदस्यों को एक अन्य इस कठिनाई का सामना करना पड़ा है। इन अनुच्छेदों को कल 9.00 अथवा 10.00 बजे सायं परिचालित किया गया था और तब इन अनुच्छेदों पर विचार करने और संशोधनों का सुझाव देने का और उन संशोधनों को कल पांच बजे तक कार्यालय में देने का समय ही नहीं था। इसीलिए कुछ संशोधनों पर भलीभांति विचार नहीं किया जा सका और इसीलिए जल्दी में "receive" शब्द पर मेरा ध्यान ही नहीं गया। मेरा सुझाव यह है कि प्रारूप समिति को उस अनुच्छेद के प्रारूप पर पुनर्विचार करना चाहिए। मैंने कुछ और भी छोटे-छोटे सुधार करने के सुझाव दिए हैं जिनको मैंने प्रस्तुत नहीं किया है परन्तु मेरे विचार में प्रारूप समिति को उन पर विचार अवश्य करना चाहिए।

***अध्यक्ष:** एक संशोधन है जिसकी सूचना आज प्रात: श्री सिधवा ने दी है।

***श्री आर.के. सिधवा:** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): महोदय, मैं उसको प्रस्तुत नहीं कर रहा।

***अध्यक्ष:** अब अनुच्छेद तथा संशोधनों पर चर्चा की जा सकती है। एक या दो संशोधन ऐसे हैं जिनमें अनुच्छेद के निकाले जाने का प्रस्ताव है। मैं उनको संशोधित नहीं समझता।

***श्री महावीर त्यागी:** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): महोदय मैं सिद्धान्त रूप में इस बात से सहमत नहीं हूं कि यह संविधान सभा कोई ऐसे वचन दे जिनकी जिम्मेदारी आगामी संसदों पर आती हो। सिविल सेवा के इन कुछ लोगों के मामले में केवल कुछ गारंटियों को अन्तरित किया जा रहा है। मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है परन्तु वे एक संसद से दूसरी संसद को अन्तरित की जानी चाहिए। यदि इस विधान सभा ने अब इन गारंटियों की पुष्टि कर दी तो आगामी संसदों के लिए यह अविरल दायित्व बन जायेगी। इस समय मैं समझता हूं कि इस प्रस्ताव के विरोध को कोई अधिक समर्थन नहीं मिलेगा, फिर भी मैं इन गारंटियों का समर्थन करने से पूर्व कुछ प्रश्न पूछना चाहता हूं।

जैसा कि देखा जाता है, आज भारत में सिविल सेवा के कुछ अधिकारियों की सेवा केवल आठ या नौ वर्ष की हुई है और वे सेक्रेटेरियट में सचिव व संयुक्त सचिव के पदों पर कार्य कर रहे हैं और बहुत अधिक वेतन प्राप्त कर रहे हैं, इतना वेतन कि यदि भारत स्वतंत्र न हो जाता तो उनको यह वेतन अठारह या उन्नीस वर्षों की सेवा के बाद मिला होता। सिविल सेवा के अनेक अधिकारियों की पदोन्नति इतनी तेजी से हुई है। मैं पूछना चाहता हूं कि उन सचिवों का क्या होगा जो न्यूनतम गारंटीशुदा संख्या "आठ" से अधिक होंगे। जहां तक मेरी जानकारी है, सचिवों के केवल "आठ" पदों की गारंटी दी गई है। इन पदों की संख्या को आठ से सात या छ: नहीं किया जा सकता, परन्तु इस समय इक्कीस सचिव हैं। अब मूल देयता इन आठ में से प्रत्येक सचिव को 4000 रुपये प्रतिमास देने की थी। अब हम उतना ही वेतन इक्कीस सचिवों को दे रहे हैं। मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या इस अनुच्छेद के पास हो जाने के बाद हम सचिवों की संख्या को कम करके आठ तक ला सकेंगे या नहीं? अब यदि यह भी वचन दिया जा रहा है कि आगामी सरकारों की इक्कीस सचिवों और अनेक संयुक्त सचिवों को—जिनकी संख्या गारंटीशुदा संख्या से कहीं अधिक है—विद्यमान वेतन मानों के अनुसार वेतन देना होगा—तो क्या भावी संसद के लिये यह अतिरिक्त देयता नहीं होगी? अथवा क्या भावी संसद सचिवों की संख्या कम कर सकेगी?

आज मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि स्वतंत्रता का अधिकांश लाभ सिविल सर्विस वाले लोगों को मिला है और अन्य वर्गों की स्थिति गिरी है। सिविल सर्विस वाले

[श्री महावीर त्यागी]

लोग, यदि भारत स्वतंत्र न होता तो जितना वेतन उनको मिलता उससे कहीं अधिक वेतन पा रहे हैं। मुझे पता चला है कि पाकिस्तान में एक नियम बनाया गया है कि प्रत्येक सिविल कर्मचारी को या तो स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उसे प्राप्त हुए ऊंचे वेतनमान के हिसाब से या स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व उसे पूर्व उसे मिल रहे वेतन से केवल तीस प्रतिशत अधिक, दोनों में से जो कम हो, वेतन मिलेगा।

पाकिस्तान में ऐसा कोई सिविल कर्मचारी नहीं है जिसका वेतन 15 अगस्त, 1947 से पहले मिलने वाले वेतन से तीस प्रतिशत से अधिक बढ़ा हो। परन्तु हमारे देश में सिविल सेवा के यूरोपीय अधिकारियों की सेवानिवृत्ति और मुस्लिम अधिकारियों के पाकिस्तान चले जाने के कारण बहुत कनिष्ठ अधिकारियों की तेजी से पदोन्नति हो गई है और उन्हें ऊंचे वेतनमान मिलने लगे हैं।

मैं चाहता हूं कि श्री मुंशी इस बात को स्पष्ट करें कि इस उपबंध के पास होने जाने के बाद, क्या भारत की भावी संसद के लिये यह जरूरी होगा कि वह इतने अधिक वेतन पर उतनी ही संख्या में सचिवों को रखें अथवा वह सेक्रेटेरियट में सचिवों की संख्या में कमी कर सकेगी और उनको कम वेतन दे सकेगी। लगभग सभी राजवंशियों और जमींदारों जैसे निहित स्वार्थ वाले व्यक्तियों का प्रभुत्व समाप्त हो गया है। केवल कुछ सिविल अधिकारियों के ही निहित स्वार्थों को उनके हितों की गारंटी देकर हम अनवरत बनाए हुए हैं। क्या वे भावी संसदों के लिए अनवरत देयता बने रहेंगे?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास: जनरल): यदि मेरे माननीय मित्र अपने तर्क को संक्षिप्त करने में...

***श्री महावीर त्यागी**: मैं अपनी बात कह चुका हूं, यदि माननीय सदस्य प्रश्न के सम्बन्ध में मुझे और जानकारी देना चाहते हों तो वह कृपया यह स्पष्ट करें कि वास्तविक स्थिति क्या है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (असम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, श्री मुंशी द्वारा इस सभा के समक्ष रखे गये नये अनुच्छेद का मैं स्वागत करता हूं। मैं इसका स्वागत इसलिए करता हूं कि इस व्यवस्था से हम आचार का ऐसा स्तर बनाए रख सकेंगे जो किसी सभ्य सरकार को अपने अधीन साथ-साथ काम करने वाले सिविल सेवा अधिकारियों के साथ बनाए रखना चाहिए।

सभा में इस अनुच्छेद पर विचार करते हुए हमें इस तथ्य को ध्यान में रखना होगा कि यद्यपि हमारे देश में काफी लम्बे समय से क्रान्ति संबंधी गतिविधियां चलती रही हैं परन्तु सत्ता के हस्तांतरण का तत्काल कारण क्रांति नहीं था, एक ऐसी क्रांति जो पहले से विद्यमान हमारी प्रत्येक चीज के अस्त-व्यस्त किये जाने को न्यायसंगत सिद्ध कर दे। हमें स्मरण रखना चाहिए कि पिछली सरकार ने सत्ता को शान्तिपूर्वक तरीके से हमें हस्तान्तरित किया है, अत: हमें उनके द्वारा किये गये अनुबंधों का, यथासम्भव आदर करना चाहिए। इस मामले विशेष में न केवल उस अनुबंध का हमारे आचार पर प्रभाव परिलक्षित होना चाहिए बल्कि इसमें तो एक और भी कारण है और वह यह कि हमारे नेताओं ने गारंटी दी थी—उन नेताओं ने जिन्होंने हमारे लिए देश की स्वतंत्रता प्राप्त करने में प्रमुख भूमिका निभायी थी। चाहे हमारी कितनी भी आलोचना क्यों न की जाये, हमें अपने नेताओं द्वारा दी गई गारंटियों का सम्मान करना चाहिए और उन्हें पूरा करना चाहिए।

इस अनुच्छेद का पूर्ण रूप से समर्थन करते हुए मैं सिविल सेवा के अधिकारियों से एक विनम्र अपील करना चाहूंगा। मैं उनसे कहूंगा कि क्या उनके लिये यह उचित नहीं होगा कि हमने इस अनुच्छेद को स्वीकार करके जिस सद्‌भावना का परिचय दिया है वे भी उसके बदले में अपने उस वेतन को जो उन्हें दिया गया है और जो इस अनुच्छेद के स्वीकार किये जाने के कारण उनको मिलेगा कुछ प्रतिशत का परित्याग कर दें। महोदय, मुझे याद है—1931 में जब समूचे देश में छंटनी किये जाने की चर्चा चल रही थी तब आई.सी.एस. के अधिकारियों ने जिनके वेतन में भारत सरकार कटौती नहीं कर सकती थी, स्वेच्छा से अपने वेतन तथा भत्तों में कटौती कराने की पेशकश की थी। जबकि भारतीय सिविल सेवा के यूरोपीय अधिकारी इस देश के हित में ऐसा शिष्टाचार दिखा सकते थे तो मुझे विश्वास है कि भारतीय सिविल सेवा के भारतीय अधिकारी अपनी मातृभूमि के प्रति देशभक्ति की भावना प्रदर्शित करने में पीछे नहीं रहेंगे। महोदय, मेरा विचार है कि उनको ऐसा करने में तनिक भी आपत्ति नहीं होगी क्योंकि उनको याद होगा कि कांग्रेस के नेताओं ने अपनी आय का, अपने व्यवसाय का, जीवन में अपनी स्थिति का परित्याग कर दिया था और जेलों में चले गये थे, जबकि सिविल अधिकारी अपने डैस्क पर शान्तिपूर्वक अपना काम करते रहे थे, अपनी जीविका कमा रहे थे और अपना सामान्य कार्य कर रहे थे। हमने उनके ऐसा करने पर शिकायत नहीं की। यदि उस समय सिविल सेवा के सभी अधिकारी भी त्याग-पत्र दे देते तो संक्रमण काल में हमें काम चलाने में बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ता। उस समय उनके ऐसा करने पर मुझे कोई शिकायत नहीं। परन्तु अब जबकि वे हमारे साथ स्वतंत्रता का आनन्द उठा रहे हैं, जिसके लिये उन्होंने किसी प्रकार का कोई त्याग नहीं किया था—निश्चय ही मैं सुभाषचन्द्र बोस और श्री कामत जैसे व्यक्तियों की बात नहीं कर रहा जिन्होंने देशभक्ति की भावना से ओत-प्रोत होकर अत्यन्त स्पृहणीय पद का परित्याग कर दिया था—तो मुझे आशा है कि वे अब स्वेच्छा से अपने वेतन में से कटौती करने की पेशकश करेंगे।

महोदय, इस संबंध में हमें कुछ मंत्रियों व उनके सचिवों के दर्जे की स्थिति पर विचार करना होगा। मंत्री 750 रुपये से 1000 रुपये तक वेतन ले रहे हैं, जबकि उनके इंडियन सिविल सर्विस के सेक्रेटरी 2000 रुपये से 3000 रुपये तक वेतन प्रापत कर रहे हैं। मंत्री अपनी पुरानी कार को चलाने के लिये सड़क पर धक्का लगाते हैं, क्योंकि वे नयी कार लेने की स्थिति में नहीं हैं, ये सेक्रेटरी अपनी नयी सुन्दर मोटरकार में उनके पास से गुजर जाते हैं और मंत्री के पास से केवल हाथ हिलाते हुए और “Cheerio” कहते हुए चले जाते हैं। वह मोटर रोकने का कष्ट भी नहीं उठाते क्योंकि उनके साथ बगल में उनकी सुन्दर पत्नी विराजमान होती है। अब इस प्रकार की बात दोहरायी नहीं जानी चाहिए। मंत्री और उसके सेक्रेटरी के स्तर के बीच इतना अन्तर नहीं होना चाहिए। इस स्थिति से निपटने का एक ही तरीका है, वह यह कि सभी मंत्रियों को सरकारी कार उपलब्ध करायी जाये। मैंने यह भी देखा है कि सेक्रेटरी मंत्रियों के निवास स्थान पर जाना पसन्द नहीं करते क्योंकि उस समय के मंत्री अपने घरों में उस प्रकार का फर्नीचर, आदि नहीं जुटा पाते जिस प्रकार का इंडियन सिविल सर्विस के सेक्रेटरी ले लेते हैं।

इसलिए इस अनुच्छेद को स्वीकार करते हुए मैं सिविल सेवा के अधिकारियों से एक बार फिर अपील करता हूं कि यदि वे कर सकें तो अपने बढ़े हुए वेतन का परित्याग कर दें। वे भी साधारण व्यक्ति के स्तर पर आ जाएं और जितना कर सकते हों परित्याग करें। वे जितना त्याग कर सकते हैं उतना यदि नहीं भी करते तो उन्हें विलास सामग्री का उपयोग नहीं करने देना चाहिए बल्कि उनकी

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

आय को राष्ट्र के कल्याण कार्यों में लगाने के प्रयत्न किये जाने चाहिए। शिक्षा संस्थाओं के लिये दान दे दीजिए अथवा आम आदमी के उत्थान के लिये कुछ मदद कर दीजिए। मेरी यही अपील है। मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूं।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ अध्यक्ष महोदय, यद्यपि मैं देश के सिविल सेवा अधिकारियों को संतुष्ट रखने की वांछनीयता में विश्वास रखता हूं, परन्तु इन सेवा अधिकारियों को संतोष की सीमा को नहीं लांघना चाहिए। इस मामले में ऐसा हुआ है। इस महान सेवा के अधिकारियों का पूरा सम्मान करते हुए, जो यथार्थ में देश की सेवा कर रहे हैं, मैं यह कहना चाहूंगा कि यदि इस अनुच्छेद को संविधान में शामिल न किया जाता तो मैं उसे अच्छा समझता, यदि हमने कोई करार किया है तो निश्चय ही हमें उस करार को निभाना है और यह मामला नेताओं व सिविल सेवा के अधिकारियों के बीच का है और यह पता चल ही जायेगा कि इसे निष्ठापूर्वक निभाया गया है। फिर इसको संविधान में शामिल करने की क्या आवश्यकता है?

फिर इस अनुच्छेद की शब्दावली भी सुन्दर नहीं है। सम्भवत: प्रारूप समिति ने इसमें प्रयुक्त शब्दों पर उचित ध्यान नहीं दिया। उदाहरण के लिए "पारिश्रमिक" शब्द को ही ले लीजिए। प्रधान मंत्री, मंत्रिगण, अध्यक्ष, उपाध्यक्ष के मामले में भी "वेतन" शब्द को प्रयोग किया गया है। परन्तु इस मामले में "पारिश्रमिक" शब्द का प्रयोग क्यों किया गया है? यह कुछ बेहतर शब्द है। यह "वेतन" से अधिक शान-शौकत वाला शब्द है। इसीलिए इसको रखा गया है। इस सेवा के अधिकारी अपने लिये कुछ असाधारण व्यवहार चाहते हैं।

फिर वे अनुशासन के सम्बन्ध में वही अधिकार चाहते हैं। अब हमें समझ में आ रहा है कि अनुशासन से क्या तात्पर्य है। इसका अर्थ नियमों की चारदीवारी में आचरण है। यहां पर शब्द जिस प्रकार से रखे गये हैं वे भावी सरकारों के लिए समस्याएं पैदा करेंगे। यह सरकार जानती है कि ये शर्तें क्या हैं, परन्तु यदि आप इनको संविधान में शामिल करेंगे और और सिविल सेवा अधिकारियों को मनमानी करने दी गई और उन्होंने अपनी शर्तों को जारी रखने के साथ-साथ उन्हीं अनुशासन सम्बन्धी अधिकारियों की भी मांग की तो भावी सरकारों को बहुत परेशानी का सामना करना पड़ेगा। मुझे पता है कि हम सिविल सेवा के अधिकारियों को वह सब कुछ देंगे जिसके लिए हम वचनबद्ध हैं। उस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु मेरे विचार में उनको संविधान में सम्मिलित नहीं करना चाहिए। सेवा के अधिकारियों को हमारे नेताओं पर भरोसा रखना चाहिए कि वे अपने वचनों को निष्ठापूर्वक निभायेंगे।

हमें इस सेवा पर गर्व है। परन्तु क्या यह वांछनीय है कि वे हमारे समक्ष शर्तें रखें कि वे इन शर्तों पर काम करेंगे? यह बहुत अनुचित बात है। यदि आप इस अनुच्छेद की भाषा को पढ़ें तो आप समझ जायेंगे कि वे अपनी शर्तें रखना चाहते हैं जिन पर कि वे भविष्य में सेवा करना चाहते हैं। मैंने एक संशोधन भेजा था। मैंने उसे प्रस्तुत नहीं किया, क्योंकि मैं इस सेवा अधिकारियों को परेशानी में नहीं डालना चाहता। मेरे संशोधन में यह कहा गया है कि इस संविधान के निर्माण के पांच वर्ष बाद संसद को सेवाओं के कार्य संचालन के संबंध में कानून बनाने का अधिकार होगा। परन्तु मैंने उसे पेश नहीं किया, क्योंकि मैं नहीं चाहता कि सिविल सेवा के अधिकारी यह समझें कि हम उनके लिए कोई परेशानी खड़ी करना चाहते हैं, कि हम उन वचनों को पूरा नहीं करना चाहते जो हमने दिये

हैं। हम ऐसे राष्ट्र के नागरिक हैं जहां यह सिखाया जाता है कि यदि कोई वचन दिया जाये तो उसे निभाया भी जाना चाहिए। हमारे नेता ने हमें यही शिक्षा दी है और हम उस पर अमल करना चाहते हैं। परन्तु उसके साथ ही मैं यह भी नहीं चाहता कि सिविल सेवा के हमारे अधिकारी हमारे समक्ष शर्तें रखें। इन शब्दों के साथ, मैं आशा करता हूं कि प्रारूप समिति इस मामले पर पुनर्विचार करेगी।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस सभा के समक्ष यह निवेदन किये बिना नहीं कह सकता कि हमारे संविधान में इस प्रकार के उपबंध का रखे रहना बिल्कुल अनुचित है। ब्रिटिश सरकार या ब्रिटिश संसद द्वारा बनाये गये संविधानों में इस प्रकार खण्ड रखा जाना ठीक और अच्छा था। परन्तु अब हम स्वतंत्र भारत का संविधान बनाने जा रहे हैं। भारतीय जन अब अपने लिये स्वयं संविधान बना रहे हैं। इन परिस्थितियों में मैं नहीं समझता कि इस प्रकार की किसी गारंटी की कोई आवश्यकता है। यदि गारंटी दी गई है, यदि हमने कोई वचन दिया है, तो वह वचन काफी होना चाहिए और वह केवल भारतीय सिविल सेवा व अन्य प्रतिज्ञाबद्ध सेवाओं के लिए ही नहीं बल्कि पूरे राष्ट्र के लिये, हम सबके लिए है। यदि हम उस वचन का आदर नहीं करते तो संविधान में सम्मिलित एक अनुच्छेद पर भरोसा करके भी राष्ट्र अथवा सिविल सेवाओं को कोई विशेष लाभ नहीं मिलेगा। आप अपने रास्ते से हटकर एक सेवा के लिए, जो वास्तव में हमारी दासता के दिनों का ही अवशेष है अलग से उपबंध करें और फिर उसे बिल्कल उसी रूप में सम्मिलित करें जैसाकि वह 1935 के अधिनियम में विद्यमान है, तो यह देखने में भी अच्छा नहीं लगता। मेरे विचार में यह बिल्कुल अनावश्यक है। मैं नहीं समझता जैसा कि श्री सिधवा ने बताया है, कि सेवाओं के अधिकारी ऐसा करने के लिए वास्तव में जोर डाल रहे हों। मैं नहीं समझता कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हाल में सिविल सेवा के सभी अधिकारियों के साथ कोई परामर्श किया गया है अथवा उन्होंने अनुबंध सम्बन्धी व्यवस्था को जारी रखने के लिये कोई संकल्प पारित किया है या मांग की है कि उनका संविदागत सम्बन्ध अक्षुण्ण बना रहे। कम से कम मुझे इस बात की कोई जानकारी नहीं है। मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि यदि उनसे पूछा जाये तो संभवत: वे स्वयं सबसे पहले आगे बढ़ कर कह सकेंगे कि उनको अपने अधिकारों के लिये किसी संवैधानिक सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है।

दूसरे, यदि वास्तव में हम इस प्रकार का कोई उपबंध रखना ही चाहते हैं तो इन शब्दों को उसमें जोड़ने की क्या आवश्यकता है—"अनुशासनीय विषयों के बारे में उन्हीं अधिकारों—उनके तुल्य ऐसे अधिकारों का जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हों—"। मेरे विचार में इस प्रकार गारंटी तो बिल्कुल समाप्त हो जाती है। "परिवर्तित परिस्थितियों" का क्या अर्थ है? यदि परिस्थितियों में परिवर्तन से कोई सरकार विद्यमान संविदागत सम्बन्धों अथवा दिये गये वचनों में परिवर्तन कर सकती है तो गारंटी का अर्थ ही क्या रहा जाता है? अपने दिये गये वचन से पीछे हटने के लिये किसी भी समय किसी परिस्थिति का लाभ उठाया जा सकता है। मेरे विचार में हमने कुछ विलक्षण स्थिति पैदा कर ली है। एक ओर हम सिविल सेवा के अधिकारियों को संतुष्ट रखने के इच्छुक हैं और यह कहते हैं कि वे बहुत प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं और दूसरी ओर हमने उनको जो कुछ दिया है उसे वापस ले लेना चाहते हैं। मुझे विश्वास है कि वे इन शब्दों "जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में संभव हो" के उपयोग से हमारे आशय को भलीभांति समझ जायेंगे। वास्तव में 1935 के अधिनियम का अनुसरण व अनुकरण करने में हम अंग्रेजों से भी आगे निकल जाना चाहते हैं। भारतीय सिविल सेवा मूलत: अंग्रेजों

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

ने ब्रिटिश कार्मिकों से बनाई थी और वे प्रत्येक अवस्था में, ज्यों-ज्यों भारतीय लोगों के राजनीतिक अधिकारों की बात आगे बढ़ती, उन लोगों के लिये अधिक से अधिक गारंटी चाहते थे जो उनके देश से आये थे और इस देश में सेवारत थे। मुझे विश्वास है कि कोई भी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट किसी भी समय भारतीय कार्मिकों में उतनी ही रुचि नहीं रखता। उनकी रुचि ब्रिटिश कार्मिकों में ही थी और ये गारंटियां उन्हीं ब्रिटिश कार्मिकों के लिये ही थीं। मुझे विश्वास है कि कोई भी भारतीय इतना देशभक्तिहीन नहीं होगा कि वह संवैधानिक गारंटी की मांग करे और न ही वह इतना अनजान होगा कि उसको पता ही न हो कि उस मामले में हमारी सरकार का दृष्टिकोण क्या होगा, कि उसको इस प्रकार दी गई गारंटी पर अधिक विश्वास हो, विशेषकर तब जब कि हम "जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हों" शब्द जोड़ कर इस अनुच्छेद के समूचे प्रभाव को ही समाप्त कर रहे हैं। वास्तव में सिविल सर्विस का इतिहास क्या है और उनके साथ किये गये करारों का मूल्य ही क्या है? इतिहास से पता चलता है कि यद्यपि सिविल सेवा दृढ़ इरादे वाले लोगों की सेवा मानी जाती थी तथा भारत सरकार और सिविल सेवा के बीच संविदागत संबंध सर्वदा अलंघ्य माने जाते थे परन्तु कम से कम एक अवसर ऐसा अवश्य आया जब इस करार की शर्तों का पूरी तरह उल्लंघन किया गया।

वर्ष 1931 में स्वयं उसी ब्रिटिश सरकार को कुछ सख्ती करनी पड़ती और उन्होंने 10 प्रतिशत की कटौती की और ऐसा परिस्थितियों में परिवर्तन के आधार पर किया गया। कुछ लोगों ने इसे स्वैच्छिक कटौती का रंग देने का प्रयत्न किया। वास्तव में करार की अलंघ्यता वर्ष 1931 में परिस्थिति की आकस्मिकता के आगे टिक नहीं सकी। विगत समय में जो कुछ हुआ, उस सबको ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि करार विषयक यह सम्बन्ध समय-समय पर बदल सकते हैं और इसलिए मैं इस अनुच्छेद को संविधान में सम्मिलित करना बुद्धिमत्तापूर्ण अथवा आवश्यक नहीं समझता। यदि गारंटी दिया जाना आवश्यक है तो जो भी गारंटी अपेक्षित है, वह हमने पहले ही दे रखी है। वह वापस नहीं ली गयी है। किसी भी व्यक्ति ने यह सुझाव नहीं दिया है कि उसे वापस ले लिया जाये या कम कर दिया जाये और मेरे विचार में सिविल सेवा के लिये यह पर्याप्त होना चाहिये।

महोदय, एक अन्य कारण भी है और वह यह है कि "जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हो" शब्दों को रखकर इस अनुच्छेद को सम्मिलित करने से एक नयी समस्या पैदा हो जायेगी जो इस समय विद्यमान नहीं है। इस समय हम वित्तीय संकट से गुजर रहे हैं। सम्भव है कि अब से आगामी लगभग तीन महीने के भीतर 1500 रुपये अथवा इससे अधिक वेतन पाने वाले सभी लोगों के वेतन में कटौती करनी पड़े। वास्तव में हमने स्वयं वेतन आयोग के प्रस्तावों संबंधी अपने नेक निर्णय का तिरस्कार किया है। हमने उनकी सिफारिशों को स्वीकार किया गया था कि किसी भी व्यक्ति को 2200 रुपये या उसके लगभग राशि से अधिक वेतन न दिया जाये और फिर भी हमने उससे 50 से 75 प्रतिशत तक अधिक देने की व्यवस्था की है जो वेतन आयोग की सिफारिशों के अनुसार हमारे द्वारा स्वीकृत अधिकतम राशि से भी अधिक है। अत: वर्तमान वित्तीय संकट को और हमारे द्वारा स्वीकृत सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए आगामी कुछ ही महीनों में हमारे लिए यह आवश्यक हो सकता है कि हमें संसद के समक्ष जाना पड़े और यह प्रस्ताव करना पड़े कि भारत में किसी भी व्यक्ति को इतनी-इतनी राशि से अधिक वेतन नहीं मिलेगा तब हमें अपनी कार्यवाही को उचित ठहराने

के लिए परिवर्तित परिस्थितियों के आधार का ही सहारा लेना पड़ेगा। हमें कहना पड़ेगा कि चूंकि परिस्थितियां बदल गई हैं अतः हम आपको 2000 रुपये से अधिक वेतन नहीं दे सकते। बड़े-बड़े वचन देने और बाद में उनसे मुकर जाने का क्या लाभ है। कोई लाभ नहीं, इस बात को कोई भी व्यक्ति समझ सकता है कि भारत की वर्तमान परिस्थितियां ऐसी हैं कि हम आज जिस हिसाब से सिविल सेवा के कार्मिकों को वेतन दे रहे हैं आगे उस हिसाब से नहीं दे सकते। जब हम इन कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं तब संविधान में ऐसे वचन को सम्मिलित करने से क्या लाभ होगा, जिसे हम पूरा नहीं कर सकते? अतः मेरा निवेदन है कि इस अनुच्छेद पर पुनर्विचार किया जाये और जहां तक सम्भव हो, इसे रोक लिया जाये। यदि सिविल सेवा के अधिकारी गारंटी दिये जाने पर जोर देते हैं तो उन्हें अवश्य दीजिए, परन्तु उसको इस प्रयोजन के लिये संविधान में सम्मिलित करने की आवश्यकता नहीं है।

*__श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर__ (मद्रासः जनरल): इस विषय में मेरे विचार भी उतने ही तीक्ष्ण हैं जितने कि डॉ. देशमुख व मेरे अन्य सहयोगियों के हैं। मैं इस बात से निश्चय ही सहमत हूं कि यद्यपि संतुष्ट सिविल सेवा किसी देश के प्रशासन की आधार-स्तम्भ होती है, परन्तु यह सेवा विशेष जिसके लिये हम यह उपबंध करना चाहते हैं पिछले शासन की असाधारण शक्ति से युक्त सेवा थी और आगामी कुछ समय तक भी यह असाधारण शक्ति से युक्त सेवा ही बनी रहेगी। हम इस देश की आम जनता को खाना और कपड़ा उपलब्ध कराने की गारंटी नहीं दे पाये हैं। प्रशासन में अधीनस्थ वर्ग के लिए भी हमने कोई गारंटी नहीं दी है। पिछले दिनों हमने कुछ अनुच्छेद पास किये थे जिनके माध्यम से संविधान में यह कहा गया कि राज्य के सभी कर्मचारी सरकार के प्रसाद पर्यन्त ही पद धारण करेंगे। जो गारंटी हम इस अनुच्छेद के अन्तर्गत दे रहे हैं वह एक असाधारण गारंटी है। इस गारंटी का तात्पर्य यह है कि ये पिछली सरकार के समय शासक थे और इस सरकार के समय भी शासक बने रहेंगे। यह गारंटी हमसे यह भूल जाने के लिए कहती है कि ये लोग, जिनमें से आज भी लगभग 400 सेवा में हैं, यह सोचकर ज्यादतियां करते रहे हैं कि यह देश उनका नहीं है।

यह गारंटी उन लोगों को गारंटी देती है जो विदेशियों के हाथों की कठपुतली बने रहे थे। मेरे मित्र श्री कामत और उन जैसे कुछ अन्य मित्रों ने, जिनमें अपने दृढ़ विश्वास के अनुसार कार्य करने की हिम्मत है, इस देश की खातिर अपने पद त्याग दिये। वे सभी सम्मान योग्य व्यक्ति हैं जिन्होंने उस समय हिम्मत की और अपने भाग्य को इस देश की आम जनता के साथ जोड़ दिया जो स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये जबरदस्त संघर्ष कर रही थी। यह श्रेय इस सेवा को नहीं मिल सकता। उन्होंने उन्हें मिलने वाले धन और वेतन की अधिक परवाह की। यूरोपीय सरकार, जो कुछ समय पूर्व तक हमारी शासक रही, इस देश में किसी नागरिक की निष्ठा पर भरोसा नहीं कर सकती थी, क्योंकि उनकी निष्ठा और हमारी निष्ठा अलग-अलग थी, वे हमारे देश से भिन्न देश के थे और इसीलिए उनकी निष्ठा भिन्न थी। इस देश के किसी नागरिक की इंग्लैंड के बादशाह के प्रति निष्ठा को धन से ही खरीदा जा सकता था। इसलिए उन्होंने जो वेतन दिए और वेतनमान निर्धारित किए उनकी कोई सीमा नहीं थी। गवर्नर जनरल का वेतन 21,000 रुपये प्रति मास रखा गया, गवर्नर का 10,000 रुपये प्रति मास और सेक्रेटरी का 4,000 रुपये प्रतिमास रखा गया—जो हमारी राष्ट्रीय आय के अनुपात से कहीं अधिक था।

हमारी राष्ट्रीय आय 100 रुपये प्रति वर्ष से अधिक नहीं है, जबकि ग्रेट ब्रिटेन की राष्ट्रीय आय 1200 रुपये प्रतिवर्ष है। अमरीका की स्थिति भिन्न है। जहां तक वेतनों का सम्बन्ध है, वे सिविल सर्विस के अधिकारियों को विश्व के अन्य भागों

[श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर]

में दिये जाने वाले वेतनों की अपेक्षा हमारे देश में बहुत अधिक हैं। जहां तक राष्ट्रीय आय का सम्बन्ध है हमारी राष्ट्रीय आय सबसे कम है। पिछली ब्रिटिश सरकार को अपनी सेवा के लिये उन लोगों को खरीदना पड़ा। हमारे सर्वाधिक प्रतिभाशाली व्यक्ति अलग कर लिये गये और, चाहे उनका जन्म कहीं का भी हो और चाहे उनमें देशभक्ति की भावना थी या नहीं थी, पिछली सरकार ने उनसे वे सभी काम करवाये जो वे करवाना चाहती थी।

परन्तु मैं सभा के माननीय सदस्यों से कहना चाहता हूं कि वे कुछ बातों को ध्यान में रखें जो हमारे लोगों को करनी पड़ीं। जो व्यक्ति हमारे नेता है और जिन्होंने इस देश की स्वतंत्रता प्राप्त की है वे कहते हैं कि उन्होंने सामूहिक रूप से और व्यक्तिगत रूप से इनमें से प्रत्येक व्यक्ति को गारंटी दी है, चूंकि यह ब्रिटिश सरकार द्वारा हमारे हाथों में सत्ता सौंपने के लिए एक शर्त थी। वे विशेषकर यूरोपीय अधिकारियों के हितों के लिये भारतीय अधिकारियों के हित के लिये तो इतना नहीं, ये शर्तें चाहते थे। सम्भवतः भारतीय नौकरशाहों के हितों की रक्षा करना चाहते थे क्योंकि वे उनके प्रति निष्ठावान रहे थे और वे नहीं चाहते थे कि हमारी सरकार बनने के बाद उनको किसी कठिनाई का सामना करना पड़े। मैं इस संविधान में ऐसा कोई उपबंध रखने के पक्ष में नहीं हूं। हम बाद में इसको संसद के किसी अधिनियम में शामिल कर सकते हैं। परन्तु इसे विनियमित करने की शक्ति हमारे पास रहनी चाहिए। ये लोग इस देश के सर्वसत्ताधारी बनते जा रहे हैं।

मुझे इन सब बातों की जानकारी है, परन्तु परस्पर दोषारोपण से कोई लाभ नहीं है जबकि हमारे अपने बड़े जिम्मेदार नेताओं ने जिन्होंने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये अपना जीवन लगा दिया, यह आश्वासन दे दिया है। यह नहीं कहा जाना चाहिए कि हमने इस मामले में हस्तक्षेप किया और इस आश्वासन से मुकर गये। यदि मैं इस खण्ड का समर्थन करता हूं तो केवल इसी भावना से ही कर रहा हूं। मैं इस भावना से ऐसा नहीं कर रहा हूं कि इन सब लोगों ने हमारे समय में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये हमारे देश की सेवा की है। मैं यह कह सकता हूं कि जो माननीय सदस्य अभी भी इसका विरोध कर रहे हैं, जो कि बिल्कुल सही भी है, वे यह सांत्वना रख सकते हैं, वे यह समझ सकते हैं कि इस खण्ड के मूल प्रारूप में प्रयुक्त शब्दावली पर उनकी आपत्ति बिल्कुल सही है। परन्तु बाद में जो संशोधन किया गया है वह अधिक व्यापक नहीं है। मैं माननीय सदस्यों का ध्यान द्वितीय सप्ताह की सूची 2 में दिये गये संशोधन संख्या 11 की ओर दिलाना चाहूंगा। बाद में उसके स्थान पर सूची 1 में सम्मिलित संशोधन संख्या 1 को रखा गया है और हमने इसमें थोड़ा-सा ही परिवर्तन किया है। यह संशोधन भारत स्वतंत्रता अधिनियम द्वारा अनुकूलित भारत शासन अधिनियम की धारा 247 के अनुसार है। हमारे नेताओं का भी, जिन्होंने कि गारंटी दी थी, यह आशय नहीं था कि नये संविधान के अधीन सिविल सेवा अधिकारियों को उससे अधिक विशेषाधिकार प्राप्त हों जो पिछली सरकार के समय उनको प्राप्त थे। अतः उनको कोई और विशेषाधिकार न दिये जाने के विचार से यह संशोधन पेश किया गया है। इस संशोधन में कहा गया है कि जैसा कि पिछली सरकार के समय गवर्नर जनरल को, परिस्थितियों के अनुरूप, समय-समय पर उनकी सेवा शर्तों में संशोधन करने के लिये नियम और विनियम बनाने की शक्ति प्राप्त थी, अब वही शक्ति सरकार को प्राप्त होगी। इसलिये संशोधित खण्ड के अधीन, मेरे विचार में हमें अधिक परेशानी नहीं होगी। कुछ असाधारण मामले हो सके हैं जिनमें हमें हस्तक्षेप करना पड़ सकता है, ऐसे स्थिति के लिये इसमें पर्याप्त व्यवस्था है। अतः हमें इस संबंध में अधिक भावुक होने की आवश्यकता नहीं है। निस्संदेह, इसके बिना

भी हमारा काम चल सकता था। परन्तु, इन सेवाओं को ही नहीं बल्कि अन्य व्यक्तियों को भी, जो हमें छोड़ गये हैं, दी गयी गारंटियों और आश्वासनों को देखते हुए मैं सभा के सभी सदस्यों से, जिन्होंने संशोधन प्रस्तुत किये हैं या उन पर बोले हैं, यह अनुरोध करूंगा कि वे अपने संशोधनों पर जोर न दें और इस अनुच्छेद का विरोध न करें।

महोदय, मुझे इस बात की जानकारी है कि पिछली सरकार में केवल 8 सचिव थे जिनका वेतन 4,000 रुपये था। अब उनकी संख्या बढ़कर 18 या 21 हो गई। माननीय सदस्यों को स्मरण होगा कि मेरे माननीय मित्र श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर को सेक्रेटरियट के पुनर्गठन के लिये नियुक्त किया गया था। यह मामला अभी उनके विचाराधीन है, मुझे विश्वास है कि यद्यपि जो गारंटी दी गई है उसके अधीन 4,000 रुपये के वेतन को कम नहीं किया जाना चाहिए, परन्तु हमारे लिये इन में से प्रत्येक को सेक्रेटरी के रूप में नियुक्त करना और सचिवों की संख्या 8 से बढ़ाकर 21 कर देना अनिवार्य नहीं है। अभी भी एन. गोपालस्वामी आयंगर यह सुझाव दे सकते हैं कि हमारे देश के हित में सचिव के केवल 8 पद रहें और शेष को संयुक्त सचिव नियुक्त कर दिया जाये। ऐसा किया जा सकता है। जो लोग गारंटी दिये जाने पर जोर दे रहे हैं उन्हें स्वयं गारंटी मांगने में संकोच होना चाहिए। इस गारंटी का अर्थ क्या है कि उनको 3,000 रुपये के स्थान पर 4,000 रुपये मिलने ही चाहिए। क्या वे जीविका के लिये काम कर रहे हैं या अन्यथा भूखों मर रहे हैं? अभी तक उन्होंने कोई भावभंगी अभिव्यक्ति नहीं की है। उन्हें यह नहीं दिखाया है कि वे स्वतंत्र प्रभुसत्ता सम्पन्न गणतंत्र के नागरिक हैं। उनको भी इस गणतंत्र की प्रगति के लिये अपनी शक्ति लगानी चाहिए। हमारा विचार है कि वे अभी तक अपने ही स्वार्थ पर अड़े हैं। फिर भी हम असहाय नहीं हैं और उनकी संख्या को कम कर सकते हैं। श्री गोपालस्वामी आयंगर सचिवों के पदों की संख्या को 21 या 18 से घटा कर 8 करने के विषय में विचार कर सकते हैं। इसका गारंटी के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है।

यह सिद्ध करने के लिये मेरे पास कुछ अन्य आंकड़े भी हैं कि सिविल सेवा के अधिकारियों की संख्या में कितनी वृद्धि हो गयी है। हम जिस बहुत ही खराब समय, संकट के समय से गुजर रहे हैं उसमें यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम अपने हाथ में शक्ति लें और कुछ अनावश्यक रूप से बनाए गए पदों की संख्या कम कर दें। पिछली सरकार के समय केवल पांच संयुक्त सचिव थे, जबकि आज हमारे पास 30 संयुक्त सचिव हैं। प्रत्येक संयुक्त सचिव को 3,000 रुपये वेतन मिलता है। मैं ये बातें केवल आपको ही नहीं बता रहा हूं बल्कि मैं उन लोगों को भी बता रहा हूं जो यह समझते हैं कि उन्हें गारंटियां दी जानी चाहियें और उनसे उन्हें लाभ होना चाहिये। आखिर सरकार की सद्भावना और आम जनता की सद्भावना सबसे विश्वस्त गारंटी है जिसे कोई व्यक्ति प्राप्त कर सकता है। इस सद्भावना के बिना यदि वे केवल अपने वेतनों पर ही जोर देते रहे तो वे उस पर लम्बे समय तक भरोसा नहीं कर सकते। महोदय, संयुक्त सचिवों की संख्या 5 से बढ़कर 30 हो गयी है।

एक बात और है, पिछली सरकार के अधीन कोई यूरोपीय 25 वर्ष की सेवा के बाद सचिव बनता था और 20 वर्ष की सेवा के बाद संयुक्त सचिव बनता था। अब चूंकि यूरोपीय अधिकारी चले गये हैं तो जो अधिकारी निचली सीढ़ी पर थे, ऐसे उप सचिव जिनका सेवा काल अभी 10-12 वर्ष का हुआ था, वे तत्काल संयुक्त सचिव बन गये हैं, क्योंकि उन यूरोपीयों की जगह खाली हो गई है। सिद्धान्त रूप में यह गलत है। हमें उनको एकाएक ज्वाइंट सेक्रेटरी नियुक्त नहीं करना चाहिए था। अब भी अधिक विलम्ब नहीं हुआ है। इस गारंटी के बावजूद हम उनसे कह

[श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर]

सकते हैं "आपको 3,000 रुपये वेतन पाने का पात्र बनने के लिये आपकी इतने वर्ष की सेवा पूरी होनी चाहिये।" अतः हम इस अनुच्छेद को पास भी कर दें तो भी हम असहाय नहीं होंगे। इस अनुच्छेद से जो कठिनाइयां हो सकती हैं उनमें और जिस सटीकता से ये अधिकारी धनराशि का दावा कर सकते हैं उसमें श्री गोपालस्वामी आयंगर के सभापतित्व में नियुक्त समिति द्वारा की जाने वाली उपयुक्त कार्यवाही के माध्यम से कमी की जा सकती है।

इस सेवा के बारे में मैं एक और बात कहना चाहता हूं। हम उनके पक्ष में एक अपवाद बना रहे हैं। हम उनकी आदत बिगाड़ रहे हैं। परन्तु आज भी मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि उनमें से कुछ अधिकारियों ने अपने रवैये में परिवर्तन नहीं किया है। उन्होंने अपने आपको नई स्थिति के अनुसार नहीं ढाला है। वे यह महसूस ही नहीं करते कि वे इसी देश के अभिन्न अंग हैं। हम भ्रष्टाचार के बारे में बहुत कुछ सुनते हैं। यदि किसी विभाग में भ्रष्टाचार है तो उसके लिये कौन जिम्मेदार है? यदि कोई विभागाध्यक्ष दृढ़ निश्चय कर ले कि वह भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ फेंकेगा तो क्या वह ऐसा कर नहीं सकता? क्या मैं अथवा कोई मंत्री—जिसको प्रशासन के कार्य संचालन की कोई जानकारी नहीं है, इसकी जांच कर सकता है? सिविल सेवा अधिकारी अपने पदों पर कार्यरत रहने का दावा कर सकते हैं क्योंकि उनको अनुभव प्राप्त है। सर्वाधिक प्रतिभाशाली व्यक्तियों को इस सेवा में चुना गया है, आज यदि किसी विभाग में जहां 4,000 रुपये वेतन पाने वाला सचिव विभागाध्यक्ष है, भ्रष्टाचार हो तो उसे स्वयं पर शर्म आनी चाहिए। क्या इसके लिये मैं कानून पास कराने जाऊं कि भ्रष्टाचार का अन्त होना चाहिए? कौन भ्रष्ट है? यदि घर में कोई बात गलत होती है तो उसका जिम्मेदार परिवार के प्रबंधक को ही ठहराया जाना चाहिए। इस प्रकार हमें उनको कुछ और समय तक यह पुराना जत्था जब तक कार्यरत है एक हजार रुपये अधिक देने में कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु इसके बदले में हम यह आशा करते हैं कि वे भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ फेंकेंगे। अन्यथा वे यह वेतन पाने के अधिकारी नहीं हैं।

यदि हमने संविधान में ऐसा उपबंध रखा है कि हमें संविधान में संशोधन करने के लिये अनिवार्यता और अधिक बहुमत की आवश्यकता होगी तो संसद में हमें अन्य प्रयोजनों के लिए सामान्य बहुमत की आवश्यकता होगी, नियमों व विनियमों के अधीन संविधान में संशोधन करने के लिये हमें सामान्य से अधिक बहुमत की आवश्यकता होगी। जो कुछ हमने किया है उसके बावजूद, जो आश्वासन दिये हैं उनके बावजूद और उन्हें बड़ी ऊंची दर से वेतन दिये जाने के बावजूद, जिसे देने की स्थिति में हम नहीं हैं, यदि किसी विभाग में भ्रष्टाचार होता है तो हम जानते हैं कि उनसे कैसे निपटना है। संविधान चाहे पत्थर पर, कठोर पत्थर पर अमिट रूप से लिखा जाये, हम उसको भी बदल सकते हैं।

इन शब्दों के साथ, मैं सदस्यों से और सभा से भी अपील करता हूं और अनुरोध करता हूं कि सभी संशोधन वापस ले लिए जाएं और इस अनुच्छेद को, यद्यपि बिना हिचकिचाहट के नहीं, पास कर दिया जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूं। मैं अपने माननीय मित्र श्री अनन्तशयनम आयंगर के भाषण को समझ नहीं पाया

हूं। आरम्भ में उन्होंने इस अनुच्छेद का विरोध किया था परन्तु किसी प्रकार बीच में अपनी दिशा बदल ली और उसका समर्थन करना आरम्भ कर दिया। यदि मैं किसी अनुच्छेद के विरुद्ध हूं तो मैं उसका विरोध करूंगा, यदि मैं उसके पक्ष में हूं तो उसका समर्थन करूंगा। मैं दो नावों में सवार नहीं हो सकता।

महोदय, इस अनुच्छेद का समर्थन करने का एक महत्वपूर्ण कारण मेरे मन में है। इस सभा के कुछ सदस्यों द्वारा संविधान में इस अनुच्छेद को सम्मिलित करने पर आपत्ति किये जाने से मेरे मन में संदेह पैदा होता है। उनके मन में क्या है? वे इस अनुच्छेद का विरोध क्यों कर रहे हैं? क्या वे अपने दिये गये वचन को पूरा करना चाहते हैं या नहीं? जो राष्ट्र महत्वपूर्ण सिद्धान्तों की बलि चढ़ा देता है, जो अपने दिये हुए वचन को पूरा नहीं करता, उसका राजनीति में कोई भविष्य नहीं रह जाता। हमने कतिपय प्राधिकारियों को वचन दिया है जो सत्ता हस्तांतरण से पूर्व विद्यमान थे। मैं यह पूरी तरह जानता हूं कि यदि हम अपने वचन पर कायम नहीं रहते तो हमारा कुछ बिगड़ेगा नहीं। परन्तु इसका प्रभाव बहुत बुरा पड़ेगा। इसलिए मैं इस अनुच्छेद के पक्ष में हूं। हमने जो वचन दिया है, हमें उस पर कायम रहना चाहिए।

मेरा इस अनुच्छेद के पक्ष में होने का एक अन्य कारण भी है। यदि इस बात की गारंटी होती कि जिन्होंने ब्रिटिश सरकार को वचन दिया है वे तब तक सत्ता में रहेंगे जब तक कि इन सेवाओं के अधिकारी भारत सरकार की सेवा में बने रहते हैं, तो मैं इस अनुच्छेद के पक्ष में न होता। परंतु हमने एक लोकतंत्रात्मक संविधान बनाया है। हम नहीं जानते कि कल हम सत्ता में रहेंगे या नहीं एक अन्य कारण से भी मैं इस अनुच्छेद को संविधान में सम्मिलित किए जाने के पक्ष में हूं। वयस्क मताधिकार में मेरा कोई विश्वास नहीं है। मैं नहीं कह सकता कि भविष्य में भारत की भावी संसद में किस प्रकार के लोग आयेंगे। अतिवाद के जोश में अथवा किसी आमूल सुधारवादी विचारधारा की बिना पर वे इस उपबंध को हटा सकते हैं जो हमने संविधान के अनुच्छेदों में सिविल सेवा के पक्ष में रखा है। इसलिए मैं चाहता हूं कि इसको संविधान का अंग बना दिया जाये ताकि संविधान में संशोधन करना इतना सरल न होने के कारण उसे हटाना उनके लिए मुश्किल हो जाएगा जो हम आज अनुबंधित कर रहे हैं।

श्री त्यागी ने एक बात उठाई थी कि इस संविधान सभा ने कुछ वचन दिये हैं और हमें भारत की भावी संसद के स्वविवेक पर कोई रोक नहीं लगानी चाहिए। मैं कहता हूं कि हमने कोई वचन नहीं दिये। हमारे नेताओं ने कुछ वचन दे रखे हैं। हम उन पर दृढ़ हैं और संसद के स्वविवेक पर कोई रोक लगाने का कोई प्रश्न ही नहीं है क्योंकि उससे तो भावी संसद प्रभुसत्ता सम्पन्न निकाय नहीं रहेगी। आज हम जो कुछ कर रहे हैं। वह संसद तथा संविधान में उल्लिखित अन्य विभिन्न संस्थाओं की शक्ति का विस्तार करने या उसे सीमित करने के लिये कर रहे हैं। हम प्रभुसत्तासम्पन्न हैं, भावी संसद नहीं। हम कार्यपालिका, न्यायपालिका अथवा संसद के स्वविवेक पर रोक लगा सकते हैं। हम इसी प्रयोजन के लिये संविधान का निर्माण कर रहे हैं।

ये विचार मेरे मन में थे और इसलिये मेरी राय यह है कि इस सभा को सर्वसम्मति से इस अनुच्छेद का समर्थन करना चाहिए जिससे विश्व पर यही प्रभाव पड़े कि हम अपने वचन के पक्के हैं। यह तो केवल पहला कदम है—हम नहीं जानते कि हमें अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के दौरान और कितने वचन देने पड़ेंगे। एक गलत कदम हमें विनाश की ओर ले जा सकता है। यह कोई अधिक महत्वपूर्ण कदम नहीं है। हमें यह जानना चाहिए कि विश्व के अन्य राष्ट्रों के साथ अपने

[श्री बृजेश्वर प्रसाद]

सम्बन्धों के बारे में हमें किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए। इसलिए मैं इस प्रश्न को गम्भीरता से लेता हूं और इसे बहुत महत्व देता हूं। मैं पूरी तरह से इस अनुच्छेद के पक्ष में हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैंने इस खण्ड को निकाल देने के लिये संशोधन संख्या 12 पेश किया था। मैं इस अनुच्छेद को जितना पढ़ता हूं, मुझे उतनी ही अधिक हैरानी होती है कि इसको संविधान में सम्मिलित करने के लिए क्यों रखा गया है। यह बात तो मेरी समझ में आती है कि भावी संसद सिविल सेवा के पुराने अधिकारियों को सेवा की पुरानी शर्तों पर ही जारी रखने की अनुमति दे दे, परन्तु यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि जो गारंटियां उनको पहले प्राप्त थीं उन सभी गारंटियों की व्यवस्था संविधान में की जाये। कांग्रेस अपने आंदोलन के प्रारम्भ से ही सिविल सेवा को दृढ़ इरादे वाली सेवा मानती रही है जिसने हमें दास बनाया और इसकी सेवा शर्तों की ओर जिस प्रकार इसकी आदत बिगाड़ी गयी उसकी आलोचना करती रही है। इसे ऐसी सेवा माना जाता था जिसको सभी सुख, सुविधाएं उपलब्ध थीं। मेरे विचार में अब जब हम स्वतंत्र हो गये हैं तब हमें वह सब कुछ नहीं रखना चाहिए जिसकी हम अब तक आलोचना करते रहे हैं और हमें स्पष्ट रूप से यह कह देना चाहिए कि उन शर्तों को जारी रखने का तनिक भी कोई कारण दिखाई नहीं देता। मुझे बताया गया है कि उनको कुछ गारंटियां व आश्वासन दिये गये हैं। मुझे इन किसी की कोई जानकारी नहीं है, परन्तु यदि ऐसा किया गया तो इस सम्बन्ध में मेरा सुझाव यह है कि संसद को उन्हें पूरा करने का प्रयास करना चाहिए, परन्तु भावी संसद को किसी बात से बांधना और यह कहना कि उनको अपने कर्मचारियों की सेवा शर्तें तय करने का अधिकार नहीं होगा कुछ ऐसी बात है जो संसद की प्रभुसत्ता के लिए अपमानजनक है।

फिर, मैं सिविल सेवा के पुराने अधिकारियों के काम से भी प्रसन्न नहीं हूं। मैं जानता हूं कि उनमें बहुत से व्यक्ति ऐसे भी हैं जिन्होंने बहुत अच्छा काम किया है और जो, जैसा कि एक बार सरदार ने कहा था, सोने में तोलने लायक है, परन्तु यह बात सबके बारे में नहीं कही जा सकती और मेरी अपनी शिकायत यह है कि जिस प्रकार का व्यवहार वे अब तक भी कर रहे हैं उसी के कारण हमारे देश को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। मेरे विचार में सिविल सेवा के अधिकारियों के साथ अब बनाई जा रही सेवाओं—प्रशासनिक सेवाएं—से भिन्न तरीके का व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए, अन्यथा इससे दुर्भावना पैदा होगी। उन सबके साथ समान व्यवहार किया जाना चाहिए। वास्तव में उनकी सेवा का रिकार्ड ऐसा नहीं है जैसा कि कोई चाहेगा कि वह होना चाहिए था। श्री अनन्तशयनम आयंगर ने बताया है कि हमारे स्वतंत्रता संग्राम के दौरान इन लोगों ने राष्ट्र के साथ किस प्रकार धोखा किया था। इसलिये मेरे विचार में यह अनुच्छेद कालदोष है। इसको हमारे संविधान में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए और इसको निकाल देना चाहिए।

***श्री कुलधर चालिहा** (असम-जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि जिस रूप में यह खण्ड है उसका समर्थन करना कठिन बात है, परन्तु साथ ही यह भी है कि हमारे उन लब्धप्रतिष्ठ नेताओं ने वचन दिये हैं जिन्होंने स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये अपने जीवन की सुख-सुविधाओं का बलिदान कर दिया और उनके वचनों का आदर किया ही जाना चाहिए। इसका एक दूसरा पक्ष यह है कि हम इस प्रकार की दुविधा में फंसे हैं। हम इस खण्ड का समर्थन इसलिए करना चाहते हैं कि हमारे महान नेताओं ने अपना वचन दे रखा है, परन्तु इसके साथ

ही यह बात भी है कि हम अपने निर्वाचकों से कहते आ रहे हैं कि जब हमें स्वतंत्रता प्राप्त हो जायेगी तब हम विभिन्न सेवाओं के अधिकारियों के वेतन कम करके इतने कर दें कि वे उनका भुगतान कर सकें। जैसाकि श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने कहा है जो वचन दिये गये हैं उनका समर्थन करने के लिये हम बाध्य हैं और हम उन्हें इस प्रकार पूरा करने के लिए बाध्य हैं कि जिससे सेवाओं के अधिकारियों में विश्वास की भावना पैदा हो जाये। हम भी सेवाओं के अधिकारियों के बारे में सोचते हैं क्योंकि उन्होंने कुछ ऐसे काम किए हैं जिनके बिना सरकार चलाना सम्भव नहीं होगा। वे विश्व की सर्वोत्तम सेवाओं में से एक हैं और अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों में उन्होंने अपने कर्तव्य को भलीभांति निभाया है। फिर भी यह उनके अपने सोचने की बात है कि देश की ऐसी स्थिति है कि उनको कुछ बलिदान करना चाहिए और वे उन शर्तों का परित्याग कर दें जिनकी उनके लिए व्यवस्था की गई थी और जिन शर्तों पर वे काम करना चाहते थे, सर्व सुख-सुविधा सम्पन्न इस सेवा की आदत ली कमीशन ने अपनी अधिक बिगाड़ दी और तब भी हम चिल्लाते रहे। अत: हमने यदि कोई वचन दिये हैं तो हमें उनका पालन करना चाहिए जैसाकि श्री आयंगर ने कहा कि खाद्यान्न के बारे में हम कोई वचन नहीं दे सके और फिर भी हम इस मामले में वचन दे रहे हैं। क्या हम उचित कर रहे हैं? क्या हमारे लिए अर्थव्यवस्था समिति की सिफारिशें लागू करना अनिवार्य नहीं है? श्री आयंगर ने एक दिन कहा था कि समिति ने अनेक बातों की सिफारिश की है परन्तु हमने उनको क्रियान्वित नहीं किया है। क्या जनता को दी गयी गारंटियों को पूरा करना हमारे लिए अनिवार्य नहीं है?

यदि हम सभी परिस्थितियों पर दृष्टिपात करें तो हमें वेतनों में वृद्धि करना बंद कर देना चाहिए और इस मामले में हमें पाकिस्तान के आदर्श का अनुसरण करना चाहिए। उन्होंने वेतन में केवल 30 प्रतिशत की वृद्धि की है जिसके वे लोग अधिकारी थे। जब कोई व्यक्ति संयुक्त सचिव बनता है तो उसे 3000 रुपये मिलते हैं। इतनी राशि क्यों दी जानी चाहिए? यदि उसके वेतन का 30 प्रतिशत उसे और दे दिया जाये तो वह पर्याप्त होना चाहिए। गारंटी या प्रतिज्ञा के सही-सही शब्दों की मुझे जानकारी नहीं है, परन्तु मैं श्री शिब्बन लाल सक्सेना के साथ सहमत हूं कि संविधान में कोई ऐसा उपबंध नहीं करना चाहिये जो भीवी पीढ़ी के हाथ बांध दे। अनेक मामलों में मैं श्री अनन्तशयनम आयंगर द्वारा कही गई बातों से सहमत हूं और मैं आशा करता हूं कि प्रारूप समिति इस पर विचार करेगी और सुनिश्चित करेगी कि इस अनुच्छेद में इस प्रकार संशोधन किया जाये कि यह भावी पीढ़ी के लिये कोई बन्धनकारी न हो।

***बाबू राम नारायण सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, कभी-कभी सभा के समक्ष विचार के लिये ऐसे मामले आ जाते हैं जिनका समर्थन करना बहुत कठिन हो जाता है। फिर भी मेरा इरादा विचाराधीन उपबंध का विरोध करने का नहीं है, क्योंकि राष्ट्र की ओर से सिविल सेवा के अधिकारियों को गारंटी दी गई है कि उनके हितों की सुरक्षा की जायेगी और उनकी परिलब्धियों तथा विशेषाधिकारों में जिनके वे अब तक अधिकारी थे, कोई परिवर्तन नहीं किया जायेगा। वास्तव में उनको हर प्रकार का आश्वासन दिया जा रहा है। परन्तु मेरी समझ में यह नहीं आ रहा है कि इस समय इस प्रकार की गारंटियां दिये जाने की क्या आवश्यकता है। इन आश्वासनों की उस समय आवश्यकता हो सकती थी जब अंग्रेज हमारे देश से गये थे क्योंकि तब सिविल सेवा के अधिकारियों को अपने भविष्य के बारे में शंका थी कि कहीं उनको सेवा से हटा न दिया जाये। परन्तु अब तो इस प्रकार की कोई शंका नहीं है। स्थिति बिल्कुल बदल गयी है। अब वे महसूस करने लगे हैं कि देश का प्रशासन उनके बिना नहीं चल सकता है। इसलिये इस समय इस प्रकार की गारंटी की कोई आवश्यकता नहीं है।

[बाबू राम नारायण सिंह]

फिर भी यदि आप उनको गारंटियां देना चाहते हैं तो मुझे ऐसा किये जाने में कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु हमें यह पता होना चाहिए तथा मैं यह और कह दूं कि इस सभा के प्रत्येक सदस्य को अपने हृदय में यह बात नोट कर लेनी चाहिए कि कुछ समय पूर्व इन्हीं सेवाओं ने अंग्रेजी शासन के बने रहने में उनकी सहायता की थी, उनके द्वारा हमारे साथ दुर्व्यवहार किया जाता था, हमारा दमन किया जाता था और हमें जेलों में भेजा जाता था। मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारे देश में सिविल सेवा के अधिकारी यहां ब्रिटिश शासन के समर्थक थे। परन्तु अब उनको समझ लेना चाहिए कि अब हमें किसी का शासन नहीं चाहिए। अब हमने स्वराज्य पा लिया है और स्थापित कर दिया है। स्वराज्य में, सिविल सेवा के अधिकारियों को जनता को आश्वासन देना चाहिए कि वे ईमानदारी के साथ देश की सेवा करेंगे। अपनी ओर से हम उनको यह आश्वासन देते हैं कि उनका भविष्य सुरक्षित रहेगा, परन्तु उनकी ओर से कोई आश्वासन नहीं आ रहा कि वे ईमानदारी से देश की सेवा करेंगे और प्रशासन में भ्रष्टाचार नहीं होगा। अब सभी इस बात को जानते हैं कि उनके व्यवहार में लेशमात्र भी परिवर्तन नहीं आया है और अब भी वे वैसे ही हैं जैसे पहले थे।

पहले—मैं दो वर्ष पूर्व की बात कर रहा हूं—वे सोचते थे कि वे देश के मालिक हैं, वे मालिक ही रहेंगे और जनता पर शासन करते रहेंगे। यही मानसिकता उनमें आज भी काम कर रही है। अब चूंकि अंग्रेज चले गये हैं और जनता की लोकप्रिय सरकार बन गयी है तो सिविल सेवा के अधिकारियों को भी अपना व्यवहार और दृष्टिकोण बदलना चाहिए, जिससे जनता यह महसूस करे कि वे जनता का दमन करने और उस पर शासन करने के लिए नहीं हैं, बल्कि उनकी सेवा व रक्षा करने के लिए हैं। परन्तु मुझे खेद है कि उनके द्वारा इस आशय का कोई आश्वासन नहीं दिया जा रहा है। मैं यह निवेदन कर दूं कि श्री अनन्तशयनम आयंगर द्वारा व्यक्त किये गये विचार बिल्कुल सही हैं। हमें इस बात पर भी विचार करना होगा कि ये लोग कहां तक ठीक से जनता की सेवा और रक्षा कर सकते हैं। सिविल सेवा के अधिकारियों को समझ लेना चाहिए कि उन्होंने अपने आपको अभी तक नहीं बदला है और जब तक वह अपने आपको नहीं बदलते तब तक संविधान में उनकी रक्षा के लिए दी जाने वाली गारंटियों का कोई अर्थ नहीं होगा। उनको राष्ट्र की ईमानदारी से सेवा करनी होगी और ऐसा करने के लिए उनको जनता की इच्छाओं का आदर करना होगा। उन्हें यह बात नोट करनी होगी कि जब तक वे अपनी अत्यन्त पुरानी नीति व व्यवहार नहीं बदलेंगे तब तक संविधान से उनके लिये दी गयी गारंटियों से उन्हें कोई लाभ नहीं पहुंचेगा।

मुझे अधिक और कुछ नहीं कहना है सिवाय इसके कि मैं आशा करता हूं कि वे अपने कार्यों व व्यवहार से देश की सेवा करेंगे और अपने आपको सदा देश का सेवक समझेंगे, मालिक नहीं। अब उन्हें मालिकपन का विचार छोड़ देना चाहिए।

***माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल** (बम्बई-जनरल): महोदय, मुझे इस बात से दुख हुआ है कि श्री अनन्तशयनम आयंगर जैसे वरिष्ठ सदस्य, जो कि इस सभा के एक जिम्मेदार सदस्य हैं और जो कि सभा के उपाध्यक्ष भी हैं, यह सोचते हैं और अपनी यह राय अभिव्यक्त करते हैं कि सिविल सेवा के अधिकारी गत दो या तीन वर्षों से बड़ी कठिन स्थिति में प्रशासन का कार्य चला रहे हैं और साथ ही यह भावना भी संजोये हुए हैं कि वे अधिकारी हमारे देश के शत्रु

हैं। यदि ऐसी बात है तो यह उनका, अथवा वैसे ही विचार रखने वाले लोगों का काम था कि वे पहले एक संकल्प प्रस्तुत करते कि उन अधिकारियों की सेवाएं समाप्त कर दी जायें और फिर शून्य में प्रशासन को चलाते—क्योंकि उनके विचार में कांग्रेसजन अथवा कांग्रेस कार्यकर्ताओं को छोड़कर उन अधिकारियों का स्थान लेने के लिये कोई अन्य व्यक्ति उपलब्ध नहीं थे। मुझे बहुत दुख हुआ है कि जिन लोगों से हमने काम लेना है, हम उन्हीं के साथ निरन्तर झगड़ रहे हैं। यदि यही बात है तो हम देश की सेवा नहीं कर रहे हैं बल्कि भारी अनिष्ट कर रहे हैं।

उन्होंने कहा कि यह गारंटी नहीं दी जानी चाहिए थी। वह अब तक क्या करते रहे हैं? जिन लोगों के ऐसे विचार हैं मैं उनसे कहना चाहता हूं कि यह गारंटी किसी गुप्त तरीके से तो नहीं दी गई थी। ब्रिटिश सरकार के साथ जो भी व्यवस्था की गई थी वह गुप्त तरीकों से तो नहीं की गई थी, किसी एक व्यक्ति द्वारा तो नहीं की गई थी, वरन् हमारे प्रतिनिधियों द्वारा, राष्ट्र के मान्यता प्राप्त प्रतिनिधियों द्वारा की गई थी। जब श्री हेंडरसन यहां पर सेवाओं के अधिकारियों सम्बन्धी मामले का समाधान करने के लिये आये थे तो उन्होंने मेरे साथ विस्तृत चर्चा की थीं। उन्होंने कहा था कि सत्ता हस्तांतरण से पूर्व ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिये जिससे पार्लियामेंट इस बारे में पूरी तरह संतुष्ट हो जाये—कि सत्ता का हस्तांतरण तभी होगा जब सेक्रेटरी ऑफ स्टेट्स के साथ समझौता है, सदस्यों को गारंटियां दे दी जायेंगी। सेक्रेटरी ऑफ स्टेट की सेवाओं के 50 प्रतिशत से अधिक सदस्य यूरोपीय अथवा ब्रिटेन के थे और शेष भारतीय थे। तब उन्होंने सुझाव दिया था कि भारत और इंग्लैंड के बीच इस संबंध में एक समझौता होना चाहिए। यह भी सुझाव दिया गया था कि यदि वे सर्विसेज को छोड़ते हैं, क्योंकि वे भारतीय प्रशासन में सेवा नहीं करना चाहेंगे, तो उनको उचित मुआवजा दिया जाना चाहिये और यह कि उन्हें, आनुपातिक पेंशन भी दी जानी चाहिये। सत्ता हस्तांतरण के प्रश्न पर विचार करने से पूर्व उनकी पद-स्थिति, उनका समयबद्ध वेतनमान आदि सभी बातों का समाधान किया जाना था। मैंने काफी लम्बी बातचीत की थी। उस समय मुसलमानों और गैर-मुसलमानों की संयुक्त सरकार थी। उस समय एक अखिल भारत सरकार थी और इस बातचीत से कुछ निष्कर्ष निकले थे जो मंत्रिमंडल के समक्ष रखे गये थे—उस समय संयुक्त मंत्रिमंडल था—और उन्होंने उनको स्वीकार कर लिया था। फिर वे निष्कर्ष पार्लियामेंट को भेजे गये और वे वहां पर स्वीकार कर लिये गये। अनेक यूरोपीय, जो यहां पर सेवाओं में थे, अब छोड़कर चले गये हैं, परन्तु जब बातचीत चल रही थी तो मैंने उनसे कहा था वे भारतीय व्यक्तियों का मामला हम पर छोड़ दें और हम जैसा न्यायोचित समझें उनके साथ व्यवहार करेंगे, हम उन पर विश्वास करेंगे और वे हम पर विश्वास करेंगे और अन्त में वे कुछ शर्तों पर सहमत हो गये।

अब मैं यह बताना चाहता हूं कि जब हम यह व्यवस्था कर रहे थे तब किसी व्यक्ति ने कोई आपत्ति नहीं की थी, परन्तु यदि उनको हम पर संदेह था तो उस समय उनके लिये इस बात की काफी गुंजाइश थी कि वे सामने आते और बाहर की एजेंसियों से कुछ अच्छी शर्तों कर काम कराते। अब भी यदि आप उनको नहीं रखना चाहते तो आप विकल्प ढूंढ लीजिए, उनमें से बहुत से लोग चले जायेंगे, उनमें से योग्यतम व्यक्ति तो चले ही जायेंगे। मैं आपको आश्वस्त करना चाहता हूं कि मैंने उनके साथ इस कठिन समय में काम किया है—मैं पूरी जिम्मेदारी के साथ बोल रहा हूं—मैं कहना चाहता हूं कि देशभक्ति, निष्ठा, ईमानदारी और योग्यता के मामले में आपको उनका विकल्प नहीं मिल सकता। वे उतने ही अच्छे हैं जितने कि हम हैं और इस सभा में, सार्वजनिक रूप से, अपमानजनक

[माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल]

शब्दों में उनकी निन्दा करना और इस प्रकार उनकी आलोचना करना अपना और देश का अनिष्ट करना है। यह मेरा सोचा समझा हुआ मत है।

अब मैं कुछ अन्य तथ्य आपके सामने रखना चाहता हूं कि जिनसे आप संतुष्ट हो जायेंगे कि गारंटियां क्यों दी गई थीं। आपने देखा था, पंजाब में क्या हो रहा था। पांच जिलों में जहां तबाही मची हुई थी, पांच अंग्रेज अधिकारी सत्ता में थे और कुछ नहीं किया जा सका। मैंने गुड़गांव के जिला मजिस्ट्रेट को स्थानान्तरित करवाने का प्रयत्न किया। परन्तु मुझे सफलता नहीं मिली और वहां एक ब्रिटिश अधिकारी ने प्रमुख कांग्रेसजनों को गिरफ्तार कर लिया, जबकि उनकी कोई गलती नहीं थी और उनको जेल में, बन्धकों के रूप में, बन्द कर दिया। वह इतना अक्खड़ था कि बार एसोसिएशन के प्रेसीडेंट द्वारा उसके समक्ष प्रस्तुत आवेदन पर उसने लिख दिया कि वे लोग निर्दोष थे, कि उनको गिरफ्तार नहीं किया जाना चाहिए था और उनको तत्काल रिहा कर दिया जाये, कि वे लोग बन्धक के रूप में रखे गये थे। उसके काम करने का यह तरीका था। मुझे यह जानकारी गहरा धक्का लगा और मैं गुड़गांव गया। रास्ते में मैंने उसे आते देखा और मैंने उससे पूछा "क्या आपने बन्धक के रूप में कुछ लोगों को गिरफ्तार किया है?" उसने उत्तर दिया "नहीं तो, आपको किसने बताया है?" सौभाग्य से मेरे पास वह दस्तावेज था जिस पर उसने पृष्ठांकन किया था और मैंने वह उसे दिखा दिया। उसने कहा "यह आपको कैसे मिला?" मैंने कहा, "प्रश्न यह नहीं है। यह आपका पृष्ठांकन है या नहीं?" उसके बाद मैंने बहुत कोशिश की, मैंने पंजाब के तत्कालीन गवर्नर को लिखा, मैंने वाइसराय से भी इस बारे में चर्चा की परन्तु मुझे उसको हटाने में बहुत कठिनाई हुई। और आप जानते हैं कि गुड़गांव तथा अन्य जिलों में किस प्रकार तबाही मची हुई थी। यह हालत पंजाब में ही नहीं थी, अन्य स्थानों पर भी ऐसी अनेक घटनाएं हो रही थीं। उस समय आशंका की स्थिति बनी हुई थी और हम भारत को खो भी सकते थे। तब हमने इस बात पर जोर डाला कि हम ऐसी स्थिति में पहुंच गये हैं कि सत्ता का हस्तांतरण तत्काल हो जाना चाहिए, चाहे कुछ भी हो, और फिर हमने त्याग-पत्र देने का निर्णय किया। उस समय लॉर्ड माउंटबेटन भारत में आये।

मैं आपको यह अंदरूनी इतिहास बताता हूं जिसे कोई नहीं जानता। जब हम एक ऐसी अवस्था में पहुंच गये कि शासन हमारा सब कुछ चला जाता, तब मैंने अन्तिम चारे के रूप में देश के विभाजन को स्वीकार किया था। सरकार में हमारे पास पांच या छः सदस्य थे—मुस्लिम लीग के सदस्य। उन्होंने अपने आपको ऐसे सदस्यों के रूप में स्थापित कर लिया था जो देश का विभाजन कराने के लिये ही आये थे। उस अवस्था में हमने विभाजन के विकल्प को स्वीकार किया था। हमने निर्णय किया कि इस शर्त पर विभाजन माना जा सकता है कि पंजाब का विभाजन किया जाये—वे सारा पंजाब चाहते थे—कि बंगाल का विभाजन किया जाए—वे कलकत्ता और सारा बंगाल चाहते थे। श्री जिन्ना कटा-छंटा पाकिस्तान नहीं चाहते थे, परन्तु उन्हें भी यह मानना पड़ा। हमने कहा कि इन दो प्रान्तों का विभाजन किया जाना चाहिए। मैंने एक और शर्त रखी कि यदि इस बात की गारंटी दी जाये कि ब्रिटिश सरकार देशी रियासतों के मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगी तो दो महीने की अवधि में सत्ता का हस्तांतरण कर दिया जाना चाहिए और उस अवधि के भीतर पार्लियामेंट को एक अधिनियम पास कर देना चाहिए। हमने कहा "हम इस मामले के साथ स्वयं निपटेंगे, इसको हम पर छोड़ दो, आप किसी का पक्ष मत लो। सर्वोपरि सत्ता का अब अन्त होने दीजिए, आप प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप

से किसी भी प्रकार से इस मामले को पुनर्जीवित न करें। आप हस्तक्षेप मत कीजिए। हम अपनी समस्या का समाधान कर लेंगे। राजा-महाराजा हमारे हैं और हम उनके साथ निपट लेंगे।" उन शर्तों पर हमने विभाजन की बात स्वीकार की थी और उन्हीं शर्तों पर दो महीने के भीतर पार्लियामेंट में विधेयक पास किया गया था और सभी तीनों पक्षों ने उस पर सहमति व्यक्त की थी। ब्रिटिश पालिर्यामेंट के इतिहास में कोई दृष्टांत दिखा दीजिए जिसमें दो महीने के भीतर कोई विधेयक पास किया गया हो। परन्तु इस मामले में यह किया गया। उसी के परिणामस्वरूप इस पार्लियामेंट का जन्म हुआ।

अब आप कहते हो कि नेताओं ने ये गारंटियां क्यों दीं? इसलिए दीं कि आपको इसी बात को लेकर अपने नेताओं की आलोचना करने का अवसर मिल सके और क्या? आप एक महान देश की संसद के जिम्मेदार सदस्य हैं। इस संसद के नेता को अमरीका ने आमंत्रित किया है जो कि बहुत बड़ा सम्मान है जो उनको दिया जा सकता था। उनका बहुत आदर व सम्मान किया गया है। वे उनको हर प्रकार के सम्मानित कर रहे हैं। आप यहां पर कहते हो "नेताओं ने ये आश्वासन क्यों दिये?" बीते समय को याद कीजिए। उसको आप भूल क्यों जाते हैं? क्या आपने हाल ही का अपना इतिहास पढ़ा है?

ऐसी बातें करने का क्या लाभ है कि जब हम जेलों में थे तब सेवाओं के ये लोग नौकरी कर रहे थे? मैं स्वयं गिरफ्तार किया गया था, मैं अनेक बार गिरफ्तार किया गया हूं। परन्तु उससे सेवाओं में काम करने वाले व्यक्तियों के प्रति मेरी भावनाओं में कभी कोई अन्तर नहीं पड़ा है। मैं कलंकियों का समर्थन नहीं कर रहा, वे तो हो सकते हैं। परन्तु क्या सेवाओं के अधिकारियों में बहुत से लोग ईमानदार नहीं हैं? परन्तु आप उनके लिए कैसी भाषा का प्रयोग कर रहे हैं? मैं इस सभा के रिकार्ड के लिए यह कहना चाहता हूं कि यदि गत दो या तीन वर्षों में सिविल सेवाओं के अधिकांश अधिकारियों ने देशभक्ति की भावना से और निष्ठा से काम नहीं किया होता तो यह संघ समाप्त हो गया होता। डॉ. जॉन मथाई से पूछिए। वह उनके साथ गत पखवाड़े से आर्थिक मामलों के बारे में कार्य कर रहे थे। आप उनकी राय लीजिए। आपको पता चल जाएगा कि सेवाओं के प्रति उनकी भावना क्या है। आप सभी प्रान्तों के प्रीमियरों से पूछिए। क्या कोई भी प्रीमियर सिविल सेवा अधिकारियों के बिना काम करने को तैयार है? वह तत्काल त्याग-पत्र दे देगा। उसका गुजारा नहीं है। हमारे पास सिविल सेवा के बचे हुए कुछ ही अधिकारी थे। हमने उन थोड़े से व्यक्तियों के साथ बहुत कठिन कार्य चलाया है। यदि कोई जिम्मेदार व्यक्ति इस सेवा के बारे में इस लहजे में बोले तो उसको इस बात का निर्णय करना होगा कि क्या उसके पास कोई विकल्प है और फिर वह जिम्मेदारी ले ले। यह कांग्रेस का कोई प्लेटफार्म नहीं है। यह कहा जाता है कि कराची में पारित एक संकल्प में हमने मंत्रियों को 500 रुपये देने का वचन दिया था। अब कराची और दिल्ली में बहुत दूरी हो गई है। अब स्थिति बदल गई है। आप 45 रुपये प्रतिदिन चाहते हैं और वह भी कर-मुक्त। आज 500 रुपये की बात करने का क्या लाभ है? यह बहुत गलत बात है।

परन्तु मैं इस बात को स्वीकार करता हूं कि यदि भारत सरकार को सेवा के बिना गांधी दर्शन के आधार पर चलाना है तो मैं समूची व्यवस्था को बदलने के लिए तैयार हूं। आज आप सेना पर 160 से 170 करोड़ रुपये प्रति वर्ष खर्च करते हैं। क्या आप इस व्यवस्था को बदलने के लिए तैयार हैं? यदि आपके पास प्रबल सैन्य शक्ति नहीं होगी तो कल एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक समूचे भारत पर कोई अन्य देश कब्जा कर लेगा।

[माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल]

पुलिस को, जो एक खण्डित सेवा रह गई थी, समुचित स्तर पर लाया गया है और वह बहुत दक्षतापूर्वक कार्य कर रही है। प्रत्येक प्रान्त के पुलिस विभागाध्यक्ष इस गारंटी के अन्तर्गत आते हैं। क्या आप इस व्यवस्था को बदलना चाहते हैं? क्या आप अपने कांग्रेस स्वयंसेवकों को कैप्टन नियुक्त करेंगे? आपका क्या करने का विचार है?

जब इस प्रकार की संसद में सदस्य, वरिष्ठ सदस्य, इस लहजे से बोलते हैं तो मुझे दुख होता है। मैं आपका ध्यान भारत स्वतंत्रता अधिनियम की ओर दिलाना चाहूंगा जिसके कारण यह संसद अस्तित्व में आई और आपको, पता चला कि उसमें गारंटियां शामिल की गई हैं। जब पार्लियामेंट में भारत स्वतंत्रता अधिनियम पास किया जाना था तो उसका प्रारूप यहां भेजा गया था। राष्ट्र के नेताओं को आमंत्रित किया गया था, वहां मंत्रिमंडल था, कांग्रेस के अध्यक्ष थे, आपके अध्यक्ष थे और आपके विद्यमान नेता वहां पर उपस्थित थे। महात्मा गांधी भी वहां मौजूद थे। प्रत्येक धारा पर बारीकी से विचार किया गया और प्रारूप का अनुमोदन कर दिया गया। तत्पश्चात् वह पार्लियामेंट में पास किया गया। उससे पहले ये गारंटियां सभी प्रान्तों को भेजी गई थीं। सभी प्रान्त उन पर सहमत हो गये थे। इस बात पर भी सहमति हो गई कि उनको संविधान सभा के नये संविधान में भी सम्मिलित किया जाये। गारंटी वाली बात का एक पक्ष यह है। क्या आपने इस इतिहास को पढ़ा है? अथवा क्या आप, जबसे आपने इतिहास बनाना आरम्भ किया है, हाल ही के इतिहास की परवाह नहीं करते। यदि आप करते हैं तो मैं आपको बता दूं कि आपका भविष्य अंधकारमय है। आपने जो वचन दिया है, उस पर कायम रहना सीखिए और एक अनुभवी व्यक्ति होने के नाते मैं आपको बताता हूं कि उन साधनों से झगड़ा मत करो जिनके साथ मिलकर आप काम करना चाहते हैं। जिनके साथ मिलकर आप काम करना चाहते हो उनके साथ झगड़ा करना खराब बात है। उनसे काम लीजिए। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी प्रकार का प्रोत्साहन चाहता है। यदि सबके सामने किसी व्यक्ति की आलोचना की जाए या उसकी हंसी उड़ाई जाए तो वह काम नहीं करना चाहेगा। इस प्रकार आपको कोई भी काम करके नहीं देगा। इसलिये आप एक ही बार हमेशा के लिये निर्णय कर लीजिये कि आपको इस सेवा की आवश्यकता है या नहीं? यदि आपने विचार कर लिया है और मेरे द्वारा दिये गये वचन के बावजूद इस सेवा को समाप्त कर देने का निर्णय किया है तो मैं यह सोच कर इन सेवाओं को अपने साथ ले जाऊंगा और चला जाऊंगा कि राष्ट्र का मत बदल गया है।

इस सेवा के अधिकारी अपनी जीविका अर्जित कर लेंगे। वे योग्य व्यक्ति हैं। उनका प्रशिक्षण भिन्न वातावरण में हुआ था। मैं इस सेवा के पच्चीस वर्ष की सेवा वाले एक वरिष्ठ सदस्य को जानता हूं जो उच्चतर शिक्षा व सिविल सेवा में प्रशिक्षण के लिए इंग्लैंड गया था और उसने लगभग 50 हजार रुपये खर्च किये थे। उसने ऋण लिया था, उसके पास धन नहीं था। परन्तु भारत के युवकों का सिविल सेवा के प्रति आकर्षण है। वह वहां पर गया, विशिष्ट अंकों से उत्तीर्ण हुआ और स्वदेश लौटा। उसने बड़ी योग्यता से व बहुत निष्ठा के साथ तत्कालीन सरकार की और बाद में वर्तमान सरकार की सेवा की। उसका काम सरकार की सेवा करना है—उसकी वह सेवा कर रहा है। उसमें देशभक्ति की भावना विद्यमान है। प्रायः उसको कठिन स्थिति का सामना करना पड़ता था जब उसे तत्कालीन सरकार के आदेशों का पालन करते हुए कांग्रेसजनों के विरुद्ध कार्यवाही करनी पड़ती थी, उनको जेल में डालना पड़ता था अथवा अन्य ऐसा कुछ करना पड़ता था।

परन्तु वह एक निश्चित सीमा के आगे नहीं जा सकता था। अब आज 25 वर्ष की सेवा के अन्त में उसके पास केवल दस हजार रुपये शेष हैं और जब वह मरेगा तो उसकी पत्नी व बच्चों को भविष्य निधि की थोड़ी सी राशि मिलेगी।

ये परिस्थितियां हैं जिसमें सिविल सेवा के बहुत से लोगों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया, यहां आये और सेवा की। अब हम कह सकते हैं "बहुत अच्छा, उन्होंने यह यह सब कुछ खुली आंखों से किया था, अब उनको कष्ट भोगने दो।" ऐसी अवस्था में आपको उनका विकल्प तैयार करने के लिये इरादा करना होगा। हमारे पास एक विकल्प पहले ही है। हमने भारत में ही एक प्रशिक्षण स्कूल स्थापित कर दिया है, हमने एक संवर्ग बनाया है, प्रान्तों ने तत्संबंधी प्रस्तावों का अनुमोदन कर दिया है। आप यह सब कुछ जानते हैं।

यदि आप एक दक्ष अखिल भारतीय सेवा चाहते हैं तो मैं आपको सलाह दूंगा कि सिविल सेवा के अधिकारियों को स्वतंत्रता से अपनी बात कहने दीजिए। यदि आप मुख्य मंत्री (प्रीमियर) हैं तो आपका यह कर्तव्य हो जाता है कि आप अपने सेक्रेटरी अथवा चीफ सेक्रेटरी या अपने अधीन कार्यरत अन्य सेवाओं के अधिकारियों को निर्भीक होकर व निष्पक्ष रूप से अपनी राय व्यक्त करने की अनुमति दें। परन्तु आजकल मैं एक प्रवृत्ति देखता हूं कि अनेक प्रांतों में सेवाओं को भड़काया जाता है और उनसे कहा जाता है "नहीं, आप सेवा करने वाले हो, आपको हमारे आदेशों का पालन करना ही चाहिये।" यदि आपके पास एक अच्छी अखिल भारतीय सेवा नहीं है, जिसमें सेवा करने वाले लोग अपना मत व्यक्त करने में स्वतंत्र हों और उनके मन में सुरक्षा की भावना हो कि आपने जो वचन दिया है, आप उस पर कायम रहेंगे और यह कि अन्ततोगत्वा हमारी संसद है, जिस पर हमें गर्व होना चाहिए, जहां उनके अधिकार व विशेषाधिकार सुरक्षित रहेंगे तो यह संघ समाप्त हो जायेगा—संयुक्त भारत का अस्तित्व नहीं रहेगा। यदि आपको यह मार्ग नहीं अपनाना है तो अब वर्तमान संविधान के उपबंधों का पालन मत कीजिए। इसके स्थान पर कुछ और अपना लीजिए। कांग्रेस संविधान लाइए अथवा कोई अन्य संविधान लाइए या आर.एस.एस. संविधान लाइए। जो भी आपको पसन्द हो लाइये—परन्तु इस संविधान का परित्याग कर दीजिए। इस संविधान का पालन तो एक ऐसी सेवा के व्यूह द्वारा किया जाएगा जो देश को अखण्ड बनाये रखेगी। इस संविधान में अनेक बाधाएं हो सकती हैं जिससे हमारा मार्ग अवरुद्ध हो सकता है, परन्तु उसके बावजूद हम सबने मिलकर विचार-विमर्श करके यह निर्णय किया है कि हम संविधान का यह प्रतिरूप रखेंगे जिसमें इस प्रकार की सेवा की व्यवस्था होगी जो देश को नियंत्रण में रखेगी।

जैसाकि मैंने आपको बताया, यह करार और ये गारंटियां प्रान्तों को तथा सेवा के प्रत्येक सदस्य को भेजी गयीं थी। उस करार पर सहमति व्यक्त की गयी और प्रान्तों ने उस पर हस्ताक्षर किये। उन्होंने—उन दोनों ने इसे स्वीकार किया है। क्या आप अब इन बातों से पीछे हट सकते हैं? क्या नई संसद में नैतिकता का कोई स्थान नहीं है? क्या नयी स्वतंत्रता का प्रारम्भ हम इसी प्रकार करेंगे? मैंने ऐसे लोगों को देखा है जो आज भी इस सेवा के बारे में उसी रूप में अपनी राय व्यक्त करते हैं जिसमें कि वे पुराने जमाने में व्यक्त करते थे जब इस सेवा के 50 या 60 प्रतिशत अधिकारी अंग्रेज होते थे जो इस सेवा पर छाये हुए थे और इस सेवा के भारतीय अधिकारियों को अपनी राय व्यक्त करने की स्वतंत्रता नहीं थी और वे स्वतंत्र नहीं थे। आज मेरा सचिव एक ऐसा टिप्पण लिख सकता है जो मेरे विचारों से मेल न खाता हो। मैंने अपने सभी सचिवों को यह स्वतंत्रता दे

[माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल]

रखी है। मैंने उनसे कह रखा है "यदि आप किसी भय के कारण ईमानदारी से अपनी राय व्यक्त नहीं करते तो इससे आपके मंत्री को अप्रसन्नता होगी, ऐसी स्थिति में अच्छा यह होगा कि आप चले जायें। मैं अन्य सचिव ले जाऊंगा।" मैं राय की स्पष्ट अभिव्यक्ति पर कभी अप्रसन्न नहीं होऊंगा। अंग्रेज अंग्रेजों के साथ इसी प्रकार का व्यवहार करते थे। अब हम जिम्मेदारी से अपना-अपना योगदान करते हैं आपने इस जिम्मेदारी को निभाने में अपना योगदान देने पर सहमति व्यक्त की है। उनमें से अनेक व्यक्तियों के बारे में, जिनके साथ मैंने काम किया है, मैं निस्संकोच कह सकता हूं कि वे उतने ही देशभक्त, निष्ठावान व ईमानदार हैं, जितना कि मैं स्वयं हूं। जो लोग यह सोचते हैं कि नेताओं ने ये गारंटियां देने में गलती की है वे उनके मन को नहीं समझते, वे नहीं जानते कि क्या हुआ होता। वे अब भी कुछ नहीं जानते। अब भी कठिन समय हमारे आगे है। बहुत कठिन परिस्थितियों में की गयी सुरक्षा व्यवस्था में हम यहां पर बातें कर रहे हैं। ये लोग माध्यम हैं। इनको हटा देने की स्थिति में मुझे समूचे देश में अराजकता की तस्वीर के अलावा कुछ नजर नहीं आता। मेरी कठिनाई यह है कि हमारे पास व्यक्तियों की कमी है। प्रान्तों की भी यही कठिनाई है और वे अधिक व्यक्ति भेजने की मांग कर रहे हैं। हमने लगभग 300-400 व्यक्तियों की भर्ती के लिए एक विशेष आयोग नियुक्त किया है। हाल ही में उनका चयन किया गया है। उनका चयन भारतीय सिविल सेवा संवर्ग में से नहीं किया गया। उनको कोई अनुभव नहीं है। परन्तु फिर भी हम कार्य कराने के माध्यम चाहते हैं। वे इन लोगों से सीख लेंगे।

अब आप क्या करना चाहते हैं? आप निर्णय कीजिए। मेरी आपको यह सलाह है कि संसद के सभी सदस्यों को सेवाओं का समर्थन करना चाहिए, सिवाय उस मामले के जिसमें सेवा के किसी सदस्य ने दुर्व्यवहार किया हो या अपने कर्तव्य पालन में गलती की हो या अपने कर्तव्य पालन से जी चुराया हो। ऐसे मामले को मेरे ध्यान में लाइये। मैं किसी को नहीं छोड़ूंगा, चाहे वह कोई भी हो। परन्तु यदि सेवाओं के ये लोग अपनी सेवा से आपको पूरा लाभ बल्कि अधिक लाभ पहुंचा रहे हों तो आपको उनकी प्रशंसा करनी चाहिए। जो समय बीत गया है, उसे भूल जाइए। हम अंग्रेजों के साथ अनेक वर्षों तक लड़े। मैं उनका कट्टरतम शत्रु था और वे मुझे ऐसा ही समझते थे, परन्तु मैं एक स्पष्टवादी व्यक्ति हूं और इसलिए मुझे एक ईमानदार मित्र मानते हैं। गांधी जी ने हमें क्या सिखाया है? आप गांधी की विचारधारा, गांधी दर्शन, प्रशासन चलाने के लिये गांधी के तरीके की बात करते हैं। बहुत अच्छी बात है। परन्तु आप जेल से बाहर निकलते ही कहते हैं "इन व्यक्तियों ने मुझे जेल में डाला था, अब मैं इनसे बदला लूंगा" यह तो गांधी का तरीका नहीं है। यह तो उससे कहीं दूर भटक जाना है।

इसलिए, परमात्मा के लिए, हमें समझना चाहिए कि हम कहां हैं। आज यदि आप सेवा से कुछ ग्रहण करना चाहते हैं तो आप उनके दिल तक पहुंचिए, परन्तु हाथ में लाठी लेकर यह मत कहिये "आपको गारंटी कौन देगा? हमारी संसद सर्वोच्च सत्ता संपन्न है।" आपकी सर्वोच्च सत्ता क्या इस प्रकार की बात के लिए है? क्या अपने वचन से मुकर जाने के लिए है? यदि आप ऐसा करेंगे तो यह सर्वोच्च सत्ता सम्पन्नता कुछ ही दिनों में समाप्त हो जायेगी। मेरी आपसे यही अपील है, ईमानदारी से अपील है। आप इस बात को याद रखिये, इसे प्रान्तों तक पहुंचाइये और कांग्रेस-जनों तक भी, जो बाहर काम कर रहे हैं। प्रशासन चलाने का यही तरीका है। अन्यथा, यह समाप्त हो जाएगा। और जब देश में स्थिरता आ जाएगी,

जब यह काफी मजबूत बन जाएगा तब यदि आप कोई परिवर्तन करना चाहेंगे तो सेवा के अधिकारियों को उसके लिये राजी करना कठिन नहीं होगा। यदि राजाओं-महाराजाओं को अपना राज्य छोड़ देने के लिये राजी किया जा सकता है तब सेवाओं के अधिकारियों के साथ, जो हमारे अपने लोग हैं जिनके बच्चे भी इस देश में सेवा करेंगे और जिन्होंने अपने देश के लिए दिन और रात परिश्रम किया है, अन्यथा बात कैसे हो सकती है। वे ऐसे लोग हैं जो सम्मान, गौरव, प्रतिष्ठा चाहते हैं और जनता के प्यार के पात्र हैं। ऐसे लोग बहुत कम होंगे जो देश के शत्रु कहलाने के लिए सेवा करेंगे। इसलिए उनके लिए अपमानजनक रूप में मत बोलिये और मेरी आप से अपील है कि मेरे शब्दों पर विचार करें और अपना निर्णय दें।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं जानना चाहता हूं कि अपने भाषण के दौरान मैंने जो प्रश्न पूछा था, क्या उसका उत्तर श्री मुंशी देंगे अथवा माननीय सरदार पटेल देंगे। क्या मैं अपने प्रश्न को दोहरा दूं?

***अध्यक्ष:** यह आवश्यक नहीं है। आपका प्रश्न पूछा जा चुका है और यदि इस अनुच्छेद के प्रभावी सदस्य उत्तर देना चाहेंगे तो वह देंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं प्रस्ताव करता हूं कि प्रश्न मतदान के लिए रखा जाये।

***अध्यक्ष महोदय:** प्रश्न यह है:

"कि प्रश्न अब मतदान के लिए रखा जाए—

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** श्री मुंशी।

***श्री के.एम. मुंशी:** सरदार पटेल के भाषण के बाद मैं कुछ कहना उचित नहीं समझता।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों को मतदान के लिए रखूंगा।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं संशोधन संख्या 124, 125 और 128 को मतदान के लिए नहीं रखवाना चाहता। मैं चाहता हूं कि प्रारूप समिति उन पर विचार करे।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'which he is from time to time serving' (जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है)' **शब्दों के स्थान पर** 'as the case may be (यथास्थिति)' **शब्द रखा जाए।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'the same conditions' (उन्हीं सेवा शर्तों)' **शब्दों के स्थान पर** 'conditions (शर्तों)' **शब्द रखा जाए।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'and the same rights' (उन्हीं अधिकारों)' **शब्दों के स्थान पर** 'and rules (और नियमों)' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'as respects disciplinary matters or rights' (अनुशासनीय विषयों के बारे में उन्हीं अधिकारों का अथवा उनके तुल्य अधिकारों का)' **शब्दों के स्थान पर** 'of conduct and discipline (आचरण तथा अनुशासन के)' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'as similar thereto as changed circumstances may permit as that person was entitled to immediately before such commencement' **शब्दों के स्थान पर** 'as similar as changed circumstances may permit to what that person was entitled to immediately before such commencement' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***श्री एच.वी. कामतः** मेरे विचार में आप इस बात से सहमत होंगे कि इस अनुच्छेद का मसौदा ठीक तरह तैयार नहीं किया गया है। महोदय क्या आप इस बात से सहमत नहीं हैं?

***अध्यक्षः** मेरे सहमत अथवा असहमत होने से कुछ नहीं होगा। हमने सभा में मतदान करा लिया है। इसके बाद श्री नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं उन पर जोर नहीं दे रहा। मैं उनको प्रारूप समिति के विचार लिए छोड़ता हूं।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 283-क संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 283-क संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 307

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 307 के खण्ड (2) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखे जायें।

'(2) For the purpose of bringing the provisions of any law in force in the territory of India into accord with the provisions of this Constitution, the President may by order make such adaptations and modifications of such law, whether by way of repeal or amendment as may be necessary or expedient, and provide that the law shall, as from such date as may be specified in the order, have effect subject to the adaptations and modifications so made, and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law.

(3) Nothing in clause (2) of this article shall be deemed—

(a) to empower the President to make any adaptation or modification of any law after the expiration of two years from the commencement of this Constitution; or

(b) to prevent any competent legislature or other competent authority to repeal or amend any law adapted or modified by the President under the said clause."

['(2) भारत के राज्य-क्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन से, राष्ट्रपति आदेश द्वारा ऐसी विधि के ऐसे अनुकूलन और रूपभेद, चाहे निरसन या चाहे संशोधन द्वारा कर सकेगा जैसे कि आवश्यक या इष्टकर हों तथा उपबंध कर सकेगा कि वह विधि ऐसी तारीख से लेकर जैसी कि आदेश में उल्लिखित हो, ऐसे किये गये अनुकूलनों और रूपभेदों के अधीन रह कर ही प्रभावी होगी तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किस न्यायालय में आपत्ति न की जायेगी।

(3) इस अनुच्छेद के खण्ड (2) की कोई बात–

(क) राष्ट्रपति को इस संविधान के प्रारम्भ से दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी विधि का कोई अनुकूलन या रूपभेद करने की शक्ति देने वाली, अथवा

(ख) किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को, राष्ट्रपति द्वारा उक्त खण्ड के अधीन अनुकूलन या रूपभेद की गई किसी विधि को निरसित या संशोधित करने से रोकने वाली, न समझी जाएगी।' "]

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 1 में 'but shall not include an Ordinance promulgated under section 88 of the Government of India Act, 1935 (परन्तु भारत शासन अधिनियम 1935 की धारा 88 के अधीन प्रख्यापित कोई अध्यादेश इसमें सम्मिलित नहीं होगा)' **शब्द अन्त में जोड़ दिए जाएं।"**

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 2 में 'has' **शब्द के स्थान पर** 'had' **शब्द रखा जाये** और 'continue to have' **शब्दों के पश्चात्** 'such' **शब्द अन्तःस्थापित किया जाये।**

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 3 **के स्थान पर यह रखा जाये–**

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

'*Explanation III*–Nothing in this article shall be construed as continuing any temporary law in force beyond the date fixed for its expiration or the date on which it would have expired if this Constitution had not come into force.' "

['*व्याख्या 3*-इस अनुच्छेद की किसी बात का यह अर्थ न किया जायेगा कि वह किसी अस्थायी प्रवृत्त विधि को, उसकी समाप्ति के लिये नियत तारीख से अथवा उस तारीख से, जिसको कि, यदि यह संविधान प्रवृत्त न हुआ होता तो, वह समाप्त हो जाती, आगे प्रवृत्त बनाये रखती है।' "]

महोदय, प्रारूप समिति का आशय यह है अनुच्छेद 307 के खण्ड (1) को ज्यों का त्यों रखा जाये। खण्ड (2) में एक प्रयोजन विशेष से भिन्नता लाई गई है। इस बात में कुछ दुविधा थी कि क्या राष्ट्रपति विद्यमान विधियों का अनुकूलन, रूपभेद, संशोधन अथवा निरसन कर सकेगा या नहीं और ऐसा करने पर क्या उसकी कार्यवाही को न्यायालय में प्रश्नगत किया जा सकेगा और उसकी कार्यवाही में किसी सीमा तक न्यायिक हस्तक्षेप किया जा सकेगा। वास्तव में, मूल खण्ड (2) में यह कहा गया है कि ऐसे अनुकूलनों पर विधि न्यायालयों में आपत्ति नहीं की जा सकेगी। परन्तु प्रारूप समिति का विचार यह था कि यह बात स्पष्ट कर दी जानी चाहिए कि जिस पर आपत्ति नहीं दी जा सकती वह केवल रूप है और अनुकूलन अथवा रूपभेद और ऐसी कार्यवाही के पीछे प्रयोजन की जांच का मामला खुला रखा जाना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए हमने इस अनुच्छेद के खण्ड (2) का प्रारम्भ इन शब्दों से किया है:

"भारत के राज्य क्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन के लिए..."

मूल प्रयोजन यही है और यदि अनुकूलन या रूपभेद किसी अन्य प्रयोजन के लिए किया गया है तो निस्संदेह ऐसा मामला न्यायालयों के कार्यक्षेत्र में आएगा। जहां तक वह प्रयोजन रखा गया है, यदि किसी शब्द या साधारण भिन्नताओं पर कोई आपत्तियां की जाती हैं तो उन्हें विधि न्यायालयों में नहीं ले जाया जा सकता।

इस संशोधन में जो दूसरा रूपभेद रखा गया है वह इस संबंध में राष्ट्रपति की शक्ति को खण्ड (3) (क) द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ से दो वर्ष पश्चात् की अवधि तक सीमित करने के लिए है। दूसरा उपखण्ड (ख) मूल खण्ड (2) के पाठ से लिया गया है और यह स्पष्ट कर दिया गया है कि राष्ट्रपति चाहे कुछ भी करे, यदि समुचित प्राधिकारी किसी भी प्रवृत्त विधि में परिवर्तन करना चाहे तो उससे उसमें कोई रूकावट नहीं होगी, चाहे राष्ट्रपति ने उसका अनुकूलन क्यों न किया हो। वह संसद अथवा किसी राज्य के विधानमंडल के समक्ष कोई विधान लाने पर रोक का काम नहीं करेगा।

जहां तक व्याख्याओं के रूपभेदों का संबंध है, व्याख्या 1 संबंधी रूपभेद, इसके अर्थ को सीमित करने के लिए है। यह भारत शासन अधिनियम की धारा 88 के अधीन प्रख्यापित अध्यादेशों के संबंध में लागू नहीं होगा। इस बात का उपबंध वहां होना चाहिए था। यह एक कमी है जिसे हम दूर करने की व्यवस्था कर रहे हैं।

जहां तक नयी व्याख्या (3) का संबंध है, वह विद्यमान व्याख्या का विस्तृत रूप है।

अपना स्थान ग्रहण करने से पूर्व, मैं इस बात का उल्लेख करना चाहता हूं कि इस अनुच्छेद को अनुच्छेद 313 के साथ उलझाया नहीं जाना चाहिए, जो पिछले दिन पास किया गया था जिसमें राष्ट्रपति को किसी कठिनाई की स्थिति में इस संविधान में उपबंध का रूपभेद करने की शक्ति दी गई है। विचाराधीन अनुच्छेद राष्ट्रपति को बहुत सीमित शक्ति प्रदान करता है और यह केवल उन विधियों के बारे में है जिनके बारे में राष्ट्रपति को मंत्रणा दी जाती है कि वे संविधान के प्रयोजन को सिद्ध करने में बाधक हैं और रूपभेद करना आवश्यक है। यह अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि हमने अनुच्छेद 307 (1) में व्यावस्था की है कि भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियां प्रवर्तन में रहेंगी, बशर्ते कि वे इस संविधान के उपबंधों के विरुद्ध न हों। यह बहुत आवश्यक अनुच्छेद है और मेरे द्वारा सुझाए गए रूपभेद इस बात को ध्यान में रखते हुए आवश्यक हैं कि अनुच्छेद के मूल प्रारूप में किसी त्रुटि की ओर हमारा ध्यान दिलाया गया है और मुझे आशा है कि सभा इस बात को समझेगी कि इन संशोधनों को प्रस्तुत करने में जो प्रयोजन हमारे मन में है वह बहुत सीमित है। राष्ट्रपति की शक्तियां ऐसी हैं जिन्हें कि संसद अथवा उपयुक्त विधानमंडल द्वारा रद्द किया जा सकता है तथा इनका केवल उसी कालावधि के दौरान प्रयोग किए जाने का विचार है जबकि न ही तो संसद और न ही तो सम्भवतया राज्यों के विधानमंडलों के पास इतना समय होगा जिसमें इतने विस्तार से ध्यान दे सके जो हमारे देश में प्रवृत्त कतिपय विधियों में संशोधन करने के लिए आवश्यक हो। भारतीय स्वाधीनता अधिनियम के अनुसरण में जब भारत शासन अधिनियम, 1935 का अनुकूलन किया गया, उस समय कतिपय विधियों के बारे में कुछ इसी प्रकार की कार्यवाही की गई और यह भी उसी आधार पर होगा।

सामान्यतया, मुख्य रूपभेद एक अनौपचारिक स्वरूप के होंगे। सम्भवतया, अनेक स्थानों पर "गवर्नर जनरल" शब्दों को हटाना पड़ेगा और "राष्ट्रपति" शब्द रखना होगा तथा इसी तरह के अन्य परिवर्तन करने होंगे। जहां तक कि हमने इस संविधान में उपबंध किया है उसके सिवाय महत्वपूर्ण परिवर्तनों की सम्भावना नहीं है। यह सम्भव है कि संविधान में समाविष्ट मूल अधिकारों से उत्पन्न होने वाले कुछ परिवर्तन करने पड़ें।

इस बात को दृष्टिगत रखते हुए कि कुछ संशोधन रखे गए हैं, मैं एक तर्क की पूर्वाविधारणा करूंगा। इन संशोधनों में यह सुझाव दिया गया है कि ये अनुकूलन संसद को करने चाहिएं। ठीक है, यदि संसद को ऐसा करना चाहिए अथवा संसद को राष्ट्रपति द्वारा संसद की ओर से की गई कार्यवाही का अनुमोदन करना चाहिए तो संसद संशोधनकारी विधान पास करके रूपभेद के इस प्रश्न को अपने हाथ में ले सकती है। इसका कारण यह है कि हमारा यह विचार है कि आरम्भिक अवधि के दौरान संसद के पास इस प्रयोजन के लिए समय नहीं होगा और यही कारण है कि हमने इस अनुच्छेद का प्रावधान किया है।

कुछ सुझाव दिए गए हैं कि इस विषय की जांच करने के लिए किसी न्यायाधिकरण अथवा समिति की नियुक्ति की जाए। इसे उन उपयुक्त प्राधिकारों पर छोड़ना होगा जो कि उचित समय पर इन अनुकूलनों को अपने हाथ में लेंगे। यदि उनका यह विचार होगा कि सरकार के पास जो तंत्र है वह इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त है अथवा यह कि यह तंत्र अल्प रूपभेद कर सकते हैं, और यदि इतने बड़े पैमाने पर रूपभेद की अपेक्षा है कि लोकमत से परामर्श किया जाए अथवा न्यायाधीशों से परामर्श किया जाए तो यह समुचित कार्यपालक प्राधिकारी के लिए होगा कि वह ऐसी कार्यवाही करे जो वह आवश्यक समझे। भविष्य में न्यायाधिकरण नियुक्त करने अथवा या तो भारत सरकार द्वारा या प्रान्तीय

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

सरकारों द्वारा वर्तमान विधियों की जांच करने पर कोई रोक नहीं होगी। मुझे आशा है कि इन तर्कों से वे सदस्य संतुष्ट हो जायेंगे जिन्होंने कि संशोधन प्रस्तुत किए हैं तथा यह अनुच्छेद मेरे द्वारा प्रस्तुत संशोधनों से संशोधित किए जाने के पश्चात् संशोधित रूप में पास कर दिया जाएगा। महोदय, मैं अपना संशोधन प्रस्तुत करता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, मेरा प्रस्ताव है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'President may (राष्ट्रपति)' **शब्दों के पश्चात्** 'in consultation with the Chief Justice of the Supreme Court and the Chief Justices of the High Courts of Bombay, Madras and Bengal (सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा बम्बई, मद्रास और बंगाल के उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों के परामर्श से)' **शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।**

महोदय, अनुच्छेद 307 में एक उपबंध है—मैं खण्ड 2 का उल्लेख कर रहा हूं—जिसमें कहा गया है कि ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी विधि न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी। मैं इस उपबंध का विरोध नहीं करता, मैं इसके पक्ष में हूं। परन्तु यदि हम इतना कठोर उपबंध पास करने जा रहे हैं, तो यह आवश्यक है कि कोई ऐसा अनुकूलन तथा रूपभेद जो कि राष्ट्रपति करे, कम से कम देश के सर्वोच्च न्यायिक प्राधिकारी से परामर्श करके किया जाए। हम न्यायालयों द्वारा इस प्रश्न की जांच पर रोक लगा रहे हैं। यहां राष्ट्रपति शब्द का अर्थ है विधि मंत्री। केवल वह ही रूपभेदों तथा अनुकूलनों का प्रभारी होगा। राष्ट्रपति के पास इन विषयों में जाने का तनिक भी न तो समय होगा और न ही झुकाव। मैं चाहता हूं कि विधि मंत्री इन मुख्य न्यायाधीशों की सहायता ले। यह किसी भी प्रकार से कोई आलोचना नहीं है और न ही विधि मंत्री की दक्षता में विश्वास की कमी, परन्तु उद्देश्य यही है कि इसके हाथ मजबूत किए जाएं ताकि किसी प्रकार का कोई जोखिम न रहे। इसी दृष्टिकोण से मैंने इन संशोधनों का सुझाव दिया है।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी की भाषा में, मैं उन "लोगों" में से हूं जिन्होंने संशोधनों की सूचना दी है। मेरे विचार में उनको संसदीय प्रथा तथा शिष्टाचार के अनुरूप इससे बेहतर शब्द का प्रयोग करना चाहिए था और संशोधनों की सूचना देने वालों का उल्लेख यदि माननीय सदस्यों के रूप में नहीं तो सदस्यों के रूप में तो करना चाहिए था। मेरे विचार में मेरे जिन सहयोगियों ने संशोधनों की सूचना दी है, उनके बारे में "लोगों" शब्द का प्रयोग किया जाना उचित नहीं है। तथापि, यह मैं प्रसंगवश कह रहा हूं।

मैं आपकी अनुमति से संशोधन संख्या 134 तथा 137 एक साथ प्रस्तुत करता हूं:

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, "repeal or amendement" (चाहे निरसन या चाहे संशोधन)' **शब्दों के स्थान पर** 'alteration or repeal or amendment (चाहे परिवर्तन या चाहे निरसन या चाहे संशोधन)' **शब्द रखे जाएं।**''

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (3) के उपखण्ड (ख) में, 'repeal or amend (निरसित या संशोधित)' **शब्दों के स्थान पर** 'alter or repeal or amend (परिवर्तित या निरसित या संशोधित)' **शब्द रखे जाएं।"**

यह लगभग औपचारिक संशोधन है तथा ये अनुच्छेद 307 के मूल प्रारूप के अनुरूप हैं। अनुच्छेद 307 में, जिस रूप में कि वह संविधान के मूल प्रारूप में था, यह कहा गया है:

"(1) ...भारत के राज्यक्षेत्र में संविधान के प्रारम्भ से पहले प्रवृत्त सभी विधियां वहां प्रवृत्त रहेंगी जब तक कि उन्हें किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा परिवर्तित या निरसित या संशोधित न किया जाये।"

मेरे विचार में यह उन परिवर्तनों के बारे में, जो कि किए जा सकते हैं, अत्यंत व्यापक वक्तव्य है। अत: मेरा विचार है कि "परिवर्तित" शब्द का बाद में न रखा जाना एक ऐसी कमी है जिसे कि इस सभा को दूर करना चाहिए। अत: मैंने संशोधन संख्या 134 तथा 137 प्रस्तुत किए हैं ताकि इस नए प्रारूप को अनुच्छेद 307 के मूल प्रारूप के अनुरूप बनाया जा सके। मेरे विचार में ये अधिक व्यापक हैं और हम जो कुछ भी व्यक्त करना चाहते हैं इनमें उसकी बेहतर अभिव्यक्ति होगी।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास-जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन संख्या 135 प्रस्तुत करता हूं जो कि मेरे नाम में है:

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, **अन्त में** 'but placed before the Parliament for ratification (परन्तु ये अनुसमर्थन के लिये संसद के समक्ष रखे जायेंगे)' **शब्द जोड़े जाएं**।"

महोदय, मेरा विचार है कि जिस संशोधन की मैंने सूचना दी है, उसमें कुछ सिद्धान्त अन्तर्निहित हैं। इस अनुच्छेद पर बोलते हुए मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने हमें बताया कि राष्ट्रपति को, आपातकालीन स्थिति के दौरान तथा उस समय भी जबकि विधानमंडलों का सत्र न चल रहा हो, शक्ति प्रदान करने हेतु संविधान में ऐसा उपबंध समाविष्ट किया गया है। महोदय, प्रान्तों के राज्यपाल अध्यादेश प्रख्यापित करते हैं और वे अपना यह कर्त्तव्य मानते हैं कि जब कभी भी विधानमंडलों का अधिवेशन आरम्भ हो, वे उन अध्यादेशों तथा कानूनों को, जो कि देश के हित में आवश्यक है, सम्बन्धित विधानमंडल के समक्ष रखें। संविधान में परिकल्पित रूप में, राष्ट्रपति संसद को उस निकाय के रूप में देख सकता है जिसे कि उसकी उन सभी कार्यवाहियों का अनुसमर्थन करना है जो कि राष्ट्रपति ने उस दौरान की है जब संसद का सत्र नहीं चल रहा था। हम राष्ट्रपति से केवल यही मांग कर रहे हैं कि उन्होंने संविधान के अनुरूप जो अनुकूलन या परिवर्तन किए हैं उन्हें वह सभा के समक्ष रखें, ताकि केवल देश को ही नहीं बल्कि संसद में जन प्रतिनिधियों को भी यह पता चले कि राष्ट्रपति ने विधानमंडलों अथवा संसद की अनुपस्थिति में क्या कार्यवाही की है। महोदय, मेरा विचार है कि देश के विधानमंडल अथवा संसद को यह सब कुछ जानने का अधिकार है, क्योंकि यह आशा की जाती है कि प्रत्येक सदस्य को इस बात की जानकारी रहे कि राष्ट्रपति ने आपातकालीन उपायों के रूप में उस दौरान क्या कुछ किया जबकि संसद का सत्र नहीं चल रहा था। मुझे विश्वास है कि प्रारूप समिति इस विषय पर विचार करेगी तथा मेरा संशोधन स्वीकार करेगी। इसके अलावा खण्ड (3) (ख) में यह स्पष्ट किया गया है कि "खण्ड (2) की कोई बात किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को राष्ट्रपति द्वारा उक्त खण्ड के अधीन अनुकूलन या रूपभेद की गई किसी विधि को निरसित या संशोधित करने से रोकने वाली न समझी जाएगी।" अत: महोदय, मैं यह समझता हूं कि यह संशोधन प्रारूप समिति द्वारा स्वीकार किया जा सकता है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, (i) उपखण्ड (क) में 'after the expiration of two years from the commencement of this Constitution (इस संविधान के आरम्भ से दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात्)' **शब्दों के स्थान पर** 'after the Constitution of the Ministries of the Government of India or of the States as the case may be after the first general election under this Constitution (इस संविधान के अन्तर्गत प्रथम सामान्य चुनाव के पश्चात भारत सरकार अथवा राज्य सरकारों, जैसी भी स्थिति हो, की मंत्रिपरिषद गठित होने के पश्चात्)' **शब्द रखे जाएं;** और

(ii) उपखण्ड (ख) में 'or other competent authority ('या अन्य सक्षम प्राधिकारी)" **शब्द निकाल दिये जाएं।"**

महोदय, ये दो संशोधन प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में मैं यह अवश्य कहूंगा कि जो दो खण्ड प्रस्तुत किए गए हैं, मैं उनके सिद्धान्त से पूरी तरह सहमत हूं। इस अन्तरिम अवधि में जबकि हम एक अत्यन्त त्वरित संक्रमणकाल से होकर गुजर रहे हैं, अनेक असंगतियां तथा कठिनाइयां पैदा होंगी और इसलिए यह आवश्यक है कि राष्ट्रपति को ऐसे अनुकूलन तथा रूपभेद करने के प्राधिकार दिए जाएं जो कि अपेक्षित हों। वर्तमान विधियों का अनुकूलन तथा रूपभेद करना होगा ताकि उन्हें नए संविधान में निर्धारित मानक के अनुरूप बनाया जा सके। जब भारत शासन अधिनियम, 1935 पास हुआ था, उस समय भी ऐसा ही किया गया था। इस सिद्धान्त से सहमत होते हुए भी मेरे संशोधन में उस अवधि को सीमित करने का प्रयास किया गया है जिनके दौरान राष्ट्रपति अनुकूलन तथा रूपभेद की अपनी इन शक्तियों का निर्वहन कर सकेगा। खण्ड 3 के उपखण्ड (क) में यह प्रस्ताव है कि इन अनुकूलनों तथा रूपभेदों को करने की राष्ट्रपति की शक्ति दो वर्षों तक सीमित होगी। मेरा संशोधन यह है कि दो वर्षों की इस अवधि के बजाय मैं इसे उस अवधि तक सीमित करना चाहता हूं जिस दौरान कि सामान्य निर्वाचन होंगे तथा केन्द्र और राज्यों में मंत्रिपरिषदें गठित होंगी। तत्पश्चात् केन्द्र तथा राज्यों में विधानमंडल पूरी तरह से कार्यरत होंगे। हम दो वर्षों की अवधि के भीतर संविधान के अंन्तर्गत सामान्य निर्वाचन करा सकते हैं। यदि ऐसा है तो यह एक असंगति पैदा होगी कि केन्द्र तथा राज्यों दोनों में विधानमंडल पूरी तरह से कार्यरत होंगे और फिर भी राष्ट्रपति को संविधान में संशोधन, परिवर्तन और रूपभेद करने की शक्ति होगी। इन विधानमंडलों के कार्यरत होने के बाद राष्ट्रपति की शक्ति समाप्त हो जानी चाहिए। इसके पश्चात् केवल विधानमंडलों को ही रूपभेद करने का अधिकार होना चाहिए। अत: ये रूपभेद करने की शक्ति उसी समय तक रहनी चाहिए जब तक कि अगले सामान्य निर्वाचन नहीं हो जाते तथा मंत्रिपरिषद् गठित नहीं कर ली जाती। इस अवधि को इससे अधिक बढ़ाने का कोई कारण नहीं है। यह हो सकता है कि सामान्य निर्वाचन में विलम्ब हो जाये तथा उस स्थिति में दो वर्षों की अवधि के पश्चात् तथा नए विधानमंडल बनने तक के समय में अन्तराल आ सकता है जबकि ऐसा अनुकूलन करने के लिए कोई भी प्राधिकारी न रहे। उन परिस्थितियों में मैं इस अवधि को उस समय तक की अवधि रखना चाहता हूं जब तक कि चुनाव न हो जाएं तथा मंत्रिपरिषदें गठित न हो जाएं।

मेरे दूसरे संशोधन का संबंध प्रस्तावित खण्ड (3) से है जो कि इस प्रकार है:

"इस अनुच्छेद के खण्ड (2) की कोई बात किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को राष्ट्रपति द्वारा उक्त खण्ड के अधीन अनुकूलन या रूपभेद की गई किसी विधि को निरसित या संशोधित करने से रोकने वाली न समझी जाएगी।"

मैं "या अन्य सक्षम प्राधिकारी" शब्दों का लोप करना चाहूंगा। मैं इस बात को भली प्रकार समझ सकता हूं कि राष्ट्रपति द्वारा किया गया अनुकूलन किसी सक्षम विधानमंडल द्वारा परिवर्तित किया जा सकेगा, परन्तु मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि आवश्यक परिवर्तन करने के लिए वहां अन्य कौन-सा सक्षम प्राधिकारी हो सकता है। अत: राष्ट्रपति के निर्णयों में परिवर्तन करने की यह शक्ति हमें सक्षम विधानमंडलों के लिए भी छोड़ देनी चाहिए, किसी अन्य प्राधिकारी के लिए नहीं। मैं यह जानना चाहूंगा कि विधानमंडलों से परे और कौन-सा सक्षम प्राधिकारी होगा जिसे कि आवश्यक परिवर्तन करने के लिए शक्ति दी जा सकेगी अथवा दी जानी चाहिए।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2), 'and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी)' **शब्द निकाल दिये जाएं**।"

यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अनुच्छेद है जिसके द्वारा हम सभी वर्तमान विधियों को संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाना चाहते हैं तथा हम ऐसे अनुकूलन के लिए व्यवस्था उपलब्ध करा रहे हैं। राष्ट्रपति को एतद्द्वारा ऐसा करने का प्राधिकार दिया जा रहा है। मुझे उस पर कोई आपत्ति नहीं है। मेरे विचार में यह इस समय विद्यमान विधियों को केवल संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाने के लिए है और इसलिए मैं इस बात से बिल्कुल सहमत हूं कि इसके लिए राष्ट्रपति ही उचित प्राधिकारी हैं। परन्तु जिस बात पर मुझे आपत्ति है, वह यह है कि जो अनुकूलन उनके द्वारा किया जायेगा उस पर किसी न्यायालय में आपत्ति नहीं की जानी चाहिए। मान लीजिये कि यदि किया गया रूपभेद गलती से अथवा किसी अन्य कारण से वास्तव में इस खण्ड के आशय के अनुरूप नहीं है तथा इससे परे चला जाता है, तब वह कौन-सा प्राधिकारी है जो कि यह घोषणा करेगा कि अनुकूलन इस अनुच्छेद के आशय के अनुरूप नहीं है जो इस प्रकार है:

"भारत के राज्यक्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि को इस संविधान उपबंधों से संगत करने के लिए, आदि।"

परन्तु यह सुनिश्चित करने के लिए किस तंत्र की व्यवस्था की गई है कि इस खण्ड के प्रयोजन को आरम्भ में ही प्रभावी बनाया जाए? यदि आशय यह है कि ऐसे प्रत्येक मामले को उच्चतम नयायालय में ले जाना होगा तो यह काफी कष्टदायक बात होगी तथा खर्चीली भी होगी, क्योंकि संशोधित किए जाने वाला कानून काफी व्यापक होगा। अत: मेरा विचार है कि जो न्यायालय उस कानून को लागू करते हैं, उन्हें यह निर्णय करने की शक्ति दी जानी चाहिए कि क्या ऐसा अनुकूलन उचित है, अथवा नहीं। राष्ट्रपति के पास सभी विधियों की जांच करने तथा यह सुनिश्चित करने के लिए समय नहीं होगा कि इनका अनुकूलन संविधान के अनुरूप ही हो। यह सब कुछ विधि विभाग करेगा तथा विधि मंत्री तक को

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

भी इन सबकी जांच करने का समय नहीं होगा। यह कार्यविधि विभाग के क्लर्कों द्वारा किया जाएगा। हम यह नहीं चाहते कि भूतपूर्व विधानमंडलों द्वारा पास किए गए संसदीय अधिनियमों का साधारण क्लर्कों द्वारा संशोधन तथा अनुकूलन किया जाये और यह कि इस आधार पर भी कि वे संविधान के उपबंधों के अनुरूप नहीं हैं उन पर न्यायालय में आपत्ति न की जा सके।

अत: मैं यह चाहता हूं कि कानून के साधारणतंत्र पर विश्वास रखा जाये कि वह यह सुनिश्चित करे कि यदि अनुकूलन में कोई त्रुटि होती है तो न्यायालय को उसमें सुधार करने की शक्ति दी जानी चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया गया तो अनेक गलतियां होंगी जिन्हें कि देश में कोई भी सही नहीं कर सकेगा। यदि आप यह चाहते हैं कि उच्चतम न्यायालय में मामला उठाया जाए तो मेरे विचार में प्रत्येक वादी के पास ऐसा करने की शक्ति नहीं होगी। मुझे नहीं मालूम कि क्या उच्चतम न्यायालय के पास भी ऐसा करने की शक्ति होगी। परन्तु मेरा विचार है कि उच्चतम न्यायालय में किसी भी बात की जांच करने की शक्ति अन्तर्निहित है। परन्तु, फिर भी, इस संविधान में हमें यह उपबंध निश्चित रूप से करना चाहिए कि अनुकूलन प्रथम खण्ड में दिए गए प्रयोजन से किया जायेगा तथा न्यायालय को यह शक्ति प्रदान की जायेगी कि वह एसे अनुकलन के सही होने के बारे में मूल्यांकन करे। अन्य संशोधनों पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु मैं नहीं समझता कि प्रारूप समिति यह स्पष्ट करेगी कि वह यह सुनिश्चित करने के लिए किस तंत्र की व्यवस्था कर रही है कि किए गए अनुकूलन केवल संविधान के उपबंधों के अनुरूप हों।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव** (पूर्वी पंजाब-जनरल): महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) के स्थान पर यह रखा जाए:

'The President shall, as soon as may be after the commencement of this Constitution, by order, appoint a Committee of experts to examine all the laws in force in the territories of India by whichsoever authority enacted and to report to him within a period of 8 months if any or any portion of the laws in force is inconsistent with the provisions of this Constitution and what adaptations and modifications are necessary to bring into accord the inconsistent portions with the provisions of this Constitution. The Government shall forthwith take steps to repeal or amend such laws or portions of them as are not in accord with the provisions of this Constitution and unless such laws or portions of laws are repealed or amended by being brought within a further period of one year and four months from the date of report in accord with the provisions of this Constitution, they shall cease to be in force unless they are repealed or amended earlier by any competent authority or declared void by the courts.'

['राष्ट्रपति इस संविधान के प्रारम्भ होने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र आदेश द्वारा विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करेगा जो भारत के राज्यक्षेत्रों में प्रवृत्त सभी

विधियों की जांच करेगी चाहे ये विधियां किसी भी प्राधिकारी द्वारा बनाई गई हों, तथा आठ मास की अवधि के भीतर उसे रिपोर्ट करेगी कि क्या कोई प्रवृत्त विधि अथवा इसका कोई भाग इस संविधान के उपबंधों के असंगत हैं तथा उन असंगत भागों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के लिए कौन-कौन से अनुकूलन तथा रूपभेद आवश्यक है। सरकार ऐसी विधियों अथवा उनके भागों का जो कि इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं हैं, निरसन करने अथवा उनमें संशोधन करने के लिए तुरन्त उपाय करेगी और जब तक कि ऐसी विधियों अथवा ऐसी विधियों के भागों को रिपोर्ट की तारीख से एक वर्ष चार महीनों की अग्रेतर अवधि के भीतर इस संविधान के उपबंध से संगत बनाकर उनका निरसन अथवा संशोधन नहीं किया जाता, वे प्रवर्तन में नहीं रहेंगे जब तक कि उन्हें इससे पूर्व किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा निरसित अथवा संशोधित नहीं कर दिया जाता या न्यायालयों द्वारा शून्य घोषित नहीं कर दिया जाता।' "]

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (3) के स्थान पर यह रखा जाए:

'(3) for the purpose of bringing the provisions of the laws in force in the territory of India relating to fundamental rights guaranteed by this Constitution into accord with the provisions of this Constitution the President shall after the commencement of this Constitution appoint as soon as may be a Committee of experts to examine the laws in force in the territory of India with instructions to report if any or any portion of them is inconsistent with the provisions relating to fundamental rights and what adaptations and modifications are necessary to bring such inconsistent laws or portions of laws in accord with the provisions of this Constitution. The Government shall on the receipt of the report forthwith take steps to avoid repeal or amend such laws or portions of them as are not in accord with the guaranteed fundamental rights. Such laws or portions of them as are reported to be inconsistent and not in accord with the guaranteed fundamental rights shall cease to be in force after an year of the commencement of this Constitution if they are not avoided repealed or amended earlier.'

['(3) भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त ऐसी विधियों के उपबंधों को जो इस संविधान में गारंटी दिए गए मूल अधिकारों से सम्बन्धित हैं इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन के लिए, राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् भारत के राज्य क्षेत्रों में प्रवृत्त विधियों की जांच करने हेतु यथाशक्य शीघ्र विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करेगा तथा उसे यह अनुदेश देगा कि वह यह रिपोर्ट दे कि क्या इनमें से कोई विधियां अथवा इनका कोई भाग मूल अधिकारों से सम्बन्धित उपबंधों के असंगत है और ऐसी असंगत विधियों तथा विधियों के भागों को इस संविधान से संगत करने के लिए कौन-कौन से अनुकूलन तथा रूपभेद आवश्यक हैं। रिपोर्ट प्राप्त होने पर सरकार ऐसी विधियों अथवा इनके भागों, जो कि गारंटी दिए गए मूल अधिकारों से संगत नहीं है, का परिवर्जन निरसन तथा संशोधन करने के लिए तुरंत उपाय करेगी। ऐसी विधियां अथवा उनके भाग जिनके बारे में कि ऐसी रिपोर्ट दी गई है कि ये असंगत हैं तथा गारंटी दिए गए मूल अधिकारों के अनुरूप नहीं हैं,

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

इस संविधान के प्रारम्भ से एक वर्ष के पश्चात् प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उन्हें इससे पूर्व परिवर्जित, निरसित अथवा संशोधित नहीं किया जाता।' "]

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'made, and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (प्रभावी होगी तथा ऐसी किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी)' **शब्दों के स्थान पर** 'made (प्रभावी होगी)' **शब्द रखे जाएं।**

यह भी कि:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'and any such adaptations or modifications shall not be questioned in any court of law (तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी।)' **शब्दों के स्थान पर** 'except in so far as they are inconsistent with the provisions of this Constitution (सिवाय इसके कि जहां तक कि ये इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं हों)' **शब्द रखे जाएं।**

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में 'except on the ground that the law so adapted or modified is not in accord with the provisions of this Constitution (सिवाय इस आधार पर कि इस प्रकार अनुकूलन या रूपभेद की गई विधि इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं है)' " **शब्द अन्त में जोड़े जाएं।**"

और यह भी कि...

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) तथा (3) **निकाल दिये जाएं।**"

महोदय ये संशोधन प्रस्तुत करने का मेरा प्रयोजन उन सभी उपबंधों को पूरी तरह प्रभावी बनाना है जो हम पहले ही पास कर चुके हैं, जिनके लिये अनुच्छेद 8 देखिये। अब इन वर्तमान विधियों को आसानी से दो प्रकार की विधियों में बांटा जा सकता है—मूल, गारंटी दिये गए अधिकारों से सम्बन्धित विधियां तथा अन्य मामलों से सम्बन्धित विधियां। मैं इन दोनों में अन्तर करना चाहता हूं और जैसा कि मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधनों से स्पष्ट है इनमें से कुछ संशोधन तो केवल गारंटी दिए गए अधिकारों से सम्बन्धित हैं तथा अन्य कुछ इस समय प्रवृत्त अन्य विधियों से सम्बन्धित हैं। अब मेरी इन शब्दों के प्रति घोर आपत्ति है कि "तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी।" और यही

कारण है कि मैंने ये संशोधन प्रस्तुत किए हैं ताकि ये शब्द हटा दिए जाएं तथा इनके स्थान पर कुछ ऐसे शब्द रखे जाएं जिनसे कि अर्थ बिल्कुल स्पष्ट हो जाए। मैं इस खण्ड के आपत्तिजनक उपबंधों को हटाए जाने के लिए लगभग हताश हो गया हूं और इसीलिए मैंने यह प्रस्ताव तक भी किया है कि खण्ड (2) पूरा ही हटा दिया जाए। महोदय, मैं समझता हूं कि इस विषय पर पूरी तरह विचार नहीं किया गया है; मेरा तात्पर्य यह है कि इतना विचार नहीं किया गया है जितना कि किया जाना चाहिए था। यदि प्रस्ताव को इसी रूप में स्वीकार कर लिया जाता है जिस रूप में कि यह इस समय है, यदि श्री कृष्णमाचारी का प्रस्ताव पास हो जाता है तो उसका परिणाम यह होगा कि विधान मंडल नहीं अपितु सरकार अपने विधि विभाग के माध्यम से, विधि मंत्री नहीं अपितु सचिव अथवा क्लर्क लोग ये अनुकूलन तथा रूपभेद करेंगे और यह सभी अनुकूलन तथा रूपभेद कभी भी किसी विधानसभा अथवा विधानमंडल के समक्ष नहीं आएंगे। देश की मूल विधि कार्यपालिका आदेश से स्वत: ही अनुकूलित अथवा संशोधित हो जायेंगी और वह देश की विधि बन जाएगी। विधि अनुकूलित तथा संशोधित मानी जाएगी तथा इसके पश्चात् यह विधि इतनी अपरिवर्तनीय बन जाएगी कि न्यायालय में उस पर आपत्ति नहीं की जा सकेगी। मेरा निवेदन है कि हम अनुच्छेद 8 पास कर चुके हैं: जिसमें कहा गया है:

> "इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियां उस भाग तक शून्य होंगी जिस तक कि वे इस भाग के उपबंधों से असंगत हैं।"

अब उन सभी विधियों को जिन्हें शून्य घोषित करने के लिए आज न्यायालय को शक्ति प्राप्त है, इन अनुकूलनों द्वारा पवित्र तथा पक्का बनाया जा रहा है और यह अनुच्छेद 8 के खण्ड (2) के अनुसार नहीं है, जिसमें कि कहा गया है:

> "राज्य ऐसी कोई विधि नहीं बनाएगा जो इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों को छीनती है या न्यून करती है और इस खण्ड के उल्लंघन में बनाई गई कोई विधि उल्लंघन की मात्रा तक शून्य होगी।"

यदि ऐसा रूपभेद या अनुकूलन किया जाता है जिससे कि वास्तव में इस खण्ड का उल्लंघन होता है तो उस स्थिति में क्या होगा? उस विधि पर आपत्ति नहीं की जा सकती, कोई भी न्यायालय इस पर आपत्ति नहीं कर सकेगा, जिसका स्पष्ट अर्थ है कि जो कुछ भी हम अनुच्छेद 8 (1) तथा 8 (2) के माध्यम से दे रहे हैं, उसे चोर दरवाजे से हटाया जा रहा है। मेरा यह कहना नहीं है कि जिन्होंने यह प्रस्ताव बनाया है, उनकी यह इच्छा है, परन्तु मेरा नम्र निवेदन यह है कि इसका परिणाम यही होगा, अर्थात् इससे इसी प्रकार की स्थिति पैदा होगी।

मैं इस बात को उदाहरण देकर समझाता हूं। अनुच्छेद 13 को ही लीजिये। हमने इन अनुच्छेदों के अधीन किये गए उपबंधों से राजद्रोह की परिभाषा को ही बदल दिया। अनुच्छेद 13(3) के अन्तर्गत हमने "अधिकार के प्रयोग पर निर्बंधन....." से पूर्व "युक्तियुक्त" शब्द रख दिया है और इस प्रकार हमने देश के न्यायालयों को यह अवसर दिया है कि वे यह देखें कि क्या वे विशेष विधियां जो कि कठोर तथा दु:सह हैं, शून्य होनी चाहिएं अथवा नहीं। वे न्यायालय के अधिकार के अन्तर्गत आती हैं, तथा कोई भी न्यायालय यह घोषणा कर सकता है कि

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

अमुक-अमुक विधि अनुच्छेद 13 के शब्दों तथा भावना के विरुद्ध हैं और इसलिए शून्य हैं। परन्तु ज्यों ही अनुकूलन कर दिया जाता है—और वह ऐसा नहीं होगा जो विधानमंडल द्वारा किया गया हो, वरन् ऐसा होगा जो कार्यपालिका द्वारा किया गया है—और ऐसा अनुकूलन प्रयोजन सिद्ध करने में असफल रहे, यदि अनुच्छेद 8 के अनुरूप नहीं हो, तो किसी न्यायालय के पास यह शक्ति अथवा अधिकार नहीं होगा कि इस अनुकूलन को गलत घोषित कर सके, जिसका अर्थ यह होगा कि हम कार्यपालिका को ऐसी शक्ति सौंप रहे हैं जो कि हमने विधानमंडलों तक को भी नहीं दी है। यदि यह संसद 26 जनवरी, 1950 के पश्चात् इन मूल अधिकारों के सम्बन्ध में कोई ऐसी विधि पास करती है जो लोगों की स्वतंत्रता को न्यून करती हो, तो उसे न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है तथा कोई भी न्यायालय यह कह सकता है कि जहां तक कि इस विधि से मूल अधिकारों सम्बन्धी उपबंधों का उल्लंघन हुआ, वहां तक संसद गलती पर थी। यदि अनुकूलन इस प्रकार किया जाता है कि इससे पूरा प्रयोजन सिद्ध नहीं होता तो हम अत्यन्त निस्सहाय बन जाते हैं। यह कहा जाता है कि ऐसा उपबंध है कि कोई भी विधानमंडल ऐसी कोई कार्यवाही कर सकता है जो वह आवश्यक समझे और ऐसी विधि का निरसन कर सकता है। बिल्कुल ठीक है। यही स्थिति है। क्या मैं पूछ सकता हूं कि क्या यह अधिकार पूर्णत: भ्रामक नहीं है? कौन-सा ऐसा प्रान्तीय विधानमंडल है जो कि इस निष्कर्ष पर पहुंचेगा कि राष्ट्रपति द्वारा किया गया अनुकूलन अथवा रूपभेद गलत है तथा वह राष्ट्रपति के निर्णयों पर एक अपीलीय न्यायालय के रूप में बैठेगा और नए सिर से कानून बनाएगा? कहां है वह सदस्य विशेष जिसे कि आवश्यक नए उपबंधों को लाने की सुविधाएं दी जाएंगी? हम सभी जानते हैं कि उन लोगों के मार्ग में कितनी रूकावटें हैं जो कि कानून बनाना चाहते हैं। मेरा निवेदन यह है जब ये अनुकूलन या रूपभेद एक बार कर लिए जाएंगे तो उन्हें बदलना अत्यन्त कठिन होगा। सरकार इन्हें नहीं बदलेगी। स्थानीय विधानमंडल उन्हें नहीं बदलेंगे तथा किसी प्राइवेट मेम्बर को उन्हें बदलने का अवसर नहीं मिलेगा। इसका यह स्पष्ट अर्थ हुआ कि ये अनुकूलन अथवा रूपभेद हमेशा बने रहेंगे, चाहे वे संविधान से संगत हों अथवा नहीं। देश का कानून कौन बनाता है? विधानमंडल, कार्यपालिका नहीं, अथवा विधि मंत्री के कार्यालय का सचिव या क्लर्क नहीं। यदि राष्ट्रपति भी कोई अध्यादेश जारी करता है तो वह अध्यादेश भी दो महीनों की अवधि के भीतर विधानमंडल के समक्ष रखा जाएगा, परन्तु जहां तक कि इन अनुकूलनों या रूपभेदों का सम्बन्ध है वे कभी भी विधानमंडलों के समक्ष नहीं रखे जाएंगे। अत: मेरा निवेदन है कि ये अनुकूलन कई प्रकार से दोषपूर्ण होंगे इन पर विधान मंडलों की मोहर नहीं लगेगी तथा न्यायालय इन रूपभेदों पर आपत्ति करने के लिए सक्षम नहीं होंगे।

महोदय, यह कहा जाता है कि पहला वाक्य, अर्थात "भारत के राज्य-क्षेत्र में प्रवृत्त किसी विधि को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन से" पर्याप्त गारंटी है। मेरा निवेदन है कि यह कोई गारंटी नहीं है। मैं यह कहना चाहता हूं कि प्रयोजन तो है, परन्तु यदि प्रयोजन पूरा नहीं किया जाता, यदि अनुकूलन तथा रूपभेद सही नहीं है अथवा इतने उपयोगी नहीं हैं जितने कि मूल अधिकार हैं तो उसका क्या लाभ है? न्यायालयों को हस्तक्षेप करने की कोई शक्ति नहीं है। यदि आप कहते हैं कि "आवश्यक या समीचीन" शब्द इसमें हैं तथा न्यायालय इस बात की जांच कर सकता है कि क्या अनुकूलन आवश्यक या समीचीन हैं, तो मेरा निवेदन है कि "किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी" शब्द रखने में क्या तुक है? मेरी समझ में, श्री कृष्णमाचारी ने यह कहा कि छोटी-छोटी बातों पर प्रश्न नहीं उठाया जाना चाहिए और केवल प्रयोजन ही देखा जाना चाहिए।

अनुकूलन में कहा जा सकता है कि अमुक-अमुक प्रयोजन के लिए अनुकूलन किए गए हैं, परन्तु यह पर्याप्त नहीं है। न्यायालय प्रयोजन पर भी आपत्ति नहीं कर सकेंगे। प्रयोजन तो है, परन्तु इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि अनुकूलनों से प्रयोजन सिद्ध हो जाएंगे। यह कहा जा सकता है कि ऐसा उपबंध पुराने भारत शासन अधिनियम 1935 में धारा 293 के रूप में विद्यमान था निस्संदेह भारत शासन अधिनियम में वह धारा थी, परन्तु फिर भी अब प्रयोजन बिल्कुल भिन्न है। यहां इस संविधान में जो मुख्य परिवर्तन हमने किया है, वह यह है कि हमने कुछ मूल अधिकार दिए हैं। 1935 के अधिनियम में कोई मूल अधिकार नहीं थे। यदि आप देश की साधारण विधियों में अनुकूलन करते हैं तो मुझे चिन्ता नहीं होगी, बशर्ते कि आप लोगों के अधिकारों को हाथ न लगाएं। आप देश की सभी विधियों को संविधान के अनुरूप बना सकते हैं। परन्तु जब आप सामान्य लोगों के नाजुक अधिकारों को हाथ लगाते हैं और उनके मूल अधिकारों को हाथ लगाते हैं तब, मेरा निवेदन है कि यह मामला अत्यन्त महत्वपूर्ण बन जाता है। "किसी न्यायालय में आपत्ति न की जायेगी" शब्द भी नहीं है। पुरानी धारा 293 में आप देखेंगे कि न्यायालय की शक्तियां हटाई नहीं गई थीं। इस धारा में विधियां पहले की भांति न्यायालयों के अधिकार में थी। अब ये शब्द विशेष रूप से जोड़ दिए गए हैं कि अनुकूलनों तथा रूपभेदों पर किसी न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी। मेरी मुख्य आपत्ति इन शब्दों पर है।

अब मैं अपनी गौण आपत्ति पर आता हूं। हालांकि यह भी समान महत्व की है। मैं कहना चाहता हूं कि कार्यपालिका को इन विधियों का अनुकूलन करने का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए। मेरा प्रस्ताव है कि इन मूल अधिकारों के सम्बंध में विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त की जानी चाहिएं। जो इस प्रश्न की जांच करे। यह एक महत्वपूर्ण समिति होगी तथा देश के सर्वोत्तम व्यक्ति इसके सदस्य होने चाहिएं। वे विधियों की जांच करेंगे तथा राष्ट्रपति को रिपोर्ट देंगे कि वह सुनिश्चित करें कि अमुक-अमुक विधियां बनाई जाए, क्योंकि कानून बनाने की शक्ति विधानमंडलों के पास है तथा हम यह शक्ति किसी राष्ट्रपति को अथवा अन्य किन्हीं लोगों को प्रत्यायोजित नहीं कर सकते। इस समिति द्वारा रिपोर्ट दिए जाने के पश्चात् सरकार यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाएगी कि ऐसी असंगत विधियों का निरसन कर दिया जाए। इसमें मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि न्यायालय की शक्ति समाप्त नहीं हो जायेगी। इन मूल अधिकारों का सार यह है कि न्यायालय ही अन्तिम प्राधिकार है तथा न्यायालयों का ही अन्तिम क्षेत्राधिकार भी है। आखिरकार यदि न्यायालय इन अधिकारों की रक्षा नहीं करेंगे तो हम यह आशा कदापि नहीं रख सकते हैं कि कार्यपालिका ऐसा करेगी। वास्तव में आप उलटी गंगा बहा रहे हैं। भारत शासन अधिनियम 1935 में इन अधिकारों को बिल्कुल भी हाथ नहीं लगाया गया था। केवल वर्तमान विधियों पर ही विचार हुआ था, मूल अधिकारों का कोई उल्लेख नहीं था और इसलिए न्यायालयों का क्षेत्राधिकार नहीं हटाया गया था। यह सम्भव है कि अनुच्छेद 13 द्वारा गारंटी दिए गए मूल अधिकारों में अनुकूलन के दौरान इस प्रकार हेर-फेर किया जाए कि हम आने वाले अनेक वर्षों में उनमें परिवर्तन न कर सकें।

अत: महोदय, मुझे यह प्रतीत होता है कि आपने समस्त विश्व के सामने केवल ढिंढोरा पीटा है कि आपने ये मूल अधिकार दिए हैं। मैं यह नहीं कहता कि विधि मंत्री इस प्रकार व्यवहार करेंगे। मेरे विचार में वह इस प्रकार व्यवहार नहीं करेंगे परन्तु वह अपने कक्ष में किसी से यह कह सकते हैं कि वह इस मामले की जांच करें। मैं सम्भवतया इस बात से सहमत नहीं हो सकता कि यह शक्ति किसी भी प्राधिकारी को जिसमें कि राष्ट्रपति तथा विधि मंत्री तक सम्मलित हैं प्रत्यायोजित की जाए। विधानमंडल को ही इन कानूनों की जांच करने दी जानी चाहिए और

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

उसे इसका पता लगाना चाहिए कि क्या ये अनुकूलन आवश्यक हैं अथवा नहीं। कार्यपालिका को इस ढंग से देश के कानून को नहीं बदलना चाहिए। श्री कृष्णमाचारी ने कहा कि ये शब्द महत्वपूर्ण नहीं है। ठीक है, इन्हें निकाल दें और मेरी मुख्य आपत्ति भी समाप्त हो जाएगी। महोदय, 1947 में हमारे पास विधान सभा में एक विधेयक था जिसमें कि पुरानी विधियों का निरसन विधानमंडलों द्वारा किए जाने की मांग की गई थी। आप एक निरसनकारी विधेयक पुन: संविधान सभा में क्यों नहीं ला सकते? इन मूल अधिकारों के सम्बन्ध में लोग न्यायालय में जाएंगे तथा न्यायालय यह निर्णय दे सकेगा कि अमुक-अमुक विधि संविधान के उपबंधों के अनुकूल नहीं हैं। आप यह शक्ति न्यायालयों को क्यों नहीं दे देते? यदि आप लोगों को लाभ पहुंचाना चाहते हैं, तो उन्हें यह लाभ प्रत्यक्ष रूप में पहुंचाएं। जैसी स्थिति इस समय है, आप अपनी स्थिति का दुरुपयोग कर सकते हैं तथा लोगों के लिए संकट खड़ा कर सकते हैं।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास-जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तुत संशोधन पर काफी अधिक आलोचना, पूर्ण गलतफहमी के कारण की गई है। इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक है कि इस खण्ड को उद्देश्य क्या है। हमारे संविधान ने संविधान के ढांचे, शक्तियों के वितरण, विशेष प्राधिकारों में निहित शक्तियों, यूनिटों के विधानमंडलों तथा केन्द्रीय विधानमंडल के बीच संबंधों में कुछ मूलभूत परिवर्तन किए हैं। साथ ही हमारा उद्देश्य यह नहीं है कि हम कानून बनाने का अपना कार्य नए सिरे से आरम्भ करें, परन्तु हमारा उद्देश्य यह है कि हम केवल उन्हीं निषेधों तथा विशेष उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए जिनका कि वर्तमान संविधान में प्रावधान है, पूर्व संविधान के अन्तर्गत आने वाली सभी कानूनों को ग्रहण करें। यह आवश्यक है कि उन सभी अनेक संविधियों, अध्यादेशों, अधिनियमों, अधीनस्थ अधिनियम तथा नियमों के बारे में जानें जो कि वर्ष 1935 में पहले अनुकूलन के पश्चात् इन बीस वर्षों में बनाए गए हैं। यदि प्रत्येक अनिधियम, प्रत्येक नियम तथा प्रत्येक आदेश को न्यायालयों की जांच के अध्यधीन रखा जाना है और यदि इस अनुकूलन की एक न्यायालय के पश्चात् दूसरे न्यायालय में जांच होनी है, तो इससे निस्संदे वकीलों तथा वादियों को तो अनेक सुअवसर उपलब्ध हो जाएंगे, परन्तु यह देश के व्यापक हित में नहीं होगा। अत: सम्पूर्ण विधान को नए संविधान में समाविष्ट करने के लिए आप पहले यह उपबंध करें कि वे अधिनियम प्रवर्तन में बने रहेंगे, जब तक कि वे संविधान के सिद्धान्तों के विरुद्ध न हों।

यह पहला सिद्धान्त है तथा इसे निर्धारित कर लेने के पश्चात् यह आवश्यक हो जाता है कि अनुकूलन के लिए उपबंध किया जाए। यदि ऐसा अनुकूलन दो वर्षों के भीतर किया जाना है जबकि संसद के पास नया संविधान बनाये जाने के परिणामस्वरूप विभिन्न विषयों से सम्बन्धित अत्यधिक कार्यभार होगा, तो संसद को अनुकूलन के कार्य से परेशानी में डालना एक नामसझी का काम होगा। इन परिजातियों में यह उपबंध किया गया है कि अनुकूलन सरकार द्वारा किया जायेगा। आप उस धारणा को लेकर न चलें कि दिल्ली में बैठा गवर्नर जनरल अथवा राष्ट्रपति ये सब अनुकूलन करेगा। सरकार की सहायता एक विशेषज्ञ समिति करेगी। मेरे मित्र ने जिन सलाहकार समितियों का सुझाव दिया है उनका उपयोग अनुकूलन के प्रयोजन के लिए किया जा सकता है, बशर्ते कि वे बहुत भारी भरकम न बन जाएं और अनुकूलन के कार्य में रुकावट न डालें। अनुकूलन शीघ्र करना होगा और इसके अतिरिक्त वह अन्य कार्य भी होगा कि जिसे कि संविधान के पास होने के तुरन्त बाद संविधान को प्रभावी बनाने के लिए संविधान सभा को अपने ऊपर लेना पड़ सकता है।

जिस रूप में यह अनुच्छेद सभा में प्रस्तुत किया गया है इस पर अपनी टिप्पणियां करने से पूर्व, यह आवश्यक है कि हम यह बात अपने दिमाग में रखें कि भारत सरकार शासन अधिनियम की धारा 293 में, जिसका अनुकूलन इस अनुच्छेद 283 में किया गया है, ठीक-ठीक क्या उपबंध है। धारा 293 के अन्तर्गत "हिज मैजेस्टी" को अनुकूलन की शक्ति दी गई थी। कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई थी। प्रारूप समिति के सभापति ने जो कि इन दो वर्षों की सीमा निर्धारित करने के लिए जिम्मेदार थे, यह सोचा की अनुकूलन की शक्ति एक अनिश्चितकाल के लिए राष्ट्रपति में निहित नहीं होनी चाहिए। इस कार्य को शीघ्रतापूर्वक किया जाना चाहिए तथा अनुकूलन दो वर्षों के भीतर पूरा कर लिया जाना चाहिए। अत: दो वर्षों की यह सीमा रखी गई। 1935 के नए संविधान के पश्चात् धारा 293 के अन्तर्गत फेडरल कोर्ट के समक्ष पहले ही मामले में यह प्रश्न आया कि क्या अनुकूलन पर न्यायालय में आपत्ति की जा सकती है। तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश सर मारिस गायर ने यू.पी. केन्टोनमेंट के मामले में अपना निर्णय देते हुए कहा कि अनुकूलनों पर तनिक भी आपत्ति नहीं की जा सकती। हमने वर्तमान अनुच्छेद में आरम्भ के शब्दों में ही एक सीमा रख दी अर्थात् "भारत के राज्यक्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन के लिए।" केवल इसी प्रयोजन के लिए राष्ट्रपति को अपनी इस शक्ति का प्रयोग करना है। यह अत्यंत आवश्यक, हितकारी, तथा श्रेयस्कर उपबंध है। अन्य उपबंधों तथा उप-नियमों के बारे में न्यायालयों में अपने अनुभव के आधार पर मैं साहसपूर्वक यह कह सकता हूं कि प्रत्येक नियम तथा प्रत्येक अधिनियम पर प्रहार करने की सामान्य प्रवृत्ति पाई जाती है और मैं यह कह सकता हूं कि यह उपबंध अत्यंत हितकारी तथा श्रेयस्कर है। इसे उच्चतम न्यायालय अथवा फेडरल कोर्ट पर पुन: छोड़ने के बजाए कि वह इस बात पर विचार करे कि क्या सर मारिस गायर के निर्णय का अनुसरण किया जाना है अथवा नहीं, या लाहौर उच्च न्यायालय में व्यक्त की कई विरोधी राय का अनुसरण किया जाना है अथवा नहीं, यह स्थिति स्पष्ट कर दी गई है कि अनुकूलन पर न्यायालय में आपत्ति नहीं की जायेगी। इसको सोच-समझकर रखा गया ताकि तुच्छ तथा सारहीन आपत्तियों को उठाए जाने से रोका जा सके। परन्तु यदि अनुकूलन संविधान के मुख्य उपबंधों से, संविधान के प्रयोजन ही से बहुत परे है तो न्यायालय को ऐसे अनुकूलन को शून्य घोषित करने का आवश्यक अधिकार प्राप्त होगा। इसका यह अर्थ नहीं कि प्रत्येक उप-नियम, प्रत्येक खण्ड, प्रत्येक उप-खण्ड, प्रत्येक अभिव्यक्ति को न्यायालय में परखा जाना होगा। यदि मूल प्रयोजन को दृष्टि में रखा गया है और यदि अनुकूलन इस प्रयोजन से परे नहीं है, तो उस पर न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी।

आखिरकार अनुकूलन अपरिवर्तनीय नहीं है। विधानमंडल इसमें हस्तक्षेप कर सकता है। यदि विधानमंडल सतर्क है और लोक राय के प्रति इतना संवेदनशील है कि प्रत्येक अनुकूलन की परख कर सके तो मेरे विचार में से उस समय ऐसा अधिनियम बनाने से कोई नहीं रोक सकता जब कोई अनुकूलन संविधान की भावना के अनुसार नहीं है। हम यह धारणा लेकर चल रहे हैं कि विधानमंडल अपने कर्तव्य के प्रति काफी जागरूक है, वह बहुत सतर्क है, बहुत योग्य है, परिश्रमी है तथा देश में इतने अधिक वकीलों के रहते जो कि निश्चय ही प्रत्येक उप-नियम की जांच-परख करेंगे और इतनी अधिक संख्या में लोगों के रहते, जिनके कि इससे प्रभावित होने की सम्भावना है, इस बात का कोई खतरा नहीं है कि सतर्क जनता तथा समान रूप से सतर्क वकीलों अथवा समान रूप से सतर्क विधायकों द्वारा इसकी ओर ध्यान न दिया जाए। विधायक सतर्क रहेंगे, वकील सतर्क रहेंगे तथा न्यायालय अधिनियमन में त्रुटि का निश्चित ही पता चला लेंगे। इन परिस्थितियों में

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

मेरा निवेदन है कि यह अत्यन्त श्रेयस्कर उपबंध है। इस बात को लेकर पहले ही काफी आलोचना है कि इस संविधान का ही आशय वकीलों को लाभ पहुंचाना है। इस संविधान में यह उपबंध है कि संविधान के अनुकूलन पर न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी, एक अत्यंत हितकारी उपबंध है।

जहां तक विधानमंडल की हस्तक्षेप करने की शक्ति का सम्बन्ध है, यह ऐसा किसी भी समय कर सकता है। यह उपबंध राष्ट्रपति द्वारा मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव जैसे सलाहकारों की जो कि निश्चय ही आवश्यक रूपभेद करने में राष्ट्रपति को सहायता देने के लिए लोक हित की भावना रखते हों, समिति बनाने के मार्ग में बाधक नहीं हैं और इसके साथ-साथ यह स्थायी तौर पर आवश्यक रूप भेद करने में राष्ट्रपति को समर्थ बनाता है। जब तक कि राष्ट्रपति पागल न हो अथवा उनका मंत्रिमंडल पागल न हो वे मूल अधिकारों का उल्लंघन नहीं करेंगे। निस्संदेह, किसी विशेष खण्ड के सम्बन्ध में कहीं-कहीं सम्भवतया विधानमंडल भिन्न दृष्टिकोण अपना सकता है, परन्तु यदि तर्कसंगत आधार है, तो विधानमंडल इसकी ओर ध्यान दे सकता है तथा सरकार अथवा सम्बद्ध दल इस उपबंध को बदलने में सक्षम होंगे। इन परिस्थितियों में, मुझे इस बात पर खेद है कि इस उपबंध पर आपत्ति की गई है।

***अध्यक्ष:** यह सुझाव दिया गया है कि हम दोपहर बाद बैठक करें ताकि हम अधिक प्रगति कर सकें। अत: हम चार बजे पुन: बैठेंगे।

तत्पश्चात् सभा मध्याहन भोजन के लिए 4 बजे म.प. तक के लिए स्थगित हुई।

सभा मध्याहन भोजन के पश्चात् 4 बजे म.प. समवेत हुई।

अध्यक्ष महोदय, माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पीठासीन हुए।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा-जनरल): अध्यक्ष महोदय प्रस्तावित संशोधन बिल्कुल भारत शासन अधिनियम 1935 के अनुसार है। यदि कोई अन्तर है भी, तो वह कठोरता के मामले में है। 1935 के अधिनियम में से जैसा कि इसे अनुकूलित किया गया है, इस धारा, अर्थात 293 का लोप कर दिया गया था। स्वाभाविक है कि इसके स्पष्टीकरण की आशा करने का हमारा अधिकार है। इसका लोप क्यों किया गया और इस संबंध में अब अन्तर करने की आवश्यकता क्यों महसूस की गई।

महोदय, मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव अपनी आपत्तियां स्पष्टत: प्रकट कर चुके हैं। उनमें से अधिकांश हमारी भी आपत्तियां हैं। मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने प्रारूप समिति का प्रतिनिधित्व करते हुए हमें कुछ उपदेश दिए। उन्होंने कहा कि संशोधन से विधानमंडल की शक्ति छीनी नहीं गई है। मैं उनसे पूछना चाहता हूं कि क्या उन जैसे विख्यात वकील के लिए यह आवश्यक है कि वे इन प्रारम्भिक सिद्धान्तों को हमें बतायें, जैसे कि इस सभा के सदस्य यह भी नहीं जानते हों कि एक उत्तरदायी सरकार की प्रणाली के अंतर्गत "राष्ट्रपति" का अर्थ है मंत्रिमंडल अथवा स्वयं प्रधान मंत्री। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहा कि यह धारा 293 की मानता के अनुरूप है कि ब्रिटेन के मंत्रिमंडल द्वारा सपरिषद आदेश (आर्डर्स इन काउंसिल) जारी किए जा रहे थे। जब आप ब्रिटेन की सरकार पर विश्वास कर रहे थे, तो आप अपनी सरकार पर विश्वास क्यों नहीं कर सकते? यदि इसमें अविश्वास की कोई बात है तो मैं यह कहूंगा

कि यह धारणा दूसरे पक्ष में विद्यमान है। अत: यह कहना अनुचित तथा दुर्भाग्यपूर्ण है कि हम इस धारा में परिवर्तन इसलिए चाहते हैं क्योंकि हम मंत्रिमंडल में विश्वास नहीं करते। यह मंत्रिमंडल में हमारे विश्वास का प्रश्न नहीं है। इस अनुच्छेद में जो प्रस्ताव किया गया है वह यह कि प्रारूप समिति के अध्यक्ष माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर विधानमंडल की सभी शक्तियां भारत के विधि मंत्री माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को हस्तान्तरित कर देंगे। इस स्थिति में भी हमें शायद उतनी चिन्ता न हो, यदि वह अथवा उनका मंत्रिमंडल इस सार प्रश्न पर स्वयं कार्यवाही करे। अध्यक्ष महोदय, यह सुविदित है कि मंत्रिमंडलीय स्तर के मंत्री अत्यधिक व्यस्त रहते हैं उनके लिए यह संभव नहीं है कि वे उन सभी अधिनियमों की बारीकी से जांच करें जिनका कि इस सम्बन्ध में अनुकूलन किया जाना है।

इस प्रश्न पर चर्चा करते हुए हमें दो या तीन बातें ध्यान में रखनी होंगी। प्रथम, आपने संविधान में मूल अधिकारों का प्रावधान किया है जिनकी पहले कहीं परिकल्पना नहीं की गई थी, और न ही तो इनके बारे में 1935 के अधिनियम में सोचा गया था तथा ब्रिटेन की सरकार अथवा ब्रिटेन के मंत्रिमंडल ने तो इनकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया था। दूसरे, आपने संविधान में विशिष्ट उपबंध करके न्यायालय के क्षेत्राधिकार पर रोक लगा दी है। हमारे मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने एक बात सामने रखी है कि यह सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक घोषणा है। मैं उन्हें पुन: बताना चाहता हूं, जैसा कि पहले बता चुका हूं—साम्राज्यवादी प्रशासन प्रणाली के अन्तर्गत कार्यरत ब्रिटिश न्यायपालिका की घोषणाओं में मेरा विश्वास इतना नहीं है जैसा कि वह स्वतंत्र भारत की स्वतंत्र न्यायपालिका की घोषणाओं में होगा। जब तक कि ऐसा नहीं होता, मैं उनसे तथा इस सभा के माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि न्यायपालिका में मेरा विश्वास इसकी सीमाओं के भीतर होगा।

महोदय, दो वर्षों की समय सीमा निर्धारित की गई है मुझे नहीं मालूम कि किस कारण से। कार्यपालिका को दी गई विशाल शक्तियां तनिक भी वांछनीय नहीं हैं। जब मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर कार्यपालिका पर भरोसा रखने के लिए अपने उपदेश हम पर थोप रहे थे, तो मैं स्तब्ध रह गया। मैं यह आशा नहीं करता था कि उन जैसे विख्यात विधिवेत्ता तथा वकील हमारी कार्यपालिका में हमारे विश्वास के संबंध में हमें उपदेश देंगे। मैं उनसे अनुरोध करूंगा कि वह अपने तर्क को और आगे बढ़ाएं। अवश्य ही, सभी प्रकार का विश्वास तो रखा जा सकता है। परन्तु फिर कोई कानून बनाने की आवश्यकता ही क्या है। सब कुछ प्रशासन पर ही छोड़ दें। कोई भी कानून न बनायें। कोई संविधान न रखें, मूल अधिकारों की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि हमारे यहां जनता द्वारा निर्वाचित उत्तरदायी सरकार है! उनकी जैसी ख्याति वाले अत्यन्त बुद्धिमान तथा सुयोग्य विधिवेत्ता से हमें ऐसी आशा नहीं थी।

महोदय, मेरी इस संबंध में शिकायत है कि सरकार ने अपनी पूरी स्थिति हमारे समक्ष स्पष्ट नहीं की है। मैं यह भली प्रकार समझता हूं कि सरकार का यहां प्रतिनिधित्व नहीं है तथा सरकार के सदस्य यहां पर सभा के सदस्य होने की अपनी हैसियत के नाते आते हैं। परन्तु निसंदेह यह सच है कि डॉ. अम्बेडकर भारत के विधि मंत्री भी हैं तथा यह उनकी जिम्मेदारी और कर्तव्य है कि वह हमें बताएं कि उन्होंने इस सम्बंध में अब तक क्या कदम उठाए हैं। यह एक बहुत बड़ा आदेश है जो कि वह चाहते हैं कि उन्हें दिया जाये। केन्द्र तथा प्रांतों के हजारों कानून प्रवर्तन में हैं, जिनमें कि ब्रिटिश सरकार द्वारा पास किए विनियम भी शामिल हैं। इन सभी को परिवर्तन में बने रहना है। मैं पूछता हूं कि क्या साधारण सदस्यों के लिए इन सभी को रूपभेदित करने के लिए गैर सरकारी विधान

[श्री विश्वनाथ दास]

का सहारा लेना सम्भव है? विधि मंत्रालय ने क्या किया है? मैं प्रारूप समिति से पुनः निवेदन करूंगा कि उन्होंने अब तक जो दृष्टिकोण अपनाया है तथा विधि मंत्रालय ने इस संबंध में अब तक जो कार्रवाई की है, उसमें कुछ लाभ नहीं हुआ है। मेरे माननीय मित्रों ने विभिन्न सुझाव दिये हैं।

***अध्यक्षः** आप इस विषय के सम्बंध में विधि मंत्रालय से किस प्रकार की कार्रवाई की आशा करते हैं?

***श्री विश्वनाथ दासः** मैं अब उसी पर आ रहा हूं। वास्तव में मैं अपना कर्तव्य निभाने में असफल रहूंगा यदि मैं यह न बता पाऊं। इसलिए मैं इसे दोहराता हूं। कोई भी अनुकूलन आरम्भ किए जाने से पूर्व, ब्रिटिश सरकार ने भारत सरकार तथा भारत सरकार के विधि विभाग से कहा कि सभी आवश्यक कानूनों की जांच की जाए। भारत सरकार अनुकूलनों का सुझाव दे रही थी तथा विधि मंत्रालय, जो कि उस समय भारत सरकार का विधि विभाग था, द्वारा सुझाए गए अनुकूलनों को अनुमोदित किया जा रहा था तथा उन्हें ब्रिटिश सरकार के अनुकूलनों के रूप में "सपरिषद आदेश" (आर्डर इन काउन्सिल) में प्रकाशित किया जा रहा था। इस संबंध में मेरी शिकायत यह है कि न तो विधि विभाग ने और न संविधान ने ही इस बारे में कुछ कार्रवाही की है। मैं आशा करता हूं उनको चाहिए था कि वे अनुकूलनों को तैयार रखते और उन्हें उन विधियों की जांच करनी चाहिए थी जो परिवर्तन में हैं।

***अध्यक्षः** बिना यह जाने कि संविधान कैसा होगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** (बम्बई-जनरल): मेरे मित्र की जानकारी पूर्णतः गलत है। वह नहीं जानते कि क्या किया जा रहा है।

***श्री विश्वनाथ दासः** यदि मेरी जानकारी गलत है तो मुझे प्रसन्नता होगी और यदि यह सब कुछ कर लिया गया है तो मुझे हर्ष होगा और इस स्थिति में मेरे मित्र द्वारा कम से कम अब तक सब कुछ सभापटल पर रख दिया जाना चाहिए था—जैसा कि मैंने पहले कहा और अब दोहराता हूं अपनी पूरी स्थिति हमारे समक्ष स्पष्ट कर देनी चाहिए थी और यह कहना चाहिए था "मेरे पास वे तैयार हैं। मुझे आदेश दें और मैं उन्हें प्रकाशित करा दूंगा।" मैं उन व्यक्तियों से सहमत नहीं हूं जो यह सोचते हैं कि मुख्य न्यायाधीश से परामर्श करने से मामले में सुधार होगा, तथा न ही उन माननीय सदस्यों से मैं सहमत हूं जिनका यह विचार है कि प्रतिक्रियायें संसद के समक्ष रख दी जायेंगी। भारतीय स्वाधीनता अधिनियम के अन्तर्गत अनुकूलनों को संसद के समक्ष रखा गया था। परन्तु उसका प्रभाव क्या रहा? विधानमंडलों के पास गैर-सरकारी सदस्यों के लिए इतना समय कहां है कि वे उतने विशाल कार्य को अपने हाथ में लें? उन परिस्थितियों में संसद की प्रतिक्रिया के लिए इन अनुकूलनों को संसद के समक्ष रखे जाने से कोई लाभ नहीं होगा।

माननीय सदस्यों के समक्ष एक अन्य प्रस्ताव रखा गया है और वह है एक विशेषज्ञ समिति गठित करने के बारे में। वह निश्चय ही उपयोगी तथा लाभदायक रहेगी। परन्तु मैं यह कहूंगा कि हम एक विशाल आदेश जारी कर रहे हैं और कार्यपालिका को महान जिम्मेदारी तथा प्राधिकार सौंप रहे हैं। अतः मेरा यह विचार है कि विधानमंडल के प्रति भी उचित रहेगा कि कुछ विख्यात विधिवेत्ताओं की

जो कि विधानमंडल के सदस्य भी हैं, एक समिति गठित की जाए जो विधि मंत्रालय को अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करे ताकि मंत्रालय उन्हें मात्र क़ानूनी रूप दे। उनको कानूनी रूप देना विधि मंत्रालय की जिम्मेवारी होनी चाहिए। मैं अन्य सभी शक्तियों, महत्व तथा जिम्मेवारियों को जिस रूप में भी वे हैं, कार्यपालिका के हाथों में नहीं रखना चाहता। इस दृष्टिकोण से इस प्रश्न के बारे में, जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं पूरी तरह से संतुष्ट हो जाऊंगा यदि माननीय विधि मंत्री या प्रारूप समिति यह कहे कि वे संविधान सभा की विशेषज्ञ समिति बनाने के लिए सहमत और इच्छुक हैं तथा विधानमंडल सभी कानूनों की जांच करेगा और यदि आवश्यक हुआ तो प्रान्तीय सरकारों से कहेगा कि वे सभी कानूनों की जांच करें तथा सभी अनुकूलन एक साथ रखे जायेंगे। स्वतंत्र भारत में जिम्मेवार सरकार बनने के पश्चात् इस बात की कल्पना तक भी नहीं की जा सकती कि ऐसे कानून रखे जाएं जोकि स्वयं गैर जिम्मेवार हों तथा जिनमें से कि अधिकांश अत्यन्त पुराने हो गए हों और दकियानूसी बन गए हों और जो कि लोगों की साथ-साथ रहने और कार्य की आज की आवश्यकताओं के अनुरूप न हों। इन परिस्थितियों में मैं प्रारूप समिति से तथा संविधान सभा के सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि वे इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार करें।

***एक माननीय सदस्य:** अब प्रश्न मतदान के लिए रखा जाये।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** महोदय, इस वाद-विवाद को ध्यानपूर्वक सुनने के पश्चात् मैं अपने मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण का समर्थन करना चाहता हूं। यह बात कदाचित निरर्थक प्रतीत होती है कि यदि विधानमंडल कोई प्रावधान पास कर देता है जो कि संविधान के अनुरूप नहीं है तो उसमें संतप्त किसी व्यक्ति को इस बात को न्यायालय के ध्यान में लाने का अधिकार होगा तथा न्यायालय को उस प्रश्न पर विचार करने से नहीं रोका जाएगा। मान लीजिए कि ऐसा कोई विधान पास किया जाता है जो कि संविधान के मूल अधिकारों के अनुरूप नहीं है, तब कोई व्यक्ति इस मामले को न्यायालय में ले जा सकता है तथा उस विधान को अवैध तथा शून्य घोषित करा सकता है। यह कुछ अजीब लगता है कि राष्ट्रपति अनुकूलन तथा रूपभेद की उसे प्रदत्त शक्ति के अन्तर्गत इस तरह का आदेश जारी करे अथवा उपबंध करे जो कि संविधान के अनुरूप न हो तो हम मामला न्यायालय में नहीं ले जा सकते। महोदय मेरे विचार में वहां इस नए प्रावधान के रद्द किये जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि अब तक अनुकूलन का आदेश इस संविधान के उपबंधों के अनुरूप नहीं है तब तक निचले न्यायालयों का उस पर पूरा क्षेत्राधिकार होगा। परन्तु मेरे माननीय मंत्री श्री अल्लादी कहते हैं कि अभी हाल ही के निर्णय में फेडरल कोर्ट ने घोषणा की है कि किसी अनुकूलन के निरसन के लिए अथवा उसे शून्य घोषित करने के लिए लाए गए किसी वाद पर न्यायालय विचार नहीं करेगा। महोदय इसलिए मैं समझता हूं कि यह निरापद होगा तथा सभी सम्बधित व्यक्तियों के हित में होगा कि पण्डित ठाकुर दास भार्गव द्वारा प्रस्तावित स्वरूप का कोई संशोधन स्वीकार कर लिया जाए।

मैं यह भी कहना चाहूंगा कि इस अनुच्छेद द्वारा निर्धारित की गई दो वर्ष की अवधि बहुत लम्बी होती है। यदि इतनी अवधि रखी जाती है, तो कुछ मामलों में राष्ट्रपति तथा उनके सलाहकार इतने शीघ्र उपाय नहीं करेंगे जितने शीघ्र कि उन्हें करने चाहिए। मेरी राय में, जहां तक आदिवासी क्षेत्रों में न्याय उपलब्ध कराने का सम्बन्ध है, संविधान के पास किए जाने के पश्चात् तुरन्त कार्रवाई करना आवश्यक होगा। सदन को यह याद होगा कि पष्ठ अनुसूची के पैरा 5 में कुछ उपबंध रखे गए हैं जिनके आधार पर कि सिविल प्रक्रिया संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिता को आदिवासी क्षेत्रों में प्रवर्तनीय बनाया जा सकता है।

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

परन्तु माननीय सदस्यों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि हालांकि ऐसे लोगों के बीच मुकदमेबाजी हो सकती है जो कि आदिवासी समुदाय के नहीं हैं, जिन क्षेत्रों में आदिवासी लोगों की तनिक भी आबादी नहीं हैं, परन्तु वे पर्वतीय क्षेत्रों के अधिकार क्षेत्र के भीतर हैं, वहां सिविल प्रक्रिया संहिता तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता लागू नहीं है। उदाहरणार्थ, वहां डिप्टी कमिश्नर का कोई भी सहायक जिसके पास कि कोई कानूनी शैक्षिक योग्यता नहीं है, किसी अभियुक्त को सात वर्षों तक की अवधि तक के कारावास का दण्ड दे सकता है, और वर्तमान नियमों के अन्तर्गत यदि दण्ड तीन वर्षों से अधिक का है, केवल तब ही अपील की जा सकती है। अन्यथा अपील का कोई अधिकार नहीं है। अन्य मामलों के संबंध में भी वहां सिविल प्रक्रिया संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिता लागू नहीं है। यह निर्धारित किया गया है कि न्यायालयों का मार्गदर्शन सिविल प्रक्रिया संहिता की भावना से अथवा दण्ड प्रक्रिया संहिता की भावना से होगा। महोदय, इस भावना का तनिक भी पता चला पाना अत्यन्त कठिन सिद्ध हुआ है। कई बार दण्ड प्रक्रिया संहिता की भावना का यह अर्थ लगाया जाता है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता का कठोरता से अनुसरण न किया जाये और कई बार इसका यह अर्थ लगाया जाता है कि दंड प्रक्रिया संहिता का कठोरता से अनुसरण किया जाये। यदि मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर या अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर उन पर्वतीय क्षेत्रों में अपना विधि व्यवसाय चला रहे होते तो उन्हें यह पता लगा पाना कठिन प्रतीत होता कि सिविल प्रक्रिया संहिता की भावना अथवा दंड प्रक्रिया संहिता की भावना कहां विद्यमान है। इस पैरा के अन्तर्गत राज्यपाल यह घोषणा करने के लिए सक्षम होगा कि ऐसे अपराधों के विचारण में दण्ड प्रक्रिया संहिता लागू की जाएगी जिनके संबंध में कि पांच वर्ष या इससे अधिक की अवधि के कारावास का दण्ड अथवा निर्वासन का दण्ड अथवा मृत्यु दण्ड दिया जाना है। परन्तु जब तक कि कानून का अनुकूलन तुरन्त नहीं कर लिया जाता, संविधान का यह उपबंध केवल एक अपालित नियम बना रहेगा। यह एक बहुत ही मामूली कृपा होगी। मात्र एक क्षण के लिए कल्पना करें कि दिल्ली अथवा अजमेर, मारवाड़ में रह रहे किसी व्यक्ति पर दंड प्रक्रिया संहिता का अनुसरण किए बिना ही मुकदमा चला दिया जाए, उसे सिद्धदोष ठहरा दिया जाए तथा मृत्यु दण्ड भी दे दिया जाए। मैं यह भली प्रकार समझ सकता था यदि यह विधि उन मामलों पर लागू होती जहां कि मूल स्थानीय लोग अथवा आदिवासी लोग पक्षकार हों। परन्तु बात ऐसी नहीं है। यदि मामला विशुद्ध गैर आदिवासियों के बीच है अथवा एक आदिवासी और एक गैर-आदिवासी के बीच है तो भी दण्ड प्रक्रिया संहिता संहिता लागू नहीं होती और इस स्थिति में किसी भी कानूनी प्रक्रिया का पालन नहीं किया जाता, और किसी भी प्रकार से अपील करने के अधिकार की अनुमति नहीं दी जाती।

मेरा निवेदन है कि वर्तमान विधि को उन उपबंधों के अनुकूल बनाने के लिये, जिन्होंने कि इस बात में थोड़ी सी दया दिखाई है कि राज्यपाल दण्ड प्रक्रिया संहिता के कुछ प्रावधानों को किसी क्षेत्र विशेष में कुछ मामलों के संबंध में लागू किये जाने की घोषणा कर सकता है, विधि में संशोधन करके अथवा उसमें रूपभेद करने के उपाय किए जाने चाहिएं ताकि वह विधि शीघ्र प्रवर्तन में आए। अतः मैं इस अनुच्छेद का स्वागत करता हूं जो कि वर्तमान विधि में परिवर्तन अथवा उपांतरण की अनुमति देता है ताकि इसे संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाया जा सके। इसके साथ-साथ इस बारे में भी हमारी सुरक्षा की जानी चाहिए कि अनुकूलनों अथवा उपांतरणों के इन उपबंधों को इस प्रकार लागू न किया जाए जिससे कि

संविधान द्वारा दिए गए मूल अधिकारों में हस्तक्षेप हो। हस्तक्षेप के ऐसे मामलों में यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि हमें मामला न्यायालय में ले जाने का अधिकार होगा ताकि हम उस अनुकूलन को अविधिमान्य घोषित करवा सकें। अन्यथा जिस निर्णय को उद्धृत किया गया है उसे देखते हुए यदि आप इसे उसी रूप में छोड़ देते हैं तो जब राष्ट्रपति ऐसा कोई अनुकूलन करेंगे जोकि संविधान उपबंधों के अनुरूप नहीं है तो हम कोई कदम उठाने के लिये पूर्णतः शक्तिहीन हो जायेंगे।

***अध्यक्षः** समापन प्रस्ताव पहले ही प्रस्तुत हो चुका है। प्रश्न यह है:

"कि अब प्रश्न मतदान के लिए रखा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, आरम्भ में मैं अपने माननीय मित्र श्री कामत से जो कि, मैं देख रहा हूं, इस समय यहां नहीं हैं, क्षमा मांगता हूं जिन्होंने कि मेरे वक्तव्य में मेरे द्वारा हुई छोटी सी भूल पर आपत्ति की जब कि मैंने उन माननीय सदस्यों का जिन्होंने संशोधन प्रस्तुत किये हैं, संशोधन प्रस्तुत करने वाले लोगों के रूप में उल्लेख किया था।

सदन को यह याद होगा कि मैंने प्रस्तुत किए जा रहे संशोधनों का पूर्वानुमान लगाने तथा अग्रिम रूप से उनका उत्तर देने का प्रयास किया था। इनमें से अधिकांश संशोधनों का, बहारहाल मेरे माननीय मित्रों श्री कामत, श्री मुनिस्वामी पिल्लै तथा प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना द्वारा प्रस्तुत किए गए संशोधनों का, उत्तर मैंने अग्रिम रूप से देने का प्रयास किया था। मेरे विचार में खण्ड (2) में जैसा कि यह खण्ड इस समय है प्रयुक्त शब्द इतने स्पष्ट हैं कि इस खण्ड के अन्त में रखे गये शब्दों, अर्थात् "कि ऐसे अनुकूलन तथा रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी" से सम्भवतया कोई भी परेशानी उत्पन्न नहीं होगी आरम्भ के शब्दों में पर्याप्त उपबंध किया गया है जिनमें कि विशेष रूप से यह कहा गया है कि अनुकूलन केवल भारत के राज्य क्षेत्र में प्रवृत्त किसी विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाने के प्रयोजनों के लिए ही किया जाना चाहिए।

मेरे माननीय मित्र पण्डित ठाकुर दास भार्गव द्वारा प्रस्तुत किए गए संशोधन ही केवल ऐसे संशोधन हैं जिनके लिए अब उत्तर दिये जाने की आवश्यकता है। अपने संशोधन संख्या 188 में, जिसमें कि उन्होंने खण्ड (2) के स्थान पर एक अन्य खण्ड रखने का प्रस्ताव किया है, वह खण्ड (2) का तात्पर्य समझने में असफल रहे हैं। खण्ड (2) का तात्पर्य यह है कि जहां तक सम्भव हो, सरकार के पास उपलब्ध तंत्र किए जाने वाले अनुकूलनों के लिए आवश्यक मात्रा में सामग्री तैयार करेगा जो कि इस संविधान के प्रख्यापन के तुरन्त बाद राष्ट्रपति द्वारा सम्भवतया एक आदेश के रूप में प्रकाशित की जायेगी। यह आवश्यक होगा क्योंकि अनेक ब्यौरे होंगे, कुछ मामलों में छोटे-छोटे तथा कुछ अन्य मामलों में विभिन्न स्वरूप के, जिनके बारे में कि कार्यवाही की जानी होगी ताकि प्रवृत्त विधियों को संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाया जा सके।

मेरे माननीय मित्र द्वारा प्रस्तावित संशोधन में, उन्होंने यह सुझाव दिया है कि एक समिति नियुक्त की जानी चाहिए तथा वह समिति आठ महीनों के भीतर रिपोर्ट प्रस्तुत करे और यह कि कार्यवाही बाद में की जाए। संविधान के प्रख्यापित होने तथा इन आठ महीनों के बीच की अवधि में क्या होगा जो कि स्वाभाविक है कि समिति की रिपोर्ट आने तक बीत जायेंगे। स्पष्ट है कि यदि प्रवृत्त

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

विधियों को वास्तव में संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाना है तो इस दौरान इस प्रकार की किसी भी कार्यवाही का किया जाना असम्भव है। जैसे कि ये संशोधन प्रस्तुत करते समय मैंने अपनी टिप्पणियों में कहा था, सरकार को या संसद को संकल्प पास करने में कोई रुकावट नहीं है अथवा सरकार को इस मामले में पहलकदमी करने तथा एक समिति नियुक्त करने में कोई रुकावट नहीं है जो कि इस देश में कानून के ढांचे की समीक्षा करे, उसको आधुनिक बनाए तथा इसे उन सिद्धांतों के अनुरूप है जो कि संविधान में प्रतिपादित किए गए हैं। मेरे विचार में मेरे मित्र पण्डित ठाकुर दास भार्गव को संविधान के प्रख्यापित होने तक प्रतीक्षा करनी चाहिए तथा या तो एक विधेयक द्वारा अथवा एक संकल्प द्वारा सरकार से इस मामले में, उनके द्वारा दिए गए सुझावों की दृष्टि में, कार्यवाही करवानी चाहिए।

जहां तक खण्ड (3) में उनके संशोधन का सम्बन्ध है, यह संशोधन इस प्रकार का है कि यह उस गारंटी को समाप्त कर देता है जोकि द्वारा प्रस्तुत संशोधन के खण्ड (3) में दी गई है। उन्होंने जो कुछ किया है, वह केवल यह है कि उन्होंने खण्ड (3) में सुझाए गए अपने प्रस्ताव में वह सब कुछ समाविष्ट करने का प्रयास किया है जो उन्होंने एक अलग अनुच्छेद 307-क प्रस्तुत करने के बारे में मूलत: सोचा था। वह विचार जो उनमें उस समय था जब उन्होंने वह संशोधन तैयार किया जिसे कि वह नये अनुच्छेद 307-क के रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे, खण्ड (3) में समाविष्ट कर लिया गया है अर्थात् यह कि मूल अधिकारों तथा देश की विधियों को मूल अधिकारों के संगत बनाए जाने के प्रश्न के सम्बंध में कुछ किया जाना चाहिए।

अत: मैं अनुभव करता हूं कि मेरे मित्र पण्डित ठाकुर दास भार्गव ने जिन्हें कि यह सभा एक अत्यन्त विख्यात वकील के रूप में जानती है तथा जो इस संविधान का निर्माण किये जाने में सहायता प्रदान करने हेतु काफी अधिक परिश्रम करते हैं इस मामले विशेष में अपने उल्लास को अपने विवेक पर हावी होने दिया है तथा एक संशोधन प्रस्तुत किया जो कि इस संशोधन विशेष के अनुकूल नहीं है जोकि इस समय सभा के समक्ष है। यह किसी अन्य बात के अनुकूल हो सकता है, यह एक स्वतंत्र प्रस्ताव के रूप में अनुकूल रह सकता है परन्तु यह इस संशोधन विशेष के अनुकूल नहीं है क्योंकि उनके संशोधन संख्या 188 से मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधन के खण्ड (2) के उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती तथा उनका संशोधन संख्या 189 खण्ड (3) का प्रयोजन पूरा नहीं करता, यह कि.......

***पण्डित ठाकुर दास भार्गव:** जहां तक प्रस्तावित खण्ड (3) के बारे में संशोधन का प्रश्न है वह एक बिल्कुल अलग बात है। यह खण्ड (2) में संशोधन नहीं है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** वास्तव में उनके संशोधन संख्या 189 में कहा गया है–

"कि संशोधन संख्या 2 में, प्रस्तावित खण्ड (3) के स्थान पर यह रखा जाए।"

मेरे विचार में यह प्रतिस्थापन नहीं है क्योंकि इसका खण्ड (3), जैसा कि मैंने प्रस्तुत किया है, के उपबंधों से तनिक भी सम्बन्ध नहीं हैं और मैं समझता हूं कि इसके बारे में कोई रहस्य भी नहीं है क्योंकि खण्ड (3) की शब्दावली बहुत स्पष्ट है। यह शब्दावली बहुत स्पष्ट है। यह शब्दावली राष्ट्रपति को केवल दो वर्षों की अवधि के लिए अनुकूलन करने हेतु शक्ति प्रदान करती है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** यह संशोधन मूल अनुच्छेद के लिए है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** तब मैं अपनी गलती स्वीकार करता हूं। यदि मेरे माननीय मित्र आज प्रात: 9.35 बजे ऐसा संशोधन लाए हैं जोकि कार्यसूची में दिए गए संशोधन से सम्बन्धित न होकर अलग कोई चीज है तब तो मुझे उन सभी टिप्पणियों को वापस लेना होगा जो कि मैंने अभी की हैं। और केवल यह तर्क देना होगा कि क्योंकि इस बात का मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधन से कोई सम्बन्ध नहीं है अत: मैं इसका उत्तर देने में असमर्थ हूं तथा सम्भवतया उत्तर देने के लिए उचित प्राधिकारी भारत सरकार के माननीय विधि मंत्री होंगे अथवा उस भारत सरकार के विधि मंत्री होंगे जो कि 26 जनवरी के पश्चात् होगी। मेरा विचार है कि मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधनों से संशोधित अनुच्छेद 307 एक निश्चित प्रयोजन को पूरा करता है जिसे मेरे माननीय मित्र तथा सहयोगी श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने अपने विद्वतापूर्ण तर्कों द्वारा काफी उचित ठहराया है तथा प्रस्ताव के समर्थन में उनका तर्क स्वीकार करके सदन ठीक ही करेगा और इसीलिए मैं सदन से निवेदन करूंगा कि सदन मेरा संशोधन स्वीकार करे तथा मेरे द्वारा संशोधित रूप में अनुच्छेद 307 को पास करे।

***श्री अमिय कुमार घोष:** (बिहार-जनरल): मैं एक स्पष्टीकरण चाहता हूं कि वास्तव में इन शब्दों का क्या आशय है, अर्थात्–

"तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी।"

क्योंकि यदि राष्ट्रपति किसी विद्यमान विधि को उन उपबंधों के अनुसार संशोधित अथवा रूपभेदित करता है जिन्हें कि हमने संविधान में पास किया है तब उसके कृत्य अधिकाराधीन होंगे तथा किसी न्यायालय में मामला उठाए जाने का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता। परन्तु यदि राष्ट्रपति ऐसा कुछ करता है जो कि खण्ड (2) की भावना के विरुद्ध हो अर्थात यदि वह ऐसी किसी विद्यमान विधि को संशोधित, रूपभेदित अथवा निरसित करता है जो कि संविधान में उल्लिखित उपबंधों से भिन्न है अथवा उनके प्रतिकूल है तो उसका कृत्य अधिकार-बाह्य है तथा निश्चय ही इस पर न्यायालय में आपत्ति की जा सकती है। अन्तिम दो पंक्तियों में जिस सीमा का प्रावधान किया गया है उसकी परिधि में वस्तुत: किस प्रकार के मामले की परिकल्पना की गई है? स्पष्ट है कि वे मामले जिनमें कि राष्ट्रपति ठीक इस अनुच्छेद द्वारा उसको प्रदत्त शक्तियों के आधार पर कार्यवाही करता है, इन उपरोक्त अन्तिम दो पंक्तियों के अन्तर्गत नहीं आते और इसलिए इस अन्तिम पंक्ति के अन्तर्गत सम्भवतया आने वाले मामले केवल एक वर्ग के ही हैं जिनमें कि राष्ट्रपति उस उपबंध के उल्लंघन में कार्य करता है जो इस अनुच्छेद में दिया गया है, क्योंकि आपने विद्यमान विधियों में संशोधन करने तथा उपांतरण करने के मामलों में राष्ट्रपति के लिए कोई प्रक्रिया अथवा नियम निर्धारित नहीं किए हैं और इसलिए शक्ति के अनियमित प्रयोग का प्रश्न ही पैदा नहीं होता।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मेरे माननीय मित्र इन उपबंधों के बारे में द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को नहीं समझ पाए हैं, शायद स्पष्टीकरण में मुझसे कोई कमी रह गई हो। मैं चाहता हूं कि वह आरम्भ के शब्दों की ओर ध्यान दें। प्रारम्भिक शब्द न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप को उचित ठहराते हैं कि वह यह सुनिश्चित करे कि क्या अनुकूलन प्रारम्भिक शब्दों, "अर्थात् भारत के राज्यक्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन से" के अनुरूप किया गया है अथवा नहीं। यदि न्यायालय यह अनुभव करता है कि यह उस प्रयोजन के लिए नहीं है तो निस्संदेह अनुकूलन अधिकार-बाह्य होगा। परन्तु दूसरी ओर यदि अनुकूलन की शब्दावली आदि के बारे में केवल भिन्न दृष्टिकोण होने के

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

मामले का प्रश्न है तो यह निश्चय ही एक ऐसा मामला है जिसके बारे में हमारा विचार यह है कि उस पर किसी न्यायालय में आपत्ति नहीं की जानी चाहिए। किसी भी स्थिति में कोई भी बात किसी न्यायालय को इससे नहीं रोकेगी कि वह इस प्रश्न की जांच करे कि क्या अनुकूलन या खंड में आशायित प्रयोजन, अर्थात् "किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के लिए" की पूर्ति के लिए था या अथवा नहीं। हम वास्तव में संविधान में यह नहीं कह सकते कि कौन-सा विशेष मामला अधिकार-बाह्य अथवा अधिकाराधीन होगा। प्रयोजन स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है और मेरे विचार में हम इस खण्ड में दिए गए शब्दों से बाहर नहीं जा सकते।

***श्री अमिय कुमार घोष:** यदि क्षेत्राधिकार के अनियमित प्रयोग के मामले तथा जिनमें कि राष्ट्रपति की कार्यवाही इस उपबंध के अनुरूप है। पूर्वोक्त अंतिम दो पंक्तियों के अन्तर्गत नहीं आते तो निश्चय ही यह खतरा सदैव बना रहता है कि इसका अर्थन्वन इस प्रकार लगाया जा सकता है कि इसमें ऐसे मामले भी शामिल कर लिए जाएं जिसमें कि राष्ट्रपति क्षेत्राधिकार के बिना कार्यवाही करते हैं।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों को मतदान के लिए रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'the President may (राष्ट्रपति)' **शब्द के पश्चात्'** 'in consultation with the Chief Justice of the Supreme Court and the Chief Justice of the High Court of Bombay, Madras and Bengal (सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा बम्बई, मद्रास और बंगाल के न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों से परामर्श से)' **शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** संख्या 134

प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'repeal or amendment (चाहे निरसन या चाहे संशोधन)' **शब्दों के स्थान पर** 'alteration or repeal or amendment (चाहे परिवर्तन या चाहे निरसन हो या चाहे संशोधन)' **शब्द रखे जाएं**।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** संख्या 135

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लै:** महोदय मैं अपना संशोधन वापस लेने की अनुमति चाहता हूं।

संशोधन, सभा की अनुमति से, वापस लिया गया।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 136, में दोनों भागों को मतदान के लिए अलग-अलग रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (3) में-'(1) उपखण्ड (ख) में 'after the expiration of the two years from the commencement of this Constitution (इस संविधान के आरम्भ से दो वर्ष की अवधि के पश्चात्), '**शब्दों के स्थान पर** 'after the Constitution of the Ministries of the Government of India or of the States, as the case may be, after the first General election under this Constitution (इस संविधान के अन्तर्गत प्रथम सामान्य चुनाव के पश्चात् भारत सरकार अथवा राज्य सरकारों, जैसी भी स्थिति हो, के मंत्रिपरिषद् गठित होने के पश्चात्)' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"उपखण्ड (ख) में 'or other competent authority (या अन्य सक्षम प्राधिकारी)' **शब्द निकाल दिए जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (3) के उपखण्ड (2) में, 'repeal or amend (निरसित या संशोधित)' **शब्दों के स्थान पर** 'after or repeal or amend (परिवर्तित या संशोधित)' **शब्द रखे जाएं।**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में 'and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी)' **शब्द निकाल दिये जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची एक द्वितीय सप्ताह के संशोधन संख्या 2 में अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित

[अध्यक्ष]

खण्ड (2) तथा (3) निकाल दिये जाएं।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

अध्यक्षः प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) के स्थान पर यह रखा जाये:

'The President shall, as soon as may be after the commencement of this Constitution, by order, appoint a Committee of experts to examine all the laws in force in the territories of India by whichsoever authority enacted and to report to him within a period of 8 months if any or any portion of the laws in force is inconsistent with the provisions of this Constitution and what adaptations and modifications are necessary to bring into accord the inconsistent portions with the provisions of this Constitution. The Government shall forthwith take steps to repeal or amend such laws or portions of them as are not in accord with the provisions of this Constitution and unless such laws or portions of laws are repealed or amended by being brought within a further period of one year and four months from the date of report in accord with the provisions of this Constitution they shall cease to be in force unless they are repealed or amended earlier by any competent authority or declared void by the courts.'

['राष्ट्रपति इस संविधान के प्रारम्भ होने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र आदेश द्वारा विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करेगा जो भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियों की जांच करेगी, चाहे ये विधियां किसी भी प्राधिकारी द्वारा बनाई गई हों, तथा आठ मास की अवधि के भीतर उसे रिपोर्ट करेगी कि क्या कोई प्रवृत्त विधि या इसका कोई भाग इस संविधान के उपबंधों के असंगत हैं तथा इन असंगत भागों को इस संविधान के उपबंधों के असंगत है तथा इनके लिए कौन-कौन से अनुकूलन तथा रूपभेद आवश्यक हैं। सरकार ऐसे विधियां तथा उनके भागों को, जो कि इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं हैं, निरसन करने अथवा उनमें संशोधन करने के लिए तुरन्त उपाय करेगी और जब तक कि ऐसी विधियों या ऐसी विधियों के भागों की रिपोर्ट की तारीख से एक वर्ष चार महीनों की अग्रेतर अवधि के भीतर इस संविधान के उपबंधों से संगत बनाकर उसका निरसन अथवा संशोधन नहीं किया जाता, वे प्रवर्तन में नहीं रहेंगे जब तक कि उन्हें इससे पूर्व किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा निरसित अथवा संशोधित नहीं कर दिया जाता या न्यायालयों द्वारा शून्य घोषित नहीं कर दिया जाता।' "]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद के प्रस्तावित खण्ड (3) के स्थान पर यह रखा जाए:

'(3) For the purpose of bringing the provisions of the law in force in the territory of India relating to fundamental rights guaranted by this Constitution into accord with the provisions of this Constitution, the President shall after the commencement of this Constitution appoint, as soon as may be, a committee of experts to examine the laws in force in the territory of india with instructions to report if any or any portion of them is inconsistent with the provisions relating to fundamental rights and what adaptations and modifications are necessary to bring such inconsistent laws or portions of laws in accord with the provision of this Constitution. The Government shall on the receipt of the report forthwith take steps to avoid, repeal or amend such laws or portions of them as are not in accord with the guaranteed fundamental rights. Such laws or portions of them as are reported to be inconsistent and not in accord with the guaranteed fundamental rights shall cease to be in force after one year of the commencement of this Constitution if they are not avoided repealed or amented earlier.'

['(3) भारत के राज्य क्षेत्र में प्रवृत्त ऐसी विधियों के उपबंधों को जो इस संविधान में गारंटी दिए गए मूल अधिकारों से संबंधित हैं इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन के लिए, राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् भारत के राज्य-क्षेत्रों में प्रवृत्त विधियों की जांच करने हेतु यथाशीघ्र विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करेगा तथा उसे यह अनुदेश देगा कि वह यह रिपोर्ट दे कि क्या इनमें से कोई विधियां अथवा इनका कोई भाग मूल अधिकारों से सम्बन्धित उपबंधों के असंगत है और ऐसी असंगत विधियों तथा विधियों के भागों को इस संविधान से संगत करने के लिए कौन-कौन से अनुकूलन तथा रूपभेद आवश्यक हैं। रिपोर्ट प्राप्त होने पर सरकार ऐसी विधियों अथवा इनके भागों को, जो कि गारंटी दिए गए मूल अधिकारों से संगत नहीं हैं, का परिवर्तन, निरसन तथा संशोधन करने के लिए तुरन्त उपाय करेगी। ऐसी विधियां अथवा उनके भाग जिनके बारे में कि ऐसी रिपोर्ट दी गई है कि ये असंगत हैं तथा गारंटी दिए हुए मूल अधिकारों के अनुरूप नहीं है, उस संविधान के प्रारम्भ से एक वर्ष के पश्चात् प्रवर्तन में नहीं रहेंगी यदि उन्हें इससे पूर्व परिवर्जित, निरसित अथवा संशोधित नहीं किया जाता।' "]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खंड (2) में' 'made, and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (प्रभावी होगी तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी)' **शब्दों के स्थान पर** 'made (प्रभावी होगी)' **शब्द रखे जाएं।**"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खंड (2) में' 'and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (तथा किसी ऐसे अनुकूलन और रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जायेगी)' **के स्थान पर** 'except in so far as they are inconsistent with the provisions of this Constitution (सिवाय इसके कि जहां तक ये इस संविधान के उपबंधों के संगत नहीं हों)' **शब्द रखे जाएं।**"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के खंड (2) में' 'except on the ground that the law so adapted or modified is not in accord with the provisions of this Constitution (सिवाय इस आधार पर कि इस प्रकार अनुकूलन या रूपभेद की गई विधि इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं है।)' **शब्द अंत में जोड़े जाएं।**"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 307 के खंड (2) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रखे जाएं:–

'(2) For the purpose of bringing the provisions of any law in force in the territory of India into accord with the provisions of this Constitution, the President may by order make such adaptations and modifications of such law, whether by way of repeal or amendment as may be necessary or expedient, and provide that the law shall, as from such date as may be specified in the order, have effect subject to the adaptations and modifications so made, and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law.

(3) Nothing in clause (2) of this article shall be deemed:

(a) to empower the President to make any adaptation or modification of any law after expiration of two years from the commencement of this Constitution; or

(b) to prevent any competent legislature or other competent authority to repeal or amend any law adapted or modified by the President under the said clause.

That in Explanation I to article 307, the words 'but shall not include an Ordinance promulgated under section 88 of the Government of India Act, 1935' be added at the end.

That in Explanation II to article 307, the words 'has' the word 'had' be substituted and after the words continue to have the word 'such' be inserted.

That for Explanation III to article 307, the following be substituted:

Explanation III—Nothing in this article shall be construed as continuing any temporary law in force beyond the date fixed for its expiration, or the date on which it would have expired if this Constitution had not come into force.

(2) भारत के राज्य-क्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन से, राष्ट्रपति आदेश द्वारा ऐसी विधि के अनुकूलन और रूपभेद, चाहे निरसन या चाहे संशोधन द्वारा कर सकेगा जैसे कि आवश्यक या इष्टकर हो तथा उपबंध कर सकेगा कि वह विधि ऐसी तारीख से लेकर जैसी कि आदेश में उल्लिखित हो, ऐसे किए गए अनुकूलनों और रूपभेदों के अधीन रह कर ही प्रभावी होगी तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी।

(3) इस अनुच्छेद के खंड (2) की कोई बात–

(क) राष्ट्रपति को इस संविधान के प्रारंभ से दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी विधि का कोई अनुकूलन या रूपभेद करने की शक्ति देने वाली, अथवा

(ख) किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को राष्ट्रपति द्वारा उक्त खंड के अधीन अनुकूलन या रूपभेद की गई किसी विधि को निरसित या संशोधित करने से रोकने वाली, न समझी जाएगी।

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या में 'but shall not include an Ordinance promulgated under Section 88 of the Government of India Act, 1935 (परंतु भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 88 के अधीन प्रख्यापित कोई अध्यादेश इसमें सम्मिलित नहीं होगा)' **शब्द अंत में जोड़ दिये जाएं**।"

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 2 में 'has' **शब्द के स्थान पर** 'had' और 'continue to have' **शब्दों के पश्चात्** 'such' **शब्द अंतःस्थापित किया जाये**।'

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 3 के स्थान पर यह रखा जाये:

'*Explanation III*—Nothing in this article shall be construed as continuing any temporary law in force beyond the date fixed for its expiration or the date on which its would have expired of this Constitution had not come into force.' "

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 307 संशोधित रूप में, संविधान का अंग बने।"

[अध्यक्ष]

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 307 संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 308

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 308 पर आते हैं। डॉ. अम्बेडकर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 308 के खंड (3) के स्थान पर यह रखा जाए:

'(3) Nothing in this Constitution shall operate to invalidate the exercise of jurisdiction by his Majesty in Council to dispose of appeals and petitions from, or in respect of any judgement, decree or order of any court within the territory of India in so far as the exercise of such jurisdiction is authorised by law, and any order of this Majesty in Council made as any such appeal or petition after the commencement of this Constitution shall for all purposes have effect as if it were as order or decreed made by the Supreme Court in the Exercise of the Jurisdiction conferred on such court by this Constitution.'

'(3) इस संविधान की कोई बात भारत राज्य क्षेत्र के किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आज्ञप्ति या आदेश की, या के विषय में अपीलों और याचिकाओं को निपटाने के लिए सपरिषद् सम्राट के क्षेत्राधिकार के प्रयोग को वहां तक अमान्य न करेगी जहां तक कि ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधि द्वारा प्राधिकृत है तथा ऐसी किसी अपील या याचिका पर इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् दिया गया सपरिषद् सम्राट का कोई आदेश सब प्रयोजनों के लिए ऐसे प्रभावी होगा मानो कि वह उच्चतम न्यायालय द्वारा उस क्षेत्राधिकार के प्रयोग में, जो ऐसे न्यायालय को इस संविधान द्वारा दिया गया है, दिया गया कोई आदेश या आज्ञप्ति हो।' "

और यह भी:

"कि अनुच्छेद 308 के खंड (3) के पश्चात् यह नया खंड अंत:स्थापित किया जाए:

'(3a) On and from the date of commencement of this Constitution the jurisdiction of the authority functioning as the Privy Council in a State for the time being specified in Part III of the First Schedule to entertain and dispose of appeals and petitions from or in respect of any judgement, decree or order of any court within that State shall cease, and all appeals and other proceedings pending before the said authority on the said date shall be transferred to, and disposed of by the Supreme Court.'

'(3क) इस संविधान ने प्रारंभ की तारीख पर और से प्रथम अनुसूची के

भाग 3 में उल्लिखित किसी राज्य में अंत: परिषद् के रूप में फिलहाल कृत्यकारी प्राधिकारी का उस राज्य के किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आज्ञप्ति या आदेश की अपील या याचिका को ग्रहण या निपटाने का क्षेत्राधिकार समाप्त हो जाएगा तथा ऐसे प्राधिकारी के समक्ष उक्त तारीख को लम्बित सब अपीलें और अन्य कार्यवाहियां उच्चतम न्यायालय को भेज दी जाएंगी और उसके द्वारा निपटाई जायेंगी।' "

महोदय, प्रथम संशोधन का प्रयोजन केवल यह है कि प्रिवी कौंसिल द्वारा ऐसी अपीलों को निपटाने के लिए उसके प्राधिकार को जारी रखा जाये जो अपीलें कि इसके समक्ष उस विधि के अंतर्गत लम्बित पड़ी हुई हो सकती हैं, जिसे कि संविधान सभा ने हाल ही में पास किया—अर्थात् धारा 4—यदि वे 26 जनवरी, इसी तारीख को वह तारीख मानते हुए जबकि यह संविधान अस्तित्व में आएगा—से पूर्व अंतिम रूप से नहीं निपटायी गयी हो। महत्वपूर्ण शब्द है "अपील को निपटाने के लिए" अपील ग्रहण करने की कोई शक्ति नहीं हैं और अन्य महत्वपूर्ण शब्द हैं "ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधि द्वारा प्राधिकृत है।" अर्थात् हाल ही में पास किए गए अधिनियम का उल्लेख। प्रिवी कौंसिल का अन्य कोई क्षेत्राधिकार नहीं होगा, इससे अधिक क्षेत्राधिकार नहीं होगा जो कि हमने प्रदत्त किया है। परामर्श करके ऐसी व्यवस्था की गई है कि जहां तक संभव हो उस तारीख तक जिस तारीख को कि यह संविधान अस्तित्व में आएगा, प्रिवी कौंसिल उन सभी मामलों को निपटा चुकी होगी जोकि उस विशेष अधिनियम के अंतर्गत उसके लिए छोड़े गए थे। परन्तु यह हो सकता है कि या तो किसी मामले में अभी अंशत: सुनवाई हुई हो अथवा किसी मामले का निपटान उस अर्थ में हो चुका हो कि सुनवाई समाप्त कर दी गई हो परंतु अभी आज्ञप्ति (डिग्री) नहीं लिखी गई है और इस अवस्था में वह मामला उसके समक्ष लम्बित पड़ा हो। यह अनुभव किया गया कि न-निपटाए गए मामलों अथवा अंशत: सुनवाई किए गए मामलों को उच्चतम न्यायालय को भेजने के उपबंध करने के बजाए जिससे कि वादियों को काफी कठिनाई पैदा होगी, यह वांछनीय है कि हम अपने सामान्य नियम में यह अपवाद करें कि प्रिवी कौंसिल का क्षेत्राधिकार उस तारीख को समाप्त हो जायेगा जिसको कि संविधान अस्तित्व में आ जायेगा। संशोधन संख्या 6 का मुख्य प्रयोजन यही है।

जहां तक संशोधन संख्या 7 का संबंध है, यह सुविदित है कि कुछ देशी रियायतों में प्रिवी कौंसिलें हैं जो कि अपने उच्च न्यायालयों के निर्णयों का अधीक्षण करती है जिसका कारण यह है कि वे प्रिवी कौंसिल अथवा यह कहना ठीक रहेगा कि इंग्लैण्ड की हिज मैजेसिटी के प्रिवी कौंसिल के क्षेत्राधिकार को मान्यता नहीं देती थीं। इसलिए उनकी अपनी प्रिवी कौंसिलें थीं। अब यह अनुभव किया गया है कि संविधान में इस उपबंध को दृष्टिगत रखते हुए उच्चतम न्यायालय तथा भिन्न-भिन्न राज्यों के अर्थात् भाग 3 तथा भाग 1 दोनों वर्ग के राज्यों के उच्च न्यायालयों के बीच सीधा संबंध हो, भाग 3 में देशी रियासत के प्रिवी कौंसिल के इस मध्यवर्ती संस्थान को कानूनी रूप से समाप्त कर दिया जाए, ताकि 26 जनवरी को भाग 3 के राज्य में उच्च न्यायालय से किसी राज्य में सभी अपीलें उच्चतम न्यायालय द्वारा निपटाए जाने के लिए स्वत: अंतरित हो जाएं।

मुझे बताया गया है कि भिन्न-भिन्न राज्यों में इन प्रिवी कौंसिलों को भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है। यदि ऐसा है तो प्रारूप समिति का यह विचार है कि अपने अनुच्छेद 306 में प्रिवी कौंसिल की परिभाषा समाविष्ट करके और उसमें इन संस्थानों के भिन्न-भिन्न नामों तथा भिन्नताओं को शामिल करके इस कठिनाई को दूर किया जाये।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 138 तथा 139—श्री नज़ीरुद्दीन अहमद।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं संख्या 138 प्रस्तुत नहीं करना चाहता क्योंकि इसका अर्थ इस खंड का विरोध करना है। जहां तक संख्या 139 के संबंध में यह शाब्दिक स्वरूप का है तथा मैं इसे प्रारूप समिति के विवेक पर छोड़ता हूं।

जहां तक खंड (3) का संबंध है, जो कि सपरिषद् हिज मैजेस्टी को 26 जनवरी—वह तारीख जिस दिन कि संविधान प्रवर्तन में आएगा—के पश्चात् भी अपीलों तथा याचिकाओं को निपटाने की शक्ति देता है, यह खंड कुछ चौंका देने वाला प्रतीत होता है। अभी कुछ दिन पूर्व ही हमने इस सभा में एक अधिनियम पास किया जिसके अंतर्गत उन सभी अपीलों तथा याचिकाओं को जो कि न्यायिक समिति के समक्ष लम्बित हैं, फेडरल कोर्ट को भेज दिया गया है। तथापि, इसके कुछ अपवाद भी थे। एक अपवाद था अनुमति के लिए याचिका। यह उपबंध किया गया कि यदि न्यायालय में अवकाश की अवधि के दौरान, जो कि आज से आरंभ होती है, प्रिवी कौंसिल में अनुमति के लिए कोई याचिका लम्बित हो तो वह केवल अनुमति दे सकती है अथवा इससे इंकार कर सकती है। अत: इसका प्रभाव यह रहा कि यदि प्रिवी कौंसिल ने कोई अनुमति नहीं दी तो मामला अंतिम रूप से समाप्त माना गया। परंतु यदि कोई अनुमति दे दी जाती तो प्रिवी कौंसिल को उस पर आगे सुनवाई करने का अधिकार नहीं था। आगे सुनवाई फेडरल कोर्ट में तथा फेडरल कोर्ट को उच्चतम न्यायालय में बदल दिए जाने के पश्चात् बाद में उच्चतम न्यायालय में होगी और फिर कुछ अन्य मामले भी हैं जिन पर कि प्रिवी कौंसिल विचार कर सकती है, अर्थात् वे अपीलें जिन पर कि सुनवाई हो चुकी है, जिनमें कि न्यायिक समिति अपना निर्णय घोषित कर चुकी है परंतु हिज मैजेस्टी द्वारा उसकी अंतिम स्वीकृति से अभी अवगत नहीं कराया गया है। उन मामलों में हिज मैजेस्टी उस तारीख के पश्चात् भी प्रिवी कौंसिल की सिफारिशें स्वीकार करने की अधिकारी होगी।

जिस समय इस अधिनियम पर सदन में विचार हो रहा था उस समय हमें यह बताया गया था कि ऐसी कोई भी अपील नहीं है जो कि भारत से प्रिवी कौंसिल के पास लम्बित हो। लम्बित मामले केवल अनुमति के लिए याचिकाएं होंगी और यदि ये याचिकाएं स्वीकार की जाती हैं तो निस्संदेह मामले पर आगे सुनवाई भारत में होगी। लम्बित पड़ी एक मात्र याचिका का संबंध गोडसे की अपीलों से है। अन्य कोई याचिका लम्बित नहीं है। जहां तक अपीलों का संबंध है, कुछ भी लम्बित नहीं होगा, सिवाए न्यायिक समिति की सिफारिशें स्वयं हिज मैजेस्टी द्वारा स्वीकार किए जाने के। परंतु हिज मैजेस्टी द्वारा यह स्वीकृति स्वत: ही मिल जाती है और इसमें कभी भी विलम्ब नहीं होता। अत: खंड (3) की कोई आवश्यकता नहीं है जिसे कि अनावश्यक ही व्यापक रूप में व्यक्त किया गया है। इस सदन ने बार-बार कहा है कि अब से आगे सभी अपीलों की सुनवाई फेडरल न्यायालय द्वारा की जानी चाहिए, परन्तु यह पुराना विचार किसी न किसी रूप में अभी भी जारी है, तथा खंड (3) उस पुराने विचार को चिरस्थायी बनाता है जिसका कि यह सदन निश्चय ही परित्याग कर चुका है। तर्कों के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने हाल ही में पास किए गए अधिनियम की धारा 4 का उल्लेख किया था। हाल ही में पास किए गए अधिनियम की धारा 4 में यह कहा गया है।

"धारा 2 की कोई बात सपरिषद् हिज मैजेस्टी के क्षेत्राधिकार को निम्नलिखित का निपटान करने से प्रभावित नहीं करेगी–

(क) कोई भी भारतीय अपील या याचिका जिस पर कि प्रिवी कौंसिल की न्यायिक समिति ने निर्धारित दिन से पूर्व निर्णय दिया हो, अथवा जैसी भी स्थिति हो, हिज मैजेस्टी को रिपोर्ट किया हो परंतु जिसे कि सपरिषद् हिज मैजेस्टी के आदेश द्वारा अवधारित नहीं किया गया है,"

निर्धारित दिन आज का दिन है, अर्थात् 10 अक्तूबर। यदि आज से पूर्व अर्थात् कल तक कोई निर्णय दिया गया है परंतु हिज मैजेस्टी ने उस पर अपनी अनुमति नहीं दी है, तो अनुमति दी जा सकती है। फिर हम खंड (ख) पर आते हैं:

"कोई भारतीय अपील या याचिका जिस पर कि न्यायिक समिति ने, अपील पर सुनवाई करने के पश्चात् निर्णय या आदेश आरक्षित रखा है"

और (ग)–

"कोई भारतीय अपील जिसे कि निर्धारित दिन से पूर्व वर्ष 1949 की न्यायालय-अवकाश की बैठकों के लिए न्यायिक समिति की कार्यसूची में दर्ज किया गया है और जिसके कि इस दिन के पश्चात् न्यायिक समिति के आदेश द्वारा या प्राधिकार के अंतर्गत वहां से हटाए जाने का कोई निदेश नहीं है।"

अत: यदि, वर्तमान अवधि के लिए प्रिवी कौंसिल के समक्ष आज कोई अपील लम्बित है तो इसे निपटाया जाएगा, जब तक कि इस पर भारत में सुनवाई किए जाने का निदेश नहीं दिया जाता, परंतु हमारे द्वारा पास किए गए अधिनियम के आधार पर प्रिवी कौंसिल इन अपीलों को भारत को भेजने के निर्देश देने के लिए बाध्य होगी। परंतु यह भी सुविदित है कि गोडसे के मामले के सिवाय कोई भी अन्य भारतीय मामला सूची में दर्ज नहीं किया गया है। फिर हम खंड (घ) आते हैं:

"कोई भारतीय याचिका जो कि निर्धारित दिन से पूर्व प्रिवी कौंसिल की रजिस्ट्री में दाखिल की गई है।"

अर्थात् अनुमति तथा अन्य बातों के लिए याचिका पर भी केवल सुनवाई होगी तथा विशेष अनुमति दी जा सकती है अथवा इससे इंकार किया जा सकता है। यदि इंकार कर दिया जाता है तो मामला यहीं समाप्त हो जाता है और यदि अनुमति दी जाती है तो भी मामला समाप्त हो जाता है क्योंकि मामला भारत को वापस आ जाता है।

अत: मेरा निवेदन है कि खंड (3) अनावश्यक रूप से व्यापक रखा गया है और इसमें काल्पनिक मामले शामिल हैं जो कि विद्यमान नहीं हैं। हमें इस बात की सही जानकारी होनी चाहिए कि प्रिवी कौंसिल में कौन-कौन से मामले लम्बित हैं, कितने हैं, कितने मामले निर्धारित दिन 10 अक्तूबर अर्थात्, आज के पश्चात् स्वत: अंतरित हो जाएंगे और क्या कोई मामला शेष रह जाएगा। हमें यह बात स्पष्टतया विदित होनी चाहिए कि उनके समक्ष संभवतया कौन-कौन से मामले लम्बित पड़े होंगे और जिन्हें कि 26 जनवरी 1950, जो कि इस संविधान के प्रवर्तन में आने की अस्थायी तारीख है, के पश्चात् भी धारा (3) के अंतर्गत निपटाया जा सकेगा। हमारे समक्ष विद्यमान परिस्थितियों का यही चित्र होना चाहिए, विपरीत इसके कि हम एक व्यापक धारा पास करें जिसमें कि सभी प्रकार के काल्पनिक और आनुमानिक मामले आते हों, मेरे विचार में 26 जनवरी को भारत की पूर्णरूपेण

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

स्वतंत्रता के पश्चात् आज तक हमारे द्वारा अपनाए गए संविधान को दृष्टिगत रखते हुए तथा हमारे द्वारा डोमिनियन दर्जे का परित्याग गिए जाने तथा स्वाधीन दर्जा अर्जित करने को दृष्टिगत रखते हुए इन शक्तियों का न्यायिक समिति में जारी रहना कुछ-कुछ असाधारण होगा। महोदय, इन परिस्थितियों में मेरा निवेदन है कि खंड (3) का लोप किया जाना चाहिए तथा इसे स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। इस मामले का स्पष्टतया विश्लेषण किया जाना चाहिए और सभा को बताया जाना चाहिए कि कौन-कौन से मामले हैं जो कि वास्तव में खंड (3) की परिधि में आते हैं। अतः जब तक कि इस मामले को स्पष्ट नहीं किया जाता, मैं इस खंड का विरोध करता हूं।

***अध्यक्षः** डॉ. देशमुख।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** महोदय, मैं अपना संशोधन प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** श्री शिब्बन लाल सक्सेना का संशोधन इसका लोप करने के लिए है। अन्य संशोधन प्रस्तुत हो चुकने के पश्चात् आप इस पर बोल सकते हैं— श्री महावीर त्यागी।

***श्री महावीर त्यागीः** महोदय, मैं अपना संशोधन प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** श्री शिब्बन लाल सक्सेना, आप इस पर बोल सकते हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं।

"That in amendments Nos. 6 and 7 of List I (Second Week), the proposed clause (3) be deleted, and the proposed new clause 3(a) be re-numbered as (3)"

["कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 6 तथा 7 में, प्रस्तावित खंड (3) निकाल दिया जाये तथा प्रस्तावित नये खंड (3क) को खंड (3) के रूप में पुनर्संख्याकित किया जाए।"]

***अध्यक्षः** इसको प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है। आप इस पर बोल सकते हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** यह संशोधन केवल एक खंड के लोप के लिए है, अनुच्छेद के लोप के लिए नहीं। महोदय, इस खंड (3) पर मेरी आपत्ति यह है कि मैं नहीं चाहता कि 26 जनवरी के पश्चात् सपरिषद् सम्राट का इस देश से कोई सरोकार रहे। उस दिन हम एक पूर्णरूपेण स्वतंत्र गणराज्य बन जाएंगे तथा इस अनुच्छेद का वह उपबंध, जिसमें कि यह परिकल्पना की गई है उस दिन लम्बित पड़ी अपीलों की सुनवाई करने के लिए सपरिषद् सम्राट को अधिकार होगा, मेरे विचार से हमारी स्वाधीनता के लिए अपमानजनक होगा। यह आपत्ति की जा सकती है कि कुछ अपीलें लम्बित पड़ी हुई हो सकती हैं तथा यह कि सम्बन्धित वादियों को कठिनाई होगी, परंतु मैं इस सदन का ध्यान संविधान के प्रारूप के पृष्ठ 153 की पादटिप्पणी की ओर दिलाता हूं। वास्तव में प्रारूप समिति में अनुच्छेद 308 के खंड (3) में मूलतः स्वयं यह परिकल्पना की थी कि अंतःपरिषद् (प्रिवी कौंसिल) का अधिकार क्षेत्र उस दिन समाप्त हो जाएगा।

"इस संविधान के प्रारंभ होने के दिन तथा उसके बाद से सपरिषद् सम्राट का भारत के राज्य क्षेत्र के भीतर किसी न्यायालय की किसी आज्ञप्ति या आदेश से उत्पन्न या उससे सम्बन्धित अपीलें तथा याचिकाएं ग्रहण करने तथा निपटाने का क्षेत्राधिकार, जिसमें कि दाण्डिक मामलों से सम्बन्धित वह क्षेत्राधिकार भी शामिल है जिसमें कि सम्राट को उस विशेषाधिकार के अधिकार के आधार पर कार्यवाही करनी होती है जो कि सम्राट को प्राप्त है, समाप्त हो जाएगा तथा उक्त तारीख को सपरिषद् सम्राट के समक्ष लम्बित सभी अपीलें तथा अन्य कार्यवाहियां उच्चतम न्यायालय को अंतरित की जाएंगी तथा उच्चतम न्यायालय द्वारा उन्हें निपटाया जाएगा।"

अत: मूल अनुच्छेद में उन्होंने स्वयं परिकल्पना की थी कि अंत:परिषद् (प्रिवी कौंसिल) का क्षेत्राधिकार उस तारीख को समाप्त हो जाएगा जिस तारीख को कि यह संविधान प्रवर्तन में आएगा। पादटिप्पणी में कहा है:

"समिति का विचार है कि सपरिषद् सम्राट के समक्ष लम्बित सभी अपीलें तथा अन्य कार्यवाहियां उस समय तक अंतिम रूप में निपटा दी जाएंगी जब यह संविधान प्रवर्तन में आएगा। तथापि, यदि संविधान के प्रारूप के समय कुछ अपीलें तथा अन्य कार्यवाहियां सपरिषद् सम्राट के समक्ष लम्बित पड़ी रहती हैं तथा उनको उच्चतम न्यायालय में अंतरित करने तथा उसके द्वारा निपटाए जाने के बारे में यदि कोई कठिनाई पैदा होती है, तो राष्ट्रपति "कठिनाइयों का दूर करना" (अनुच्छेद 313) के अंतर्गत आवश्यक आदेश जारी कर सकते हैं।"

यही कुछ है जो कि प्रारूप समिति ने मूल अनुच्छेद 308 की पादटिप्पणी में कहा है। इस दृष्टिकोण से मैं यह नहीं मानता कि जबकि हमने अनुच्छेद 313 पास कर दिया है, इस नए खंड (3) की कोई आवश्यकता है जिसमें कि यह परिकल्पना की गई है कि प्रिवी कौंसिल का क्षेत्राधिकार 26 जनवरी के पश्चात भी जारी रह सकेगा जिस समय कि हम एक मुक्त तथा स्वाधीन देश होंगे। मेरे विचार में, पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के पश्चात् भी प्रिवी कौंसिल के हस्तक्षेप का प्रावधान करके हमें संविधान को कुरूपित नहीं करना चाहिए। मेरे विचार में यहां कुछ गलती हुई क्योंकि अनुच्छेद 313 काफी पर्याप्त है तथा अनुच्छेद 308 में इस खंड (3) की कोई आवश्यकता नहीं है। हमारे संविधान को इस खंड द्वारा कुरुपित नहीं किया जाना चाहिए।

अध्यक्ष: डॉ. अम्बेडकर, क्या आप कुछ कहना चाहेंगे?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: महोदय, मैं नहीं समझता कि जो संशोधन प्रस्तुत किए गए हैं उनके पक्ष में कही गई कोई बात किसी प्रकार का कोई महत्वपूर्ण मुद्दा उठाती है। यह भावनाओं का मामला अधिक है और मेरा विचार है कि सुविधा की दृष्टि से यह बेहतर है कि हम इस खंड को रखें और ऐसा करने में किसी तरह से अपमानित अनुभव नहीं करें क्योंकि यदि प्रिवी कौंसिल, खंड (3) में उल्लिखित सीमित शर्तों के भीतर, क्षेत्राधिकार का निर्वहन करना जारी भी रखती है तो यह नहीं भूलना चाहिए—और मेरे विचार में जिन मेरे मित्रों ने संशोधन प्रस्तुत किए हैं, वे यह तथ्य भुला चुके प्रतीत होते हैं—कि वह क्षेत्राधिकार प्रिवी कौंसिल का अंतर्निहित क्षेत्राधिकार नहीं है वरन् एक ऐसा क्षेत्राधिकार है जो कि इस सभा

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

ने उन्हें प्रदत्त किया है। वास्तव में प्रिवी कौंसिल कुछ आवश्यक तथा महत्वपूर्ण कार्य करने के लिए इस सभा के एजेंट के रूप में कार्य करेगी। अत: मेरे विचार में अपमानित महसूस करने का अथवा यह समझने कि हम वास्तव में अपनी स्वतंत्रता का सौदा कर रहे हैं, का कोई कारण नहीं है।

जहां तक मेरे मित्र प्रो. सक्सेना द्वारा उठाए गए प्रश्न का सबंध है जिसमें कि उन्होंने अनुच्छेद 308 की पादटिप्पणी का उल्लेख किया था, मैं यह निर्बाध रूप से स्वीकार करता हूं कि बेहतर विचार के पश्चात् प्रारूप समिति ने यह पाया कि हो सकता है कि कठिनाइयां दूर करने संबंधी खंड का इस प्रयोजन के लिए उचित प्रकार से उपयोग नहीं किया जाये। सभी प्रकार के संदेह को दूर करने के लिए हमने सोचा कि स्वयं संविधान द्वारा क्षेत्राधिकार प्रदत्त करने के लिये इस प्रकार का यह अलग खंड रखना अधिक अच्छा होगा।

अध्यक्ष: अब मैं संशोधन मतदान के लिए रखूंगा। केवल एक ही संशोधन है, संख्या 177 जो कि प्रो. शिब्बन लाल द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

प्रश्न यह है:

"That in amendment Nos. 6 and 7 of List I (Second Week) the proposed clause (3) be deleted and the proposed new clause (3a) be renumbered as (3)."

["कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 6 तथा 7 में, प्रस्तावित खंड (3) निकाल दिया जाए तथा प्रस्तावित नए खंड (3क) को खंड (3) के रूप में पुनसंख्यांकित किया जाए।"]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

अध्यक्ष: अब मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत संशोधन को मतदान के लिए रखता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 308 के खंड (3) के स्थान पर यह रखा जाए–

'(3) Nothing in this Constitution shall operate to invalidate the exercise of jurisdiction by His Majesty in Council to dispose of appeals and petitions from or in respect of any judgement, decree or order of any court within the territory of India in so far as the exercise of such jurisdiction is authorised by law, and any order of His Majesty in Council made on any such appeal or petition after the commencement of this Constitution shall for all purposes have effect as if it were an order or decree made by the Supreme Court in the exercise of the jurisdiction conferred on such court by this Constitution.'

['(3) इस अधिनियम की कोई बात भारत राज्य क्षेत्र में के किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आज्ञप्ति या आदेश की, या के विषय में अपीलों

और याचिकाओं को निपटाने के लिए सपरिषद् सम्राट के क्षेत्राधिकार के प्रयोग को वहां तक अमान्य न करेगी जहां तक कि ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधि द्वारा प्राधिकृत है तथा ऐसी किसी अपील या याचिका पर इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् दिया गया सपरिषद् सम्राट का कोई आदेश सब प्रयोजनों के लिए ऐसे प्रभावी होगा मानों कि वह उच्चतम न्यायालय द्वारा उस क्षेत्राधिकार के प्रयोग में, जो ऐसे न्यायालय को इस संविधान द्वारा दिया गया है, दिया गया कोई आदेश या आज्ञप्ति हो।']

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधन संख्या 7 मतदान के लिए रखता हूं। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 308 के खंड (3) के पश्चात् यह नया खंड अंत:स्थापित किया जाए:–

'(3a) On and from the date of commencement of this Constitution the jurisdiction of the authority functioning as the Privy Council in a State for the time being specified in Part III of the First Schedule to entertain and dispose of appeals and petitions from or in respect of any judgement, decree or order of any court within that State shall cease and all appeals and other proceedings pending before the said authority on the said date shall be transferred to, and disposed of by the Supreme Court."

'(3) इस संविधान के प्रारंभ की तारीख पर और से प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित किसी राज्य में अंत: परिषद् के रूप में फिलहाल कृत्यकारी प्राधिकारी का इस राज्य में के किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आज्ञप्ति या आदेश की अपील या याचिका को ग्रहण करने या निपटाने का क्षेत्राधिकार समाप्त हो जाएगा तथा ऐसे प्राधिकारी के समक्ष उक्त तारीख को लंबित सब अपीलें और अन्य कार्यवाहियां उच्चतम न्यायालय को भेज दी जाएंगी और उसके द्वारा निबटाई जाएंगी।' "]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है।

"कि अनुच्छेद 308, संशोधित रूप में संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 308 संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।"

अनुच्छेद 310

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 310 के स्थान पर यह रखा जाए:

'310.(1) Notwithstanding anything contained in clause (2) of article 193

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

of this Constitution, the judges of a High Court in any Province holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected otherwise, become on that date the judges of the High Court in the corresponding State, and shall thereupon be entitled to such salaries and allowances and to such rights in respect of leave and pensions as are provided for under article 197 of this Constitution in respect of the judges of such High Court.

(2) The judges of a High Court in any Indian State corresponding to any State for the time being specified in Part III of the First Schedule holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected otherwise, become on that date the judges of the High Court in the State so specified and shall, notwithstanding anything contained in clauses (1) and (2) of article 193 of this Constitution but subject to the proviso to clause (1) of that article, continue to hold office until the expiration of such period as the President may by order determine.

(3) In this article the expression 'judge' does not include an acting judge or an additional judge.' "

["310 (1) इस संविधान के अनुच्छेद 193 के खंड (2) में किसी बात के होते हुए, इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से ठीक पहले किसी प्रांत में के उच्च न्यायालय के पदस्थ न्यायाधीश, यदि वे अन्यथा पसंद न कर चुके हों, ऐसी तारीख को तत्स्थानी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो जाएंगे तथा तत्पश्चात् ऐसे वेतनों और भत्तों तथा छुट्टी और निवृति-वेतन के विषय में ऐसे अधिकारों का हक रखेंगे जैसे कि ऐसे उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में इस संविधान के अनुच्छेद 197 के अधीन उपबंधित है।

(2) इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से ठीक पहले प्रथम अनुसूची के भाग 3 में फिलहाल उल्लिखित किसी राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य में के उच्च न्यायालय के पदस्थ न्यायाधीश, यदि वे अन्यथा पसंद न कर चुके हों, ऐसी तारीख को वैसे उल्लिखित राज्य में के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो जाएंगे तथा इस संविधान के अनुच्छेद 193 के खंड (1) और (2) में किसी बात के होते हुए भी, किंतु उस अनुच्छेद के खंड (1) के परंतुक के अधीन रहते हुए, ऐसी कालावधि तक पदस्थ बने रहेंगे जैसी कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित करे।

(3) इस अनुच्छेद में "न्यायाधीश" पद के अंतर्गत कार्यकारी न्यायाधीश या अपर न्यायाधीश नहीं है।' "]

यह अनुच्छेद केवल इस प्रकार का अनुच्छेद है जिसे कि हम "आगे बढ़ाने वाला" अनुच्छेद की संज्ञा दिया करते थे, केवल उच्च न्यायालयों में नए पदों पर न्यायाधीशों को ले जाने वाला, यदि वे नियुक्त होना पसंद करते हैं।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 88

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मैं 88 प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं। मैं 141 प्रस्तुत करूंगा।

***श्री आर.के. सिधवाः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन 87 में, प्रस्तावित अनुच्छेद के खंड (1) में, शब्द तथा संख्या 'Article 197 (अनुच्छेद 197)' **के पश्चात्** 'and second schedule (और द्वितीय अनुसूची)' **शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।**"

मेरा संशोधन शाब्दिक मात्र है। इसे प्रस्तुत करने में मेरा उद्देश्य इस प्रकार है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन के संबंध में अनुच्छेद 197 का उल्लेख किया गया है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन के बारे में द्वितीय अनुसूची में भी कहा गया है तथा मैंने इसका उल्लेख अनुच्छेद 197 के साथ-साथ करना ठीक समझा। अनुसूची संविधान का एक महत्वपूर्ण भाग है विशेषकर इस अनुच्छेद के संदर्भ में जिसमें कि वेतन, भत्तों तथा पेंशन से संबंधित अन्य विषयों का उल्लेख किया जाएगा। अतः इसे अत्यन्त स्पष्ट बनाने के लिए मैंने प्रस्ताव रखा है कि "अनुच्छेद 197" के पश्चात् "तथा द्वितीय अनुसूची" शब्द अंतःस्थापित किए जाएं।"

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 8 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 310 के खंड (1) में 'as are provided under article 197 of this Constitution in respect of the Judges of such High Court' (जैसे कि ऐसे उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में इस संविधान के अनुच्छेद 197 के अधीन उपबंधित है) **शब्दों के स्थान पर** 'as they were entitled to immediately before the said commencement (जिसके कि वे उक्त प्रारंभ के तुरंत पूर्व हकदार थे)' **शब्द रखे जाएं।**" इस अनुच्छेद के खंड (1) में उपबंध है कि किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश उस तारीख को जिसको कि यह संविधान प्रवर्तन में आता है अंतरिम रूप में 26 जनवरी, 1950 को उसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश बने रहेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** क्या मैं इस बात की ओर ध्यान दिला सकता हूं कि यह संशोधन द्वितीय अनुसूची का पूर्वानुमान कर रहा है? इस मामले पर द्वितीय अनुसूची के अंतर्गत कार्यवाही की जानी है तथा उचित समय तो वही होगा जब यह अनुसूची सभा के समक्ष होगी।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैंने उस पर भी सावधानी पूर्वक विचार किया है, परंतु मामला पूरी तरह से उसके अंतर्गत नहीं आएगा। उसमें इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् न्यायाधीशों के वेतनमानों का उपबंध किया जाएगा, परंतु यहां मामला बिल्कुल भिन्न है। मेरे संशोधन में कहा गया है कि जो वेतन वे संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले अर्थात् 25 जनवरी, 1950 को ले रहे थे, 26 जनवरी से भी वे वही वेतन प्राप्त करेंगे तथा उन्हीं शर्तों के हकदार रहेंगे। अनुसूची में नए वेतनमान दिए गए हैं। वह एक बिल्कुल भिन्न बात है।

मेरा निवेदन है कि खंड (1) की कोई आवश्यकता नहीं है। जहां तक मैं समझ सकता हूं, इस खंड की आवश्यकता केवल वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन में अप्रत्यक्ष रूप से कटौती को उचित ठहराने के लिए है। वास्तव में यह स्पष्ट है कि 26 जनवरी को अनुच्छेद 310 के इस खंड (1) के अलावा

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

भी, वे न्यायाधीश उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश बने रहेंगे क्योंकि वही उच्च न्यायालय बना रहेगा। हमने अन्य सरकारी सेवकों के मामले में इस प्रकार की निरंतरता का उपबंध नहीं किया है। प्रत्येक व्यक्ति जो कि 25 जनवरी को सरकारी सेवक है निश्चय ही 26 जनवरी को भी उसी रूप में सेवक बना रहेगा, जब तक कि उसे इस बीच बर्खास्त नहीं कर दिया गया हो या उसने त्यागपत्र न दे दिया हो या उसे सेवामुक्त न कर दिया गया हो अथवा उसकी मृत्यु न हो गई हो। उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में 25 जनवरी से 26 जनवरी तक उसकी सेवा स्वत: जारी रहेगी तथा इसके लिए किसी प्राधिकार की आवश्यकता नहीं है जैसा कि खंड (1) के अंतर्गत प्रावधान किए जाने का प्रयास किया गया है। मेरा निवेदन है कि इस दृष्टि से खंड (1) अत्यंत अनावश्यक है। परंतु यह एक अन्य विचार भी उत्पन्न करता है, अर्थात् यह वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन को कम करने का अप्रत्यक्ष प्रयास है। वास्तव में जहां तक वर्तमान न्यायाधीशों का संबंध है, विद्यमान शर्तों के अधीन उनके नियत वेतन हैं। यदि यह खंड न भी हो तो भी वे 26 जनवरी को तथा इससे पश्चात् वही वेतन प्राप्त करते रहते इस खंड का वास्तविक प्रयोजन वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन को कम करना है। मेरा निवेदन है कि उनका वेतन कम नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि वे एक संविदा पर जिसके अंतर्गत कि वे नियुक्त हुए थे, एक विशेष वेतन पा रहे हैं। उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश निहायत योग्य वकीलों में से नियुक्त किए जाते हैं जिनके बारे में कि यह मानना होगा कि वे बहुत अच्छी आय अर्जित कर रहे थे। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में केवल दो ही शर्तें थीं, अर्थात् उन्हें साठ वर्ष की आयु होने तक सामान्य रूप में बने रहना था और दूसरे इसके पश्चात् उन्हें उन उच्च न्यायालयों में जिनके कि वे न्यायाधीश रह चुके हों तथा उनके अधीनस्थ न्यायालयों में अपना कानूनी व्यवसाय करने की अनुमति नहीं दी जानी थी। परन्तु अब हम ऐसी शर्तें अधिनियमित कर रहे हैं कि उनके वेतन कम कर दिये जाएंगे और इसके अलावा यह भी कि साठ वर्ष की आयु पूरी हो जाने पर उच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों पर न केवल उस उच्च न्यायालय में जिसमें कि वे नियुक्त हैं, अथवा इसके अधीनस्थ न्यायालयों में बल्कि सभी न्यायालयों, जो कि उस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र तक में नहीं आते, अर्थात् अन्य राज्यों के उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय में भी, कानूनी व्यवसाय चलाने पर रोक होगी। इससे उनके साथ किया गया करार दो पहलुओं से भंग होगा।

***डॉ. बख्शी टेक चन्द:** (पूर्वी पंजाब-जनरल): क्या मैं एक सुझाव दे सकता हूं? क्या यह उचित नहीं रहेगा कि इस विषय पर उस समय विचार किया जाए जब कि द्वितीय अनुसूची विचाराधीन होगी? द्वितीय अनुसूची के लिए संशोधन संख्या (11) (जो कि डॉ. अम्बेडकर के नाम में है) में उन न्यायाधीशों के वेतनों का मामला समाविष्ट है जो कि 31 अक्तूबर 1948 को या उससे पूर्व नियुक्त किए गए थे। इस विषय को थोड़ा-थोड़ा लेने के बजाय क्या इस संशोधन पर उस समय चर्चा करना आपके लिए सुविधाजनक नहीं रहेगा जब हम द्वितीय अनुसूची को विचार के लिये लेंगे? जैसा कि संशोधन संख्या 11 से पता चलता है, इसका संबंध केवल उन न्यायाधीशों के वेतन से नहीं है जिन्हें कि नए संविधान के अंतर्गत नियुक्त किया जाएगा, बल्कि इसमें उन न्यायाधीशों के वेतनों का भी उल्लेख है जिनकी नियुक्ति उस तारीख से पूर्व हुई थी और जो इस संविधान के प्रारंभ की तारीख को उच्च न्यायालयों में काम कर रहे होंगे। यदि श्री नज़ीरुद्दीन अहमद का यह संशोधन अस्वीकृत हो जाता है तो इससे उन संशोधनों पर प्रभाव पड़ सकता है जो कि अनुसूची के लिए हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** यदि इस संशोधन पर चतुर्थ अनुसूची के लिए संशोधनों के साथ-साथ विचार करने का प्रस्ताव है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परंतु यह मुद्दा उठाने का यही उचित समय है। जहां तक इस तर्क का प्रश्न है कि यदि यह संशोधन अस्वीकृत हो जाता है तो अन्य संशोधन भी अस्वीकृत माने जाएंगे, मैं इससे सहमत नहीं हूं। यह संशोधन, इस तथ्य के बावजूद कि न्यायाधीशों की नियुक्ति एक निश्चित तारीख से पूर्व हुई थी, वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन का संरक्षण करने के लिये हैं। परंतु इस संशोधन की अस्वीकृति का अर्थ यह नहीं है कि अन्य संशोधन अस्वीकृत हो जाएंगे। जहां तक डॉ. बख्शी टेक चंद के इस सुझाव का संबंध है कि मुझे इसे संशोधन संख्या 11 के संशोधन के रूप में प्रस्तुत करना चाहिए मैं इस विषय में आपके अनुदेशों की प्रतीक्षा करूंगा।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार में, इस खंड के इसी रूप में पास किए जाने से अनुसूची पर किसी प्रकार का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। मैं अनुसूची के मार्ग में बाधा नहीं बनूंगा। किसी भी स्थिति में मैं उसे उस आधार पर असंगत घोषित नहीं करूंगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** वह संशोधन यह है कि उन न्यायाधीशों के जो कि एक निश्चित तारीख से पूर्व नियुक्त किए गए थे, वेतन का संरक्षण किया जायेगा। परंतु मेरा प्रश्न यह है कि न्यायाधीशों के वेतन जैसे कि वे 25 जनवरी, 1950 को थे, संरक्षित किये जाने चाहिए। इसमें तथा डॉ. अम्बेडकर के उस संशोधन में हल्का सा अंतर है। मेरा निवेदन है कि डॉ. अम्बेडकर का संशोधन मेरे संशोधन के परिचालित किए जाने के पश्चात् भेजा गया है। यह वास्तव में स्थिति में कुछ सीमा तक सुधार करने का प्रयास है, परंतु वह स्थिति में उस सीमा तक इतना सुधार करने के का प्रयास नहीं करता जितना कि मैं चाहता हूं कि वह करता। महोदय, मैं निश्चय ही आपके विनिर्णय का पालन करूंगा।

***अध्यक्ष:** यदि आप चाहें तो जो मुद्दा आपने उठाया है उसे समाविष्ट करते हुए आप एक दूसरे संशोधन की सूचना दे सकते हैं। क्या कोई सदस्य इसके संबंध में कुछ कहना चाहता है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** इसमें सिद्धांत का कोई प्रश्न नहीं है।

***अध्यक्ष:** डॉ. सिधवा द्वारा प्रस्तुत एक संशोधन है, और वह भी शाब्दिक स्वरूप का है। तथा मैं इसे मतदान के लिए रखूं?

***श्री आर.के. सिधवा:** मैं इसे प्रारूप समिति पर छोड़ता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 310 के स्थान पर यह रखा जाए।

Provisions as to Judges of High Courts

310 (1) Notwithstanding anything contained in clause (2) of article 193 of this Constitution the judges of a High Court in any Province holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall unless they have elected otherwise, become on that date the judges of the High Court in the corresponding State, and shall thereupon be entitled to such salaries and allowances and to such rights in respect of leave and pensions as are provided for under article 197 of this Constitution in repect of the judges of such High Court.

[अध्यक्ष]

(2) The judges of a High Court in any Indian State corresponding to any State for the time being specified in Part III of the First Schedule holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected otherwise, become on that date the judges of the High Court in the State so specified and shall notwithstanding anything contained in clauses (1) and (2) of article 197 of this Constitution but subject to the proviso to clause (1) of that article, continue to hold office until the expiration of such period as the President may by order determine.

(3) In this article the expression 'Judge' does not include an acting judge or an additional judge.'

['310(1) इस संविधान के अनुच्छेद 193 के खंड (2) में किसी बात के होते हुए, इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से ठीक पहले किसी प्रांत में के उच्च न्यायालय के पदस्थ न्यायाधीश, यदि वे अन्यथा पसंद न कर चुके हों, ऐसी तारीख को तत्स्थानी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो जाएंगे तथा तत्पश्चात् ऐसे वेतनों और भत्तों तथा छुट्टी और निवृत्ति वेतन के विषय में ऐसे अधिकारों का हक रखेंगे जैसे कि ऐसे उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में इस संविधान के अनुच्छेद 197 के अधीन उपबंधित है।

(2) इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से ठीक पहले प्रथम अनुसूची के भाग 3 में फिलहाल उल्लिखित किसी राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य में के उच्च न्यायालय के पदस्थ न्यायाधीश, यदि वे अन्यथा पसंद न कर चुके हों, ऐसे तारीख को वैसे उल्लिखित राज्य में के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो जाएंगे तथा इस संविधान के अनुच्छेद 193 के खंड (1) और खंड (2) में किसी बात के होते हुए भी, किंतु उस अनुच्छेद के खंड (1) के परंतुक के अधीन रहते हुए, ऐसी कालावधि तक पदस्थ बने रहेंगे जैसा कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित करे।

(3) इस अनुच्छेद में 'न्यायाधीश' पद के अंतर्गत कार्यकारी न्यायाधीश या अपर न्यायाधीश नहीं है।' "]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 310 संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 311

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 311 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाए:

311.(1) Until both Houses of Parliament have been duly constituted and summoned to meet for the first session under the provisions of this Constitution, the body functioning as the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately before the commencement of this Constitution shall exercise all the powers and perform all the duties conferred by the provisions of this Constitution on Parliament.

Provisions as to provisional Parliament of the Union and the Speaker and Deputy Speaker thereof

Explanation—For the purposes of this clause, the Constituent Assembly of the Dominion of India includes—

(i) the members chosen to represent any State or other Territory for which representation is provided under clause (2) of this article, and

(ii) the members chosen to fill casual vacancies in the said Assembly.

(2) the President may by rules provide for—

(a) the representation in the provisional Parliament functioning under clause (1) of this article of any State or other Territory which was not represented in the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately before the commencement of this Constitution.'

(b) the manner in which the representatives of such States or other Territories in the provisional Parliament shall be chosen, and

(c) the qualifications to be possessed by such representatives.

(3) If a member of the Constituent Assembly of the Dominion of India was on the sixth day of October, 1949, also a member of a House of the Legislature of a Governor's Province or an Indian State, then, as from the date of commencement of this Constitution that person's seat in the said Assembly shall, unless he has ceased to be a member thereof earlier, become vacant, and every such vacancy shall be deemed to be a casual vacancy.

(4) Any person holding office immediately before the commencement of this Constitution as Speaker or Deputy Speaker of the Constituent Assembly when functioning as the Dominion Legislature under the Government of India Act, 1935, shall continue to be the Speaker or, as the case may be, the Deputy Speaker of the provisional Parliament functioning under clause (1) of this article."

'311. (1) जब तक कि इस संविधान के उपबंधों के अधीन संसद् के दोनों सदन सम्यक रूप से गठित न हो जायें तथा प्रथम सत्र में अधिवेशित होने के लिए आहूत न हो जायें तब तक वह निकाय, जो भारत डोमिनियम की संविधान सभा के रूप

संघ की अन्तर्कालीन संसद तथा उसके अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष के बारे में उपबंध

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

में इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले कृत्यकारी था, इस संविधान के उपबंधों द्वारा संसद को दी गई सभी शक्तियों का प्रयोग तथा कर्तव्यों का पालन करेगा।

व्याख्या–इस खंड के प्रयोजनों के लिए भारतीय डोमिनियन की संविधान सभा के अंतर्गत–

(1) किसी राज्य अथवा अन्य राज्य-क्षेत्र का, जिसके प्रतिनिधित्व के लिये इस अनुच्छेद् के खंड (2) के अधीन उपबन्ध है, प्रतिनिधित्व करने के लिए चुने गए सदस्य, तथा

(2) उपरोक्त सभा में आकस्मिक रिक्तता की पूर्ति के लिए चुने गए सदस्य भी होंगे।

(2) राष्ट्रपति नियमों द्वारा–

(क) इस अनुच्छेद् के खंड (1) के अधीन कृत्यकारिणी अंतर्कालीन संसद में किसी ऐसे राज्य या अन्य राज्य-क्षेत्र के जिसका प्रतिनिधित्व इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत डोमिनियन की संविधान सभा में न था, के प्रतिनिधित्व के लिए,

(ख) अंतर्कालीन संसद में ऐसे राज्यों या अन्य राज्य-क्षेत्रों के प्रतिनिधि जिस रीति से चुने जायेंगे उसके लिये, तथा

(ग) ऐसे प्रतिनिधियों की जो अर्हताएं चाहिये उनके लिये उपबंध कर सकेगा।

(3) यदि भारत डोमिनियन की संविधान सभा का कोई सदस्य अक्तूबर 1949 के छठे दिन किसी राज्यपाल-प्रांत अथवा किसी देशी राज्य के विधानमंडल के सदन का भी सदस्य था, तो इस संविधान के प्रारंभ की तारीख उपरोक्त सभा से लेकर उस व्यक्ति का स्थान, यदि उसका इस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त हो जाएगा तथा प्रत्येक ऐसी रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी।

(4) कोई व्यक्ति, जो संविधान के प्रारंभ के ठीक पहले भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन डोमिनियन विधानमंडल के रूप में कृत्यकारिणी संविधान सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के रूप में पदस्थ था, इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन कृत्यकारिणी अंतर्कालीन संसद का यथास्थिति अध्यक्ष या उपाध्यक्ष बना रहेगा।' "

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के स्थान पर, यह रखा जाए:

(3) If a member of the Constituent Assembly of the Dominion of India was on the sixth day of October, 1949 or thereafter becomes at any time before the commencement of this Constitution a member of a House of the Legislature of a Governor's Province or an Indian State corresponding to any State for the time being

specified in Part III of the First Schedule or a Minister for any such State, then as from the date of commencement of this Constitution the seat of such member in the Constituent Assembly shall, unless he has ceased to be a member of that Assembly earlier, become vacant and every such vacany shall be deemed to be a casual vacancy.

['(3) यदि भारत डोमिनियन की संविधान सभा का कोई सदस्य 1949 के अक्तूबर के छठे दिन अथवा तत्पश्चात् इस संविधान के प्रारंभ से पहले किसी समय किसी राज्यपाल-प्रांत अथवा प्रथम अनुसूची के भाग 3 में फिलहाल उल्लिखित किसी राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य के विधानमंडल के सदन का सदस्य अथवा किसी ऐसे राज्य का मंत्री था अथवा बन जाता है तो इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से लेकर संविधान सभा में ऐसे सदस्य का स्थान, यदि उसका उस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त हो जाएगा तथा प्रत्येक ऐसी रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी।' "]

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधित संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के पश्चात् यह नवीन खंड अंत:स्थापित किया जाए:

'(3a) Notwithstanding that any such vacancy in the Constitution Assembly of the Dominion of India as is mentioned in Clause (3) of this article has not occurred under that clause, steps may be taken before the commencement of this Constitution for the filling of such vacancy, but any person chosen before such commencement to fill the vacancy shall not be entitled to take his seat in the said Assembly until after the vacancy has so occurred."

['(3क) इस बात के होते हुए भी कि भारत डोमिनियन की संविधान-सभा में ऐसी कोई रिक्तता, जैसीकि इस अनुच्छेद के खंड (3) में वर्णित है, उस खंड के अधीन नहीं हुई है, इस संविधान के प्रारंभ से पहले ऐसी रिक्तता की पूर्ति के लिए पग उठाया जा सकेगा, किंतु ऐसे प्रारंभ से पहले उस रिक्तता की पूर्ति के लिए चुने हुए किसी व्यक्ति को उक्त सभा में अपना स्थान ग्रहण करने का हक तब तक न होगा जब तक कि रिक्तता इस प्रकार न हो जाये।' "]

इस खंड का उद्देश्य यह है कि अंतर्कालीन संसद गठित करने के समय उस बात को समाप्त किया जाए जिसे कि दोहरी सदस्यता की संज्ञा दी जाती है।

अन्य उपबंध केवल आनुषंगिक है।

***श्री एच.वी. कामत:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में, 'until (जब तक कि)' **शब्द के स्थान पर** 'until such time (ऐसे समय तक जब कि)' **शब्द रखे जाएं।**"

[श्री एच.वी. कामत]

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में 'the body functioning as' **शब्द निकाल दिये जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में, 'Constituent Assembly of the Dominion of India' (भारत डोमिनियन की संविधान सभा)' **शब्दों के स्थान पर,** जहां कहीं भी वे आए हैं, 'Constituent Assembly of India (भारतीय संविधान सभा)' **शब्द रखे जाएं।"**

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 में (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (1) में, immediately before the commencement of this Constitution shall (इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले)' **शब्दों के स्थान पर** 'shall itself (स्वयं)' **शब्द रखे जाएं।**"

मैं संशोधन संख्या 147 प्रस्तुत नहीं करूंगा।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधित संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) में rules (नियमों) **शब्द के पश्चात्** 'which shall as far as practicable conform to those adopted by the Constituent Assembly (जो यथासाध्य संविधान सभा द्वारा अंगीकृत नियमों के अनुरूप होंगे।' **शब्द अंतःस्थापित किए जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) में, 'an Indian State (देशी राज्य)' शब्दों के पश्चात् 'or Union of States (अथवा राज्यों के संघ)' **शब्द अंतःस्थापित किए जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (4) में, 'or Deputy Speaker (अथवा उपाध्यक्ष)' **शब्द निकाल दिये जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (4) में, 'or, as the case may be the Deputy Speaker (या यथास्थिति उपाध्यक्ष)' **शब्द निकाल दिये जाएं।"**

यदि खंड (1) जो कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) में उल्लिखित है, के लिए संशोधन सभा को स्वीकार्य हों, तो इस खंड का पाठ निम्न प्रकार होगा:

"Until such time as both Houses of Parliament have been duly constituted and summoned to meet for the first session under the provisions of this Constitution, the Constituent Assembly of India shall itself exercise all the powers and perform all the duties conferred by the provisions of this Constitution on Parliament."

["ऐसे समय तक जब तक कि संसद के दोनों सदन इस संविधान के उपबंधों के अंतर्गत सम्यक रूप से गठित न हो जायें तथा प्रथम सत्र में अधिवेशित होने के लिए आहूत न हो जायें तब तक भारत की संविधान सभा इस संविधान के उपबंधों द्वारा संसद को प्रदत्त सभी शक्तियों का प्रयोग तथा कर्तव्यों का पालन स्वयं करेगी।"]

पहला संशोधन केवल शाब्दिक है क्योंकि इससे मात्र वाक्यांश में परिवर्तन होता है ताकि यह संवधौनिक भाषा के अधिक अनुरूप बन जाए। मेरे विचार में "जब तक" कहने के बजाए "ऐसे समय तक जबकि" कहना बेहतर है। तथापि मैं इसे प्रारूप समिति के सामूहिक विवेक पर छोड़ता हूं कि वह उचित समय पर इसके संबंध में कार्यवाही करे।

जहां तक संशोधन संख्या 143 का संबंध है, यह अंशत: शाब्दिक है तथा अंशत: सारवान है। मैं यह समझने में असफल हूं कि इस सभा का उल्लेख इस जटिल तरीके से क्यों किया जाए, अर्थात् "इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत डोमिनियन की संविधान सभा के रूप में कृत्यकारी निकाय..."। इस अनुच्छेद का प्रारूप जैसा कि वह मूलत: था अधिक सख्त था। जहां तक "भारतीय डोमिनियन की संविधान सभा" शब्दों का संबंध है, मेरा विचार है कि यहां भी "डोमिनियन की" शब्दों का लोप किया जा सकता है और यह लाभदायक भी रहेगा तथा सही भी। यदि इस सदन में मेरे माननीय सहयोगी इस पुस्तक अर्थात् संविधान का प्रारुप के मुखपृष्ठ को देखने का कष्ट करें तो वे पाएंगे कि इस सभा का उल्लेख "भारतीय संविधान सभा" के रूप में किया गया है तथा "भारतीय डोमिनियन की सभा" के रूप में नहीं। मैं नहीं जानता कि कुछ माननीय सदस्य इस शब्द "डोमिनियन" के हर समय प्रयोग में क्यों रुचि रखते हैं। निस्संदेह, जहां कहीं भी अधिनियमन में यह आवश्यक हो, तब तो इसका प्रयोग किया जा सकता है। उससे मेरा कोई झगड़ा नहीं है। जहां कहीं किसी खंड अथवा अनुच्छेद के अर्थ में कोई बात बिगाड़े बिना इसे हटा दिया जा सकता है, वहां मेरी समझ में नहीं आता कि हम इस शब्द डोमिनियन, डोमिनियन, डोमिनियन का ढोल क्यों पीटते रहते हैं। यह संविधान सभा वास्तव में देखा जाए तो एक स्वतंत्र देश की विधान सभा है। दुर्भाग्यवश अथवा घटनावश, हमारे देश में परिस्थितियों ने ऐसी चाल चली है कि भारत के पूर्ण रूप से स्वाधीन होने के पूर्व ही हमें संविधान सभा बुलानी पड़ी। ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो किसी देश के विदेशी शासन की बेड़ियों से मुक्त होने के पश्चात् ही संविधान सभा बुलाई जाती है। हमने इस सभा द्वारा बनाए गए नियमों—प्रक्रिया नियम तथा स्थायी आदेशों—में स्वयं भारतीय संविधान सभा का

[श्री एच.वी. कामत]

उल्लेख किया है और पहले ही नियम में कहा गया है "इन नियमों में जब तक कि प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो, सभा का अर्थ है भारतीय संविधान सभा"। अत: इस प्रसंग में "डोमिनियन" शब्द के प्रयोग का कोई अधिकार क्षेत्र अथवा आवश्यकता नहीं है तथा इसे तर्कसंगत रूप से और विवेकपूर्वक पूर्णत: निकाला जा सकता है और इससे इस खंड के उस अर्थ में कोई भी बिगाड़ नहीं आयेगा जिसे व्यक्त करने का इसका आशय है।

इसके अलावा, महोदय, मेरी असली आपत्ति इस खंड में विद्यमान जटिल शब्दावली के बारे में है: "इस संविधान के प्रारूप से ठीक पहले भारत डोमिनियन की संविधान सभा के रूप में कृत्यकारी निकाय" मुझे नहीं मालूम कि मूल प्रारूप में परिवर्तन करके इसे क्यों समाविष्ट किया गया है। यदि मेरे माननीय मित्र अनुच्छेद 311 के खंड (1) को देखने का कष्ट करें, जैसा कि यह खंड मूलत: था, तो वे पाएंगे कि इसका उल्लेख "भारत डोमिनियन की संविधान सभा" के रूप में हैं। मैं पहले ही कह चुका हूं कि "डोमिनियन की" शब्द निकाल दिये जाने चाहिएं। अब मैं यह कहता हूं कि इसे और भी अधिक सरलता से भारतीय संविधान सभा कहा जा सकता है। यदि प्रारूप समिति का यह विचार है कि क्योंकि एक सौ से कुछ अधिक स्थानों के रिक्त घोषित किए जाने की संभावना है और इसलिए इस निकाय के उल्लेख में यह परिवर्तन आवश्यक है, तो मैं समझता हूं कि वे गलतफहमी के शिकार होकर यह काम कर रहे हैं। जब तक कि इस निकाय को भंग नहीं किया जाता यह भारतीय संविधान सभा के रूप में जारी रहेगा। यदि बहुत भारी संख्या में सदस्य इस सभा से त्यागपत्र भी दे देते हैं और चाहे उनके स्थान भरे जायें अथवा नहीं, यह वही पुरानी सभा रहेगी जिसे कि सदैव ही भारतीय संविधान सभा कहा जाता रहा है। जब तक कि यह भंग नहीं कर दी जाती सांविधानिक भाषा में इसका उल्लेख भारतीय संविधान सभा के रूप में ही जारी रहेगा। अत: यदि ऐसी कोई गलतफहमी है कि एक सौ से अधिक सदस्यों द्वारा त्यागपत्र दिए जाने के कारण इस निकाय का उल्लेख इस तरीके से किया जाना चाहिए तथा केवल भारतीय संविधान सभा के रूप में नहीं तो उस गलतफहमी का तनिक भी कोई औचित्य नहीं है, तथा यदि हम इसका उल्लेख केवल भारतीय संविधान सभा के रूप में करें तो हम इस निकाय का नाम गलत रूप में नहीं ले रहे होंगे। चाहे एक सौ सदस्य त्यागपत्र दें अथवा इनसे अधिक, संविधान के प्रारंभ होने के समय तक इस निकाय को भारतीय संविधान सभा ही कहा जाता रहेगा। अत: संशोधन संख्या 143, 144 तथा 145 द्वारा जोकि एक साथ हैं, मैं इस अनुच्छेद के खंड (1) में समाविष्ट शब्दों तथा वाक्यांशों को सरल बनाना चाहता हूं ताकि हम स्वयं भारतीय संविधान सभा के लिए ही यह उपबंध करें कि यह इस संविधान के उपबंधों द्वारा संसद को प्रवत्त सभी शक्तियों को निर्वहन तथा कर्तव्यों का पालन करेगी। संविधान के एक बार प्रवर्तन में आ जाने पर निस्संदेह संविधान के अंतर्गत यह सभा अंतर्कालीन संसद कहलाएगी। उस समय तक "अमुक-अमुक रूप में कार्य करने वाला निकाय" कहने की आवश्यकता नहीं है। हमारे प्रयोजनों के लिए "भारतीय संविधान सभा" ही कहा जाना पर्याप्त है। मुझे आशा है कि प्रारूप समिति के सदस्य, जो कि "डोमिनियन" शब्द के प्रयोग के प्रति अनुराग रखते हैं और हमारे प्रयोजन के लिए आवश्यकता से अधिक शब्दों का प्रयोग करने का चाव रखते हैं, वे मेरे इन संशोधनों के तर्क-बल को देखेंगे और इस खंड की शब्दावली को सरल बनायेंगे।

अब मैं खंड (2) पर आता हूं। मैं संशोधन संख्या 147 प्रस्तुत नहीं करना

चाहता। मैं केवल संशोधन संख्या 148 प्रस्तुत करता हूं:

> "कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) में, 'rules (नियमों)' **शब्द के पश्चात्** 'which shall as far as practicable, conform to those adopted by the Constituent Assembly (जो यथासाध्य संविधान सभा द्वारा अंगीकृत किए गए नियमों के अनुरूप होंगे)' **शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।**"

खण्ड (2) में उन कुछ नियमों का उल्लेख है जो कि राष्ट्रपति इस अंतरिम संसद में, अर्थात् जब यह सभा हमारी अंतरिम संसद मे परिवर्तित कर दी जाती है अथवा पुनर्गठित कर दी जाती है, प्रतिनिधित्व के लिए बना सकता है। इस खंड में अंतर्कालीन संसद में भारत के उन राज्यों अथवा अन्य राज्य क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व के लिए उपबंध है जिनका कि अब तक कोई प्रतिनिधित्व नहीं था। सदन इस बात से अवगत है कि भोपाल के प्रतिनिधि ने अभी तक इस सभा में अपना स्थान ग्रहण नहीं किया है हालांकि फरमान जारी हो चुका है कि वह यथाशक्य शीघ्र यहां पहुंचे। हम आशा करते हैं कि वह इस संविधान के तीसरे वाचन के दौरान हमारे बीच होगा या होगी। हैदराबाद का भी अभी तक कोई प्रतिनिधि यहां नहीं है। हमें नहीं मालूम कि क्या अब तक किए जा चुके उपाय सफल होंगे ताकि हम हैदराबाद से आने वाले अपने मित्र का इस सभा में तीसरे वाचन के दौरान स्वागत कर सकें। निस्संदेह, जब यह सभा स्वयं को अंतर्कालीन संसद में परिवर्तित कर लेगी, तो मुझे विश्वास है कि राष्ट्रपति इस सभा में हैदराबाद के प्रतिनिधित्व के लिए भी नियमों द्वारा उपबंध करेगा। इसी प्रकार विन्ध्य प्रदेश नाम से देशी राज्यों का संघ भी है जिसका कि अभी इस सभा में कोई प्रतिनिधित्व नहीं है। महोदय, गत अधिवेशन के दौरान आपने हमें यह बताने की कृपा की थी कि संविधान सभा के सचिवालय में विन्ध्य प्रदेश के राजप्रमुख तथा उसके मुख्य मंत्री या रीजनल कमिश्नर से कहा है कि वह इस सभा में विन्ध्य प्रदेश के लिये आवश्यक कदम उठाये। मैं नहीं जानता कि विन्ध्य प्रदेश के मामले में इस बारे में कितनी प्रगति हुई है। हमें आशा है कि प्रतिनिधि अगले सत्र के दौरान जोकि इस सभा का अंतिम सत्र होगा, हमारे बीच होंगे। बहरहाल, मुझे विश्वास है कि जब अगले वर्ष अंतरिम संसद बैठक के लिए समवेत होगी तो वे यहां अपने-अपने स्थान ग्रहण करेंगे। महोदय, जहां तक उन बातों का संबंध है जिनका कि यहां अभी तक कोई प्रतिनिधित्व नहीं है, मुझे इतना ही कहना है।

अब इस खंड (2) में राष्ट्रपति द्वारा नियम बनाए जाने के लिये उपबंध है। सदन को भली प्रकार ज्ञात है कि इस सभा ने देशी राज्यों तथा अन्य यूनिटों के इस सभा में प्रतिनिधित्व के संबंध में कुछ नियम अंगीकृत किए हैं। मैं इस सभा के नियमों, जिन्हें कि हमने मेरे विचार में गत वर्ष किसी समय अंगीकृत किया था के नियम 51 का उल्लेख करता हूं। नियम 51 के अंतर्गत हमने एक अनुसूची भी अंगीकृत की है। उस अनुसूची में इस सभा में राज्यों के प्रतिनिधित्व के बारे में उपबंध है। मेरा संशोधन संख्या 148 हमारे द्वारा बनाए गए नियमों की ओर निर्देश करता है जो कि उस पुस्तिका में समाविष्ट किए गए हैं जो सचिवालय द्वारा सभी सदस्यों को उपलब्ध कराई गई है, अर्थात् प्रक्रिया नियम तथा स्थायी आदेश। कुछ ऐसे नियम हैं जो कि इस सभा में राज्यों के प्रतिनिधित्व के लिए बनाए गए हैं, जैसाकि मैंने पहले भी कहा। मेरे संशोधन का आशय यह व्यवस्था करना है कि जहां तक संभव हो, जहां तक व्यवहार्य हो, राष्ट्रपति के नियम उन

[श्री एच.वी. कामत]

नियमों के अनुरूप होंगे जो कि यह सभा गत वर्ष के दौरान पहले ही अंगीकृत कर चुकी है। हो सकता है कि कुछ राज्यों में कुछ ऐसी परिस्थितियां पैदा हो जाएं जो कि पहले अंगीकृत किये जा चुके उन नियमों के अनुरूप रहने में राष्ट्रपति के मार्ग में बाधक हो। यही कारण है कि मैंने "यथासाध्य" शब्द समाविष्ट किया हैं। मैं आशा करता हूं कि डॉ. अम्बेडकर, प्रारूप समिति तथा इन सदन में मेरे माननीय सदस्य इस संशोधन को स्वीकार करने के लिए इसके कारणों से आश्वस्त होंगे, क्योंकि आखिरकार इसका संबंध उस विषय से है जिस पर कि सदन पहले ही निर्णय ले चुका है और मुझे इसका कोई कारण दिखाई नहीं देता कि जहां यह व्यवहार्य है वहां राष्ट्रपति उन नियमों से परे क्यों चले जिन्हें कि यह सभा पहले ही अंगीकृत कर चुकी है।

अब मैं संशोधन संख्या 155 पर आता हूं जो कि लगभग शाब्दिक संशोधन है। मेरा विचार है कि यह विषय प्रारूप समिति के ध्यान से तनिक बाहर रहा है। खंड (3) में राज्यपाल के प्रांत अथवा देशी राज्य का उल्लेख है। सदन को ज्ञात है कि हमारे यहां केवल देशी राज्य ही नहीं हैं परन्तु वे राज्य भी हैं जिन्हें कि राज्यों के संघ की संज्ञा दी जाती है। मैं अपने इस संशोधन द्वारा यह वाक्यांश भी समाविष्ट करना चाहता हूं ताकि इसका पाठ निम्नलिखित प्रकार का हो जाए:

"राज्यपाल—प्रांत अथवा देशी राज्य अथवा राज्यों के संघ का विधानमंडल।"

"मध्य भारत तथा राजस्थान राज्यों के संघ हैं, मात्र देशी राज्य नहीं। मेरे विचार से बिल्कुल सही होने के लिए हमें "देशी राज्यों" के अलावा "राज्यों के संघ" वाक्यांश को भी अवश्य रखना होगा।

इसके बाद, जहां तक इस खंड (3) के प्रारूप का संबंध है जो कि हमें आज प्रात: मिला, मेरे पास संशोधनों की सूचनायें भेजने का समय नहीं था परंतु मैं प्रारूप समिति तथा सदन का ध्यान उस बात की ओर दिलाना चाहूंगा जो कि मैंने मंत्रियों के विवरण के संबंध में परसों उठाई थी। एक अनुच्छेद में, जिसे कि हमने दो दिन पहले स्वीकार किया था, मंत्रियों का उल्लेख भारत डोमिनियन के लिए मंत्रियों के रूप में किया गया है। मेरे विचार में यह गलत तथा अशुद्ध अभिव्यक्ति थी और उसी तर्क पर चलते हुए मेरा विचार है कि यहां मंत्री का उल्लेख "किसी देशी राज्य का मंत्री" के रूप में किया जाना अधिक ठीक होगा, बनिस्बत इसके कि "किसी देशी राज्य के लए मंत्री" के रूप में उल्लेख किया जाए।

अंत में इसी खंड में मैं लगभग अंतिम पंक्ति में एक बहुत ही लघु शाब्दिक संशोधन का सुझाव देना चाहता हूं। मसौदे का पाठ इस प्रकार है:

"यदि इससे पूर्व उस सभा की उसकी सदस्यता समाप्त न हो गई हो।"

मेरे विचार में "उस सभा" के बजाए "सभा" कहना ही पर्याप्त रहेगा। यह बिल्कुल शाब्दिक संशोधन है तथा मैं इसे प्रारूप समिति के विवेक पर छोड़ता हूं।

इसके पश्चात् मैं अंतिम संशोधन (6) तथा 162 पर आता हूं। यदि सदन द्वारा ये संशोधन स्वीकार कर लिए जाते हैं, तो खंड (4) का पाठ निम्न प्रकार से होगा:

"Any person holding office immediately before the commencement of this Constitution as Speaker of the Constituent Assembly when functioning as Dominion Legislature under the Government of India Act, 1935, shall continue to be the Speaker of the Provisional Parliament functioning under clause (1) of this article."

["इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले कोई व्यक्ति जो भारत शासन अधिनियम 1935 के अधीन डोमिनियन विधानमंडल के रूप में कृत्यकारिणी संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में पदस्थ था इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन कृत्यकारिणी अंतर्कालीन संसद का अध्यक्ष बना रहेगा।"]

मैं उपाध्यक्ष के उल्लेख को हटाना चाहता हूं। अध्यक्ष महोदय, मुझे आशा है कि इसे व्यक्तिगत रूप में अथवा इस सभा के किसी सदस्य पर व्यक्तिगत आक्षेप के रूप में नहीं लिया जाएगा। कुछ दिन पूर्व जब डॉ. अम्बेडकर ने राज्य विधान मंडलों के संबंध में नए अनुच्छेद प्रस्तुत किये तो उन खंडों में से एक में केवल विधानमंडल के अध्यक्ष का ही उल्लेख था। इस संबंध में मुझे उपाध्यक्ष के लोप की ओर ध्यान दिलाने का अवसर मिला। उस अनुच्छेद में केवल विधान सभा के अध्यक्ष तथा उपरि सदन के सभापति का ही उल्लेख था। तब मैंने अवर सदन के उपाध्यक्ष तथा उपरि सदन के उप-सभापति का उल्लेख न होने की ओर ध्यान आकर्षित किया था, हालांकि संविधान में राज्यों के विधानमंडलों से संबंधित अध्याय में उनका निश्चित उल्लेख है इसके अलावा, आज भी हमारे यहां अनेक प्रांतों में उपाध्यक्ष हैं और यही कारण था कि मैं उपाध्यक्ष का उल्लेख भी समाविष्ट करना चाहता था परंतु अपनी ऊंची उड़ान भरते रहे अथवा अपने एकांत में खोये रहे अथवा शायद इस लिए कि वह इस विषय में गंभीरता से सोचने के इच्छुक नहीं थे—मुझे नहीं मालूम कि क्या कारण था—डॉ. अम्बेडकर ने मेरे द्वारा उठाई गई बात का उत्तर तक देने की परवाह नहीं की। अब मैं देखता हूं कि उन्होंने मेरे द्वारा उठाए गई बात को स्वीकार कर लिया है तथा देर आयद दुरूस्त आयद के सिद्धांत पर मैं इससे सहर्ष सहमत हो सकता था परंतु आज कठिनाई यह है कि आप पहले ही दो दिन पूर्व एक अनुच्छेद पास कर चुके हैं जिसमें कि जहां तक राज्य विधानमंडलों का संबंध है केवल अध्यक्ष का ही उल्लेख है तथा उपाध्यक्ष का नहीं और आज संसद के संबंध में एक अनुच्छेद आया है और उसमें हम देखते हैं कि अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष दोनों का उल्लेख है। यदि डॉ. अम्बेडकर अथवा प्रारूप समिति राज्यों के संक्रमणकालीन विधानमंडलों के संबंध में सुधार करने का आश्वासन देते हैं जिससे कि उपाध्यक्ष का भी उल्लेख किया जा सके और संक्रमणकालीन अवधि के दौरान उपाध्यक्ष एवं उप-सभापति के बने रहने की व्यवस्था की जा सके तब तो निस्संदेह, अनुरूपता के लिए यह अपेक्षित है कि यह अनुच्छेद उसी रूप में पास किया जाये जिसमें कि यह है। परंतु डॉ. अम्बेडकर सभी समय अनुरूपता के बारे में विशेष ध्यान नहीं देते और वह यह कह सकते हैं कि जहां तक संसद का संबंध है, वह चाहेंगे कि उपाध्यक्ष का उल्लेख हो क्योंकि शायद वह हममें से एक हैं। परंतु जहां तक राज्य विधानमंडल का संबंध है, "आंख ओझल, पहाड़ ओझल" के आधार पर हो सकता है कि वह राज्य विधानमंडल के उपाध्यक्ष के उल्लेख के बारे में विशेष ध्यान न दें। तथापि, हम जो कुछ भी करें उसमें

[श्री एच.वी. कामत]

हमें यथासंभव एकरूपता सुनिश्चित करनी चाहिए। यदि हमने उपाध्यक्ष का उल्लेख किया है तो हमें राज्य विधानमंडल में भी उसका उल्लेख करना चाहिए और यदि हम ऐसा न करें तो हमें इस अनुच्छेद से भी उसे निकाल देना चाहिए। परमात्मा की खातिर अथवा कम से कम इस सदन की खातिर हमें इन छोटी-मोटी बातों में एकरूपता रखनी चाहिए। जीवन की बड़ी बातों में हम भले ही इस प्रकार के न हों परंतु जहां तक छोटी-छोटी बातों का संबंध है एकरूपता रखने में कोई कठिनाई नहीं है और इसलिए मैं आशा करता हूं कि मेरे ये संशोधन डॉ. अम्बेडकर समेत इस सदन को पसंद आएंगे।

इसके पश्चात् सभा मंगलवार, 11 अक्तूबर, 1949 के दस बजे तक के लिए स्थगित हुई।

Con. 3. X.4.49
320

अंक 10
संख्या 4

सत्यमेव जयते

मंगलवार
11 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा–(जारी) 2825–2882
[अनुच्छेद 311, 312-च, अनुसूचियां 3-क,
4 और द्वितीय अनुसूची पर विचार]

भारतीय संविधान सभा

मंगलवार, 11 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टिट्यूशन हॉल नई दिल्ली, में प्रातः 10 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

मि. अजीज अहमद खां के निधन पर शोक-प्रकाश

*__अध्यक्षः__ मैं बड़े खेद के साथ सभा को अपने एक सदस्य बरेली के मि. अजीज अहमद खां की मृत्यु की सूचना देता हूं। वे बहुत काल तक संयुक्त प्रान्त की विधान सभा के सदस्य रहे और फिर इस सभा के सदस्य रहे। वे कुछ काल से बीमार थे और कुछ दिन पूर्व उनकी मृत्यु हो गई। माननीय सदस्य अपनी जगहों पर खड़े होकर उन की स्मृति के प्रति अपना आदर प्रदर्शित करेंगे और मुझे उनके कुटम्बियों के प्रति अपनी हार्दिक सहानुभूति का सन्देश भेजने की आज्ञा देंगे।

(सदस्य शांतिपूर्वक खड़े हो गये)

संविधान का मसौदा—(जारी)

अनुच्छेद 611—(जारी)

*__अध्यक्षः__ अब हम अनुच्छेद 311 पर आगे विचार करेंगे। इस पर हम कल भी विचार कर रहे थे। मि. नज़ीरुद्दीन अहमद अपना संशोधन संख्या 146 उपस्थित कर सकते हैं।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमद__ (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं अपना संशोधन संख्या 146 उपस्थित करना चाहता हूंः

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड 1 की व्याख्या में (1) "Constituent Assembly" (संविधान सभा) **शब्दों के स्थान पर** 'membership of the Constituent Assembly' (संविधान सभा की सदस्यता) **शब्द रखे जायें।** (2) 'includes' (अन्तर्गत हैं) **शब्द**

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

के स्थान पर 'shall include' (अन्तर्गत होंगे) **शब्द रखे जायें**।"

अपने पहले संशोधन के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि इस प्रसंग में उसकी आवश्यकता है। यह पदावली व्याख्या में प्रयुक्त है। व्याख्या में कहा गया है कि "इस खंड के प्रयाजनों के लिये भारत डोमिनियन की संविधान सभा के अन्तर्गत राज्यों के सदस्य हैं" इत्यादि। इस पर यह आपत्ति की जा सकती है। कहा गया है कि "संविधान सभा" के अन्तर्गत कुछ सदस्य हैं। मेरे विचार से "संविधान सभा" भाव वाचक संज्ञा है। वह केवल विधि की पदावली है। संविधान सभा के अन्तर्गत सदस्य नहीं हो सकते किन्तु "संविधान सभा की सदस्यता" के अन्तर्गत सदस्य हो सकते हैं मैं चाहता हूं कि मसौदा समिति ही इस प्रश्न पर विचार करे।

संशोधन का दूसरा भाग भी मसौदे के सम्बन्ध में ही है और पहले भाग का आनुषंगिक भाग।

इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में मैं सामान्यत: यह निवेदन करना चाहता हूं कि मैं श्री कामत के इस विचार से सहमत हूं कि "संविधान सभा" जैसी सीधी सादी पदावली का बड़े टेढ़े मेढ़े ढंग से प्रयोग किया गया है। उसमें ये शब्द प्रयुक्त हैं? "वह निकाय, जो भारत डोमिनियन की संविधान-सभा के रूप में इस संविधान के प्रारम्भ के ठीक पहले कृत्याकारी था।" इस लम्बे वाक्य के स्थान पर केवल "संविधान-सभा" रखा जा सकता था। यह पदावली सुपरिभाषित तथा सुबोध है और भारत स्वाधीनता अधिनियम के फलस्वरूप अस्तित्व में आई है। इसकी व्याख्या की भी आवश्यकता नहीं है। किन्तु मैं श्री कामत के इस विचार से सहमत नहीं हूं कि इस उपबन्ध की कोई आवश्यकता ही नहीं है। भारत-स्वाधीनता-अधिनियम में इस आशय का एक उपबन्ध है कि भारत-शासन अधिनियम में विहित शक्तियां रूपभेद के साथ संविधान-सभा प्रयोग करेगी और साथ ही वह संविधान बनाने का कार्य भी करेगी। यह शक्ति गवर्नर जनरल द्वारा अनुकूलन किये हुए भारत शासन अधिनियम में वर्णित सभी कर्तव्यों के सम्बन्ध में है। किन्तु यह अनुच्छेद 311 के द्वारा संविधान सभा को उन शक्तियों को प्रयोग करने का अधिकार दिया गया है जो इस संविधान में वर्णित है और उन शक्तियों में तथा अनुकूलन किये हुए भारत-शासन-अधिनियम में वर्णित शक्तियों में विभेद किया गया है। भारत-शासन-अधिनियम तथा यह संविधान बिल्कुल भिन्न अधिनियम हैं। जब तक निर्वाचन के पश्चात् संसद के नवीन सदनों का निर्माण न हो जाये तब तक इस संविधान के अधीन वर्तमान-संविधान सभा को कार्य करने की क्षमता प्रदान करने के लिये इस प्रकार के अनुच्छेद की बहुत आवश्यकता है।

मेरा एक और संशोधन भी है जो खण्ड (3) के सम्बन्ध में है। वह संशोधन 158वां संशोधन है।

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड 3 के अन्त में 'within the meaning of the Rules of Procedure and Standing Orders of the Constituent Assembly' (संविधान

सभा के प्रक्रिया-नियम तथा स्थाई आदेशों के आशय के अन्तर्गत) शब्द जोड़ दिये जायें।"

संविधान के पारित होने पर स्थिति में जो अन्तर होगा उसके लिये इसकी भी आवश्यकता होगी। खण्ड (3) में कहा गया है कि जो लोग प्रान्तीय विधान-सभा तथा संविधान सभा के भी सदस्य होंगे वे संविधान सभा के सदस्य नहीं रहेंगे। यह महत्वपूर्ण है कि इस प्रकार की प्रत्येक रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी। "आकस्मिक रिक्तता" की संविधान में कहीं भी परिभाषा नहीं की गई है। आकस्मिक रिक्तता का उल्लेख केवल संविधान सभा के प्रक्रिया नियमों तथा स्थाई आदेशों में मिलता है—नियम 5, उपनियम (1)। जहां तक विधान सभा के रूप में संविधान सभा की कार्यविधि तथा प्रक्रिया के नियमों का सम्बन्ध है, उनमें आकस्मिक रिक्तता का कहीं भी उल्लेख नहीं है। मेरे विचार से संविधान-निर्माता-सभा के रूप में संविधान सभा के नियमों में ही इसका उल्लेख है। यदि हम यह कहें कि उन्हें "आकस्मिक रिक्तता" समझा जाये तो हमें नियमों का हवाला देते हुए इस पदावली की व्याख्या करनी चाहिये। अन्यथा यह समझना कठिन हो जायेगा कि आकस्मिक रिक्तता का क्या अर्थ है। अभी तक हमने संविधान का जितना अंश पारित किया है उसमें यह पदावली प्रयुक्त नहीं है और 26 जनवरी को जैसे ही यह संविधान प्रवर्तन में आयेगा वैसे ही संविधान-निर्मात्र-सभा के रूप में इस सभा का अस्तित्व नहीं रह जायेगा। मेरे विचार से संविधान-निर्मात्र-सभा के प्रक्रिया-नियम, तथा स्थाई आदेश भी, अप्रभावी हो जायेंगे और प्रयोग में नहीं रहेंगे। इस प्रकार "आकस्मिक रिक्तता" पदावली का किसी अधिनियम अथवा नियम से कोई सम्बन्ध नहीं रह जायेगा। निर्वाचन के पश्चात् जो आकस्मिक रिक्तताएं होंगी वे, मेरे विचार से संविधान के अधीन बनाये हुए नियमों के अन्तर्गत आ जायेंगी। किन्तु इस समय हमारे वर्तमान नियमों के अतिरिक्त इस पदावली का और कहीं उल्लेख नहीं है। मेरे विचार से यह स्पष्ट कर देना चाहिये कि वर्तमान नियमों के अधीन रहते हुए यह एक आकस्मिक रिक्तता है। इस प्रकार नियम 5 का शून्यन नहीं होगा, क्योंकि इस स्थिति में केवल वही नियम प्रयुक्त हो सकता है।

संविधान-निर्मात्र-सभा के रूप में संविधान सभा के नियम, तथा विधान-सभा के रूप में संविधान सभा के नियम, परस्पर-विरोधी प्रतीत होंगे और यह नहीं कहा जा सकेगा कि कौन नियम लागू होता है। अच्छा यह होगा कि हम उस अधिनियम अथवा नियम का स्पष्ट उल्लेख कर दें, जिसके अन्तर्गत "आकस्मिक रिक्तता" पदावली आयेगी। यह संशोधन मसौदे के शोधन के सम्बन्ध में है और मसौदा-समिति कृपया इस पर विचार करे।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले**: (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'of any State or other territory'

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

(किसी ऐसे राज्य या अन्य राज्य-क्षेत्र के) शब्दों के स्थान पर 'of a Governor's Province or Indian State' (किसी राज्यपाल-प्रान्त या देशी राज्य के) शब्द रखे जायें।"

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'not represented' (प्रतिनिधित्व न था) शब्दों के स्थान पर 'not adequately represented, (पर्याप्त प्रतिनिधित्व न था) शब्द रखे जायें।"

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्दों के पश्चात् (हिन्दी में अन्त में) 'having due regard to the proper representation of the Scheduled Castes' (अनुसूचित जातियों के यथोचित प्रतिनिधित्व का ध्यान रखते हुए) शब्द रखे जायें।"

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (2) में यह नवीन उपखण्ड प्रविष्ट किया जाये:–'(d) the election of a Speaker or Deputy Speaker for the Parliament' (संसद के लिये अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष का निर्वाचन)।"

श्रीमान, जब मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने सभा में यह अनुच्छेद उपस्थित किया था तो उन्होंने कहा था कि यह दूहरी सदस्यता के सम्बन्ध में है। किन्तु श्रीमान इस अनुच्छेद को पढ़ने पर मैंने देखा कि इसमें कई अन्य बातें भी हैं जिनकी ओर सभा को तथा राष्ट्रपति को ध्यान देना चाहिये क्योंकि अन्ततोगत्वा वही इसका निर्णय करेंगे कि अन्तर्कालीन संसद में राज्यों तथा अन्य राज्य-क्षेत्रों के कौन सदस्य भाग लेंगे। इसके अतिरिक्त व्याख्या के खण्ड (2) में यह स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि खण्ड (1) के अधीन जो अन्तर्कालीन संसद काम करेगी उसकी आकस्मिक रिक्तताओं के सम्बन्ध में प्रतिनिधित्व-सम्बन्धी नियम बनाने की शक्ति राष्ट्रपति को प्राप्त होगी।

इस प्रसंग में मैं सभा का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूं कि भारतीय समाज के एक वर्ग के प्रति, अर्थात् अनुसूचित जातियों के प्रति, बहुत अन्याय हुआ है। श्रीमान, जनसंख्या में जो आंकड़े हमें प्राप्त हैं उनसे यह ज्ञात होता है कि 33 करोड़ की जनसंख्या में भारत में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 5 करोड़ है। यह तय किया गया है कि अन्तर्कालीन संसद में कुल मिला कर 320 सदस्य होंगे। इन में से 55 से लेकर 60 तक जगहें अनुसूचित जातियों के लिये रखी जानी चाहिये। अन्तर्कालीन संसद में अनुसूचित जातियों के कम से कम 55 सदस्य होने चाहियें। मैं देखता हूं कि व्याख्या (2) में यह स्पष्ट नहीं किया गया कि अनुसूचित जातियों के इतने प्रतिनिधि होंगे या नहीं। इसी उद्देश्य से एक संशोधन

में मैंने यह सुझाव रखा है कि भविष्य के प्राधिकारियों को अथवा राष्ट्रपति को, जो अन्तर्कालीन संसद में विभिन्न समुदायों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में नियम बनायेंगे, अनुसूचित जातियों को यथोचित प्रतिनिधित्व प्रदान करना चाहिये।

श्रीमान, संविधान-सभा के कार्य आरम्भ करने के पश्चात् कई देशी राज्य तथा अन्य राज्य क्षेत्र प्रतिनिधित्व के लिये संविधान-सभा के क्षेत्राधिकार में लाये गये हैं। किन्तु हम यह देखते हैं कि इन राज्यों से संविधान सभा में, मैसूर राज्य के एक सदस्य के अतिरिक्त और कोई भी अनुसूचित जातियों का व्यक्ति नहीं भेजा गया है। इस अनुच्छेद का यह विषय बहुत सारवान है और इसकी आवश्यकता है कि राष्ट्रपति तथा संविधान-सभा के सदस्य इस ओर ध्यान दें।

जहां तक भविष्य की केन्द्रीय विधान-सभा तथा प्रान्तीय विधान-सभाओं का सम्बन्ध है। हम कुछ ऐसे अनुच्छेद पारित कर चुके हैं जिनमें हमने जनसंख्या के आधार पर अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे हैं। किन्तु 26 जनवरी 1950 को इस सभा के विघटन के पश्चात् जो अन्तर्कालीन संसद अस्तित्व में आयेगी उसमें प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में मुझे इस प्रकार का कोई सूत्र नहीं दिखाई देता।

मेरे अन्य संशोधन अर्थात् संख्या 152 का उद्देश्य यह है कि अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष का चुनाव उन नियमों के अधीन हो जिन्हें राष्ट्रपति 26 जनवरी 1950 को पदारूढ़ होने के पश्चात् बनायें। मैंने यह संशोधन इस कारण उपस्थित किया है कि पहले एक अनुच्छेद में हमने यह उपबन्ध रखा है कि जहां कहीं दो सभाएं हैं, विधान सभाओं के अध्यक्ष तथा विधान परिषदों के सभापति संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् पदारूढ़ होंगे। उनमें हमने यही नहीं कहा है कि 26 जनवरी 1950 के पश्चात् उपाध्यक्ष तथा उपसभापति कहां पदारूढ़ रहेंगे। मेरी यह धारणा है कि अन्तर्कालीन संसद के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष के निर्वाचन का प्रश्न भी राष्ट्रपति के निर्णय के लिये छोड़ दिया जाना चाहिये ताकि उन निर्वाचनों का नियमन हो सके।

मैं देखता हूं कि मैंने जो अन्य संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 156 उपस्थित किया है वह माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के उपस्थित किये हुए संशोधन संख्या 195 से मेल नहीं खाता। मैं संशोधन संख्या 195 के पैरा (3) पर अपने संशोधन को इस रूप में उपस्थित करना चाहता हूं:

"A member in two assemblies shall resign his membership in the legislature of a Governor's Province or an Indian State thirty days prior to this Constitution coming into effect."

(दोनों सभाओं का सदस्य इस संविधान के प्रारम्भ से तीस दिन पूर्व राज्यपाल प्रान्त अथवा देशी राज्य के विधान मंडल की अपनी सदस्यता का परित्याग कर देगा।)

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

डॉ. अम्बेडकर ने कल यह तर्क उपस्थित किया था कि यह अनुच्छेद दुहरी सदस्यता के सम्बन्ध में है। यद्यपि संविधान सभा केवल संविधान-निर्माण के लिये ही अस्तित्व में आई थी किन्तु परिस्थिति-वश यह निर्णय किया गया है कि संविधान-सभा विधान सभा के रूप में भी कार्य कर सकती है। किन्तु एक प्रथा के अनुसार जो सदस्य प्रान्तीय विधान-मंडलों के भी सदस्य हैं वे अपने विधान-मंडलों के कार्य में भी भाग ले सकते थे। इस प्रकार ऐसे सदस्यों ने वास्तव में केन्द्रीय विधान-मंडल के सदस्यों के रूप में कार्य नहीं किया। इस समय दोनों प्रकार के कार्यों को यही सभा करती है किन्तु, मेरे विचार से जब संविधान सभा अन्तर्कालीन संसद का रूप धारण करे उस समय प्रान्तीय विधान-मंडलों से जितने सदस्य इस सभा में आये हैं उनसे कह दिया जाए कि वे अब उसकी कार्यवाही में भाग नहीं ले सकते।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, यदि यह अनुच्छेद स्वीकार किया जायेगा तो सदस्यों को इसका निर्णय करने की स्वतंत्रता नहीं रहेगी कि वे अन्तर्कालीन संसद में कार्य करें अथवा अपने विधान-मंडलों में। हम इस संविधान में एक ऐसा अनुच्छेद रख चुके हैं जिसमें स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि कोई व्यक्ति केन्द्रीय तथा प्रान्तीय दोनों विधान-मंडलों का सदस्य नहीं रह सकता है। मेरी यह प्रबल इच्छा है कि इस सम्बन्ध में सदस्यों को ही स्वतन्त्रता दी जाये। मुझे विश्वास है कि सदस्यों में इतना उत्तरदायित्व है कि वे दोनों सभाओं के सदस्य नहीं रहेंगे। कुछ सदस्य ऐसे हैं जो इस संविधान सभा के लिये ही चुने गये हैं, और वे सुयोग्य न्यायवेत्ता हैं, अथवा उन्हें इस देश के प्रशासन का विशेष ज्ञान है। कई सदस्यों का यह विचार हो सकता है कि उनका अन्तर्कालीन संसद में रहना आवश्यक है। हम कह नहीं सकते कि यह अन्तर्कालीन संसद कब तक काम करती रहेगी।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, हरिजनों के लिये जगहें सुरक्षित रखने के प्रश्न के सम्बन्ध में यह कहा गया था कि संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष तक जगहें सुरक्षित रहेंगी। हम कह नहीं सकते कि यह अन्तर्कालीन संसद कब तक रहेगी। इस अनुच्छेद में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि यह अवधि 26 जनवरी 1950 से आरम्भ होगी अथवा दो तीन वर्ष के पश्चात्, जब यह संविधान वास्तव में प्रयोग में आयेगा। कोई कह नहीं सकता कि यह अन्तर्कालीन संसद दो वर्ष रहेगी या दस वर्ष। यह स्थिति पर निर्भर रहेगा। इसलिये मेरी यही इच्छा है कि सदस्यों को इसकी स्वतन्त्रता दी जाये कि वे चाहें तो केन्द्रीय विधान सभा के कार्य करें और चाहें तो प्रान्तीय सभा में कार्य करें। श्रीमान, मुझे आशा है कि इन संशोधनों के सम्बन्ध में मैंने जो कुछ कहा है कि उस पर मसौदा समिति विचार करेगी और जो कुछ आवश्यकता होगी वह करेगी ताकि सदस्य स्वविवेक से यह निर्णय कर सकें कि वे किस सभा में कार्य करेंगे।

***अध्यक्ष:** क्या आप संशोधन संख्या 150 उपस्थित नहीं कर रहे हैं?

*श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लेः श्रीमान, मैं उसे उपस्थित कर चुका हूं।

*श्री एच.वी. पातस्कर (बम्बईः जनरल): श्रीमान, मैं संशोधन संख्या 153 और 157 को उपस्थित करने के लिये अपनी जगह से उठा हूं। ये संशोधन मेरे नाम से हैं। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (3) में 'Sixth day of October 1949' (1949 के अक्टूबर के छठे दिन) शब्दों तथा अंक के स्थान पर 'date of commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि को) शब्द रखे जायें।"

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (3) में 'as from the date of commencement' (इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर 'Casual vacancy' (आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी) शब्दों के स्थान पर यह रखा जाएः

'at the expiration of one month from the date of the commencement of this Constitution, that member's seat in the Legislature of a former Governor's Province or an Indian State shall become vacant unless he has previously resigned his seat in the Constituent Assembly.' "

(इस संविधान के प्रारम्भ की स्थिति से एक मास समाप्त होने पर पहले के राज्यपाल प्रान्त अथवा देशी राज्य के विधान-मंडल में उस सदस्य का स्थान रिक्त हो जायेगा, जब तक कि उसने संविधान सभा के अपने स्थान को पहले ही न त्याग दिया हो।)

अपने संशोधन संख्या 157 के सम्बन्ध में मेरा यह निवेदन है कि मैंने इस विषय पर सावधानी से विचार किया है और मेरी यह धारणा है कि माननीय डॉ. अम्बेडकर ने जिस संशोधित खण्ड (3) को उपस्थित किया है उसमें यह रखा जा सकता है। श्रीमान, कुछ ऐसा समझा जाता है कि इस संविधान सभा में जो दुहरी सदस्यता रही है उसका शीघ्रातिशीघ्र परित्याग करना चाहिये और मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि संसार के किसी भी संविधान में इस प्रकार की दुहरी सदस्यता की व्यवस्था नहीं है। सभी संविधानों में यह सामान्य उपबंध है कि यदि कोई सदस्य दोनों विधान-मंडलों, अर्थात् उच्च और अवर विधान-मंडलों, अथवा केन्द्रीय और प्रान्तीय विधान मंडलों के लिये निर्वाचित हो तो उस सदस्य को इसकी स्वतन्त्रता दी जाती है कि वह चाहे तो केन्द्रीय विधान-मण्डल में स्थान ग्रहण करे अथवा प्रान्तीय विधान-मण्डल में स्थान ग्रहण करे। यदि वह अपनी इच्छा

[श्री एच.वी. पातस्कर]

नहीं प्रकट करता है तो अवर सदन में, न कि उच्च सदन में, उसका स्थान रिक्त होता है। भारत-शासन-अधिनियम, 1935, की धारा 68 का खण्ड (2) इसी सिद्धान्त पर आधृत है।

श्रीमान, इस दुहरी सदस्यता का एक इतिहास है और मैं सभा को थोड़े समय में यह बता दूंगा कि यह किस प्रकार अस्तित्व में आई। जब हमारी संविधान-सभा का निर्वाचन हुआ तो उस समय इस देश में पुराने अधिनियम के अधीन एक केन्द्रीय विधान-मंडल कार्य कर रहा था। स्वभावतः उस समय संविधान-सभा के सदस्यों से केवल यह आशा की जाती थी कि वे संविधान का निर्माण करेंगे। किन्तु दस लाख लोगों के एक प्रतिनिधि के आधार पर वे लोग चुने गए थे। उस समय की केन्द्रीय विधान सभा में इतना अधिक प्रतिनिधित्व नहीं था क्योंकि उसका निर्वाचन पुराने अधिनियम के अधीन हुआ था और उस में मनोनीत सदस्य भी थे। इसलिये श्रीमान, आरम्भ में यह समझा गया था कि दोनों 'सभायें' पृथक-पृथक कार्य करेंगी किन्तु राजनैतिक क्षेत्र में बड़ी तीव्र गति से घटनायें घटित हुईं और अंग्रेजों ने यह निर्णय किया कि वे देश का विभाजन करके चले जायेंगे। किसी न किसी प्राधिकारी को उन्हें शक्ति समर्पित करनी थी। स्वभावतः, यह समझा गया कि पुरानी केन्द्रीय सभा लोगों का उतना अधिक प्रतिनिधित्व नहीं करती है जितना कि संविधान सभा करती है। उस समय देश में यदि कोई सभा लोगों का सबसे अधिक प्रतिनिधित्व करती थी तो वह संविधान सभा ही थी। इसलिये यह निर्णय किया गया कि संविधान सभा को ही शक्ति समर्पित की जाये और इस उद्देश्य से स्वाधीनता अधिनियम पारित किया गया। भारत स्वाधीनता अधिनियम में यह उपबन्ध रखा गया कि यह सभा देश के लिये संविधान का निर्माण करेगी और साथ ही विधान-सभा का भी कार्य करेगी। यह उपबन्ध भारत-स्वाधीनता अधिनियम की धारा 8 में रखा गया। धारा 8 का खण्ड (1) इस प्रकार है:

> "प्रत्येक नवीन डोमिनियन में डोमिनियन के विधान-मंडल की डोमिनियन के संविधान के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने की शक्ति पहले उस डोमिनियन की संविधान सभा प्रयोग करेगी और इस अधिनियम में प्रयुक्त डोमिनियन के विधान-मंडल का अर्थ तदनुसार लगाया जायेगा।"

इसके अतिरिक्त एक उपबन्ध खण्ड (2) के उपखण्ड (ङ) में भी है। भारत-स्वाधीनता अधिनियम की धारा 8 के खण्ड (2) का उपखण्ड (ङ) इस प्रकार है:

> "प्रत्येक डोमिनियन में प्रयुक्त उस अधिनियम, अर्थात् भारत-शासन-अधिनियम 1935 के अधीन संघीय विधान-मंडल अथवा भारतीय विधान-मंडल की शक्तियां पहले उस डोमिनियन की संविधान सभा का इस धारा की उपधारा (1) के अधीन प्रयोग में आने वाली शक्तियों के अतिरिक्त प्रयोग में लायेगी।"

यह स्थिति थी जिसमें संविधान-सभा ने केवल संविधान निर्मात्र-सभा के रूप में बल्कि संघीय अथवा केन्द्रीय विधान-मंडल के रूप में भी अस्तित्व में आई। हमारी सरकार ने अन्तर्कालीन संविधानिक आदेश पारित करने की आवश्यकता का अनुभव किया, जिसके द्वारा भारत-शासन-अधिनियम की धारा 68 का उपखण्ड (2) निकाल दिया गया क्योंकि यदि वह बना रहता तो दुहरी सदस्यता नहीं बनी रहती। हमें स्वविवेक से निर्णय करना होता और यदि हम निर्णय नहीं करते तो हम केन्द्रीय विधान-मंडल के सदस्य बने रहते और प्रान्तीय विधान-मंडलों में हमारे स्थान रिक्त हो जाते। उस समय यह विचार किया गया कि केन्द्रीय तथा प्रान्तीय प्रशासन के हित में यह उचित नहीं है कि प्रान्तीय विधान-मंडलों के सदस्य अपनी प्रान्तीय विधान-सभाओं का कार्य छोड़ कर केन्द्रीय विधान-सभा का कार्य करें। इस कारण हमारे नेता ने एक प्रथा स्थापित करने के लिये एक पत्र जारी किया जिसमें यह कहा गया कि साधारणतया प्रान्तीय विधानमंडलों के सदस्य केन्द्रीय विधान-सभा के कार्य में भाग न लें। मैं संविधान-सभा का कोई पदाधिकारी नहीं हूं किन्तु जहां तक मुझे ज्ञात है प्रान्तीय विधान-मंडलों के सदस्यों ने उस पत्र के अनुसार कार्य किया। वे उत्तरदाई लोग हैं और मुझे विश्वास है कि उन्होंने उसी के अनुसार कार्य किया होगा।

इस संविधान-निर्माण के सिलसिले में अनुच्छेद 82 पारित कर चुके हैं जिसका खण्ड 1 (क) इस प्रकार है:

> "(1क) कोई व्यक्ति संसद तथा प्रथम अनुसूची के भाग 1 या भाग 3 में उल्लिखित किसी राज्य के विधान-मंडल, इन दोनों, का सदस्य न होगा तथा यदि कोई व्यक्ति संसद तथा ऐसे किसी राज्य के विधान-मंडल, इन दोनों, का सदस्य चुन लिया जाये तो ऐसी कालावधि की समाप्ति के पश्चात्, जो कि राष्ट्रपति द्वारा बनाये गये नियमों में उल्लिखित हो, संसद में ऐसे व्यक्ति का स्थान रिक्त हो जायेगा, यदि उसने राज्य के विधान-मंडल में के अपने स्थान को पहले ही त्याग न दिया हो।"

यह एक महत्वपूर्ण बात है कि अनुच्छेद 82 का खण्ड (1क) भारत-शासन-अधिनियम, 1935 की मूल धारा 68 के बहुत कुछ अनुरूप ही है और इनमें केवल इतना अन्तर है कि जहां धारा 68 के खण्ड (2) में यह उपबन्ध है कि यदि कोई व्यक्ति संसद के दोनों सदनों के लिये निर्वाचित हो जाए और वह गवर्नर-जनरल द्वारा निश्चित की हुई अवधि में उस अधिनियम के अधीन निर्णय न करे तो अवर सदन में उसका स्थान स्वत: रिक्त हो जायेगा किन्तु अनुच्छेद 82 (1क) में; न जाने किस कारण, मसौदा-समिति ने साधारण मार्ग से भिन्न मार्ग का अनुसरण किया है। साधारणतया इस स्थिति में सदस्यों के अवर सदन के स्थान रिक्त होते हैं न कि उच्च सदन के। मेरे विचार से यह एक विषमता है। किन्तु हम उस अनुच्छेद को पारित कर चुके हैं और उसकी चर्चा कर के मैं सभा का समय नष्ट नहीं करना चाहता। इस प्रश्न को अब इस समय उठाना उचित नहीं है।

इस अनुच्छेद को पारित करने के पश्चात् मेरी समझ में नहीं आता कि इस प्रकार के अनुच्छेद की क्या आवश्यकता रह जाती है क्योंकि अनुच्छेद 82 (1क)

[श्री एच.वी. पातस्कर]

के अधीन, जिसे हम पारित कर चुके हैं, संविधान के प्रारम्भ होते ही वे सदस्य, जो प्रान्तीय विधान-मंडलों के भी सदस्य हैं इस सभा के सदस्य नहीं रह जायेंगे। निस्सन्देह उन्हें निर्णय करने की स्वतन्त्रता है किन्तु जो लोग निर्णय नहीं करेंगे वे लोग संविधान सभा में अपने स्थानों को खो बैठेंगे... (माननीय श्री के. सन्तानम् ने कुछ कहा)। श्री सन्तानम् कहते हैं कि संविधान के प्रारम्भ पर अनुच्छेद 82 प्रयोग में नहीं आयेगा। यदि संविधान 26 जनवरी को प्रारम्भ होगा तो मेरी समझ में नहीं आता कि यह उपबन्ध तब क्यों प्रयोग में नहीं आयेगा। यदि यह विचार किया गया है कि यह उस तिथि को प्रयोग में नहीं आयेगा तो मेरा निवेदन है कि अन्तरिम काल के लिये संविधान में इस प्रकार के उपबन्ध को रखने की आवश्यकता ही नहीं थी। कुछ स्थितियों के कारण, जिनका मैं वर्णन कर चुका हूं, इस सभा के कुछ सदस्य प्रान्तीय विधान-मंडलों के सदस्य भी थे। यदि किसी समय यह समझा गया कि देश का तथा प्रान्तों का हितसाधन एक प्रथा-सम्बन्धी पत्र निकालने से होगा तो मेरी समझ में नहीं आता कि इस समय केवल एक वर्ष के लिये, क्योंकि एक वर्ष बाद चुनाव होंगे, संविधान में इस प्रकार का विषम उपबन्ध क्यों रखा जा रहा है। यदि यह विचार किया जाता है कि इस प्रकार के प्रथा-सम्बन्धी पत्र के अनुसार कार्य न करके इस थोड़े से समय के लिये भी इस प्रश्न को अन्तिम रूप से हल कर दिया जाए तो इन सज्जनों से अच्छा व्यवहार करना था और इन्हें स्वविवेक से निर्णय करने की स्वतन्त्रता देनी चाहिये थी, क्योंकि इससे अधिक अन्तर नहीं पड़ता। मैं यह स्पष्ट शब्दों में कहना चाहता हूं कि इस सभा के अधिकांश सदस्य कांग्रेस टिकट पर निर्वाचित किये गये थे। यदि उन्हें स्वविवेक से निर्णय करने का अधिकार दिया गया तो उस का यह अर्थ नहीं होगा कि सदस्यों को व्यक्तिगत रूप से यह अधिकार प्राप्त होगा। इस का अर्थ यह होगा कि यह अधिकार कांग्रेस दल को प्राप्त होगा। यह उद्देश्य उपरोक्त ढंग से भी पूरा किया जा सकता था? इस ढंग से भी कांग्रेस दल को ही निर्णय का अधिकार प्राप्त होता और वास्तव में अभी तक कांग्रेस के सभी सदस्य उसके निर्णय के अनुसार ही कार्य करते रहे हैं।

इस स्थिति में जब हम हमेशा से सुचारू ढंग से कार्य करते आये हैं, मेरी समझ में नहीं आता कि संक्रांति काल के लिये केवल एक वर्ष के लिये ही एक विशेष उपबन्ध क्यों रखा जा रहा है। इस उपबन्ध में कुछ कटुता है क्योंकि 6 अक्तूबर के पश्चात् कोई सदस्य किसी सभा में अपने स्थान को नहीं त्याग सकेगा। इसका यह अर्थ है कि इस सभा के बहुत से सदस्यों पर सन्देह किया जा रहा है। हम परिस्थितिवश बहुत काल से कार्य करते आये हैं और इस सभा के बाहर कई लोगों की तथा समाचारपत्रों की यह धारणा है कि हम अभी तक इसीलिये सदस्य बने हुए हैं कि हम 45 रुपये रोज कमाना चाहते हैं। समाचार-पत्रों में कई व्यंग-चित्र तथा लेख निकले हैं। इस स्थिति में इस उपबन्ध का यह अर्थ लगाया जायेगा कि जो लोग प्रान्तीय विधान-मंडलों के भी सदस्य हैं वे अपने दल का आदेश न मान कर तथा देश के हित का भी ध्यान न रखकर यहां बैठे हुए 45 रुपये रोज कमाना चाहते हैं। यह बहुत ही अनुचित धारणा है।

इसलिये मेरी समझ में नहीं आता कि इस उपबन्ध को यहां रखने की आवश्यकता ही क्या है। इस उपबन्ध को निकाल देना चाहिये। इस उद्देश्य को पूरा करने के अन्य उपाय भी हैं। और कुछ न कह कर मैं इतना तो अवश्य कहूंगा

कि प्रान्तीय विधान-मण्डलों के सदस्यों के बारे में मिथ्या धारणा नहीं बनानी चाहिये। मैं इस उपबन्ध का विरोध करता हूं, क्योंकि इस प्रकार के उपबन्ध की कोई आवश्यकता नहीं है। मेरे संशोधन संख्या 157 का उद्देश्य यह है कि सदस्यों को स्थान त्यागने की स्वतन्त्रता होनी चाहिये। मैं यह जानता हूं कि यह अधिकार हम जिस अनुच्छेद 82 (1क) को पारित कर चुके हैं उससे असंगत है। किन्तु वह 1935 के भारत शासन-अधिनियम से तथा संसार भर में जिन सिद्धान्तों का अनुसरण किया जाता है उनसे सुसंगत है। आप संसार के चाहे जिस संविधान को भी देखें आप को उस में इस आशय का एक उपबन्ध मिलेगा कि यदि कोई सदस्य उच्च सदन और अवर सदन दोनों के लिये निर्वाचित हो जाए और इस सम्बन्ध में निर्णय न करे कि वह किस सदन में रहेगा तो वह अवर सदन के स्थान को न कि उच्च-सदन के स्थान को खो बैठेगा। मेरे संशोधन का आधार यही सिद्धान्त है। हमारे सामने जो लक्ष्य है उसे प्राप्त करने के अन्य भी कई उपाय हैं।

मैं पहले यह निवेदन करता हूं कि वर्तमान व्यवस्था एक वर्ष और जारी रखी जाए। 1950-51 में निर्वाचन होंगे। प्रश्न केवल एक वर्ष का है। हम बहुत काल से यहां काम करते रहे हैं और कोई कारण नहीं है कि हम एक वर्ष और क्यों न काम करें। यदि यह सम्भव न भी हो तो सदस्यों को स्वविवेक से निर्णय करने का अधिकार मिलना चाहिये। सदस्यों को इस सम्बन्ध में अधिकार देने का अर्थ यह होगा कि कांग्रेस दल को अधिकार दिया जायेगा, यद्यपि कुछ सदस्य ऐसे भी हैं जो इस दल के नहीं हैं। यदि इस उपबन्ध को नहीं रखा जायेगा तो आसमान नहीं गिर जायेगा। मैं इस उपबन्ध को प्रान्तीय विधान-सभाओं के उन सदस्यों पर एक कलंक समझता हूं जो अपनी इच्छा से नहीं बल्कि परिस्थिति-वश इस सभा के लिये निर्वाचित हुए हैं और दो सभाओं के सदस्य हैं। मुझे इस उपबन्ध पर इसी कारण आपत्ति है। मुझे इस पर आपत्ति है कि जब हम अपना कार्य समाप्त करने को हैं, संविधान में एक ऐसा उपबन्ध रखा जा रहा है जिसका यह अर्थ किया जा सकता है कि हम लोग कुछ कारणों से यहां बने रहना चाहते हैं और हमें अपने प्रान्तों के प्रशासन की चिंता नहीं है। इसी कारण मैंने अपना संशोधन उपस्थित किया है। मुझे आशा है कि मैंने जो कुछ कहा है उस पर इस सभा के सदस्य ध्यानपूर्वक विचार करेंगे।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित कहरता हूं कि: "सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (3) में 'a House' (सदन) शब्दों के स्थान पर 'the Lower House (अवर सदन) शब्द रखे जाएं।"

मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के पश्चात् यह नवीन खण्ड प्रविष्ट किया जाए:

'(3a) If a member of the Constituent Assembly of the Dominion of India was on the twenty-sixth day of Jannuary, 1950, also a nominated member of the Legislative Council of a Governor's

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

Province, then, as from the date of commencement of this Constitution that person's seat in the said Assembly shall, unless he has ceased to be a member thereof earlier, become vacant, and every such vacancy shall be deemed to be a casual vacancy.' "

[(3क) यदि भारत-डोमीनियन की संविधान सभा का कोई सदस्य जनवरी, 1950, के छब्बीसवें दिन किसी राज्यपाल प्रान्त की विधान-परिषद् का मनोनीत सदस्य भी था तो इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि से उक्त विधान-सभा में उस व्यक्ति का स्थान, यदि उसका उस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त हो जायेगा तथा प्रत्येक ऐसी रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी।]

श्रीमान, उद्देश्य यह है कि संविधान-सभा के एक सौ से अधिक स्थानों के लिये उप-निर्वाचनों की आवश्यकता नहीं रहे। यदि सदस्यों को यह निर्णय करने का अधिकार दिया गया कि वे संविधान-सभा में रहना चाहते हैं या नहीं तो बहुत से स्थान रिक्त हो जायेंगे और सौ से अधिक स्थानों के लिये उपनिर्वाचन करने की आवश्यकता पड़ जायेगी। इस सम्बन्ध में मेरे अपने विचार हैं किन्तु इस समय संशोधन संख्या 160 में मैंने केवल यह सुझाव रखा है कि विधान-परिषदों के सदस्यों को निर्णय करने का अधिकार देना चाहिये। उन्हें यह निर्णय करना चाहिये कि वे यहां रहना पसंद करेंगे या प्रान्तीय विधान-परिषदों में। यदि वे यहां रहना पसन्द करते हैं तो उप-निर्वाचनों की आवश्यकता नहीं होगी क्योंकि वे मनोनीत सदस्य हैं। सभी प्रान्तीय विधान-परिषदों में कांग्रेस का बहुमत है और सरकार जिस व्यक्ति को चाहेगी मनोनीत करेगी। मुझे कोई ऐसा कारण नहीं दिखाई देता जिसके आधार पर यह सभा तथा मसौदा-समिति के सदस्य मेरे संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकेंगे।

मुझे इस संशोधन के सम्बन्ध में और कुछ नहीं कहना है। किन्तु यदि आपकी अनुमति हो तो जो अनुच्छेद उपस्थित किये गये हैं उनके सम्बन्ध में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। मेरी यह धारणा है कि इस सभा के सदस्यों को यह निर्णय करने का अधिकार होना चाहिये कि वे यहां रहेंगे अथवा प्रान्तीय विधान-सभाओं में। यदि पश्चिमी बंगाल में सामान्य निर्वाचन करने में कोई कठिनाई नहीं है तो कोई कारण नहीं है कि एक सौ स्थानों के लिये सामान्य निर्वाचन न हों। जिस प्रकार की घटनाएं घटित हो रही हैं उन्हें देखते हुए मेरा यह विचार है कि इस संविधान के अधीन सामान्य निर्वाचनों को हम अनिश्चित काल तक के लिये स्थगित करने के लिये विवश होंगे। पाकिस्तान सरकार से, विशेषतया काश्मीर के मामले के कारण, हमारे सम्बन्ध तेजी से बिगड़ते जा रहे हैं। मेरा अपना यह विचार है कि यह अन्तर्कालीन संसद पांच छः वर्ष तक चलती रहेगी। मैं कह नहीं सकता कि इस काल के पश्चात् संविधान के उपबन्ध प्रवर्तन में आ सकेंगे या नहीं। मेरी कुछ ऐसी धारणा है कि अन्तर्कालीन उपबन्धों को छोड़कर इस संविधान के अन्य उपबन्ध कभी भी प्रयोग में नहीं आ सकेंगे। इस दृष्टि से मेरा यह विचार

है कि अच्छा यह होगा कि हम इन सौ स्थानों के लिये उपनिर्वाचन करें क्योंकि बिना निर्वाचकों का मत लिये हुए किसी सभा को छः या सात वर्ष से अधिक समय तक चलाना उचित नहीं है। हम बने रहना चाहते हैं इसलिये देश में इस समय भी असंतोष बढ़ रहा है। हमें कुछ स्थानों के लिये निर्वाचकों का मत लेना चाहिये ताकि हमें ज्ञात हो सके कि हम पर उनका विश्वास है या नहीं। इसलिये उचित यही है कि इस देश में एक सामान्य उपनिर्वाचन किया जाए।

यदि मेरा यह विश्वास ठीक है कि संविधान के अधीन सामान्य निर्वाचन नहीं होने जा रहे हैं तो इस देश में हरिजनों तथा आदिवासियों के अतिरिक्त अन्य किसी समुदाय के लिये स्थान सुरक्षित करने का अर्थ यह होगा कि हम संविधान के वाक्यों का तथा आशय का खंडन कर रहे हैं। इस कारण मैं अनुच्छेद 312(च) के मसौदे का विरोध करता हूं। उसमें सभी प्रकार के समुदायों के लिये स्थान सुरक्षित किये गये हैं। संविधान में हमने हरिजनों तथा आदिवासियों के लिये स्थान सुरक्षित रखने के सम्बन्ध में उपबन्ध रखा है। उस उपबन्ध से मैं पूर्णतया सहमत हूं। अन्य समुदायों के लिये स्थान सुरक्षित नहीं रखने चाहिये क्योंकि अन्य समुदायों को इस देश के अवशिष्ट लोगों के साथ घुल-मिल जाना चाहिये। यदि मुझे इसका थोड़ा भी विश्वास होता कि 1950 अथवा 1951 में सामान्य निर्वाचन होंगे तो मैं यह सुझाव नहीं प्रस्तुत करता। मुझे विश्वास है कि 1950 में अथवा 1951 में, सामान्य निर्वाचन नहीं होंगे। इसलिये हम पुराने जमाने की रूढ़ियों को क्यों बनाये रखें? हम अन्य समुदायों के लिये स्थान सुरक्षित क्यों रखें?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (2) में 'President may by rules' (राष्ट्रपति नियमों द्वारा) शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law' (संसद विधि द्वारा) शब्द रखे जाएं: और उस अनुच्छेद का खण्ड (4) निकाल दिया जाए।"

इस अनुच्छेद में हम अन्तर्कालीन संसद के सम्बन्ध में उपबन्ध रख रहे हैं और यह विचार किया गया है कि इस सभा में प्रान्तों तथा राज्यों की विधान-सभाओं के सदस्यों को हटा कर जो सदस्य शेष रह जायेंगे वही संसद के सदस्य होंगे। इस अनुच्छेद के खण्ड (2) में संघीय संसद में उन राज्यों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे गये हैं जिनका अभी तक प्रतिनिधित्व नहीं हुआ है। इस समय केवल हैदराबाद राज्य का प्रतिनिधित्व नहीं हुआ है और इस लिये खण्ड (2) का उद्देश्य यह है कि राष्ट्रपति को नियमों द्वारा हैदराबाद के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने की शक्ति दी गई है। मेरा अपना यह विचार है कि इस सभा के विघटित होने के पूर्व ही यहां हैदराबाद के प्रतिनिधि आ जायेंगे। नियमों द्वारा प्रतिनिधित्व प्रदान करने पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है किन्तु हैदराबाद को जो प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाए उस पर संसद को विचार-विमर्श करने का अवसर मिलना चाहिये। इस खण्ड में यह प्रयास किया गया है। कि राष्ट्रपति नियमों के अधीन जिसे भी चाहेगा उस राज्य का प्रतिनिधि बन सकेगा

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

और संसद को उन नियमों पर विचार विमर्श करने का अवसर नहीं मिलेगा। मेरे विचार से यह उचित नहीं है। सर्वसत्ताधारी संसद होने के कारण उसे इस पर विचार-विमर्श करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये कि उसका सदस्य कौन होने जा रहा है, किसी क्षेत्र का प्रतिनिधित्व कौन करता है और जो नियम बनाये गये हैं वे स्वीकार किये जा सकते हैं या नहीं किये जा सकते हैं। इसलिये मेरे विचार से यह उचित नहीं है कि राष्ट्रपति नियमों द्वारा इस प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे और जिस प्रकार नियम बनाये जाएं उसके सम्बन्ध में इस सभा को कुछ भी कहने का अधिकार नहीं हो।

तब आखिर यह राष्ट्रपति है कौन? अनुच्छेद 312 (च) में यह कहा गया है, यद्यपि अभी वह सभा के समक्ष नहीं प्रस्तुत किया गया है, कि 26 जनवरी तक श्रीमान, आप ही राष्ट्रपति रहेंगे और आपको इस प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में नियम बनाने का अधिकार प्राप्त होगा। इसके पश्चात् गणराज्य के राष्ट्रपति को अर्थात् मंत्रिमंडल को यह अधिकार प्राप्त होगा। मेरे विचार से इस सभा को दोनों अवस्थाओं में नियमों पर विचार-विमर्श करने का अधिकार प्राप्त होना चाहिये। जब हमने काश्मीर के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में नियम बनाये थे तो इस सभा को उन पर विचार-विमर्श करने का अवसर प्राप्त हुआ था। सभा को अपना मत प्रकट करने का अधिकार है। किन्तु इस खण्ड में इन शब्दों को रख कर कि राष्ट्रपति नियम द्वारा यह कार्य करेगा आप संसद को इस अधिकार से वंचित कर रहे हैं, जो अनुचित ही नहीं बल्कि जनतंत्र-विरोधी भी है। मैं यह मांग करता हूं कि हैदराबाद के सम्बन्ध में जो भी निर्णय किया जाए, और उसे जिस प्रकार भी प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाए, उस सम्बन्ध में नियम बनाने का अन्तिम प्राधिकार संसद को ही प्राप्त होना चाहिये।

मेरे संशोधन के दूसरे भाग का आशय यह है कि खण्ड (4) निकाल दिया जाए। अनुच्छेद 311-क में हम कह चुके हैं कि यह संविधान सभा राष्ट्रपति का निर्वाचन करेगी। तब वह अध्यक्ष का भी निर्वाचन क्यों न करे? मेरी समझ में नहीं आता कि किस कारण अन्तर किया गया है। मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी संदेह नहीं है कि वही राष्ट्रपति तथा वही अध्यक्ष फिर निर्वाचित हो जायेंगे। किन्तु फिर भी यदि हम यह कहते कि यह सभा उन्हें फिर निर्वाचित करेगी तो यह अधिक जनतंत्र-सम्मत होता। जब हम राष्ट्रपति का निर्वाचन करने के लिये सहमत हो गये हैं तो हम अध्यक्ष का निर्वाचन भी क्यों न करें? अध्यक्ष तथा राष्ट्रपति में अन्तर नहीं करना चाहिये। यद्यपि हम उन्हीं व्यक्तियों को चुनेंगे, क्योंकि अन्य व्यक्तियों को चुनने का कोई कारण नहीं है, किन्तु फिर भी मेरी यह धारणा है कि इस मामले में राष्ट्रपति तथा अध्यक्ष में अन्तर करना उचित नहीं है। यह एक प्रकार का विभेद है कि सभा राष्ट्रपति को तो फिर निर्वाचित करे और अध्यक्ष को फिर निर्वाचित न करे। सभा राष्ट्रपति तथा अध्यक्ष को फिर निर्वाचित करेगी। संविधान में इन दोनों के लिये एक ही उपबन्ध होना चाहिये, यही तर्कसंगत है।

कुछ मित्र खंड (3) के उपबन्धों के सम्बन्ध में बोले हैं। उस खण्ड पर आपत्ति की गई है और यह कहा गया है कि उन सदस्यों को, जो प्रान्तीय विधान-मंडलों के भी सदस्य हैं, यह निर्णय करने का अधिकार दिया जाना चाहिये कि वे संसद

के सदस्य रहना चाहते हैं अथवा प्रान्तीय विधान-सभा के सदस्य। मुझे यह मत मान्य है। यह संसद भविष्य की संसद हो जानी चाहिये और इस सभा में स्थान रिक्त न होकर इन सदस्यों के प्रान्तीय विधान-सभाओं में के स्थान रिक्त होने चाहिये और लोगों ने उनके लिये सदस्य निर्वाचित करने के लिये कहा जाना चाहिये। सारे देश में एक सौ स्थान बहुत स्थान नहीं हैं। इन उप-निर्वाचनों से यह भी ज्ञात हो जाता कि देश कांग्रेस का साथ दे रहा है या नहीं। इस प्रकार हम जनतंत्र की प्रणाली का भी अनुसरण करते और हमें यह भी ज्ञात हो जाता कि लोगों की क्या भावनाएं हैं। यद्यपि मैंने इस आशय के संशोधन की सूचना नहीं दी है, किन्तु मैं उन मित्रों से सहमत हूं जिनका यह विचार है कि यह सभा इसी रूप में बनी रहे और इस कारण प्रान्तों में जिन सदस्यों के स्थान रिक्त हो जाएं उन्हें सीधे-सीधे चुनाव से भरा जाए।

श्रीमान मेरे मित्र श्री कामत ने खण्ड (1) के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किये हैं उनका भी मैं समर्थन करता हूं। उन्होंने जो शब्दावलि प्रस्तावित की है वह मसौदे की शब्दावलि से अच्छी है। मेरे विचार से मसौदा-समिति को इन संशोधनों पर विचार करना चाहिये और इन्हें मसौदे में समाविष्ट कर लेना चाहिये ताकि वह अधिक सुगठित और सुन्दर हो जाए।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): श्रीमान, क्या मुझे साधारणतया सारे अनुच्छेद पर अपने विचार प्रकट करने की आज्ञा है?

***अध्यक्ष:** पहले आप अपने संशोधनों को उपस्थित करें।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (1) के अन्त में यह जोड़ दिया जाए:-

'and shall be known as the Parliament of the Union of India.' (और भारतीय संघ की संसद कही जायेगी।)"

मेरे नाम से अन्य संशोधन भी हैं किन्तु चूंकि अब डॉ. अम्बेडकर ने अपने नये संशोधन उपस्थित किये हैं जिनसे मेरे बहुत से संशोधनों का आशय पूरा हो जाता है इसलिये मैं अपने अवशिष्ट संशोधनों को नहीं उपस्थित करना चाहता।

इस संशोधन के सम्बन्ध में मुझे केवल एक बात कहनी है। प्रस्तावित अनुच्छेद 311 इस शीर्षक से आरम्भ होता है, "अन्तर्कालीन संसद तथा उसके अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के बारे में उपबन्ध" "अन्तर्कालीन संसद" शब्द पहली बार इस शीर्षक में प्रयुक्त हैं। अनुच्छेद में कहीं यह नहीं कहा गया है कि कौन सभा अन्तर्कालीन संसद होगी। अनुच्छेद में किसी स्थल पर इस का उल्लेख होना चाहिये कि एक अन्तर्कालीन संसद होगी, किन्तु यह उल्लेख नहीं है। केवल डॉ. अम्बेडकर के अन्तिम संशोधन में यह कहा गया है कि इन आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के पश्चात् एक अन्तर्कालीन संसद निर्मित होगी। उन्होंने केवल आकस्मिक रूप से उसे

[श्री महावीर त्यागी]

"अन्तर्कालीन संसद" कहा है। इसलिये इसे स्पष्ट करने के लिये मैं पहले ही खण्ड में ये शब्द जोड़ना चाहता हूं:

"और वह भारतीय संघ की संसद कही जायेगी।" अपने पहले खण्ड में वे कहते हैं—

> "जब तक कि इस संविधान के उपबन्धों के अधीन संसद के दोनों सदन सम्यक रूप से गठित न हो जाएं तथा प्रथम सत्र में अधिवेशित होने के लिये आहूत न हो जाएं तब तक वह निकाय, जो भारत डोमीनियन की संविधान-सभा के रूप में इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले कृत्यकारी था इस संविधान के उपबन्धों द्वारा संसद को दी गई सब शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करेगा।"

इसका मैं यह अर्थ लगाता हूं कि भारत डोमीनियन की संविधान सभा बनी रहेगी और वह सभा अन्तर्कालीन संसद का भी सभी कार्य करेगी। इसकी कहीं परिभाषा नहीं की गई है कि अन्तर्कालीन संसद क्या है। इसलिये मेरा निवेदन है कि हम इन शब्दों को प्रविष्ट करें: "और भारतीय संघ की संसद कही जायेगी।" मैं नहीं चाहता कि "अन्तर्कालीन" विशेषण संसद के साथ, अथवा अधिकारियों के साथ, अपना राष्ट्रपति आदि के साथ रखा जाए। केवल "संसद" शब्द ही रहना चाहिये। इस सम्बन्ध में मुझे केवल इतना ही कहना है और मैं आशा करता हूं कि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जायेगा।

श्रीमान, इस अनुच्छेद पर सामान्यत: मुझे यह निवेदन करना है कि मुझे यह देखकर खेद हुआ है कि डॉ. अम्बेडकर को तथा मसौदा-समिति को हमारे सामने इस प्रस्ताव को रखने की आवश्यकता पड़ी। इससे सामान्य निर्वाचन की व्यवस्था कहीं अच्छी होती। यह सुझाव कि यह संविधान सभा बनी रहेगी और प्रथम संसद के रूप में काम करेगी, मेरे विचार से जनतंत्र सम्मत नहीं है। अच्छा यह होता कि संविधान के प्रारम्भ के पूर्व तुरन्त ही एक निर्वाचन करते। सामान्य निर्वाचन के पश्चात् जो संसद बनती वह कार्य आरम्भ करती। यही उचित मार्ग था।

*__श्री एल. कृष्णस्वामी भारती__ (मद्रास: जनरल): किस मताधिकार के अधीन?

*__श्री महावीर त्यागी:__ यही उचित मार्ग होता क्योंकि तब संसद यह जानती कि लोगों के क्या विचार हैं और पदारूढ़ व्यक्ति जिन लोगों का प्रतिनिधित्व करते उनका उन पर पूर्ण विश्वास होता। श्रीमान, हम यहां एक परोक्ष निर्वाचन के फलस्वरूप निर्वाचित होकर आये हैं और हमें प्रान्तों की उन विधान-सभाओं ने निर्वाचित किया है जिनका बहुत पहले अर्थात् 1946 के लगभग निर्वाचन हुआ था। तब से हम निर्वाचकों के सामने नहीं गये हैं। इस दृष्टि से यह अनुच्छेद, जिसे हम पारित करने जा रहे हैं, मेरे विचार से बहुत प्रतिगामी अनुच्छेद है।

यह प्रतीत होता है कि निर्वाचकों की सूचियों को तैयार करने में कुछ कठिनाई है क्योंकि अब मताधिकार वयस्क मताधिकार हो गया है। निर्वाचकों की पंजियों को तैयार करने में कुछ समय लगेगा और इस काल के लिये व्यवस्था करने के उद्देश्य से इस अनुच्छेद को प्रस्तुत किया गया है। मैं अपने माननीय मित्र श्री सन्तानम के इस सुझाव से भी सहमत हूं कि निर्वाचनों के लिये एक तिथि निश्चित कर दी जाए। तब तक हमें उन्हें समाप्त कर देना चाहिये। आखिर ये निर्वाचक सूचियां

तथा अन्य रस्में किसी समय तो समाप्त होनी ही चाहिये ताकि शक्ति वास्तव में लोगों के हाथ में जा सके। जब वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचन होंगे तभी संसद लोगों की प्रतिनिधि सभा होगी। चूंकि यह अनुच्छेद केवल अन्तरिम काल के लिये है इसलिये मुझे आशा है कि नये निर्वाचनों के लिये तैयार करने में अधिक समय नहीं लगाया जायेगा।

डॉ. अम्बेडकर ने एक अन्य संशोधन भी उपस्थित किया है जिसका आशय यह है कि इस सभा के उन सदस्यों के बारे में जो प्रान्तीय सभाओं अथवा प्रान्तीय विधान-मंडलों के भी सदस्य हैं, यह समझा जाएगा कि नये संविधान के प्रारम्भ के ठीक पहले दिन इस सभा में उनके स्थान रिक्त हो जायेंगे। यद्यपि ये स्थान संविधान के प्रारम्भ होने तक रिक्त नहीं होंगे किन्तु उसके पूर्व ही निर्वाचन द्वारा भर दिये जायेंगे। ये स्थान संविधान के प्रारम्भ से पूर्व रिक्त नहीं होंगे। उनके संशोधन के अधीन, ये अतिरिक्त स्थान रिक्त होने के पूर्व ही निर्वाचनों द्वारा भर दिये जायेंगे। यह मेरी समझ में नहीं आता। अच्छा यह होता कि वे यह कहते कि यहां जो विधान-सभाओं के सदस्य हैं उनके स्थान विधान के प्रारम्भ से पन्द्रह दिन पूर्व रिक्त हो जायेंगे। इस पखवाड़े में परोक्ष निर्वाचन द्वारा हम इन स्थानों को भर देते ताकि जब संविधान प्रारम्भ होता, यह सभा भी पूर्ण होती। उचित मार्ग यही था। मैं अब भी यह सुझाव प्रस्तुत करता हूं कि मसौदा-समिति कुछ ऐसे शब्द रखे जिनसे अर्थ बदल जाए और सरकार संविधान के प्रारम्भ से एक पखवाड़े पूर्व निर्वाचन कर सके और इन स्थानों के भरे जाने के पूर्व इन्हें रिक्त करा सके यह अधिक तर्कसंगत होगा।

खण्ड (3) का जो मसौदा अब प्रस्तावित किया गया है वह अधिक पूर्ण है। पहले मसौदे के अधीन केवल वे सदस्य नहीं बने रह सकते थे जो 6 अक्तूबर 1949 को स्थानीय विधान मंडलों के सदस्य थे। जो लोग 6 अक्तूबर 1949 के पश्चात् स्थानीय विधान-मंडलों के सदस्य हुए उन्हें अनर्ह नहीं कहा गया है। इस दृष्टि से यह नवीन प्रस्ताव पूर्ण है क्योंकि इसमें निर्धारित किया गया है कि यदि भारत डोमीनियन की संविधान-सभा का कोई सदस्य 6 अक्तूबर 1949 के दिन, अथवा तत्पश्चात् इस संविधान के प्रारम्भ से पहले किसी समय किसी राज्यपाल प्रान्त अथवा प्राथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित किसी राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य के विधान-मंडल के सदन का सदस्य था, अथवा किसी ऐसे राज्य का मंत्री था, तो इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर संविधान-सभा में ऐसे सदस्य का स्थान, यदि उसका उस सभा का सदस्य होना इस से पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त हो जायेगा तथा प्रत्येक ऐसी रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी। श्रीमान, यद्यपि ऐसे बहुत मामले नहीं होंगे, अथवा सम्भव है कि कोई भी मामला न हो, किन्तु इसे मसौदे में ऐसे सदस्यों के मामलों के लिये व्यवस्था कर दी गई है जो इस समय में प्रान्तीय विधान-मंडलों के सदस्य हुए हों। उन लोगों का क्या होगा जो प्रान्तीय विधान-सभाओं के सदस्य हैं और इस बीच इस सभा के सदस्य हुए हैं? यदि डॉ. अम्बेडकर के इस अन्तिम मसौदे का ठीक-ठीक निर्वचन किया जाए तो इन सदस्यों के स्थान, जो इस सभा के सदस्य हैं और जो 6 अक्तूबर को तथा उसके बाद किसी प्रान्त के विधान मंडल के सदस्य हुए, रिक्त समझे जायेंगे, अर्थात् उन सदस्यों के स्थान, जो इस सभा के सदस्य हैं, और 6 अक्तूबर को अथवा उसके पश्चात् प्रान्तीय विधान-सभाओं के भी सदस्य थे रिक्त

[श्री महावीर त्यागी]

समझे जायेंगे। उन लोगों का क्या होगा जो इस सभा के सदस्य नहीं हैं किन्तु प्रान्तीय विधान-सभाओं के सदस्य हैं और इस काल में इस सभा के सदस्य हो गये हैं? उनकी भी दुहरी सदस्यता हो जायेगी और उनके स्थान रिक्त नहीं समझे जायेंगे।

इस प्रकार यह अनुच्छेद भी थोड़ा बहुत अपूर्ण ही है। मेरा यह सुझाव है कि मेरे सदस्यों के मामले भी इसके अन्तर्गत आ जाने चाहिये। जो लोग आज इस संविधान सभा के सदस्य नहीं हैं, अथवा जो लोग 6 अक्तूबर को अथवा उसके पश्चात् सदस्य नहीं थे, किन्तु 6 अक्तूबर को, उदाहरण के लिये मैं कहता हूं कि संयुक्त प्रान्त के विधान-मंडल के सदस्य थे चाहे एक ऐसा सदस्य हो अथवा अधिक, क्योंकि संख्या कोई अर्थ नहीं रखती और इस बीच संविधान सभा के लिये निर्वाचित हो गये हैं, उनके मामले अन्त में प्रस्तावित मसौदे के उपबन्धों के अन्तर्गत नहीं आयेंगे।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** ये शब्द उन्हीं मामलों के सम्बन्ध में रखे गये हैं जो माननीय सदस्य महोदय की दृष्टि में हैं।

***श्री महावीर त्यागी:** ऐसा कोई सदस्य प्रान्तीय विधान-सभा का सदस्य पहले से ही होगा और फिर वह इस सभा का सदस्य हो जायेगा। इस काल में जो व्यक्ति इस सभा का सदस्य हो जायेगा उस का मामला वैध रूप से इसके अन्तर्गत नहीं आयेगा, किन्तु सम्भव है कि ऐसे कोई मामले पैदा ही न हों।

मैं आपका ध्यान इस ओर भी आकृष्ट करना चाहता हूं कि मसौदा-समिति ने इस आशय का उपबन्ध रखा है कि सभा का अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष बना रहेगा। यह भी कोई अच्छी भावना नहीं है। आखिर जब सभा के लगभग सौ ऐसे सदस्यों के स्थान जो प्रान्तीय विधान-सभाओं के भी सदस्य हैं, रिक्त घोषित कर दिये जायेंगे और उन स्थानों के लिये अन्य लोग निर्वाचित होंगे और जब इस सभा का एक तिहाई भाग बदला जा रहा है, तो आप उस पर पुराने ही अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को क्यों थोप रहे हैं? हमें केवल यह कहना चाहिये कि संसद के समवेत होने के प्रथम दिन तक अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष बने रहेंगे। उसके पश्चात् संसद को अपने अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष का नया निर्वाचन करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिये। जब संसद का एक सत्र समाप्त हो जाता है और दूसरा सत्र निर्वाचन के पश्चात् होता है तो इसी प्रथा का अनुसरण किया जाता है। संसद सबसे पहले अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को ही निर्वाचित करती है। साधारणतया पुराने ही अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष निर्वाचित होते हैं। किन्तु यह रस्म पूरी की जाती है। बिना किन्हीं व्यक्तियों पर आक्षेप किये हुए मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि यह सिद्धान्ततः गलत है कि वर्तमान अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को संसद पर थोपा जाए और मुझे आशा है कि उनका पुनर्निर्वाचन किया जायेगा। संविधान में यह उपबन्ध रखने से कि वे बने रहेंगे उन उच्च पदों की प्रतिष्ठा कम हो जाती है। उन पदों पर सभा का पूर्ण विश्वास होता है। यह उचित नहीं है कि स्वतन्त्रता से अपने पदाधिकारी चुनने में संसद के मार्ग में यह सभा बाधा डाले। हमें संसद के सदन के कार्य में बाधा न डालनी चाहिये। उसे सामान्य निर्वाचनों के पश्चात् प्रथम बार समवेत होने पर अपने अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को निर्वाचित करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** आप अधिक समय ले चुके हैं।

***श्री महावीर त्यागी:** मुझे एक प्रश्न पुछने के अतिरिक्त अब और कुछ नहीं कहना है। संविधान-सभा के ऐसे सदस्यों का क्या होगा जो किसी ऐसे प्रान्त से निर्वाचित हुए हों जहां की विधान-सभा विघटित हो गई हो और वहां नये निर्वाचन हो गये हों? थोड़ी देर के लिये मानिये कि बंगाल अथवा संयुक्त प्रान्त में सामान्य निर्वाचन हो गये हैं और वहां के प्रतिनिधि इस सभा में हैं। हमने उनके यहां बने रहने के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे हैं किन्तु क्या वे सामान्य निर्वाचनों के पश्चात् भी बने रहेंगे, अथवा क्या उनसे अपने प्रान्तों की नवनिर्वाचित विधान-सभाओं का विश्वास प्राप्त करने को कहा जायेगा? यह भी स्पष्ट किया जाए।

***श्री सीता राम एस. जाजू** (मध्य भारत): श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खण्ड (3) में 'an Indian State' (किसी देशी राज्य) शब्दों के पश्चात् 'or Union of State; or a member who holds any office of profit under any Government other than the ministerial office in the Union Government' अथवा राज्य-संघ; (अथवा ऐसा सदस्य जो संघ-सरकार के अधीन मंत्री-पद के अतिरिक्त किसी अन्य सरकार के अधीन किसी लाभ-पद पर था) शब्द प्रविष्ट किये जाएं।"

मेरा संशोधन बहुत ही सादा और छोटा है। वास्तव में इस संशोधन में जो सिद्धान्त सन्निहित है उसे यह संविधान सभा संविधान के अनुच्छेद 83 में स्वीकार कर चुकी है। मेरी यह धारणा है कि इस अन्तर्कालीन उपबन्धों में इसे प्रविष्ट कर लिया जाये ताकि इनके पारित होने पर किसी प्रकार का भ्रम न रह जाए। यद्यपि संविधान के अनुच्छेद 82 में हम यह स्वीकार कर चुके हैं कि दुहरी सदस्यता समाप्त की जाती है, किन्तु किसी भ्रम की सम्भावना न रहने देने के लिये हम इसे यहां भी रख रहे हैं। इसलिये मुझे आशा है कि आगे के भाग के सम्बन्ध में भी किसी भ्रम की सम्भावना न रहने देने के लिये माननीय डॉ. अम्बेडकर इस संशोधन को स्वीकार कर लेंगे।

***अध्यक्ष:** मि. करीमुद्दीन—अनुपस्थित हैं। श्री गुरुव रेड्डी—अनुपस्थित हैं। श्री सिधवा आपने एक संशोधन की सूचना दी थी, जिसके बारे में मैंने वचन दिया था कि वह इनके साथ उठाया जायेगा। मेरे विचार से इस प्रसंग में अब वह नहीं उठता।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): जी हां।

***अध्यक्ष:** और कोई संशोधन नहीं है। अब संशोधनों तथा अनुच्छेद पर बहस हो सकती है।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): मैं प्रार्थना करता हूं कि अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।

***अध्यक्ष:** सम्भव है कि कुछ सदस्य बोलना चाहें। मैं उन सदस्यों में से जो अभी तक नहीं बोले हैं केवल एक दो को बोलने की आज्ञा दूंगा। जिन सदस्यों ने संशोधन उपस्थित नहीं किये हैं उनमें से क्या कोई सज्जन बोलना चाहते हैं?

***श्री मोहम्मद ताहिर:** (बिहार: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में कुछ कठिनाई का अनुभव कर रहा हूं और मैं उसे सभा के सामने रखना चाहता हूं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस अनुच्छेद का खण्ड (1) उसका एक सारवान अंश है। उसमें कहा गया है कि:–

"जब तक कि इस संविधान के उपबन्धों के अधीन संसद के दोनों सदन सम्यक रूप से गठित न हो जाएं तथा प्रथम सत्र में अधिवेशन होने के लिये आहूत न हो जाएं तब तक वह निकाय, जो भारत–डोमिनियन की संविधान–सभा के रूप में इस संविधान के प्रारम्भ के ठीक पहले कृत्यकारी था, इस संविधान के उपबन्धों द्वारा संसद को दी गई सब शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करेगा।"

इस अनुच्छेद के इस सारवान अंश का यह अर्थ है कि जो निकाय इस समय कृत्यकारी हैं अर्थात् जिस निकाय में इस समय इस सभा के सदस्य हैं, वह संविधान के प्रारम्भ होने पर संसद हो जायेगा।

विधि के सारवान अंश का अर्थ यह होता है कि वह आगे के उपबन्धों पर लागू होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि खण्ड (1) जो इस अनुच्छेद का सारवान अंश है इस अनुच्छेद के अन्य उपबंधों पर, अर्थात खण्ड (2) और (3) पर, लागू होगा। किन्तु हम यहां देखते हैं कि बात बिल्कुल इसके विपरीत है। सब कुछ उलट–पलट दिया गया है। वास्तव में खण्ड (3) इस अनुच्छेद के सारवान अंश पर लागू होता है, जो मेरे विचार से अवैध है क्योंकि खण्ड (1) में कहा गया है कि यह निकाय भारत डोमोनियन की संविधान सभा के रूप में कार्य करेगा, जबकि खण्ड (3) के अधीन संविधान–सभा पूर्णत: तो नहीं किन्तु अंशत: विघटित होगी। वास्तव में खण्ड (3) के फलस्वरूप एक एक भाग कर के इस सभा का पूर्णत: विघटन हो जायेगा। मेरे विचार से खण्ड (3) की आवश्यकता नहीं है और इसे इस अनुच्छेद में प्रविष्ट न करना चाहिये।

जब यह सभा डोमिनियन संसद का रूप धारण कर लेगी तो यह प्रश्न उठेगा कि कुछ सदस्य डोमिनियन संसद तथा प्रान्तीय विधान सभा दोनों के सदस्य होंगे। इसके लिये श्रीमान, हम एक अनुच्छेद पारित कर चुके हैं। मैं सभा का ध्यान अनुच्छेद 82 की ओर आकृष्ट करता हूं जिसकी व्याख्या मेरे एक मित्र कर चुके हैं। कुछ सदस्यों के इस सभा के तथा प्रान्तीय विधान–मंडल दोनों के सदस्य होने पर जो समस्या उठ खड़ी होगी उसे इस अनुच्छेद में हल किया गया है। किन्तु

खण्ड (3) के समान किसी खण्ड को प्रविष्ट करने से सारा संविधान गंदा हो जायेगा। इसलिये मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर इस पर विचार करेंगे। इस अनुच्छेद में जो उपखण्ड रखे गये हैं वे उसके सारवान अंश पर लागू नहीं होने चाहियें।

इन शब्दों के साथ श्रीमान, मैं समाप्त करता हूं।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर, क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): श्रीमान, इस विषय के सम्बन्ध में अपनी बातें कहने के पूर्व मैं चाहता हूं कि आप की आज्ञा से संशोधन संख्या 195 के खण्ड (3) में 'thereafter' (तत्पश्चात्) शब्द के पश्चात् तथा 'at any time before...' (इस संविधान के प्रारम्भ से पहले) शब्दों के पूर्व आने वाला शब्द 'becomes' (होता है) निकाल दिया जाए। यह शब्द अनावश्यक है।

विभिन्न संशोधनों के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि उन में से केवल तीन पर विचार करने की आवश्यकता है। पहला संशोधन मेरे मित्र श्री कामत का है, जो यह कहते हैं कि इस अनुच्छेद के खण्ड 4 में केन्द्र के उपाध्यक्ष को बनाये रखने के सम्बन्ध में तो उपबन्ध है किन्तु प्रान्तों के अध्यक्षों को बनाये रखने के बारे में कोई उपबन्ध नहीं है। मैं तथा मसौदा-समिति यह जानते थे कि इन उपबन्धों में यह विभेद है और इसे दूर करने के लिये हम एक संशोधन भी उपस्थित करना चाहते थे। इसलिये मैं श्री कामत को विश्वास दिलाता हूं कि मसौदा-समिति इस विभेद को नहीं रहने देगी और एक संशोधन द्वारा इस त्रुटि को दूर करेगी।

दूसरा प्रश्न जिसमें कुछ सार है, मेरे मित्र श्री मुनिस्वामी पिल्ले ने उठाया था। वह अन्तर्कालीन संसद में अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में था। स्थिति इस प्रकार है। इस सभा में इस समय 310 सदस्य हैं और अन्तर्कालीन संसद में भी 310 सदस्य ही रहेंगे। भावी संसद में अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में यह सिद्धान्त अपनाया गया है कि उनका प्रतिनिधित्व जनसंख्या के आधार पर होगा और इस सिद्धान्त के अनुसार इन 310 स्थानों में से 45 स्थान उन को मिलने चाहिये। आज उन्हें केवल 28 स्थान प्राप्त हैं। इस अनुच्छेद में यह स्पष्ट उपबन्ध रख दिया गया है कि इस समय उनके पास जो 28 स्थान हैं वे कम नहीं किये जायेंगे। जहां तक जिन 45 स्थानों को उन्हें पाने का अधिकार है और इस समय के उनके 28 स्थानों के अन्तर का सम्बन्ध है, मेरे विचार से राष्ट्रपति को नियमों के अनुकूलन के लिये तथा उनमें रूप-भेद करने के लिये पर्याप्त शक्ति दी गई है और वे नवीन अनुच्छेद 312 च के उपबन्धों के अधीन इस कमी को यथा सम्भव पूरा कर सकते हैं।

अब मैं श्री पातस्कर का संशोधन उठाता हूं। जहां तक मैं उनके आशय को समझ पाया हूं, उनके संशोधन में तथा अनुच्छेद के मसौदे में सिद्धान्ततः कोई अन्तर नहीं है। मेरे उपस्थित किये हुए अनुच्छेद 311 में तथा श्री पातस्कर द्वारा उपस्थित किये हुए संशोधन में यही कहा गया है कि दुहरी सदस्यता को समाप्त किया जाये। प्रश्न केवल यह है कि इस उद्देश्य की पूर्ति किस प्रकार की जाए। इस अनुच्छेद के उपबन्धों में यह कहा गया है कि संविधान के प्रारम्भ होने पर ही स्थान रिक्त

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

होंगे। यदि हम यह स्वीकार करते हैं कि संविधान 26 जनवरी को प्रवर्तन में आयेगा तो वे 25 जनवरी, 1950, तक सदस्य बने रहेंगे। किन्तु इस प्रकार जो स्थान रिक्त होंगे उनके लिये संविधान के प्रारम्भ के पूर्व किसी समय निर्वाचन हो सकते हैं। इससे जब संविधान सभा अन्तर्कालीन संसद के रूप में समवेत होगी उसके सदस्यों की संख्या एकाएक कम नहीं हो जायेगी। मेरे मित्र पातस्कर यह चाहते हैं कि संविधान के प्रारम्भ होने पर स्थान रिक्त हों और उसके एक मास पश्चात् लोगों को स्थानों से हटाया जाए। अन्तर केवल इतना है। मेरे विचार से यह प्रश्न केवल इसके सम्बन्ध में है कि हम स्थानों को कब से रिक्त घोषित करें और कब से लोगों को उनसे हटायें। हमने किसी सदस्य के बने रहने के सम्बन्ध में 6 अक्तूबर, 1949, की तिथि इस लिये रखी है कि संविधान-सभा का यह सत्र इसी तिथि से आरम्भ हुआ है। मैं इस पर जोर नहीं देना चाहता कि 6 अक्तूबर, 1949, की तिथि का कोई विशेष महत्व है और मेरे विचार से श्री पातस्कर भी यह नहीं कहेंगे कि अपने संशोधन द्वारा उन्होंने जिस उपबन्ध को प्रस्तुत किया है उसका कोई विशेष महत्व है। जैसा कि मैं कह चुका हूं, सिद्धान्ततः कोई अन्तर नहीं है और हम सभी इस सम्बन्ध में सहमत हैं कि दुहरी सदस्यता न रखनी चाहिये। इसलिये, मेरे विचार से, मैंने जो संशोधन उपस्थित किया है...

***श्री एच.वी. पातस्कर:** मेरे संशोधन द्वारा सदस्यों को स्वयं निर्णय करने का अधिकार मिल जाता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** इससे, मेरे विचार से, बहुत पेचीदगी पैदा हो जायेगी। यदि सदस्यों को स्वेच्छा से निर्णय करने का अधिकार दिया गया तो उससे पेचीदगी पैदा हो जायेगी, क्योंकि सम्भव है कि जिस दोष को हम दूर करना चाहते हैं उसकी पुनरावृत्ति हो। हमें इस सम्बन्ध में सावधान रहना चाहिये कि इस दोष की पुनरावृत्ति न हो। इसलिये मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि अनुच्छेद 311 के उपबन्ध स्वीकार कर लिये जायें।

***श्री राम सहाय** (मध्य भारत): श्री सीताराम जाजू ने जो संशोधन उपस्थित किया है वह कैसा है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** हम जानते थे कि यह प्रश्न उठेगा। इस कारण मैंने अपने संशोधन संख्या 195 में रूपभेद किया और उसमें देशी राज्यों के सम्बन्ध में उपबन्ध रखा। मैंने केवल उन लोगों के सम्बन्ध में उपबन्ध नहीं रखे जो लाभ-पद पर आरूढ़ हैं।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर एक एक करके मत लूंगा। खण्ड (1) के सम्बन्ध में संशोधनों की पहली शृंखला, अर्थात् संशोधन संख्या 142 से लेकर 145 तक, श्री कामत के नाम से है।

प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड 1 में 'until' (जब तक कि) शब्द के पश्चात् (हिन्दी में पहले) 'such time as' (उस समय तक) शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में से 'the body functioning as, (वह निकाय जो कृत्यकारी था) शब्द निकाल दिये जाएं"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में 'Constituent Assembly of the Dominion of India' (भारत डोमीनियन की संविधान सभा) शब्द जहां कहीं आये हों उनके स्थान पर 'Constituent Assembly of India' (भारत की संविधान सभा) शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में खंड (1) में, 'immediately before the commencement of this Constitution shall' (इस संविधान के आरम्भ के ठीक पहले कृत्यकारी था, अन्तर्कालीन संसद होगा) शब्दों के स्थान पर 'shall itself' (अन्तर्कालीन संसद होगा) शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान मैं चाहता हूं कि मेरे संशोधन संख्या 146 पर मसौदा समिति ही विचार करे।

***अध्यक्षः** अब मैं श्री त्यागी के संशोधन संख्या 194 पर मत लेता हूं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (1) के अन्त में यह जोड़ दिया जाए:–

'and shall be known as the Parliament of the Union of India' (और भारतीय संघ की संसद कही जाएगी।)"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** खंड (1) के संबंध में यही संशोधन है। खंड (2) के संबंध में जो संशोधन हैं उन पर अब मैं एक एक करके मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:–

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) में 'rules' (नियमों द्वारा) शब्द के पश्चात् 'which shall as far as practicable, conform to those adopted by the Constituent Assembly' (जो यथा संभव संविधान सभा द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुरूप होंगे) शब्द प्रविष्ट किये जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अब संशोधनों की एक शृंखला आती है। ये संशोधन श्री मुनिस्वामी पिल्ले के नाम से हैं।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लेः** माननीय डॉ. अम्बेडकर ने जो आश्वासन दिया है उसे दृष्टि में रखते हुए मैं नहीं चाहता कि मेरे किसी संशोधन पर मत लिया जाए।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): मैं नहीं चाहता कि इन संशोधनों को, जिनकी सूचना मैंने भी दी थी वापस लिया जाए।

***अध्यक्षः** उन्हें श्री मुनिस्वामी पिल्ले ने उपस्थित किया था। मैं उन पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) उपखंड (क) में 'of any State or other territory' (किसी ऐसे राज्य या अन्य राज्य क्षेत्र के) शब्दों के स्थान पर 'of a Governor's Province or Indian State' (किसी राज्यपाल-प्रांत या देशी राज्य के) शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) के उपखंड (क) में 'not represented' (प्रतिनिधित्व न था) शब्दों के स्थान पर 'not adequately represented' (पर्याप्त प्रतिनिधित्व न था) शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) के उपखंड (क) में 'commencement of this Constitution'

(इस संविधान के प्रारम्भ) शब्दों के पश्चात् (हिंदी में अन्त में) 'having due regard to the proper representation of the Scheduled Castes' (अनुसूचित जातियों के यथोचित प्रतिनिधित्व का ध्यान रखते हुए) शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) में यह नवीन उपखंड प्रविष्ट किया जाए:

'(d) the election of a Speaker or Deputy Speaker for the Parliament'.

(संसद के लिये अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष का निर्वाचन)"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन संख्या 178 के भाग 1 पर मत लेता हूं जो खंड (2) के संबंध में है। प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) में 'President may by rules' (राष्ट्रपति नियमों द्वारा) शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law' (संसद विधि द्वारा) शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब हम खंड (3) के संबंध में उपस्थित किये गये संशोधनों को उठायेंगे।

संशोधन संख्या 155, जो श्री कामत के नाम से है प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) में 'An Indian State' (किसी देशी राज्य) शब्दों के पश्चात् 'or Union of States' (अथवा राज्य-संघ) शब्द प्रविष्ट किये जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के अन्त में 'within the meaning of the Rules of Procedure and Standing Orders of the Constituent Assembly.'

[अध्यक्ष]

(संविधान-सभा के प्रक्रिया-नियमों को तथा स्थाई आदेशों के आशय के अन्तर्गत) शब्द जोड़ दिये जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अगला संशोधन, जिस पर मत लेना है, संशोधन संख्या 195 पर संशोधन संख्या 156 है, जिसे श्री मुनिस्वामी पिल्ले ने कुछ रूप भेद के साथ उपस्थित किया है।

प्रस्ताव यह है किः

"संशोधन संख्या 195 में अन्तिम पंक्ति में 'and' (और) से आरम्भ होने वाले सभी शब्द निकाल दिये जाएं और यह जोड़ दिये जायें:

'A member in two Assemblies shall resign his membership in the Legislature of a Governor's province or an Indian State thirty days prior to this Constitution coming into effect.' "

[दोनों सभाओं का सदस्य इस संविधान के प्रारम्भ से तीस दिन पूर्व राज्यपाल प्रांत अथवा देशी राज्य के विधान-मंडल की अपनी सदस्यता का परित्याग कर देगा।]

संशोधन गिर गया।

***श्री एच.वी. पातस्करः** श्रीमान, मेरी प्रार्थना है कि मुझे अपने संशोधनों को वापस लेने की अनुमति प्रदान की जाए।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिये गये।

***अध्यक्षः** अब मैं खंड (3) के संबंध में श्री ब्रजेश्वर प्रसाद तथा श्री सीता राम जाजू के संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है किः

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) में 'a House' (सदन) शब्दों के स्थान पर 'the lower House' (अवर सदन) शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के पश्चात् यह नवीन खंड प्रविष्ट किया जाए:-

'3(a) If a member of the Constituent Assembly of the Dominion of India was on the twenty-sixth day of January, 1950, also a

nominated member of a Legislative Council of a Governor's province, then, as from the date of commencement of this Constitution that person's seat in the said Assembly shall, unless he has ceased to be a member thereof earlier, become vacant, and every such vacancy shall be deemed to be a casual vacancy.' "

[(3क) यदि भारत-डोमिनियन की संविधान-सभा का कोई सदस्य जनवरी, 1950, के छब्बीसवें दिन किसी राज्यपाल-प्रांत की विधान-परिषद् का मनोनीत सदस्य भी था तो इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि से उक्त विधान सभा में व्यक्ति का स्थान यदि उसका उस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त हो गया हो, रिक्त हो जाएगा तथा प्रत्येक ऐसी रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायगी]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) में 'an Indian State' (किसी देशी राज्य) शब्दों के पश्चात् 'or Union of State; or a member who holds any office of profit under any Government other than the ministerial office in the Union Government' (अथवा राज्य-संघ; अथवा ऐसा सदस्य जो संघ सरकार के अधीन मंत्रि-पद के अतिरिक्त किसी अन्य सरकार के अधीन किसी लाभ-पद पर था) शब्द प्रविष्ट किये जाएं।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अब मैं खंड (4) के संबंध में जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उन पर मत लूंगा।

***श्री एच.वी. कामतः** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान, चूंकि माननीय डॉ अम्बेडकर यह आश्वासन दे चुके हैं कि यह विभेद दूर किया जाएगा इसलिये मैं इस पर जोर नहीं देता कि मेरे संशोधन संख्या 161 तथा 162 पर मत लिया जाए।

संशोधन, सभा की अनुमति से, वापस ले लिये गये।

***अध्यक्षः** अब मैं प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन संख्या 178 के दूसरे भाग पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 का खंड (4) निकाल दिया जाए।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 311 के सम्बन्ध में सभी संशोधनों पर मत लिया जा चुका है। अब मैं पहले इस अनुच्छेद के खण्डों पर मत लूंगा।

***श्री महावीर त्यागीः** मेरे संशोधन पर मत नहीं लिया गया है।

***अध्यक्षः** मैंने उस पर मत लिया किन्तु उसके पक्ष में किसी ने मत नहीं दिया।

प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 311 का खंड (1) संविधान का अंग बना लिया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 311 का खंड (2) संविधान का अंग बना लिया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 9 के खंड (3) के स्थान पर संशोधन संख्या 195 आ गया है। संशोधन संख्या 195 की दूसरी पंक्ति से 'होता है' शब्द निकाल दिये गये हैं और शेष अंश पहले के समान ही हैं।

प्रस्ताव यह है किः

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के स्थान पर यह रखा जाएः–

'3(a) If a member of the Constituent Assembly of the Dominion of India was on the sixth day of October, 1949, or thereafter at any time before the commencement of this Constitution a member of a House of the Legislature of a Governor's Province or an Indian State corresponding to any State for the time being specified in Part III of the First Schedule or a Minister for any such State, then as from the date of commencement of this Constitution the seat of such member in the Constituent Assembly shall, unless he has ceased to be a member of that Assembly earlier, become vacant and every such vacancy shall be deemed to be a casual vacancy.' "

[3(क) यदि भारत-डोमीनियन की संविधान-सभा का कोई सदस्य 1949 के अक्तूबर के छठे दिन, अथवा तत्पश्चात् इस संविधान के प्रारम्भ से पहले किसी समय किसी राज्यपाल-प्रांत, अथवा प्रथम अनुसूची के भाग (3) में उल्लिखित किसी राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य के विधान-मंडल के सदन का सदस्य था, अथवा किसी ऐसे राज्य का मंत्री था तो इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर संविधान सभा में ऐसे सदस्य का स्थान, यदि उसका उस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त हो जायेगा तथा प्रत्येक ऐसी रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी।]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के पश्चात् यह नवीन खंड प्रविष्ट किया जाये:–

'3(a) Notwithstanding that any such vacancy in the Constituent Assembly of the Dominion of India as is mentioned in clause (3) of this article has not occurred under that clause, steps may be taken before the commencement of this Constitution for the filling of such vacancy, but any person chosen before such commencement to fill the vacancy shall not be entitled to take his seat in the said Assembly until after the vacancy has so occurred.' "

[3(क) इस बात के होते हुए भी कि भारत डोमीनियन की संविधान सभा में ऐसी कोई रिक्तता, जैसी इस अनुच्छेद के खंड (3) में वर्णित है, उस खंड के अधीन नहीं हुई है इस संविधान के प्रारम्भ से पहले ऐसी रिक्तता की पूर्ति के लिये पग उठाया जा सकेगा किंतु ऐसे प्रारम्भ से पहले उस रिक्तता की पूर्ति के लिये चुने हुए किसी व्यक्ति को उक्त सभा में अपना स्थान ग्रहण करने का हक तब तक न होगा जब तक कि रिक्तता इस प्रकार न हो जाये।]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 311 का खंड (4) संविधान का अंग बना लिया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 311, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 311, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 312-च

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 312-ङ के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाए:–

Provision as to the filling of casual vacancies in the provisional Parliament and provisional legislatures of the States.

'312.F (1) Casual vacancies in the seats of members of the provisional Parliament functioning under clause (1) of article 311 of this Constitution [including vacancies referred to in clauses (3) and (3a) of that article] shall be filled, and all matters in connection with the filling of such vacancies (including the decision of doubts and disputes arising out of, or in connection with elections to fill such vacancies) shall be regulated—

(a) in accordance with such rules as may be made in this behalf by the President, and

(b) until rules are so made, in accordance with the rules relating to the filling of casual vacancies in the Constituent Assembly of the Dominion of India and matters connected therewith in force at the time of the filling of such vacancies or immediately before the commencement of this Constitution, as the case may be, subject to such exceptions and modifications as may be made therein before such commencement by the President of that Assembly and thereafter by the President of the Union:

Provided that where any such seat as is mentioned in this Article is, immediately before it becomes vacant, held by a person belonging to the

Scheduled Castes or to the Muslim or the Sikh community and representing a State for the time being specified in Part I of the First Schedule, the person to fill such seat shall, unless the President of the Constituent Assembly or the President of the Union, as the case may be, considers it necessary or expedient to provide otherwise, be of the same community:

Provided further that an election to fill any such vacancy in the seat of a member representing a State for the time being specified in Part I of the First Schedule, every member of the Legislative Assembly of that State shall be entitled to participate and vote.' "

अन्तर्कालीन संसद तथा राज्यों के अन्तर्कालीन विधान मंडलों में आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के बारे में उपबन्ध।

[312.च (1) इस संविधान के अनुच्छेद 311 के खंड (1) के अधीन कृत्यकारिणी अन्तर्कालीन संसद के सदस्यों के स्थानों में आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति, जिस के अन्तर्गत उस अनुच्छेद के खंड (3) और (3क) में निर्दिष्ट रिक्ततायें भी हैं तथा ऐसी रिक्तताओं की पूर्ति से सम्बद्ध सब विषयों का (जिनके अन्तर्गत ऐसी रिक्तताओं की पूर्ति के लिये निर्वाचनों से उद्भूत या संसक्त शंकाओं और विवादों का विनिश्चय करना भी है) विनियमन—

(क) राष्ट्रपति उस बारे में जो नियम बनायें, उनके अनुसार, तथा

(ख) जब तक इस प्रकार नियम न बने तब तक यथास्थिति भारत डोमीनियन की संविधान-सभा में की आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के समय, अथवा इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले वैसी रिक्तताओं की पूर्ति से तथा तत्संसक्त विषयों से सम्बद्ध प्रवृत्त नियमों में, वैसे प्रारम्भ से पहले उस सभा का सभापति तथा तत्पश्चात् संघ का राष्ट्रपति जो अपवाद और रूप भेद करे उनके अधीन रह कर उन नियमों के अनुसार, होगा:

परन्तु जहां ऐसा कोई स्थान, जैसा कि इस खंड में वर्णित है, रिक्त होने से ठीक पहले ऐसे व्यक्ति द्वारा धारित था जो अनुसूचित जातियों का अथवा मुस्लिम या सिख समुदाय का है तथा यथास्थिति किसी प्रांत का अथवा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उल्लिखित किसी राज्य का प्रतिनिधित्व करता रहा है वहां जब तक कि यथास्थिति संविधान सभा का सभापति अथवा भारत का राष्ट्रपति

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

अन्यथा उपबन्ध करना आवश्यक या वांछनीय न समझे तब तक ऐसे स्थान की पूर्ति करने वाला व्यक्ति उसी समुदाय का होगा:

परन्तु यह और भी कि किसी प्रांत या प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उल्लिखित किसी राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्य के स्थान में ऐसी किसी रिक्तता की पूर्ति करने के लिये निर्वाचन में यथास्थिति उस प्रांत की या तत्स्थानी राज्य की या उस राज्य की विधान-सभा के प्रत्येक सदस्य को भाग लेने और मत देने का हक होगा।]

अब मैं अपना संशोधन संख्या 205 उपस्थित करूंगा जिसमें दूसरी व्याख्या को रखने का प्रस्ताव रखा गया है।

"सूची 3 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312-च के खंड (1) की व्याख्या के स्थान पर यह व्याख्या रखी जाए:

'*Explanation*—For the purposes of this clause—

(a) all such castes, races or tribes or parts of or groups within castes, races or tribes as are specified in the Government of India (Scheduled Castes) Order, 1936, to be Scheduled Castes in relation to any Province shall be deemed to be Scheduled Castes in relation to that Province or the corresponding State until a notification has been issued by the President under clause (1) of article 300A specifying the Scheduled Castes in relation to that corresponding State;

(b) all the Scheduled Castes in any Province or State shall be deemed to be a single community.' "

[*व्याख्या*–इस खंड के प्रयोजन के लिए–

(क) जो सब जातियों, मूलवंश या आदिमजातियों अथवा जातियों, मूलवंशों या आदिमजातियों को जो भाग या में के जो यूथ भारत-शासन (अनुसूचित जाति) आदेश 1936 में किसी प्रांत के संबंध में अनुसूचित जातियों के नाम से उल्लिखित हैं वे तब तक उस प्रांत अथवा तत्स्थानी राज्य के संबंध में अनुसूचित जातियां समझी जायेंगी जब तक कि उस तत्स्थानी राज्य के संबंध में अनुच्छेद 300-क के खंड (1) के अधीन अनुसूचित जातियों को उल्लिखित करने की अधिसूचना राष्ट्रपति द्वारा न निकाल दी गई हो;

(ख) किसी प्रांत या राज्य में की सब अनुसूचित जातियां एक ही समुदाय समझी जायेंगी।]

अब मैं उपखंड (2) उठाता हूं:

"(2) Casual vacancies in the seats of members of a House of the provisional Legislature of a State functioning under article 312 or article 312C of this Constitution shall be filled, and all matters in connection with the filling of such vacancies (including the decision of doubts and disputes arising out of or in connection with elections to fill such vacancies) shall be regulated in accordance with such provisions governing the filling of such vacancies and regulating such matters as were in force immediately before the commencement of this Constitution subject to such exceptions and modifications as the President may by order direct."

[(2) अनुच्छेद 312 या अनुच्छेद 312-ग के अधीन कृत्यकारी राज्य के विधान-मंडल के सदन में के सदस्यों के स्थानों में आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति तथा ऐसी रिक्तताओं की पूर्ति से संसक्त सब विषयों का (जिनके अन्तर्गत ऐसी रिक्तताओं की पूर्ति के लिये निर्वाचनों से उद्भूत या संसक्त शंकाओं और विवादों का विनिश्चय भी है) विनियमन, ऐसी रिक्तताओं की पूर्ति को शासित तथा ऐसे विषयों का विनियमन करने वाले ऐसे उपबन्धों के अनुसार, जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले प्रवृत्त थे, ऐसे अपवादों और रूप भेदों के अधीन रहकर, जैसे राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्देशित करे, होगा।]

मेरे विचार से इस संबंध में किसी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है। ये उपबन्ध स्पष्ट हैं। यदि बहस में कोई प्रश्न उठाया गया तो मुझ से जैसी भी व्याख्या बन पड़ेगी मैं करूंगा।

***अध्यक्षः** इस संबंध में चार या पांच संशोधन हैं? संशोधन संख्या 179, श्री शिब्बन लाल सक्सेना।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** अध्यक्ष महोदय, छापे की कुछ गलतियां रह गई हैं। मैं अपना संशोधन इस रूप में उपस्थित करता हूं–

"सूची 3 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312-च के खंड (1) से उसका पहला परन्तुक निकाल दिया जाए।"

मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 3 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312-च के खंड (2) 'as the President may by order direct' (जैसे राष्ट्रपति

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

आदेश द्वारा निर्देशित करे) शब्दों के स्थान पर 'as the Parliament may by law provide' (जैसे संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे) शब्द रखे जाएं।"

श्रीमान, इस अनुच्छेद में आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के संबंध में उपबन्ध हैं और खंड (1) के परन्तुक का आशय यह है कि इस सभा में जिन सदस्यों के स्थान रिक्त हों उन्हीं के समुदाय के लोग उन्हें भरें। मैं चाहता हूं कि यह परन्तुक निकाल दिया जाए। मैं मुख्यत: इस कारण इस परन्तुक को निकालना चाहता हूं: सभी अल्पसंख्यक समुदायों की सहमति से हमने संविधान में यह उपबन्धित किया है कि अनुसूचित जातियों के अतिरिक्त अन्य लोगों के लिये किसी प्रकार के स्थान रक्षित नहीं रखे जायेंगे। इस परन्तुक के फलस्वरूप अनुसूचित जातियों को कोई लाभ नहीं होगा। अनुसूचित जातियों को उनकी जनसंख्या के आधार पर इस सभा में लगभग 45 स्थान मिलने चाहिये थे किन्तु उन्हें लगभग 28 स्थान ही प्राप्त हैं। यदि इस परन्तुक का अक्षरश: अनुसरण किया गया तो उनके प्रति न्याय नहीं होगा।

श्रीमान, अन्य लोगों के संबंध में हम यह निर्णय कर चुके हैं कि सामान्य निर्वाचनों में उनके लिये कोई स्थान रक्षित नहीं किये जाने चाहिये। यह मेरी समझ में नहीं आता कि यह क्यों विचार किया जाता है कि प्रांतों में विधान-मंडलों के सदस्य उनके प्रति न तो उदारता ही दिखायेंगे और न न्याय ही करेंगे। यदि देश के निरक्षर लोगों पर इसके लिये विश्वास किया जाता है कि वे अल्पसंख्यक समुदायों के लोगों को यथोचित अनुपात में निर्वाचित करेंगे तो प्रांतों के विधान-मंडलों के सदस्यों का और भी अधिक विश्वास किया जाना चाहिये। वे ज्ञानवान तथा उत्तरदाई लोग होंगे और सभी प्रश्नों पर विचार करेंगे तथा अल्पसंख्यकों को यथोचित संख्या में ही नहीं बल्कि उससे कहीं अधिक संख्या में निर्वाचित करने का प्रयास करेंगे। चूंकि प्रांतीय विधान सभाओं के अधिकांश सदस्य कांग्रेसजन होंगे, और कांग्रेस संसदीय मंडली खड़े किये जाने वाले उम्मीदवारों की सूची तैयार करेगी, इसलिये मुझे विश्वास है कि वे सभी अल्पसंख्यक समुदायों के प्रति न्याय करेंगे। इसलिये श्रीमान, मैं नहीं चाहता कि हमारे संविधान में यह विकृत परन्तुक रहे। मुसलमानों, सिखों तथा अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के प्रति कांग्रेस की संसदीय मंडली तथा प्रांतीय विधान-सभायें अवश्य ही बहुत अच्छा व्यवहार करेंगी। इस परन्तुक के फलस्वरूप वे उतने अच्छे व्यवहार की आशा नहीं कर सकते, क्योंकि उसके अधीन उन्हें केवल वही सीमित स्थान प्राप्त होंगे जो उन्हें इस समय प्राप्त हैं। अनुसूचित जातियों के लिये तो यह व्यवस्था ही है क्योंकि उसके अधीन इस सभा के लिये अनुसूचित जातियों के सदस्य तभी निर्वाचित किये जा सकेंगे जब अनुसूचित जातियों के स्थान रिक्त होंगे। इससे मंत्रि-प्रतिनिधि-मंडल ने उनके प्रति जो न्याय किया था वह चिरस्थाई हो जायेगा। मंत्रि-प्रतिनिधि-मंडल ने उन्हें विधान-मंडलों में प्रतिनिधित्व के अनुपात से स्थान प्रदान किये। इसलिये खंड (1) के परन्तुक को निकाल देना चाहिये क्योंकि हमारी दृष्टि में जो उद्देश्य है उसकी इससे पूर्ति नहीं होगी। मेरे विचार से मुसलमानों और सिखों की यह धारणा नहीं है कि केन्द्रीय विधान मंडल के लिये जो उप-निर्वाचन होंगे उनमें उन्हें यथोचित स्थान प्राप्त नहीं होंगे। अनुसूचित जातियों के

लोग भी यह नहीं चाहते कि जो स्थान उन्हें इस समय प्राप्त है वही उनके पास रहे। वे अधिक स्थान चाहते हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति इस उपबन्ध को निकालने से ही हो सकती है।

अपने संशोधन संख्या 180 द्वारा मैं आकस्मिक रिक्तताओं के संबंध में जो शब्द, अर्थात् "जैसे राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्देशित करे" शब्द प्रयुक्त हैं उनके स्थान पर "जैसे संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे" शब्दों को रखना चाहता हूं। इसे मैं उन्हीं कारणों से उपस्थित कर रहा हूं जिन्हें मैं पहले संशोधन के संबंध में बता चुका हूं। मेरे विचार से स्थानों को भरने के बारे में नियम बनाने के संबंध में अन्तिम प्राधिकार संसद को ही प्राप्त होना चाहिये। इस संबध में राष्ट्रपति को भी पूर्ण अधिकार प्राप्त नहीं होना चाहिये। जो सभा संविधान बना रही है वही संसद भी होगी। आखिर वह आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के नियमों को मंजूर क्यों न करे? मेरे विचार से न्यायोचित यही है। राष्ट्रपति के स्थान पर यह अधिकार संसद को प्राप्त होना चाहिये।

श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले: श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 3 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312 च के खंड (1) के पहले परन्तुक में 'the Scheduled Castes or' (अनुसूचित जातियों का अथवा) शब्दों के पश्चात् 'Scheduled Tribes' (अनुसूचित आदिम-जातियों का) शब्द प्रविष्ट किये जाएं।"

डॉ. अम्बेडकर ने जो नवीन संशोधन उपस्थित किया है उसमें उन्होंने स्पष्ट कर दिया है कि उसके अन्तर्गत सभी जातियां, मूलवंश, आदिम-जातियां अथवा जातियों में के यूथ आ जाते हैं। ताकि नवीन संशोधन में जो कुछ कहा गया है वह अनुच्छेद के अनुरूप हो सके इसलिये अच्छा यह होगा कि "अनुसूचित जातियों" शब्दों के पश्चात् "अनुसूचित आदिम-जातियों" शब्द रखे जाएं। इस अनुच्छेद के संबंध में मैं सामान्यत: यह निवेदन करना चाहता हूं कि अनुच्छेद 311 पर विचार-विमर्श करते समय मैं यह स्पष्ट कर चुका हूं कि अन्तर्कालीन संसद में अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है। मैं डॉ. अम्बेडकर को यह स्पष्ट करने के लिये धन्यवाद देता हूं कि राष्ट्रपति इस अपर्याप्त प्रतिनिधित्व पर विचार करेंगे और अनुसूचित जातियों को जितने स्थान मिलने चाहिये उतने स्थान उनको प्रदान करेंगे। मैं पहले परन्तुक के अन्तिम वाक्य का स्वागत करता हूं, जो इस प्रकार है: "जब तक कि यथा स्थिति संविधान-सभा का सभापति अथवा भारत का राष्ट्रपति अन्यथा उपबन्ध करना आवश्यक या वांछनीय न समझे तब तक ऐसे स्थान की पूर्ति करने वाला व्यक्ति उसी समुदाय का होगा।" आरम्भ में यह विचार किया गया था कि चूंकि संविधान सभा में हमने केवल 28 सदस्य लिये थे इसलिये अन्तर्कालीन संसद में भी केवल 28 ही सदस्य लिये जायेंगे। बाद में यह विचार किया गया कि यदि किसी समुदाय के किसी सदस्य का स्थान रिक्त हो तो उसी समुदाय का एक व्यक्ति निर्वाचित होगा। यह एक कमी थी। प्रश्न यह था कि क्या अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ाने की भी संभावना थी। इस संशोधन के फलस्वरूप, अथवा जो उपबन्ध रखा गया है उसके फलस्वरूप, मुझे विश्वास है कि अनुसूचित जातियों को जितने स्थान मिलने चाहिये उतने स्थान उनको मिल जायेंगे। इन शब्दों के साथ मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का समर्थन करता हूं।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** (पूर्वी पंजाब: जनरल): श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि: "सूची 3 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312'च के खंड (1) के पहले परन्तुक में से 'or to the Muslim or the Sikh Community' (अथवा मुस्लिम या सिख समुदाय का) शब्द निकाल दिये जाएं और 'be of the same community' (उसी समुदाय का होगा) शब्दों के स्थान पर 'belong to the Scheduled Caste' (अनुसूचित जाति का होगा) शब्द रखे जाएं।"

जहां तक आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति का सम्बन्ध है मैं यह चाहता हूं कि प्रान्तों तथा केन्द्र के विधान मंडलों के सम्बन्ध में जिन आधारभूत सिद्धान्तों को हमने स्वीकार किया है उनका अनुसरण किया जाये। हमने यह निर्णय किया है कि पृथक निर्वाचन-मंडलों को समाप्त करके उनका स्थान सामान्य निर्वाचन-मंडल ले लेंगे और मुसलमान तथा सिखों के लिये स्थान रखित नहीं रखे जायेंगे तथा अनुसूचित जातियों के लिए स्थान रक्षित किये जायेंगे और वे सामान्य स्थानों के लिये भी खड़े हो सकते हैं। यदि इस सिद्धान्त का अनुसरण किया जाता है तो मैं जिस संशोधन को उपस्थित कर रहा हूं वह तर्कयुक्त कहा जाता है। यह तर्क मेरी समझ में आता है कि चूंकि पुरानी सभा ही आगामी विधान-सभा का रूप धारण करेगी, इसलिये विभिन्न समुदायों का प्रतिनिधित्व पूर्ववत रहे। किन्तु यह तर्क न्याय संगत नहीं है और साथ ही इस सिद्धान्त का भी परित्याग किया गया है। पहली बात यह है कि विभिन्न समुदायों के वर्तमान सदस्य पृथक निर्वाचन-मंडलों के आधार पर निर्वाचित किये गये थे, जिन्हें दूसरे परन्तुक में समाप्त कर दिया गया है, क्योंकि उसमें स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि राज्य की विधान सभा के प्रत्येक सदस्य को निर्वाचन में भाग लेने तथा मत देने का अधिकार होगा जिसका अर्थ यह है कि आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के लिये हमने पृथक निर्वाचन-मंडलों के स्थान पर संयुक्त निर्वाचन-मंडलों के सिद्धान्त को अपनाया है। यदि इस परन्तुक को इसी रूप में रहने दिया गया तो इसका अर्थ यह होगा कि मुसलमानों और सिखों को भी, आकस्मिक रिक्तताओं के होने पर, सामान्य स्थानों के लिये खड़े होने का अधिकार होगा। इस सम्बन्ध में भी इस परन्तुक में मूल सिद्धान्त का खण्डन किया गया है। जब हमने दो आधारभूत सिद्धान्तों का अर्थात् पृथक निर्वाचन क्षेत्रों के सिद्धान्त का और सिखों और मुसलमानों को सामान्य स्थानों के लिये खड़े होने की आज्ञा देने के सिद्धान्त का, परित्याग किया है तो समझ में नहीं आता कि सिखों तथा मुसलमानों के लिये जगहें रक्षित न रखने के सिद्धान्त को प्रभाव में क्यों नहीं लाया जाता। जहां तक स्थानों को रक्षित रखने का सम्बन्ध है, हम यह जानते हैं कि इस सभा के सभी समझदार मुसलमान तथा सिखों ने स्वयं इस व्यवस्था का परित्याग किया। यह नहीं कहा जा सकता कि इस सभा ने उन्हें यह निर्णय करने के लिये बाध्य किया। मुसलमानों में दो वर्ग थे। जो लोग पृथक निर्वाचन-मंडल चाहते थे उन्होंने इस सभा में अपने प्रस्ताव रखे और इस व्यवस्था का स्वेच्छा से परित्याग नहीं किया। किन्तु उनमें ऐसे लोग भी थे जिन्होंने आगे बढ़कर कहा कि उन्हें रक्षणों की आवश्यकता नहीं है। इन लोगों को इस उपबन्ध से सख्त चोट पहुंचेगी। सिखों ने भी यही किया। उन्होंने रक्षणों का स्वेच्छा से परित्याग किया। अब इस पूर्व स्वीकृत सिद्धान्त का परित्याग करने से सिखों को हर्ष नहीं होगा।

यदि यह संविधान 1947 में बनता तो मैं यह कह सकता हूं कि मुसलमानों तथा सिखों के लिये रक्षण रखे जाते। पिछले दो वर्षों में हमें जो अनुभव हुआ है उसकी हमें उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। अब इस व्यवस्था को बनाये रखना बिल्कुल गलत है और मैं सभा से प्रार्थना करता हूं कि वह उसी सिद्धान्त को स्वीकार करे जो उसने आगामी निर्वाचनों के सम्बन्ध में अपनाया है, अर्थात् उसे मुसलमानों और सिखों के लिये स्थान रक्षित न रखने के सिद्धान्त को अपनाना चाहिये। यदि हमारे मुसलमान तथा सिख मित्र यह चाहते हैं कि सिखों ओर मुसलमानों के जो स्थान रिक्त हों उनके लिये उन्हें समुदायों के लोग खड़े हों तो इसकी व्यवस्था एक प्रथा द्वारा की जाये। मैं यह नहीं चाहता कि उन्हें कोई स्थान न मिले किन्तु मैं यह अवश्य चाहता हूं कि स्थानों के रक्षण के सिद्धान्त का उल्लेख करके जिसका सिख और मुसलमान स्वयं परित्याग कर चुके हैं, इस संविधान को कुरूप न बनाया जाये।

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करती हूं कि:

> "सूची 3 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312-च के खण्ड (1) के पहले परन्तुक में, 'Muslim or the Sikh Community' (मुस्लिम या सिख समुदाय) शब्दों के स्थान पर 'Muslim, Christian, Sikh Community or by a woman' (मुस्लिम, ईसाई, सिख, समुदाय का है अथवा कोई स्त्री है) शब्द रखे जायें और उक्त परन्तुक के अन्त में 'or sex, as the case may be' (अथवा लिंग, यथास्थिति) शब्द रखे जायें।"

श्रीमान, इस संशोधन को उपस्थित करते हुए मैं आत्म-लाघव का अनुभव कर रही हूं और मैं यह भी अनुभव करती हूं कि इसकी थोड़ी बहुत निन्दा भी की जायेगी। किन्तु मेरी यह धारणा है कि चाहे जो हो मुझे अपनी बात कहनी ही चाहिये। इस समय जो परन्तुक विचाराधीन है उसमें यह उपबन्धित है कि अन्तर्कालीन संसद में जो आकस्मिक रिक्तताएं होंगी उनमें से जो स्थान सिख अथवा मुसलमान समुदाय के होंगे उनके लिये उन्हीं समुदायों के लोग खड़े किये जायेंगे। अपने संशोधन द्वारा मैंने यही व्यवस्था महिलाओं के लिये भी करने का प्रस्ताव रखा है। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहती हूं कि महिलाओं को स्थानों के रक्षण की आवश्यकता नहीं है कि किन्तु इस सभा के सामने मैं यह सुझाव रखना चाहती हूं कि इस समय इस सभा में जितनी महिलाएं हैं उनमें से यदि किसी का स्थान रिक्त हुआ तो उसके लिये महिला ही खड़ी की जाए। पहले भी इस सभा में आकस्मिक रिक्तताएं हुई हैं। अभी तक तीन महिलाओं के स्थान रिक्त हुए हैं; जिनमें से एक स्वर्गवासी श्रीमती सरोजिनी नायडू थीं; दूसरी श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित थीं और तीसरी श्रीमती मालती चौधरी थीं। इन तीन महिलाओं को कई कारणों से इस सभा से जाना पड़ा। श्रीमती सरोजिनी नायडू की पदपूर्ति तो न कोई पुरूष कर सकता है और न कोई स्त्री। श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित बहुत योग्य हैं और श्रीमती मालती चौधरी

[श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी]

भी सुयोग्य हैं। इन महिलाओं के स्थानों पर पुरुष निर्वाचित हुए हैं। जो माननीय सदस्य उनके स्थानों के लिये निर्वाचित हुए हैं उनका मैं अपमान नहीं कर रही हूं, और मुझे विश्वास है कि वह इस सभा के सुयोग्य सदस्य हैं, किन्तु मैं यह अवश्य कहूंगी कि इतनी ही सुयोग्य महिलाएं भी इन स्थानों के लिये निर्वाचित की जा सकती थीं उन्हें खड़े होने के लिये आमंत्रित करना था। चूंकि अब राज्य का स्वरूप ही बदल गया है और अब वह पुलिस राज्य नहीं रह गया है इसलिये अब शिक्षा और स्वास्थ्य के समान सामाजिक विषय उसकी विकास योजना में मुख्य स्थान रखते हैं। मेरी यह धारणा है कि महिलाओं का राजनैतिक क्षेत्र में जाना आवश्यक ही नहीं बल्कि अनिवार्य है। इसलिए मेरे विचार से, उनका इस सभा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व होना चाहिये। अपने संशोधन द्वारा मैंने यह प्रस्ताव रखा है कि यदि महिलाओं को अधिक स्थान नहीं दिये जा सकते तो इस सभा में जो आकस्मिक रिक्तताएं हों उनमें से जो स्थान महिलाओं के हों कम से कम उनके लिये वही निर्वाचित की जायें। इन शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन उपस्थित करती हूं।

***अध्यक्षः** इस अनुच्छेद तथा इससे सम्बद्ध संशोधनों पर अब बहस हो सकती है।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, यह अनुच्छेद अन्तर्कालीन संसद तथा राज्यों के अन्तर्कालीन विधान-मंडलों में आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के सम्बन्ध में है। इस अनुच्छेद के उपबन्ध अच्छे हैं किन्तु वे इससे भी अच्छे बनाये जा सकते थे। अनुच्छेद 312-च के मसौदे को सावधानी से पढ़ने से मेरे मस्तिष्क में जो प्रश्न उठे हैं अथवा जो सन्देह उत्पन्न हुए हैं, उनकी ओर मैं अपने माननीय सहकारियों का ध्यान आकृष्ट करता हूं। मैं पहले इस अनुच्छेद के खण्ड (1) के उपखण्ड (ख) की ओर उनका ध्यान दिलाता हूं। उपखण्ड (ख) में यह उपबन्धित है कि संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् आकस्मिक रिक्तताओं का विनियमन जहां तक हमारे पारित किये हुए नियमों के रूपभेदों तथा अपवादों का सम्बन्ध है, संघ का राष्ट्रपति करेगा यह मेरी समझ में आता है कि सभा का अध्यक्ष, संविधान के प्रारम्भ के पूर्व, रुपभेदों और अपवादों को सभा के समक्ष नहीं रखेगा। किन्तु यह मेरी समझ में नहीं आता कि संविधान के प्रारम्भ होने पर तथा अन्तर्कालीन संसद के अपना कार्य आरम्भ करने पर संघ के राष्ट्रपति द्वारा बनाये हुए नियम संसद के विचारार्थ उसके समक्ष क्यों नहीं रखे जायेंगे। इस सभा को स्मरण होगा कि कुछ वर्ष पूर्व हमने जिन नियमों को स्वीकार किया था उनमें जब संशोधन तथा रूपभेद करने का विचार किया गया तो उन रूपभेदों को इस सभा के समक्ष प्रस्तुत किया गया और सभा ने नियमित रूप से उन्हें स्वीकार किया। इसलिये इस प्रसंग में भी, जहां तक संघ के राष्ट्रपति का सम्बन्ध है, जब संसद कार्य करने लगे तो संविधान की तथा लोकतंत्र की दृष्टि से यह आवश्यक है कि जब वह कोई आज्ञप्ति निकालें अथवा नियम बनाये तो उन्हें अन्तर्कालीन संसद के समक्ष रखा जाये। संविधान के प्रारम्भ के पूर्व यह हो सकता है कि राष्ट्रपति को सभा के समक्ष नियम रखने के लिये समय ही न मिले किन्तु संविधान के प्रारम्भ होने पर संघ के राष्ट्रपति को नियमों में किये हुए अपवादों तथा रूपभेदों को अन्तर्कालीन संसद की मंजूरी के लिये उसके विचारार्थ उसके सामने रखना चाहिये। पहली बात यह है।

दूसरी बात इस अनुच्छेद की व्याख्या के प्रथम भाग के सम्बन्ध में है। उसमें कहा गया है कि "किसी राज्य में की सब अनुसूचित जातियां एक ही समुदाय समझी जायेंगी। मैं नहीं चाहता कि केवल अनुसूचित जातियों के लिये ही "समुदाय" शब्द प्रयोग किया जाए। मुझे विश्वास है कि यह सभा मेरे इस कथन से सहमत होगी कि बहुत पहले हम यह निर्णय कर चुके हैं कि अनुसूचित जातियों का एक पृथक समुदाय नहीं है और वे महान हिन्दू समुदाय के अंग हैं इस सभा ने यह निर्णय किया है। इसलिये व्याख्या के इस भाग में, मेरे विचार से एक बहुत ही पुरानी विचार धारा का समावेश है। हम इस मिथ्या धारणा से अभी पीछा नहीं छुड़ा सके हैं कि अनुसूचित जातियों का भी एक समुदाय है। उन्हें उपसमुदाय अथवा हिन्दू समुदाय का एक समूह कहिये। मुझे विश्वास है कि इस सम्बन्ध में इस सभा में सभी लोग सहमत होंगे इसलिये मैं मसौदा-समिति से, तथा इस सभा से, प्रार्थना करता हूं कि व्याख्या के इस भाग में यथोचित संशोधन किया जाए तो कि अनुसूचित जातियों का हिन्दू समुदाय के अंग के रूप में, न कि एक पृथक समुदाय के रूप में, वर्णन हो।

इसके अतिरिक्त मेरे मित्र पंडित ठाकुरदास भार्गव ने भी एक प्रश्न उठाया है। मेरे विचार से उनके इस कथन में बहुत बल है कि हाल में हमने सिखों और मुसलमानों के लिये कोई रक्षता न रखने के सम्बन्ध में जो निर्णय किये, उन्हें ध्यान में रखते हुए अन्तर्कालीन संसद में इस व्यवस्था को बनाये रखना उचित नहीं है। खण्ड (1) के इस परन्तुक में पर्याप्त रक्षण हैं:

"......जब तक कि यथास्थिति संविधान-सभा का सभापति अथवा भारत का राष्ट्रपति अन्यथा उपबन्ध करना आवश्यक या वांछनीय न समझे तब तक...।'

यह रक्षण है। निस्सन्देह किसी विशेष मामले में वह यह उपबन्धित कर सकता है कि आकस्मिक रिक्तता की पूर्ति कोई ऐसा सदस्य करेगा जो उसी समुदाय का न हो और सिखों और मुसलमानों के लिये स्थान रक्षित नहीं रखे जायेंगे तथा उसका निर्वाचन संयुक्त निर्वाचन-मंडलों के आधार पर होगा। किन्तु मुझे आशा है कि भविष्य में जब कभी आकस्मिक रिक्तताएं होंगी उनकी पूर्ति के समय सभा का अध्यक्ष और संघ का राष्ट्रपति प्रश्न के इस अंग को ध्यान में रखेगा। वास्तव में जनसंख्या के अनुसार मुसलमानों और सिखों को जितने स्थान मिलने चाहिये उनसे अधिक स्थान हम उनमें से सुयोग्य लोगों को दे सकते हैं किन्तु स्थानों के रक्षण तथा पृथक निर्वाचक-मंडलों की जिस व्यवस्था को हम समाप्त कर चुके हैं उसे हम बनाये न रखें और अन्तरिम काल में भी बनाये न रखें। इसलिये मेरी यह इच्छा है कि सभा आज यह स्पष्ट कर दे कि जहां तक मुसलमानों और सिखों के स्थानों में आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति का सम्बन्ध है, जनसंख्या अथवा पृथक निर्वाचन-मंडलों के आधार पर, स्थानों के रक्षण कर कोई विचार नहीं किया जायेगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** पृथक निर्वाचन-मंडलों के सम्बन्ध में कोई उपबन्ध नहीं है।

***श्री एच.वी. कामतः** अनुच्छेद 311 में, जिसे हमने कल पारित किया था, यह कहा गया है कि राष्ट्रपति नियम द्वारा अन्तर्कालीन संसद में उन राज्यों के

[श्री एच.वी. कामत]

प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रख सकता है, जिनका प्रतिनिधित्व नहीं हुआ हो, इत्यादि। सभा को स्मरण होगा कि इस सभा के लिये भी निर्वाचन पृथक निर्वाचन-मंडलों अर्थात सामान्य, मुस्लिम और सिख निर्वाचक-मंडलों के आधार पर निर्वाचन हुआ था। यदि हम किसी अनुच्छेद में यह स्पष्ट नहीं करते हैं कि आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति करने में इस सिद्धान्त का अनुसरण नहीं किया जायेगा तो भविष्य में आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के सम्बन्ध में सन्देह हो सकता है और मंत्रि-प्रतिनिधि-मंडल की योजना का ही अनुसरण किया जा सकता है। इसलिये यह बहुत आवश्यक है कि इस अनुच्छेद में अथवा अन्यत्र हम यह उपबन्धित करें कि कहीं भी पृथक निर्वाचन-मंडल नहीं होंगे और आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के लिये भविष्य में सभी निर्वाचन संयुक्त निर्वाचन-मंडलों के आधार पर होंगे।

इसके अतिरिक्त मेरी मित्र श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी ने भी एक प्रश्न उठाया है। यद्यपि उन्होंने स्त्रियों के लिये विशेष रक्षणों के लिये तर्क नहीं उपस्थित किया है किन्तु, मेरे विचार से, इसके लिये सभा आसानी से सहमत हो सकती है। उन्होंने यहां तक कहा कि श्रीमती सरोजिनी नायडू के रिक्त स्थान की पूर्ति पुरूषों में से कोई नहीं कर सकता। मैं कह नहीं सकता कि उनका आशय क्या था किन्तु इस कारण मैं उनसे झगड़ा नहीं करना चाहता। यदि इस सभा में अधिक महिलाएं हों तो मुझे कोई आपत्ति न हो, और वास्तव में हर्ष हो, किन्तु इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में उन्हें इस प्रश्न को नहीं उठाना चाहिये। यदि मैं उन्हें ठीक सुन पाया तो उन्होंने यह कहा कि महिलाओं को इस समय प्रशासन के कार्य के लिये जितना अवसर मिलता है उससे अधिक अवसर उन्हें दिया जाना चाहिये। इस सम्बन्ध में, अर्थात् प्रशासन कार्य के लिये महिलाओं की योग्यता के सम्बन्ध में; राजनैतिक दार्शनिकों ने यह आपत्ति की है कि स्त्रियों पर हृदय का शासन रहता है और मस्तिष्क का शासन नहीं रहता। शासन-कार्य में अनेक प्रकार की स्त्रियों तथा पुरुषों से बड़ी सावधानी से व्यवहार करना होता है। यदि मस्तिष्क सावधान नहीं रह पायेगा तो स्त्रियों को शासन कार्य में कठिनाई होगी। यदि हृदय का शासन रहेगा और मस्तिष्क का स्थान गौण रहेगा तो, जैसा कि विचारशील पुरुषों तथा स्त्रियों का भी विचार है, शासन कार्य में थोड़ी बहुत गड़बड़ हो जायेगी और वह सुचारू ढंग से नहीं चलेगा। किन्तु मैं इस प्रश्न पर और अधिक कुछ नहीं कहना चाहता। मैं आशा करता हूं कि सभा इस प्रश्न को लेकर कि जब कभी किसी महिला का स्थान रिक्त होगा तो उस स्थान के लिये महिला ही निर्वाचित होगी, श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी से नहीं झगड़ेगी।

एक प्रश्न इस अनुच्छेद की व्याख्या (2) के सम्बन्ध में भी उठता है। वह राज्यों के अन्तर्कालीन विधान-मंडलों में होने वाली आकस्मिक रिक्तताओं के सम्बन्ध में है। यह सच है कि राज्यों के विधान-मंडलों के सम्बन्ध में संविधान में निर्वाचन सम्बन्धी उपबन्ध रखे गये हैं। किन्तु अन्तरिम काल के सम्बन्ध में; इस पर विचार करते हुए कि हाल में समाविष्ट तथा अन्य इसी प्रकार के कारणों से देशी राज्यों में तथा राज्यपाल-प्रान्तों में भी बहुत से परिवर्तन हुए हैं; मेरे विचार से इस विषय से सम्बन्ध में; अर्थात् अन्तरिम काल में राज्य के विधान-मंडलों में आकस्मिक

रिक्तताओं की पूर्ति के सम्बन्ध में; यदि राष्ट्रपति राज्य के अथवा प्रान्त के राज्यपाल से परामर्श करेगा तो कोई हानि नहीं होगी और लाभ ही होगा। प्रान्तों में तथा राज्यों में राज्यपालों को मंत्री परामर्श देते रहेंगे, इसलिये उसे सभी स्थानीय घटनाओं की सूचना होगी और वह इस सम्बन्ध में राष्ट्रपति को यथोचित परामर्श दे सकेगा। इसलिये मेरे विचार से, समझदारी इसी में है कि यह उपबन्धित किया जाये कि व्याख्या (2) में निर्दिष्ट विषय के सम्बन्ध में संघ का राष्ट्रपति सम्बन्धित राज्य के राज्यपाल से परामर्श करेगा। श्रीमान, मुझे आशा है कि जो प्रश्न मैंने उठाया है उस पर मसौदा समिति तथा यह सभा ध्यानपूर्वक विचार करेगी और इस समय, अथवा संविधान के तीसरे पठन के अवसर पर, इस आशय की पूर्ति के लिये इस अनुच्छेद में यथोचित समाविष्ट करेगी।

*__श्री एच.जे. खांडेकर:__ अध्यक्ष महोदय, नवीन अनुच्छेद 312-च अन्तर्कालीन संसद तथा राज्यों के विधान-मंडलों में आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के सम्बन्ध में है। कुछ बातों के साथ मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करना चाहता हूं।

अभी हमने जिस अनुच्छेद (अर्थात् अनुच्छेद 311) को पारित किया है उसके अधीन उन सदस्यों को, जो दो विधान-मंडलों के सदस्य हैं, इस सभा से चला जाना होगा। यह एक दुर्भाग्य की बात है कि लोगों के वास्तविक प्रतिनिधि 26 जनवरी, 1950 को इस सभा से चले जायेंगे। अनुसूचित जातियों के सम्बन्ध में इस सभा में फिर वही पुरानी गलती की जा रही है। आरम्भ में हम यह चाहते थे कि हमारी जनसंख्या के आधार पर इस सभा में हमारा प्रतिनिधित्व हो। एक प्रथा इस प्रकार थी कि हरिजनों की प्रत्येक दस लाख की जनसंख्या के लिये इस सभा में एक प्रतिनिधि निर्वाचित होगा। इस सभा में इस समय 28 हरिजन सदस्य हैं जिनमें से दो मंत्री हैं। हरिजनों की जनसंख्या को देखते हुए यहां कम से कम साठ सदस्य होने चाहिये थे। किन्तु अन्तिम अनुच्छेद के अधीन 28 में से 17 हरिजन सदस्य इस सभा से चले जायेंगे। ये लोग हरिजनों के जाने पहिचाने नेता हैं और उनके समुदाय के बुद्धिमान भी यही हैं। इस अनुच्छेद के अधीन संघ के राष्ट्रपति को अथवा संविधान सभा के अध्यक्ष को आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति की शक्ति दी जा रही है तो मेरा एक निवेदन है। मेरा यह निवेदन है कि हरिजन समुदाय में इस कारण सदस्य नहीं मिलते कि उस समुदाय के लोग अशिक्षित हैं। आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के लिये आपको अनुसूचित जातियों में से इतने अधिक सदस्य नहीं मिलेंगे। इसलिये मेरा निवेदन है कि इसकी आवश्यकता है कि इन आकस्मिक रिक्ताओं को पूर्ति करते समय राष्ट्रपति उन सदस्यों के मामलों पर भी विचार करें जो प्रान्तीय विधान-सभाओं के सदस्य होने के कारण इस सभा को छोड़ कर जा रहे हैं। जहां तक मेरे प्रान्त का सम्बन्ध है, मैं जानता हूं कि हमें इससे अधिक उपयुक्त व्यक्ति नहीं मिल सकते। हरिजनों में कुछ लोग हैं किन्तु वे प्रान्तीय-विधान-मंडल के सदस्य हैं। मेरे विचार से अन्य प्रान्तों में भी यही स्थिति होगी। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि जब संघ के राष्ट्रपति अथवा संविधान सभा के अध्यक्ष, आकस्मिक रिक्तताओं के सम्बन्ध में नियम बनायें तो वे हरिजन समुदाय के सदस्यों को स्वेच्छा से निर्णय करने का कुछ अधिकार दें।

[श्री एच.जे. खांडेकर]

दूसरी बात यह है कि इस अनुच्छेद में कहा गया है कि इस सभा से मुसलमानों, सिखों तथा हरिजनों के जितने सदस्य जायेंगे उतने ही उसी समुदाय के सदस्य निर्वाचित होंगे। यहां हमारी संख्या 28 है और 17 सदस्य जा रहे हैं। इस खंड के अधीन 17 सदस्य निर्वाचित होंगे। इस का अर्थ यह है कि स्थिति वही रहेगी। हरिजनों को अधिक प्रतिनिधित्व नहीं प्रदान किया जा रहा है और, जैसा कि मैं कह चुका हूं, पुरानी ही गलती दुहराई जा रही है। मेरा यह सुझाव है। देशी राज्य में हरिजनों की जनसंख्या लगभग एक करोड़ है। मैं बहुत खेद के साथ सभा को यह सूचित करता हूं कि जब देशी राज्यों से सदस्य भेजे गये तो मैसूर के एक सदस्य के अतिरिक्त उनमें से एक सदस्य भी हरिजन नहीं था। मैं आप से प्रार्थना करता हूं कि आप इस पर विचार करें। मैं कह नहीं सकता कि देशी राज्यों के सदस्य पदत्याग कर रहे हैं या नहीं। यदि वे पद त्याग करें तो मेरा यह सुझाव है कि उनके स्थानों के लिये हरिजन निर्वाचित किये जायें। इसके अतिरिक्त मैं आपके सामने एक उदाहरण भी रखना चाहता हूं। मद्रास में एक प्रथा के अनुसार हमारे समुदाय के आठ सदस्य निर्वाचित होने चाहिये थे, किन्तु केवल सात ही निर्वाचित हुए हैं। एक स्थान अब भी रिक्त है अथवा किसी सवर्ण हिन्दू को दे दिया गया है। वह स्थान किसी हरिजन को दिया जाना चाहिये। मध्य प्रान्त तथा बरार से हमारे तीन सदस्य निर्वाचित होते थे। तीन सदस्य निर्वाचित हुए किन्तु बाद में एक हरिजन सदस्य ने पदत्याग कर दिया।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास: जनरल): उससे पदत्याग करवाया गया।

***श्री एच.जे. खांडेकर:** उनके स्थान पर एक वर्ण हिन्दू निर्वाचित किया गया। डॉ. रघुवीर, जो मध्य प्रांत्त से हरिजन सदस्य के स्थान पर निर्वाचित किये गये, मेरे मित्र हैं और उन्होंने यहां भाषा के सम्बन्ध में काम किया हैं। मैं कह नहीं सकता कि वे पदत्याग करेंगे अथवा नहीं क्योंकि वे दो सभाओं के सदस्य नहीं है। दो सभाओं का सदस्य होने के कारण जिस किसी व्यक्ति का स्थान मध्य प्रान्त में रिक्त हो वह किसी हरिजन को दिया जाना चाहिये। मेरी यह प्रार्थना है कि आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के सम्बन्ध में नियम बनाते समय, अथवा उपबन्ध रखते समय, संघ के राष्ट्रपति अथवा संविधान सभा के सभापित, चाहे जो भी हों, हरिजनों को उनके यथोचित स्थान, अर्थात् 60 स्थान, प्रदान करें। संविधान 26 जनवरी, 1950 से प्रवर्तन में आयेगा। संविधान में हमने इस आशय का एक उपबन्ध रखा है कि अन्तर्कालीन संसद में अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या के आधार पर होगा। मेरी यह प्रार्थना है कि हम संविधान के इस खण्ड को ध्यान में रखें।

मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने इस अनुच्छेद में जो व्याख्या रखी है उसका मैं पूर्णतया समर्थन करता हूं। वह अनुसूचित आदिम जातियों तथा अनुसूचित जातियों की सूची के सम्बन्ध में है। जैसे ही यह संविधान प्रवर्त्तन में आयेगा वैसे ही अनुसूचित जातियों तथा आदिम-जातियों की उन सूचियों का, जो 1935 के अधिनियम में दी हुई हैं; शून्यन हो जायेगा और अन्तरिम काल के लिये कोई सूची नहीं रह जायेगी। इस संविधान के उपबन्धों के अधीन राष्ट्रपति इस सूची को तैयार करेगा और इस सम्बन्ध में घोषणा करेगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह अनुसूचित जातियों

के सदस्यों से अथवा संसद से परामर्श करके उसे तैयार करेगा। यह संघ के राष्ट्रपति की स्वेच्छा पर निर्भर है। किन्तु संक्रान्ति काल के लिये एक सूची की आवश्यकता है और उसके सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर की व्याख्या में जो कुछ कहा गया है वह पर्याप्त है। मैं उसका समर्थन करता हूं।

***श्री एस. नागप्पा:** अध्यक्ष महोदय, यह अनुच्छेद उन आकस्मिक रिक्तताओं की पूर्ति के सम्बन्ध में है जो दो सभाओं के सदस्यों के अपने स्थानों को रिक्त करने पर होंगी। मेरे माननीय मित्र श्री मुनिस्वामी पिल्ले तथा श्री खांडेकर अनुसूचित जातियों की स्थिति स्पष्ट कर चुके हैं। इस अनुच्छेद में कहा गया है कि अनुसूचित जातियों के लोगों के जो स्थान रिक्त होंगे उनके लिये अनुसूचित जातियों के लोग ही निर्वाचित होंगे और मुसलमानों तथा सिखों के जो स्थान रिक्त होंगे उनके लिये उन्हीं समुदायों के लोग निर्वाचित होंगे। दूसरे शब्दों में जो हिन्दू अनुसूचित जातियों के नहीं हैं उनके स्थान सुरक्षित रहेंगे और उनके लिये वही निर्वाचित होंगे। आरम्भ में जब रिक्तताओं की पूर्ति हुई तो अनुसूचित जातियों के साथ बहुत अन्याय हुआ। मेरे मित्र श्री मुनिस्वामी पिल्ले तथा श्री खांडेकर इसे स्पष्ट कर चुके हैं। किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं है कि संघ का राष्ट्रपति, अथवा संविधान सभा का अध्यक्ष, अन्य कदम भी उठा सकता है, अर्थात् यदि वह सिख और मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य लोगों के स्थानों पर अनुसूचित जातियों के लोगों को लाना चाहे तो वह जितनों को चाहे ला सकता है। मैं न केवल मसौदा-समिति के सभापति से बल्कि संविधान सभा के अध्यक्ष से भी यह आश्वासन चाहता हूं कि अनुसूचित जातियों को जनसंख्या के आधार पर जितना प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिये उतना उनको प्राप्त होगा। जो कुछ हुआ है वह हो चुका है। अब 26 जनवरी से अन्तर्कालीन संसद कार्य करेगी। अभी तक हरिजनों का प्रतिनिधित्व दोषपूर्ण रहा है और मैं नहीं चाहता कि गणराज्य में भी उन्हें इसी प्रकार का प्रतिनिधित्व प्राप्त रहे। देश का, लोगों का, तथा सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया है और मुझे आशा है कि गलती दूर की जायेगी और अनुसूचित जातियों को उनका हक दिया जायेगा।

आखिर यह मांग उचित ही है। हम सीमा का उल्लंघन नहीं कर रहे हैं। हमें जो मिलना चाहिये उसी की हम मांग कर रहे हैं। हम किसी प्रकार का वज़न नहीं चाहते और किसी का स्थान भी नहीं चाहते और न हम यही कहते हैं कि हम हिन्दू नहीं हैं। मैं श्री कामत के इस सुझाव से सहमत हूं कि 'समुदाय' शब्द नहीं प्रयोग करना चाहिये। किन्तु मैं यह चाहता हूं कि वर्ग-विभेद रहे। आप हमें भिन्न वर्ग का समझते हैं; यद्यपि भिन्न समुदाय का नहीं समझते। केवल इस कारण कि हम आपके साथ मिल जाते हैं और यहां आप के साथ ही आये हैं, हमारे राजनैतिक अधिकारों का अपहरण नहीं होना चाहिये।

***अध्यक्ष:** इस खण्ड को पढ़ने पर मुझे यह दिखाई देता है कि अन्य स्थानों से निर्वाचित होने के लिये हरिजनों का अपवर्जन नहीं किया गया है। उसमें केवल

[अध्यक्ष]

यह आश्वासन दिया गया है कि जिन स्थानों को वे रिक्त करेंगे उनके लिये वे अवश्य ही निर्वाचित होंगे। किन्तु उन्हें अन्य स्थानों के लिये निर्वाचित करने की छूट है। आपने यह कहा था कि अन्य हिन्दुओं के स्थान भी रक्षित किये गये हैं। यह बात नहीं है।

***श्री एस. नागप्पा:** प्रकारान्तर से उसका यही अर्थ है। यदि अनुसूचित जातियों के चार व्यक्ति अपने स्थान रिक्त करेंगे तो उनके लिये चार व्यक्ति निर्वाचित होंगे।

***अध्यक्ष:** यदि उनके पास 27 स्थान हैं तो इसके अधीन 27 व्यक्ति अवश्य ही निर्वाचित होंगे। किन्तु उनके 27 स्थान बढ़कर 54 भी हो सकते हैं। इसके लिये कोई रोक नहीं है।

***श्री एस. नागप्पा:** इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस अनुच्छेद के अधीन वे हिन्दू जो अनुसूचित जातियों के नहीं हैं उसी संख्या में निर्वाचित होंगे।

***अध्यक्ष:** उसमें यह नहीं कहा गया है। उसमें यह आश्वासन दिया गया है कि अनुसूचित जातियों के 27 सदस्य अवश्य ही निर्वाचित होंगे। इससे अधिक और चाहे जितने भी निर्वाचित हों इसकी छूट दी गई है।

***श्री एस. नागप्पा:** मेरा यह निवेदन है कि अनुसूचित जातियों के लोगों को जितने स्थान मिलने चाहिये वे उन्हें मिलें। मुझे इस की चिन्ता नहीं है कि वे स्थान सिखों से लेकर दिये जायें या मुसलमानों से लेकर। मैं यह चाहता हूं कि हमें जितने स्थान मिलने चाहिये वे मिलें। ये स्थान प्रदान किये जायें और नवीन गणराज्य में इस प्रकार का दोषयुक्त प्रतिनिधित्व नहीं रहने दिया जाये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास: जनरल): अब प्रस्ताव पर मत लिया जाए।

***अध्यक्ष:** बहस बन्द करने का प्रस्ताव उपस्थित किया जा चुका है।

प्रस्ताव यह है कि:

"अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, इस बहस में केवल एक दो प्रश्न उठाये गये हैं। श्री सक्सेना तथा पंडित भार्गव ने जो प्रश्न उठाया वह अंतरिम काल में मुसलमानों तथा सिखों के प्रतिनिधित्व को बनाये रखने के बारे में है। वे इसे बनाये रखने का विरोध इस कारण करते हैं कि इस संविधान सभा में विचार विमर्श होते समय मुसलमानों और सिखों ने अपने विशेष प्रतिनिधित्व के अधिकार का परित्याग कर दिया था। इस सम्बन्ध में मेरा यह निवेदन है कि जो भी व्यवस्था की गई है वह उस स्थाई संसद के लिये की गई है जो इस संविधान के अधीन

निर्मित होगी। इस दशा में यह उचित तथा न्याय संगत नहीं है कि संविधान सभा का स्वरूप बदला जाए और इसे इसी रूप में अन्तर्कालीन संसद का कार्य न करने दिया जाए।

श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी के संशोधन के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि संविधान सभा में महिलाओं के स्थानों को बनाये रखने के बारे में कोई उपबन्ध रखने की आवश्यकता नहीं है मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि नियम बनाने की अपनी शक्ति की प्रयोग करते हुए राष्ट्रपति इस ओर ध्यान देगा कि अन्तर्कालीन संसद में कुछ महिला-सदस्य तथा विभिन्न दलों के भी सदस्य आयें।

श्री मुनिस्वामी पिल्ले अपने संशोधन द्वारा अनुसूचित आदिम जातियों के सम्बन्ध में एक नवीन उपबन्ध चाहते हैं। वास्तव में अनुसूचित आदिम जातियों के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने के बारे में कोई आपत्ति नहीं हो सकती किन्तु बात यह है कि इस समय अनुसूचित आदिम जातियों की गणना नहीं की गई है, क्योंकि भारत शासन-अधिनियम 1935 में उनका उल्लेख नहीं किया गया है। भारत-शासन-अधिनियम में प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में जहां कहीं आदिम जातियों का उल्लेख है, उनका पिछड़ी हुई आदिम जातियों के रूप में उल्लेख है। यदि मेरे मित्र श्री मुनिस्वामी पिल्ले इस प्रश्न को मसौदा-समिति के निर्णय के लिये छोड़ दें तो वह उनके संशोधन के आशय को कार्यान्वित करने के लिये यथोचित व्यवस्था करेगी।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 3 के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312-च का खण्ड (1) निकाल दिया जाये।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 202 ।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** मैं चाहता हूं कि उस पर मसौदा-समिति ही विचार करे। मैं उस पर मत देने के लिये जोर नहीं देता।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 3 के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312-च के खण्ड (2) में 'as the President may by order direct' (जैसे राष्ट्रपति आदेश द्वारा निदेशित करे) शब्दों के स्थान पर 'as the Parliament may by law provide' (जैसे संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अब मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव के संशोधन संख्या 203 पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है किः

"सूची 3 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 164 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 312-च के खण्ड (1) के पहले परन्तुक में से 'or to the Muslim or the Sikh Community' (अथवा मुस्लिम या सिख समुदाय का) शब्द निकाल दिये जायें और 'be of the same community' (उसी समुदाय का होगा) शब्दों के स्थान पर 'belong to the Scheduled Caste' (अनुसूचित जाति का होगा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधन संख्या 204 उठाता हूं।

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जीः** श्रीमान, मैं चाहती हूं कि मैंने जो संशोधन उपस्थित किया है उसे वापस लेने की मुझे आज्ञा दी जाये।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** अब संशोधन संख्या 205 द्वारा परिवर्तित रूप में मैं इस अनुच्छेद पर मत लूंगा। अर्थात् संशोधन संख्या 205 द्वारा जिस संशोधन संख्या 164 की व्याख्या संशोधित हुई है उस पर मैं मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है किः

"प्रस्तावित अनुच्छेद 312-च, संशोधित रूप में संविधान का अंग बना लिया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 312-च, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुसूचियां 3-क तथा 4

***अध्यक्षः** अब हमें अनुसूची 3-क को उठाना है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, अनुसूची 3-क नहीं उपस्थित की जा रही है। वह सूची से निकाली जा सकती है। विचार यही है।

***अध्यक्षः** इसलिये संशोधनों का प्रश्न ही नहीं उठता।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** किन्तु प्रक्रिया की दृष्टि से उसे उपस्थित करना ही उचित होगा। विचार क्या है? क्या वह स्थगित की जा रही है?

***अध्यक्षः** वह संविधान के मसौदे का अंग नहीं है। वह अनुसूची संशोधन के रूप में रखी गई थी और जब वह संशोधन ही नहीं उपस्थित किया जा रहा है तो उस संशोधन पर संशोधनों का प्रश्न ही नहीं उठता। इसलिये अनुसूची 3-क का, तत्सम्बद्ध सभी संशोधनों के साथ, शून्यन किया जाता है।

अब हम अनुसूची 4 को उठाते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि अनुसूची 4 निकाल दी जाये।

***कुछ माननीय सदस्यः** वह निकाली कैसे जा सकती है?

***अध्यक्षः** जहां तक मसौदा-समिति का सम्बन्ध है वह कुछ अनुच्छेदों को निकालने का प्रस्ताव करती रही है। अनुसूची 4 के सम्बन्ध में कुछ संशोधन भी हैं। मेरे विचार से अच्छा यह होगा कि डॉ. अम्बेडकर स्थिति स्पष्ट करें और बतायें कि यह अनुसूची क्यों निकाली जा रही है, क्योंकि सदस्य संशोधनों की सूचना दे चुके हैं। इससे सब कुछ स्पष्ट हो जायेगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्री कृष्णमाचारी स्थिति स्पष्ट करेंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, चौथी अनुसूची की इसलिये आवश्यकता थी कि राष्ट्रपति और राज्यपालों के मंत्रियों से जो सम्बन्ध होंगे उनका वर्णन करने के लिये संविधान में उपबन्ध रखे गये थे। अब यह समझा गया है कि संविधान के एक परिशिष्ट में आदेश-पत्र के रूप में इस विषय का उल्लेख न करके इस सम्बन्ध में एक प्रथा बनने दी जाये बहुत से लोगों की यही सम्मत्ति है। इसलिये संशोधन के रूप में हमने जिस अनुसूची 3-ख को प्रस्तावित किया था उसे तथा संविधान के मसौदे में समाविष्ट अनुसूची 4 को निकालने का निश्चय किया गया है क्योंकि यह विचार किया गया है कि संविधान में इस प्रकार के आदेशों को रखना अनावश्यक है और उचित यही है कि इस समबन्ध में समय-समय पर प्रथायें बनें और राष्ट्रपति तथा राज्यपालों का अपने अपने क्षेत्रों में उनसे पथप्रदर्शन हो। चूंकि यह समझा गया है कि ये अनुसूचियां अनावश्यक हैं इसलिये मैंने दूसरी अनुसूची को निकालने का प्रस्ताव रखा है।

***श्री बी. दास** (उड़ीसाः जनरल)ः श्रीमान, मैं भ्रम में पड़ गया हूं। मैं नहीं चाहता कि पूरी अनुसूची 4 को इतनी जल्दी निकाल दिया जाए। गवर्नर-जनरल तथा राज्यपालों की शक्तियों के सम्बन्ध में हम सभी अनुसूचियों को स्वीकार कर लें और यदि मसौदा समिति उनमें से किसी को निकालने की आवश्यकता समझे तो

[श्री बी. दास]

वह बाद में निकाल दी जाये। अब जब हम आज का कार्य समाप्त करने को हैं हमारे समाने एकाएक यह प्रस्ताव रखा गया है कि अनुसूची 4 निकाल दी जाये। हमारे लिये इस स्थिति को समझना कठिन है। मैं यह भी जानना चाहता हूं कि इस विषय पर मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव को क्या कहना है। मैं वकील नहीं हूं। इसलिये मैं जानना चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में उनकी क्या सम्मति है। मेरे विचार से अच्छा यह होगा कि अवशिष्ट अनुच्छेदों पर विचार करने के पश्चात् हम अनुसूचियों को निकालने के प्रश्न को उठायें। मेरा यही निवेदन है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यहां केवल एक बात स्पष्ट कराने के लिये आया हूं। मेरी समझ में नहीं आता है कि अनुसूची 4 बिल्कुल ही क्यों निकाली जा रही है। क्या यह समझा जा रहा है कि अब से निर्वाचकों तक उस अनुसूची के किसी अंश को प्रयोग में लाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। यदि यह बात है तो मैं यह बताना चाहता हूं कि पश्चिमी बंगाल में कुछ ही समय पश्चात् निर्वाचन होने वाले हैं, और निर्वाचनों के पश्चात् राज्यपाल को चौथी अनुसूची के दूसरे पैरा के अधीन कार्यवाही करनी होगी। पैरा 2 में कहा गया है कि:

> "मंत्रि-परिषद् के लिये नियुक्तियां करते समय राज्यपाल अपने मन्त्रियों को इस प्रकार चुनने का यथाशक्ति प्रयास करेगा, अर्थात् वह उस व्यक्ति से परामर्श करके, नियुक्तियां करेगा जिसका उसके विचार से, विधान-मंडल में स्थाई बहुमत है और जिसे सामूहिक रूप से विधान-मंडल का विश्वास प्राप्त है........"

पश्चिमी बंगाल में जैसे ही निर्वाचन समाप्त होंगे वहां के राज्यपाल को इस अनुसूची के पैरा 2 में वर्णित शक्तियों को प्रयोग करना होगा। इसलिये अन्तरिम काल के लिये ऐसे उपबन्ध रखे जाने चाहिये जिनके अधीन आवश्यकता पड़ने पर ये शक्तियां प्रयोग की जा सकें। मैं चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में स्थिति स्पष्ट कर दी जाये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, आदेश-पत्र के सम्बन्ध में दो बातों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। आरम्भ में ब्रिटिश संविधान में उपनिवेशों के शासन के सम्बन्ध में आदेश पत्र राज्यों के प्रधानों को इस सम्बन्ध में आदेश देने के लिये रखा गया था कि उन्हें स्वविवेक से प्रयोग करने के लिये जो शक्तियां प्रदान की गई हैं उन्हें वे कैसे प्रयोग करें गवर्नर अथवा वायसराय, जिन्हें ये आदेश दिये जाते थे, भारत मंत्री के अधीन होते थे। यदि कोई बहुत गम्भीर मामला उठ खड़ा होता था, जैसे कि यदि कई गवर्नर आदेश पत्र द्वारा उसे दिये हुए आदेशों की बराबर उपेक्षा करता था तो भारत मंत्री उसे हटा कर किसी अन्य व्यक्ति को उसके स्थान पर नियुक्त कर सकता था और इस प्रकार आदेश-पत्र को प्रयोग में

ला सकता था। जहां तक हमारे संविधान का सम्बन्ध है, हमने उसमें किसी ऐसे प्राधिकारी के सम्बन्ध में उपबन्ध नहीं रखे हैं जो राज्यपालों को आदेश-पत्र के आदेशों का वफादारी से अनुसरण करने के लिये बाध्य करें।

इसके अतिरिक्त इस संविधान के अधीन हमने राज्यपाल को स्वविवेक से निर्णय करने की बहुत कम शक्ति दी है। उसे स्वविवेक से निर्णय करने की वास्तव में कुछ भी शक्ति प्राप्त नहीं है। मंत्रि-मंडल के लिये लोगों को चुनने के सम्बन्ध में उसे मुख्य मंत्री के परामर्श के अनुसार कार्य करना होगा। किसी शासन सम्बन्धी अथवा विधि सम्बन्धी कदम के लिये भी, उसे मुख्य मंत्री तथा अन्य मंत्रियों के परामर्श के अनुसार कार्य करना होगा। इस स्थिति में यदि मुख्य मंत्री किसी कारण अपने मंत्रिमंडल में अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को न रखना चाहे तो इस सम्बन्ध में राज्यपाल कुछ नहीं कर सकता, भले ही उसके लिये आदेश-पत्र में यह आदेश हो कि वह एक विशेष कदम उठाये। यह विचार किया गया है कि चूंकि राज्यपाल को स्वविवेक से निर्णय करने की शक्ति नहीं दी गई है, और संविधान में किसी ऐसे प्राधिकारी के लिये व्यवस्था नहीं है जो इन आदेशों को प्रभाव में ला सके, इसलिये इस प्रकार के आदेश नहीं देने चाहिये। वे निरर्थक हैं और उनके किसी उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकती। इसलिये यह विचार किया गया है कि इस प्रकार के आदेश-पत्र को रखने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि एक भिन्न परिस्थिति में उसकी आवश्यकता हो सकती है जो नवीन संविधान के प्रारम्भ होने पर किसी प्रकार उत्पन्न नहीं हो सकती। मुख्यत: इसी प्रकार यह समझा गया है कि इस प्रकार के आदेश-पत्र की आवश्यकता नहीं है।

अध्यक्ष: प्रस्ताव यह है कि:

"चतुर्थ अनुसूची निकाल दी जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

चतुर्थ अनुसूची संविधान से निकाल दी गई।

द्वितीय अनुसूची

अध्यक्ष: अब सभा अनुसूची 2 पर विचार करेगी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"द्वितीय अनुसूची के भाग 1 के स्थान पर यह रखा जाये:–

'Part I

Provisions as to the President and the Governors of States for the time being specified in Part I of the First Schedule.

1. There shall be paid to the President and to the Governors of the States for the time being specified in Part I of the

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

First Schedule the following emoluments per mensem, that is to say:—

The President—10,000 rupees.

The Governer of a State—5,500 rupees.

2. There shall also be paid to the President and to the Governors such allowances as were payable respectively to the Governor-General of the Dominion of India and to the Governors of the corresponding Provinces immediately before the commencement of this Constitution.

3. The President and the Governors throughout their respective terms of office shall be entitled to the same privileges to which the Governor-General and the Governors of the corresponding Provinces were respectively entitled immediately before the commencement of this Constitution.

4. While the Vice-President or any other person is discharging the functions of, or is acting as, President, or any person is discharging the functions of the Governor, he shall be entitled to the same emoluments, allowances and privileges as the President or the Governor whose functions he discharges or for whom he acts, as the case may be.' "

[भाग 1

राष्ट्रपति तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उल्लिखित राज्यों के राज्यपालों के लिये उपबन्ध।

1. राष्ट्रपति तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उल्लिखित राज्यों के राज्यपालों को निम्नलिखित उपलब्धियां प्रति मास दी जायेंगी अर्थात–

राष्ट्रपति को— 10,000 रुपया

राज्य के राज्यपाल को— 5,500 रुपया

2. राष्ट्रपति तथा इस प्रकार उल्लिखित राज्य के राज्यपालों को ऐसे भत्ते भी दिये जायेंगे जैसे कि क्रमशः भारत डोमिनियन के गवर्नर-जनरल को तथा तत्स्थानी प्रान्तों के गवर्नरों को इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले देय थे।

3. राष्ट्रपति तथा ऐसे राज्यों के राज्यपालों को अपनी अपनी सम्पूर्ण पदावधि में ऐसे विशेषाधिकारों का हक होगा जैसे कि इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले क्रमशः गवर्नर-जनरल तथा तत्स्थानी प्रान्तों के गवर्नरों को था।

4. जब कि राष्ट्रपति अथवा कोई अन्य व्यक्ति राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन अथवा उसके रूप में कार्य कर रहा है अथवा कोई व्यक्ति राज्यपाल के कृत्यों का निर्वहन कर रहा है तब उस को वैसी ही उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का हक होगा जैसा कि यथास्थिति राष्ट्रपति या राज्यपाल को है जिसके कृत्यों का यह निर्वहन करता है अथवा यथास्थिति जिसके रूप में यह कार्य करता है।]

भाग 2

"भाग (2) के शीर्षक में 'Part I (भाग 1) शब्द और अंक के पश्चात् 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।"

"पैरा 7 के स्थान पर यह पैरा रखा जाये:–

'7. There shall be paid to the ministers for any State for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule such salaries and allowances as were payable to such ministers for the corresponding Province or the corresponding Indian State, as the case may be, immediately before the commencement of this Constitution.' "

[7. प्रथम अनुसूची के भाग (1) या भाग (3) में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य के मंत्रियों को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि यथास्थिति तत्स्थानी प्रान्त या तत्स्थानी देशी राज्य के ऐसे मन्त्रियों को इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले देय थे।]

भाग 3

"पैरा 8 में 'respectively to the Deputy President of the Legislative Assembly and to the Deputy President of the Council of States immediately before the fifteenth day of August, 1947' (क्रमशः विधान-सभा के उपाध्यक्ष को तथा विधान-परिषद् के उपाध्यक्ष को अगस्त, 1947 के पन्द्रहवें दिन से ठीक पहले दिये थे) शब्दों के स्थान पर 'to the Deputy Speaker of the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately

[डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

before such commencement' (भारत डोमिनियन की संविधान सभा के उपाध्यक्ष को इस संविधान के प्रारम्भ के ठीक पहले देय थे) शब्द रखे जायें।"

भाग 4

"द्वितीय अनुसूची के भाग 4 के स्थान पर यह रखा जाये:–

Part IV

Provisions as to the Judges of the Supreme Court and of the High Courts of States in Part I of the First Schedule.

10. (1) There shall be paid to the judges of the Supreme Court, in respect of time spent on actual service, salary at the following rates per mensem, that is to say:—

The Chief Justice—5,000 rupees

Any other Judge—4,000 rupees:

Provided that if a judge of the Supreme Court at the time of his appointment is in receipt of a pension (other than a disability or wound pension) in respect of any previous service under the Government of India or any of its predecessor Governments or under the Government of a State of any of its predecessor Governments, his salary in respect of service in the Supreme Court shall be reduced by the amount of that pension.

(2) Every judge of the Supreme Court shall be entitled without payment of rent to the use of an official residence.

(3) Nothing in paragraph (2) of this paragraph shall apply to a judge who was appointed as a judge of the Federal Court before the thirty-first day of October, 1948, and has become on the date of the commencement of this Constitution a judge of the Supreme Court under clause (1) of article 308 of this Constitution, and every such

judge shall in addition to the salary specified in sub-paragraph (1) of this paragraph be entitled to receive as special pay an amout equivalent to the difference between the salary so specified and the salary which was payable to him as a judge of the Federal Court immediately before such commencement.

(4) Every judge of the Supreme Court shall receive such reasonable allowances to reimburse him for expenses incurred in travelling on duty within the territory of India and shall be afforded such reasonable facilities in connection with travelling as the President may from time to time prescribe.

(5) The rights in respect of leave of absence (including leave allowances) and pension of the judges of the Supreme Court shall be governed by the provisions which, immediately before the commencement of this Constitution, were applicable to the judges of the Federal Court.

11. (1) There shall be paid to the judges of the High Court of each State for the time being specified in Part I of the First Schedule, in respect of time spent on actual service, salary at the following rates per mensem, that is to say:—

The Chief Justice—4,000 rupees

Any other judge—3,500 rupees

(2) Every person who was appointed permanently as a judge of a High Court in any Province before the thirty-first day of October, 1948, and has on the date of the commencement of this Constitution become a judge of the High Court in the corresponding State under clause (1) of article 310 of this Constitution, and was immediately before such commencement drawing a salary at a rate higher than that specified in sub-paragraph (1) of this paragraph, shall be entitled to receive as special pay an amount equivalent to the difference between the salary so specified and the salary which was payable to him as a judge of the High Court immediately betore such commencement.

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(3) Every such judge shall receive such reasonable allowances to re-imburse him for expenses incurred in travelling on duty within the territory of India and shall be afforded such reasonable facilities in connection with travelling as the President may from time to time prescribe.

(4) The rights in respect of leave of absence (including leave allowances) and pension of the judges of any such High Court shall be governed by the provisions which, immediately before the commencement of this Constitution, were applicable to the judges of the High Court of the corresponding Province.

12. In this Part, unless the context otherwise requires,

(a) the expression "Chief Justice" includes an acting Chief Justice, and a "Judge" includes an ad hoc judge,

(b) "actual service" includes—

(i) time spent by a judge on duty as a judge or in the performance of such other functions as he may at the request of the President undertake to discharge;

(ii) vacations, excluding any time during which the judge is absent on leave; and

(iii) joining time on transfer from a High Court to the Supreme Court or from one High Court to another.' "

[भाग 4

उच्चतम न्यायालय तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में के राज्यों के उच्च न्यायालयों के सम्बन्ध में उपबन्ध।

10. (1) उच्चतम न्यायालयों के न्यायाधीशों को वास्तविक सेवा में बिताये समय के बारे में निम्नलिखित दर से प्रतिमास वेतन दिया जायेगा अर्थात–

मुख्य न्यायाधिपति....................	5,000	रुपया
कोई अन्य न्यायाधीश	4,000	रुपया

परन्तु यदि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को अपनी नियुक्ति के समय भारत सरकार की या उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की अथवा राज्य की सरकार की अथवा उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की पहले की गई सेवा के बारे में (निर्योग्यता या क्षत-पेन्शन से अतिरिक्त) कोई निवृत्ति वेतन मिलता हो तो उच्च्तम न्यायालय में सेवा के बारे में उसके वेतन में से निवृत्ति-वेतन की राशि घटा दी जायेगी।

(2) उच्चतम न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को, बिना किराया दिये, पदावास के उपयोग का हक होगा।

(3) इस कंडिका की उपकंडिका (2) में की कोई बात उस न्यायाधीश को, जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले अक्तूबर 1948 के इकत्तीसवें दिन के पूर्व फेडरल न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त हुआ था और इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि को इस संविधान के अनुच्छेद 308 के खण्ड (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय का कोई न्यायाधीश बन गया है, लागू न होगी, तथा प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश को इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतन से अतिरिक्त विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।

(4) उच्चतम न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश भारत राज्य-क्षेत्र के भीतर अपने कर्तव्य पालन में की गई यात्रा में किये गये व्ययों की पूर्ति के लिये ऐसे युक्तियुक्त भत्ते पायेगा तथा यात्रा सम्बन्धी उसे ऐसी सुविधायें दी जायेंगी जैसी कि राष्ट्रपति समय-समय पर विहित करे।

(5) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की अनुपस्थिति-छुट्टी (जिसके अन्तर्गत छुट्टी सम्बन्धी भत्ते भी हैं) तथा निवृत्ति-वेतन के बारे में अधिकार उन उपबन्धों से शासित होंगे जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को लागू थे।

11. (1) प्रथम अनुसूची के भाग (1) में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य में के उच्चन्यायालय के न्यायाधीशों को वास्तविक सेवा में बिताये समय के बारे में निम्नलिखित दर से प्रति मास वेतन दिया जायेगा, अर्थात्—

मुख्य न्यायाधिपति— 4000 रुपये

कोई अन्य न्यायाधीश— 3,500 रुपये

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(2) जो व्यक्ति अक्तूबर 1948 के इकत्तीसवें दिन के पूर्व किसी प्रान्त में के उच्च न्यायालय का न्यायाधीश स्थायी रूप से नियुक्त हुआ था और इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि को इस संविधान के अनुच्छेद 310 के खण्ड (1) के अधीन तत्स्थानी राज्य के उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश बन गया है, यदि वह ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित दर से अधिक वेतन पाता था तो उसको विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।

(3) ऐसा प्रत्येक न्यायाधीश भारत राज्य-क्षेत्र के भीतर अपने कर्तव्य पालन में कई गई यात्रा में किये गये व्ययों की पूर्ति के लिये ऐसे युक्तियुक्त भत्ते पायेगा तथा यात्रा सम्बन्धी उसे ऐसी सुविधायें दी जायेंगी जैसी कि राष्ट्रपति समय-समय पर विहित करे।

(4) ऐसे किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की अनुपस्थिति-छुट्टी (जिस के अन्तर्गत छुट्टी भत्ते भी हैं) और निवृत्ति-वेतन के बारे में अधिकार उन उपबन्धों से शासित होंगे जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी प्रान्त के उच्चन्यायालय के न्यायाधीशों को लागू थे।

11. इस भाग में, जब तक प्रसंग से अन्यथा उपेक्षित न हो–

(क) "मुख्य न्यायाधिपति" पदावली के अन्तर्गत कार्यकारी मुख्य न्यायाधिपति है तथा "न्यायाधीश" पद के अन्तर्गत तदर्थ न्यायाधीश है।

(ख) "वास्तविक सेवा" के अन्तर्गत है:–

(1) न्यायाधीश के रूप में कर्तव्य करते हुए अथवा ऐसे अन्य कृत्यों के पालन में, जिनका कि राष्ट्रपति की आकांक्षा पर उसने निर्वहन करने का भार लिया हो, न्यायाधीश द्वारा व्यतीत समय;

(2) उस समय को न गिन कर जिसमें कि वह न्यायाधीश छुट्टी लेकर अनुपस्थित है, विश्रामावकाश; तथा

(3) उच्चन्यायालय से उच्चतमन्यायालय को अथवा एक उच्चन्यायालय से दूसरे को बदले जाने पर योगकाल।]

भाग 5

"भाग 5 के शीर्षक में 'Auditor-General' (महालेखापरीक्षक) शब्द के स्थान पर 'Comptroller and Auditor-General' (नियंत्रक-महा-लेखापरीक्षक) शब्द रखे जायें।"

"पैरा 14 के स्थान पर यह पैरा रखा जाये:–

14. (1) There shall be paid to the Comptroller and Auditor-General of India a salary at the rate of four thousand rupees per mensem.

(2) The person who was holding office immediately before the commencement of this Constitution as Auditor-General of India and has become on the date of such commencement the Comptroller and Auditor-General of India under article 310A of this Constitution shall in addition to the salary specified in sub-paragraph (1) of this paragraph be entitled to receive as special pay an amount equivalent to the difference between the salary so specified and the salary which was payable to him as Auditor-General of India immediately before such commencement.' "

[14.(1) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को चार सहस्त्र रुपये प्रति मास की दर से वेतन दिया जायेगा।

(2) जो व्यक्ति इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले भारत के महालेखा-परीक्षक के रूप में पद धारण किये था तथा ऐसे प्रारम्भ पर अनुच्छेद 310-क के अधीन भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक बन गया है उसको इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतन के अतिरिक्त विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले भारत के महालेखापरीक्षक के रूप में उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।]

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

"पैरा 15 में पहली बार जहां 'Auditor-General' (महालेखापरीक्षक) शब्द आया है उसके स्थान पर 'Comptroller and Auditor-General' (नियंत्रक-महालेखापरीक्षक) शब्द रखे जायें।"

यदि आप की आज्ञा हो तो मैं इन उपबन्धों की व्याख्या कल करूंगा।

***अध्यक्ष:** सभा कल प्रात: दस बजे तक के लिये स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा बुधवार तारीख 12 अक्तूबर, 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

Con. 3. X.5.49
320

अंक 10
संख्या 5

सत्यमेव जयते

बुधवार
12 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा–(जारी) 2883–2971
[द्वितीय अनुसूची और भाग 6-क पर विचार]

भारतीय संविधान सभा

बुधवार, 12 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टिट्यूशन हाल नई दिल्ली, में प्रातः 10 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा-(जारी)

द्वितीय अनुसूची-(जारी)

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** (बम्बईः जनरल): अध्यक्ष महोदय, द्वितीय अनुसूची के उपबंधों की व्याख्या के रूप में मैं एक बात कहना चाहूंगा और मैं उस भाग से आरम्भ करूंगा जो न्यायाधीशों के वेतन के संबंध में है।

सर्व प्रथम उच्चतम न्यायालय के संबंध में यह देखा गया होगा कि इस संविधान के आरम्भ पर उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति का वेतन 5000/- रुपया मासिक और मकान मुफ्त तथा छोटे न्यायाधीश का वेतन 4000/- रुपया मासिक और मकान मुफ्त होगा। उच्चतम न्यायालय के संबंध में स्थिति यह है कि संविधान के अनुसार किसी फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश को जो उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश होना चाहता है उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किया जायेगा। अतः फेडरल न्यायालय का कोई न्यायाधीश यदि उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश होना चाहता है तो जो प्रश्न उठता है वह यह हैः क्या उसे वह वेतन मिले जो उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये संविधान के अधीन नियत किया गया है अथवा उसको वही वेतन लेते रहने के लिये कोई उपबन्ध बनाया जाये जो उसे फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में इस समय मिलता है। मसौदा समिति का विनिश्चय यह है कि यद्यपि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों का सामान्य वेतन तो वही होना चाहिये जो द्वितीय अनुसूची में दिया हुआ है, परन्तु यदि फेडरल न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश होना चाहें तो उन्हें इस समय जितना वेतन मिल रहा है उतना वेतन प्राप्त करने के लिये उपबन्ध होना चाहिये। इस प्रयोजन के लिये फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है—एक वे जिनको स्थायी न्यायाधीशों के रूप में 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त किया गया था और दूसरे वे जिनको 31 अक्तूबर, 1948 के बाद नियुक्त किया गया है। प्रथम श्रेणी के न्यायाधीश, अर्थात् वे जिनको 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त किया गया है उनको स्वीय वेतन मिलेगा जो द्वितीय अनुसूची द्वारा नियत किये गये वेतन और उस वेतन के अन्तर के बराबर होगा जो ऐसे न्यायाधीश को इस संविधान के आरम्भ के ठीक पहले दिया जाता था। जिनकी नियुक्ति

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

31 अक्तूबर, 1948 के पश्चात् हुई है उनको द्वितीय अनुसूची में नियत किये गये हिसाब से वेतन मिलेगा। अत: उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को संविधान के अधीन नियत किये गये वेतन से 2000/- रुपया अधिक मिलेगा और फेडरल न्यायालय के छोटे न्यायाधीशों को, यदि वे उच्चतम न्यायालय में जाना चाहते हैं तो छोटे न्यायाधीशों के लिये नियत किये गये सामान्य वेतन से 1500/- रुपया अधिक मिलेगा।

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति के लिये इस संविधान के अधीन नियत किया गया सामान्य वेतन 4000/- रुपया है और छोटे न्यायाधीशों का सामान्य वेतन 3500/- रुपया है। इसके लिये भी संविधान में हमने एक उपबन्ध रखा है कि उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश इस संविधान के अधीन उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होना चाहता है तो राष्ट्रपति को उसे नियुक्त करना पड़ेगा। परिणाम स्वरूप उच्चतम न्यायालय के संबंध में जो समस्या खड़ी होती है वही उच्च न्यायालय के संबंध में भी खड़ी होती है क्योंकि जो न्यायाधीश इस समय वर्तमान हैं उनमें से कुछ को उससे अधिक वेतन मिल रहा है जो द्वितीय अनुसूची में नियत किया गया है। अत: किसी तरह की भी शिकायत को दूर करने के लिये यह भी विनिश्चित किया गया है कि उसी प्रक्रिया का पालन किया जाये जिसका फेडरल न्यायालय के संबंध में पालन किया गया है और वह यह कि न्यायाधीशों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जाये—एक वे जिनको 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त किया गया था और दूसरे वे जिनको उसके पश्चात् नियुक्त किया गया था। इस प्रकार जो प्रथम श्रेणी में हैं उनको स्वीय वेतन के रूप में अतिरिक्त वेतन मिलेगा जो उन दोनों वेतनों के अन्तर के बराबर होगा जो संविधान द्वारा नियत किया गया है और जो वे पा रहे हैं। जो द्वितीय श्रेणी में आते हैं उनको वही वेतन मिलेगा जो संविधान द्वारा नियत है।

शायद इस बात की व्याख्या करना आवश्यक है कि हमने 31 अक्तूबर, 1948 से श्रेणियों के दो भाग क्यों किये हैं। इसका उत्तर यह है कि भारत सरकार ने विभिन्न उच्च न्यायालयों और फेडरल न्यायालय को अधिसूचित किया था कि 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त किये गये किसी भी न्यायाधीश को वही वेतन मिलते रहेंगे जो उसे मिलते थे परन्तु 31 अक्तूबर, 1948 के बाद नियुक्त हुये न्यायाधीशों को यह आश्वासन नहीं दिया जा सकता है। यह कहना चाहिये कि इस आश्वासन की प्रत्याभूति करने के लिये यह विभाजन रेखा पुर:स्थापित की गई है।

अनुसूची 2 में नियत किये गये वेतनों और अन्य देशों में के वेतनों के संबध में मैं एक दो बातें कहना चाहूंगा। उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमरीका में मुख्य न्यायाधिपति को 7084/- रुपया मासिक मिलता है और छोटे न्यायाधीशों को 6958/- रुपया। कनाडा में मुख्य न्यायाधिपति को 4584/- रुपया और छोटे न्यायाधीशों को 3662/- रुपया मिलता है। आस्ट्रेलिया में उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को 3750/- रुपया और छोटे न्यायाधीशों को 3333/- रुपया मिलता है और दक्षिणी अफ्रीका में मुख्य न्यायाधिपति को 3892/- रुपया और छोटे न्यायाधीशों को 3611/- रुपया मिलता है। अनुसूची 2 में जो वेतन स्तर हमने निश्चित किया है उसकी तुलना यदि कोई व्यक्ति उन अंकों से करे जो मैंने बताये हैं तो मैं समझता हूं

कि वह यह अनुभव करेगा कि सिवा संयुक्त राष्ट्र अमरीका के अन्य देशों में ऐसे ही कार्यकर्त्ताओं के लिये जो वेतन नियत हैं उसकी तुलना में हमारे यहां के वेतन कहीं ज्यादा हैं।

इन वेतनों के नियत करने में हमें जितना न्याय करना चाहिये उतना न्याय हमने किया है। उदाहरणार्थ मसौदा समिति को यह कहने का पूर्ण अधिकार था कि इस नियम का पालन करते हुए कि जिनकी नियुक्ति 31 अक्तूबर, 1948 से पहले हुई थी यदि उनका वेतन इस संविधान द्वारा नियत किये गये सामान्य वेतन से अधिक है तो वह कम हो जायेगा, हम ऐसा उपबन्ध भी बना सकते थे कि नागपुर उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को सामान्य वेतन से कम वेतन मिलेगा क्योंकि उनका वर्त्तमान वेतन सामान्य वेतन से कम है। पर हम कोई ऐसी शिकायत का कारण नहीं रखना चाहते हैं और इसलिये हमने कोई ऐसा समझौते का उपबन्ध नहीं रखा है जिसे रखने में मसौदा समिति इस विषय के प्रति कोरे न्याय की दृष्टि से न्याययुक्त हो सकती थी। अत: मैं निवेदन करता हूं कि जहां तक न्यायपालिका के वेतन का संबंध है शिकायत करने का कोई अवसर नहीं है।

अब मैं राष्ट्रपति के विषय पर आता हूं। यह स्पष्ट है कि संघ का राष्ट्रपति एक ऐसा कृत्यकारी है जो वर्तमान गवर्नर जनरल का स्थानापन्न होगा और उसका जो वेतन हमने नियत किया है उसके नियत करने में अर्थात् 10,000/- रुपये और इस परिणाम पर पहुंचने में हमें यह यह विचार करना पड़ा कि वह उस वेतन से कम है या ज्यादा जो गवर्नर जनरल को मिल रहा है।

जैसा कि सबको विदित है भारत शासन-अधिनियम, 1935 के अधीन गवर्नर जनरल का वेतन 250800/- रुपये वार्षिक नियत किया गया था जो 20,900/- रुपया मासिक होता है। इसमें सन्देह नहीं कि इस वेतन पर आय कर लगता था। विधान सभा द्वारा पारित अभी हाल के अधिनियम के अधीन गवर्नर जनरल का वेतन 5500/- रुपये नियत किया गया था पर इस वेतन पर आय कर न था। मुझे बताया गया है कि यदि गवर्नर जनरल के वेतन पर आय कर लगता है तो वह 14,000/- रुपये के लगभग होता। राष्ट्रपति का वेतन 10,000/- रुपये नियत करने में हमने दो बातों पर विचार किया है। एक बात यह है कि राष्ट्रपति के वेतन पर आय कर लगना चाहिये। मसौदा समिति द्वारा तथा इस सभा के अधिकांश सदस्यों द्वारा भी यह अनुभव किया गया कि कोई भी व्यक्ति जो इस संविधान के अधीन कृत्यकारी है अथवा इस संविधान के अधीन असैनिक सेवक है वह किसी ऐसे दायित्व से मुक्त न हो जिसका आरोपण किसी कर संबंधी उपक्रम द्वारा इस देश के जन साधारण पर किया जाता है। अत: हमने यह सोचा कि यदि यह राष्ट्रपति के वेतन पर आय कर लगाना चाहते हैं तो उसकी वृद्धि करना वांछनीय है।

इस बात का एक और कारण कि हमने 10,000/- रुपया नियत क्यों किया है और वह कारण उच्चतम न्यायालय के वर्तमान मुख्य न्यायाधिपति का वेतन है जो 7000/- रुपया है। मसौदा समिति का यह विचार हुआ कि चूंकि राष्ट्रपति राज्य में सर्वोच्च कृत्यकारी है इसलिये ऐसा कोई अन्य व्यक्ति नहीं होना चाहिये जिसे

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

राष्ट्रपति से अधिक वेतन मिले और यदि उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को 7000/- रुपया वेतन मिलता है तो यह नितांत आवश्यक है कि उपरोक्त दृष्टिकोण से राष्ट्रपति का वेतन मुख्य न्यायाधिपति के वेतन से कुछ अधिक होना चाहिये। इन सब बातों पर विचार करते हुए हमने सोचा कि राष्ट्रपति का ठीक-ठीक वेतन 10,000/- रुपया ही होगा।

इसके पश्चात् बात यह है कि राष्ट्रपति के वेतन के साथ कुछ भत्ते रहते हैं। इन भत्तों के संबंध में मैं यह कहूंगा कि जब भारत शासन अधिनियम, 1935 पारित किया गया था तो उस अधिनियम में गवर्नर जनरल का केवल वेतन नियत किया गया था। भत्तों के संबंध में उस अधिनियम में यह कहा गया था कि उसे सपरिषद् सम्राट आदेश द्वारा नियत करेंगे, परन्तु दुर्भाग्यवश भारत शासन अधिनियम, 1935 का दूसरा भाग कभी प्रवृत्त नहीं हो पाया और यद्यपि इस आदेश का मसौदा सन् 1937 में तैयार तो कर लिया गया पर सपरिषद् सम्राट द्वारा वह आदेश कभी नहीं निकाला गया। अत: जहां तक भारत शासन अधिनियम का संबंध है उसमें भत्तों के संबंध में कुछ भी नहीं कहा गया है और इस कारण किसी निश्चित परिणाम पर पहुंचने के लिये उस अधिनियम से मसौदा समिति को कोई आधारभूत सामग्री न मिली। परिणामत: मसौदा समिति ने यह उपबन्ध कर इस विषय को समाप्त किया कि राष्ट्रपति को वही भत्ते मिलते रहेंगे जो गवर्नर जनरल को इस संविधान के आरम्भ पर मिलते थे। बाद में संसद इस बात के अधीन राष्ट्रपति के वेतन और भत्तों में परिवर्तन कर सकती है कि उनमें सम्बद्ध राष्ट्रपति की पदावधि में परिवर्तन नहीं होगा।

यदि मसौदा समिति द्वारा सुझाया गया यह उपबन्ध, कि गवर्नर जनरल को इस संविधान के आरम्भ पर दिये जाने वाले भत्ते राष्ट्रपति को मिलते रहें, प्रवृत्त होता है तो मैं सभा को उन भत्तों का कुछ अनुमान कराना चाहूंगा जिनके मिलने का हक राष्ट्रपति को होगा।

1949-50 के आनुमानिक आय-व्यय के ब्यौरे से मुझे यह विदित हुआ है कि "गवर्नर जनरल के भत्ते" शीर्षक के अन्तर्गत यह अंक थे:

1-सम्पट्यूरी भत्ता 45,000 रुपया वार्षिक।

2-संविदा भत्ते का व्यय 4,65,000 रुपया।

3-राज्य की सवारी; मोटर गाड़ी: 73,000 रुपया।

4-दौरे का व्यय 81,000 रुपया।

1949-50 के बजट के अनुमान के अनुसार कुल भत्ते मिलाकर 6,64,000/- रुपये होते हैं।

जैसा कि मैं कह चुका हूं भत्तों के बारे में मेरा अधिक कुछ कहना आवश्यक नहीं है क्योंकि भत्तों में संसद द्वारा किसी समय भी परिवर्तन किया जा सकता है। महत्वपूर्ण प्रश्न वेतन के बारे का है और मैं निवेदन करता हूं कि जिन

परिस्थितियों का मैंने उल्लेख किया है उन पर ध्यान रखते हुए मुझे तथा मसौदा समिति को भी 10,000/- रुपया राष्ट्रपति के वेतन के रूप में एक बहुत ही ठीक-ठीक राशि प्रतीत होती है।

राज्यपालों के वेतन के बारे में मुझे कुछ अधिक नहीं कहना है। उसको अभी-अभी गवर्नर जनरल द्वारा निकाले गये आदेश द्वारा नियत किया गया है और वह मुझे बहुत ही युक्तियुक्त प्रतीत होता है और उसमें भी उसी सिद्धांत का पालन किया गया है कि प्रांतों में अधिकतम वेतन पाने वाला पदाधिकारी मुख्य न्यायाधिपति है, राज्यपाल को प्रांत के मुख्य न्यायाधिपति से कुछ अधिक मिले। इस दृष्टिकोण से राज्यपालों के वेतन नियत किये गये हैं।

एक और उपबन्ध जिसकी ओर मैं निर्देश करना चाहूंगा वह यह है कि इस अनुच्छेद के मूल मसौदे में नियंत्रक-महालेखा परीक्षक के वेतन के संबंध में किसी उपबन्ध का रखना प्रस्थापित नहीं किया गया था। यहां फिर अनुसूची 2 के द्वारा उसका वेतन 4000/- रुपया नियत किया गया है, पर यह वेतन इस परन्तुक के अधीन है कि जब तक वर्तमान पदधारी नियंत्रक-महालेखा परीक्षक के रूप में कार्य करेगा उसे अनुसूची 2 द्वारा नियत किये गये वेतन तथा जो वेतन इस समय मिल रहा है इन दोनों वेतनों का अन्तर स्वीय वेतन के रूप में मिलेगा। जब यह पदधारी चला जायेगा और दूसरा नियुक्त किया जाएगा तो उसे वही वेतन मिलेगा जो अनुसूची 2 में नियत है।

मैं आशा करता हूं कि इस अनुसूची में दिये हुये विभिन्न कृत्यकारियों के लिये मसौदा समिति द्वारा जो वेतन सुझाये गये हैं वे सभा को स्वीकार होंगे।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों पर आता हूं। मैं भिन्न-भिन्न भागों को पृथक-पृथक लूंगा और जिस भाग को मैं लूंगा उससे संबंधित संशोधनों को पेश करने के लिये मैं सदस्यों से निवेदन करूंगा। प्रथम संशोधन भाग 1 पर है, श्री महावीर त्यागी का संशोधन संख्या 259।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्तः जनरल)ः श्रीमान जी, मुझे यह दस हजार रुपये मासिक तनख्वाह प्रेसीडेंट की और पांच हजार रुपये मासिक गवर्नर की होने में एतराज नहीं है कि तनख्वाह ज्यादा है। लेकिन बराबर दो रोज तक विचार करने के बाद मैंने यह तय किया कि अपनी आजाद राय को इस मौके पर जरूर अंकित कर देना चाहिये। मैं इस बात में यकीन रखता हूं कि जो सिविल सर्विस वाले हैं और जो सरकारी कर्मचारी हैं उन तमाम का रहन-सहन अच्छा होना चाहिये, उनकी इज्जत भी होनी चाहिये। लेकिन यह भारत भूमि ऋषियों की भूमि है। यहां पर साधारणतया रुपये के द्वारा कोई इज्जत या डिगनिटी नहीं गिनी जाती है (*हियर हियर*)। हिंदुस्तान के अन्दर हमेशा से त्याग और तपस्या की इज्जत रही है। जो सरकारी कर्मचारी मुस्तकिल रूप से स्थाई रूप से सेवा का भार अपने सिर पर लिये हैं उनकी तनख्वाह, उनका वेतन, इतना होना चाहिये जिससे जीवन भर वह आराम से और इज्जत के साथ अपनी जरूरतों को पूरा कर सकें, लेकिन जो लोग राजनीतिक नेता हैं जिनमें मैं गवर्नरों और प्रेसीडेंट को गिनता हूं और जिनमें असेम्बली के मेम्बरों को भी गिनता हूं और जो लोग राजनीति के कारण सरकार के ऊंचे पदों पर आते हैं उनके लिये मैं ऊंचा आदर्श यही समझता हूं कि वे त्याग की

[श्री महावीर त्यागी]

भावना से इस कार्य को करें। दुनियां भर में बड़ी-बड़ी तनख्वाहें देने का रिवाज है और इसलिये हमें बड़ी तनख्वाहें रखने में कोई लाज नहीं आती है। पर मैं यह कहूंगा, और कांस्टीट्यूएंट असेम्बली से यह अपील करता हूं कि एक नया तरीका हम शुरू करें त्याग का ताकि दुनियां भर को सबक दे सकें और दुनियां का नेतृत्व कर सकें। हमारी कामयाबी जो आजादी हासिल करने में हुई है वह रुपये द्वारा बड़ापन प्राप्त करने से नहीं, बल्कि त्याग के द्वारा हुई है। इस वक्त विशेष रूप से जब कि सारी दुनियां का नैतिक जीवन गिर रहा है उस समय में और भी आवश्यक है कि यह भारतवर्ष दुनियां का नेतृत्व करे और एक आदर्श स्थापित करे, इस बात का, कि त्याग के कारण राष्ट्र की सेवा किस तरह से हो सकती है। अपने त्याग और तपस्या के जरिये से हम लोग केवल अपने ही देश में नहीं बल्कि दुनियां भर में त्याग की भावना पैदा करेंगे। समाज त्याग ही का नतीजा है और समाज को ऊंचा करने के लिये त्याग की भावनाओं को बढ़ाना, उनको जाग्रत करना बहुत आवश्यक है। मैं समझता हूं कि एक राष्ट्र का राष्ट्रपति उस राष्ट्र की इज्जत का प्रतीक है जो आजकल हमारा ख्याल है कि हमारी इज्जत और डिगनिटी और प्रतिष्ठा सारी रुपये के द्वारा होती है, मेरे ख्याल में हिन्दुस्तान के अन्दर यह गलत है (*हियर हियर*)। यहां तो यह पद त्याग ही से प्राप्त है। मेरे अपने स्वप्न के अनुसार तो प्रेसीडेंट आनरेरी (अवैतनिक) रहना चाहिये (*हियर हियर*) और उसका जितना भी खर्चा हो उसको स्टेट बर्दाश्त करे और उसके हाथ में हमारे राष्ट्र का सबसे बड़ा पद हो, उसका जीवन एक सन्यासी के जीवन की तरह सादा होना चाहिये। यह गरीबों का देश है और गरीबों से जो रुपये वसूल किया जाता है करों द्वारा, उससे गरीबों की गरीबी और बढ़ती है। उस रुपये की राजनीतिक लोग आजादी के साथ अपने निजी कार्यों में इस्तेमाल करें यह मुझे स्वीकार नहीं है। मैं इसलिये आपके सामने यह अपना संशोधन रखता हूं कि अगर और कोई तबदीली इस समय नहीं हो सकती तो कम से कम इतनी कर दी जाए कि "राष्ट्रपति का वेतन दस हजार से अधिक नहीं होगा।" बजाय इसके कि दस हजार निश्चित किया जाए यह अच्छा है कि हम यह कर दें कि दस हजार से अधिक नहीं होगा और गवर्नरों का वेतन पांच हजार से अधिक नहीं होगा ताकि आयन्दा आने वाली पार्लियामेंट अगर यहां की राजनीति को त्याग और तपस्या की राह पर चलाना चाहे तो इन राशियों को कम कर सकें। मेरे स्वप्न के अनुसार तो असेम्बली के मेम्बरों को भी केवल खाने पीने और सरकारी खर्च के अलावा और कुछ नहीं मिलना चाहिये। और मेरा विश्वास है कि यदि इस तरह की प्रणाली हम देश में कायम करेंगे तो अवश्य ही देश में सादगी और ईमानदारी का संचार होगा और जो नैतिक पतन दुनियां में हो रहा है उस गिरती हुई हालत को हम रोक सकते हैं। जो वैतनिक सरकारी पदाधिकारी स्थायी पदाधिकारी हैं उनकी तख्नवाह में मुझे कोई आपत्ति नहीं है जैसी देश की दशा है उसके अनुसार उनकी तनख्वाहें बढ़ती जायें। परन्तु जिन लोगों ने देश के गरीब आदमियों का विश्वास प्राप्त किया है, गांधी जी के आदर्श के अनुसार उनको गरीबी के साथ रहना चाहिये। यदि दूसरे देशों के बड़े राष्ट्रपतियों के साथ भी भेंट करें तो हमारी शान इसी में है कि हम लोग गरीबी के साथ उनसे बातचीत करें और आत्म विश्वास और गौरव के साथ अपनी राजनीति को चलायें। मुझे और इस पर कोई ज्यादा बात नहीं कहनी। केवल मैं अपना यह संशोधन पेश करता हूं और यह अपील करता हूं कि यह राष्ट्र चूंकि बहुत गरीब है इसलिये यहां के राष्ट्रपति को बहुत गरीबी के साथ रहना चाहिये ताकि वह गरीबों की तरफ ज्यादा तवज्जह कर सकें।

एक बात मुझे और कहनी है। जब कभी रुपये पैसे और राजनीति सत्ता दोनों का जमाव एक जगह केन्द्रित हो जाता है तो निश्चय ही उस केन्द्र के चारों ओर करप्शन और गिरावट इकट्ठी होने लगती है। लोग उस अधिकारी के यहां खुशामद के लिये आने लगते हैं और जो राजनीति का असली केन्द्र है उसके चारों तरफ गिरावट और पतन का किला-सा बन जाता है और फिर उस किले की हिफाजत के लिये दरबारी लोग उस राजनीति के केन्द्र को उठने नहीं देते और न कोई रिफार्म होने देते हैं। क्योंकि उस रिफार्म से डर यह है कि वह रिफार्म उनके आनन्द को भी खराब न कर दे। इस तरह उसमें गिरावट की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। हमें अपने राष्ट्रपति को उच्च आदर्शों से सुसज्जित करना चाहिये। उसे रुपये से सुसज्जित करने से देश के अन्दर आदर नहीं हो सकता। इसलिये मेरी अपील है कि हमारे राष्ट्रपति बिना किसी वेतन के काम करें और गरीबी के साथ जीवन बितायें। इसी में देश का ज्यादा कल्याण हो सकता है और गरीबों से अपनावट हो सकती है।

इतना कह कर मैं अपना यह संशोधन पेश करता हूं।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना__ (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में '10,000 rupees' (10,000 रुपये) शब्द और अंकों के स्थान में '1 rupee' (1 रुपया) शब्द और अंक रखे जायें।"

श्रीमान, मुझे खुशी है कि मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी ने अपना भाषण अपने संशोधन पर नहीं वरन मेरे संशोधन पर दिया है। मुझे खुशी है कि अपने संशोधन द्वारा जिन भावनाओं को मैं व्यक्त करना चाहता था वैसी भावनाऐं उनकी तथा इस सभा के सदस्यों की भी हैं जो सभा में उनके भाषण पर तालियां बजाने से स्पष्ट हो चुकी हैं। 'जब मैंने यह संशोधन भेजा था तो मुझे वास्तव में बड़ी हिचकिचाहट थी। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि जो कुछ मेरे मन मैं है उसे मुझे अपने संशोधन में व्यक्त कर देना चाहिये। हमारे संविधान में गणराज्य का राष्ट्रपति ब्रिटेन के बादशाह का स्थानापन्न है क्योंकि हमने ब्रिटेन के आधार पर अपना संविधान बनाया है। हमारे देश में राजत्व के आदर्श का उदाहरण जनक जैसे राजाओं का मिलता है जो सन्यासी के समान रहते थे। हमारे समय में भी हमारे स्वामी, हमारे पिता महात्मा गांधी ने वही आदर्श हमारे सामने रखा था। अत: श्रीमान, मैं समझता हूं कि राष्ट्रपति के लिये वेतन स्वरूप 1 रुपये का उपबन्ध करके हम एक ऐसा कार्य करेंगे जो हमारी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति के अनुरूप है। अत: इस संशोधन को स्वीकार करके हम अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का आदर्श विश्व तथा देश के समक्ष रखेंगे। इसके कारण हमें यह भी सुनिश्चयन हो जायेगा कि लोभी व्यक्ति राष्ट्रपति के पद की आकांक्षा नहीं करेंगे बल्कि यह सम्मान केवल उन्हीं लोगों को दिया जायेगा जो इस पद के लिये बौद्धिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक रूप से योग्य हैं और जो उसके वेतन के कारण उसे स्वीकार नहीं करना चाहते हैं बल्कि जो राजा जनक, महात्मा गांधी और प्राचीन भारत के अन्य महान राजाओं के सदृश्य देश की सेवा करना चाहते हैं।

अपने संविधान में हमने राष्ट्रपति को बड़ी व्यापक शक्तियों से सुसज्जित किया है। अनुदेशों की लिखतें वाली मूल मसौदे की अनुसूचियां 3 (क) और 4 संविधान

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

से निकाल ली गई हैं। अतः अब संविधान किसी प्रकार से भी उसके स्वविवेक में बाधा नहीं डालता है। हमारे संविधान में राष्ट्रपति को जैसा चाहे वैसा करने का प्राधिकार है। हमने उसको बड़ी महान शक्तियां दे दी हैं। इन समस्त वादविवादों में उस पर इन सब शक्तियों के लादने का मैं विरोध करता रहा क्योंकि वास्तव में इन सब शक्तियों का प्रयोग वह मंत्रिमंडल की मंत्रणा के अनुसार करेगा, परन्तु यदि राष्ट्रपति सन्यासी है तो मुझे विश्वास है कि किसी प्रधान मंत्री में उसे सही मार्ग से विचलित करने का साहस नहीं होगा और वह निष्पक्ष रूप से अपने कर्तव्यों का पालन कर सकेगा।

श्रीमान, जब मैंने यह अंक रखा तो गवर्नर जनरल के वर्तमान वेतन और भत्ते का मुझ पर भी प्रभाव पड़ा था। मेरे माननीय मित्रों वित्त समिति के सदस्यों ने मुझे यह बताया है कि गवर्नर जनरल के भत्ते इत्यादि का वर्तमान बजट 20 लाख रुपया प्रति वर्ष के लगभग है जिसमें से लगभग 11 लाख गवर्नमेंट हाउस की मरम्मत में व्यय हो जाता है और 9 लाख गवर्नर जनरल के सम्पच्यूरी तथा अन्य भत्तों पर। श्रीमान, मैं समझता हूं भारत जैसे निर्धन देश में, जिसके नेता महात्मा गांधी ने हमारे सामने आदर्श रखा था और उस आदर्श का हमें पालन करना चाहिये, इतनी राशि व्यय नहीं होनी चाहिये। अपने माननीय मित्र श्री त्यागी से मैं इस बात में सहमत हूं कि गवर्नर जनरल के जीवन निर्वाह का सारा खर्च राज्य बरदाश्त करे और इस प्रयोजन के लिये जो भत्ते उन्हें आवश्यक हों वे उनको दिये जायें— इसमें मेरी अनुमति है। मुझे दुख है कि आज भारत का गौरव उस बड़े वेतन में समझा जाता है जिसकी हम अपने राष्ट्रपति के लिये व्यवस्था कर सकते हैं और उस विशाल भवन में समझा जाता है जिसमें वह रहे। मैं समझता हूं कि हमारे आदर्श इससे भिन्न थे। वर्तमान गवर्नर जनरल जब कि मद्रास का मुख्य मंत्री था अपने ही घर में रहता था और मद्रास के मुख्य मंत्री के पदावास में नहीं गया था। परन्तु यहां हमने उसे एक उस भवन में रहने के लिये विवश किया है जिसकी केवल मरम्मत में 11 लाख रुपया लगता है। श्रीमान, मैं समझता हूं कि इन जीवन स्तरों को हमें बदल देना चाहिये। हमें अपने आदर्शों, अपनी संस्कृति और अपनी सभ्यता के अनुरूप रहना चाहिये। श्रीमान, इस भावनावश मैंने एक रुपये का अंक प्रस्तुत किया है।

श्रीमान, कांग्रेस के अध्यक्ष का कोई वेतन नहीं है और आज कांग्रेस का अध्यक्ष देश का एक बहुत ही महत्वपूर्ण कृत्यकारी बन गया है। यह अपना सारा समय राष्ट्र की सेवा में लगाता है और उसे कोई भत्ता नहीं मिलता है, परन्तु फिर भी मैं नहीं समझता हूं कि कांग्रेस के काम में किसी प्रकार की भी कमी हुई हो। यह ठीक है कि हमारे कांग्रेस के अध्यक्ष को जितना काम करना पड़ता है वह कदाचित उस काम से अधिक है जो गणराज्य के राष्ट्रपति को करना होगा। अतः मैं समझता हूं कि एक रुपये के इस अंक को रखने में मैंने केवल उस बात को कह दिया है जो अन्य सदस्यों के मन में है और जो हमारे प्राचीन आदर्श तथा संस्कृति और हमारे नवीन उद्देश्यों और आकांक्षाओं के अनुरूप है। मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन का समर्थन करेगी और मसौदा समिति इस उपक्रम पर विचार करेगी।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरा संशोधन इस प्रकार है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतन संबंधी अंकों के पश्चात् यह और जोड़ दिया जाये:–

'The salaries of the President and the Governor shall be subject to income-tax' "

[राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतनों पर आयकर लगेगा।]

श्रीमान, इस संशोधन को पेश करने का और विशेषकर संविधान में इस बात का जिक्र करने का कि राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतनों पर आयकर होगा, कारण यह है। यद्यपि माननीय प्रस्तावक महोदय डॉ. अम्बेडकर ने यह कह दिया है कि उनके वेतनों पर आयकर लगेगा और यह एक साधारण नियम तथा प्रथा है कि चाहे आयकर का जिक्र न हो पर वह सब से लिया जाता है। यह बात बिल्कुल स्पष्ट है और इसके प्रति मुझे कोई संदेह भी नहीं है। परन्तु इसके होते हुये भी मैं इस बात के लिये इतना उत्सुक क्यों हूं कि इसका जिक्र कर दिया जाये इसका कारण यह है। अभी तक हमारे गवर्नर जनरल का जो वेतन मिल रहा था उस पर आयकर नहीं था। श्रीमान, आपको विदित है कि जब उसको 20,000/- रुपया मिल रहा था उस पर आयकर लगता था, परन्तु फिर भी लोगों को यह मालूम न था कि वास्तव में उसे क्या वेतन मिल रहा है, यहां तक कि जब संसद में इस विषय पर वाद विवाद हुआ तो उस समय अधिकांश सदस्यों को यह मालूम न था कि उसके वेतन पर आयकर लगता था। इस विषय की देश के इस सिरे से उस सिरे तक चर्चा हुई और लोगों ने समझा कि हमारे गवर्नर जनरल को 20,000/- रुपया नकद वेतन मिल रहा है और वह इतनी रकम अपनी जेब में डाल लेते हैं जब कि वास्तव में उनको केवल 8000/- या 9000/- रुपया मिलना था। बाद में विधान सभा ने यह संकल्प किया कि उनका वेतन 5,500/ रुपया होना चाहिये बिना किसी कर के। आज यदि आप उसे बढ़ा कर 10,000/ रुपया कर देंगे और जनता को यह नहीं बतायेंगे—तो जनता इस बात पर ध्यान नहीं देती है कि आयकर कटता है या अन्य कई करों के रूप में इतना कट जाता है—वह यही कहेगी कि राष्ट्रपति का वेतन 5,500/- रुपये से बढ़ाकर 10,000/- रुपया कर दिया। जनता केवल अंकों पर ध्यान देती है। वह पूछती है कि गवर्नर जनरल को क्या मिलता है और लोग कह देते हैं कि उसे 10,000/ रुपया मिलता है। अत: मैं चाहता हूं कि जनता को यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर दी जाये। किसी समय आप जनता के सामने यह तर्क रख सकते हैं कि गवर्नर जनरल और गवर्नर से भी आयकर लिया जाता है। कभी-कभी वे विश्वास नहीं कर पाते। विश्वास करने में जब कभी उन्हें संकोच हो और यदि यह संविधान में दिया हुआ है तो निश्चित उत्तर द्वारा उनका खंडन किया जा सकता है। अत: श्रीमान, मैं यह अनुभव करता हूं कि चाहे यह बात व्यर्थ की हो, चाहे यह आवश्यक न हो, परन्तु इस अनावश्यक आलोचना से बचने के लिए कि राष्ट्रपति और राज्यपालों को मोटे-मोटे वेतन मिलते हैं मेरे संशोधन के शब्दों की प्रविष्टि बहुत ही आवश्यक है।

[श्री आर.के. सिधवा]

मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी और प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना ने वेतन की जो राशि बताई है उसको लेते हुये उन्होंने यह कहा कि गवर्नर जनरल को सन्यासी होना चाहिये। शायद वे उन विचारों से प्रभावित हो गये हैं जो हमें बिना किसी पारिश्रमिक के मानव सेवा करने के लिये सिखाये गये थे। मानवता की हमने अवेतन सेवा की है। वह और बात है। परन्तु आपको इन दोनों बातों को एक साथ नहीं मिलाना चाहिये जो परस्पर बिल्कुल भिन्न-भिन्न है। गवर्नर जनरल सरकार का प्रशासी मुखिया है। इस संविधान में इतने परिसीमनों द्वारा उसको निर्बन्धित किया गया है। मैं यह पूछता हूं कि जैसे निर्बन्धन इस संविधान में उस पर लगाये गये हैं क्या वैसे निर्बन्धन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस या प्रान्तीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्षों पर भी हैं। क्या हमारी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष को यह स्वतन्त्रता नहीं है कि वह जो चाहे सो करे और जो चाहे सो कमाये? क्या प्रान्तीय कांग्रेस समिति के अध्यक्ष कमा नहीं रहे हैं? हम जानते हैं कि हमने त्याग किये हैं और त्याग कर रहे हैं। मैं भी उनमें से एक हूं।

*श्री महावीर त्यागी: उसे लोक-धन का अपने लिये प्रयोग करने का हक नहीं है।

*श्री आर.के. सिधवा: कृपया मेरी बात सुन लीजिये। आप अपनी बात कह चुके हैं। लोक-धन का मूल्य मैं जानता हूं। भावनाओं में बह जाने वाला व्यक्ति मैं नहीं हूं। मैं व्यवहारिक व्यक्ति हूं और यथार्थता में विश्वास करता हूं। लोक-धन के बरबाद करने से क्या लाभ? मैं यह जानना चाहता हूं कि जब आपने संविधान में इतने निर्बन्धन रख दिये हैं कि वह यह कार्य नहीं करेगा वह ऐसा होगा इत्यादि इत्यादि तो आप अपने राष्ट्रपति का भरण पोषण किस प्रकार करेंगे। क्या आपने उसको जकड़ने के लिये संविधान में कई कंडिकायें पारित नहीं की हैं? मेरे माननीय मित्र प्रो. शाह ने तो यहां तक चाहा था कि जो कुछ संपत्ति उसके पास हो राष्ट्रपति बनाने के पूर्व उसे वह प्रकट कर देनी चाहिये। वह संशोधन गिर गया, पर आप यह तो जानते हैं कि राष्ट्रपति को क्या होना चाहिये। उसे संदेह से परे होना चाहिये। उसे चरित्रवान व्यक्ति होना चाहिये। यद्यपि विधि के उपबन्धों के अन्तर्गत नहीं वरन् नैतिक रूप से वह देश की संपत्ति का संरक्षक है। उसे यह देखना होगा कि उस संपत्ति पर किस प्रकार प्रशासन किया जाता है। इस प्रयोजन के लिए वेतन के रूप में एक तुच्छ राशि आवश्यक है। मैं तुच्छ शब्द का प्रयोग कर रहा हूं: वाइसराय 20,000/- रुपया जिसमें से आयकर निकाल कर 9,000/- रुपया रह जाता है लेता था इसकी तुलना राष्ट्रपति के शुद्ध वेतन से करिये जो लगभग 5,000/- रुपया है। क्या यह गवर्नर जनरल के वेतन में शत प्रति शत की कमी और पहले राज्यपालों के वेतनों में पचास प्रतिशत की कमी एक महान त्याग नहीं है जो हमारे लोग कर रहे हैं?

उन लोगों से मेरा कोई झगड़ा या विवाद नहीं है जो सन्यासी राष्ट्रपति जैसी असंयत भाषा का प्रयोग करते हैं। मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी ने कहा था कि राष्ट्रपति को सन्यासी होना चाहिये। श्री त्यागी सन्यासी हो सकते हैं चूंकि वे त्यागी हैं यदि उन्हें किसी समय राष्ट्रपति बनना है तो वे राष्ट्रपति बन सकते हैं। उनसे मेरा कोई विवाद नहीं है। मैं केवल यही पूछता हूं कि क्या हम यहां कांग्रेस के मंच पर हैं? यहां हम संविधान बना रहे हैं। मैंने केवल जेल जाकर ही त्याग नहीं किया है वरन् बड़ी-बड़ी सम्पत्तियों तक का त्याग किया है। इसी प्रकार से अनेक,

हजारों लाखों लोगों ने त्याग किया है। अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिये हमने जो कुछ किया उससे हमें प्रेरित नहीं होना चाहिये। हमने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है। मानवता की हम सेवा कर चुके हैं, सब कुछ त्याग कर जैसे हमारे स्वामी ने हमें सिखाया वेसे हम देश के सर्वोत्तम हितों की रक्षा कर चुके हैं। यद्यपि मैं पैगम्बर नहीं हूं, पर मैं यह कहूंगा कि यदि हमारा स्वामी जीवित होता चूंकि मैं उनसे भली भांति परिचित था और यद्यपि मेरे कई मित्र मुझसे भी अधिक उनसे परिचित हैं, परन्तु वह भी इस विचार को विनोद में टाल देता जिसको हमारे दो मित्रों ने सभा के समक्ष रखा है।

अत: मेरा विचार यह है कि संविधान में जिस वेतन की व्यवस्था की गई है वह बहुत ही युक्तियुक्त है। मैं यह कहूंगा कि यह एक महान त्याग है। क्या उन कार्यकर्ताओं का यह त्याग नहीं है जो वकील और डॉक्टर की अपनी-अपनी सफल वृत्ति को त्याग कर नेता बने हैं। मुझे उन लोगों के उदाहरण मालूम हैं जो 20,000/- तथा 30,000/- रुपया कमाते थे और एक समय उन्होंने 500/- रुपये तक की नौकरी की और आज 1,500/- रुपये की नौकरी कर रहे हैं। क्या यह कहना उचित है कि यह लोक धन की बरबादी है? हमें स्वयं अपने तथा अपने नेताओं के कार्य को समझने में उदारता से काम लेना चाहिये और इस बात का हमें गौरव होना चाहिये कि हमने क्या क्या त्याग किये हैं और आज भी क्या क्या त्याग कर रहे हैं। कोई ऐसी प्रस्थापना न रखिये जिसके कारण समस्त संसार हम पर हंसे। यदि सभा मेरे भाषण पर हर्षध्वनि नहीं करती है तो मुझे इस बात की चिन्ता नहीं है। यदि श्री त्यागी की इस बात पर सभा ने हर्षध्वनि की कि उन्होंने वेतन के रूप में एक रुपया या इससे कुछ अधिक रखा तो इस बात की भी मुझे चिन्ता नहीं। यदि इस सभा में मेरा विरोध होता है तो भी मुझे कोई चिन्ता नहीं क्योंकि मैं जानता हूं कि यह प्रस्थापना ठीक है। मैं समझता हूं कि बिना वेतन वाली बात के कारण हमारी समस्त संसार में हंसी उड़ाई जायेगी। राष्ट्रपति और राज्यपालों ने इस वेतन को स्वीकार कर जो महान त्याग किया है उसे हमें समझना चाहिये। जब समय आयेगा तो मैं भत्तों को भी लूंगा। जहां तक वेतन का सम्बन्ध है मैं समझता हूं कि यह वेतन युक्तियुक्त है। श्रीमान, क्या भत्तों सम्बन्धी संशोधन को मैं पेश कर सकता हूं?

***अध्यक्ष:** जी हां, आप उसे पेश कर सकते हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, मेरा संशोधन संख्या 262 कंडिका 2 और 3 में के भत्तों के सम्बन्ध में है। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की 2 और 3 कंडिकाओं के स्थान में ये कंडिकायें रखी जायें:-

'There shall be paid to the President and to the Governor the following allowance:

The President shall draw a lump sum of Rs. 1,35,000 per annum which shall include the cost of renewal, repair and maintenance of furniture

[श्री आर.के. सिधवा]

and motor vehicles, also including sumptuary, contract and all other allowances.

The President shall also draw Rs. 10,000 per annum as touring expenses.

The Governors shall draw a lump sum of Rs. 15,000 per annum which shall include the cost of renewal, repair and maintenance of furniture and motor vehicles, also including sumptuary, contract and all other allowances.' "

The Governors shall also draw Rs. 7,000 per annum as touring expenses.' "

[राष्ट्रपति और राज्यपाल को निम्न भत्ते दिये जायेंगे:

राष्ट्रपति को 1,35,000 रुपये की एक मुश्त रकम मिलेगी जिसमें सामान तथा मोटरगाड़ियों की हिफाजत, मरम्मत और नवीनकरण का खर्च शामिल है और सम्पच्यूरी, संविदा तथा अन्य भत्ते भी शामिल हैं।

राष्ट्रपति को मार्ग व्यय के लिये 10,000 रुपये मिलेंगे।

राज्यपाल को 15,000 रुपये की एक मुश्त रकम मिलेगी जिसमें सामान तथा मोटरगाड़ियों की हिफाजत, मरम्मत और नवीनकरण का खर्च शामिल है और सम्पच्यूरी, संविदा तथा अन्य भत्ते भी शामिल हैं।

राज्यपाल को 7,000 रुपये मार्ग व्यय के लिये मिलेंगे।]

जहां तक गवर्नर जनरल के भत्तों का सम्बन्ध है, कल से मैं स्वयं गवर्नर जनरल के लिये सपरिषद सम्राट द्वारा निकाले गये आदेश की खोज कर रहा हूं और गवर्नर के सम्बन्ध में अतिरिक्त मुझे कोई अन्य अध्याय या अनुसूची न मिल सकी। मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने इस बात को बिल्कुल स्पष्ट किया कि ऐसी अनुसूची कभी बनी ही नहीं। मैंने समझा कि वह कहीं न कहीं होगी और मेरे हाथ नहीं लग रही है। अब मुझे यह विदित हुआ कि वह कभी बनी ही नहीं और राज्य के सचिव ने गवर्नर जनरल के भत्ते नियत कर दिये। वे क्या थे यह मैं नहीं जानता हूं। परन्तु डॉ. अम्बेडकर ने दृष्टान्त दिया और गत बजट से मैं भी यह सामग्री जुटा चुका था कि हमारे गवर्नर जनरल के लिये क्या व्यवस्था की गई थी। उन्होंने गवर्नर जनरल के विभिन्न प्रकार के भत्तों के लिये 6,64,000/- रुपये की राशि बताई है।

श्रीमान, आपकी अनुमति से 35,000/- रुपये को सही करके 1,35,000/- रुपये रखना चाहता हूं। इसके पक्ष में ये तर्क हैं। स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद जब मैं प्रथम बार गवर्नमेंट हाउस, दिल्ली गया—मेरे अन्य कई मित्र भी वहां गये होंगे—सर्वप्रथम मुझ पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि यह गवर्नमेंट हाउस कल ही बनवाया गया है। मेरे मित्रों ने जिस सजधज और सफाई के साथ यह भवन रखा जाता है वह देखा ही होगा। मैं यह विश्वास दिला सकता हूं कि पहले जो धन इस पर खर्च किया जा चुका है उसका सदुपयोग हुआ है। जिस फर्श का प्रयोग किया जा चुका है वह शीशे की भांति चमक रहा था, छत सुनहरी रंग और चित्रकारी और विभिन्न प्रकार की गृह सामग्री इस प्रकार की थीं कि मानों कल ही तैयार की गई हैं। इसका कारण स्पष्ट वहां की हिफ़ाज़त है। गृह प्रबन्धक स्त्री है या पुरुष यह तो मैं नहीं जानता हूं: वह चाहे कोई भी हो परन्तु इस ऐतिहासिक स्थान को ऐसी दशा में रखने के लिये जैसी दशा में वह है वह व्यक्ति इस देश की जनता से श्रेय प्राप्त करने के योग्य है। यह सुझाव दिया गया है कि गवर्नमेंट हाउस को चिकित्सालय बना दिया जाए। मैं इस विचार का विरोध करता हूं। वह चिकित्सालय के लिये नहीं है चाहे यह बात मेरे मित्र श्री सक्सेना और श्री त्यागी को अच्छी लगे। इसका प्रयोग लाभदायक प्रयोजन के लिये होना चाहिये। आज वह एक कौतुकालय के रूप में प्रयोग में लाई जा रही है और हजारों लोग वहां आते हैं और गवर्नमेंट हाउस को देखने का अवसर प्राप्त करते हैं।

*__डॉ. पी.एस. देशमुखः__ (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): हम किस बात पर वाद-विवाद कर रहे हैं? गवर्नमेट हाउस पर या भत्तों पर?

*__श्री आर.के. सिधवाः__ भत्तों पर। हमें इस बात का ध्यान रखना है कि इस विषय में हम लोभ न करें। इसी कारण मैंने 1,35,000/- रुपये रखे हैं। 1,35,000/- रुपये की राशि में सम्पच्यूरी भत्ता, संविदा भत्ता और सामान का नवीनकरण शामिल है। यदि आप राज्यपालों के लिये भत्ते की व्यवस्था करने वाले परिषद् के आदेश को देखें तो आप को विदित होगा कि बम्बई के राज्यपाल को केवल 25,000/- रुपया मिलता है और कर्मचारी वृन्द सैनिक सचिव इत्यादि को 1,36,000/- रुपये। मैं इन विषय को नहीं ले रहा हूं। उनको नियुक्तियों की वास्तविक संख्या के लिये दिया जा सकता है। मुझे बताया गया है कि बम्बई, मद्रास और बंगाल के राज्यपालों के पास बेन्ड थे पर उनको हटा दिया गया। मद्रास को अधिकतम 43,000/- रुपया दिया जाता है। यदि उसके पास अंगरक्षक हैं तो उसे 1,26,000/- रुपया दिया जाता है। भत्ते की राशि में मैं इसे सम्मिलित नहीं कर रहा हूं। और फिर एक सर्जन और उसके लिये पूरी व्यवस्था है—मद्रास के लिये अधिकतम 36,000/- रुपया है कि और बम्बई के लिये 33,000/- रुपया। इन विषयों को मैं नहीं ले रहा हूं क्योंकि इन नौकरियों के लिये देना ही पड़ेगा। इसके बाद सरकारी आवासों के सामान, मरम्मत और हिफाजत का प्रश्न उठता है। इसके लिये अधिकतम बंगाल को 34,000/- रुपया है, मद्रास को 21,500/-, बम्बई को 25,000/- और न्यूनतम आसाम को 4,000/- रुपये है। हमने राज्यपालों के सरकारी गृहों को भी देखा है और वे भी बहुत बड़े-बड़े हैं। हमारे गवर्नर जनरल बंगाल के राज्यपाल थे और उन्होंने बताया था कि वहां 134 कमरे थे और वे स्वयं उन सब कमरों को देख

[श्री आर.के. सिधवा]

तक न सके थे, उसकी हिफाजत के लिये 25,000/- रुपये एक ठीक रकम होगी। अत: दिल्ली में के गवर्नमेन्ट हाउस को देखकर मेरा विचार इस राशि को 1,35,000/- रुपये तक बढ़ा देने का हुआ।

संविदा भत्ते के लिये अर्थात् प्रकीर्ण व्यय जिसके अन्तर्गत मोटरगाड़ी का खर्च भी सम्मिलित है। बम्बई के लिये 1,08,000/- रुपये की व्यवस्था है; इसके बाद मद्रास आता है और तीसरे नम्बर पर बंगाल है। न्यूनतम उड़ीसा के लिये 11,500/- रुपया है। मार्ग व्यय बहुत अधिक है। बंगाल के लिये 1,22,000/- रुपये, मद्रास के लिये 1,13,000/- और बम्बई के लिये 65,000/- की व्यवस्था है। पहले राज्यपाल आनन्द के लिये जाते थे। उन्हें किसी कर्तव्य का पालन करना नहीं होता था। कदाचित वह प्रशासी मुखिया होता था और इस प्रकार वह मुख्य कार्यपालक भी होता था और शायद इस कारण उन्हें यात्रा करनी पड़ती थी। अब हमारे राज्यपालों के पास कार्यपालिका का कार्य नहीं होगा। वे केवल आवश्यकता पड़ने पर ही कहीं जायेंगे। अत: राष्ट्रपति के मार्ग व्यय के लिये 10,000/- और राज्यपालों के लिये 7,000/- मैंने रखा है। मैं इस रकम को ठीक-ठीक समझता हूं। राज्यपालों से तथा राष्ट्रपति से भी यह आशा नहीं की जाती है कि वे अपने स्थानों को छोड़कर कहीं जायेंगे। अत: मैं समझता हूं कि सामान और मोटरगाड़ियों की मरम्मत और हिफाजत के लिये जिस के अन्तर्गत सम्पच्यूरी भत्ता तथा अन्य भत्ते भी सम्मिलित हैं 35,000/- जो मैंने पहले रखा था उसके स्थान में राष्ट्रपति के लिये 1,35,000/- और राज्यपालों के लिये 15,000/- युक्ति युक्त होगा।

माननीय डॉ. अम्बेडकर ने यह कहा था कि इन बातों को संसद के विनिश्चय पर छोड़ दिया जाये। यह एक बहुत बड़ा मद है। मुझे अभी यह बताया गया है कि विभिन्न प्रयोजनों के लिये गवर्नमेन्ट हाउस दिल्ली पर 18 से 20 लाख तक खर्च हो रहा है। हमारे पास इस खर्च की ठीक-ठीक राशि तो नहीं है पर एक बहुत बड़ी राशि खर्च होती है। अत: मैं यह समझता हूं कि राष्ट्रपति और राज्यपालों के भत्तों के प्रयोजनार्थ अनुसूची में विशेष रूप से वर्णन होना चाहिये। आखिर वेतन तो उनके निजी वैयक्तिक प्रयोजनों के लिये है और मैं यह नहीं चाहता हूं कि जनता यह कहे कि राज्यपालों ने वेतन तो कम स्वीकार किया है पर वे परोक्ष रूप से इन भत्तों में से धन प्राप्त कर लेते हैं। साथ ही साथ हमें जनता को यह भी बताना है कि भत्ते की दो लाख की एक बड़ी रकम को घटाकर हमने बहुत कम कर दिया है और यह रकम सरकारी गृहों की हिफाजत करने के लिये वास्तव में आवश्यक है। यदि हम राज्यपालों और राष्ट्रपतियों से सन्यासी बन जाने के लिये कह कर उनके रहन-सहन के ढंग में केवल परिवर्तन करना चाहते हैं तो ये सरकारी गृह उपयुक्त नहीं हैं। तब तो उन्हें कुटिया में जाकर रहना होगा—शायद कभी ऐसा समय आये—यद्यपि मैं यह नहीं जानता हूं कि वह समय कब आयेगा जब हमारे रहन-सहन का दृष्टिकोण और रहन-सहन की प्रणाली में परिवर्तन

हो। हम यह नहीं चाहते हैं कि गवर्नमेन्ट हाउस की वस्तुऐं बरबाद या खराब हों। हमें राज्य के खर्च से उनकी हिफाज़त करना है और वास्तव में भावी संतति का यह कर्तव्य है कि वह इस बात का ध्यान रखे कि ये भवन स्मारकों के रूप में रहें। हां इनमें से कुछ भवन बहुत ही जीर्ण शीर्ण दशा में हैं। यहां तक कि बम्बई का सरकारी गृह भी बहुत प्राचीन है। मसौदा समिति से मैं यह निवेदन करता हूं कि वह संविधान में भत्ते की व्यवस्था करे जिससे कि यह न कहा जा सके कि भत्तों में से धन का अपव्यय किया जाता है और इस प्रकार राज्यपालों पर लांछन लगाया जा सके। इन शब्दों में मैं अपने संशोधन को पेश करता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): श्रीमान, क्या प्रत्येक भाग पर या समस्त अनुच्छेद पर साधारण वाद विवाद होगा?

***अध्यक्षः** समूचे अनुच्छेद पर मैं संशोधनों को लूंगा और उसके बाद हम साधारण वादविवाद रखेंगे। संख्या 264।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) में संशोधन संख्या 210 के निर्देशानुसार भाग 3 की कंडिका 8 के स्थान में यह कंडिका रखी जायेः—

'8. There shall be paid to the Speaker and the Deputy Speaker of the provisional Parliament, such salaries and allowances as were payable to the Speaker and the Deputy Speaker of the Constituent Assmbly of the Dominion of India immediately before the commencement of this Constitution.'

[अंतर्कालीन संसद के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि भारत डोमिनियन की संविधान सभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को इस संविधान सभा के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे।]

श्रीमान, वर्तमान रूप में भाग 3 में यह कहा गया है—

"लोक-सभा के अध्यक्ष और राज्य-परिषद् के सभापति को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि भारत डोमिनियन की संविधान सभा के अध्यक्ष को इस संविधान सभा के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे।"

स्थिति यह है कि अन्तर्वर्ती काल में लोक-सभा का न तो अध्यक्ष होगा और न राज्य-परिषद का सभापति। इस समय हम केवल अन्तर्वर्ती काल के लिये उपबन्ध बना रहे हैं बाद में संसद वेतन निश्चित करेगी। इस कारण यह वर्तमान संशोधन ठीक नहीं बैठता है। भाग 3 में आगे यह और कहा गया है—

"...और लोक-सभा के उपाध्यक्ष तथा राज्य-परिषद् के उप-सभापति को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि क्रमशः विधान-सभा के उप-सभापति और राज्य-परिषद् के उप-सभापति को 15 अगस्त 1947 से ठीक पहले दिये थे।"

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा पेश किये संशोधन में वे चाहते हैं—

"कि 'क्रमशः विधान-सभा के उप-सभापति और राज्य-परिषद् के उप-सभापति को 15 अगस्त, 1947 से ठीक पहले' शब्दों के स्थान में 'भारत डोमिनियन की संविधान सभा के उपाध्यक्ष को इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले' शब्द रख दिये जायें।"

यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो कंडिका का पाठ इस प्रकार का हो जायेगा:—

"....तथा लोक-सभा के उपाध्यक्ष को और राज्य-परिषद् के उप-सभापति को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि भारत डोमिनियन की संविधान सभा के उपाध्यक्ष को इस संविधान के ठीक पहले दिये थे।"

वर्तमान परिस्थिति में यह ठीक नहीं बैठता है। यह स्पष्ट है कि कोई न कोई त्रुटि है और इसी प्रकार मैंने यह संशोधन भेजा है। मेरे इस संशोधन में यह कहा गया है कि अन्तर्कालीन संसद के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि भारत डोमिनियन की संविधान सभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को इस संविधान सभा के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे। मुझे विश्वास है कि डॉ. अम्बेडकर से कोई भूल हो गई है और मसौदा समिति ने उस पर ध्यान नहीं दिया है। मैं अपने मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी का ध्यान भाग 3 के इस अंश की ओर आकर्षित करूंगा कि जिसमें स्पष्ट कोई त्रुटि है। अन्तर्वर्ती काल में हमारी लोक-सभा का कोई अध्यक्ष नहीं होगा। मैं आशा करता हूं कि मसौदा समिति द्वारा मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जायेगा और आवश्यक सुधार कर लिया जायेगा।

***अध्यक्षः** इसके बाद हम भाग 4 पर आते हैं। संशोधन संख्या 165 और 265 एक से हैं, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): श्रीमान, मुझे संशोधन संख्या 265, 267 और 270 पेश करने हैं। अंतिम सूची में मैंने उनको फिर से इकट्ठा रख दिया है।

श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उप-कंडिका (1) में—

(i) '5000' संख्या के स्थान में '6000' संख्या रख दी जाये; और

(ii) '4000' संख्या के स्थान में '5000' संख्या रख दी जाये।"

मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (3) में—

(i) 'thirty-first day of October 1948' (31 अक्तूबर, 1948) शब्द और अंक के स्थान में 'commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्द रख दिये जायें;

(ii) 'the commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्दों के स्थान में 'such commencement' (ऐसे प्रारम्भ) शब्द रख दिये जायें।"

अपने संशोधन के भाग (3) को मैं पेश नहीं करता हूं।

मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उप-कंडिका (1) में—

(i) '4000' संख्या के स्थान में '5000' संख्या रख दी जाये; और

(ii) '35,500' संख्या के स्थान में '4000' संख्या रख दी जाये।"

मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उप-कंडिका (2) में—

(i) 'thirty-first day of October 1948' (31 अक्तूबर, 1948) शब्द और अंक के स्थान में 'commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्द रख दिये जायें;

(ii) 'the commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्दों के स्थान में 'such commencement' (ऐसे प्रारम्भ) शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान, इस संशोधन के तीसरे भाग को मैं जरा-सा बदल कर रखना चाहता हूं यद्यपि प्रभाव उसका वही रहेगा। परिवर्तन केवल शाब्दिक होगा। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुसूची 2, भाग 4, कंडिका 11, उपकंडिका (2) में shall be entitled' (हक होगा) शब्दों के स्थान में 'shall in addition to the salaries specified

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

in sub-paragraph (1) of this paragraph be entitled' (इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतनों के सहित हक होगा) शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान साधारण..........

*__अध्यक्षः__ किसके सहित?

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः__ "इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतनों के सहित।" यह पद रचना ठीक इसी रूप में कंडिका 10 की उपकंडिका (3) में वर्तमान है और इस उपकंडिका में यह भूल से रह गई है और जिस संशोधन का मैंने सुझाव दिया है वह इस प्रसंग में उपयुक्त है।

श्रीमान, मेरे संशोधनों के साधारण प्रयोजन के संबंध में यह बात है कि वे उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के कुछ वेतनों के बढ़ाने के लिये हैं जिससे कि वर्तमान स्तर के अनुरूप वेतन हो जायें।

*__अध्यक्षः__ आप संशोधन संख्या 271 पेश नहीं कर रहे हैं?

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः__ मेरे पास उसकी प्रति नहीं है। श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 12 की उपकंडिका (ख) के मद (2) में से 'excluding any time during which the judge is absent' (उस समय को न गिनकर जिसमें कि वह न्यायाधीश छुट्टी लेकर अनुपस्थित है) शब्द अपमार्जित कर दिये जायें।"

श्रीमान, जैसा कि मैं कह चुका हूं मेरा उद्देश्य उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन को पुराने वेतन के बराबर लाना है। श्रीमान, न्यायाधीशों के सम्बन्ध में एक तथ्य को स्पष्ट याद रखना चाहिये। वह तथ्य यह है कि वकीलों में से बहुत ही सफल वकील को जिस की बहुत अधिक आय होती है उसे न्यायाधीश बनाया जाता है। यदि वह एक अच्छा वकील नहीं है और उसकी आय अधिक नहीं है तो वह न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने के योग्य नहीं है। यह बहुत ही आवश्यक है कि हमारे न्यायाधीशों का जीवन स्तर ठीक-ठीक हो और उसको एक उच्च स्तर पर रखा जाये। न्यायाधीश विशेषकर उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश महान विशेषज्ञ होते हैं और यह बहुत ही आवश्यक है कि इतने उच्च और महान कार्य के लिये उनको ठीक-ठीक पर्याप्त वेतन दिया जाये। उनको विशेषज्ञ के रूप में समझना चाहिये और उसी रूप में उनको वेतन मिलना चाहिये। यदि हम अपने न्यायाधीशों को पर्याप्त वेतन नहीं देंगे तो फल यह होगा कि कुछ समय के बाद उच्च तथा योग्य वकील उच्च

न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय की न्यायाधीशता स्वीकार करने के लिये आकर्षित नहीं होंगे।

न्यायाधीशों के वर्तमान वेतन के संबंध में डॉक्टर अम्बेडकर द्वारा एक यह संशोधन पेश किया गया है कि वह वेतन केवल वर्तमान न्यायाधीशों को ही दिया जाये। मैंने अनुच्छेद 310 पर कुछ दिनों पहले इस प्रभाव का एक संशोधन भेजा था, उस समय मुझसे यह स्पष्ट कहा गया था कि उसके लिये उपयुक्त स्थल इस अनुसूची में होगा। मैंने उस बात को मान लिया यद्यपि मैं इस बात से सहमत न था कि उसके लिये उपयुक्त स्थल यह है। उसके लिये स्थल तो अनुच्छेद 310 ही था क्योंकि जहां तक उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का संबंध है उस अनुच्छेद में यह उपबन्धित है कि 26 जनवरी 1950 को वर्तमान न्यायाधीश स्वत: ही उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश हो जायेंगे। अनुच्छेद 310 पूर्णतया अनावश्यक था क्योंकि प्रत्येक पदाधिकारी चाहे वह किसी भी भी पद पर हो स्वत: ही अपने पद पर बना रहेगा चाहे नया संविधान प्रवृत्त हो जाये। उनकी नौकरी को बनाये रखने के प्रयोजन से तो अनुच्छेद 310 स्पष्टतया निरर्थक है। अन्य किसी सेवा के लिये ऐसा उपबंध आवश्यक नहीं समझा गया। इस अनुच्छेद का आशय इससे अधिक गहरा था। न्यायाधीशों के वेतन संबंधी उपबन्धों का द्वितीय अनुसूची में हस्तान्तरण कर और इस प्रकार एक अति परोक्ष रीति से उनके वेतन कम करने का बहाना कर मैं समझता हूं कि इस अनुच्छेद को न्यायाधीशों के वेतन को चुपचाप प्रकट किये बिना कम करने के लिये पुर:स्थापित किया है। मेरा विचार यह है कि अनुच्छेद 310 के न होने पर भी न्यायाधीश उसी प्रकार से बने रहते जिस प्रकार से अन्य लोक सेवक बने रहेंगे।

उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों का विषय बिलकुल ही भिन्न है। जिस तिथि को यह संविधान प्रवृत्त होता है उसी तिथि से फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश बन जाते हैं। इस प्रकार का एक अनुच्छेद आवश्यक था परन्तु अनुच्छेद 310 जैसा अनुच्छेद उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए बिल्कुल ही आवश्यक न था। श्रीमान, अनुच्छेद 310 उच्च न्यायालय के वर्त्तमान न्यायाधीशों को इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि से स्वत: ही उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के रूप में कार्य करने की अनुमति देता है तो उनको वही वेतन मिलना चाहिये जो उन्हें पहले मिल रहा था। केवल इस आधार पर कि हमने यह विधान पास कर दिया है न्यायाधीशों का वेतन कम नहीं किया जा सकता है। अत: जैसाकि मैं कह चुका हूं मैं इस बात पर जोर देता हूं कि अनुच्छेद 310 न्यायाधीशों के वेतन को चुपचाप कम करने के लिये एक बड़ी ही वक्र योजना है।

इसके बाद हम औचित्य प्रश्न पर आते हैं। यह एक प्रसिद्ध बात है कि उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश अपने उच्च बौद्धिक कार्य के अनुरूप, जिसके करने के वे अभ्यस्त थे, उच्च वेतन प्राप्त कर रहे थे। यह सत्य है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद स्वीकार करने में एक बहुत ही सारवत आर्थिक त्याग करना पड़ता था। हमारे यहां इस सभा में दो प्रसिद्ध भूतपूर्व न्यायाधीश हैं और वे इस बात के साक्षी हैं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद बिना किसी कार्य के वेतन युक्त पद नहीं है। यह बड़े परिश्रम तथा बड़ी चिन्ता का पद है और उनके कर्तव्य का संतोषजनक निर्वहन करने के लिये महान परिश्रम तथा गुरुतर

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

कार्य आवश्यक है। हर कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय का एक बहुत अच्छा न्यायाधीश नहीं बन सकता है। केवल विशेषज्ञ और उच्च योग्यता प्राप्त व्यक्ति ही अच्छा न्यायाधीश बन सकता है। केवल वही व्यक्ति जिसका उच्च बौद्धिक विकास है और जो बहुत परिश्रम कर सकता है उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के कर्त्तव्य का निर्वहन कर सकता है। फेडरल न्यायालय या उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की योग्यता इससे भी अधिक होती है। अतः मैं निवेदन करता हूं कि इन न्यायाधीशों का वेतन कम नहीं होना चाहिये। जो वेतन उन्हें मिल रहा था वही मिलता रहे, परन्तु मसौदा समिति का वर्तमान सुझाव इस प्रभाव का है कि केवल वे न्यायाधीश जिनकी नियुक्ति 1 नवम्बर, 1948 से पूर्व हुई थी अपना पहला वेतन पाते रहेंगे, पर इसके बाद में नियुक्त हुए न्यायाधीश को बहुत कम मिलेगा। इस भेद विभेद में मुझे कोई न्याय नहीं दिखाई देता है विशेषकर इस बात को ध्यान में रखते हुए कि रुपये का मूल्य वर्तमान अवमूल्यन के अतिरिक्त भी बहुत ही गिर गया है। अवमूल्यन के पूर्व युद्ध के पूर्व काल की तुलना में रुपये का अधिक से अधिक मूल्य चार आने था। अब आधुनिक अवमूल्यन के कारण रुपये का मूल्य और भी अधिक गिर गया है और इस कारण न्यायाधीशों के वेतन का मूल्य अधिक नहीं रहा। वर्तमान समय में जो वेतन है वह कई वर्षों से चल रहा है। न्यायाधीशों को ऊंची दर के अनुसार आयकर भी देना होगा। यदि आप एक न्यायाधीश को अधिक वेतन देते हैं तो आप उसको पूरा का पूरा वेतन नहीं देते हैं। आप उसके वेतन में से 20 प्रतिशत काट लेंगे और यदि किसी न्यायाधीश को कोई और आय है तो यह कटौती और भी अधिक हो जायेगी।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** उस आय को वह छोड़ दें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यह इतना उच्च स्तर है कि हमारे जीवन में वह व्यवहार्य नहीं हो सकता। जिस माननीय सदस्य ने मेरे भाषण में बाधा डाली है वे अपनी आय छोड़ने के लिये राजी नहीं होंगे। मैं निवेदन करता हूं कि आयकर लगेगा। आयकर को काट कर वेतन बहुत कम रह जाता है और रुपये का कम मूल्य हो जाने के कारण उनको बहुत कम वेतन मिलेगा। उनसे जिस विशिष्ट ज्ञान और उच्च कोटि के कार्य की आशा की जाती है उस पर विचार करते हुए उनको पुराना वेतन मिलता रहना चाहिये। उनका जीवन इतना कोलाहल तथा उत्तेजनापूर्ण नहीं है जितना हम समझते हैं। समाज से वे लगभग पृथक से रहते हैं। राजनीति में भाग लेने का सुअवसर उन्हें नहीं मिल सकता।

***श्री एच.वी. कामतः** वे क्लबों में जाते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यदि वे क्लबों में जाते भी हैं तो उन्हें वहां हम में से कुछ लोगों से अधिक गंभीर होकर रहना पड़ता है। अवकाश प्राप्त करने के बाद न्यायाधीशों को अपने प्रान्त से बाहर वकालत करने दिया जाता था। परन्तु अब वे भारत के किसी भाग में भी वकालत नहीं कर सकते हैं। मैं निवेदन करता हूं कि उनके वेतन कम करने के पक्ष में कोई भी बात नहीं है।

उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन के विषय में यह बात है कि हमें 26 जनवरी से स्वतंत्रता मिलेगी। (**एक सदस्य**-हम स्वतंत्र हो गये हैं।) अभी हम

स्वतंत्र नहीं हैं। हम अभी भी एंग्लो अमेरिकन गुट के पल्ले से बंधे हुए हैं। हमें सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त नहीं हुई है। तत्कथित स्वाधीनता प्राप्त होने पर फेडरल न्यायालय उच्चतम न्यायालय में परिवर्तित हो जायेगा। उच्चतम न्यायालय के फेडरल न्यायालय के ही कृत्यों को नहीं करेगा बल्कि प्रीवी कौंसिल के कृत्यों को भी करेगा। वह भारत का सर्वोच्च न्यायालय होगा और विधि के विषय में वास्तव में वह उच्चतम न्यायालय होगा। उच्चतम न्यायालय को फेडरल न्यायालय से अधिक शक्तियां प्राप्त होंगी और उसका स्थान उच्चतर होगा।

परन्तु फेडरल न्यायालय की न्यायाधीशता की स्थिति को हम उच्चतम न्यायालय की न्यायाधीशता के उच्च स्तर पर ले जा रहे हैं और उनके पद और शक्ति में वृद्धि कर रहे हैं और साथ ही साथ हम उनके वेतन को भी घटा रहे हैं। यह अन्याय है। लोकतंत्र को क्रियान्वित करने के लिये इससे अधिक महत्वपूर्ण बात और दूसरी नहीं है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की दक्षता और योग्यता को अक्षुण्ण रखा जाये। यदि उनका वेतन घटा दिया जाता है तो न्यायालय को जिस सीमा की योग्यता, प्राधिकार और गौरव की आवश्यकता है उससे कम गुणों वाले लोग इन उच्च पदों की ओर आकर्षित होंगे। परिणाम यह होगा न्यायपालिका की कार्यकुशलता में कमी आ जायेगी। उच्चतम न्यायालय इस सभा तथा देश से सर्वोच्च सम्मान प्राप्त करने के योग्य है। उनकी भरती उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों में से की जायेगी और उन्हें भारत की राजधानी में आना होगा और उन्हें दो स्थानों पर व्यवस्था करनी पड़ेगी एक अपने घर पर और दूसरी राजधानी में।

इसके बाद मैं वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन संबंधी अपने संशोधन के दूसरे भाग पर आता हूं। वर्तमान प्रस्थापना के अनुसार जिन वर्तमान न्यायाधीशों की नियुक्ति 31 अक्तूबर, 1948 तक हुई थी केवल वे ही पुराना वेतन पाते रहेंगे। मैं निवेदन करता हूं कि यह तिथि मनमानी है और किसी पुष्ट सिद्धांत के आधार पर आश्रित नहीं है। उन न्यायाधीशों के वेतन की भी रक्षा करनी चाहिये जिनकी नियुक्ति इस तारीख के पश्चात् और नये संविधान के प्रतिष्ठापन से पहले हुई है। कोई ऐसी बात नहीं है कि उनको कम क्यों मिले। और फिर एक उपबन्ध यह भी है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को सरकारी गृह मिल सकेगा; यह भी केवल उन न्यायाधीशों के लिये है जिनकी नियुक्ति बाद में होगी। जिन न्यायाधीशों को उच्च वेतन मिल रहा था उनको उच्च वेतन तो मिलता रहेगा पर सरकारी गृह मिलने का उन्हें हक नहीं होगा। मैं निवेदन करता हूं कि इन दो वर्गों के न्यायाधीशों के साथ यह दो प्रकार का व्यवहार एक प्रकार की वाणिज्यिक प्रवृत्ति पर आश्रित है। मैं निवेदन करता हूं कि फेडरल न्यायालय के सब न्यायाधीशों को बिना किराये का सरकारी मकान मिलना चाहिये। इस विषय के इस अंग से संबंधित दो संशोधन आनुषंगिक हैं और उनका विशेष रूप से वर्णन करना अपेक्षित नहीं है।

इसके बाद मैं भाग (3) के संशोधन संख्या 270 पर आता हूं। यह संशोधन वास्तव में उस रिक्त स्थल की पूर्ति करता है जो मसौदा समिति से अनजाने में रह गया है। मैं कंडिका 10, उप-कंडिका (3) की ओर ध्यान आकर्षित करता हूं। उसमें यह कहा गया है कि "इस कंडिका की उप-कंडिका (1) में उल्लिखित

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

वेतन के साथ-साथ" वर्तमान न्यायाधीश को वर्तमान वेतन और नये वेतन का अन्तर मिलेगा। यह तथ्य कि जो वेतन उन्हें मिलेगा 'उसके साथ' पुराने और नये वेतनों का अन्तर भी मिलेगा कंडिका 10 में विशिष्ट रूप से उल्लिखित है। परन्तु कंडिका 10 की उप-कंडिका (2) में से यह शर्त्त निकाल दी गई है। इसका प्रभाव यह है कि जिस न्यायाधीश को इस समय 4000 रुपये मिल रहा है उसे नये वेतन के अनुसार 3,500 रुपये मिला करेगा और इस स्वीकृत 3,500 रुपये के साथ साथ 500 रुपया और मिलेगा; परन्तु जैसा यह है उससे यह ख्याल होता है कि उसको केवल विशेष वेतन मिलेगा जो 4,000 रुपये और 3,500 रुपये के अन्तर के बराबर केवल 500 रुपया होगा। इस तथ्य का अभाव कि यह राशि नये मंजूर किये गये वेतन के 'अतिरिक्त' होगी कंडिका 10 की उप-कंडिका (2) में है। यह एक ऐसी भूल है जो अनजाने में हो गई है और मैं निवेदन करता हूं कि मेरा संशोधन स्वीकार किया जाये।

मेरा अन्तिम संशोधन औपचारिक है और उसकी व्याख्या करने में मैं सभा का समय लेना नहीं चाहता हूं। मैं यह सुझाव देता हूं कि इस संशोधन को भी स्वीकार किया जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की–

(i) उप-कंडिका (1) में '5000' और '4000' अंकों के स्थान में क्रमशः '3000' और '2000' रखा जाये; और

(ii) उप-कंडिका (2) में 'without' शब्द के स्थान में on शब्द रखा जाये।"

श्रीमान, मैंने यह संशोधन इस कारण पेश किया है कि मुझे ऐसा अनुभव होता है कि न्यायाधीशों के लिये हम बहुत अधिक वेतन की व्यवस्था कर रहे हैं। डॉ. अम्बेडकर ने डोमिनियनों के न्यायाधीशों के वेतनों को उद्धृत किया था। जब तक हम आस्ट्रेलिया और कनाडा की औसत आय को ध्यान में नहीं लायेंगे तब तक हमारे मन में एक भ्रमपूर्ण धारणा घर कर जायेगी। मैं यह जानना चाहूंगा कि एक भारतीय और आस्ट्रेलिया या कनाडा निवासी की औसत आय में क्या अन्तर है।

एक और तर्क जो बहुधा उन लोगों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है जो न्यायाधीशों के लिये ऊंचे वेतन के पक्ष का समर्थन करते हैं वह यह है कि फेडरल संविधान में उन्हें महत्वपूर्ण भाग लेना है। यह कहा गया है कि न्यायाधीश लोगों की स्वतंत्रता के संरक्षक हैं और इस कारण उच्च वेतन पाने के वे हकदार हैं। गौरव का प्रश्न भी इसके अन्तर्गत आ जाता है। ये कुछ ऐसी बातें हैं जिनके आधार पर उच्च वेतन का प्रश्न उठाया जाता है। मैं इन आधारभूत विचारों के विवरणपूर्ण वाद विवाद में प्रवेश करूंगा जो मुझे प्रमाणहीन प्रतीत होते हैं।

यदि यह संविधान सभा एक भारतीय की औसत आय के आधार को नहीं मानती है तो वह राज्य की जड़ों को खोखला करेगी। इस देश में लोगों का पहले ही से यह विश्वास है कि हमारे जीवन के तथ्यों पर बिना विचार किये भारत सरकार ने न्यायाधीशों और राज्यपालों को समस्त सम्भाव्य सुविधायें दे रखी हैं। उसने मुट्ठी भर लोगों को सब तरह के भत्ते दे रखे हैं जिनको मुख्य राज्यपाल, प्रधान मंत्री, मंत्री, महालेखा परीक्षक इत्यादि के भिन्न-भिन्न पदों पर रखा गया है। क्या मैं सविनय यह निवेदन कर सकता हूं कि इस देश का जन साधारण राज्य के इन पदाधिकारियों को उपेक्षित दृष्टि से देखता है जो उच्च वेतन पा रहे हैं। मैं इस बात के पक्ष में नहीं हूं कि ऊंचे वेतन दिये ही न जायें। मैं इस बात के पक्ष में हूं कि जहां तक विदेशी विशेषज्ञों और प्रौद्योगियों का संबंध है वे जितना चाहें उतना उनको दिया जाये परन्तु जहां तक उन लोगों का संबंध है जो इस देश में रहते हैं, जहां तक उन लोगों का सम्बन्ध है जो कांग्रेस में हैं उनको देश के लिये कुछ त्याग करना चाहिये।

क्या मैं यह समझ लूं कि स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के बाद उन सब सिद्धान्तों को तिलांजलि दे दी जाये जिनके हम समर्थक थे? क्या उन सिद्धान्तों का परित्याग कर दिया जाये, उनकी उपेक्षा की जाये और उनकी हंसी उड़ाई जाये? दूरदर्शी राजनीतिज्ञों और लोक सेवकों को इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिये कि हमारे मन में आर्थिक समानता की प्रेरणा इतना उग्र तथा प्रबल रूप धारण कर चुकी है कि उसकी उपेक्षा सरलता से नहीं की जा सकती। इस सभा का कोई अन्य सदस्य जितना जानता है उतना ही मैं जानता हूं कि वर्त्तमान समय में आर्थिक समानता की सब बातें काल्पनिक हैं पर आप यह नहीं कह सकते कि यह एक ऐसा विचार है जिसका वास्तविक आधार कोई नहीं है। आप 5000 तथा 6000 रुपये वेतन की व्यवस्था कर रहे हैं परन्तु गांवों के जन साधारण के लिये क्या है? आप यह कहते हैं कि यह लोकतंत्रात्मक सरकार है। क्या आप ने जनता से पूछ लिया है? क्या आप जनता से पूछना चाहते भी हैं? मैं यह निवेदन करता हूं कि मैं उन वकीलों के मत का समर्थक नहीं हूं जो यह कहते हैं कि हमारे देश की राजनीति में न्यायपालिका को एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य करना है। यह सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति जीवन में स्वयं अपनी महत्ता को वास्तविकता से अधिक आंकता है। एक वकील सदैव यही सोचता है कि समाज में एक बड़ा लाभदायक काम हम करते हैं। मैं यह चाहूंगा कि ये व्यक्ति जिन्होंने महात्मा गांधी की पुस्तक नहीं पढ़ी (मैं "हिन्द स्वराज" का उल्लेख कर रहा हूं जो प्रत्येक कांग्रेसी के लिये राजनीति की धर्मपुस्तक है) वे उस अध्याय को देखें जिसमें उन्होंने वकीलों और न्यायाधीशों के प्रति अपने विचार प्रकट किये हैं।

मेरा विचार यह है कि इस अन्तर्वर्ती काल में न तो विधान मंडल और न न्यायपालिका को महत्वपूर्ण कार्य करना है वरन् कार्यपालिका को महत्वपूर्ण कार्य करना है। 19वीं शताब्दि में विशेषकर अमरीका में न्यायपालिका ने महत्वपूर्ण कार्य किया पर जिस परिस्थिति में हम आज हैं उसके अनुसार इस देश में न्यायपालिका का भविष्य अच्छा नहीं है। न्यायपालिका एक ऐसे समाज में महत्वपूर्ण कार्य करती है जहां विधिवाद की भावना का प्राधान्य होता है जहां राज्य की जड़ें दृढ़ होती हैं और जहां क्रान्तिकारी उत्पात नहीं होते हैं। भारत में इसके विपरीत तथ्य हैं।

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

हमारी आर्थिक व्यवस्था तेजी के साथ अवनत होती जा रही है, प्रति दिन आन्तरिक क्रान्ति का भय उग्ररूप धारण करता चला जा रहा है और क्षितिज में विदेशी युद्ध के संकटपूर्ण मेघ छाये हुये हैं। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि न्यायपालिका किस प्रकार हमारे संविधान की संरक्षिका होगी, लोगों के जीवन और स्वातंत्र्य की वह किस प्रकार रक्षा कर सकेगी जब कि लोग दुष्टता करने और राजविद्रोह की शरण लेने पर उतारू हैं।

एक और तर्क जो बहुधा प्रस्तुत किया जाता है वह यह है कि आपको इतना वेतन और भत्ता देना चाहिये कि न्यायाधीश अपने ऐश्वर्य का निर्वाह कर सकें। यह पूरा का पूरा विचार अभ्रद्रता से परिपूर्ण है। इस देश के लोगों का आदर्श सादा जीवन उच्च विचार रहा है। ऐश्वर्य का सम्बन्ध धन से नहीं है। केवल पश्चिम में ही यह विचारधारा प्रचलित है। पर विद्वान मनुष्य हमारे विचारों की उपेक्षा करते हैं। हममें से कुछ लोग जो अपने पुराने आदर्श और पुरानी परम्परा पर आरूढ़ हैं वे इस बात पर जोर देंगे कि हम सादा जीवन और उच्च विचार के पुराने आदर्श पर आरूढ़ हैं और आरूढ़ रहेंगे यद्यपि हम यह भली भांति जानते हैं कि हमारी बात सुनी नहीं जायेगी।

इस सम्बन्ध में मैं एक बात कहूंगा जो कि यद्यपि पूर्ण रूप से संगत नहीं है। लोग यह पूछ सकते हैं कि संविधान सभा के सदस्यों के भत्ते के बारे में क्या विचार हैं। मैं 45 रुपये प्रति दिन के पक्ष में नहीं हूं। मैं यह चाहता हूं कि हमें तीसरे दर्जे का दिल्ली बिना किराये जाने का एक पत्र दे दिया जाया करे जिसके कारण हम यहां सभा में उपस्थित हो सकें। हम चाहते हैं कि सरकार हमारे लिये एक निवास-स्थान की व्यवस्था करे जिसमें हम विधान निर्माता की हैसियत से रह सकें और कृत्य कर सकें। हम यह चाहते हैं कि यह सरकार हमारे लिये केवल जेल के खाने की व्यवस्था करे और इससे अधिक हम एक पाई भी नहीं चाहते हैं।

*__डॉ. पी.एस. देशमुखः__ क्या आप जेल का खाना खा रहे हैं?

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ इस विषय पर मैं बहुत गंभीर हूं। मुझे विश्वास है कि यह प्रश्न इस सभा या दूसरी सभा में उठाया जायेगा। यदि मैं इस विषय पर और अधिक कुछ कहूं तो सभा के समक्ष इस समय जो विषय है उसके प्रति वह कहना उपयुक्त नहीं होगा।

*__डॉ. पी.एस. देशमुखः__ क्या आप जेल में खाना खा रहे हैं?

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ लोगों की आर्थिक दशा का ऐश्वर्य से कोई सम्बन्ध नहीं है। जिन लोगों को इस देश में सबसे अधिक सम्मान प्राप्त हुआ है वे सन्त लोग हैं न कि लखपती। एक न्यायाधीश का ऐश्वर्य वह जो कुछ काम करेगा उस पर निर्भर करेगा बशर्त्ते कि वह उस कार्य को सेवा और त्याग की भावना से करे। ऐश्वर्य जो कुछ वेतन और भत्ते हम उसे देंगे उस पर निर्भर नहीं करेगा। ऐसे लोग भी हैं जो न्यायाधीश के लिये उच्च वेतन के पक्ष में हैं। वे कहते हैं कि कोई अच्छा वकील न्यायाधीश होना स्वीकार न करेगा जब तक आप उसे

उचित वेतन और भत्ता न देंगे अतः जब तक आप उसे उच्च वेतन का प्रलोभन नहीं देंगे तब तक वह न्यायाधीश के पद को स्वीकार करने के लिये प्रस्तुत नहीं होगा। श्रीमान, हम ऐसे न्यायाधीश नहीं चाहते हैं जिनको जब तक उचित वेतन और भत्ते न मिलें तब तक वे काम ही न करें। जो लोग भाड़े के टट्टू होते हैं वे अविश्वसनीय होते हैं। यदि वे तब तक काम नहीं कर सकते जब तक कि 5000 रुपये वेतन न दिया जाये तो वे हमारे स्वातंत्र्य के रक्षक किस प्रकार हो सकते हैं? जहां तक वकीलों का संबन्ध है किसी एक सीमा से अधिक कमाने से रोकने के लिये हमें कुछ न कुछ करना चाहिये। हमें कुछ ऐसी विधियां पार करनी चाहिये जिनसे 1000 रुपया प्रति मास से अधिक अर्जन करना उनके लिये असंभव हो जाये।

***श्री महावीर त्यागी:** आप का संशोधन क्या है?

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद: मैं अपने संशोधन का समर्थन कर रहा हूं कि वेतन कम कर दिये जायें और वे हमारे जीवन के आर्थिक तथ्यों के अनुरूप हों। मैं इस प्रश्न पर अधिक विस्तार-पूर्वक तथा अधिक कुशलतापूर्वक विचार प्रस्तुत करना चाहूंगा, पर इसके लिये मेरे पास समय कम है, मैं स्वयं इस अनुच्छेद पर साधारण रूप में बोलना चाहता हूं।

मैं अनुसूची तथा राष्ट्रपति के वेतन की ओर निर्देश करता हूं। मेरे मित्र प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना द्वारा पेश किये गये संशोधन का मैं समर्थन करता हूं। मैं इस संशोधन का इस कारण समर्थन करता हूं कि मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस संविधान के अधीन प्रथम राष्ट्रपति ही अन्तिम राष्ट्रपति होगा। इस आधार पर मैं ये बातें कह रहा हूं। यदि मैं समझता कि यह संविधान आने वाले कुछ काल तक रहेगा, कि कांग्रेसी ही नहीं बल्कि गैर कांग्रेसी भी भारतीय संघ का राष्ट्रपति बन सकेगा तो शायद मैं यह बातें नहीं कहता जिन्हें मैं कहने जा रहा हूं। यह वास्तव में बड़े ही आश्चर्य और असमंजस का विषय है कि हमारे विश्वासप्रद नेता राजगोपालाचार्य के समान व्यक्ति सरदार पटेल जैसे व्यक्ति जिसने सब कुछ बलिदान कर दिया है आप जैसे महान व्यक्ति धन की बात मन में ला सकते हैं। मैं जानता हूं कि ये महान आत्मायें धन की बात अपने मन में नहीं ला सकती हैं। श्रीमान, मैं जानता हूं कि आप या कांग्रेस हाई कमान्ड का कोई सदस्य राष्ट्रपति होगा।

***अध्यक्ष:** आपको व्यक्ति विशेष के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहिये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं किसी व्यक्ति विशेष का उल्लेख नहीं कर रहा हूं। मैं यह कह रहा हूं। कि कांग्रेस हाई कमान्ड का कोई न कोई सदस्य राष्ट्रपति होगा।

***अध्यक्ष:** आपको यह अनुमान करने की भी आवश्यकता नहीं है।

***श्री महावीर त्यागी:** लो कमान में से कोई क्यों नहीं?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मेरी यह धारणा है कि कांग्रेस हाई कमान का कोई सदस्य, जिसने अपने समस्त जीवन भर बिना वेतन और भत्ते के कार्य किया है, बड़ी खुशी से बिना वेतन और भत्ते के संघ के राष्ट्रपति के रूप में कार्य करेंगे। मुझे खेद है मैं केवल वेतन का ही उल्लेख कर रहा हूं न कि भत्ते का। मुझे

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

यह प्रतीत होता है कि यदि हम यह साहस का कदम उठायें तो इससे कांग्रेस की प्रतिष्ठा फिर स्थापित हो जायेगी। इसका मनोवैज्ञानिक महत्व है। कांग्रेस के शत्रु मेरे इस विचार को पसन्द नहीं करेंगे। वे ऐसे विचार को अव्यवहार्य समझेंगे। पर कांग्रेसियों की क्या हालत है? हमें दूसरों से कमर कसने के लिये कहने का कोई अधिकार नहीं है। जब तक हम अपने आवरण ठीक न कर लें तब तक अंहिसा और सत्य की बातचीत हम किस मुंह से कर सकते हैं।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि बहुत-सी बातें दुहराई जा रही हैं। अन्य सदस्यों ने ये बातें कही हैं और आप भी कह चुके हैं। मैं माननीय सदस्य को यह स्मरण कराना चाहूंगा कि इस विषय को और राज्यों के विषय में हमें आज समाप्त करना है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मैं दो बातें और कहना चाहता हूं। मैं इसलाम के महान खलीफाओं का उदाहरण देना चाहूंगा। मैं चाहता हूं कि हमारा राष्ट्रपति महान उमर और अबू बक्र के पदचिन्हों पर चले। गांधी जी बड़े प्रेम से इनका उदाहरण दिया करते थे। क्या हम कुछ यूरोप की विचारधारा की बलिवेदी पर एशिया के इन सिद्धान्तों की भेंट चढ़ा रहे हैं? मैं सभा का ध्यान उस पत्र की ओर आकर्षित करूंगा जिसे गांधीजी ने अपने घुटनों पर लार्ड इर्विन को लिखा थाः उन्होंने रोटी मांगी थी और एवज में मिले पत्थर।

***अध्यक्षः** श्री कामत का संशोधन संख्या 167 इस पेश किये गये संशोधन के अन्तर्गत आ जाता है। श्री कामत संशोधन संख्या 168 तथा अन्य संशोधनों को पेश कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूंः

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (3) को अपमार्जित किया जाये।"

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) को अपमार्जित किया जाये।"

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (3) में 'Every such Judge' (प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश) शब्दों के स्थान में 'Every Judge of a High Court' (उच्च न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश) शब्द रखे जायें।"

संशोधन संख्या 168 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उप-कंडिका (3) को अपमार्जित करने का प्रयास है। इसी प्रकार संशोधन संख्या 171 प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (3) को अपमार्जित करने का प्रयास है।

इस भाग की कंडिका 11 की उप-कंडिका (3) के संबंध में अन्तिम संशोधन न्यूनाधिक रूप में शाब्दिक है।

"न्यायाधीशों द्वारा किराया न देने के सम्बन्ध में" के पद या खंड को अपमार्जित करने वाला संशोधन संख्या 167, जैसा कि श्रीमान आप ने कहा है, मेरे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद द्वारा पेश किये गये संशोधन के अन्तर्गत आ जाता है।

अन्तिम संशोधन को सर्वप्रथम लेते हुए अर्थात् संशोधन संख्या 173 को—चूंकि वह छोटा-सा संशोधन है मसौदा समिति का ध्यान, मैं जिस रूप में वह पद है उसके अनुसार उसके अस्पष्ट अर्थ की ओर आकर्षित करता हूं। कंडिका 11 की उप-कंडिका (3) में "प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश" पद का प्रयोग किया गया है और इस भाग की कंडिका 10 की उप-कंडिका (4) में "सर्वोच्च न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश" पद का प्रयोग किया गया है। यदि "प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश" यह पद, जो कंडिका 11 की उप-कंडिका (3) में है, इस सभा द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो, उसका यह अर्थ होगा कि उसका निर्देश केवल उन लोगों के लिये होगा जो इस कंडिका 11 की उप-कंडिका (2) में निर्दिष्ट है। मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती है कि यह कंडिका 10 की उप-कंडिका (4) की भाषा के अनुरूप क्यों न हो जिसमें उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश निर्दिष्ट है। यह ठीक तथा उचित है कि इस पद में इस प्रकार का रूप भेद कर दिया जाये कि वह स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को निर्दिष्ट करे न कि केवल "प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश" को। अन्यथा इसका यह गलत अर्थ लगाया जा सकता है कि इसका निर्देश केवल उन न्यायाधीशों से है जो कंडिका (2) में निर्दिष्ट हैं।

मैं आशा करता हूं कि मेरे इस संशोधन में विरोध करने के लिये डॉक्टर अम्बेडकर को कोई बात नहीं मिलेगी। और मेरे इस शाब्दिक तथा औपचारिक संशोधन को स्वीकार करने का वे मार्ग खोज निकालेंगे।

श्रीमान, मेरा पहला संशोधन जो श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन के अन्तर्गत आ गया है, न्यायाधीशों को अपने निवास-स्थानों का किराया न देने के उपबन्ध को अपमार्जित करने का प्रयास करता है। मुझे आश्चर्य है कि न्यायाधीशों के साथ अपने संविधान में इतनी उदारतापूर्वक व्यवहार क्यों किया जाता है। यदि मेरे माननीय साथी डॉक्टर अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये रूप में उस अनुसूची को देखें तो उनको यह विदित होगा कि न्यायाधीशों से संबंधित भाग 4 लगभग डेढ़ पृष्ठों में है और राष्ट्रपति, राज्यपाल, अध्यक्ष और उपाध्यक्ष संबंधी अन्य बातें एक या दो कंडिकाओं में रख दी गई हैं। सभा को यह भी याद होगा कि इस अनुसूची पर भाषण देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने इस अनुसूची में निर्दिष्ट राष्ट्रपति तथा अन्य महानुभावों के बारे में भाषण देने से पूर्व न्यायाधीशों से संबंधित भाग को लिया। यद्यपि मैं मसौदा समिति के किसी सदस्य की निन्दा नहीं करता हूं पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मसौदा समिति जिसमें वकीलों का प्राधान्य है ही, उसके लिये न्यायाधीशों के प्रति दया भाव दिखाना शायद अनिवार्य हो गया और कुछ द्वेषपूर्ण

[श्री एच.वी. कामत]

समालोचक यह भी कहें कि हममें से कुछ भावी भारत के न्यायाधीशों के पक्ष में रहना चाहते हैं और उनकी सहानुभूति चाहते हैं।

***अध्यक्षः** कृपया निन्दापूर्ण बातें न कहें।

***श्री एच.वी. कामतः** मेरे ऐसे विचार नहीं हैं, पर सभा के बाहर ऐसी द्वेषपूर्ण आलोचना के लिये हम स्वयं अवसर देते हैं, और इस कारण मैंने सोचा कि किराया न देने का यह उपबन्ध प्रतिष्ठात्मक नहीं है और संविधान की प्रतिष्ठा को गिराता है। यदि सभा इस संविधान के अनुच्छेद 48 पर ध्यान देगी जो स्वीकार किया जा चुका है तथा इस सभा द्वारा पारित अनुच्छेद 135 पर भी ध्यान देगी तो उसे यह विदित होगा कि गणराज्य के राष्ट्रपति को और राज्य के राज्यपाल को बिना किराये के निवास-स्थान नहीं दिया गया है। मेरा अभिप्राय यह है कि यह बात विशिष्ट रूप से संविधान में नहीं है। राज्यपालों और राष्ट्रपति से संबंध रखने वाले अनुच्छेदों में यह कहा गया है कि राष्ट्रपति या राज्यपाल के लिये पदावास होगा। उन अनुच्छेदों में केवल यही कहा गया है और किराया देने या न देने का उनमें कोई उल्लेख नहीं है। सभा से मैं यह पूछता हूं कि क्या यह कहना हमारे लिये गौरवहीन बात नहीं है कि ऐसे उच्च पदस्थ व्यक्ति अपने गृह के लिये किराया नहीं देंगे? हमने उस कल्याणकारी उपबंध को स्वीकार कर लिया है कि कोई भी उच्च पदस्थ व्यक्ति, चाहे वह कितने ही उच्च पद पर क्यों न हो, आयकर देने से मुक्त नहीं रहेगा, जैसा कि अब तक गवर्नर जनरल रहता था। जब कि गरीब से गरीब मजदूर तक अपने छोटे से मकान का एक रुपया या कुछ अधिक किराया देता है तो एक न्यायाधीश अपने मकान का किराया क्यों न दे। मुझे विश्वास है कि कोई भी न्यायाधीश इस साधारण सुविधा की मांग नहीं करेगा। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि डॉ. अम्बेडकर ने किराये संबंधी इस उपबंध को जो कि इस सभा और इस संविधान के लिये इतना अपमान जनक है क्यों इस सभा में पेश करने का प्रयास किया है।

इसके बाद वेतन पर आइये, मैं उनसे झगड़ा करना नहीं चाहता हूं क्योंकि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधिपति को 5000/- रुपये मिलेंगे और अन्य न्यायाधीशों में से प्रत्येक को 4000/- रुपये मिलेंगे और छोटे न्यायाधीश को 3500/- रुपये मिलेंगे। पर जो कुछ मैं नहीं समझ पाया वह यह है कि फेडरल न्यायालय के वर्तमान पदधारी न्यायाधीशों को और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को वही वेतन प्राप्त करने का हक होगा जो उन्हें मिल रहा है। उस दिन माननीय वल्लभभाई पटेल ने सेवा की शर्तें, वेतन, निवृत्ति वेतन, तथा राज्य के सचिव आईसीएस और शायद भारतीय आरक्षी सेवा तथा ऐसी अन्य सेवाओं संबंधी ऐसे ही विशेषाधिकारों को बनाये रखने के पक्ष का समर्थन किया था। इस सभा ने उनके तर्क और निवेदन को उस विशेष अनुच्छेद को पार कर के स्वीकार किया था और वह ठीक ही था क्योंकि अगस्त 1947 में सरकार द्वारा उन सेवाओं को प्रत्याभूति दी गई थी।

मैं यह नहीं जानता हूं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को, फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को और महालेखा-परीक्षक को इस प्रकार की प्रत्याभूति दी गई है या नहीं कि जब यह संविधान प्रवृत्त होगा उनका वेतन और सेवा की अन्य शर्तें सुरक्षित रहेंगी। यदि सरकार ने ऐसी प्रत्याभूति दे दी है तब तो मुझे कुछ भी नहीं कहना है। सरकार में हमारा पूर्ण विश्वास है और हम यह नहीं चाहते कि सरकार अपने वचनों से हटे और यदि उसने उच्च न्यायालय तथा फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को कोई ऐसा वचन दे दिया है तब तो बात दूसरी है। अन्यथा मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती है कि हम इस अनुसूची में एक इस प्रकार का विशेष खंड या कंडिका क्यों रखें कि वर्तमान पदधारियों को पूर्ववत वेतन मिलता रहेगा। मुझे विश्वास है कि यदि हम उच्च न्यायालय या फेडरल न्यायालय में सेवा करने वाले न्यायाधीशों से कुछ पूछें तो जैसे वे देशभक्त हैं और अपने देश की भरसक सेवा करने के लिये इच्छुक हैं उनमें से अधिकांश इस विशेष रियायत की मांग नहीं करेंगे। यदि एक या दो न्यायाधीश इस विशेष रियायत की मांग करते हैं यद्यपि इसमें मुझे संदेह है तो मैं समझता हूं कि जब सरकार द्वारा इन व्यक्तियों को कोई प्रत्याभूति नहीं दी गई है तो इन चन्द व्यक्तियों के लिये संविधान में उपबन्ध नहीं होना चाहिये। संविधान समूचे देश, उसके महानुभावों, उसकी जनता, उसके पदाधिकारी, तथा लोक सेवक इत्यादि इत्यादि के लिये है न कि कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के लिये। यदि कुछ चन्द व्यक्ति इस संविधान के अधीन देश की सेवा करने के लिये राजी नहीं हैं तो अपनी नीति के विरुद्ध उन चन्द व्यक्तियों के लिये उपबन्ध बनाने के कार्य को न तो हम करेंगे और न हमें करना चाहिये। असैनिकों के पक्ष में ठीक कहा गया था और सभा द्वारा इस कारण स्वीकार कर लिया गया था कि उन असैनिकों को सरकार द्वारा प्रत्याभूति दी गई थी परन्तु जहां तक मैं जानता हूं उच्च न्यायालय और फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को वेतन और सेवा की शर्तों के सम्बन्ध में कोई प्रत्याभूति नहीं दी गई है। श्रीमान, इसी कारण मैंने संशोधन संख्या 168 और 171 को पेश करने का प्रयास किया है। जिनका संबंध फेडरल न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के पदों पर वर्तमान पदधारियों से है।

श्रीमान, इन वेतनों के बारे में एक बात और है। अपने माननीय मित्र श्री त्यागी से मैं पूर्णतया सहमत हूं कि राज्य के सर्वोच्च पदाधिकारी राष्ट्रपति, न्यायाधीश और राज्य के मन्त्रियों को सच्चे त्यागी होना चाहिये। उनको गीता के उपदेशानुसार मन और आत्मा से सच्चा त्यागी होना चाहिये। गीता में कहा गया है:

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
सः सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः।

किसी मनुष्य को जो वेतन मिल रहा है वह उसकी कसौटी नहीं है वरन् कसौटी तो यह है कि वह उस वेतन के मोह में है या नहीं। यदि वह 'अपरिग्रह' की भावना से प्रेरणा प्राप्त करता है उच्चतर उद्देश्य के लिये किसी भी समय अपने पद को त्यागने के लिये तैयार है तो वह सच्चा त्यागी है। सच्चा सन्यासी है।

[श्री एच.वी. कामत]

उसे इसी भावना से सेवा करनी चाहिये। यद्यपि मैं उस सीमा तक तो नहीं जाऊंगा कि 'सर्वे गुणा कांचन मा श्रयन्ते, पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्व काल के समान इस आधुनिक संसार में प्रत्येक व्यक्ति, उसका मन और उसकी आत्मा उन शारीरिक परिसीमाओं द्वारा प्रतिबन्धित हैं जो उसके शरीर और जीवन को बनाये रखने के लिये आवश्यक हैं। उसे ऐसी स्थिति में रखना है कि उसे अभाव न खटके; उसे ऐसी स्थिति में रखना है कि उसे भय न सताये; उसे ऐसी स्थिति में रखना है कि वह अपने आपको सुरक्षित समझे। इसीलिये वेतन दिये जाते हैं और दिये जाने चाहियें।

डॉ. अम्बेडकर ने इन वेतनों को स्वीकार करने के लिये कहा है और संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा, तथा अन्य देशों से कुछ अंक उद्धृत किये हैं। मेरे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने यह ठीक प्रश्न उठाया है कि इन वेतनों का राष्ट्रीय आय अथवा उन देशों की प्रति व्यक्ति की आय से क्या संबंध या अनुपात है। मैं इस विषय में नहीं जाना चाहता हूं। डॉ. अम्बेडकर वाद विवाद का उत्तर देते हुए इस विषय पर कुछ प्रकाश डालेंगे। मैं जो कुछ कहना चाहूंगा वह यह है। यह खबर है कि हमारे मंत्रियों ने अपने वेतनों में स्वेच्छा से 15 प्रतिशत की कटौती स्वीकार कर ली है। यदि यह सत्य है तो यह एक बड़ा ही प्रशंसनीय विनिश्चय है। श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने हमारे अपने भत्ते और वेतन का उल्लेख किया था। मैं अपने भत्तों में कमी करने के पक्ष में हूं। परन्तु मैं यह भी सुझाव दूंगा कि भत्तों के इस विषय.......

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** बशर्ते कि सब यह स्वीकार करें।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं यही कहने वाला था: बशर्ते कि सब लोक सेवक अपने वेतनों में से स्वेच्छा से कटौती स्वीकार करें; मैं यह सुझाव दूंगा कि यद्यपि यह सब जानते हैं कि इस सभा के सदस्यों को कोई वेतन नहीं मिलता है, केवल भत्ता मिलता है, परन्तु अन्तर्कालीन संसद के समवेत होने पर या उससे शीघ्र संसद के सदस्यों के वेतन के दुःखद प्रश्न को अधिक पुष्ट आधार पर रखें और सदस्यों को वेतन दिया जाये। और जब वे यहां आयें तो उनको साधारण भत्ता मिले। यह अधिक अच्छा होगा।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** और अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण होगा।

***श्री एच.वी. कामतः** जी हां, अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण भी। आखिर सदस्यों को दूर-दूर से यहां आना पड़ता है न कि मंत्रियों के समान जो दिल्ली में ठहरते हैं और दिल्ली में ही अपना काम करते हैं।

अन्त में मैं एक बार और अपने उस संशोधन का उल्लेख करूंगा जो किराया न देने वाले उपबन्ध को अपमार्जित करने का प्रयास करता है। यदि इसको शामिल किया ही जाये तो मैं यह भी सुझाव दूंगा कि उसमें हम एक सामान सहित गृह का उपबन्ध भी शामिल कर दें और यह और रखें कि एक न्यायाधीश के गृह

में कितने स्नानागार होंगे, कितने शयनागार होंगे। अन्यथा न्यायाधीश के लिये बिना किराये के गृह के संबंध का यह निर्देशन जिस संविधान पर हम विचार कर रहे हैं उसकी प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं है। इस उपबंध को निकाल देना चाहिये, विशेष कर इस बात पर विचार करते हुए कि राष्ट्रपति और राज्यपालों के संबंध के अनुच्छेदों में ऐसा कोई उपबन्ध नहीं है जो उन्हें भाटक देने से वंचित करे।

समाप्त करने से पूर्व मैं मसौदा समिति से और सभा से हार्दिक निवेदन करूंगा कि वे इस बात का ध्यान रखें कि पहले चाहे कितना ही वेतन नियत किया गया हो परन्तु हम एक स्वतन्त्र गणराज्य के रूप में, स्वतन्त्र भारत के रूप में,—जिसे राष्ट्रमंडल में उच्च स्थान प्राप्त करना है, जिसे मनुष्य की उन्नति, स्वातन्त्रय और कल्याण के संघर्ष में महत्वपूर्ण भाग लेना है—मानव का जो मूल्य आज है उसका पुनर्मूल्यन करने के लिये सच्चे और विनम्र रूप में कम से कम प्रयत्न तो करें, और यदि मैं कह सकता हूं तो यह कहूंगा कि मनुष्य को नया मार्ग तथा नया प्रकाश दिखाये जो नवमूल्यन और नव प्रकाश के लिये इस युद्ध से पीड़ित और जर्जरित संसार में भटक रहा है।

***श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका:** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैंने संशोधन 212 और 213 की सूचना दी है जो कार्यक्रम के पत्र में, पृष्ठ 4 पर है:

> "कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उप-कंडिका (2) में 'Thirty first day of October, 1948' शब्दों के पश्चात् 'or as Chief Justice before the tenth day of October, 1949' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

और कुछ संशोधन सुझाये गये हैं। डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्थिति की व्याख्या सुन लेने के पश्चात् कि उन लोगों को जिनकी नियुक्ति 31 अक्तूबर सन् 1948 के बाद हुई थी उनको यह संकेत दिया जा चुका था कि उनका वह वेतन संविधान सभा के विनिश्चय के अधीन है और यदि संविधान सभा ने उनका वेतन कम करने का विनिश्चय किया तो उस कमी को उन्हें मानना पड़ेगा, अत: उसे मैं इस संशोधित रूप में पेश करना नहीं चाहता हूं। मुझे कंडिका 11 के खंड (2) में एक कमी मालूम होती है और यह स्पष्ट है कि वह कमी इस कारण है कि मसौदा समिति का उस कमी की ओर ध्यान नहीं गया। वह खंड इस प्रकार है "प्रत्येक व्यक्ति जो 31 अक्तूबर, 1948 से पूर्व किसी प्रान्त के उच्च न्यायालय में स्थायी प्रकार से न्यायाधीश के रूप में नियुक्त था और इस संविधान के प्रारम्भ पर अनुच्छेद 310 के खंड (1) के अधीन तत्स्थानी राज्य के उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो गया तो उस को यदि वह ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले इस कंडिका की उप-कंडिका (1) में उल्लिखित दर से अधिक वेतन पाता था तो विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।" इससे यह विचार पैदा होता है कि जो व्यक्ति 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व न्यायाधीश

[श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका]

नियुक्त हो चुका था वह इस संविधान के प्रारम्भ पर उतना ही वेतन प्राप्त करता रहेगा तो उसे मिल रहा था। परन्तु यदि कोई व्यक्ति 31 अक्तूबर के पश्चात् नियुक्त हुआ था तो वह इस खंड के अधीन आयेगा अर्थात् उसका वेतन कम हो जायेगा और उसे 3500/- रुपया मिलेगा। यदि ऐसा कोई न्यायाधीश जिसकी नियुक्ति 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व हुई थी, उसी प्रान्त में न्यायाधीश बना रहता है और इस अरसे में अक्तूबर 1948 के पश्चात् उसका वेतन बढ़ जाता है तो यदि वह उसी प्रान्त में रहता है तो उसे अधिक वेतन मिलता रहेगा। परन्तु यदि ऐसा न्यायाधीश किसी अन्य प्रान्त में जाने के लिये राजी हो जाता है और नये प्रान्त में दूसरा घर चलाने के एक और दायित्व को ग्रहण कर लेता है तो उसे इस अतिरिक्त वेतन का लाभ नहीं होगा। यदि किसी न्यायाधीश का बंगाल से नागपुर को तबादला हो जाता है तो उसे इस अतिरिक्त वेतन का लाभ नहीं होगा। मुझे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि मसौदा बनाने में अवश्य कोई न कोई त्रुटि है। अन्यथा मसौदा लेखक का यह अभिप्राय कदापि नहीं हो सकता है कि जो व्यक्ति उसी प्रान्त में बना रहता है उसे अधिक वेतन या अन्तर मिले और यदि उसका तबादला हो जाता है या वह दूसरे प्रान्त में जाना स्वीकार कर लेता है तो उसे अधिक वेतन न मिले। वह न्यायाधीश रहता है और अक्तूबर 1948 के पूर्व वह न्यायाधीश के रूप में नियुक्त हुआ था। अत: आपकी अनुमति से मैं यह सुझाव देता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) में 'in the corresponding State' शब्दों के स्थान में 'in a State for the time being specified in Part I of the first Schedule, शब्द रखे जायें।"

अत: इस संशोधन का प्रभाव यह होगा–

"कि कंडिका 11, उपकंडिका (2) में 'चतुर्थ पंक्ति में आये हुए 'corresponding State' शब्दों के स्थान में 'in a State for the time being specified in Part I of the first Schedule' शब्द रखे जायें।"

ऐसी कोई बात नहीं है कि किसी न्यायाधीश को जिसने दूसरे प्रान्त में जाना स्वीकार कर लिया है इस प्रकार दंडित क्यों किया जाये जब कि कोई न्यायाधीश जो अपने ही प्रान्त में बना रहता है और उसे तबादले तथा अतिरिक्त व्यय का कष्ट नहीं उठाना पड़ता है उसे अधिक मिले। मैं समझता हूं कि यदि इस बात पर समुचित विचार किया जाये तो मेरे संशोधन को स्वीकार करने में मसौदा समिति को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये। इससे उसी कोटि के मनुष्यों में असमानता दूर हो जायेगी और ऐसे दो व्यक्तियों में जो भेद विभेद किया जा रहा है वह समाप्त हो जायेगा। यह संशोधन किसी विशेष व्यक्ति का पक्ष ग्रहण करने हेतु नहीं है। इसके अन्तर्गत वे सब न्यायाधीश आ जायेंगे जो इस कोटि के हैं। यदि एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त को तबादला हो जाता है तो यदि उनको अधिक वेतन मिल

रहा है तो वे सब इस कोटि में आ जायेंगे। यदि ऐसा कोई मामला नहीं है तो नियम के अधीन उस का किसी पर प्रभाव नहीं पड़ेगा। अन्यथा यह असमानता या भूल या शायद एक प्रकार का अनजाने का अन्याय है जो किसी भी ऐसे व्यक्ति के साथ हो सकता है जिसने दूसरे प्रान्त में जाना स्वीकार कर लिया है।

व्यक्तिगत रूप से वेतनों के सम्बन्ध में मुझे खुशी होती यदि सब न्यायाधीशों को वही वेतन मिलते रहते जो उन्हें मिल रहे थे क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि न्यायाधीशों को प्रलोभन से दूर रहना चाहिये। और उन्हें किसी वस्तु का अभाव नहीं होना चाहिये। आखिर उन्हें बड़े महत्वपूर्ण कर्तव्य का निर्वहन करना पड़ता है और उनके मार्ग में इतने प्रलोभन आते हैं कि यदि उन्हें किसी बात का अभाव हुआ तो वे प्रलोभन में आकर भ्रष्ट हो जायेंगे। यह सत्य है कि धन ही एक ऐसी वस्तु नहीं है जो व्यक्ति को प्रलोभित करे। आचरण और अन्य वस्तुएं भी आवश्यक हैं—कांग्रेस पक्ष ने न्यायाधीश के लिये 3500/- रुपये का वेतन नियत करना स्वीकार किया है इस बात पर मेरा कोई झगड़ा नहीं है—पर श्री ब्रजेश्वर प्रसाद और श्री कामत के संशोधनों का मैं अवश्य विरोध करता हूं जो न्यायाधीशों का वेतन और घटा कर 3000/- रुपये या 2000/- रुपये रखना चाहते हैं और मुझे आशा है कि जिस संशोधन को मैंने पेश किया है वह स्वीकार कर लिया जायेगा।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ मेरे नाम से कुछ संशोधन हैं।

*__अध्यक्ष:__ इसको मैं रखूंगा।

संशोधन संख्या 266 और 269 का आशय पूरा हो ही चुका। संशोधन संख्या 272 श्री सक्सेना।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ श्रीमान, मेरा संशोधन जिसको श्री कामत भी पेश कर चुके हैं। वह इस विशेष वेतन के उपबन्ध को हटाने के उद्देश्य से था। इस बात से मेरा सैद्धान्तिक विरोध है। इस समय हम नया संविधान बना रहे हैं और इस अनुच्छेद में हम उन वेतनों के लिये उपबन्ध बना रहे हैं जो भिन्न-भिन्न पद धारण करने वाले पदधारियों को स्वतन्त्र भारत में मिलने चाहियें। परन्तु मसौदा समिति द्वारा पेश किये गये इस संशोधन में हम यहां यह व्यवस्था कर रहे हैं कि न्यायाधीशों और महालेखा परीक्षक को वर्तमान वेतनों का वह भाग विशेष वेतन के रूप में मिलता रहेगा जो नये वेतनों से अधिक है। यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि इन पदाधिकारियों को कोई ऐसी प्रत्याभूति दी गई थी कि उनके पद धारण करने की अवधि में उनका वेतन कम नहीं किया जायेगा। मैं समझता हूं कि यह प्रत्याभूति फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये थी न कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों या अन्य न्यायाधीशों के लिये। मुझे स्वयं यह प्रतीत होता है कि यदि उच्चतम न्यायालय का भावी न्यायाधिपति और उच्च न्यायालय के न्यायाधीश और महालेखा-परीक्षक भविष्य में यहां जिस वेतन की व्यवस्था की है उससे संतुष्ट रहेंगे तो मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती कि वे न्यायाधीश जो उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के नये ढांचे में स्थान प्राप्त करेंगे और महालेखा परीक्षक अपने वेतनों को नये पदधारियों के लिये नियत वेतन के अनुसार नियत कराने में क्योंकर

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

संतुष्ट न हों। इस समय मुख्य न्यायाधिपति को 7000/- रुपया मिलता है और न्यायाधीशों को 5500/- रुपया मिलता है। नये उपबन्ध के अनुसार मुख्य न्यायाधिपति को केवल 5000/- रुपया मिलेगा। मान लीजिये बेंच के एक न्यायाधीश की मुख्य न्यायाधिपति के रूप में पदोन्नति की जाती है तो उसे 5000/- रुपये ही मिलेंगे। तो यह एक असमानता और होगी। न्यायाधीश के रूप में उसे 5500/- रुपया मिलता है। मुख्य न्यायाधिपति के रूप में उसे 5000/- रुपया ही मिलेगा। इन सब असमानताओं की व्यवस्था हम नहीं कर सकते हैं। जो कुछ मैं चाहता था वह यह था कि जो आश्वासन दिया गया था वह फेडरल न्यायालय के वर्तमान न्यायाधीशों के लिये था और जब हम फेडरल न्यायालय को मिटा रहे हैं और नये संविधान के अधीन उच्चतम न्यायालय की व्यवस्था कर रहे हैं तो मैं समझता हूं कि उस प्रत्याभूति का कुछ अर्थ है। साथ ही साथ मेरा यह भी ख्याल है कि ये पदाधिकारी भी इस विशेष वेतन को अच्छे रूप में स्वीकार नहीं करेंगे जो केवल उन्हीं को मिलेगा और उनके उत्तराधिकारियों को नहीं मिलेगा।

मैं एक क्षण के लिये भी यह नहीं सोच सकता हूं कि मुख्य न्यायाधिपति, न्यायाधीश या महालेखा परीक्षक को समुचित वेतन न मिले। मैं वास्तव में यह अनुभव करता हूं कि इन पदाधिकारियों को समुचित वेतन मिले क्योंकि उन से संबंध रखने वाले उपबन्धों में हमने उन पर कई शर्तें लगा दी हैं। उनको 65 या 60 वर्ष की आयु में सेवा से निवृत्त होना चाहिये। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को सेवा से निवृत्त होने के पश्चात् कहीं भी वकालत नहीं करने दिया जायेगा। ये सब कड़ी शर्तें हैं और मैं यह समझता हूं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ऐसे होने चाहिये जो स्वतंत्र हों, जो ऐसा निर्णय करने में न झिझकें जो तत्कालीन शक्तियों के विरुद्ध हों और इस प्रयोजन के लिये मैं समझता हूं कि उनके लिये कोई अभाव नहीं होना चाहिये और कार्यपालिका की कृपा प्राप्त करने के लिये भटकने की उन्हें आवश्यकता नहीं होनी चाहिये। अत: उन्हें अच्छे वेतन देने की प्रथा बहुत कल्याणकर है और मैं भी उन उपबन्धों का अनुमोदन करता हूं। मैं उनके निवृत्ति वेतनों के प्रश्न को भी विनिश्चित करना चाहूंगा। इंग्लैंड और अमरीका में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की निवृत्ति की कोई आयु नहीं है। वे 80 वर्ष की, 90 वर्ष की आयु तक रहते हैं और इस आयु पर भी वे बहुत अच्छे न्यायाधीश होते हैं। हम जानते हैं कि उनका निवृत्ति वेतन उनके वेतन का लगभग तीन चौथाई होता है। ये बहुत बड़े लाभ हैं और इनके कारण वे निर्णय देने में पूर्ण स्वतंत्र रहते हैं। अत: न्यायाधीशों को ऊंचे वेतन देने के विरोध में मैं नहीं हूं। इसके साथ ही साथ मैं यह भी जानता हूं कि इन लोगों को एक विशेष जीवन स्तर को बनाये रखना पड़ता है। उनको समाज से पृथक रहना पड़ता है और जनता से घुलमिल कर रहने के विशेषाधिकार से वे वंचित रहते हैं। वे पार्टियों और आमोद प्रमोदों में भाग नहीं ले सकते हैं जिनका आनन्द मंत्री महोदय उठाते हैं, अत: उनके लिये जो वेतन की व्यवस्था की गई है उससे मुझे विरोध नहीं है। पर मैं नहीं समझता हूं कि प्रथम पदधारियों और उनके उत्तराधिकारियों में कोई भेद विभेद या अन्तर हो। उन सबको समान वेतन मिलने दीजिये और यदि आप यह समझते हैं कि जो दिये गये वेतन समुचित नहीं हैं तो आप वेतनों को बढ़ा सकते हैं, पर यह न हो कि उच्चतम न्यायालय के वर्तमान न्यायाधिपति अधिक वेतन प्राप्त करें और उसका उत्तराधिकारी कम। यह नहीं करना चाहिये।

मुझे यह कहना है कि गणराज्य का लेखा तब तक सही नहीं होगा जब तक महालेखा-परीक्षक असाधारण रूप से स्वतंत्र तथा दृढ़ प्रकृति का व्यक्ति न हो। अतः मैं समझता हूं कि उसका वेतन अच्छा होना चाहिये और ठीक उसी आधार पर होना चाहिये जिस पर उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति का वेतन है। अतः वर्तमान पदधारियों और उनके उत्तराधिकारियों के वेतन में मैं कोई अन्तर नहीं चाहता हूं।

***अध्यक्षः** श्री सिधवा। मैंने आपके संशोधन संख्या 94 और 96 देख लिये हैं। मैं नहीं समझता हूं कि उनकी अब आवश्यकता है। वे मूल उपबन्ध पर थे जो संशोधन संख्या 92 में दिया हुआ है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन ने अब उस संशोधन का स्थान ग्रहण कर लिया है और ये संशोधन वहां ठीक नहीं बैठते हैं। मैं समझता हूं कि संशोधन इतने ही हैं। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी ऐयर।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, नये संविधान के अधीन उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों के संबंध के अनुच्छेद का समर्थन करते हुए माननीय डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश की गई प्रस्थापना के समर्थन में मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा। इस समय प्रस्थापित किया गया वेतन का परिमाण लगभग वही है जो मसौदा समिति ने गत वर्ष फरवरी में प्रकाशित संविधान के मसौदे में प्रस्थापित किया गया था—सिवा इसके कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन में कुछ अन्तर है—बिना किराये के मकान की व्यवस्था की गई है और सहायक न्यायाधीशों के वेतन में कुछ कमी है। न्यायाधीशों के वेतन नियत करने में न्यायपालिका की प्रतिष्ठा, कार्य कुशलता और स्वतंत्रता को बनाये रखने के महत्व के प्रति समिति पूर्णतया सचेष्ट थी—विशेषकर एक फेडरल संविधान के अन्तर्गत जहां कि उच्चतम न्यायपालिका को केवल नागरिक और नागरिक के तथा राज्य और नागरिक के परस्पर झगड़ों को निर्णय करने के लिये ही आमंत्रित नहीं किया जाता है वरन् महान संविधानिक महत्व के उन प्रश्नों के विनिश्चय करने के लिये भी आमंत्रित किया जाता है जिन पर संविधान की भावी प्रगति निर्भर करती है। कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका और अमरीका के विशाल महाद्वीप के वेतनों के परिमाण तथा अंग्रेजों के शासन के अधीन भारत में के वेतनों पर और इसके साथ-साथ अपने देश की सामान्य निर्धनता को ध्यान में रखते हुए कुछ कमी करने की आवश्यकता पर भी समिति ने ध्यान दिया।

वेतन पुनरीक्षण करने के किसी प्रश्न में हम जिस प्रशासी व्यवस्था से सूत्रपात कर रहे हैं उसकी पूर्णतया उपेक्षा नहीं कर सकते हैं। यदि हम नये अभिकर्त्ता के रूप में एक नई कार्यपालिका और न्यायपालिका के साथ एक दम किसी संविधान को आरम्भ करते तब तो हमें मन चाहा क्षेत्र मिल सकता था और अपने देश की आर्थिक तथा अन्य परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए हम जो चाहते उस वेतन की व्यवस्था कर सकते थे। यद्यपि सैद्धांतिक रूप में हमें जैसा चाहें वैसा संविधान बनाने का पूर्ण स्वातंत्र्य है और जो वेतन हम चाहें उसकी व्यवस्था करने की स्थिति हमें प्राप्त है परन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि हम वर्तमान आधार पर यह ढांचा खड़ा कर रहे हैं। जो यह विशेष सुझाव मसौदा समिति ने दिया है उसके देने में वह इन विचारों से प्रभावित हुई। बिना किराये के मकानों का जो थोड़ा सा परिवर्तन किया गया है वह दिल्ली की अजीब हालत के कारण है। यह अनुभव

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

किया गया कि बिना किराये के मकान की व्यवस्था करने की आपकी स्थिति होनी चाहिए। न्यायाधीशों को निवास स्थान के लिये कुछ दिनों प्रतीक्षा करने की बजाय यह सोचा गया कि यह अधिक अच्छा होगा कि न्यायाधीशों के लिये पदावास की व्यवस्था हो। इस कारण न्यायाधीशों के निवास स्थान का उपबन्ध रखा गया है।

मैं यह भी कह दूं कि मसौदा समिति इस बात के प्रति भी पूर्णतया सचेष्ट थी। उदाहरणार्थ उस प्रणाली के प्रति जो यूरोप महाद्वीप में प्रचलित थी जहां कि न्यायाधीशों के वेतन इंग्लैंड में और उन देशों में दिये जाने वाले वेतनों से बहुत कम हैं जहां ब्रिटेन के विधि शास्त्र का प्रभाव है। हमने उस प्रणाली को ठीक ही अंगीकार किया है जिसे न्याय प्रशासन की ब्रिटिश प्रणाली कहा जाता है। यूरोप महाद्वीप में बेंच और बार पृथक पृथक संस्थायें हैं। बार में से न्यायाधीशों की भरती बिल्कुल नहीं होती है, तथा फ्रांस में के सेशन न्यायालय के अध्यक्ष का उच्चतम वेतन लगभग 1300/- रुपये है। इसी प्रकार से जर्मनी में उच्चतम वेतन 1300/- रुपये है। परन्तु वहां वे वास्तव में असैनिक सेवा का एक अंग होते हैं। हम इस बात के लिये उत्कंठित थे कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता बनी रहे और हमने यह अनुभव किया कि ऐसी स्वतंत्रता बार में से भरती करने से प्राप्त की जा सकती है और हमें इस तथ्य पर ध्यान देना पड़ा कि आप वृत्तिजीवी महानुभावों से बेंच पर स्थान स्वीकार करने की तब तक आशा नहीं कर सकते जब तक कि उनके लिये अच्छे पारिश्रमिक की व्यवस्था न की जाये। साथ ही साथ हमें देश की आर्थिक दशा की भी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये और न्यायाधीशों को एक पृथक वर्ग के रूप में देश के साधारण सेवा वर्ग से पूर्णतया पृथक रूप में भी नहीं समझ सकते हैं। इन सब बातों पर ध्यान देते हुए न्यायपालिका की स्वतंत्रता, उनके सम्मान तथा प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिए अन्य निकायों से परामर्श कर मसौदा समिति ने अन्त में वेतनों की इस योजना को प्रस्तुत किया।

कुछ और बातें हैं जिनकी ओर वाद-विवाद में ध्यान दिलाया गया है। पहली बात यह है कि गत वर्ष नवम्बर से पूर्व नियुक्त हुए न्यायाधीशों के लिये किसी विशेष उपबन्ध की कहां आवश्यकता है? जहां तक उन असैनिक सेवाओं और न्यायाधीशों का संबंध है जिनकी नियुक्ति अपने अपने पदों पर भारतीय डोमीनियन अधिनियम के लागू होने से पहले हो गई थी उनका वेतन डोमीनियन अधिनियम के एक विशेष उपबन्ध द्वारा सुरक्षित किया गया था जिसकी ओर उस दिन असैनिक सेवाओं पर वाद-विवाद होते समय ध्यान दिलाया गया था। सामान्यतया मुख्य न्यायाधिपति के सहित न्यायाधीशों को डोमिनियन संविधान के लागू होने के बाद तक तथा गत वर्ष फरवरी में संविधान के प्रकाशित होने के बाद तक भी उसी पुराने वेतन पर नियुक्त करते चले आये; और हमको यह बताया गया है कि गत नवम्बर के पश्चात् मंत्रीमंडल ने भविष्य में नियुक्त होने वाले व्यक्तियों को यह ज्ञात करा दिया था कि उनको उस नये वेतन के अधीन अपने-अपने पदों को स्वीकार करने के लिये तत्पर होना चाहिये जो संविधान सभा द्वारा स्वीकार किया जायेगा। इन बातों के कारण उन लोगों की उपलब्धियों को सुरक्षित रखने के लिये जिनकी नियुक्ति गत वर्ष नवम्बर से पूर्व हुई थी एक विशिष्ट उपबन्ध रखा गया है। यह ठीक है कि उन न्यायाधीशों के लिये जिनकी नियुक्ति नवम्बर से पूर्व

हुई थी इस वेतन के अन्तर को हम भत्ते के रूप में रखें क्योंकि साधारण सिद्धांत यह है कि वेतन का वही परिमाण सब न्यायाधीशों पर प्रयुक्त हो। जिनकी नियुक्ति न्यायाधीश के रूप में नवम्बर से पूर्व हुई थी उन्होंने अपना कार्य एक निश्चित समझौते पर संभाला था और इस कारण समिति ने यह ठीक समझा कि वेतनों में जो अन्तर है उसे विशेष भत्ते के रूप में समझ लिया जाये। यह उस सिद्धांत पर जोर देने के लिये है कि सामान्य तथा स्वीकृत वेतन वही है जिसकी व्यवस्था संविधान के साधारण उपबन्धों में की गई है। इसमें सन्देह नहीं कि इसके कारण कुछ असमानतायें आ गई हैं। उनको भुगतना पड़ेगा उनके लिये कोई और चारा नहीं है। उदाहरणार्थ उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को यदि बाद में उच्चतम न्यायालय का न्यायाधिपति नियुक्त किया जाता है। तो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में उसे जो वेतन मिलता था उससे उसे कम वेतन मिलेगा यद्यपि यह बात है कि उसे दिल्ली में बिना किराये के निवास गृह का अधिकार है। और फिर एक ही प्रकार के कृत्यों के निर्वहन करने वाले न्यायाधीशों को उसी न्यायालय में भिन्न-भिन्न वेतन मिलेंगे, पर इन असमानताओं का किसी प्रकार से भी इस अनुच्छेद में निहित सिद्धांत पर प्रभाव नहीं पड़ सकता है। यह एक कारण है कि प्रस्थापित रूप में इस अनुच्छेद में जैसा कि मैं कह चुका हूं वेतनों के अन्तर को विशेष भत्ते के रूप में रखा गया है। जहां तक न्यायाधीशों का संबंध है मैं इन बातों की ओर निर्देश करना चाहता था।

वाद-विवाद के समय एक यह भी प्रश्न उठाया गया था कि संविधान में एक यह विशेष उपबन्ध होना चाहिये कि राष्ट्रपति के वेतन पर आय कर होगा। जब तक संविधान में उन्मुक्ति नहीं दी गई है तब तक संविधानिक विधि का यह स्वीकृत सिद्धांत है कि प्रत्येक पदाधिकारी पर चाहे वह राष्ट्रपति हो, या मुख्य न्यायाधिपति उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो या मंत्री हो आयकर लगेगा। यदि आप यह एक विशेष उपबन्ध बनाते हैं कि राष्ट्रपति के वेतन पर आयकर लगेगा तो इस तर्क को प्रस्तुत करने का मार्ग खुल जायेगा कि जहां तक अन्य पदाधिकारियों का संबंध है उन पर आयकर नहीं होगा। संविधान का यह सिद्धांत तो नहीं है। अतः राष्ट्रपति के वेतन की 10,000/- रुपये तक वृद्धि करते हुए इस तथ्य का कोई निर्देशन जान बूझकर नहीं किया गया है कि उस पर आयकर लगेगा। जब तक संविधान किसी व्यक्ति को विशेष रूप से आयकर के प्रवर्त्तन से वंचित न करे तब तक प्रत्येक पदाधिकारी पर प्रत्येक उच्च पदस्थ व्यक्ति पर चाहे वह कितने ही उच्च पद पर क्यों न हो आयकर लगेगा। यह दूसरी बात है जिसका मैं जिक्र करना चाहता था।

इसके पश्चात् जहां तक राष्ट्रपति के भत्ते का संबंध है, उसके भत्ते के प्रश्न को लेने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उस स्थिति की पूरी मालकिन संसद है। राष्ट्रपति को जिन भत्तों का हक होगा उसकी विवरण पूर्ण सूची से इस संविधान को और भी अधिक जटिल बनाने की अपेक्षा इस तथ्य का निर्देशन कर दिया गया है कि अभी राष्ट्रपति को उन भत्तों का हक है जो गवर्नर जनरल को मिल रहे थे। बाद में संसद को अधिकार होगा कि वह इस समूचे प्रश्न पर विचार करे और परिस्थिति, देश की आवश्यकता और राष्ट्रपति के पद के गौरव के लिये जैसे अपेक्षित हो वैसे भत्ते का पुनरीक्षण करें।

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

इन चन्द शब्दों में, श्रीमान, डॉ. अम्बेडकर ने जिस रूप में इस अनुच्छेद को प्रस्तुत किया है उस रूप में मैं इसका समर्थन करता हूं।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांतः जनरल): अध्यक्ष महोदय, संविधान के मसौदे में यह उपबन्धित किया गया था कि राष्ट्रपति को 5000/- रुपया मासिक और राज्यपाल को 4,500/- रुपया मासिक वेतन मिले। उस समय यह प्रस्थापित किया गया था......

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** राष्ट्रपति को 5,500/- रुपया मासिक।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरूः** मेरे सामने संविधान का मसौदा है और उसमें से मैंने पढ़कर सुनाया है। इस कारण यह प्रस्थापित किया गया था कि मुख्य न्यायिक कृत्यकारियों के वेतन इन वेतनों से कम होने चाहिये। यह उपबन्धित किया गया था कि उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को 5000/- रुपया मासिक मिले और उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों को 4000/- रुपया मासिक मिले। यह भी उपबन्धित किया गया था कि उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को 4000/- रुपया मासिक और उच्च न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश को 3500/- रुपया मासिक वेतन मिले। जहां तक उच्च न्यायालय का संबंध है हम सब यह जानते हैं कि सब प्रांतों में न्यायाधीशों का वेतन समान नहीं था। मध्य प्रांत, उड़ीसा और आसाम प्रांतों में वेतन कम थे। आसाम सबसे कम वेतन देता था। वह मुख्य न्यायाधीश को 4000/- रुपये और अन्य प्रत्येक न्यायाधीश को 3500/- रुपये देता था। अब वेतन के इसी परिमाण को उच्च न्यायालय के सब न्यायाधीशों के लिये संविधान में प्रस्थापित किया गया है।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा हमारे सामने प्रस्तुत किये गये इस संशोधन में राष्ट्रपति और राज्यपालों के वेतन को बढ़ा दिया गया है। राष्ट्रपति का वेतन लगभग दुगना कर दिया गया है और राज्यपाल के वेतन में 1000/- रुपये बढ़ा दिये गये हैं परन्तु उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों को उतना ही रखा है जितना संविधान के मसौदे में दिया गया था। केवल एक अपवाद किया गया है और वह प्रांतीय उच्च न्यायालयों के स्थायी न्यायाधीशों के लिये है। संशोधन में कहा गया है कि 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व किसी प्रांत की उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त व्यक्ति इस संविधान के अनुच्छेद 310 के खंड (1) के अधीन संविधान के प्रारम्भ पर तत्स्थानी राज्य में उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो जाता है तो वेतन, छुट्टी और निवृत्ति वेतन संबंधी सेवा की शर्तों को उसे वही हक होगा जो हक उसे इस संविधान के प्रारम्भ के पूर्व था। अब एक संशोधन प्रस्थापित किया गया है कि 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त व्यक्तियों के लिये बनाये गये विशेष उपबन्ध का अपमार्जन किया जाये। मैं यह समझता हूं कि जिन लोगों की नियुक्ति 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के रूप में स्थायी प्रकार से की जायेगी उनके लिये एक अपवाद किया जा रहा है—मोटे रूप में यह कहा जा सकता है कि इस उपबन्ध को स्वाधीनता अधिनियम 1947 की धारा 10 के अनुरूप बनाया जा रहा है। उस धारा ने राज्य सचिव (सेक्रटरी ऑफ स्टेट) या सपरिषद राज्य सचिव द्वारा नियुक्त किये गये सब व्यक्तियों को भारत की असैनिक सेवाओं का हक दिया था और उच्चतम न्यायालय

तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को उन्हीं सेवा की शर्तों और अन्य अधिकारों के उपभोग करने का हक दिया था जिनका वे भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन उपभोग कर सकते थे। डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वाधीनता अधिनियम की धारा 10 से कुछ बातों में भिन्न है। स्वाधीनता अधिनियम में केवल उन लोगों को प्रत्याभूति दी थी जिनकी नियुक्ति स्थायी रूप से न्यायाधीश के पद पर 15 अगस्त, 1947 से पूर्व हो गई थी। डॉ. अम्बेडकर का संशोधन इस अधिकार को 31 अक्तूबर, 1948 तक नियुक्त किये गये व्यक्तियों तक विस्तृत करता है। इस प्रकार यह संशोधन स्वाधीनता अधिनियम की धारा 10 के उपबन्धों से आगे बढ़ जाता है। पर उस धारा के उपबन्धों का पालन करने में यह वह एक प्रकार से असमर्थ हो जाता है। उस धारा में यह निर्धारित किया गया था कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया व्यक्ति चाहे वह किसी प्रांत में नियुक्त हो जिसमें वह अस्थायी या अतिरिक्त न्यायाधीश के रूप में सेवा कर रहा था अथवा किसी अन्य प्रांत में नियुक्त हो उसे सेवा की शर्तें और अन्य विशेषाधिकारों का वही हक होगा जो हक उसे 15 अगस्त 1947 के पूर्व था जिन लोगों की नियुक्ति राज्य सचिव या सपरिषद् राज्य सचिव द्वारा असैनिक सेवाओं में की गई थी उनके लिये स्वाधीनता अधिनियम द्वारा सृजित आभारों का पूर्णतया पालन किया गया है परन्तु उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से संबंध रखने वाली प्रत्याभूतियों का एक उस रूप में सम्मान नहीं किया गया जिसको मैं बता चुका हूं।

अत: मैं समझता हूं कि श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका द्वारा पेश किये गये संशोधन के पक्ष में विचार करना उचित है। मान लीजिये कोई व्यक्ति संयुक्त प्रांत के उच्च न्यायालय में न्यायाधीश नियुक्त हो जाता है। और मान लीजिये कि 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व वह पटना उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश हो जाता है। इस दशा में उसे 5000/- रुपये मासिक वेतन मिलने का हक नहीं होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के अनुसार उसे केवल 4000/- रुपये मिलने का हक होगा जो वही वेतन है जिसका उसे संयुक्त प्रांत से पटना जाने से पूर्व मिलने का हक था। यह मुझे बिलकुल वांछनीय प्रतीत नहीं होता है। यदि आप 31 अक्तूबर, 1948 के पश्चात् स्थायी रूप से नियुक्त हुए न्यायाधीशों के लिये अपवाद करना चाहते हैं तो जिस प्रत्याभूति को आप देना चाहते हैं उसका पालन केवल शब्दों में ही नहीं वरन् भाव रूप में भी करिये। आपने एक बार किसी व्यक्ति को उच्च न्यायालय का स्थायी न्यायाधीश नियुक्त कर दिया तो यदि उसका कार्य संतोषजनक है तो वह पदवृद्धि की आशा कर सकता है। प्रत्येक न्यायाधीश मुख्य न्यायाधिपति या उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नहीं बन सकता है पर कुछ न्यायाधीश बन सकते हैं, और मुझे ऐसी कोई बात दिखाई नहीं देती है कि योग्यता के आधार पर जिन न्यायाधीशों की पदवृद्धि की जाये उनको भारत शासन अधिनियम की धारा 10 के अधीन दी गई प्रत्याभूति से क्यों वंचित रखा जाये।

भावी न्यायाधीशों के संबंध में डॉ. अम्बेडकर ने संयुक्त राज्य अमरीका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और दक्षिणी अफ्रीका में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को दिये जाने वाले वेतनों का उल्लेख किया था। मुझे विश्वास है कि उन्होंने यह कहा था कि सिवा संयुक्त राज्य अमरीका के कोई भी देश भारत से अधिक वेतन न्यायाधीशों को नहीं देता था। यदि उन्होंने ऐसा कहा तो वे इस बात को भूल गये कि इंग्लैंड में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को भारत के किसी भी

[पंडित हृदय नाथ कुंजरू]

न्यायालय के न्यायाधीशों से अधिक वेतन मिलता है। मोटे रूप में हम यह कह सकते हैं कि संयुक्त राज्य अमरीका और इंग्लैंड के अलावा डॉ. अम्बेडकर द्वारा बताये गये अन्य किसी देश में न्यायाधीशों को उस वेतन से अधिक वेतन नहीं दिया जाता है जो भारत वर्ष में है।

मैं यह नहीं जानता हूं कि कनाडा, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में न्यायाधीशों का निवृत्ति वेतन क्या है। परन्तु न्यायाधीशों का वेतन निश्चित करने में हमें इन अधिकारों पर विचार करना पड़ेगा। संयुक्त राज्य अमरीका में मैं समझता हूं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश का निवृत्ति वेतन उसके वेतन के बराबर है। इंग्लैंड में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का निवृत्ति वेतन उसके वेतन का 70 प्रतिशत है। भारत शासन अधिनियम 1935 के अधीन अनुमानतः उस न्यायाधीश का वेतन जिसने बारह वर्ष तक सेवा की है उसकी वार्षिक आय का तृतियांश है। जिस समय भारत शासन अधिनियम पार किया गया था उस समय इस बात को न्याययुक्त मानने का चाहे जो कुछ भी कारण हो परन्तु यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को अब अधिक निवृत्ति वेतन दिया जाना चाहिये। डॉ. अम्बेडकर ने जो कुछ कहा था उसे मैं पूरा नहीं सुन सका पर अपने भाषण में उनको इस बात का उल्लेख करते हुए मैंने नहीं सुना। भारत के विभिन्न उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा भेजे गये ज्ञापन में वेतनों की कमी की निन्दा की गई है और न्यायाधीशों की यह सम्मति हो गई है कि न्यायाधीशों की निवृत्ति आयु और निवृत्ति वेतन की वृद्धि अब भी की जा सकती है। उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश बड़े उत्तरदायित्व पूर्ण पदों को धारण करेंगे बल्कि यह कहना चाहिये कि वे संविधान के संरक्षक होंगे। अतः यह आवश्यक है कि उनके वेतन, सेवा की शर्तें और स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि वे लोगों के लिये सम्माननीय होंगे, और अपने तथा अपने परिवार के निर्वाह करने की चिंता से मुक्त होकर वे अपने कर्त्तव्य का निर्वहन कर सकें।

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के संबंध में श्री नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा पेश किये गये संशोधन के मैं व्यक्तिरूप से पक्ष में हूं। परन्तु इस विषय पर सभा का विनिश्चय चाहे जो कुछ भी हो मैं समझता हूं कि उनके वेतन की कमी को यदि किसी दृष्टिकोण से न्याययुक्त माना जाता है तो यह नितांत आवश्यक है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों का निवृत्ति वेतन बढ़ाया जाये। मैं यह नहीं जानता हूं कि मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर के इस विषय में क्या विचार हैं पर यदि वे यह नहीं समझते कि वर्तमान निवृत्ति वेतन संबंधी उपबन्धों में परिवर्तन होना चाहिये तो मुझे आश्चर्य होगा। मैं समझता हूं उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को अपने वेतन का दो तिहाई निवृत्ति वेतन के रूप में मिलने दिया जाये।

***अध्यक्षः** जहां तक निवृत्ति वेतन का संबंध है क्या मैं यह बता सकता हूं कि जब तक संसद कोई अन्य उपबन्ध नहीं करती तब तक के लिये यह अन्तर्कालीन उपबन्ध है? यह विषय संसद के विचार पर छोड़ दिया गया है।

पंडित हृदय नाथ कुंजरूः वह बिल्कुल सच है, पर मैं यह चाहता था कि मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर इस विषय का भी उल्लेख करते जब उन्होंने अपने संशोधन की व्याख्या की थी। मैं यह जानता हूं कि न्यायाधीशों के निवृत्ति वेतन को नियत करते हुए संसद को एक विधि पार करनी होगी परन्तु यदि उत्तरदायित्व पूर्ण व्यक्ति यहां—और आज मसौदा समिति के सभापति से अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्ति अन्य कोई और नहीं है—इस सम्मति को प्रकट कर दे कि निवृत्ति वेतन बढ़ना चाहिये और वेतन का कम से कम दो तिहाई होना चाहिये तो मुझे विश्वास है कि इसका संसद पर प्रभाव पड़ेगा। परन्तु इस विषय को यदि यों ही छोड़ दिया जाता है और ऐसा कोई व्यक्ति, जिसकी सम्मत्ति को संसद महत्व दे, इसका उल्लेख नहीं करता है और माननीय सदस्यों को यह कल्पना करने दी जाती है कि वर्तमान निवृत्ति वेतन संबंधी उपबन्धों में परिवर्तन अपेक्षित नहीं है तो यह बहुत ही संदेहात्मक है कि संसद निवृत्ति वेतन बढ़ाने की ओर प्रवृत्ति दिखाये।

श्रीमान, इस प्रश्न का उल्लेख करने का यह कारण है। मैं इस वाद विवाद को अधिक देर तक जारी रखना नहीं चाहता हूं। मैं नहीं समझता हूं कि मसौदा समिति द्वारा किसी भी संशोधन के स्वीकार किये जाने की तनिक भी गुंजाइश हो। विगत दो वर्षो से इस सभा में वाद विवाद ने जो प्रणाली ग्रहण की है हम सब उससे परिचित हैं। कोई संशोधन चाहे कितना ही युक्ति युक्त रहा हो मसौदा समिति द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है पर मैं आशा करता हूं कि मसौदा समिति के सभापति यह कहना अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध नहीं समझेंगे कि उनकी सम्मति में उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के निवृत्ति वेतनों में वृद्धि होनी चाहिये।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रासः जनरल)**:** श्रीमान, अब इस विषय पर मत लिया जाये।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अब इस विषय पर मत लिया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान, मैं जो कुछ कहना चाहता हूं वह यह है कि केवल तीन बातें उठाई गई हैं जिनका कुछ उत्तर अपेक्षित है। श्री कामत ने उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को बिना किराये के मकान देने वाले अनुसूची 2 में के उपबन्धों पर आक्रमण किया है। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये संविधान में मकान की व्यवस्था करने वाले इस प्रश्न को बड़ी सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् तय किया गया था। यह विचार किया गया है कि बहुत से न्यायाधीश जिनकी उच्चतम न्यायालय में नियुक्ति होगी वे इस देश के दूरवर्ती सिरों से राजधानी में आयेंगे और यह ठीक नहीं होगा कि उनके पद के अनुरूप मकान तलाशना उन पर ही छोड़ दिया जाये। यह मुख्य कारण था कि मसौदा समिति ने मकान की व्यवस्था करने के आभार को अपने ऊपर लिया।

बिना किराये के प्रश्न के संबंध में हमने सोचा कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के उस वेतन की कमी के लिये यह एक प्रकार का प्रतिकर है जिसकी

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

हमने फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों की तुलना में प्रस्थापना की है। व्यक्तिगत रूप में मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ था जब कि मेरे माननीय मित्र श्री कामत ने इस बात पर उपहासपूर्ण टिप्पणी की थी क्योंकि यदि वे किसी व्यक्ति के लिये बिना किराये के मकान की व्यवस्था करने के विरोध में हैं तो मुझे उनसे यह आशा थी कि वे उन बिना किराये के मकानों के बारे में कुछ कहते जिनकी व्यवस्था हमने राष्ट्रपति तथा गवर्नर जनरल को भी की है।

***श्री एच.वी. कामतः** मैंने किराये का उल्लेख नहीं किया था और मैं यह भी नहीं जानता कि आया बिना किराये का मकान है या नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं समझता हूं कि श्री कामत द्वारा उठाये गये इस विशिष्ट प्रश्न में कोई सार नहीं है।

वेतनों की राशि पर सभा में भिन्न-भिन्न प्रकार की सम्मतियां प्रकट की गई हैं। मेरे मित्र श्री शिब्बन लाल सक्सेना ने तो यहां तक कहा कि राष्ट्रपति को एक रुपये से अधिक नहीं मिले। मेरा विचार है कि इस पारिश्रमिक पर सिवा किसी घूमने वाले सन्यासी के अन्य कोई व्यक्ति राष्ट्रपति का कार्य करने के लिये नहीं मिलेगा, और मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक घूमने वाले सन्यासी के अन्य गुण चाहे तो कुछ भी हों परन्तु संघ का राष्ट्रपति होने के लिये तो वह एक बिल्कुल ही अयोग्य व्यक्ति होगा।

न्यायाधीशों के वेतन के संबंध में दो प्रश्न उठाये गये हैं। सभा में कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जिन्होंने यह कहा है कि अनुसूची में न्यायाधीशों का जो वेतन नियत किया गया है उससे उनका वेतन अधिक होना चाहिये। कुछ लोगों ने यह कहा है कि जो वेतनमान हमने नियत किया है वह देश के वेतन देने के सामर्थ्य से कोई संबंध नहीं रखता है। मेरे विचार से इस देश में हम जो वेतन नियत करें उसका लोगों की आय से संबंध हो इस विषय का नारा एक अच्छा राजनैतिक नारा है, पर मैं यह कहने के लिये उद्यत नहीं हूं कि यह व्यवहारिक राजनीति है। इस देश में तथा अन्य देशों में भी वेतन प्रदाय और मांग के नियम पर निर्भर होने चाहिये। दुर्भाग्यवश अथवा सौभाग्यवश विधान मंडल के सदस्य के रूप में कार्य करने के लिये बहुत से लोग मिल सकते हैं अतः उनके वेतन को हम बहुत कम परिमाण पर नियत करते हैं। सौभाग्यवश अथवा दुर्भाग्यवश उन लोगों का प्रदाय जो न्यायाधीश के रूप में कार्य कर सकते हैं बहुत ही संकुचित है। मैं यह तो नहीं कहता कि वे अलभ्य हैं। परन्तु वास्तव में यह बड़ी कठिनाई से मिलने वाली वस्तु है अतः हमें बाजार दर का मूल्य देना होगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस अनुसूची में नियत किये गये वेतन तत्कथित बाज़ार दर के मूल्य के अनुरूप है। अतः मैं नहीं समझता हूं कि जो वेतन हमने नियत किये हैं उन पर कोई बड़ा झगड़ा हो सकता है।

इसके बाद मेरे मित्र श्री हिम्मतसिंहका द्वारा पेश किये संशोधन पर मैं आता हूं। मैं यह कह देना चाहूंगा कि उनके और मेरे विचार में एक ही बात है और उनके मन में जो बात है उनके लिये मुझे असीम सहानुभूति है। पर वे यह चाहते हैं कि मैं एक व्यापक प्रस्थापना को स्वीकार कर लूं अर्थात् इस प्रस्थापना को जिसमें कहा गया है "भाग 1 में वर्णित किसी भी राज्य क्षेत्र में नियुक्त कोई न्यायाधीश।"

मैं समझता हूं कि इन खंडों में व्यापक निबन्धनों के संशोधन का पुर:स्थापन करना वांछनीय नहीं है क्योंकि 31 अक्तूबर, 1948 के पश्चात् प्रांतीय आधार पर न्यायाधीशों के वेतनों में अपने संविधान के उपबन्धों के कारण कोई अन्तर नहीं हो सकता। उच्च न्यायालय के क्षेत्र पर विचार किये बिना जिसके अन्तर्गत वह न्यायालय स्थित है सब न्यायाधीशों को एक आधार पर रख दिया गया है। अत: किसी असमानता को दूर करने के लिये कोई व्यापक उपबन्ध आवश्यक नहीं है क्योंकि ऐसी असमानता के दुबारा होने की संभावना नहीं है। असमानता इस कारण वर्तमान है कि भारत शासन अधिनियम में न्यायाधीशों के वेतन संबंधी कुछ उपबन्धों ने प्रांतों में परस्पर भेद विभेद कर दिये थे। मैं अपने मित्र से जो कुछ कहना चाहता हूं वह यह है कि मसौदा समिति यह आशा करती है कि इस विशेष दशा के लिये अन्य रीति से उपबन्ध कर दिया जायेगा। यदि यह हुआ तो इस विशेष संशोधन को स्वीकार करना आवश्यक नहीं होगा और इसके कारण जिन व्यक्तियों पर प्रभाव पड़ेगा उनको भी लाभ हो जायेगा। परन्तु यदि मसौदा समिति यह देखती है कि यह नहीं होगा तो मसौदा समिति ने यह अधिकार अपने लिये सुरक्षित रखा है कि उन विशेष व्यक्तियों की शिकायत को दूर करने के लिये एक विशेष संशोधन प्रस्तुत करे।

समाप्त करने से पूर्व मैं इस खंड में एक या दो वाक्यांश और पुर:स्थापित करने के हेतु आपकी अनुमति प्राप्त करने के लिये निवेदन करूंगा, जो भूल से रह गये हैं। मैं भाग 4, कंडिका 11 उपकंडिका (2) की ओर निर्देश करता हूं। सप्तम पंक्ति में 'shall' शब्द के पश्चात् मैं इन शब्दों को प्रविष्ट करना चाहूंगा:

'in addition to the salaries specified in sub-paragraph (1) of this paragraph.'

कंडिका 11 की उपकंडिका (3) के लिये मेरे पास एक संशोधन और भी है। प्रथम 'such' को मैं निकालना चाहूंगा और 'judge' शब्द के पश्चात् मैं यह जोड़ना चाहूंगा:

'of the High Court.'

***श्री एच.वी. कामत:** यह मेरा संशोधन है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं उसे स्वीकार करता हूं, और अब मैं आशा करता हूं कि संशोधित रूप में सभा इस अनुसूची को स्वीकार करेगी।

***श्री आर.के. सिधवा:** राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतनों और भत्तों के संबंध के मेरे संशोधन के बारे में क्या विचार है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उसे संसद निश्चित करेगी।

***अध्यक्ष:** अब मैं भागों के अनुसार अनुसूची पर के संशोधनों पर मत लूंगा। इस समय हम अनुसूची के भाग 1 पर हैं।

[अध्यक्ष]

प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में '10000' अंक और '5500' अंक के पूर्व 'not more than' शब्द प्रविष्ट किये जायें।'

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में '10,000 Rupees' शब्द और अंक के स्थान में '1 rupee' शब्द और अंक रखे जायें।'

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतन संबंधी अंकों के पश्चात् यह और जोड़ दिया जाये:–

'The salaries of the President and the Governor shall be subject to income tax.' "

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की 2 और 3 कंडिकाओं के स्थान में ये कंडिकायें रखी जायें:–

'There shall be paid to the President and to the Governor the following allowance:

'The President shall draw a lump sum of Rs. 1,35,000 per annum which shall include the cost of renewal, repair and maintenance of furniture and motor vehicles, also including sumptuary, contract and all other allowances.

'The President shall also draw Rs. 10,000 per annum as touring expenses.

'The Governors shall draw a lump sum of Rs. 15,000 per annum which shall include the cost of renewal, repair and maintenance of furniture and motor vehicles, also including sumptuary, contract and all other allowances.

'The Governors shall also draw Rs. 7,000 per annum as touring expenses.' "

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** भाग 2 पर कोई संशोधन नहीं है। मैं भाग 3 पर आता हूं। संशोधन संख्या 264।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 210 के निर्देशानुसार भाग 3 की कंडिका 8 के स्थान में यह कंडिका रखी जायेः—

'8. There shall be paid to the Speaker and the Deputy Speaker of the provisional Parliament, such salaries and allowances as were payable to the Speaker and the Deputy Speaker of the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately before the commencement of this Constitution.' "

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं भाग 4 पर आता हूं। संशोधन संख्या 265।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (1) में–

(1) '5000' अंक के स्थान में '6000' अंक रखे जायें, और

(2) '8000' अंक के स्थान में '5000' अंक रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 267 का भाग (3) पेश नहीं किया गया था। अतः मैं प्रथम दो भागों पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (3) में—

[अध्यक्ष]

(1) 'thirty first day of October 1948' शब्दों और अंक के स्थान में 'commencement of this Constitution' शब्द रखे जायें;

(2) 'commencement of this Constitution' शब्दों के स्थान में 'such commencement' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की उपकंडिका 11 में–

(1) '4000' अंक के स्थान में '5000' अंक रखा जाये, और

(2) '3500' अंक के स्थान में '4000' अंक रखा जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) में–

(1) 'Thirty first day of October 1948' शब्दों और अंक के स्थान में 'commencement of this Constitution' शब्द रखे जायें;

(2) 'the commencement of this Constitution' शब्दों के स्थान में 'such commencement' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 270 का तीसरा भाग डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। जिस रूप में तीसरा भाग है। वह इस प्रकार है:

"इस अनुसूची के भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) में 'specified in sub-paragraph 4 (1) of this paragraph shall' शब्दों के पश्चात् 'in addition to the salary specified in sub-paragraph (1) of this paragraph' शब्द जोड़ दिये जायें।"

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं अपने शब्दों को रखना चाहूंगा।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं शब्द तो वही हैं।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरूः** वाद-विवाद समाप्त करने के प्रस्ताव के स्वीकार हो जाने के पश्चात् क्या डॉ. अम्बेडकर को संशोधन पेश करने का हक है?

***अध्यक्षः** श्री नज़ीरुद्दीन अहमद के शब्दों और जो कुछ डॉ. अम्बेडकर ने कहा है उस में कोई अन्तर नहीं है।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह हैः

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका 2 की सातवीं पंक्ति में 'shall' शब्द के पश्चात् निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:

'in addition to the salaries specified in sub-paragraph 1 of this paragraph.' "

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह हैः

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 12 की उपकंडिका (ख) के मद (2) में से 'excluding any time during which the judge is absent on leave' शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह हैः

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की–

(1) उपकंडिका (1) में '5000' और '4000' अंकों के स्थान में क्रमशः '3000' और '2000' अंक रखे जायें; और

(2) उपकंडिका (2) में 'without' शब्दों के स्थान में 'on' शब्द रखा जाये।"

***अध्यक्षः** प्रश्न यह हैः

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (3) को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (3) में 'Every such judge' शब्दों के स्थान में 'Every judge of a High Court' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

"कि द्वितीय अनुसूची के भाग 1 के स्थान में यह अनुसूची रखी जाये:–

'PART I

PROVISIONS AS TO THE PRESIDENT AND THE GOVERNORS OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART I OF THE FIRST SCHEDULE—

1. There shall be paid to the President and to the Governors of the States for the time being specified in Part I of the First Schedule the following emoluments *per mensem,* that is to say:—

   The President.. 10,000 rupees.

   The Governor of a State................................ 5,500 rupees.

2. There shall also be paid to the President and to the Governors such allowances as were payable respectively to the Governor-General of the Dominion of India and to the Governors of the corresponding Provinces immediately before the commencement of this Constitution.

3. The President and the Governors throughout their respective terms of office shall be entitled to the same privileges to which the Governor-General and the Governors of the corresponding

Provinces were respectively entitled immediatedly before the commencement ot this Constitution.

4. While the Vice-President or any other person is discharging the functions of, or is acting as, President, or any person is discharging the functions of the Governor, he shall be entitled to the same emoluments, allowances and privileges as the President or the Governor whose functions he discharges or for whom he acts, as the case may be.' "

'भाग (1)

राष्ट्रपति तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उस समय उल्लिखित राज्यों के राज्यपालों के लिये उपबन्ध–

1. राष्ट्रपति तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उल्लिखित राज्यों के राज्यपालों को निम्नलिखित उपलब्धियां प्रति मास दी जायेंगी अर्थात्:–

राष्ट्रपति को.. 10,000 रुपया

राज्य के राज्यपालों को.. 5,500 रुपया

2. राष्ट्रपति तथा राज्यपालों को ऐसे भत्ते भी दिये जायेंगे जैसे कि क्रमश: भारत डोमिनियन के गवर्नर जनरल को तथा तत्स्थानी प्रान्तों के गवर्नरों को इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे।

3. राष्ट्रपति तथा राज्यपालों को अपनी अपनी सम्पूर्ण पदावधि में ऐसे विशेष अधिकारों का हक होगा जैसे कि इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले क्रमश: गवर्नर जनरल तथा तत्स्थानी प्रान्तों के गवर्नरों को था।

4. जबकि उपराष्ट्रपति अथवा कोई अन्य व्यक्ति राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन अथवा उसके रूप में कार्य कर रहा है अथवा कोई व्यक्ति राज्यपाल के कृत्यों का निर्वहन कर रहा है तब उसको वैसी ही उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का हक होगा जैसा कि यथास्थिति राष्ट्रपति या राज्यपाल को है जिसके कृत्यों का वह निर्वहन करता है अथवा यथास्थिति जिसके रूप में वह कार्य करता है।' "]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि भाग 2 के शीर्षक में 'Part I' शब्द और अंक के पश्चात् 'or Part III' शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि कंडिका 7 के स्थान में यह कंडिका रखी जाये:–

'7. There shall be paid to the ministers for any State for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule such salaries and allowances as were payable to such ministers for the corresponding Province or the corresponding Indian State, as the case may be, immediately before the commencement of this Constitution.' "

[7. प्रथम अनुसूची के भाग (1) में या भाग (3) में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य के मंत्रियों को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि यथास्थिति तत्स्थानी प्रान्त या तत्स्थानी देशी राज्य के ऐसे मंत्रियों को इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि कंडिका 8 में 'respectively to the Deputy President of the Legislative Assembly and to the Deputy President of the Council of State immediately before the fifteenth day of August 1947 शब्दों के स्थान में 'to the Deputy Speaker of the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately before such commencement' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि द्वितीय अनुसूची के भाग 4 के स्थान में यह भाग रखा जाये:–

'PART IV

PROVISIONS AS TO THE JUDGES OF THE SUPREME COURT AND OF THE HIGH COURTS OF STATES IN PART I OF THE FIRST SCHEDULE.

(1) There shall be paid to the judges of the Supreme Court, in respect of time spent on actual service, salary at the following rates *per mensem,* that is to say:—

The Chief Justice.. 5,000 rupees

Any other Judge... 4,000 rupees

Provided that if a judge of the Supreme Court at the time of his appointment is in receipt of a pension (other than a disability or wound pension) in respect of any previous service under the Government of India or any of its predecessor Governments or under the Government of State or any of its predecessor Governments, his salary in respect of service in the Supreme Court shall be reduced by the amount of that pension.

(2) Every judge of the Supreme Court shall be entitled without payment of rent to the use of an official residence.

(3) Nothing in sub-paragraph (2) of this paragraph shall apply to a judge who was appointed as a judge of the Federal Court before the thirty-first day of October, 1948, and has become on the date of the commencement of this Constitution a judge of the Supreme Court under clause (1) of article 308 of this Constitution and every such judge shall in addition to the salary specified in sub-paragraph (1) of this paragraph be entitled to receive as special pay an amount equivalent to the difference between the salary so specified and the salary which was payable to him as a judge of the Federal Court immediately before such commencement.

(4) Every judge of the Supreme Court shall receive such reasonable allowances to reimburse him for expenses incurred in travelling on duty within the territory of India and shall be afforded such reasonable facilities in connection with travelling as the President may from time to time prescribe.

(5) The rights in respect of leave of absence (including leave allowances) and pension of the judges of the Supreme Court shall be governed by the provisions which, immediately before the commencement of this Constitution, were applicable to the judges of the Federal Court.

11. (1) There shall be paid to the judges of the High Court of each State for the time being specified in Part I of the First Schedule,

[अध्यक्ष]

in respect of time spent on actual service, salary at the following rates *per mensem,* that is to say:—

The Chief Justice.. 4,000 rupees.

Any other judge.. 3,500 rupees.

(2) Every person who was appointed permanently as a judge of a High Court in any Province before the thirty-first day of October, 1948, and has on the date of the commencemnt of this Constitution become a judge of the High Court in the corresponding State under clause (1) of article 310 of this Constitution, and was immediately before such commencement drawing a salary at a rate higher than that specified in sub-paragraph (1) of this paragraph, shall in addition to the salary specified in sub-paragraph 1 of this paragraph be entitled to receive as special pay an amount equivalent to the difference between the salary so specified and the salary which was payable to him as a judge of the High Court immediately before such commencement.

(3) Every judge of the High Court shall receive such reasonable allowances to reimburse him for expenses incurred in travelling on duty within the territory of India and shall be afforded such reasonable facilities in connection with travelling as the President may from time to time prescribe.

(4) The rights in respect of leave of absence (including leave allowances) and pension of the judges of any such High Court shall be governed by the provisions which, immediately before the commencement of this Constitution, were applicable to the judges of the High Court of the corresponding Province.

12. In this Part, unless the context otherwise requires,—

(a) the expression "Chief Justice includes an acting

Chief Justice, and a "Judge" includes an *ad hoc* judge;

(b) "actual service" includes—

(i) time spent by a judge on duty as a judge or in the performance of such other functions as he may at the request of the President undertake to discharge;

(ii) vacations, excluding any time during which the judge is absent on leave; and

(iii) joining time on transfer from a High Court to the Supreme Court or from the High Court to another.' "

[भाग 4

उच्चतम न्यायालय तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में के राज्यों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के सम्बन्ध में उपबन्ध।

(1) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को वास्तविक सेवा में बिताये समय के बारे में निम्नलिखित दर से प्रति मास वेतन दिया जायेगा अर्थात्:—

मुख्य न्यायाधिपति.. 5,000 रुपया

कोई अन्य न्यायाधीश.. 4,000 रुपया

परन्तु यदि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को अपनी नियुक्ति के समय भारत सरकार को या उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की अथवा राज्य की सरकार की अथवा उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की पहले की गई सेवा के बारे में (निर्योग्यता या क्षतपेन्शन से अतिरिक्त) कोई निवृत्ति-वेतन मिलता हो तो उच्चतम न्यायालय में सेवा के बारे में उसके वेतन में से निवृत्ति वेतन की राशि घटा दी जायेगी।

(2) उच्चतम न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को, बिना किराया दिये पदावास के उपयोग का हक होगा।

(3) इस कंडिका की उप कंडिका (2) की कोई बात उस न्यायाधीश को, जो 31 अक्तूबर, 1948 से पूर्व फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त था और इस संविधान के प्रारम्भ की तारीख को अनुच्छेद 308 के खंड (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश हो गया, लागू न होगी, तथा प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश को इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतन से अतिरिक्त विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।

[अध्यक्ष]

(4) उच्चतम न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश भारत राज्य क्षेत्र के भीतर अपने कर्तव्य पालन में की गई यात्रा में किये गये व्ययों की पूर्ति के लिये ऐसे युक्तियुक्त भत्ते पायेगा तथा यात्रा सम्बन्धी उसे ऐसी सुविधायें दी जायेंगी जैसी कि राष्ट्रपति समय समय पर विहित करे।

(5) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की अनुपस्थिति छुट्टी (जिस के अन्तर्गत छुट्टी सम्बन्धी भत्ते भी हैं) तथा निवृत्ति वेतन के बारे में अधिकार उन उपबन्धों से शासित होंगे जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को लागू थे।

11. (1) प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य में के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को वास्तविक सेवा में बिताये समय के बारे में निम्नलिखित दर से प्रति मास वेतन दिया जायेगा, अर्थात्:–

मुख्य न्यायाधिपति.. 4,000 रुपये

कोई अन्य न्यायाधीश... 3,500 रुपये

(2) प्रत्येक व्यक्ति जो 31 अक्तूबर, 1948 से पूर्व किसी प्रान्त में की उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में स्थायी प्रकार से नियुक्त था और इस संविधान के प्रारम्भ की तारीख को अनुच्छेद 310 के खंड (1) के अधीन तत्स्थानी राज्य में की उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो गया और ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतन की दर से अधिक दर का वेतन पा रहा था, उसे इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतन के अतिरिक्त विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।

(3) उच्च न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश भारत-राज्य क्षेत्र के भीतर अपने कर्तव्य पालन में की गई यात्रा में किये गये व्ययों की पूर्ति के लिये ऐसे युक्ति युक्त भत्ते पायेगा तथा यात्रा सम्बन्धी उसे ऐसी सुविधायें दी जायेंगी जैसी कि राष्ट्रपति समय-समय पर विहित करे।

(4) ऐसे किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की अनुपस्थिति छुट्टी (जिस के अन्दर छुट्टी भत्ते भी हैं) और निवृत्ति-वेतन के बारे में अधिकार उन उपबन्धों से शासित होंगे जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी प्रान्त के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को लागू थे।

12. इस भाग में जब तक प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो–

(क) "मुख्य न्यायाधिपति" पदावली के अन्तर्गत कार्यकारी मुख्य न्यायाधिपति है तथा "न्यायाधीश" पद के अन्तर्गत तदर्थ न्यायाधीश है।

(ख) "वास्तविक सेवा" के अन्तर्गत है:–

(1) न्यायाधीश के रूप में कर्तव्य करते हुए अथवा ऐसे अन्य कृत्यों के पालन में, जिनका राष्ट्रपति की आकांक्षा पर उस ने निर्वहन करने का भार लिया हो, न्यायाधीश द्वारा व्यतीत समय;

(2) उस समय को न गिनकर जिसमें कि वह न्यायाधीश छुट्टी लेकर अनुपस्थित है, विश्रामावकाश; तथा

(3) उच्च न्यायालय से उच्चतम न्यायालय को अथवा एक उच्च न्यायालय से दूसरे को बदले जाने पर योगकाल।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में द्वितीय अनुच्छेद संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में द्वितीय अनुच्छेद संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, क्या आप इस विषय पर कुछ प्रकाश डालेंगे कि यह सत्र कब तक होगा?

***अध्यक्ष:** यह सब आप पर निर्भर है। मेरा आशय विशेष कर आप से नहीं है वरन सभा से है। मैं समझता हूं कि हमें दोपहर बाद फिर समवेत होना है। हम चार बजे सभा की बैठक करेंगे। सभा 4 बजे तक के लिये स्थगित होती है।

***एक माननीय सदस्य:** हम चार बजे से छः बजे तक बैठक करेंगे।

***अध्यक्ष:** देखा जायेगा।

इस के पश्चात् दोपहर के भोजन के लिये सभा दोपहर बाद चार बजे तक के लिये स्थगित हुई।

सभा, दोपहर के भोजन के बाद चार बजे माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में पुनर्समवेत हुई।

संविधान का मसौदा–(जारी)

भाग 6-क

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 6-क को लेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि भाग 6 के पश्चात् यह नया भाग प्रविष्ट किया जाये:–

'PART VI-A

THE STATES IN PART III OF THE FIRST SCHEDULE

Application of provisions of Part-VI to States in Part-III of the First Schedule.

211A. The Provisions of Part VI of this Constitution shall apply in relation to the States for the time being specified in Part III of the First Schedule as they apply in relation to the States for the time being specified in Part I of that Schedule subject to the following modifications and omissions, namely:—

(1) For the word "Governor" wherever it occurs in the said Part VI, except where it occurs for the second time in clause (b) of article 209, the word "Rajpramukh" shall be substituted.

(2) In article 128, for the word and figure "Part I" the word and figure "Part III" shall be substituted.

(3) Articles 131, 132 and 134 shall be omitted.

(4) In article 135,—

(a) in clause (1), for the words, "be appointed" the word "becomes" shall be substituted;

(b) for clause (3), the following clause shall be substituted, namely:—

"(3) The Rajpramukh shall be entitled without payment of rent to the use of his residences,

and there shall be paid to the Rajpramukh such allowances as the President may, by general or special order, determine.";

(c) in clause (4), the words 'emoluments and' shall be omitted.

(5) In article 136, after the words "senior-most judge of that court available" the words 'or in such other manner as may be prescribed in this behalf by the President' shall be inserted.

(6) In article 144, the proviso to clause (1) shall be omitted.

(7) In article 148, for clause (1) the following clause shall be substituted, namely:—

"(1) For every State there shall be a Legislature which shall consist of the Rajpramukh and—

(a) in the State of Mysore, two houses;

(b) in other States, one house."

(8) In article 163, for the words "as are specified in the Second Schedule" the words "as the Rajpramukh may determine" shall be substituted.

(9) In article 170, for the words "as were immediately before the date of commencement of this Constitution applicable in the case of members of the Provincial Legislative Assembly for that State" the words "as the Rajpramukh may determine" shall be substituted.

(10) In clause (3) of article 177—

(a) for sub-clause (a), the following sub-clause shall be substituted, namely:—

"(a) the allowances of the Rajpramukh and other expenditure relating to his office as

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

determined by the President by general or special order;"

(b) after sub-clause (e), the following sub-clause shall be inserted, namely:—

"(ee) in the case of the State of Travancore-Cochin, a sum of fifty-one lakhs of rupees required to be paid annually to the Devaswom fund under the covenant entered into before the commencement of this Constitution by the Rulers of the Indian States of Travancore and Cochin for the formation of the United States of Travancore and Cochin;"

(11) In article 183, for clause (2), the following clause shall be substituted, namely:—

"(2) Until rules are made under clause (1) of this article, the rules of procedure and standing orders in force immediately before the commencement of this Constitution with respect to the Legislature for the State or, where no House of the Legislature for the State existed, the rules of procedure and standing orders in force immediately before such commencement with respect to the Legislative Assembly of such Province, as may be specified in this behalf by the Rajpramukh of the State, shall have effect in relation to the Legislature of the State subject to such modifications and adaptations as may be made therein by the Speaker of the Legislative Assembly or the Chairman of the Legislative Council, as the case may be."

(12) In clause (2) of article 191, for the word "Province" the words "Indian State" shall be substituted.

(13) For article 197, the following article shall be substituted, namely:—

"Salaries, etc. of Judges

197. The judges of each High Court shall be entitled to such salaries and allowances and to such rights in respect of leave of absence and pension as may from time to time be determined by the President after consultation with the Rajpramukh:

Provided that neither the salary of a judge nor his rights in respect of leave of absence or pension shall be varied to his disadvantage after his appointment.' "

[भाग 6-क

प्रथम अनुसूची के भाग (ख) में के राज्य

प्रथम अनुसूची के भाग (3) में उल्लिखित राज्यों को भाग 6 के उपबन्धों का लागू होना।

211-क. भाग 6 के उपबन्ध प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित राज्यों के सम्बन्ध में निम्नलिखित रूपभेदों और लुप्तियों के अधीन रह कर वैसे ही लागू होंगे जैसे कि वे उस अनुसूची के भाग (1) में उल्लिखित राज्यों के सम्बन्ध में लागू होते हैं, अर्थात्–

(1) "राज्यपाल" पद के लिये अनुच्छेद 209 के खंड (ख) में जहां वह दूसरी बार आता है वहां को छोड़ कर जहां भी वह उस भाग में आता है "राजप्रमुख" शब्द रख दिया जायेगा।

(2) अनुच्छेद 128 में "भाग (1)" शब्द और अक्षर के लिये "भाग (3)" शब्द और अक्षर रख दिये जायेंगे।

(3) अनुच्छेद 131, 132 और 134 लुप्त कर दिये जायेंगे।

(4) अनुच्छेद 135 में:–

(क) खंड (1) में "नियुक्त होने" शब्दों के लिये "होता है" शब्द रख दिये जायेंगे।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(ख) खंड (3) के स्थान में निम्नलिखित खंड रख दिया जायेगा–

"(3) राजप्रमुख को बिना किराया दिये पदावास के उपयोग का हक होगा तथा उसको ऐसे भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे।"

(ग) खंड (4) में से "और उपलब्धियां" शब्द लुप्त कर दिये जायेंगे।

(5) अनुच्छेद 136 में "न्यायालय का प्राप्य अग्रतम न्यायाधीश" शब्दों के बाद में "अथवा ऐसी अन्य रीति से जैसी कि राष्ट्रपति द्वारा उस बारे में निर्धारित की जाये" शब्द जोड़ दिये जायेंगे।

(6) अनुच्छेद 144 के खंड (1) का परन्तुक लुप्त कर दिया जायेगा।

(7) अनुच्छेद 148 में खंड (1) के स्थान में निम्नलिखित खंड रख दिया जायेगा, अर्थात्ः–

"1. प्रत्येक राज्य के लिये एक विधान मंडल होगा जो राजप्रमुख तथा

(क) मैसूर राज्य में दो सदनों से;

(ख) अन्य राज्यों में एक सदन से;

मिल कर बनेगा।"

(8) अनुच्छेद 163 में "जो द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित है" शब्दों के स्थान में "जो राजप्रमुख निर्धारित करे" शब्द रख दिये जायेंगे।

(9) अनुच्छेद 170 में "जैसे कि इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी प्रान्त की विधान-सभा के सदस्यों के विषय में लागू थे" शब्दों के स्थान में "जैसे कि राजप्रमुख निर्धारित करे" शब्द रख दिये जायेंगे।

(10) अनुच्छेद 177 के खंड (3) मेंः—

(क) उपखंड (क) के स्थान में निम्नलिखित उपखंड रख दिया जायेगा, अर्थात्—

"(क) राजप्रमुख के भत्ते तथा उसके पद सम्बन्धी अन्य व्यय जो राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे"

(ख) उपखंड (ड) के पश्चात् निम्नलिखित उपखंड रख दिया जायेगा अर्थात्—

"(डड) तिरुवांकुर-कोचीन राज्य के बारे में 51 लाख की राशि जिसका तिरुवांकुर और कोचीन के देशी राज्यों के शासकों द्वारा तिरुवांकुर और कोचीन संयुक्त राज्य के निर्माण के लिये इस संविधान के प्रारम्भ से पहले की गई प्रसंविदा के अधीन प्रति वर्ष देवस्वम् निधि को दिया जाना अपेक्षित है।"

(11) अनुच्छेद 183 में खंड (2) के स्थान में निम्नलिखित खंड रख दिया जायेगा, अर्थात्–

"(2) जब तक खंड (1) के अधीन नियम नहीं बनाये जाते तब तक इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले राज्य के विधान मंडल के सम्बन्ध में जो प्रक्रिया के नियम और स्थायी आदेश प्रवृत्त थे अथवा जहां राज्य में विधान मंडल का कोई सदन न था वहां ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले ऐसे प्रान्त की जिसको कि उस लिये उस राज्य का राजप्रमुख उल्लिखित करे विधान सभा के बारे में जो प्रक्रिया के नियम और स्थायी आदेश प्रवृत्त थे वे ऐसे रूपभेदों और अनुकूसनों के अधीन रह कर जिन्हें यथास्थिति विधान सभा का अध्यक्ष अथवा विधान परिषद् का सभापति करे उस राज्य के विधान-मंडल के सम्बन्ध में प्रभावी होंगे।"

(12) अनुच्छेद 191 के खंड (2) में "प्रान्त" शब्द के स्थान में "देशी राज्य" शब्द रख दिये जायेंगे।

(13) अनुच्छेद 197 के स्थान में निम्नलिखित अनुच्छेद रख दिया जायेगा, अर्थात्–

197. प्रत्येक उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतन और भत्तों का तथा अनुपस्थिति छुट्टी के और निवृत्ति वेतनों के सम्बन्ध में ऐसे अधिकारों का जैसे राजप्रमुख से परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति समय-समय पर निर्धारित करे, हक होगा। न्यायाधीशों के वेतन इत्यादि

परन्तु न तो न्यायाधीश के भत्ते और न उसके अनुपस्थिति छुट्टी या निवृत्ति-वेतन विषयक उसके अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन किया जायेगा।

मैं समझता हूं कि और संशोधनों को मैं बाद में पेश करूं।

[डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

यह देखा गया होगा कि इस भाग में यह विचार निहित है कि संविधान का भाग 6 जिसका संबंध राज्यों के संविधान से है वह भाग 3 में के राज्यों पर अनुच्छेद 211-क के उपबन्धों के अधीन अब अपने आप लागू होगा। पर यह अनुभव किया गया कि उन देशी राज्यों पर भाग 6 को लागू करने में, जो भाग 3 में होंगे, कुछ ऐसी विशेष परिस्थितियां हैं जिनके लिये कोई उपबन्ध रखना आवश्यक है और इस विशेष संशोधन 217 का प्रयोजन यह है कि उन विशिष्ट अनुच्छेदों की ओर संकेत किया जाये जिनमें भाग 3 में के राज्यों की विशेष परिस्थितियों पर विचार करने के लिये इन संशोधनों का करना आवश्यक है। अन्यथा भाग 3 में के राज्य जहां तक उनके आन्तरिक संविधान का संबंध है भाग 1 में के राज्यों के समान होंगे।

***अध्यक्ष:** क्या हम संशोधनों को लें?

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई: जनरल): क्या मैं इसके विवरण को पढ़ूं......

***अध्यक्ष:** संशोधनों के पेश हो जाने के बाद। श्री नज़ीरुद्दीन अहमद।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन संख्या 237 और 238 पेश करूंगा, परन्तु इस संविधान के कलेवर में एक आनुषंगिक संशोधन आवश्यक है और उसका सुझाव मैंने संशोधन संख्या 254 में दिया है। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 211-क में 'modification' शब्द के स्थान में 'adaptation, modification' शब्द रखे जायें।"

मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में—

(1) प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (3) में 'shall be omitted' शब्दों के स्थान में 'shall not apply to this part' शब्द रखे जायें;

(2) प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (4) की कंडिका (क) में 'in clause (1)' शब्दों के पश्चात् 'for the time being specified in First Schedule' शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन 238 के भाग 2 की स्वीकृति पर आनुषंगिक संशोधन के रूप में मैं संशोधन संख्या 254 को भी पेश करता हूं। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 135 के खंड (1) में से 'for the time being specified in the First Schedule' शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

श्रीमान, अनुच्छेद 211-क की योजना के सम्बन्ध में मैं यह निवेदन करता हूं कि मसौदा समिति ने एक प्रकार के कम समय लगने वाले मार्ग की शरण ली है। उसने केवल प्रान्तों पर लागू होने वाले अनुच्छेदों को इस प्रकार अनुकूलित किया है कि वे देशी राज्यों के प्रयोजनों के लिये ठीक हो जायें। इस रीति के अतिरिक्त नये रूप में इन अनुच्छेदों को फिर से लिखना चाहिये था। ऐसे बहुत से उपबन्ध हैं जो प्रान्तों और केन्द्रों के लिये समान हैं। यदि अनुकूलन की रीति का इस प्रकार पालन किया जाता तो कई प्रान्त संबंधी अनुच्छेद इस प्रकार की एक ही धारा द्वारा अनुकूलित हो सकते थे। इस रीति में कई असमानताओं की उपेक्षा हो जाने का भय है और यह करना कठिन हो जाता है कि अनुकूलन के बाद क्या असमानतायें रह जाती हैं। मैं निवेदन करता हूं कि यदि हो सके तो अनुकूलित रूप में इन अनुच्छेदों को एक भिन्न भाग में फिर से लिखा जाये। मैं आशा करता हूं कि मसौदा समिति इस सुझाव पर विचार करेगी।

मेरा पहला संशोधन अनुच्छेद 211-क के कलेवर के संबंध में है। उसमें कहा गया है कि प्रथम अनुसूची का भाग 3 अर्थात् भाग 6 के उपबंध इन "रूपभेदों और लुप्तियों" के अधीन स्वीकार किये जायेंगे। मैं यह चाहता हूं कि वह "अनुकूलनों, रूपभेदों और लुप्तियों" इस प्रकार से हो। "अनुकूलन" शब्द मुझे बहुत ही उपयुक्त प्रतीत होता है। हम यह कर रहे हैं कि प्रान्तों पर लागू होने वाले उपबंधों को देशी राज्यों के लिये उपयुक्त बनाकर उनका अनुकूलन करें। अत: ये वास्तव में रूपभेद तथा लुप्तियां ही नहीं हैं वरन् यथार्थ में तथा मुख्यतया वे अनुकूलन हैं। इसी कारण इस प्रसंग में "अनुकूलन" शब्द विशेषकर उपयुक्त है और इसे स्वीकार कर लेना चाहिये।

इसके बाद श्रीमान, इसके बाद का संशोधन भी मसौदा संबंधी है। मैं केवल उसका संकेत करूंगा और उसके विषय पर विचार करना मसौदा समिति पर छोड़ दूंगा। वह पद 3 के सम्बन्ध में है। उसमें यह कहा गया है कि "131, 132 और 134 अनुच्छेदों" को छोड़ दिया जाये। उसके स्थान में यह कहना अधिक अच्छा होगा कि "ये अनुच्छेद इस भाग को लागू नहीं होंगे।" कहने का तात्पर्य यह है कि अनुच्छेद 131, 132 और 134 भाग 6 को लागू नहीं होंगे जिस पर विचार हो रहा है। यह मसौदा सम्बन्धी है और इस पर विचार करना मैं मसौदा समिति पर छोड़ दूंगा।

मेरे विचार से इससे अगला संशोधन महत्वपूर्ण है। वह अनुच्छेद 131 के खंड (1) के अनुकूलन के संबंध का है। उसमें, मेरा आशय मूल अनुच्छेद से है, यह कहा गया है कि राज्यपाल संसद के किसी भी सदन का या उस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित किसी राज्य के विधान मंडल के सदन का सदस्य नहीं होगा। हम इसे राज्य प्रमुखों को लागू करने के लिये अनुकूलित करना चाहते हैं। इस प्रकार अनुकूलित रूप में वह इस प्रकार पढ़ा जायेगा कि राजप्रमुख संसद के किसी सदन का या उस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन का सदस्य होगा। मैं निवेदन करता हूं कि जिस समय इस साल अनुच्छेद का मसौदा तैयार किया गया था देशी राज्यों का चित्र कदाचित

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

अस्पष्ट सा था और इस कारण हमने प्रान्तों के लिये प्रयोज्य पदावली को ध्यान में रखा जो इस प्रकार थी "उस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित राज्य।" मैं यह निवेदन करता हूं कि राजप्रमुख न केवल संसद के किसी सदन के या उस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित राज्यों के ही सदस्य न होने चाहिये वरन् उस समय तृतीय अनुसूची में उल्लिखित किसी राज्य के भी सदस्य नहीं होने चाहिये। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि कार्यप्रणाली इस प्रकार की होनी चाहिये कि....

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): माननीय सदस्य प्रथम अनुसूची के भाग 1 और प्रथम अनुसूची में गड़बड़ कर रहे हैं। प्रथम अनुसूची के अन्तर्गत सब राज्य आ जाते हैं।

***अध्यक्ष:** प्रथम अनुसूची में उल्लिखित न कि उस अनुसूची के भाग 1 में।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** इस बात को बताने के प्रति मैं श्री सन्तानम् का कृतज्ञ हूं। उस दशा में यह संशोधन और संशोधन संख्या 254 भी अनावश्यक हो जायेंगे।

श्रीमान, ये अनुच्छेद एक बहुत बड़ी संख्या में प्रति दिन प्रात:काल मिलते हैं और उसी दिन हमें इन पर विचार करना पड़ता है। अन्य संशोधनों पर मसौदा समिति द्वारा विचार कर लिया जायेगा।

(सूची 8 द्वितीय सप्ताह का संशोधन संख्या 239 पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 240, श्री सिधवा।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (4) की कंडिका (ख) में प्रस्थापित खंड (3) के अन्त में 'and such allowances shall be a charge on the revenue of the State' शब्द जोड़ दिये जायें।"

एक इसी प्रकार का संशोधन संख्या 241 है।

श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (10) की कंडिका (क) में प्रस्थापित उपखंड (क) के अन्त

में 'and such expenditure shall be a charge on the revenues of the State' शब्द जोड़ दिये जायें।"

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** कंडिका (10) पारित करने वाली धारा है। यदि आप उसे अनुच्छेद 177 से मिलाकर पढ़ें तो यह देखा जायेगा कि ये भत्ते एक भार के रूप में होंगे और यही श्री सिधवा चाहते हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** मेरा विचार यह है कि संघ पर इसका भार नहीं होना चाहिये, मैं यह जानना चाहता हूं कि भत्तों का भार संघ पर होगा या राज्य पर। यदि उसका भार राज्य पर होता है तो मेरा संशोधन आवश्यक नहीं है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** अनुच्छेद 177 राजप्रमुखों का निर्देश करता है।

***श्री के.एम. मुंशी:** वह केवल राज्यों पर भारणीय है।

***अध्यक्ष:** यदि आप कंडिका (1) की ओर निर्देश करते हैं तो यह उसके अन्तर्गत आ जाता है। उसमें कहा गया है–

"अनुच्छेद 177 के खंड (3) में उपखंड (क) के स्थान में यह उपखंड रख दिया जाये–

'(a) the allowances of the Rajpramukh and other expenditure relating to his office as determined by the President by general or special order' "

[(क) राजप्रमुख के भत्ते और उसके पद संबंधी अन्य व्यय जिसे राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे।]

***श्री आर.के. सिधवा:** इससे यह आभास नहीं मिलता है कि वह राज्य पर भारणीय होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** पूरा का पूरा अनुच्छेद 177 उसके संबंध का है।

***श्री आर.के. सिधवा:** यदि अब यह स्पष्ट हो गया तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैं यही चाहता था कि वह राज्य पर भारणीय हो।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 177 खंड (3) के अन्तर्गत यह बात आ जाती है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे संशोधन संख्या 10 के अन्तर्गत यह बात आ जाती है।

***श्री आर.के. सिधवाः** अब मैं समझा। तो फिर नये अनुच्छेद 235-क से संबंधित एक और संशोधन है। क्या वह बाद में लिया जायेगा?

***अध्यक्षः** जी हां, अब हम श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन संख्या 242 को लेते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (13 में 'after consultation with the Rajpramukh' शब्दों) को अनुच्छेद 197 में से अपमार्जित किया जाये।"

श्रीमान, राष्ट्रपति द्वारा राजप्रमुख से परामर्श करने के लिखित कानूनी आभार का मैं विरोधी हूं। मैं यह जानता हूं कि व्यवहार में, राष्ट्रपति सदैव राजप्रमुख से परामर्श करेगा। परन्तु यदि कोई लिखित कानूनी आभार रखा जाता है तो अध्यक्ष की कार्यवाही का क्षेत्र परिसीमित हो जायेगा। कोई व्यक्ति सरलता से राजप्रमुख की मंत्रणा का विरोध नहीं कर सकेगा। इस कारण श्रीमान, मैं इस प्रस्थापना के पक्ष में हूं कि इस क्षेत्र में राष्ट्रपति का प्राधिकार अनिर्बन्धित तथा बिना किसी प्रतिरोध के होना चाहिये। श्रीमान, राजप्रमुख के विरोध में मैं क्यों हूं इसका एक और भी कारण है। मैं यह चाहता हूं कि जहां तक हो सके सब शक्तियां राष्ट्रपति को सौंपी जायें जिसका अर्थ यह होगा कि भारत सरकार के हाथों में। मूलतः फेडरल वाद और प्रान्तीय स्वायत्तता के विरोध में होने के कारण और एकात्मक राज्य के पक्ष में होने के कारण मैं यह समझता हूं कि जहां तक इस विषय का संबंध है शक्तियां केवल राष्ट्रपति को सौंपी जायें।

***अध्यक्षः** दो और संशोधन हैं जिनमें से एक की सूचना काका भगवन्त राय ने दी है।

***काका भगवन्त राय** (पटियाला तथा पूर्वी पंजाब राज्यों का संघ): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क की कंडिका (ख) के मत (4) के स्थान में यह मद रखा जाये:-

'(ख) खंड (3) के स्थान में यह खंड रखा जाये; अर्थात्-

(3) The Rajpramukh shall be entitled, without payment of rent to the use of his residences, and there shall be paid to the Rajpramukh such allowances as the President may, on consideration of the recommendation made by the Legislature of the State, by general or special order, determine.' "

[राजप्रमुख को बिना किराया दिये अपने निवासस्थानों के प्रयोग करने का हक होगा और राजप्रमुख को ऐसे भत्ते दिये जायेंगे जैसे राष्ट्रपति उस राज्य के विधान मंडल द्वारा की गई सिफारिश पर विचार कर साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे।]

श्रीमान, राजप्रमुखों के बड़े-बड़े भत्ते राज्य के राजस्व पर प्रत्यक्ष रूप में एक भार हैं और राज्य का राजस्व राज्य की जनता द्वारा दिया जाता है। अतः जनता के प्रतिनिधियों को—मेरा अभिप्राय राज्य के विधान-मंडलों से है—उन भत्तों पर वाद विवाद करने का हक होगा जो राजप्रमुखों को दिया जायेगा। श्रीमान, आपको यह याद होगा कि जब हम अनुसूची 7 पर वाद विवाद कर रहे थे मैंने एक इसी प्रकार का संशोधन रखा था और मुझे डॉ. अम्बेडकर द्वारा यह आश्वासन दिया गया था कि जब हम राज्य के अध्याय को उठायेंगे हम इस पर अवश्य विचार करेंगे। मैं समझता हूं कि डॉ. अम्बेडकर इस संशोधन पर विचार करने और उसे स्वीकार करने की कृपा करेंगे।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (10) की कंडिका (क) में 'The President by general or special order' शब्दों के स्थान में 'Parliament by law' शब्द रखे जायें।"

***अध्यक्ष:** जो प्रति मेरे पास है वह इस प्रकार है:

"कि सूची 10 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 278 में प्रस्थापित अनुच्छेद 197 के खंड (1) में 'President after consultation with the Rajpramukh' शब्दों के स्थान में 'Parliament by law' शब्द रखे जायें।"

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** जिस संशोधन को मैं पेश कर रहा हूं वह सूची 12 का संशोधन 288 है।

***अध्यक्ष:** यह मुझे अभी मिला है। आप उसे पेश कर सकते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** पर वह पेश नहीं किया गया है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** आप उसे कैसे पेश कर सकते हैं?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** मैं उस संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं जिसे अध्यक्ष ने पढ़ा था। मैं सूची 12 के संशोधन संख्या 298 को पेश कर रहा हूं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** इसके पूर्व सूची 10 में के संशोधन संख्या 276, 277 और 278 हैं।

***अध्यक्ष:** हम अभी उन पर नहीं आ पाये हैं। प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना इस संशोधन को पेश करें और उसके बाद इन संशोधनों को लेंगे।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** यहां हम राजप्रमुखों को दिये जाने वाले भत्तों के लिये उपबन्ध बना रहे हैं और हम यह कह चुके हैं कि इन भत्तों को राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करेगा। मूल अनुच्छेद में राज्यपालों का वेतन संसद द्वारा निर्धारित किया जायेगा और मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि राजप्रमुख के भत्ते संसद द्वारा निर्धारित क्यों न किये जायें। वास्तव में भत्तों को सदैव के लिये नियत कर देना चाहिये और उनमें परिवर्तन नहीं होना चाहिये। इस कारण मैं समझता हूं कि इन भत्तों का निर्धारण संसद द्वारा होना चाहिये न कि राष्ट्रपति द्वारा। हर एक राष्ट्रपति के बदलने पर इनमें परिवर्तन नहीं होना चाहिये। मेरा संशोधन संख्या 288 यह है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (4) में उप-कंडिका (ख) के स्थान में निम्नलिखित उप-कंडिका रखी जाये:–

'(ख) खंड (3) के स्थान में निम्नलिखित खंड रखा जायेगा, अर्थात्–

(3) Unless he has his own residence in the Capital of his State, the Rajpramukh shall be entitled to the use of an official residence without payment of rent, and there shall be paid to the Rajpramukh such allowances as the President may, by general or special order, determine.' "

[(3) यदि उसके राज्य की राजधानी में उसका निजी निवासस्थान नहीं है तो राज प्रमुख को बिना किराया दिये पदावास के प्रयोग करने का हक होगा, तथा राजप्रमुख को ऐसे भत्ते दिये जायेंगे जैसे राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे।]

इस संशोधन का विषय यह है कि जिस रूप में इस खंड का मूलत: मसौदा तैयार किया गया था उसमें उपबन्ध यह है कि अपने निवासस्थानों को बिना किराया दिये प्रयोग में लाने का उसे हक होगा; यदि उसके अपने निवासस्थान हैं तो यह निश्चित है कि हमें एक ऐसा संविधानिक उपबंध नहीं बनाना चाहिये कि उनके प्रयोग करने का उसे हक है। किराया देने का प्रश्न केवल तभी उठता है जब कि उसे किसी ऐसे निवासस्थान का प्रयोग करना पड़े जो अधिकार द्वारा उसका नहीं है। इसी कारण मैं यह उपबन्ध बनाना चाहता हूं कि राजप्रमुख को केवल तभी बिना किराया दिये सरकारी पदावास के प्रयोग करने का हक होगा जब कि

उसकी राजधानी में उसका अपना निवासस्थान न हो और इसी के अनुसार यह मेरा संशोधन प्रस्तुत किया गया है। श्रीमान, मैं इस संशोधन को पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (13) में अनुच्छेद 197 के स्थान में निम्नलिखित अनुच्छेद रखा जाये:—

197. (1) There shall be paid to the judges of each High Court such salaries as may be determined by the President after consultation with the Rajpramukh. Salaries. etc. of judges.

(2) Every judge shall be entitled to such allowances and to such rights in respect of leave of absence and pension as may from time to time be determined by or under law made by Parliament and, until so determined, to such allowances and rights as may be determined by the President in consultation with the Rajpramukh:

Provided that neither the allowances of a judge nor his rights in respect of leave of absence or pension shall be varied to his disadvantage after his appointment.' "

197. (1) प्रत्येक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को ऐसे वेतन दिये जाये जायेंगे जैसे राजप्रमुख से परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति निर्धारित करे। न्यायाधीशों के वेतन इत्यादि

(2) प्रत्येक न्यायाधीश को ऐसे भत्तों का तथा अनुपस्थिति-छुट्टी और निवृत्ति-वेतनों के संबंध में ऐसे अधिकारों का हक होगा जैसे संसद द्वारा निर्मित विधि के द्वारा या अधीन समय-समय पर निर्धारित किये जायें और जब तक इस प्रकार से निर्धारित न किये जायें तब तक ऐसे भत्तों का और अधिकारों का हक होगा जैसे राजप्रमुख के परामर्श से राष्ट्रपति निर्धारित करे:

परन्तु न तो न्यायाधीश के भत्ते और न उसके अनुपस्थिति-छुट्टी या निवृत्ति-वेतन विषयक उसके अधकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन किया जायेगा।"]

श्रीमान, हमारा प्रयत्न यह रहा है कि जहां तक हो सके राज्यों को प्रान्तों की पंक्ति में लाया जाये। जहां तक वेतनों का सम्बन्ध है यह आवश्यक समझा गया कि देशी राज्यों में के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के वेतन कम से कम इस

[माननीय श्री के. सन्तानम्]

समय तो प्रान्तों में के उच्च न्यायालयों के वेतनों से भिन्न होने चाहिये। इसी कारण राष्ट्रपति को अनुच्छेद 197 (1) के अधीन अधिकार दिया गया है। अन्य भत्तों और अनुपस्थिति-छुट्टी तथा निवृत्ति-वेतनों के संबंध के अधिकारों को नियत करने की शक्ति संसद को दे दी गई है। यह न्यायपूर्ण नहीं है कि संसद या संसदीय विधान राज्यों के उच्च न्यायालयों को भी क्योंकर लागू न हो। अतः जहां तक खंड (2) और परन्तुक का संबंध है मैंने उसी भाषा को अपनाया है जो अनुच्छेद 197 में है। अन्तर यह है कि आरम्भ में भत्ते राष्ट्रपति द्वारा नियत किये जायें खंड (1) में मैंने राष्ट्रपति को न्यायाधीशों के वेतन नियत करने का अधिकार दे दिया है जिससे कि नया अनुच्छेद 197 पुराने अनुच्छेद 197 के उतना सन्निकट रहेगा जितना सन्निकट रखना संभाव्य तथा आवश्यक है।

***श्री एच.वी. कामतः** एक स्पष्टीकरण संबंधी प्रश्न है, मैं अपने माननीय मित्र श्री सन्तानम् से यह पूछ सकता हूं कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए राजप्रमुखों को अपने पदावास का किराया देने से एक विशिष्ट रूप में मुक्त किया गया है क्या राज्यपालों के संबंध के अनुच्छेद का भी उपयुक्त रूप में संशोधन किया जायेगा? वह अनुच्छेद उन्हें विशिष्ट रूप में मुक्त नहीं करता है।

***अध्यक्षः** इस समय यह प्रश्न नहीं उठता है।

***श्री एच.वी. कामतः** राज्यपाल और राजप्रमुख परस्पर समान हैं।

***अध्यक्षः** होंगे, पर यहां हम राज्यपालों के संबंध में विचार नहीं कर रहे हैं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मैं यह और कहूंगा कि सामान्यतया राजप्रमुखों के राजधानी में अपने निजी निवासगृह हैं और इस कारण किराये का प्रश्न ही नहीं उठेगा।

***श्री ए. थानू पिल्ले** (तिरुवांकुर और कोचीन संघ): क्या मैं अपने माननीय मित्र श्री सन्तानम् से यह जान सकता हूं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन और भत्तों में वे अन्तर क्यों करते हैं?

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** क्योंकि अनुच्छेद 197 ने अन्तर कर दिया है। उसके द्वारा अनुसूची 2 में वेतन नियत हो चुके हैं और संसद् द्वारा वे अपरिवर्त्तनीय बना दिये जा चुके हैं। परन्तु अनुच्छेद 197 के खंड (2) के द्वारा भत्ते को और छुट्टी तथा निवृत्ति-वेतन इत्यादि के संबंध के अन्य अधिकारों को संसदीय विधान के अधीन कर दिया है। चूंकि अनुच्छेद 197 के द्वारा अन्तर कर दिया गया है, राज्यों के संबंध में मैं उसी अन्तर को बनाये रखने का प्रयत्न कर रहा हूं।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी** (मैसूर राज्य): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (1) में 'Rajpramukh' शब्द के स्थान में 'Maharaja, Nizam, or Rajpramukh' शब्द रखे जायें।"

श्रीमान, यह कहा जा सकता है कि इस विषय की व्याख्या संविधान में अन्यत्र कर दी जायेगी। पर मैं यह समझता हूं कि यह आवश्यक है...।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): क्या मैं यह बता सकता हूं कि मसौदा समिति का यह विचार है कि इस परिभाषा को खंड 303 की परिभाषा में जोड़ दिया जाये जिसमें हम संशोधन करना चाहते हैं और यदि माननीय सदस्य प्रतीक्षा करें तो कदाचित् उन्हें जैसे वे चाहते हैं वैसे इन शब्दों को हमारी प्रस्थापना पर संशोधन के रूप में रखने का अवसर मिलेगा।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डीः** इस दशा में मैं इसे स्थगित रखूंगा। मैं संशोधन संख्या 287 पेश करूंगा। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211क के मद (4) की उपकंडिका (ख) में के प्रस्थापित खंड (3) में 'Payments of rent' शब्दों के स्थान में 'any obligation' शब्द रख दिये जायें।"

"किराये" शब्द के प्रयोग से ऐसा प्रतीत होता है कि मानो राज्य के शासकों को तुच्छ बनाया जा रहा है। इस कारण मैं यह सुझाव देता हूं कि "आभार" शब्द रखा जाये। मुझे और कुछ नहीं कहना है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 10 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 273 मैं प्रस्थापित अनुच्छेद 197 के खंड (1) में "President after consultation with the Rajpramukh" शब्दों के स्थान में "Paliament by law" शब्द रखे जायें।"

संशोधन संख्या 278 मेरे मित्र श्री सन्तानम् द्वारा पेश किया गया था। इस संशोधन को पेश करने में मेरा उद्देश्य यह है। तिरुवांकुर के मेरे माननीय मित्र ने यह प्रश्न पहले ही उठा दिया था जिसका श्री सन्तानम् ने उत्तर भी दे दिया था। उन्होंने कहा था कि संशोधनों की सूची 7 को जो इस समय विचाराधीन है अनुच्छेद 207 के अनुरूप बनाने का वे प्रयत्न कर रहे हैं। मैं यह समझता हूं कि वेतन नियत कर देने चाहिये। परिवर्तनशील नहीं होने चाहिये और यह नहीं होना चाहिये कि समय-समय पर राजप्रमुख के परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति उनको नियत करे। वेतन चाहे जो कुछ भी हो, उचित केवल यही है कि उन्हें संसद ही नियत करे। अन्तिम प्राधिकार संसद का ही होना चाहिये। यह मानने के लिए मैं तैयार हूं कि इस संक्रांति काल में आप इस खंड को रख सकते हैं, परन्तु यदि आप उसे संविधान में स्थायी रूप से रखना चाहते हैं तो यह वेतन संसद विधि द्वारा निश्चित करे।

***श्री राज बहादुर** (मत्स्य संयुक्त राज्य): श्री के. सन्तानम् द्वारा दिये गये वक्तव्य को ध्यान में रखते हुए, मैं संशोधन संख्या 277 को पेश नहीं करता हूं।

*__अध्यक्षः__ संशोधन इतने ही हैं। इस अनुच्छेद पर तथा संशोधनों पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल__ (बम्बई: जनरल): श्रीमान मैंने एक भाषण तैयार किया है जिसके बारे में मैंने सोचा है कि चूंकि उसके पढ़ने से मुझ पर जोर पड़ेगा इसलिये मैं उसे पढ़ नहीं सकूंगा और मैंने अपनी ओर से उसे पढ़ने के लिये श्री मुंशी से निवेदन किया है। इस भाषण में उन संशोधनों के विकास का साधारण सार है जिनको डॉ. अम्बेडकर ने पेश किया है। ऐसे बहुत से संशोधन हैं जिनके बारे में यह बताना आवश्यक है कि वे कैसे पुर:स्थापित किये गये। इन बातों के पीछे जो सामान्य विचार है उसका बताना भी आवश्यक है। अत: यदि आप अनुमति दें तो उसे पढ़ने के लिये मैं श्री मुंशी से निवेदन करूं।

*__अध्यक्षः__ जी हां, श्री मुंशी उसे पढ़ सकते हैं।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेलः__ †श्रीमान, मेरा यह प्रयत्न रहा है कि राज्यों के संबंध में अपनी रीति और प्रगति के बारे में मैं इस सभा को पूर्णतया परिचित रखूं। समय-समय पर इस सभा में मैंने जो वक्तव्य दिये हैं उनके अतिरिक्त गत जुलाई में मैंने इस सभा के समक्ष एक श्वेत पत्र प्रस्तुत किया था जिसमें राज्यों के प्रति भारत सरकार द्वारा बरती गई नीति का ही विवरण न था, वरन् शासकों से किये गये भिन्न-भिन्न करार और प्रसंविदाओं की प्रतिलिपियां भी हैं। गत मार्च में सभा के समक्ष मैंने एक और विवरणपूर्ण प्रतिवेदन राज्यों के मंत्रालय की नीति और क्रियाकरण के विषय पर प्रस्तुत किया था। अब राज्यों के एकीकरण का कार्य समाप्त हो गया है, आगामी माह में इस सभा के समक्ष मैं एक और राज्य पत्र प्रस्तुत करना चाहता हूं जिसमें उन सब प्रगतियों का व्यापक पुनर्विलोकन होगा जो देशी राज्यों में उस समय से हुई हैं जिस समय से भारत सरकार को राज्यों की समस्या का सामना करने के लिये आमंत्रित किया गया था।

राज्यों में प्रयोज्य संविधान के उपबन्धों के संबंध में जो संशोधन इस समय प्रस्थापित किये गये हैं उनमें उस रक्तहीन क्रांति के परिणाम निहित हैं जिसने इतने सूक्ष्म काल में राज्यों की आन्तरिक तथा बाह्‌ व्यवस्था में परिवर्तन कर दिया है। यह तथ्य कि नये संविधान की अनुसूची (1) के भाग 3 में केवल नौ राज्यों का उल्लेख है। भारत सरकार द्वारा बरती गई एकीकरण की नीति से हुई प्रत्यक्ष उन्नति का चिन्ह है। 501 राज्यों को बड़े-बड़े एककों में मिला कर और शताब्दियों पुराने स्वैरतंभों को पूर्णतया मिटाकर भारतीय लोकतंत्र ने एक महान विजय प्राप्त की है जिसका शासकों तथा भारत की जनता को समान रूप से गौरव होना चाहिये। यह एक ऐसी सफलता है जो इतिहास के किसी भी अंग में राष्ट्र या जनता के श्रेय का अन्तिम महत्वपूर्ण परिणाम है।

जैसा कि इस सभा को विदित है जब राज्य भारत की संविधान सभा में प्रविष्ट हुए तो यह समझा गया था कि राज्यों का संविधान भारत के संविधान का अंग नहीं होगा। यह भी समझा गया था कि प्रांतों की तरह भारतीय संघ में राज्यों का प्रवेश अपने आप नहीं होगा वरन् संविधान के अनुसमर्थन की किसी रीति द्वारा

†यह भाषण श्री के.एम. मुंशी द्वारा पढ़ा गया।

होगा। इन वचनों तथा उस समय की वर्तमान परिस्थितियों के प्रसंगानुसार संविधान के मसौदे में कुछ उपबन्ध रखे गये थे, जिनके द्वारा कुछ महत्वपूर्ण बातों में राज्यों को प्रांतों से भिन्न आधार पर रखा गया था।

भारत सरकार द्वारा बरती गई राज्यों के एकीकरण करने और लोकतंत्रात्मक बनाने की नीति के फलस्वरूप दिसम्बर 1947 से तत्कथित राज्यों के 'संघीकरण' का कार्य बड़ी जोरों से हुआ। इस दिशा में दो महत्वपूर्ण प्रगतियां ये हुईं—राज्यों में डोमिनियन के विधायी प्राधिकार का विस्तार और राज्यों का फेडरल वित्तीय एकीकरण। केवल तीन विषयों के संबंध में प्रतिरक्षा, विदेशी विषय और यातायात के संबंध में राज्य आरम्भ में ही प्रवेश हो चुके हैं। संघों के निर्माण के साथ-साथ डोमिनियन संसद की विधायी शक्ति का विस्तार राज्यों के संघों में करारोपण के विषय को छोड़कर अन्य फेडरल और समवर्त्ती सूची में उल्लिखित सब विषयों तक कर दिया है। मैसूर राज्य के प्रवेश के विषय में भी इसी प्रकार विस्तार कर दिया गया था।

वित्तीय क्षेत्र की कमी को उस प्रबंध द्वारा पूरा कर दिया गया है जिसकी बातचीत राज्यों से देशी राज्यों की वित्तीय परिप्रश्न समिति द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर हुई थी। इस योजना का मूल आधार यह है कि राज्यों का फेडरल वित्तीय एकीकरण भारतीय संघ के नये संविधान में निहित इस आधारभूत विचारधारा के परिणामस्वरूप आवश्यक है कि प्रांत और राज्य समान हैं। अत: यह योजना निम्नलिखित बातों में प्रांतों और राज्यों में परस्पर पूर्ण समानता पर आश्रित है:–

(1) केन्द्रीय सरकार राज्यों में उन्हीं कृत्यों को करे और उन्हीं शक्तियों का प्रयोग करे जो प्रांतों में करती है।

(2) प्रांतों के समान राज्यों में केन्द्रीय सरकार अपने निजी कार्यपालक संघटनों द्वारा प्रकार्य करे।

(3) प्रांतों और राज्यों से केन्द्रीय साधनों के अंशदान के आधार में एकरूपता और समानता होनी चाहिये।

(4) केन्द्रीय सरकार द्वारा की जाने वाली साधारण सेवाओं के विषय में तथा विभाजनीय फेडरल कर, सहायक अनुदान, आर्थिक सहायता और अन्य सब प्रकार की वित्तीय तथा प्रौद्योगिक सहायता में प्रांतों और राज्यों में परस्पर समानता का व्यवहार होना चाहिये।

यह तथ्य कि हमारी कर संबंधी व्यवस्था में ये दूर तक प्रभाव डालने वाले परिवर्तन राज्यों की पूर्ण स्वीकृति से पुर:स्थापित किया जा रहे हैं स्वयं उस महान कार्य का सुपरिचायक है जिसको श्री वी.टी. कृष्णमाचारी की अध्यक्षता में देशी राज्यों की वित्तीय परिप्रश्न समिति ने किया है और जिसमें अध्यक्ष महोदय ने इस महत्वपूर्ण समस्या पर देशी राज्यों में के अपने महान अनुभव द्वारा कार्य किया।

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

इन महत्वपूर्ण प्रगतियों के कारण नये संविधान के अधीन हम राज्यों की स्थिति का पुनरीक्षण कर सकें और अतीत से विरासत के रूप में नये संविधान में जो असमानतायें और विभिन्नतायें आ गई थीं उनके समस्त अवशेषों को इस संविधान से दूर कर सकें।

राज्यों के विभिन्न संघों की स्थापना करने वाली प्रसंविदायें जब की गईं तो यह सोचा गया कि विभिन्न संघों का संविधान प्रसंविदाओं तथा भारत के संविधान के अनुसार अपनी-अपनी संविधान सभाओं द्वारा बनाया जाएगा। प्रसंविदाओं में ये उपबन्ध उस समय किये गये थे जब कि हम इस सिद्धांत के अनुसार कार्य कर रहे थे कि भारत की संविधान सभा को राज्यों के लिये संविधान बनाने का प्राधिकार देना राज्यों की स्वायत्तता का हरण करना होगा। परन्तु जैसे-जैसे राज्य केन्द्र के निकटतर आने लगे यह अनुभव किया गया कि भारतीय संघ के विभिन्न संविधानिक एककों के लिये पृथक-पृथक संविधानों का विचार शासकों की शासन विधि से प्राप्त किया गया विचार है और जन शासन व्यवस्था में भिन्न-भिन्न प्रकार के संविधानिक नमूनों के लिये गुंजाइश नहीं है। अत: हमने इस विषय पर विभिन्न संघों के मुख्य मंत्रियों से वाद विवाद किया और उनकी सम्मति से यह निश्चय किया कि राज्यों का संविधान भी भारत संविधान का प्रमुख अंग बने। इस प्रक्रिया को उन तीन राज्यों के विधान मंडलों ने, जिनमें इस समय ऐसे निकाय कार्य कर रहे हैं अर्थात् मैसूर, तिरुवांकुर तथा कोचीन संघ और सौराष्ट्र के विधान मंडलों ने जिस शीघ्रता के साथ स्वीकार किया वह राज्यों की जनता की अतीत की पृथकवाद की प्रवृत्ति को मिटाने की इच्छा का प्रमाण है।

इन महत्वपूर्ण प्रगतियों के कारण संविधान के कई उपबन्धों का, जहां तक कि उनका राज्य से संबंध था, बदलना आवश्यक हो गया। जिन संशोधनों को हम प्रस्थापित कर रहे हैं उनका परीक्षण मैसूर, सौराष्ट्र और तिरुवांकुर तथा कोचीन संघ के संविधान निर्माणक निकायों ने कर लिया है। इन निकायों द्वारा प्रस्थापित किये गये कुछ रूप भेदों को सभा के समक्ष प्रस्तुत किये गये संशोधनों में सन्निहित कर लिया गया है। अन्य रूप भेदों को मैंने इन संविधान सभाओं के प्रतिनिधियों से वाद विवाद कर लेने के पश्चात् छोड़ दिया है।

मेरे लिये यह बड़े खेद का विषय है कि अन्य राज्यों या राज्यों के संघों की जनता की इच्छा उनके निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा जान लेने की इसी प्रकार की प्रक्रिया का पालन करना हमारे लिये संभव न हो सका। दुर्भाग्यवश शेष राज्यों में न तो समुचित रूप से गठित विधान मंडल हैं और न भारत के संविधान के अन्तिम रूप में बन जाने से पूर्व उनमें विधान मंडल का गठन करना संभव हो सकता है। अत: हमारे पास और कोई चारा न था सिवा इसके कि जैसी स्थिति हो शासक या राजप्रमुख की स्वीकृति के आधार पर इन राज्यों में संविधान का प्रवर्त्तन कर दें और शासक या राजप्रमुख अपने-अपने मंत्रिपरिषदों से अवश्य परामर्श करेंगे। मुझे विश्वास है कि न तो वे माननीय सदस्य जो इस सभा में उन राज्यों का प्रतिनिधान कर रहे हैं और न राज्यों की जनता सामान्यतया यह चाहेगी कि जब तक इन राज्यों में विधान मंडलों या संविधान निर्माणक निकायों का गठन न हो तब तक संविधान का प्रवर्त्तन इन राज्यों में स्थगित रखा जाये। नये संविधान के अधीन जब इन राज्यों के विधान मंडल बन जायेंगे तो वे संविधान में संशोधन प्रस्थापित कर

सकते हैं। इन राज्यों की जनता को मैं यह आश्वासन देना चाहता हूं कि उनके प्रथम विधान मंडलों द्वारा की गई किसी सिफारिश पर हम ठीक-ठीक विचार करेंगे। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस काल में इस सभा द्वारा बनाया गया संविधान, जिसमें सिवा एक राज्य के सबका समुचित प्रतिनिधित्व है, उनको स्वीकार्य होगा।

उन विशेष समस्याओं को ध्यान में रखते हुए जिनका सामना जम्मू और काश्मीर के राज्य को करना पड़ रहा है हमने वर्तमान आधार पर उस राज्य के संविधानिक संबंध को संघ के साथ बनाये रखने के लिये एक विशेष उपबन्ध बनाया है। हैदराबाद राज्य के विषय में इस संविधान की स्वीकृति राज्य की जनता के अनुसमर्थन पर आश्रित है।

जैसा कि सभा ने ध्यान दिया होगा जिस रूप में यह संविधान बन रहा है वह कई बातों में मूल मसौदे से भिन्न है। हमने 224 और 225 जैसे अनुच्छेदों को अपमार्जित कर दिया है जो फेडरल क्षेत्र में राज्यों के प्रति संघ के विधायी और कार्यपालक प्राधिकार पर परिसीमायें आरोपित करते थे। इसी प्रकार से विधायी सूची की उन प्रविष्टियों को छोड़ दिया गया है जो प्रांतों और राज्यों में अन्तर उत्पन्न करती थीं। अतः राज्यों के प्रति केन्द्र के विधायी और कार्यपालक के प्राधिकार वैसे ही होने चाहिये जैसे वे प्रांतों में तथा प्रांतों पर हैं। संक्रांति काल में कुछ समायोजनों के अधीन राज्यों का केन्द्र से राजस्व संबंध भी वही होगा जो प्रांतों और केन्द्र में है। अब उच्चतम न्यायालय का क्षेत्राधिकार राज्यों में उसी सीमा तक विस्तृत होगा जिस तक कि वह प्रांतों में है। राज्यों की उच्च न्यायालयों का गठन होगा और वे उसी प्रकार से प्रकार्य करेंगी जैसे कि प्रांतीय उच्च न्यायालय। भारत के समस्त नागरिक, चाहे वे राज्यों में निवास करते हों अथवा प्रांतों में, एक जैसे मूलाधिकारों का उपयोग करेंगे और उनके प्रवर्तन के लिये एक जैसे वैध उपचार होंगे। केन्द्र से संविधानिक संबंध और अपनी आंतरिक व्यवस्था के विषय में राज्य प्रांतों के समान होंगे।

मुझे विश्वास है कि सभा इस महत्वपूर्ण तथ्य पर कृतज्ञतापूर्वक ध्यान देगी कि 1935 की योजना से भिन्न रूप में हमारा संविधान लोकतंत्रों और राजकुलों का मेल नहीं है वरन् जनता की संपूर्ण प्रभुता की आधारभूत विचारधारा पर निर्मित भारतीय जनता का एक वास्तविक संघ है। यह राज्य और प्रांतों की जनता में की समस्त रुकावटों को दूर करता है और समान रूप से प्रांतों और राज्यों की जनता की ओर से किये गये सहयोगी उद्यम के सच्चे आधार पर निर्मित एक सुदृढ़ लोकतंत्रात्मक भारत बनाने के लक्ष्य की प्रथम बार पूर्ति करता है।

चूंकि सभा राज्यों पर प्रभाव डालने वाली प्रगतियों से परिचित है इस कारण जो विभिन्न संशोधन सभा के समक्ष प्रस्तुत किये गये हैं उनका सभा में व्याख्या करना मेरे लिये आवश्यक नहीं है। दो या तीन विषय ऐसे हैं जिन पर मैं कुछ बातें कहना चाहूंगा।

उनमें से एक प्रस्थापित अनुच्छेद 306-ख है। जैसा कि सभा को विदित है जिस रूप में हमें देशी राज्य मिले हैं उनमें प्रगति की स्थिति भिन्न-भिन्न रूप में थी। कई राज्यों में विशुद्ध रूप के स्वैरतंत्र से प्रारम्भ करना पड़ा। संक्रांति काल में जिस कार्य से संघों की सरकारें भयभीत थीं उस कार्य की विशालता पर ध्यान देते हुए और इस तथ्य पर ध्यान देते हुए कि न तो उन राज्यों में प्राप्त हुई सेवायें

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

और न राजनैतिक संघटन, जिस रूप में कि वे वहां वर्तमान थे, इस स्थिति में थे कि वे प्रशासन के उत्तरदायित्व को बिना सहायता के वहन कर सकें, हमने कुछ प्रसंविदाओं में यह उपबन्ध किया कि जब तक इन संघों में नया संविधान प्रवृत न हो तब तक अपने प्रकार्यों के प्रयोग करने में राजप्रमुख और मंत्री परिषद् भारत सरकार के साधारण नियंत्रण में रहेंगे और भारत सरकार द्वारा समय-समय पर निकाले गये अनुदेशों का पालन करते रहेंगे। संक्रांति कालीन व्यवस्था संभवत: कुछ वर्षों तक रहे। हम स्वयं इस बात के प्रति उत्सुक हैं कि इन राज्यों की जनता अपने पूर्ण उत्तरदायित्व को वहन करे, फिर भी हम इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं कि अधिकांश राज्यों में प्रशासी संघटन और राजनैतिक संस्थायें तुलनात्मक रूप में बहुत कम उन्नत दशा में पाई जाती हैं और राज्यों के एकीकरण और स्वैरतंत्र के लोकतंत्र व्यवस्था पर आने से संबंध रखने वाली समस्यायें ऐसी हैं कि वे चिरकाल से स्थापित प्रशासन व्यवस्थाओं और जनता के अनुभवी नेताओं के परखने की कसौटी है। अत: हमने यह आवश्यक समझा कि इन राज्यों में लोकतंत्रात्मक संस्थाओं की उन्नति के हित में, जो कि शासन दक्षता की आवश्यकता से किसी प्रकार कम नहीं हैं, भारत सरकार जब तक आवश्यक हो तब तक राज्यों की सरकारों पर अपना साधारण निरीक्षण रखे।

यह स्वाभाविक है कि कोई इस प्रकार का उपबन्ध, जिसमें भाग 3 में के राज्यों के साथ भाग 1 में के राज्यों से भिन्न प्रकार का व्यवहार है, कुछ भ्रम उत्पन्न करे। इन राज्यों के प्रतिनिधान करने वाले माननीय सदस्यों को और उनके द्वारा राज्यों की जनता को मैं यह आश्वासन देना चाहता हूं कि इन उपबन्धों में किसी सरकार की निन्दा नहीं है। उसमें केवल उन आकस्मिकताओं के लिये उपबन्ध है जिनकी वर्तमान दशाओं के कारण अन्य श्रेणियों के राज्यों की अपेक्षा भाग 3 में के राज्यों में उत्पन्न होने की अधिक संभावना है। हम किसी भी राज्य के दिन प्रति दिन के शासन में हस्तक्षेप करना नहीं चाहते हैं। हम स्वयं इस बात के लिये बहुत उत्सुक हैं कि राज्य की जनता अनुभव द्वारा सीखे। कड़े उपचार के साधनों को टालने के लिये यह अनुच्छेद मुख्यतया एक प्रकार का रक्षामूलक यंत्र है जैसे कि संविधानिक यंत्र के जर्जरित हो जाने के लिये उपबन्ध हैं। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इस विषय में मैसूर और तिरुवांकुर तथा कोचीन संघ के साथ जहां लोकतंत्रात्मक संस्थायें एक अरसे से कार्य कर रही हैं और जहां विधान मंडलों के प्रति उत्तरदायित्वपूर्ण सरकारें पदस्थ हैं, उन राज्यों से भिन्न व्यवहार करना पड़ा जो इस स्तर पर नहीं हैं। इन सब विषयों में प्रत्येक विषय की आवश्यकता के अनुसार हमारा नियंत्रण भिन्न-भिन्न सीमा तक प्रयोग में लाया जायेगा। प्रत्येक विषय को गुणावगुण के आधार पर निपटाने के लिये आवश्यक स्वविवेक इस अनुच्छेद का परन्तुक हमको प्रदान करता है।

मैं आशा करता हूं कि यह कथन, जिसमें हमारी समझी बूझी हुई नीति निहित हैं, किसी भी ऐसी शंका को दूर कर देगा जो इन राज्यों की सरकारों को इस अनुच्छेद के संबंध में हुई हो।

एक और विषय जिसके बारे में संदेह दूर करना चाहूंगा वह अनुच्छेद 3 पर प्रस्थापित संशोधन है। प्रादेशिक पुनर्समायोजन के संबंध में यह संशोधन भाग 3 में के राज्यों को उसी आधार पर रखता है जिस पर भाग 1 में के राज्य हैं। मैसूर

की संविधान सभा ने हमसे यह सिफारिश की थी कि सभा द्वारा जो अनुच्छेद स्वीकार कर लिया गया है और जिसमें यह उपबन्ध है कि भाग 3 के राज्यों के राज्यक्षेत्र पर प्रभाव डालने वाली प्रस्थापनाओं को सभा में रखने से पूर्व भाग 3 में के राज्यों की पूर्व स्वीकृति होनी चाहिये ये उपबन्ध ज्यों के त्यों रहें। हम इस कारण इस सुझाव से सहमत न हो सके कि ऐसे विषयों में भाग 1 और भाग 3 के राज्यों में अन्तर नहीं होना चाहिये। फिर भी मैं इस अवसर पर मैसूर राज्य के प्रतिनिधियों को यह आश्वासन देता हूं कि चाहे अनुच्छेद में प्रभाव पड़ने वाले राज्य के विधान मंडल से परामर्श करने या उसकी अनुमति लेने का उपबन्ध हो या न हो परन्तु जनता की इच्छा की उपेक्षा केन्द्रीय सरकार या विधान मंडल द्वारा नहीं हो सकती है। आखिर हमारे यहां लोकतंत्र है, हमें जनता की इच्छा का मुख्य बल है और लोक मत के विरुद्ध हम कार्य नहीं कर सकते हैं।

अब मैं प्रस्थापित अनुच्छेद 267-क पर आता हूं जिसके सम्बन्ध में कुछ व्याख्या आवश्यक है। जो राज्य विलीन कर लिये गये हैं तथा जिनका एकीकरण हो चुका है उनके शासकों को भिन्न-भिन्न प्रसंविदाओं तथा समाविष्टियों के करारों में नियत की गई निजी थैली देने की भारत सरकार ने प्रत्याभूति की है। अनुच्छेद 267-क इन प्रत्याभूतियों को संविधानिक रूप में अभिज्ञात करता है और उन रकमों के सम्बन्ध में प्रान्तों और राज्यों से समय-समय पर की गई उन प्राप्तियों के अधीन इस व्यय को केन्द्रीय राजस्व पर भारित करने के लिये उपबन्ध करता है।

सर्वप्रथम मैं इन प्रबन्धों के वित्तीय रूप को लूंगा। विगत समय में अधिकांश राज्यों में शासन पर किये जाने वाले और शासक की निजी शैली पर किये जाने वाले व्यय में कोई अन्तर न था। जहां शासकों की निजी थैली नियत भी की जा चुकी थी वहां भी इस बात के सुनिश्चियन के लिये कोई प्रभावी कदम नहीं उठाया जाता था कि जिस व्यय की निजी थैली द्वारा किये जाने की आशा है वह परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से राज्य के राजस्व पर तो भारित नहीं होता है। इस प्रकार शासक और शासन करने वाले परिवारों के सदस्यों पर बृहद् राशियां व्यय की जाती थीं। यह अनुमान लगाया गया है कि यह व्यय बीस करोड़ रुपये प्रति वर्ष से भी अधिक होता था।

समाविष्टियों के सब करारों और प्रसंविदाओं में शासक की निजी थैली को नियत कर देने की अब व्यवस्था है और उसके अन्तर्गत शासकों के निवासगृहों के व्यय, विवाहों तथा अन्य उत्सवों के व्यय इत्यादि के सहित शासकों और उनके परिवारों के समस्त व्यय आ जाते हैं। जिस निजी थैली की इन करारों के अधीन प्रत्याभूति की गई है वह दक्षिण के लिये उस प्रतिशत से कम है जो डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, श्री शंकरराव देव और डॉ. पट्टाभि सीतारमैया द्वारा दिये गये पंचाट के अधीन है। उसका हिसाब राज्य के औसत वार्षिक राजस्व के प्रथम लाख पर 15 प्रतिशत इसके बाद चार लाख पर दस प्रतिशत और पांच लाख से ऊपर पर साढ़े सात प्रतिशत तथा अधिकतम 10 लाख लगाया गया है। केवल कुछ बड़े राज्यों के उन शासकों के लिये दस लाख की अधिकतम संख्या से आगे बढ़ गये हैं जिनके जीवन आधार के लिये ऐसा अनुभव किया गया और ऐसे राज्यों के शासकों के केवल जीवन काल तक ही वह देय है। अब तक जो वचन दिये गये हैं उनके अनुसार निजी थैली की कुल वार्षिक रकम लगभग साढ़े चार करोड़ होती है।

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

कुछ शासकों को उनके जीवनकाल के लिय प्रत्याभूति की गई राशि को बाद में जब फिर से नियत किया जायेगा तो निजी थैली का कुछ वार्षिक व्यय चार करोड़ रुपये से कुछ कम हो जायेगा।

प्रसंविदाओं और करारों के निबन्धनों के अधीन, जो शासकों द्वारा किये गये हैं, शासकों को सम्बद्ध राज्यों के आगमों में से निजी थैली देय है और इसी के अनुसार अब तक ये राशियां दी गई हैं भारतीय राज्यों की वित्तीय परिप्रश्न समिति से वाद विवाद करते समय अधिकांश राज्यों द्वारा इस बात पर जोर दिया गया था कि शासकों को निजी थैली की राशि देने का दायित्व इस आधार पर केन्द्र को ले लेना चाहिये कि—

(क) निजी थैली केन्द्र द्वारा नियत की गई है;

(ख) निजी थैली का रूप राजनैतिक है; तथा

(ग) ऐसी राशियां प्रान्तों द्वारा नहीं दी जाती हैं।

इन विचारों के अतिरिक्त प्रसंविदाओं के प्रवर्त्तन में आने के समय से स्थिति वास्तव में बदल गई है। सर्वप्रथम जहां तक समाविष्ट हुये राज्यों का सम्बन्ध है भारत के नये संविधान के अधीन उनके पूर्ण रूप से मिट जाने से उन राज्यों के शासकों को प्रत्याभूति निजी थैली देने के दायित्व के आधार में इस कारण परिवर्तन होगा कि जिन राज्यों के राजस्वों से निजी थैली देय है वे नहीं रहेंगे। दूसरी बात यह है कि "राज्य के राजस्व" पद पर अब राज्यों के फेडरल वित्तीय एकीकरण के प्रसंगानुसार ध्यान देना होगा। इस एकीकरण में दो बातें निहित हैं; एक वर्तमान पृथक् राज्य सरकारों का "कृत्यकारी" विभाजन और दूसरा राज्य की सरकारों विभाजित "फेडरल" भागों की वर्तमान केन्द्रीय सरकार से "समाविष्टि"। अत: यह परिणाम निकलता है कि जब फेडरल वित्तीय एकीकरण प्रभावी हो जाता है तो निजी थैली की राशि देने के दायित्व को सच कहिये तो समाविष्ट हुये और एकीकरण में लाये गये राज्यों के कृत्यकारी उत्तराधिकारियों द्वारा उचित रूप में बांट लेना चाहिये अर्थात् केन्द्रीय सरकार और प्रान्तों तथा राज्यों की सरकारों में। इन सब बातों पर ध्यान देते हुये हमने यह निश्चय किया है कि सर्वोत्तम उपाय यही होगा कि इन देयों का भार केन्द्रीय राजस्व पर रहे परन्तु साथ ही साथ ऐसे संक्रांति काल के लिये और ऐसी राशि के रूप में जिसे समुचित समझा जाये राज्यों की सरकारों से अंशदान प्राप्त करने के लिये उपबन्ध बना देना चाहिये। ये राशियां राज्यों के वित्तीय एकीकरण के लिये बनाई गई योजना के अनुसार प्राप्त की जायेंगी।

मैं यह कह चुका हूं कि हमने यह जो निजी थैली की व्यवस्था की है उससे शासकों पर का व्यय भार पहली संख्या से कम होकर एक चौथाई रह जायेगा। साथ ही साथ राज्यों को शासकों से प्राप्त हुये धन के रूप में एकीकरण की रीति से पर्याप्त लाभ हुआ है। उदाहरणार्थ केवल मध्य भारत के राजप्रमुख ने इतनी बड़ी धन राशि संघ को दी है कि उसका इतना ब्याज है कि वह उन सब शासकों की कुल निजी थैली की राशि के एक बड़े भाग को पूरा कर सकती है जो उस संघ में प्रविष्ट हुये हैं। जहां तक केन्द्र द्वारा इस भार के भाग को वहन

करने का सम्बन्ध है हमें यह याद रखना चाहिये कि यह प्रबन्ध राज्यों के वित्तीय एकीकरण के परिणाम स्वरूप है जिसका इस देश की अर्थ व्यवस्था पर स्थायी प्रभाव पड़ेगा। भारत आर्थिक एकीकरण भारत की आर्थिक व्यवस्था में की उन विघटनात्मक दरारों को पाट देगा जिनके कारण प्रान्तों में आर्थिक नीतियों का प्रभावी प्रवर्तन असम्भव हो गया था। उदाहरणार्थ केवल आयकर से बचने के विषय में ही, जो कि अभी कुछ वर्षो से एक गंभीर विषय बन गया है, फेडरल वित्तीय एकीकरण से लाभ बहुत ही सारवत् सिद्ध होगा। अत: वित्तीय दृष्टिकोण से, जो प्रबन्ध हमने किये हैं उनसे इस देश की आर्थिक व्यवस्था में बहुत लाभ होगा।

अब मैं इन प्रबन्धों के राजनैतिक तथा नैतिक रूप को लेता हूं। जिन देयों की हमने प्रत्याभूति की है उनको उनके सही स्वरूप में देखने के लिये हमें यह याद रखना होगा कि उनका सम्बन्ध उन महत्वपूर्ण प्रगतियों के साथ जोड़ा जाता है जो इस देश के अति महत्वपूर्ण हितों पर प्रभाव डालती है। ये प्रत्याभूतियां उन ऐतिहासिक निर्णयों का अंग हैं जिनमें भारत के भौगोलिक, राजनैतिक तथा आर्थिक, एकीकरण के महान आदर्श का लक्ष्य वर्तमान है—एक वह आदर्श जो शताब्दियों तक दूर का सपना ही बना रहा और जिसको भारतीय स्वाधीनता के पश्चात् भी प्राप्त करना उतना ही कठिन तथा जो अब भी उतना की सुदूरवर्त्ती होता है जितना पहले था।

यह प्रसिद्ध है कि मानव-स्मरण शक्ति अल्पकालीन है। अक्तूबर 1949 में एकत्रित होते हुये यह स्वाभाविक है कि हम उस समस्या को भूल गये हैं जिससे हम अगस्त 1947 में भयभीत थे। जैसा कि माननीय सदस्यों को विदित है कि तत्कथित अधिकार सम्बन्धी सर्वोच्च सत्ता का व्ययगत होना जून 3, 1947 को घोषित की गई योजना का अंग था जिसको कांग्रेस ने स्वीकार कर लिया था। इस प्रबन्ध से हम उसी प्रकार से सहमत हो गये थे जैसे हम भारत के विभाजन से सहमत हो गये थे। हमने इसे इस कारण स्वीकार किया था कि हमारे पास अन्य कोई चारा न था। यद्यपि ब्रिटिश सरकार की कई घोषणाओं में इस मूल तथ्य को अभिज्ञात किया गया था कि प्रत्येक राज्य उस डोमीनियन से अपने भावी सम्बन्ध स्थापित करे जिसके साथ वह भौगोलिक दृष्टि से एक है, परन्तु भारत स्वाधीनता अधिनियम ने राज्यों को उन सब आभारों से मुक्त कर दिया जो अंग्रेज़ी ताज के साथ थे। अंग्रेज़ वक्ताओं ने अपनी कई प्राधिकारयुक्त घोषणाओं में यह अभिज्ञात किया था कि सर्वोच्च सत्ता के व्ययगत होने पर पारिभाषिक तथा वैध रूप से राज्य स्वाधीन हो जायेंगे। उन्होंने यहां तक मान लिया था कि सैद्धान्तिक रूप से तो राज्य जिस डोमिनियन से चाहें उससे अपने भावी सम्बन्ध स्थापित करने के लिये स्वतन्त्र हैं— यद्यपि यह कहते हुये वे कुछ भौगोलिक विवशताओं का निर्देश अवश्य करते थे जिनको टाला नहीं जा सकता था। इस परिस्थिति में विघटनात्मक शक्तियों के प्रबल होने का वास्तव में भय था क्योंकि कुछ शासकों की स्वाधीनता घोषित करने के अपने पारिभाषिक अधिकारों को प्रयोग करने की इच्छा थी और कुछ की अपने पड़ौसी डोमिनियन से मिलने की इच्छा थी। यदि शासक अपने अधिकारों का इतनी अनुचित रीति से प्रयोग करते तो उनको इस देश के हित के विरोधी प्रभावशाली व्यक्तियों से यथेष्ट समर्थन प्राप्त होता।

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

इस अनुचित आधार के विरुद्ध भारत सरकार ने राज्यों के शासकों को प्रतिरक्षा, वैदेशिक कार्य और संचार इन तीन विषयों को दे देने के लिये निमंत्रित किया। जिस समय यह प्रस्थापना शासकों के सामने रखी गई थी उनको यह आश्वासन दिया गया था कि इन तीन विषयों के प्रवेशकरण के अतिरिक्त अन्य रूप में स्थिति पूर्ववत् रहेगी। उनको यह स्पष्ट कह दिया गया था कि इस प्रवेशकरण में राज्य पर कोई वित्तीय दायित्व की भावना नहीं है और यह भी कहा था कि राज्य की न तो आन्तरिक स्वायत्तता अथवा न प्रभुत्व को हरण करने का उद्देश्य ही है और न भारत के नये संविधान को मानने के सम्बन्ध में उनके स्वविवेक को ही शृंखलाबद्ध करना है। जब राज्य मंत्रालय ने शासकों से अपने-अपने राज्यों के एकीकरण के लिये सम्पर्क स्थापित किया था तो इन वचनों को ध्यान में रखना पड़ा था। शासकों को अपने-अपने राज्यों की सत्ता को विलीन करने के लिये विवश करने या प्रोत्साहित करने की कोई बात न थी। बल का किसी प्रकार का प्रयोग हमारे अपने स्वीकृत सिद्धान्तों के ही विरुद्ध न था वरन् उसका उलटा प्रभाव होता। यदि शासक बाहर रहना पसन्द करते तो वे उन भारी असैनिक सूचियों के अनुसार रुपया लेते रहते जैसे कि वे पहले लेते थे और अधिकतर वे राज्यों के राजस्व का अनिर्बन्धित रूप से उपयोग करते रहते। अपनी शासन शक्तियों को छोड़ने के लिये जैसे के तैसे रूप में जो कुछ हम न्यूनतम दे सकते थे वह यह था कि उनको निजी थैलियों की प्रत्याभूति दी जाये और युक्तियुक्त तथा पारिभाषित आधार पर उनको कुछ विशेषाधिकार दिये जायें। अत: निजी थैलियों का निर्णय शासकों द्वारा अपनी शासन शक्तियों को छोड़ने तथा पृथक् एककों के रूप में राज्यों के विघटन के कारण किया गया है। हमें यह याद रखना चाहिये कि अंग्रेजी सरकार ने केवल मरहटा राज्य के लिये बहुत बड़ी राशि व्यय की थी। हम स्वयं उन शासकों की निवृत्ति वेतनों के सम्बन्ध में अंग्रेज़ी सरकार के वचनों का सम्मान कर रहे हैं जिन्होंने उनके साम्राज्य की स्थापना में सहायता की थी। तो फिर क्या हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम इस तुच्छ मूल्य पर आपत्ति करें—मैं जानबूझ कर तुच्छ शब्द का प्रयोग कर रहा हूं—जो हमने उस रक्तहीन क्रान्ति के एवज में दिया है जिसने हमारे करोड़ों लोगों के भाग्य पर प्रभाव डाला है।

यदि शासकों के साथ किया गया निर्णय परस्पर बातचीत के आधार को ग्रहण न करता तो इस समय शासकों की ओर से होने वाले कष्ट और दुष्टता की जितनी कल्पना की जा सकती है उससे कहीं अधिक सामर्थ्य उनमें होती। हमें उनके साथ न्याय करना चाहिये; हमें अपने आपको उनकी स्थिति में रखना चाहिये और उसके बाद उनके बलिदान का मूल्य आंकना चाहिये। समस्त शासन शक्तियों को हस्तान्तरण कर और अपने-अपने राज्यों के एकीकरण से सहमत हो कर शासकों ने अब अपने आभारों को पूरा कर दिया है। इन करारों के अधीन हमारे आभार का मुख्य भाग यह है कि यह विश्वास दिलायें कि निजी थैलियों के सम्बन्ध में जो प्रत्याभूति हमने दी है वह पूर्ण रूप से प्रवृत्त होगी। ऐसा न करना विश्वास का खोना होगा और नई व्यवस्था की स्थापना के लिये बहुत घातक होगा।

राज्यों के सम्बन्ध में इन कई उपबन्धों की सभा में सिफारिश करते हुये मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे इन पर एक जटिल समस्या के एक

सामंजस्यपूर्ण निर्णय के रूप में सोचें। कोई विशेष उपबन्ध अपने प्रसंग से च्युत होने पर पूर्णतया भ्रमात्मक विचार उत्पन्न कर सकता है। कुछ लोग ऐसा दोष निकालें कि उनको यह पहली एकतंत्र व्यवस्था के समान प्रतीत हो। माननीय सदस्यों को मैं यह विश्वास कराना चाहता हूं कि राज्यों में से एकतंत्रवाद सदैव के लिये चला गया। किसी ऐसे विशेष निबन्धन से हमें उकता न जाना चाहिये जो हमें अतीत की याद दिलाता हो। जिस रूप में शासकों को भारत के नये संविधान में अभिज्ञात किया गया वह किसी प्रकार से राज्यों की लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था को कोई हानि नहीं पहुंचाता है। शासक सम्मानपूर्वक छोड़कर चले गये हैं अब यह जनता का कर्तव्य है कि वह इस कमी को पूरा करे और नई व्यवस्था से पूर्ण लाभ उठाये।

सभा को मैं यह स्मरण कराने की धृष्टता करता हूं कि हरीपुरा सत्र में सन् 1938 में कांग्रेस ने राज्यों के प्रति अपने लक्ष्य की इस प्रकार परिभाषा की थी:–

"कांग्रेस राज्यों में उसी राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक स्वातन्त्र्य की समर्थक है जैसी शेष भारत के लिये है और राज्यों को भारत का महत्वपूर्ण अंग समझती है जिसको पृथक् नहीं किया जा सकता है। पूर्ण स्वराज्य अथवा पूर्ण स्वाधीनता जो कि कांग्रेस का लक्ष्य है यह लक्ष्य समस्त भारत के लिये है जिसमें देशी राज्य भी सम्मिलित हैं क्योंकि भारत की अक्षुणता तथा एकता को जिस प्रकार पराधीनता में बनाये रखा गया था उसी प्रकार से स्वातन्त्र्य में भी बनाये रखना चाहिये। कांग्रेस को जो फेडरेशन स्वीकार्य हो सकता है वह फेडरेशन है जिसमें राज्य उस अंश तक लोकतंत्रात्मक स्वातंत्र्य का उपभोग करते हुये, जिस अंश तक शेष भारत उपभोग करेगा, एक स्वतन्त्र एकक के रूप में भाग लेगा।"

मुझे विश्वास है कि यदि मैं यह कहूं तो सभा मुझसे सहमत होगी कि इस समय जिन उपबन्धों को हम सभा के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं उनमें इस लक्ष्य की पूर्ण प्राप्ति निहित है।

अध्यक्ष: संशोधन संख्या 217 जिसे डॉ. अम्बेडकर ने पेश किया है और इस पर जो विभिन्न संशोधन पेश हो चुके हैं उन पर अब हम आगे और वाद-विवाद करेंगे। यदि कोई सदस्य कुछ कहना चाहता है तो वह इस समय कह सकता है।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, पिछले अवसर पर जब कि मैं प्रथम बार इस सभा में बोला था मैंने यह कहा था कि यकायक मेरे मन में एक ऐसी प्रेरणा हुई कि वह मुझे ध्वनियंत्र के निकट ले आई। उसी बात को दुहराने की मैं अनुमति मांगता हूं।

ज्यों-ज्यों मैं एक पृष्ठ के बाद दूसरा पृष्ठ, एक कंडिका के बाद दूसरी कंडिका तथा एक वाक्य के पश्चात् दूसरा वाक्य उस प्रमाणबद्ध लेख्य का सुनता जा रहा था जो हमारे सामने अभी पढ़ा जा चुका है मुझे बड़ी प्रसन्नता होती थी और मैं एक नये स्वप्न संसार में पहुंच गया था—उस स्वप्न जगत में जो उस समय हमारी

[डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया]

कल्पना में था जब कि हमने इस संकल्प के द्वारा हरीपुरा में समझौता किया था जिसको सौभाग्यवश अक्षरशः अभी पढ़कर सुनाया गया है। यह संकल्प उन दो वर्गों के परस्पर संघर्ष के परिणामस्वरूप था जिनमें एक वर्ग अधिक अनुदारवादी तथा दूसरा अधिक उग्रवादी था और अन्त में हमारे वर्तमान गृहमंत्री, प्रधान मंत्री और आदरणीय महात्मा जी ने दक्षतापूर्वक हस्तक्षेप कर इस संकल्प को प्रस्तुत किया था। 1936 में राज्य के विषयों में प्रत्यक्ष रूप से मैं रुचि रखने लगा क्योंकि मैंने सोचा कि भारत के प्रान्तों से इनको अब अधिक समय तक अलग नहीं रखा जा सकता है और जब कि मैंने एक राज्य से दूसरे राज्य की यात्रा की और हजारों मील मोटर में चला तो मैंने समझा कि राज्यों और प्रान्तों में कोई प्राकृतिक विभाजन नहीं है। वे न वन, न जंगल, न मरुस्थल, न नदियां और न पहाड़ी शृंखलाओं द्वारा पृथक् किये गये थे वरन् वे सब एक थे और दो क्षेत्रों में विभाजन रेखा केवल चुंगी का रस्से वाला द्वार था और यदि आप काठियावाड़ में होकर जायें जिसे अब सौराष्ट्र कहते हैं, जिसमें 417 राज्य हैं, तो आप राज्य से प्रान्त में या प्रान्त से राज्य में गये बिना दो मील की भी यात्रा नहीं कर सकते हैं। यह एक बड़ी अनहोनी सी बात थी। यह कल्पना भी नहीं की जा सकती थी कि इन राज्यों का किस प्रकार निर्माण हुआ और प्रान्तों और राज्यों को एक करने के विचार को स्थगित करने में कोई लाभ न था। इस प्रकार हरीपुरा में यह संकल्प बनाया गया था और आज हमें बड़ा संतोष है कि अपने गृहमंत्री की राजनीति और चातुरी से, जो राज्यों के मंत्री भी हैं, वित्तीय विषयों में, राजनैतिक विषयों में, सेना सम्बन्धी विषयों में और यहां तक कि संविधान के विषय में भी यह एकता आ गई।

बधाई के पात्र राज्यों के वे प्रतिनिधि हैं जो यहां एकत्रित हैं और जिन्होंने तुरन्त ही इन सुझावों को स्वीकार कर लिया। पहले ही फरवरी 1947 में जब हम बातचीत करने वाली समिति में लगे हुये थे मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि इस सभा में इन विभिन्न राज्यों के प्रतिनिधियों को लाना जादू टोने का काम होगा, परन्तु जब ये व्यक्ति जो शासकों के महलों के एक मील तक के घेरे में नहीं आ सकते थे वे बराबर के पद पर इन लोगों के साथ-साथ बैठे तो वह बड़ा ही आनन्ददायक दृश्य था और उस दिन से हम धीरे-धीरे उन्नति करते रहे और आज उनमें से 92 यहां हैं जो हम सबके साथ मित्र भाव से यहां बैठे हुये हैं।

मैं एक बात कहना चाहूंगा और वह निजी थैली के बारे में है। जब किसी दलदल की जगह महल बनाया जाता है जिसकी वजह से नींव कमजोर हो जाती है तो जितनी ईंटें दीवालों या उसके बाहरी भाग में दिखाई देती हैं उनसे अधिक ईंटें उस दलदल में डाल दी जाती हैं। ध्यान बाहरी भाग की ओर ही आकर्षित होता है, बाहरी भाग पर ही कलापूर्ण कार्य किया जाता है पर ईंटें उस नींव में डाली जाती हैं जो कहीं दिखाई नहीं देती परन्तु ऊपर जो भवन दिखाई देता है उसके भार को वे सदैव लादे रहती हैं। सोलह दक्षिणी राज्यों को एक संघ में लाने के प्रयत्न में हमने इसी नींव को रखा था और यह दूसरा अवसर है जब कि गृहमंत्री ने, जो राज्यों के मंत्री भी हैं, शासकों को जो निजी थैली दी गई है उसके उपक्रम के औचित्य के सम्बन्ध में हममें से तीन के नामों का स्पष्ट उल्लेख किया है। प्रारम्भिक कार्य हमने किया था और अपने शासकों को हमें कुछ

प्रलोभन भी देना था—हमें उनको संघ की योजना में लाना था। सारा सम्मान उन 16 शासकों के लिये है जो ऐसे समय में सर्वप्रथम संघ बनाने के लिये राजी हो गये जबकि न एकीकरण की और न संघीकरण की कल्पना तक थी। फालतन, सांगली भोर और औंध के शासक सम्मान के पात्र हैं जिन्होंने इस विषय का सूत्रपात किया और इस कार्य को एक ऐसी नींव पर सम्भव कर दिखाया जिसकी भली भांति सच्चाई के साथ स्थापना करनी थी और इस कारण उन पर अधिक रुपया खर्च करना पड़ा और उनको हमें अधिक निजी थैली देनी पड़ी। यह सौभाग्यपूर्ण विशेषाधिकार राज्य के मंत्री का था कि उन आधारों पर भवन खड़ा करे और अपेक्षाकृत बहुत कम मात्रा वाली निजी थैलियों को निश्चित करे और उसे न्यूनतम बनाने का सारा श्रेय हमारे राज्य के मंत्री को है।

शायद देश में एक एक ऐसी भावना है और कुछ मित्र जिनको राज्य के प्रशासन के सम्बन्ध में कोई अनुभव नहीं है वे अपने शासकों को निजी थैली दी गई हैं उनकी राशि के बारे में कुछ उपेक्षाकृत बातें कहते हैं। इस बात को स्पष्ट कर दिया जाये कि इनको मंजूर करने में कोई त्रुटि नहीं की गई है और ये बहुत ही कम परिमाण में मंजूर की गई हैं, और मुझे विश्वास है कि जैसे-जैसे समय व्यतीत होता चला जायेगा सम्भव है कि शासक स्वयं सोचने लगें कि इस प्रकार से जीवन की परवरिश करना उनके लिये उपयुक्त नहीं। शासक प्रशासन पर इतने भार स्वरूप नहीं हैं जितने जागीरदार हैं। हैदराबाद में 1200 जागीरदार हैं, ग्वालियर में 600। इन सबको मिटाना होगा और इन लोगों के लिये जितना प्रतिकर उचित है उस पर जब आप विचार करेंगे तो आपको विदित हो जायेगा कि आपने किस अनुपात में एकतंत्रवाद समाप्त किया है। आप अपनी निजी थैली के दायित्व तथा पोषणदायित्व की भी वृद्धि कर रहे हैं। यह अनिवार्य है। परन्तु जैसा कि इस लेख्य में भली भांति बता दिया गया है कि इसमें 20 करोड़ की वह बचत है जो कि अवैध भत्ते के रूप में लिये जाते रहे हैं और अनेक और करोड़ की बचत है जो वैध रूप से उन बजटों में से बचाये जा सकते हैं जिनका अब तक प्रचलन था। आखिर निजी थैली तो एक छोटा-सा विषय है। धन के रूप में यह शासकों के नैतिक त्याग के बराबर है। हम नैतिक त्याग ही तो चाहते हैं और यह सब श्रेय उन शासकों को है जो तुरन्त ही ऐसे प्रबन्ध के लिये सहमत हो गये। देश के साधनों में आप आसानी से वृद्धि कर सकते हैं। करार द्वारा आप आसानी से अपने व्यय कम कर सकते हैं। मैं अपनी ओर से मंत्रालय को बधाई देता हूं कि उन्होंने अपने उत्तरदायित्व को बड़े अच्छे ढंग से निभाया।

अन्त में मैं यह कहना चाहूंगा कि यद्यपि बहुत कुछ काम पूरा किया जा चुका है परन्तु फिर भी अभी कुछ करना शेष है। मैसूर और तिरुवांकुर के बाद मध्य भारत की बारी उस सुन्दर परम्परा के लिये है जो स्वयं बन रही है और राजस्थान को अभी इस दिशा में कार्य करना है। सौराष्ट्र बहुत दिनों तक एकाकी नहीं रह सकेगा, पेप्सू की अपनी समस्यायें हैं और हिमाचल राज्यों की भी समस्यायें हैं और अन्त में विन्ध्य प्रान्त है। मुझे विश्वास है कि वह राजनैतिक चातुर्य और दूरदर्शिता, वह विचारों की सूक्ष्मता और वह सूक्ष्म दृष्टि जिनके कारण ये फल प्राप्त हो सके हैं वह देश और राज्य मंत्रालय को इन चार समस्यावत् प्रश्नों के सम्बन्ध में भी वैसे ही सुन्दर परिणाम पर ले पहुंचेंगे।

[डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया]

जब यह हो जायेगा तो समस्त भारत एक ही आधार पर होगा और हरिपुरा कांग्रेस के संकल्प में जिन कार्य सिद्धियों की कल्पना की गई थी वे पूर्ण हो जायेंगी। अतः केवल एक व्यक्ति के रूप में ही नहीं वरन् राज्यों की जनता के सम्मेलन के स्थायी अध्यक्ष के स्थानापन्न अध्यक्ष के रूप में, कार्यवाहक अध्यक्ष के रूप में और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उस समय के उपराष्ट्रपति और इस समय राष्ट्रपति के रूप में मैं अपना धन्यवाद प्रकट करता हूं और बधाई देता हूं। मैं इस कथन का स्वागत करता हूं और इस सुन्दर महान कार्यसम्पादन के हेतु जिसकी मिसाल इतिहास में नहीं है माननीय राज्यों के मंत्री को बधाई देता हूं। मेरे सामने जर्मन राज्यों के संघ का दृश्य सरलता से प्रस्तुत हो सकता है जिसमें वे 1871 में जीना युद्ध के पश्चात् परस्पर संगठित हुये थे जब कि फ्रांस की हार हुई थी और सारा का सारा कोनफिडरेशन का रूप फेडरेशन में बदल गया था। स्वैरतंत्र के इन 502 टापुओं के—वैयक्तिक शासन के इन केन्द्रों के—संघीकरण के समान वह भी नहीं है जिनकी कि स्थापना अंग्रेजों ने अपने प्रयोजन के लिये की थी। अंग्रेज चले गये पर अपने जाने के बाद सर्वोच्च अधिकार सम्बन्धी 12 मई सन् 1946 के लेख्य का प्रकाशन कर वे अपने सुन्दर नाम में एक कलंक छोड़ गये, जिसको उन्होंने 23 मई 1946 तक प्रकाशित न होने दिया अर्थात् जब तक कि हम 16 मई के लेख्य का अपना उत्तर न दे दें जिस पर सारी बातचीतें हो रही थीं। एक कलम से उन्होंने इन 562 शेरों को पिंजड़ों से बाहर कर दिया और वे देश में भटकने लगे। सौभाग्यवश राज्यों के मंत्रालय ने उनको पकड़ लिया और उनको उपयोगी नागरिक बना लिया और हमें विश्वास है कि राजनय और उद्योग क्षेत्रों में—इन दो क्षेत्रों के लिये वे बड़े ही योग्य हैं—अपने सहयोग से वे राष्ट्रमंडल में भारत का नाम चमका देंगे।

***अध्यक्ष:** कुछ अधिक वक्ताओं को भाषण देने की आज्ञा देने में मुझे चिंता नहीं है पर मेरा यह सुझाव है कि इस भाग को हम आज समाप्त कर दें।

श्री राम सहाय (मध्य भारत): अध्यक्ष महोदय, आज रियासतों की जनता के लिये इससे ज्यादा खुशी का मौका नहीं हो सकता है कि वह अपने आपको प्रान्त की जनता के समान पाती है। विधान में उनको वही स्थान मिला हुआ है जो कि प्रान्तों की जनता को मिला है। इसमें कोई शुभा नहीं कि श्री सरदार ने स्टेट्स के सम्बन्ध में जो खासी दिलचस्पी ली है उसकी ही वजह से आज स्टेट्स की जनता को यह मौका मिला है। इसमें भी कोई शुभा नहीं कि कांग्रेस ने हरिपुरा कांग्रेस सेशन में जो रेजोल्यूशन रियासतों के सम्बन्ध में पास किया था उसके ही परिणाम स्वरूप आल इण्डिया स्टेट्स पीपल्स कांफ्रेंस की रीजनल कौंसिल ने अपने अपने रीजन में सारी स्टेट्स को एक स्थान पर लाने का प्रयत्न किया और उसकी वजह से जो वातावरण तैयार हुआ उससे श्री सरदार को काफी सहायता मिली और वह जल्द से जल्द इस कार्य को पूरा कर सके। आल इंडिया स्टेट पीपुल्स कान्फ्रेंस के मातहत कार्य करने वाले सब ही रीजनल कौंसिल ने इस बारे में भरसक प्रयत्न किया। उनके प्रयत्न के कारण तथा सरदार पटेल के नेतृत्व की वजह से आप लोग देख रहे हैं कि इस विधान में जो स्थान प्रान्तों का है वही स्टेट्स को मिल गया है। अभी पिछले साल कान्स्टिट्युएण्ट असेम्बली के स्टेटस के रिप्रेजेन्टेटिव्ज

का एक कन्वेन्शन यहां दिल्ली में हुआ था और उसने जो स्टेटमेंट इश्यू किया था उसमें भी यही चाहा गया था कि वह जल्द से जल्द विधान में इस किस्म की धारायें लाई जायें जिससे कि सब स्टेट्स और प्रान्त एक बराबर हो जाये। यही कारण था कि जिसकी वजह से स्टेट्स मिनिस्टरी ने पहले एक माडल कान्स्टीट्यूशन के लिये एक कमेटी बनाई और उसने मॉडल कान्स्टीट्यूशन तैयार किये लेकिन हालात इतनी जल्दी तब्दील हुये कि वह मॉडल कान्स्टीट्यूशन तो एक तरफ रहा, हम देख रहे हैं कि रियासतों की जनता को तथा प्रान्तों की जनता को एक ही अधिकार और एक ही जिम्मेदारी से काम करने का मौका मिल रहा है और मॉडल कान्स्टीट्यूशन बनाने वाली कमेटी की रिपोर्ट के मुताबिक ही यह चैपटर विधान में जोड़ा जा रहा है।

मैं एक बात और कहूं कि अब विधान में जो धारा 306-बी आ रही है उसके सम्बन्ध में कई तरह की बातें और बहुत-सी शंकायें स्टेट्स के लोगों के दिल में पैदा हुई थीं। हम कुछ लोग श्री सरदार से मिले भी। इस सम्बन्ध में श्री सरदार ने जो बातें हमसे कहीं उससे हमें काफी सन्तोष हुआ और हम समझते हैं कि हमारी जो शंकायें थीं वह लगभग दूर हो गईं, और उन्होंने जिस तरह से हमें समझाया, हमने समझा कि दरअसल सब की रियासतों की हालत को देखते हुए उसकी जरूरत है।

पहले रियासतें पोलिटिकल डिपार्टमेंट के अण्डर में काम करती थीं। अब स्टेट्स मिनिस्ट्री के अण्डर में काम करना होगा। लेकिन एक बड़ा फर्क है। पहले स्टेट्स का जो शासन चलता था, प्राय: वह फौरन रूल को काम रखने की दृष्टि से चलता था, लेकिन आज जो काम हमें स्टेट्स मिनिस्ट्री के अण्डर में करना होगा वह केवल इसलिये कि हम अपने ऐडमिनिस्ट्रेशन को जल्द से जल्द अच्छा और कामयाब बना सकें। हमको वही सब सहूलियतें वही सारे अधिकार जो प्रान्तों को हैं, मिल रहे हैं। तो फिर मैं समझता हूं कि इस बारे में हमें कोई शंका करने की जरूरत नहीं, और खास तौर पर सरदार ने जो स्टेटमेंट दिया है और हाउस के सामने उसमें जो कुछ उन्होंने बता दिया है और जो आश्वासन दिया है उसके बाद ऐसी कोई शंका करने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती है।

मध्य भारत में लेजिस्लेटिव असेम्बली है। ग्वालियर में तो वहां की असेम्बली 25-30 साल से काम कर रही थी, इन्दौर में भी करीब 15-20 साल से काम कर रही थी। अभी हाल में जो असेम्बली सारी रियासतों को मिला कर बनी है उसे अवश्य ही थोड़ा ही अर्सा हुआ है, लेकिन उसमें सारी स्टेट्स के जनता के रिप्रेजेन्टेटिव हैं, इस तरह से मध्य भारत की असेम्बली काम कर रही है और वह असेम्बली उस विधान से कार्य कर रही है जो उस असेम्बली ने स्वयं ही अपना तैयार किया है।

मैं समझता हूं कि अब जो कान्स्टीट्यूशन हम बना रहे हैं, उसके अनुसार हम बहुत जल्द से जल्द अपने आपको उसी प्रकार से शासन चलाते पायेंगे जैसे कि प्रान्त में शासन चलेगा।

***श्री ए. थानू पिल्ले:** अध्यक्ष महोदय, राज्य के मंत्रालय की और उस महान व्यक्ति की जिस पर इस समय इस मंत्रालय का भार है, प्रशंसा में मैं कुछ शब्द और जोड़ना चाहता हूं और उनको धन्यवाद देता हूं। श्रीमान, भारत सरकार और

[श्री ए. थानू पिल्ले]

देशी राज्यों के आपस में सम्बन्ध में जो परिवर्तन हुआ है वह और जिस शीघ्र गति से वह परिवर्तन हुआ है वह वास्तव में आश्चर्यजनक है। इस समय मैं केवल एक ही तथ्य का उल्लेख करूंगा। कुछ माह पूर्व यह आवश्यक समझा गया था कि राज्यों के लिये एक अनुकरणीय संविधान का मसौदा तैयार करने के लिये एक समिति नियुक्त की जाये। इससे यह आशय है कि उस समय तक भी यह विचार था कि देशी राज्यों को अपना पृथक् संविधान बनाना पड़ेगा। और अब हम ऐसी स्थिति को पहुंच गये हैं जहां कि मय राज्यों के समस्त भारत के लिये यही संविधान बनाने में हम समर्थ हैं, और वास्तव में यह एक ऐसी कार्यसिद्धि है जिसका किसी भी प्रशासक को किसी भी मंत्रालय को यथार्थ गौरव हो सकता है; और एक देशी राज्य के होने के नाते मुझे विशेषकर खुशी है कि इस परिवर्तन को देखने का मुझे अवसर मिला। और संविधान निर्माण में भाग लेने का अवसर मिला और भारत के समूचे संविधान के एक भाग के रूप में राज्यों के संविधान का निर्माण किया।

सफलता का यह सुन्दर अभिलेख राज्यों की जनता सहित हम सबके लिये प्रेरणा उत्पन्न करने वाला होना चाहिये। जैसा कि यहां बताया गया था राज्य प्रगति के भिन्न स्तर पर है। मुझे हर्ष है कि प्रान्त सम्बन्धी उपबन्धों को राज्यों के लिये प्रयोज्य बना दिया गया है। इस समूचे देश में जो राज्य सबसे आगे हैं उनका सबसे आगे होने का तथ्य यह है कि उन्होंने प्रान्तों में प्रचलित रीतियों को बहुत पहले से अपना लिया—मेरा आशय प्रशासी तथा विधायी रीतियों से है। यदि इस समय देशी राज्यों में मैसूर, तिरुवांकुर और कोचीन सबसे आगे है तो यह अधिकतर इस तथ्य के कारण है कि हमने प्रान्तों में प्रचलित प्रशासी तथा विधायी रीतियों को बहुत पहले से अपना लिया था। उत्तर के देशी राज्य पीछे रह गये क्योंकि वे पुरानी रीतियों पर अड़े रहे और उसका फल यह हुआ कि आज हम यह देखते हैं कि वे प्रत्यक्ष रूप से पिछड़े हुये हैं। अत: जब हम उसी प्रणाली को अंगीकार करते हैं, जब हम सब राज्यों और प्रान्तों के लिये एक प्रकार के उपबन्धों को स्वीकार करते हैं तो हम यह आशा कर सकते हैं कि जहां तक इन देशी राज्यों का सम्बन्ध है उन्नति शीघ्र होगी। हम इसी परिणाम की आशा करें।

श्रीमान, मैं एक या दो विषयों का उल्लेख करना और चाहता हूं जिनका यहां उल्लेख तो हो ही चुका है। अनुच्छेद 306-ख के सम्बन्ध में मैं पूर्णतया समझता हूं कि उस अनुच्छेद का क्यों पुर:स्थापन किया गया है। पर मैं इस तथ्य को भी प्रकट करना चाहूंगा कि कुछ राज्य भारतीय प्रान्तों के समकक्ष हैं और इन राज्यों के साथ प्रान्तों से भिन्न प्रकार के व्यवहार करने की न तो आवश्यकता है और न वह उचित ही होगा। हमारे सामने सरदार पटेल का जो भाषण पढ़ा गया था उससे हमें यह विदित होता है कि राज्यों के मंत्रालय का यह उद्देश्य है कि जहां तक हो सके राज्यों में उन्हीं प्रशासी तथा विधायी रीतियों का पुर:स्थापन किया जाये जो प्रान्तों में हैं और दोनों प्रशासी तथा विधायी विषयों में और केन्द्र द्वारा हस्तक्षेप के विषय में राज्यों के साथ भी उसी प्रकार का व्यवहार किया जाये जैसा प्रान्तों के साथ है। यदि ऐसी बात है तो मैं निवेदन करूंगा कि कम से कम उन राज्यों को जो इस समय भी प्रान्तों के बराबर हैं उनको इस संविधान में केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण से अलग क्यों नहीं रखा जाता? मैं उस भावना से भली भांति परिचित हूं जिसके कारण संविधान के मसौदे में इस समय प्रस्थापित किये गये इस उपबन्ध

के पुर:स्थापित करने का प्रयास किया गया है और देशी राज्य से आये हुये प्रत्येक सदस्य को इसी रूप में इसे देखना चाहिये। परन्तु हमें परिस्थिति की आवश्यकता से परे नहीं जाना चाहिये। इस विषय के केवल कानूनी तथा संविधानिक पहल ही नहीं है; वरन इसमें भावना और आत्म सम्मान का प्रश्न भी निहित है। मैसूर और तिरुवांकुर और कोचीन के संघ के साथ मद्रास और बम्बई से भिन्न प्रकार का व्यवहार क्यों हो? यह प्रश्न अपने आप उठता है। ये राज्य उतने ही उन्नत हैं जितने कि कोई प्रान्त, तो फिर आप उनसे भिन्न प्रकार का व्यवहार क्यों करें? इसकी क्या आवश्यकता? मसौदा समिति कृपा कर मेरे इस सुझाव पर विचार करे और यदि कुछ राज्यों के लिये प्रस्थापित नियंत्रण आवश्यक समझा जाये तो मैसूर, तिरुवांकुर और कोचीन जैसे उन्नत राष्ट्रों को छोड़कर ऐसे राज्यों ही अनुसूची संविधान में सम्मिलित कर दी जाये। कार्यपालक आदेश द्वारा ऐसे राज्यों के अपवर्जन को राष्ट्रपति पर छोड़ना न्याययुक्त नहीं कहा जा सकता।

इसके बाद छोटा-सा विषय और है जिसे श्री सन्तानम् ने उठाया था और जिसका मैं उल्लेख करना चाहता हूं। उन्होंने यह सुझाव दिया था कि यद्यपि राजप्रमुख के परामर्श से राष्ट्रपति द्वारा राज्यों या राज्य संघों में के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन नियत किये जा सकते हैं, पर उनके भत्ते और निवृत्ति वेतनों पर भिन्न प्रकार से विचार करना चाहिये और ये संसद द्वारा नियत होने चाहिये। निवृत्ति वेतनों के सम्बन्ध में मैं इस बात को समझ सकता हूं क्योंकि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के निवृत्ति वेतन का भार भारत की संचित निधि पर होगा। यदि यह बात है तो संसद द्वारा निवृत्ति वेतन नियत किये जा सकते हैं। परन्तु यदि राजप्रमुख के परामर्श से राष्ट्रपति द्वारा राज्यों के उच्चन्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन नियत करने की बात न्यायपूर्ण है तो इसी प्रकार से उनके भत्ते नियत किया जाना भी न्यायपूर्ण है। अत: मैं यह सुझाव दूंगा कि श्री सन्तानम् के प्रस्थापित संशोधन में यह रूपभेद कर दिया जाये कि वह संशोधन केवल निवृत्ति वेतन तक की निर्बन्धित रखा जाये और भत्तों पर उसी प्रकार से विचार किया जाये जैसे वेतनों पर।

इसके बाद श्रीमान, निजी थैली के सम्बन्ध में मुझे कुछ नहीं कहना है। मैं समझता हूं कि प्रस्थापित उपबन्ध उन सदस्यों को मान्य होंगे जो राज्यों से आये हैं।

अन्त में राज्यों की वित्तीय स्थिति के सम्बन्ध में इस सभा से तथा सरकार से एक निवेदन करना चाहूंगा। यह साधारण ज्ञान का विषय है कि फेडरल वित्तीय एकीकरण के कारण राज्यों को अपने वित्तीय साधनों में बहुत कुछ हानि उठानी पड़ेगी। राज्य जिस प्रकार से कुछ काल से अपना प्रशासन चलाते आ रहे हैं उसी प्रकार से चलाते रहने के लिये उपबन्ध करने का प्रयास किया जा रहा है और मैं आशा करता हूं कि भारत सरकार बहुत ही उदार होकर इस उपबन्ध को अमल में लायेगी। वास्तव में मुझे यह एक सच्ची प्रार्थना करनी चाहिये कि इस समस्या पर बड़ी उदारता तथा सहानुभूतिपूर्वक विचार हो। अन्यथा राज्यों का प्रशासन नहीं चल सकता। तिरुवांकुर और कोचीन का जहां तक सम्बन्ध है 10 से 12 करोड़ तक के कुल राजस्व में से हमें तीन या चार करोड़ की हानि होगी और जब तक यह कमी पूरी नहीं होगी तब तक हमारा प्रशासन कार्य नहीं चल सकता,

[श्री ए. थानू पिल्ले]

वह ठप हो जायेगा। मैं आशा करता हूं कि इस विषय पर केन्द्रीय सरकार ठीक-ठीक विचार करेगी।

फेडरल वित्तीय एकीकरण से जो वित्तीय समायोजन आवश्यक हो गये हैं उनके सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार और राज्य संघों में होने वाले करारों के लिये उपबन्ध बनाने का प्रयास किया जा रहा है। जिन विषयों के लिये करार करने होंगे उन सबके लिये उपबन्ध बनाने होंगे। राज्यों में से जिन शुल्कों का उत्पादन किया गया है उनके सम्बन्ध में केन्द्र द्वारा वापसी का उपबन्ध प्रस्थापित किया गया है। आयकर और अन्य राजस्व के साधनों में हानि हो जाने के कारण देशी राज्यों को वित्तीय सहायता देने के लिये किये जाने वाले करारों के लिये भी उपबन्ध बनाने चाहिये। मैं आशा रखता हूं कि संविधान में ये सब आवश्यक उपबन्ध रख दिये जायेंगे।

इन बातों के साथ सभा के समक्ष जो अनुच्छेद प्रस्तुत किया गया है मैं उसका समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** यह प्रार्थना की गई है कि राज्य सम्बन्धी इन अनुच्छेदों पर होने वाले इस वाद-विवाद में राज्य के कई सदस्य भाग लेना चाहते हैं। मेरे विचार से उनकी यह बड़ी ही युक्तियुक्त इच्छा है और उनको अवसर देने के लिये मैं उद्यत हूं। अत: मैं आजकल समूचे विषय पर मत नहीं लूंगा। हम कल वाद-विवाद जारी रख सकते हैं। पर एक सुझाव है जिसको मैं रखना चाहूंगा। ऐसी दशा में हम अन्य संशोधनों को भी सभा के समक्ष प्रस्तुत कराना चाहेंगे जिससे कि इस समूची बात को अन्त में एक ही बार में लिया जा सके और यह तभी होगा जबकि सारे संशोधन सभा के समक्ष हों।

(श्रीमती ऐनी मेस्करीन भाषण देने के लिये उठीं)

***अध्यक्ष:** यदि आप थोड़े से समय में भाषण समाप्त कर दें, तब तो इस समय मैं आपको भाषण देने की आज्ञा दे सकता हूं।

***श्रीमती ऐनी मेस्करीन** (तिरुवांकुर और कोचीन संघ): अध्यक्ष महोदय, सरदार साहब का भाषण सुनने के बाद मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि राज्यों के सम्बन्ध में मेरी सारी कठिनाइयां दूर हो गईं। जबसे मैंने धारा 306-ख को पढ़ा था तभी से उससे मुझे कुछ अशान्ति सी रही थी और मेरा यह विचार हुआ था कि लोकतन्त्रात्मक भारत के निर्माण में बहुत समय तक ये राज्य रोमन जैसे रक्षाकवच के अधीन रहेंगे। तिरुवांकुर, कोचीन और मैसूर बल्कि वास्तविक रूप में दक्षिण भारत के राज्य ऐसे क्षेत्र थे जिनमें लोकतंत्र का सर्वप्रथम प्रवेश हुआ। मैं स्वयं अपनी प्रशंसा नहीं कर रही हूं पर मैं इस सभा को यह सूचना दूंगी—मैं समझती हूं कि सदस्य इस बात को जानते होंगे—कि वयस्क मताधिकार का सर्व प्रथम पुर:स्थापन भारत में तिरुवांकुर ने किया और लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्तों को तिरुवांकुर और कोचीन ने उस समय ही पुर:स्थापित कर दिया था जब कि अन्य कोई प्रान्त इस विषय का विचार तक नहीं रखता था। जब अनुच्छेद 306-ख पुर:स्थापित किया

गया तो हमने सोचा कि क्या राज्य के मंत्रालय द्वारा हीन भावना से हमको छोड़ दिया जायेगा? हमारे समझने के लिये भारत के बिस्मार्क का यह ज्ञान बड़ा गहरा था। उन्होंने लोकतन्त्रात्मक भारत के भाग्य को इस प्रकार ढाला है कि जो राज्य यथेष्ठ रूप से उन्नत हैं वे प्रान्तों के बराबर हैं, और जिन राज्यों को एतत्पश्चात् उन्नति करनी है उनको एक रक्षक यंत्र दे दिया गया है जिससे कि वे निर्भय होकर उन्नति कर सकें।

एक बात मुझे बड़े महत्व की लगती है और वह है शक्ति का केन्द्रीयकरण। शक्ति के दृढ़ केन्द्रीयकरण के बिना कोई राष्ट्र, कोई साम्राज्य संसार में जीवित नहीं रहा। बिस्मार्क द्वारा बनाये गये रूप में जर्मनी के कोन्फीडरेशन को आज यूरोप के मानचित्र में वह विषम स्थान प्राप्त है कि उसके विभाजन करना यूरोप के प्रशासकों के लिये एक समस्या है। ग्रीस में वेनेजलोस और चीन में सुनयातसेन के उदाहरण हमें यह विश्वास दिलाने के लिये पर्याप्त हैं कि भारत का यह बिस्मार्क एक ऐसा प्रशासक है जिसकी बुद्धि और अनुभव की उपमा नहीं। विगत दो महीनों में राज्य मंत्रालय ने जो कार्य किया है उसके लिये राज्यों की जनता मंत्रालय के प्रति बहुत आभारी है। अब वह यह अनुभव करने लगी है कि जिस स्वैरतंत्र ने उन्हें अंग्रेजी शासन में दबाकर रखा था उससे अब आगे अधिक कष्ट नहीं होगा। भारत का 40 प्रतिशत राज्यक्षेत्र और 23 प्रतिशत जनसंख्या अब प्रान्त और प्रान्त की जनता के बराबर है और लोकतन्त्रात्मक भारत का भाग्य अब इतना आशाजनक दिखाई देता है कि थोड़े से काल में हम संसार के अग्रतम लोकतंत्रों में गिने जायेंगे। हमें स्वयं अपने आपको बधाई देनी चाहिये कि संसार के इतिहास में यह प्रथम अवसर है जब कि 40 करोड़ जनता ने स्वराज रूपी समुद्र में अपना बेड़ा खोला है और संसार के इतिहास में यह एक सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करने जा रहा है। मैं एक बार और राज्य के मंत्रालय को धन्यवाद देती हूं और कम उन्नति वाले राज्यों की जनता से निवेदन करती हूं कि वे इस अवसर से पूरा-पूरा लाभ उठायें और शीघ्र ही प्रान्तों के बराबर आ जायें जिससे कि आगामी वर्ष में हमारे लोकतन्त्रात्मक भारत में कोई राज्य न रहे केवल प्रांत रहें।

इसके पश्चात् सभा बृहस्पतिवार ता. 13 अक्तूबर, 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

GIPD–HS-214 PSdeb–11-11-52–320

Con. 3. X.6.49
320

अंक 10
संख्या 6

बृहस्पतिवार
13 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा-(जारी) 2973-3062
[भाग 6-क-अनुच्छेद 235, 236, 274 घ घ, 302-क, 306-ख, 267, 270-क, 197, 235-क तथा 267-क पर विचार
अनुच्छेद (पुनः उपस्थित)-3, 47, 55, 67, 83, 92, 100, 248-ख, 263, सप्तम सूची और अनुच्छेद 270 पर विचार,
नवीन अनुच्छेद 67-क पर विचार]
तृतीय पठन के सम्बन्ध में कार्यक्रम

भारतीय संविधान सभा

बृहस्पतिवार, 13 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टिट्यूशन हाल नई दिल्ली, में प्रातः 10 बजे, अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा—(जारी)

भाग 6-क—(जारी)

***अध्यक्षः** मेरे विचार से अच्छा यह होगा कि राज्यों से संबद्ध जिन अन्य अनुच्छेदों को संशोधित करने का विचार है उन्हें उठाया जाये तथा सभी संशोधनों पर विचार किया जाये और फिर सामान्य बहस की जाये। मेरे विचार से इसकी आवश्यकता नहीं है कि डॉ. अम्बेडकर सब कुछ पढ़ें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बंबईः जनरल): श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः—

"अनुच्छेद 224 निकाल दिया जाये।"

"अनुच्छेद 225 निकाल दिया जाये।"

"अनुच्छेद 235 के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये, अर्थात्ः—

Armed forces in States in Part III of the First Schedule.

'235A. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution, a State for the time being specified in Part III of the First Schedule having any armed force immediately before the commencement of this Constitution may, until Parliament by law otherwise provides, continue to maintain the said force after such commencement subject to such general or special orders as the President may from time to time issue in this behalf.

(2) Any such armed force as is referred to in clause (1) of this article shall form part of the forces of the Union.

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

प्रथम अनुसूची के भाग (3) में के राज्यों में के सशस्त्र बल

[235क (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी प्रथम अनुसूची के भाग (3) में इस समय उल्लिखित कोई राज्य, जो कि इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले सशस्त्र बलों को रखता था, उक्त बलों को ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् ऐसे साधारण या विशेष आदेशों के अधीन रहकर, जैसे कि राष्ट्रपति समय-समय पर इस बारे में निकाले, जब तक बनाये रख सकेगा जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे।

(2) कोई ऐसे सशस्त्र बल, जैसे कि इस अनुच्छेद के खंड (1) में निर्दिष्ट हैं, संघ के सशस्त्र बलों का भाग होंगे।]' "

"अनुच्छेद 236 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये, अर्थात्:–

Power of the Union to undertake executive, Legislative or judicial function in relation to any territory not being part of the territory of India.

'236. The Government of India may by agreement with the Government of any territory not being part of the territory of India undertake any executive, legislative or judicial functions vested in the Government of such territory, but every such agreement shall be subject to, and governed by, any law relating to the exercise of foreign jurisdiction for the time being in force.

ऐसे राज्य क्षेत्र के सम्बन्ध में जो भारत राज्य क्षेत्र का भाग नहीं है, कार्यपालक, विधायी या न्याधिक कृत्यों को ग्रहण करने की संघ की शक्ति:

[236. भारत सरकार किसी ऐसे राज्य-क्षेत्र की सरकार से, जो भारत राज्य-क्षेत्र का भाग नहीं है, करार करके ऐसे राज्य-क्षेत्र की सरकार में निहित किसी कार्यपालक, विधायी या न्यायिक कृत्यों को ग्रहण कर सकेगी किंतु प्रत्येक ऐसा करार विदेशी क्षेत्राधिकार के प्रयोग से संबद्ध किसी तत्समय प्रवृत्त विधि के अधीन रहेगा और उससे शासित होगा।]' "

"अनुच्छेद 237 निकाल दिया जाये।"

"अनुच्छेद 274-घ के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किये जायें, अर्थात–

Power of certain States in Part III of the First Schedule to impose restrictions on trade and commerce by the levy of certain taxes and duties on goods imported into or exported from such States.

'274DD. Notwithstanding anything contained in the foregoing provisions of this Part, the President may enter into an agreement with a State for the time being specified in Part III of the First Schedule with respect to the levy and collection of any tax or duty leviable by the State on goods imported

into the State from other States or on goods exported from the State to other States, and any agreement entered into under this article shall continue in force for such period not exceeding ten years from the commencement of this Constitution as may be specified in the agreement:

'Provided that the President may at any time after the expiration of five years from such commencement terminate or modify any such agreement if after consideration of the report of the Finance Commission constituted under article 260 of this Constitution he thinks it necessary to do so.

Effect of articles 274A and 274C on existing laws.

'274DDD. Nothing in articles 274-A and 274-C of this Constitution shall affect the provisions of any existing law except in so far as the President may by order otherwise provide.

प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित कतिपय राज्यों की आयात की हुई या निर्यात की हुई वस्तुओं पर कर और शुल्क लगाकर व्यापार और वाणिज्य पर निर्बन्धनों, आरोपण की शक्ति

[274-घघ इस भाग के पूर्वगामी उपबन्धों में किसी बात के होते हुए भी प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित किसी ऐसे राज्य से, जो दूसरे राज्यों से उस राज्य में वस्तुओं के आयात पर अथवा उस राज्य से दूसरे राज्यों को वस्तुओं के निर्यात पर कोई कर या शुल्क उद्गृहीत करता है ऐसे कर या शुल्क के उद्गृहण या संग्रहण के संबंध में राष्ट्रपति करार कर सकता है और इसे इस अनुच्छेद के अधीन किया हुआ कोई करार, इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष से अनधिक ऐसी कालावधि के लिये जैसी कि करार में उल्लिखित हो, प्रभावी रहेगा।

परन्तु ऐसे प्रारम्भ से पांच वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी समय भी यदि राष्ट्रपति अनुच्छेद 260 के अधीन गठित वित्त आयोग के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ऐसे किसी करार का अन्त या रूपभेद करना आवश्यक समझे तो वह ऐसा कर सकेगा।

वर्तमान विधियों पर अनुच्छेद 274-क और 274-ग का प्रभाव

274. घघघ. अनुच्छेद 274-क और 274-ग की कोई बात किसी वर्तमान विधि के उपबन्धों पर, जिस मात्रा तक राष्ट्रपति आदेश द्वारा अन्यथा उपबन्धित करे, उसके अतिरिक्त, कोई प्रभाव न डालेगी।]' "

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

"अनुच्छेद 302 के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये, अर्थात्:–

Rights and privileges of Rulers of Indian States.

'302A. In the exercise of the power of Parliament or of the Legislature of a State to make laws or in the exercise of the executive power of the Union or of a State, due regard shall be had to the guarantee or assurance given under any such covenant or agreement as is referred to in article 267A of this Constitution with respect to the personal rights, privileges and dignities of the Ruler of an Indian State.

देशी राज्यों के शासकों के अधिकार और विशेषाधिकार

[302 क. संसद की या किसी राज्य के विधान मंडल की विधि बनाने की शक्ति के प्रयोग में, अथवा संघ या किसी राज्य की कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में, देशी राज्य के शासक के वैयक्तिक अधिकारों, विशेषाधिकारों और गरिमा के विषय में ऐसी प्रसंविदा या करार के अधीन, जैसा कि इस संविधान के अनुच्छेद 267-क में निर्दिष्ट है, दी गई प्रत्याभूति या आश्वासन का सम्यक् ध्यान रखा जायेगा।]' "

"अनुच्छेद 306 के पश्चात् ये नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किये जायें:–

Temporary provisions with respect to States in Part III of the First Schedule.

'306B. Notwithstanding anything contained in this Constitution during a period of ten years from the commencement thereof, or during such longer or shorter period as Parliament may by law provide in respect of any State, the Government of every State for the time being specified in Part III of the First Schedule shall be under the general control of, and comply with such particular directions, if any, as may from time to time be given by the President, and any failure to comply with such directions shall be deemed to be a failure to carry out the Government of the State in accordance with the provisions of this Constitution:

'Provided that the President may by order direct that the provisions of this article shall not apply to any State specified in the order.

[306-ख. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी इस के प्रारम्भ से दस वर्ष की कालावधि के भीतर अथवा किसी ऐसी दीर्घतर या अल्पतर कालावधि के भीतर, जिसे किसी राज्य के बारे में संसद् विधि द्वारा उपबन्धित करे, प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य की सरकार राष्ट्रपति के साधारण नियंत्रण के अधीन होगी, तथा ऐसे विशिष्ट निदेशों का, यदि कोई हों, अनुवर्तन करेगी जैसे कि राष्ट्रपति समय-समय पर दे, और ऐसे निदेशों के अनुवर्तन में किसी प्रकार की असफलता इस संविधान के उपबन्धों के अनुसार शासन चलाने में असफलता मानी जायेगी।

प्रथम अनुसूची के भाग 3 में के राज्यों के विषय में अस्थाई उपबन्ध

परन्तु राष्ट्रपति आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि इस अनुच्छेद के उपबन्ध उस आदेश में उल्लिखित किसी राज्य को लागू न होंगे।]' "

"अनुच्छेद 258 के खंड (1) के स्थान पर यह खंड रखा जाए:–

'(1) Notwithstanding anything contained in this Chapter, the Government of India may, subject to the provision of clause (2) of this article, enter into an agreement with the Government of a State for the time being specified in Part III of the First Schedule with respect to—

(a) the levy and collection of any tax or duty leviable by the Government of India in such State and for the distribution of the proceeds thereof otherwise than in accordance with the provisions of this Chapter;

(b) the grant of any financial assistance by the Government of India to such State in consequence of the loss of any revenue which that State used to derive from any tax or duty leviable under this Constitution by the Government of India or from any other sources;

(c) the contribution by such State in respect of any payment made by the Government of India under clause (1) of article 267A of this Constitution, and when an agreement is so entered into, the provisions of this Chapter shall in relation to such State have effect subject to the terms of such agreement:—

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(1) इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, भारत सरकार, खंड (2) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य की सरकार से–

(क) ऐसे राज्य में भारत सरकार द्वारा उद्गृहीत किये जाने वाले किसी कर या शुल्क के उद्ग्रहण और संग्रह करने तथा उसके आगम के, इस अध्याय के उपबन्धों से अन्यथा, वितरण करने के;

(ख) भारत सरकार द्वारा इस संविधान के अधीन उद्गृहीत किये जाने वाले किसी कर या शुल्क से अथवा अन्य किन्हीं स्रोतों से जो राजस्व वह राज्य पाता था उसकी हानि के लिये ऐसे राज्य को भारत सरकार द्वारा वित्तीय सहायता अनुदान करने के;

(ग) अनुच्छेद 267-क के खंड (1) के अधीन भारत सरकार द्वारा दिये जाने वाले किसी देय धन के विषय में ऐसे राज्य द्वारा अशंदान करने के;

विषय में करार कर सकेगी, तथा जब ऐसा करार किया जाये तब इस अध्याय के उपबन्ध ऐसे राज्य के संबंध में ऐसे करार के निबन्धनों के अधीन रह कर ही प्रभावी होंगे।]' "

"भाग 9 के अध्याय 1 में, अनुच्छेद 267 के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये, अर्थात्:–

Privy purse sums of Rulers.

'267A. (1) Where under any covenant or agreement entered into by the Ruler of any Indian State before the commencement of this Constitution, the payment of any sums, free of tax, has been guaranteed or assured by the Government of the Dominion of India to any ruler of such State as Privy Purse—

(a) such sums shall be charged on, and paid out of, the Consolidated Fund of India; and

(b) the sum so paid to any Ruler shall be exempted from all taxes on income.

(2) Where the territories of any such Indian State as aforesaid are comprised within a State specified in Part I or Part III of the First Schedule there shall be charged on, and paid out of, the Consolidated Fund of that State such contribution, if any, in respect of the payments made by the Government of India under clause (1) of this article and for such period as may, subject to any agreement entered into in that behalf under clause (1) of article 258 of this Constitution, be determined by order of the President.

[267-क. (1) इस संविधान के प्रारम्भ से पहले जहां किसी देशी राज्य के शासक द्वारा की गई किसी प्रसंविदा या करार के अधीन ऐसे राज्य के शासक को निजी थैली के रूप में किन्हीं राशियों की करमुक्ति देनगी भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा प्रत्याभूत या आश्वासित की गई है वहां–

शासकों की निजी थैली की राशि

(क) वैसी राशियां भारत की संचित-निधि पर भारित होंगी तथा उसमें से दी जायेंगी; तथा

(ख) किसी शासक को दी गई वैसी राशियां, सभी आय पर करों से विमुक्त होंगी।

(2) उपर्युक्त जैसे किसी देशी राज्य के राज्य-क्षेत्र जहां प्रथम अनुसूची के भाग (1) या भाग (3) में उल्लिखित किसी राज्य में समाविष्ट हैं वहां इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन भारत सरकार द्वारा दी जाने वाली देनगियों के विषय में ऐसा अंशदान, यदि कोई हो, उस राज्य की संचित-निधि पर भारित होगा और उसे दिया जाएगा और ऐसी कालावधि के लिये जैसी कि अनुच्छेद 258 के खंड (1) के अधीन उस बारे में किये गये किसी करार के अधीन रहकर राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित करे।]' "

"अनुच्छेद 270 के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:–

'270A. (1) As from the commencement of this Constitution—

(a) all assets relating to any of the matters enumerated in the Union List vested immediately before such commencement in any Indian State corresponding to any State for the time being

Succession to property assets, liabilities and obligations of Indian States.

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

specified in Part III of the First Schedule shall be vested in the Government of India, and

(b) all liabilities relating to any of the said matters of the Government of any Indian State corresponding to any State for the time being specified in Part III of the First Schedule shall be the liabilities of the Government of India, subject to any agreement entered into in that behalf by the Government of India with the Government of that State.

(2) As from the commencement of this Constitution the Government of each State for the time being specified in Part III of the First Schedule shall be the successor of the Government of the corresponding Indian State as regards all property, assets, liabilities and obligations other than the assets and liabilities referred to in clause (1) of this article.

[270-क (1) इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर–

(क) संघ सूची में प्रगणित विषयों में से किसी से सम्बद्ध जो आस्तियां प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य में ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले निहित थीं वे सब भारत सरकार में निहित होंगी, और

(ख) उक्त विषयों में से किसी से सम्बद्ध जो दायित्व प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य की सरकार के थे वे सब ऐसे करार के अधीन रह कर जैसा कि उस बारे में भारत सरकार उस राज्य की सरकार से करे, भारत सरकार के दायित्व होंगे।

(2) प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य की सरकार उन सब सम्पत्ति, आस्तियों, दायित्वों और आभारों के बारे में, जो इस अनुच्छेद के खण्ड (1) में निर्दिष्ट आस्तियों और दायित्वों से भिन्न है तत्स्थानी देशी राज्यों की इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर उत्तराधिकारिणी होगी।]' "

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): श्रीमान मेरा यह सुझाव है कि अनुच्छेद 224 और 225 के संबंध में ये दो संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 218 और 219, पहले निबटा दिये जायें अन्यथा माननीय सदस्यों ने इन अनुच्छेदों के संबंध में जिन संशोधनों की सूचना दी है उन्हें भी उपस्थित करना होगा।

***अध्यक्ष:** इन संशोधनों द्वारा अनुच्छेदों को निकाला जा रहा है। इन्हें निबटाने में कुछ भी समय नहीं लगेगा। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 224 निकाल दिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 224 संविधान से निकाल दिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 225 निकाल दिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 225 संविधान से निकाल दिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 220 से संबद्ध संशोधनों को उठायेंगे।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 220 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 235-क के खंड (1) में 'until Parliament by law otherwise provides [जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे]' शब्दों के स्थान पर 'until the President by order otherwise provides (जब तक कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे]' शब्द रखे जाएं।"

मैं इन शब्दों का इस कारण विरोध कर रहा हूं कि, मेरे विचार से, ये शब्द अनुपयुक्त हैं। कार्यपालक आदेशों तथा विधाई प्राधिकार में स्पष्ट विभेद होना चाहिये। यह विषय केवल कार्यपालिका का विषय है। यह प्रश्न कि किसी राज्य के सशस्त्र बल भारतीय सेना में कब से समाविष्ट किये जाएं कोई विधायी विषय नहीं है। इस संबंध में कार्यपालिका निर्णय कर सकती है। कार्यपालक और विधायी कृत्यों के संबंध में किसी प्रकार का भ्रम न होना चाहिये। इसमें कोई सारवान सिद्धांत अन्तर्ग्रस्त नहीं है। हम यह स्वीकार कर चुके हैं कि किसी भी राज्य की सेना भारतीय सेना का ही अंग है। संक्राति काल के लिये भी इन सेनाओं को भारतीय सेना का अंग माना गया है। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि ये शब्द निकाल दिये जाएं और इनके स्थान पर मैंने अपने संशोधन द्वारा जिन शब्दों का सुझाव रखा है वे स्वीकार किये जाएं।

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

श्रीमान, एक और कारण से भी मैं यह चाहता हूं कि राष्ट्रपति इस कृत्य को करे और संसद न करे। यदि हम यह चाहते हैं कि देश शीघ्र से शीघ्र सुगठित हो तो यह शक्ति राष्ट्रपति में निहित होनी चाहिये और संसद में निहित नहीं होनी चाहिये। संसद के कार्य में अवश्य ही विलम्ब होता है।

श्रीमान, मेरे नाम से जो अन्य संशोधन है उसे भी मैं उपस्थित करना चाहता हूं। मैं संशोधन संख्या 251 का निर्देश करता हूं। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 225 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 306 (ख) में से–

(1) 'during a period of ten years from the commencement thereof, or during such longer or shorter period as Parliament may by law provide in respect of any State [इसके प्रारम्भ से दस वर्ष की कालावधि के भीतर अथवा किसी ऐसी दीर्घतर या अल्पतर कालावधि के भीतर, जिसे राज्य के बारे में संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे]' शब्द निकाल दिये जाएं, और

(2) 'for the time being specified in Part III of the First Schedule [प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित]' शब्द निकाल दिये जाएं।"

दस वर्ष के लिये जो यह सामान्य नियंत्रण तथा निरीक्षण की शक्ति रखी गई है वह समय की आवश्यकताओं को देखते हुए पर्याप्त नहीं है। मुझे इस संबंध में कुछ भी संदेह नहीं है कि देशी राज्यों के सामने जो समस्याएं हैं वे इतने अल्प काल में हल नहीं होंगी। श्रीमान, पिछली दो शताब्दियों में हम जिन रोगों के शिकार रहे हैं वे किसी चाल से इतने थोड़े समय में दूर नहीं हो जायेंगे। संघीय शासन धीरे-धीरे एक सत्तात्मक शासन का रूप धारण कर लेता है। चाहे हम इस उपबन्ध को रखें या न रखें केन्द्र की निरीक्षण, निदेशन तथा नियंत्रण करने की शक्ति किसी न किसी प्रकार स्वत: प्रभावी हो जायेगी। इसलिये, मेरे विचार से, इस शक्ति को अस्थाई शक्ति के रूप में नहीं रखना चाहिये। यह शक्ति अनिश्चित काल के लिये प्रदान की जानी चाहिये।

एक और बात भी है जिसकी ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं। कल उप-प्रधान मंत्री के भाषण में, जिसे श्री मुंशी ने पढ़ा था, जहां तक मुझे स्मरण है ये शब्द कहे गये थे कि "जितने काल तक इन उपबन्धों की आवश्यकता होगी उतने काल तक ये जारी रहेंगे।" किंतु इस अनुच्छेद में ये शब्द प्रयुक्त हैं कि ये दस वर्ष के पश्चात् जारी नहीं रहेंगे। यदि ये शब्द निकाल दिये जाएं तो मुझे संतोष हो जायेगा। मेरे विचार से इस उपबन्ध में वास्तविकता की उपेक्षा की गई है। यह निरर्थक है। देशी राज्यों की समस्याओं को हल करने के लिये हम मनमाने ढंग से कोई कालावधि केवल इस कारण न रखें कि संविधान में हमने इस आशय का एक उपबन्ध रखा है कि दस वर्ष के पश्चात् हमारी शक्ति का अन्त हो जाएगा।

इस संशोधन के एक अन्य भाग की ओर भी मैं सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। मेरी समझ में नहीं आता कि प्रांतों के साथ सौतेला व्यवहार क्यों किया जा रहा है। केन्द्र के परिपक्व अनुभव से हम भी लाभ उठाना चाहते हैं? यह द्वेषपूर्ण विभेद क्यों किया जा रहा है? मुझे इस संबंध में असंतोष है। मैं किसी प्रान्त विशेष की चर्चा नहीं कर रहा हूं और कोई व्यक्ति यह न समझे कि मैं किसी प्रांत के प्रशासन से असंतुष्ट हूं। मैं सामान्य रूप से इस विषय पर बोल रहा हूं। मैं प्रांतीय स्वायत्तता की प्रणाली से ही असंतुष्ट हूं।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से इस विषय पर इस समय विचार विमर्श करने की आवश्यकता नहीं है। इस समय हम राज्यों के संबंध में विचार कर रहे हैं। दूसरे प्रश्न पर हमने इतना विचार विमर्श किया है कि उससे जी ऊब गया है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं उस संशोधन का निर्देश कर रहा हूं जिसमें मैंने कहा है कि "प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित" शब्द निकाल दिये जाएं। उस का यह अर्थ है कि यह उपबन्ध सभी प्रांतों को लागू होगा। संभवत: मैं इस संशोधन के आशय को स्पष्ट नहीं कर पाया हूं।

***अध्यक्ष:** तब यह अनियमित है। वास्तव में मैंने अपने कागज में यह लिख रखा है कि यह अनियमित है। यह इस कारण अनियमित है कि हम इस प्रसंग में प्रांतों के प्रश्न पर नहीं बल्कि राज्यों के प्रश्न पर, विचार कर रहे हैं। हम प्रांतों के प्रश्न पर विचार कर चुके हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान, आपका निर्णय शिरोधार्य है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रांत और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 220 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 235-क के खंड (1) में 'may until Parliament by law otherwise provides, continue to maintain the said force after such commencement subject to such general or special orders as the President may from time to time issue in this behalf [उक्त बलों को ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् ऐसे साधारण या विशेष आदेशों के अधीन रहकर, जैसे कि राष्ट्रपति समय-समय पर इस बारे में निकाले, तब तक बनाये रख सकेगा जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे]' शब्दों के स्थान पर 'shall merge into the armed forces of the Union and shall form part of the forces of the Union [उसके ये बल संघ के सशस्त्र बलों में समाविष्ट हो जायेंगे और संघ के बलों का भाग हो जायेंगे]' शब्द रखे जाएं।"

[श्री आर.के. सिधवा]

श्रीमान, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं संशोधन संख्या 252 भी उपस्थित करना चाहता हूं। मैंने संशोधन का प्रथम भाग, जो दस वर्ष की कालावधि के संबंध में था, निकाल दिया है और मैं उसके केवल द्वितीय भाग को उपस्थित कर रहा हूं। वह इस प्रकार है:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 225 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 306-ख के अन्त में, किंतु उसके परन्तुक के पूर्व, यह प्रविष्ट किया जाये:-

'During the period of ten years as stated therein all States shall introduce immediately laws for full-fledged elected local bodies within one year from the commencement of this Constitution.

[उक्त दस वर्ष की कालावधि में सब राज्य इस संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् एक वर्ष के भीतर निर्वाचित स्थानीय निकायों को स्थापित करने के संबंध में तुरंत ही विधियां प्रयोग में लायेंगे।]' "

पहले संशोधन के संबंध में मेरा यह निवेदन है कि इस समय राज्यों में जो सशस्त्र बल हैं वे भारत के मुख्य सेना नायक के नियंत्रण के अधीन होंगे, अर्थात् वे भारत के बलों के नियंत्रण के अधीन होंगे। किंतु यह मेरी समझ में नहीं आता कि राज्यों में सशस्त्र बल बनाये रखने के लिये विशेष रूप से विभेद क्यों किया जा रहा है। प्रांतों में सशस्त्र बल नहीं हैं। सभी प्रांतों के अपने आरक्षी बल और सशस्त्र आरक्षी बल भी हैं; किंतु किसी भी प्रांत में सशस्त्र सैनिक बल नहीं हैं। इससे पहले जो शासन था उसमें भी कोई सशस्त्र बल नहीं थे और अब भी कोई नहीं हैं। निस्संदेह पहले जो शासन था उसमें देशी राज्य सशस्त्र बलों को बनाये रखते थे। इसका क्या कारण था यह सभी को विदित है। किंतु अब वे प्रांतों में समाविष्ट हो गये हैं, अथवा पृथक इकाइयां हो गये हैं। अब वे अपने यहां पृथक सशस्त्र बलों को क्यों बनाये रखें? इसलिये मैं यह चाहता हूं कि राज्यों से सभी सशक्त बल हटा दिये जाएं और उन्हें भारत के सशस्त्र बलों में समाविष्ट कर दिया जाए। तब वे भारतीय संघ के अधीन होंगे। मेरे विचार से किसी कारण भी राज्यों को पृथक सशस्त्र बलों को बनाये रखने का विशेषाधिकार नहीं दिया जा सकता। इसके कारण कई प्रकार से कलह हो सकता है। भारत सशस्त्र बल मुख्य सेना नायक के अधीन होंगे। यदि इन पृथक् सशस्त्र बलों को बिना किसी कारण राज्यों में रहने देना है तो आखिर किस उद्देश्य की पूर्ति के लिये? आखिर आरक्षी बल तो रहेगा ही। यदि आवश्यकता पड़ी तो भारतीय संघ के सशस्त्र बलों का उपयोग किया जा सकता है। इसलिये मुझे आशा है कि मैंने जिस संशोधन को उपस्थित किया है उस पर मसौदा-समिति विचार करेगी। इस संशोधन का आशय यह है कि देशी राज्यों के सशस्त्र बल भारतीय संघ के सशस्त्र बलों में समाविष्ट किये जाएं और वे भारत के मुख्य सेना नायक के नियंत्रण के अधीन हों।

जहां तक दूसरे संशोधन का संबंध है, कल माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल का जो वक्तव्य श्री मुंशी ने पढ़कर सुनाया था, उससे मैं पूर्णतया सहमत हूं। राजनैतिक

मामलों के संबंध में देशी राज्यों में वह स्थिति नहीं है जो प्रांतों में है। यह हम सभी को विदित है। मैं किसी देशी राज्य का निवासी नहीं हूं किंतु मैं देशी राज्यों में कई जगह गया हूं और कांग्रेस कार्यकर्त्ता मुझे देशी राज्यों में प्रचार कार्य के लिये ले जाते रहे हैं। कई देशी राज्यों का जो थोड़ा बहुत ज्ञान मुझे है उसके आधार पर मैं कह सकता हूं कि उनकी दशा अत्यन्त दयनीय है। वहां कोई भी स्थानीय निकाय नहीं है। जब मैं कच्छ गया तो मैंने देखा कि वहां कोई भी छापाखाना नहीं है और जब एक सार्वजनिक सभा में मैंने मत-पत्र-पेटिका तथा मतदान के लाभों की चर्चा की तो लोग यह नहीं समझ पाये कि मत-पत्र-पेटिका और गुप्त मतदान क्या होता है। इससे आप समझ सकते हैं कि इन राज्यों के शासकों ने वहां के लोगों को कितने अंधकार में रखा है। कच्छ में छापाखाना खोलने की आज्ञा ही नहीं दी गई। बहुत से देशी राज्यों में, जहां जाने का मुझे अवसर प्राप्त हुआ मैंने यही दशा पाई।

मैं यह नहीं कहता कि सभी राज्यों में यही स्थिति है। जैसा कि कल माननीय उपप्रधान मंत्री महोदय ने कहा था, त्रावनकोर, मैसूर और कोचीन तथा अन्य राज्यों के समान प्रगतिशील राज्य भी हैं जिनकी हम प्रशंसा करते हैं। ब्रिटिश राज्य-काल में भी वहां बहुत सुचारु ढंग से कार्य होता रहा और हममें कुछ भी संदेह नहीं है कि वे वास्तव में प्रगतिशील हैं। इस समय मैं इन राज्यों की चर्चा नहीं कर रहा हूं। किंतु बहुत से राज्य प्रतिगामी भी हैं और इस लिये मेरी यह धारणा है कि यह उचित ही है कि दस वर्ष तक उनका प्रशासन केन्द्र के नियंत्रण के अधीन रहे। वह नियंत्रण किस प्रकार का होगा? वह नियंत्रण रोक थाम के लिये होगा। वे पहले के समान ही कार्य करेंगे किंतु यदि प्रशासन के संबंध में कोई असाधारण स्थिति उत्पन्न हो जाए तो केन्द्र को अवश्य ही अपना मत प्रभाव में लाने का अधिकार होगा। यह बिल्कुल स्पष्ट है। हमें यह स्वीकार करना चाहिये कि बहुत से राज्यों की दशा दयनीय है। मैं यह अवश्य कहूंगा। मैं आपको बताना चाहता हूं कि वहां किसी प्रकार का प्रशासन है ही नहीं। मुझे इन बातों के लिये क्षमा किया जाए किंतु तथ्य यह है कि वहां न तो कोई नगरपालिका है और न कोई स्थानीय निकाय। जिस राज्य में लोग यह न जानते हों कि स्थानीय निकाय क्या होता है और नगरपालिका क्या होती है तथा नगरपालिका के क्या अधिकार होते हैं वहां के बारे में यह समझ में आ सकता है कि लोगों को राजनैतिक प्रशासन चलाने में सफलता होगी या नहीं। इस लिये इन राज्यों की जनता को जिसकी जनसंख्या भारत की जन संख्या की एक-तिहाई है, भातीय संघ में लाकर हमने एक बड़ा काम किया है। हमें इस पर गर्व करना चाहिये कि आज देशी राज्यों के दस करोड़ लोग जो अभी तक दासत्व में पड़े हुए थे, आज स्वतंत्र हो गये हैं। जब अंग्रेजों से हमने शासन की बागडोर अपने हाथ में ली तो उन्होंने हमसे कहा कि देशी राज्यों के दस करोड़ लोगों को स्वतंत्र करने को कोई आवश्यकता नहीं है। ब्रिटिश सरकार का यह विचार था कि वे शांति भी स्थापित कर सकते हैं और अशांति भी पैदा कर सकते हैं। किंतु हमारे उप-प्रधान मंत्री ने ऐसा जादू किया कि ये सामन्तशाही राज्य देश के अन्य भागों के साथ मिला दिये गये। जब मैं छोटा था तो मैंने अलादीन और उसकी जादू की लालटेन नाम का एक नाटक देखा था किंतु आज हम अलादीन की लालटेन का वास्तविक जादू देख रहे हैं और हमें इसका गर्व है। इसका उपप्रधान मंत्री महोदय को तो गर्व है ही किंतु इस पर केवल उन्हीं को नहीं बल्कि हम सभी को गर्व करना चाहिये। सरकार की निन्दा करते हुए लोग यह भूल जाते हैं कि दस करोड़ लोगों को

[श्री आर.के. सिधवा]

दासत्व से मुक्त करके उसने कितना बड़ा कार्य किया है। डेढ़, वर्ष में ही इन लोगों की दासता की बेड़ियां काटकर फेंक दी गई। इस पर कोई भी राष्ट्र गर्व कर सकता है। अंग्रेजों ने जाते समय इस पर नहीं विचार किया कि इन लोगों का क्या होगा। आज वास्तव में वे किसी जादू से ही मुक्त हुए हैं।

हम पहली मंजिल तक तो पहुंच गये हैं किंतु हमें दूसरी मंजिल भी तय करनी है क्योंकि उस का बहुत महत्व है। वह मंजिल इन राज्यों के सुयोग्य शासन की है। मेरी अपनी यह धारणा है कि विभिन्न प्रांतों के सीमावर्ती राज्य संबंधित प्रांतों से मिला दिये जाने चाहिये। सीमावर्ती प्रांतों में समाविष्ट हो जाने से वे राज्य देश के प्रगतिशील भागों के अंग हो जायेंगे। कुछ राज्य इस प्रकार समाविष्ट किये गये हैं, किंतु उनकी संख्या बहुत बड़ी नहीं है। अन्ततोगत्वा यही व्यवस्था सर्वोत्तम सिद्ध होगी किन्तु राजस्थान के समान कुछ राज्य ऐसे भी हैं जिन्हें स्वतंत्र रहना है। आपको विदित ही है कि राजस्थान के राज्य राजपूताने में बिखरे हुए हैं, और मेरे विचार से, उन पर केन्द्र का नियंत्रण होना चाहिये। मुझे इसका गर्व है कि राजस्थान महान राजस्थान के रूप में परिणत हो गया है। किंतु इसका मुझे खेद भी है कि वहां का प्रशासन सुयोग्य ढंग से नहीं चल रहा है। भरतपुर तथा धौलपुर के लोगों की इच्छा जानने के लिये जब मुझे नियुक्त किया गया तो, चाहे मेरी अपनी धारणा जो भी रही हो, मैंने देखा कि वहां के लोग राजस्थान में ही सम्मिलित होना चाहते थे। राज्य-मंत्रणालय ने भी यह संकल्प किया कि उनके राज्यों को राजस्थान में ही समाविष्ट किया जायेगा। मुझे राजस्थान के राज्यों से कोई शिकायत नहीं है क्योंकि राज्यों के प्रशासन के लिये सुयोग्य व्यक्ति नहीं मिलते और इसमें राज्यों का कोई दोष नहीं है। उन्हें कभी इसकी शिक्षा ही नहीं दी गई। श्रीमान, यह समझ में आ सकता है कि प्रांतों में जो लोग नगरपालिकाओं के सदस्य रहे हैं उन्हें इस प्रकार की शिक्षा मिली है। नागरिकों को आधारभूत प्रशासन की शिक्षा सबसे पहले नगरपालिकाओं ही में मिलती है। इस लिये, श्रीमान, अपने संशोधन द्वारा मैंने यह सुझाव प्रस्तुत किया है कि यद्यपि उन पर नियंत्रण रहेगा किन्तु जैसा कि कल माननीय सरदार पटेल ने बताया था, वह आवश्यकता पड़ने पर ही व्यवहार में आयेगा। मैं यह चाहता हूं कि इस बीच में समुचित स्थानीय निकाय स्थापित कर दिया जाये तथा विधियां पारित की जायें और उन्हें इस संविधान से प्रारम्भ से एक वर्ष के भीतर प्रभाव में लाया जाये ताकि लोगों को यह विदित हो जाये कि प्रशासन क्या होता है, मताधिकार क्या होता है, शक्तियां क्या होती हैं तथा अधिकार और विशेषाधिकार क्या होते हैं, भले ही उन्होंने ये एक सीमित क्षेत्र में, अर्थात् अपने नगर या गांव में ही, प्राप्त हों। जब उन्हें यह विदित हो जायेगा कि स्थानीय निकाय द्वारा वे अपने छोटे से नगर का स्वयं शासन कर सकते हैं तो वे अपने सारे राज्य के लिये भी प्रशासन-व्यवस्था स्थापित कर लेंगे। साथ ही हमें सुयोग्य मंत्री प्राप्त हो सकेंगे, जो शासन की बागडोर संभालेंगे और इन राज्यों को प्रांतों के स्तर पर लायेंगे। मैंने यह कहा है कि नियंत्रण की व्यवस्था दस वर्ष तक रखी जाये और मुझे आशा है कि मेरे इस कथन से राज्यों के मेरे मित्रों को कोई भ्रम नहीं होगा। जब हम सब स्वतंत्र हो गए हैं तो यह अच्छा नहीं लगेगा कि वहां पुरानी व्यवस्था ही बनी रहे। जब हम पूर्ण नियंत्रण चाहते हैं तो कुछ नियंत्रण केन्द्र का भी होना चाहिये। मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं कि स्थानीय निकायों पर किसी प्रकार

का नियंत्रण नहीं होना चाहिये। आज कल सभी स्थानीय निकायों का, नगरपालिकाओं का तथा नियमों का शासन कुछ अधिनियमों से होता है और श्रीमान, मैं आपको बताना चाहता हूं कि बम्बई, कलकत्ता तथा मद्रास के निगमों पर स्थानीय सरकारों का नियंत्रण रहता है। यदि किसी समय वे यह समझें कि निगम का प्रशासन ठीक नहीं हो रहा है तो वे हस्तक्षेप कर सकते हैं। इस अधिनियम का उद्देश्य यही है कि आवश्यकता पड़ने पर हस्तक्षेप किया जायेगा। कलकत्ता निगम में भी यही हुआ है। वहां के अधिनियम में यह उपबन्ध है कि यथोचित प्रशासन न होने पर सरकार हस्तक्षेप कर सकती है और जब कलकत्ता निगम का ठीक प्रशासन नहीं हो रहा था तो बंगाल की सरकार ने उसे अपने हाथ में लिया। वह निगम बहुत बड़े निगमों में से एक है। अध्यक्ष महोदय, आपको विदित ही होगा कि कलकत्ता निगम के प्रशासन को सरकार ने अपने नियंत्रण के अधीन रखा है। इसमें कोई दोष भी नहीं है क्योंकि अब सरकार अपनी ही सरकार है। स्वतंत्रता प्राप्त करने के पूर्व इसे एक दोष समझा जाता था और जब ब्रिटिश सरकार ने इस प्रकार का नियंत्रण लगाया था तो मैंने स्वयं संघर्ष किया था। उस समय मैंने कहा था कि जब वे यथोचित ढंग से कार्य न करें तो उन्हें अपने कार्य में सुधार करने के लिये अवसर किया जाना चाहिये। मेरी अब भी यह धारणा है कि किसी स्थानीय निकाय को समाप्त करने के पूर्व सरकार को उसे अपना सुधार करने के लिये अवसर देना चाहिये। जब वे किसी प्रकार भी अपना सुधार न करें तब केन्द्र को उनका प्रशासन अपने हाथ में ले लेना चाहिये। इसी प्रकार श्रीमान जब राज्यों में कोई अव्यवस्था हो तो केन्द्र संबंधित राज्य को चेतावनी दें किंतु यदि वह राज्य अपना सुधार न करे तो केन्द्र हस्तक्षेप करे और राज्य का शासन अपने हाथ में ले ले। यह उस राज्य के ही नहीं बल्कि सारे देश के हित में होगा। इस लिये मेरा निवेदन है कि जो राज्य बहुत पिछड़े हुए हैं उनमें तुरन्त ही नगरपालिका की विधियां पारित की जायें, ताकि वहां के लोगों को प्रशासन संबंधी उत्कृष्ट शिक्षा प्राप्त हो सके। यदि वे तीन वर्ष तक या पांच वर्ष तक पदारूढ़ रहे तो उनकी बहुत उन्नति हो सकती है। (*विघ्न*)। श्रीमान, चूंकि राज्यों में यथोचित प्रशासन न होने पर केन्द्र को उन पर नियंत्रण रखना होगा इसलिये संशोधन संख्या 252 में मैंने जो कुछ कहा है उस पर मसौदा समिति कृपा करके विचार करे। इन शब्दों के साथ श्रीमान, मैं सिफारिश करता हूं कि संशोधन संख्या 246 तथा 252 स्वीकार कर लिये जाएं।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रातः जनरल): श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 220 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 235-क के खंड (2) के अन्त में 'and the Union shall bear the expenses thereof [और संघ उनका खर्च उठायेगा]' शब्द जोड़ दिये जाएं।"

संशोधन संख्या 220 में कहा गया है कि:

"इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित कोई राज्य, जो कि इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले सशस्त्र बलों को रखता था, उक्त बलों को ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् ऐसे साधारण या विशेष आदेशों के अधीन रह कर, जैसे कि राष्ट्रपति समय-समय पर इस बारे में निकाले, तब तक बनाये रख सकेगा जब तक कि संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे।

[प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना]

(2) कोई ऐसे सशस्त्र बल, जैसे कि इस अनुच्छेद के खंड (1) में निर्दिष्ट है, संघ के सशस्त्र बलों का भाग होंगे।"

प्रश्न यह उठता है कि खर्च कौन उठायेगा? पहले भाग में यह कहा गया है कि जब तक संसद अन्यथा निर्णय न करे, राज्य अपने सशस्त्र बल को स्वयं बनाये रखेगा। भाग 2 में कहा गया है कि राज्य का सशस्त्र बल संघ के सशस्त्र बलों का भाग होगा। इन दोनों में कुछ अन्तर है। श्रीमान, मेरी अपनी यह धारणा है कि उद्देश्य यह है कि बहुत शीघ्र सभी सशस्त्र बल संघ के नियंत्रण के अधीन रखे जायेंगे और जब तक संसद इस आशय की विधि पारित न करे तब तक वे सब पहले के समान बने रहेंगे। मेरे विचार से, चूंकि वे संघ के सशस्त्र बलों के भाग हो जायेंगे, इस लिये उनका खर्च संघ ही उठाये और वे संघ के नियंत्रण तथा अनुशासन में रहें। खंड (2) का यही उद्देश्य है। वास्तव में बहुत से राज्य इन बलों को नहीं बनाये रख सकेंगे। इस लिये मेरे विचार से भले ही संसद इस संबंध में विधि पारित करने में विलम्ब करे किंतु वे सशस्त्र बल संघ के अधीन तुरंत ही आ जाने चाहिये और उनका खर्च भी संघ को ही उठाना चाहिये।

मैंने संशोधन संख्या 303, 304 और 305 की भी सूचना दी है। संशोधन संख्या 303 अनुच्छेद 274-घघ के सम्बन्ध में है और वह इस प्रकार है:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 223 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 274-घघ में 'the President [राष्ट्रपति]' शब्द जहां प्रथम बार आया है वहां उसके पश्चात् 'subject to the approval of the Parliament [संसद के अनुमोदन के अधीन]' शब्द रखे जाएं।"

अनुच्छेद 274-घघ में कहा गया है कि "इस भाग के पूर्वगामी उपबन्धों में किसी बात के होते हुए भी .... राष्ट्रपति करार कर सकता है इत्यादि।" मैं यह चाहता हूं कि राज्यों से जिन वित्तीयकारों को करने की शक्ति राष्ट्रपति को दी जा रही है उनका अनुमोदन संसद करे। इसी कारण मैं इन शब्दों को प्रविष्ट करना चाहता हूं।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, अनुच्छेद 274-घघघ में कहा गया है कि "अनुच्छेद 274-क और 274-ग की कोई बात किसी वर्तमान विधि के उपबन्धों पर, जिस मात्रा तक राष्ट्रपति आदेश द्वारा अन्यथा उपबन्धित करे, उसके अतिरिक्त, कोई प्रभाव नहीं डालेगी। इस पर मैं यह संशोधन रखना चाहता हूं:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 223 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद, 274-घघघ में 'President may by order [राष्ट्रपति आदेश द्वारा]' शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law [संसद विधि द्वारा] शब्द रखे जाएं।"

मैं यह चाहता हूं कि इस स्थल पर भी "राष्ट्रपति आदेश द्वारा उपबन्धित करे" शब्दों के स्थान पर "संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे" शब्द रखे जाएं। इस सम्बन्ध में मैं केवल यह तर्क उपस्थित करना चाहता हूं कि ऐसे महत्वपूर्ण विषयों के सम्बन्ध में शक्ति राष्ट्रपति को अर्थात् मंत्रिमंडल को नहीं देनी चाहिये बल्कि संसद को देनी चाहिये।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, अनुच्छेद 306-ख के सम्बन्ध में एक संशोधन है जिसकी बहुत आलोचना हुई है और उसके बारे में माननीय सरदार पटेल ने भी एक वक्तव्य दिया है। उनकी व्याख्या के पश्चात् बहुत कुछ आलोचना समाप्त हो जाती है किन्तु फिर भी मेरा यह विचार है कि श्रीमान पिल्ले का सुझाव एक उपयुक्त सुझाव था। हमें राज्यों की गणना परिशिष्टों में करनी चाहिये थी और कुछ राज्यों को यह अनुच्छेद लागू न करना चाहिये था। मुझे आशा है कि मैसूर और त्रावणकोर जैसे राज्यों को यह अनुच्छेद लागू नहीं किया जायेगा और आरम्भ में ही राष्ट्रपति इस आशय का एक आदेश निकाल देंगे। अनुच्छेद 306-क के सम्बन्ध में मेरा संशोधन इस प्रकार है:

> "सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 225 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 306-ख के परन्तुक में 'President may by order' [राष्ट्रपति आदेश द्वारा]' शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law [संसद विधि द्वारा] शब्द रखे जाएं।"

परन्तुक इस प्रकार है कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि इस अनुच्छेद के उपबन्ध आदेश में उल्लिखित किसी राज्य को लागू नहीं होंगे। इसका यह अर्थ है कि जब किसी राज्य को इस संरक्षण में नहीं रखना होगा तो राष्ट्रपति एक आदेश निकालेगा मैं यह चाहता हूं कि यह कार्य केवल संसद विधि द्वारा करे। यह सम्भव है कि कुछ राज्य यह समझें कि उनके यहां सुयोग्य शासन है और उनको यह अनुच्छेद लागू न होना चाहिये ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि वह संसद के समक्ष अपना मामला रख सकें और संसद इसे विधि द्वारा करने में समर्थ होनी चाहिये। अन्यथा राष्ट्रपति के नियंत्रण से मुक्त होने के लिये उन्हें राष्ट्रपति की ही खुशामद करते रहना होगा। मेरे विचार से यदि संसद को यह शक्ति प्राप्त होगी तो उन्हें भारत सरकार के राज्य मंत्रणालय का दासत्व स्वीकार नहीं करना होगा। इस संशोधन के द्वारा संसद को सर्वोच्च शक्ति प्राप्त हो जायेगी और मेरे विचार से इसकी आवश्यकता भी है।

यद्यपि मैंने इस अध्याय के सम्बन्ध में संशोधनों की सचना दी है किन्तु इस ऐतिहासिक अवसर पर हमारे नेता माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल की जो प्रशंसा की गई है उसमें मैं अपना भी योग देना चाहता हूं। मेरे विचार से पिछले दो वर्षों में हमारी सरकार ने जितने भी कार्य किये हैं उनमें यह सब से उत्कृष्ट है। सरदार पटेल को केवल इस एक कार्य से ही आधुनिक भारत के निर्माताओं के बीच सदा के लिये एक प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त हो गया है। अंग्रेजों ने पांच सौ से अधिक राज्यों को स्थापित करके देश को अनेक पाकिस्तानों में विभाजित किया था। माननीय सरदार पटेल की प्रतिभा के कारण तथा राज्य मंत्रणालय के

[प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना]

कर्मचारियों के परिश्रम के कारण यह महान कार्य सम्पन्न हुआ है। इस महान कार्य के लिये सभा ने सरदार पटेल को जो बधाइयां दी हैं उनमें मैं अपना भी योग देता हूं। मित्रों ने उनकी तुलना बिसमार्क से की है। मेरे विचार से सरदार पटेल ने जो कार्य किया है वह बिसमार्क के कार्य से कहीं अधिक महान है। सरदार पटेल ने बिना रक्त का एक बूंद भी बहाये हुए एक क्रान्ति पैदा कर दी। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि वे बहुत काल तक जीवित रहें और उन्हें तुरन्त ही स्वास्थ्य-लाभ हो जाये ताकि वे भविष्य में हमारे राष्ट्र को उत्तरोत्तर विजयों को प्राप्त कराये।

(संशोधन संख्या 247, 297 और 298 उपस्थित नहीं किये गये)

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 222: डॉ. अम्बेडकर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं उसे उपस्थित कर चुका हूं।

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव** (मैसूर राज्य): कल माननीय सरदार पटेल ने जो वक्तव्य दिया था तथा मैसूर राज्य के सम्बन्ध में जो आश्वासन दिया उसे दृष्टि में रखते हुए मैं संशोधन संख्या 249 को नहीं उपस्थित कर रहा हूं, मैं केवल बहस में ही भाग लेना चाहता हूं।

(संशोधन संख्या 250 उपस्थित नहीं किया गया)

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 279। सारंगधर दास।

***श्री सारंगधर दासः** (उड़ीसा राज्य): अध्यक्ष महोदय.........

***अध्यक्षः** यह संशोधन अनुच्छेद को निकालने के सम्बन्ध में है। उसे उपस्थित करने की आवश्यकता नहीं है। आप उसके सम्बन्ध में बाद में बोल सकते हैं।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डीः** (मैसूर राज्य): सरदार पटेल ने जो आश्वासन दिया है उसे दृष्टि में रखते हुए मैं संशोधन संख्या 289 नहीं उपस्थित करना चाहता।

***अध्यक्षः** प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना, आपने आज प्रातः कुछ संशोधनों की सूचना दी थी।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेनाः** अध्यक्ष महोदय, नवीन अनुच्छेद 258, 267-क, 270-क तथा 264-क के सम्बन्ध में संशोधनों की सूचना दी गई है।

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 264-क नहीं उपस्थित किया गया है।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेनाः** मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 299 में प्रस्तावित अनुच्छेद 258 के खण्ड (1) के अन्त में यह शब्द जोड़ दिये जाएं:-

'after that agreement has been approved by Parliament

[उस करार को संसद से अनुमोदित कराने के पश्चात' "]

मेरा दूसरा संशोधन इस प्रकार है।

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 299 में अनुच्छेद 258 के प्रस्तावित खण्ड (1) के उपखण्ड (क), (ख) और (ग) की गणना उस खण्ड के उपखण्ड (ख), (ग) और (घ) के रूप की जाये और यह उपखण्ड (क) के रूप में प्रविष्ट किया जाये:–

(a) questions arising from or connected with the vesting in the Union of assets and liabilities of such States related to any of the matters enumerated in the Union List;

[संघ सूची में प्रगणित विषयों में से किसी के सम्बन्ध में ऐसे राज्यों की आस्तियों तथा दायित्वों को संघ में निहित करने के बारे में जो प्रश्न उठें उनके;]' "

यह दूसरा संशोधन वास्तव में श्री कृष्णमाचारी के संशोधन संख्या 300 से अच्छा है। पहले संशोधन के सम्बन्ध में मेरा यह निवेदन है कि जब राज्यों से वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण करार किये जा रहे हैं तो इस सम्बन्ध में अन्तिम प्राधिकार संसद का ही होना चाहिये। इसलिये मैं "उस करार को संसद से अनुमोदित कराने के पश्चात्" शब्दों को प्रविष्ट करना चाहता हूं।

अनुच्छेद 267-क के सम्बन्ध में मेरा संशोधन इस प्रकार है:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 301 में से प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267-क निकाल दिया जाये।"

जब करार में यह उपबन्धित है कि भत्ते पर आय-कर नहीं लगेगा तो इस खण्ड की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। अनुच्छेद 267-क के सम्बन्ध में मेरा दूसरा संशोधन इस प्रकार है:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 301 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267-क के खण्ड (2) में 'by order of the President [राष्ट्रपति आदेश द्वारा]' शब्दों के स्थान पर 'by Parliament by law [संसद विधि द्वारा]' शब्द रखे जाएं।"

इस सम्बन्ध में भी व्यय की मंजूरी अन्त में संसद को ही देनी चाहिये। इसी प्रकार मैंने इस परिवर्तन का सुझाव रखा है।

नवीन अनुच्छेद 270-क के सम्बन्ध में मेरा संशोधन इस प्रकार है:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 302 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 270-क के खण्ड (1) के अन्त में 'and approved by Parliament [जिनका संसद अनुमोदन करेगी]' शब्द जोड़ दिये जाएं।"

[प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना]

कि यह सम्पत्ति के सम्बन्ध में है, खण्ड (1) इस प्रकार है:

"इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर संघ सूची में प्रगणित विषयों में से किसी से सम्बद्ध जो आस्तियां प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य में ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले निहित थीं वे सब भारत सरकार में निहित होंगी।"

इसके अन्त में मैं "जिनका संसद अनुमोदन करेगी" जोड़ना चाहता हूं।

इन सभी संशोधनों का उद्देश्य अन्तिम प्राधिकार संसद को प्राप्त कराना तथा उसे बनाये रखना है। मुझे आशा है कि ये संशोधन स्वीकार कर लिये जायेंगे।

*__अध्यक्ष:__ अब इस अनुच्छेद तथा संशोधनों पर बहस हो सकती है। श्री सारंगधर दास।

*__श्री बी. दास__ (उड़ीसा जनरल): श्रीमान, अनुच्छेद 267-क के सम्बन्ध में मैंने दो संशोधनों की सूचना दी है। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 301 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267-क के खण्ड (2) के पश्चात् यह नवीन खण्ड जोड़ दिया जाये:–

(3) Where any sums are guaranteed or assured to any Ruler's family members or relations such sums be treated as part of privy purse and as free of tax.

[(3) जहां किसी राज्य के शासक के परिवार के लोगों को अथवा सम्बन्धियों को कोई राशियां प्रत्याभूत अथवा आश्वासित की गई हों वहां ये राशियां निजी थैली का भाग तथा कर-मुक्त समझी जायें।]'"

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 301 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267-क के खण्ड (1) में 'to any ruler [शासक को]' शब्दों के पश्चात् 'or his family relations [अथवा उसके परिवार के सम्बन्धियों को]' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

अनुच्छेद 267-क का आशय यह है कि शासकों को जो धन दिया जाए वह कर-मुक्त हो।

जब बातचीत चल रही थी तो हममें से अधिकांश लोग यह समझते थे कि शासक की माता को तथा परिवार के अन्य लोगों को और मरे हुए शासकों की

विधवाओं को जो अनुदान दिये जायेंगे वे आय-कर से तथा अन्य करों से मुक्त होंगे। कल रात जब मयूरगंज की महारानी मेरे यहां आईं और उनसे मैंने बातें की तो मुझे आश्चर्य हुआ। उन्हें 3,000 रुपये मासिक का भत्ता दिया गया है। दो मास तक उन्हें पूरी राशि मिली। उसक पश्चात् अप्रैल से इस राशि से 707 रुपये मासिक आय-कर का काट लिया जा रहा है। वह एक स्वर्गीय महाराजा की पत्नी हैं तथा एक महाराजा की पुत्री हैं। जब कई राज्यों में आय-कर लगाया ही नहीं गया था तो उनसे आय-कर क्यों वसूल किया जा रहा है इसका अर्थ यह है कि शासकों के बहुत से सम्बन्धियों से जैसे कि शासक की माता से तथा जैसा कि मैं बता चुका हूं, शासक के भाईयों की बहुओं से आय-कर वूसल किया जायेगा। कल हमारे आदरणीय नेता सरदार बल्लभभाई पटेल ने एक उत्कृष्ट भाषण दिया जिसमें उन्होंने राज्यों के नागरिकों को सुख-शांति का आश्वासन दिया। मेरे विचार से सुख-शान्ति का आश्वासन शासकों के सम्बन्धियों को भी दिया गया है। अनुच्छेद 267-क के मसौदे के अनुसार निजी थैली आय-कर से मुक्त होगी। भारत के कई राज्यों ने आज तक आय-कर दिया ही नहीं है। विशेषत: भूतपूर्व राजाओं के परिवारों की महिलाओं को बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। उनकी समझ में नहीं आता है कि उनसे आय-कर क्यों लिया जा रहा है और वह भी इतना अधिक जैसे 3,000 रु. मासिक में से 707 रु.। इसमें उत्तर-कर तथा अन्य-कर भी सम्मिलित हैं। सम्भवत: इस महारानी के राज्य में आय कर नहीं लिया जाता था और यदि वह लिया भी जाता था तो उतना अधिक नहीं लिया जाता था जितना कि प्रान्तों में। कल रात तक मुझे यह ज्ञात नहीं था कि नरेशों के सम्बन्धियों से, अर्थात् भूतपूर्व राजाओं की माताओं, पत्नियों आदि से इतना अधिक आय-कर लिया जा रहा है। मेरे विचार से निजी थैली वह धन अभिप्रेत है जो किसी शासक को अथवा उसके परिवार के लोगों को दिया गया है। इसलिए वह धन कर-मुक्त होना चाहिये। यदि शासक के भत्तों की 20 लाख अथवा 25 लाख जैसी बड़ी राशि पर आय-कर नहीं लगाया जाता है तो उसके सम्बन्धियों से भारत में अधिक से अधिक जितना आय-कर लिया जा सकता है उतना अधिक आय-कर क्यों लिया जाता है? यह राज्यों में किसी की समझ में नहीं आता। श्रीमान, यह एक दोष रह गया है और इसे दूर कर देना चाहिये। इन राज्यों में जिन लोगों को बहुत से विशेषाधिकार प्राप्त थे उनके उत्पीड़न से कोई लाभ नहीं होगा। यदि शासकों को अथवा शासकों के वंशजों को भविष्य में ये विशेषाधिकार देने ही हैं तो मेरी समझ में नहीं आता कि शासक की माता से अथवा भूतपूर्व महारानी से यह आय-कर क्यों वसूल किया जा रहा है। मुझे आशा है कि यह दोष दूर कर दिया जायेगा।

*__अध्यक्ष:__ अब इस पूरे विषय पर बहस हो सकती है। श्री सारंगधर दास।

*__श्री सारंगधर दास:__ अध्यक्ष महोदय, मैंने अनुच्छेद 306-ख निकाल देने के सम्बन्ध में एक संशोधन उपस्थित किया था, किन्तु चूंकि अनुच्छेद निकालने के प्रस्ताव नहीं उपस्थित किये जा रहे हैं इसलिये मैं इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना चाहता हूं।

सबसे पहले मेरा निवेदन है कि पांच सौ से अधिक देशी राज्यों को मिलाकर उन्हें सात राज्यों में परिणत कर देने के लिये मैं भी माननीय सरदार बल्लभभाई पटेल

[श्री सारंगधर दास]

की प्रशंसा में अपना योग देना चाहता हूं। 1947 में मैं अखिल भारतीय देशी राज्य प्रजा परिषद् का सदस्य था इस कारण मुझे ज्ञात हुआ था कि यह कितना बड़ा कार्य और इसमें कितने खतरे हैं। उस समय मैं यह सोच भी नहीं सकता था कि यह कार्य इतने थोड़े काल में सम्पन्न हो जायेगा। इस महान कार्य को सम्पन्न करने का सारा श्रेय सरदार बल्लभभाई पटेल तथा राज्य मंत्रणालय को है। मुझे यह भी ज्ञात है कि जाड़ों में कुछ आधारभूत विषयों के सम्बन्ध में जब हमने संविधान में प्रान्तों तथा राज्यों के विभेद पर आपत्ति की थी तो उन्होंने हमें यह आश्वासन दिया था कि वे देशी राज्यों को प्रान्तों के स्तर पर लाने का प्रयास कर रहे हैं। उन्होंने यह कार्य पूरा कर दिया है।

अनुच्छेद 306-ख पर मुझे इस कारण आपत्ति है कि हम सर्वत्र लोकतंत्रात्मक संस्थाओं को स्थापित करने का प्रयास कर रहे हैं—हमने स्वेच्छाचारी शासन का नाश किया है और उसके स्थान पर लोकतंत्रात्मक शासन स्थापति किया है। इस अनुच्छेद, अर्थात् अनुच्छेद 306-ख द्वारा राज्य मंत्रणालय, अर्थात् भारत सरकार राज्य-संघों पर नियंत्रण रख सकेगी। इस प्रकार प्रान्तों और राज्यों में विभेद किया गया है, जिससे लोकतंत्रात्मक संस्थाओं के मूल पर ही कुठाराघात होता है। मैं इस सभा में अकेला ही हूं। मैं जानता हूं कि यहां देशी राज्यों के जो सदस्य हैं उनमें से अधिकांश राज्य-संघों अथवा राज्यों में मंत्री हैं और वे इस अनुच्छेद को पसंद नहीं करते हैं। वे नहीं चाहते कि प्रति दिन के प्रशासन के सम्बन्ध में राज्य भारत सरकार के अधीन रहे, किन्तु किसी आदेश के कारण वे नहीं बोल सकते और वे नहीं बोलेंगे। इस अनुच्छेद पर मुझे विशेषतः इस कारण आपत्ति है कि केन्द्र से राज्यों पर नियंत्रण रखने अथवा उन्हें आदेश देने से नौकरशाही शासन की पूर्णतया स्थापना हो जायेगी। कोई प्रतिनिधि सरकार नहीं रह जायेगी।

जो देशी राज्य प्रान्तों में समाविष्ट कर दिये गये हैं उनके पिछले डेढ़ वर्ष के अपने अनुभव के आधार पर मैं कह सकता हूं कि प्रान्तीय सरकारों ने इन राज्यों में प्रशासक बना कर जिन कर्मचारियों को भेजा है उनका कार्य कुछ ऐसा रहा है कि वे सनकी राजाओं के उत्तराधिकारी समझे जाने लगे हैं। इन राज्यों के जनसाधारण की यही धारणा है। उड़ीसा और मध्यप्रान्त के राज्यों में पिछले वर्ष जो भी मनोनीत प्रतिनिधि थे उनकी कोई पूछ ही न थी। लोगों को यह तुरंत ही ज्ञात हो गया कि प्रान्तीय सरकारों ने जिन सदस्यों को मनोनीत किया था उनका प्रशासन में कोई हक नहीं है। वे नगण्य लोग समझे जाते हैं और जिस प्रकार राजाओं के राज में कर्मचारी शासन करते थे उसी प्रकार वे अब भी शासन करते हैं। यह एक दुर्भाग्य की बात है कि प्रान्तों की प्रशासन व्यवस्था में काम सीखे हुए जो कर्मचारी इन राज्यों में भेजे जाते हैं, जहां कि कभी लोकतंत्रात्मक व्यवस्था नहीं रही और लोग अपनी आवाज नहीं उठा सकते थे, वहां वे इस प्रकार कार्य करते हैं जैसे कि वे स्वयं शासक हों। सम्भवतः वे यह समझते हैं कि उन्हें कुछ काल के लिये राजा होने का अवसर मिल गया है।

पिछले वर्ष जो बड़े-बड़े राज्य-संघ स्थापित किये गये उन में मुझे ज्ञात है कि बहुत से छोटे या बड़े कर्मचारी ठीक कार्य नहीं करते और लोगों को अपनी शिकायतों

को सुनाने का कोई अवसर ही नहीं मिलता। जब राज्य मंत्रणालय अथवा भारत सरकार, प्रतिदिन के प्रशासन के सम्बन्ध में आदेश देगी तो स्थिति यह होगी कि यद्यपि राज्य-संघों के अपने विधान मंडल होंगे और उन में लोक-निर्वाचित प्रतिनिधि होंगे कि किन्तु ये कर्मचारी भारत सरकार के आदेशों का ही पालन करेंगे क्योंकि प्रतिनिधि कोई ऐसा निर्णय भी कर सकते हैं जो भारत सरकार के निर्णय से भिन्न हो। प्रतिनिधियों के लिये खामोश रहने के अलावा और कोई चारा नहीं रहेगा और वे भारत सरकार की इच्छा के अनुसार सब कुछ चलने देंगे। सभी यह समझ जायेंगे कि कर्मचारी ही सर्वेसर्वा हैं। जैसा कि कुछ सदस्यों ने कहा है और सरदार वल्लभभाई पटेल ने भी अपने वक्तव्य में कहा है, राज्यों में लोकतंत्रात्मक परम्परा कभी रही नहीं। वहां न स्थानीय मंडलियां हैं न नगरपालिकाएं। मैं जानता हूं कि कुछ राज्यों में पुस्तकालय तक नहीं स्थापित किये जा सके और वह इस कारण कि राजाओं और दीवारों को यह भय रहा कि पुस्तकें पढ़ने से लोग विद्रोही हो जायेंगे।

यह मेरी समझ में आता है किन्तु चूंकि हम अब लोकतंत्रात्मक व्यवस्था स्थापित करने जा रहे हैं इसलिये मुझे इस पर बहुत आपत्ति है कि प्रान्तों और राज्यों के साथ विभिन्न प्रकार का व्यवहार किया जाये। प्रान्तों में मंत्रिमंडल स्वायत्तशासी होंगे और उनके कार्य में बाहर से हस्तक्षेप नहीं होगा किन्तु राज्य-संघों को तथा मैसूर जैसे राज्यों को केन्द्रीय सरकार के आदेशानुसार कार्य करना होगा। मैं जानता हूं कि कुछ अपवाद भी किये जायेंगे। वास्तव में कुछ राज्यों के लिये अवश्य ही अपवाद करना चाहिये किन्तु यदि मैसूर को स्वायत्तशासी होने की प्रतिष्ठा प्राप्त हो गई और राजस्थान केन्द्र के अधीन ही रहा तो मुझे विश्वास है कि यह सभा अनुभव करेगी कि राजस्थान के प्रतिनिधियों की क्या भावना होगी। मेरा यह निवेदन है कि इस अनुच्छेद द्वारा राज्यों को, अथवा राज्य-संघों को, चाहे जितने समय के लिये भी केन्द्र के अधीन रखा जाये, चाहे वह समय दस वर्ष का हो अथवा चाहे संसद पन्द्रह या बीस वर्ष की अवधि निश्चित करे, किन्तु उसके कारण प्रशासन लोक-प्रतिनिधियों का प्रशासन नहीं रह जायेगा।

दिखाई यह देता है कि जैसे ब्रिटिश सरकार पिछले पचास या साठ वर्षों में हमें लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली की शिक्षा देना चाहती थी उसी प्रकार हमारी सरकार तथा हमारे नेता, जो ब्रिटिश सरकार की नीतियों की निन्दा करते हैं; राज्यों के लोगों के सम्बन्ध में वही चाल चल रहे हैं। मेरी यह धारणा है कि केन्द्रीय सरकार की इस सभा में प्रान्तों के अधिकांश सदस्यों की राज्यों के लोगों के प्रति सौतेली मां की सी भावनाएं हैं। समाविष्ट राज्यों के सम्बन्ध में जो कुछ किया गया है उससे यह स्पष्ट हो जायेगा। पिछली जनवरी को हमने भारत-शासन अधिनियम के सम्बन्ध में इस आशय का एक संशोधन पारित किया कि कुछ राज्य बम्बई, मद्रास, मध्य प्रान्त तथा उड़ीसा के प्रान्तों में मिला दिये जायें। उस समय हमें आशा थी और कुछ लोगों ने हमें यह आश्वासन भी दिया था कि 1935 के अधिनियम द्वारा प्रदत्त सीमित मताधिकार के अधीन निर्वाचन होगा किन्तु कोई निर्वाचन नहीं हुआ है और मुझे यह निश्चित रूप से विदित है कि कम से कम दो प्रान्तों में प्रान्तीय सरकारों ने सरकारी ढंग से सदस्यों को मनोनीत किया है। यह एक दिलचस्प बात है कि कांग्रेस समितियों ने भी मनोनयन नहीं किया। यह समझा जा सकता था कि चूंकि सरकार कांग्रेस की है इसलिये वह कम से कम कांग्रेस समितियों से

[श्री सारंगधर दास]

परामर्श करेगी। एक प्रान्त में कांग्रेस समितियों की सिफारिशों को अस्वीकार कर दिया गया। एक अन्य प्रान्त में कांग्रेस समितियों से परामर्श किया ही नहीं गया। यह समझा जा सकता था कि चूंकि सरकार को कांग्रेस दल चला रहा है इस लिये वह कम से कम अपने संगठन से परामर्श करेगा किन्तु यह नहीं किया गया। अधिकांश सदस्यों को कर्मचारियों ने ही नियुक्त किया। वे लोकप्रतिनिधि कहे जाते हैं। मेरे विचार से उन लोगों को मनोनीत करना जिन्हें आज तक सार्वजनिक जीवन में कोई नहीं जानता था अथवा जो राजा का ही साथ देते रहे देशी राज्यों के लोगों का अपमान करना है। मैं चाहता हूं कि यद्यपि अब स्वेच्छाचारी शासन को समाप्त कर दिया गया है और सारे भारत में लोकतंत्र है, और सारे देश का एकीकरण हो गया है, किन्तु फिर भी केन्द्रीय सरकार राज्यों के लोगों को दासत्व में रहने देने की मनोवृत्ति दिखा रही है।

जहां तक देशी राज्यों के मतदाताओं की बुद्धि का सम्बन्ध है, मैं यह कहूंगा और मैं यह अपने प्रदेश का अच्छा ज्ञान होने के कारण ही कह रहा हूं—कि प्रान्तों के तथा राज्यों के जनसाधारण की बुद्धि तथा जागरूकता में कोई अन्तर नहीं है। यदि आप का यह विचार है कि मतदाताओं के अज्ञान के कारण ही इस प्रकार के लोग मनोनीत होते हैं और केन्द्र को आदेश देने की आवश्यकता पड़ती है तो मेरा निवेदन है कि अपने संविधान में वयस्क मताधिकार के सम्बन्ध में उपबन्ध रख कर हम ने गलती की। मेरा निवेदन है कि यदि हमारा लोगों पर विश्वास नहीं है तो हम वयस्क मताधिकार को धीरे-धीरे प्रदान करें। मेरी अपनी यह धारणा नहीं है। मेरा यह विश्वास है कि जब लोकतंत्रात्मक व्यवस्था स्थापित कर दी जायेगी तो लोग अपनी गलतियों से शिक्षा ग्रहण करेंगे और इस प्रकार लोक-तंत्र का विकास होगा। अपने प्रान्त ही के नहीं बल्कि उड़ीसा के राज्यों तथा राजस्थान और मध्य भारत के कुछ भागों के अपने अनुभव के आधार पर मैं यह सकता हूं कि यह अनुच्छेद, अर्थात् अनुच्छेद 306-ख, एक प्रतिगामी अनुच्छेद है। सरदार पटेल इतने थोड़े काल में इस देश का एकीकरण करने तथा स्वेच्छाचारी शासन को समाप्त करने में समर्थ हुए हैं। इस प्रतिगामी अनुच्छेद 306-ख से उन्होंने तथा राज्य-मंत्रणालय ने जो भलाई की है उसका बहुत अंश मिट जायेगा।

मैं आरम्भ में कह चुका हूं कि इस सभा में मैं अकेला ही हूं क्योंकि मैं उस दल का नहीं हूं, जिसका इस सभा में बहुमत है। मैं उस दल में था किन्तु मैंने उसे छोड़ दिया है। इसी कारण मैं इस प्रकार बोल रहा हूं। मैं जो चाहूं स्वतंत्रता से यह कहता हूं। मैं इस सभा के माननीय सदस्यों को तथा सरकार को चेतावनी देता हूं कि जब तक देशी राज्यों के लोगों के प्रति सौतेली मां का सा व्यवहार समाप्त नहीं किया जाता और उन्हें प्रान्तों के लोगों के समान ही कार्य करने नहीं दिया जाता, अथवा संविधान के अधीन जिस प्रकार के कार्य करेंगे उस प्रकार उन्हें कार्य नहीं करने दिया जाता, अथवा राज्यों के लोगों को वही अधिकार नहीं दिये जाते जो प्रान्तों के लोगों को प्राप्त हैं तो मेरे विचार से, लोकतंत्र विकसित नहीं होगा। भविष्य में जाने कौन घटनाएं घटित हों। इन राज्य-संघों के मंत्रिमंडलों में ही कलह हो सकता है, किसी भी स्थान पर विस्फोट हो सकता है अर्थात् किसी भी दशा में लोकतंत्र विकसित नहीं होगा।

इसी कारण मैं इस सभा के माननीय सदस्यों से तथा सरदार वल्लभभाई पटेल से भी अपील करता हूं कि यदि इस अनुच्छेद 306-ख को रखने की आवश्यकता

ही है तो कम से कम राज्यों को वह लागू न किया जाये। किसी राज्य की सरकार के गिर पड़ने पर अनुच्छेद 275, 276 तथा उन अन्य अनुच्छेदों का आश्रय लिया जा सकता है, जो प्रान्तों को भी लागू होंगे। वह अनुच्छेद राज्य-संघों को भी लागू किये जा सकते हैं। इसी कारण मेरा यह विचार है कि अनुच्छेद 306-ख की आवश्यकता नहीं है। यदि वह पारित किया गया, क्योंकि मुझे उसे पारित होने पर कुछ भी सन्देह नहीं है, तो सरदार बल्लभभाई तथा भारत सरकार से मेरी यह अपील है कि उसे प्रयोग में न लाया जाये। यदि संघ-सरकारों में से किसी में कोई दोष है तो उससे कह सुनकर उसे दूर किया जाये।

***श्री के. चेंगलाराय रेड्डी** (मैसूर राज्य): अध्यक्ष महोदय, मुझे इसकी प्रसन्नता है कि सभा के विचाराधीन जो प्रस्ताव है उसके सम्बन्ध में कुछ सामान्य बातें कहने का अवसर मुझे दिया गया है। प्रस्ताव यह है कि संविधान का भाग 6 जो प्रथम अनुसूची के भाग 1 में प्रगणित राज्यों को लागू है, उस अनुसूची के भाग 3 में प्रगणित राज्यों को भी उनकी स्थिति के अनुसार रूप-भेद कर के तथा कुछ बातें छोड़कर लागू किया जाये। मुझे इसकी अत्यंत प्रसन्नता है कि जब यह सभा अपना कार्य समाप्त करने को थी उस समय यह निर्णय भी किया गया है।

जब इस सभा ने अपना कार्य आरम्भ किया था तो इस सम्बन्ध में बहुत सन्देह था कि भारत डोमीनियन के सभी भागों के लिये एक ही संविधान बनाया जा सकेगा या नहीं। उस समय यह समझा गया था और उसे स्वीकार भी किया गया था कि जहां तक देशी राज्यों का सम्बन्ध है उनका संविधान उनकी संविधान सभाएं ही बनायें। इसी निर्णय के फलस्वरूप कुछ राज्यों में संविधान सभाएं अस्तित्व में भी आईं और उन्होंने उनके लिये संविधान बनाने का कार्य भी आरम्भ किया। इस प्रसंग में मैसूर राज्य के प्रतिनिधियों ने तथा कुछ अन्य राज्यों के प्रतिनिधियों ने भी सबके लिये एक ही संविधान बनाने के लिये जो प्रयास किया उसका मैं स्मरण कराना चाहता हूं।

बहुत पहले, अर्थात् 1947 में, जब इन राज्यों के प्रतिनिधि इस आदरणीय सभा में आये थे तो देशी राज्यों के लिये एक अनुकरणीय संविधान बनाने तथा उसे इस संविधान का ही अंग बनाने के उद्देश्य से एक समिति के संगठन के लिये बहुत प्रयास किया गया। किन्तु उस समय यह कदम व्यावहारिक नहीं समझा गया और हमसे अपने अपने राज्यों के लिये संविधान बनाने के लिये कहा गया। परन्तु जब हमने अपना कार्य आरम्भ किया तो हम ने इसका अनुभव किया कि इन पृथक संविधानों का भारतीय संविधान के, तथा भारतीय संविधान-सभा के लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव के अनुरूप होना परम आवश्यक है। जब हमें अपने संविधानों को स्वयं बनाने की स्वतंत्रता दी गई थी तो उस समय भी हमने यह निर्णय किया था। इसी को ध्यान में रखकर मैं इस समय यह निवेदन कर रहा हूं कि देशी राज्यों के लिये—कम से कम मैसूर के सम्बन्ध में तो मैं अधिकृत रूप से कह ही सकता हूं—यह एक अत्यंत हर्ष का विषय है कि यह आदरणीय सभा अब इस निर्णय को करने जा रही है।

श्रीमान, इस समय देश जिस स्थिति में पड़ा हुआ है उस का सामना करने के लिये हमें बड़ी राजनीतिज्ञता से कार्य करना है, ताकि जिस स्वतन्त्रता को हमने

[श्री के. चेंगलाराय रेड्डी]

प्राप्त किया है वह सुस्थिर तथा संकटमुक्त हो सके। यह हर काल में अनुभव किया गया है कि विभिन्न इकाइयों के लिये विभिन्न प्रकार के संविधान बनाने से उनमें फूट पड़ जाती है और वे विभिन्न दिशाओं की ओर कदम उठाने लगते हैं। अब यह स्वीकार किया गया है कि सभी देशी राज्यों के लिये बहुत कुछ समान ही संविधान बनाया जाये और वह प्रान्तों के संविधान के अनुरूप हो। इस सम्बन्ध में अगस्त 15, 1947 के पश्चात् देशी राज्यों की पेचीदी समस्या को जिस प्रकार सुलझाया गया है उसके लिये मैं राज्य मंत्रणालय तथा सरदार पटेल को नम्रतापूर्वक बधाई देता हूं। उस समय जिस प्रकार की स्थिति थी उसमें बहुत दुष्टता की जा सकती थी और भारत के विघटन के लिये प्रयास किया जा सकता था, जिसके फलस्वरूप हमें जो स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है वह क्षीण हो जाती। यदि इस प्रश्न को राजनीतिज्ञता से नहीं सुलझाया गया होता तो भारत के विघटन के लिये जो अवसर उपस्थित था वह भारत के लिये उसके स्वातन्त्र्य के शैशव-काल में ही घातक सिद्ध होता। इस लिये इस समस्या को एक अद्‌भुत ढंग से हल करने लिये राज्य मंत्रणालय तथा सरदार पटेल की संसार भर ने जो प्रशंसा की है उसमें मैं अपना योग भी देना चाहता हूं। यह ठीक ही दावा किया गया है कि आज हमने जो कुछ प्राप्त किया है वह एक रक्तहीन क्रान्ति के फलस्वरूप प्राप्त किया है, जिसका उदाहरण संसार के किसी अन्य देश के इतिहास में नहीं मिलता। आज हमें इसका गर्व है कि हम एक ऐसा संविधान बना रहे हैं जिसके फलस्वरूप हमें आशा है कि भारतीय इतिहास में प्रथम बार एक लोकतन्त्रात्मक तथा शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण होगा। जैसा कि मैं बता चुका हूं, राज्यों के तथा प्रान्तों के लोगों के सहयोग से ही इस उद्देश्य की पूर्ति हुई है और भारत के इतिहास में प्रथम बार लोगों की सर्वसत्ता पर आधृत लोक-राज अस्तित्व में आ रहा है। इसलिये मुझे आशा है कि देश में किसी स्थान पर अथवा किसी राज्य में सभी संघांगों के लिये एक ही संविधान बनाने के सम्बन्ध में कोई मतभेद नहीं होगा।

इस सम्बन्ध में इतना कह कर श्रीमान, इस सभा के सामने जो प्रस्ताव रखे गये हैं उनके विवरण के सम्बन्ध में मैं कुछ कहना चाहता हूं। सभा के सामने जो मुख्य प्रस्ताव तथा संशोधनों के मसौदे रखे गये हैं उनसे मैं सहमत हूं और मैं आशा करता है कि इस सभा में उपस्थित प्रतिनिधियों को जिन में देशी राज्यों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित हैं, उन्हें स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। सामान्यत: स्थिति यह है कि संविधान के भाग 6 में विभिन्न प्राधिकारियों के जो अधिकार, शक्तियां तथा उत्तरदायित्व रखे गये हैं वही अधिकार, शक्तियां तथा उत्तरदायित्व देशी राज्यों के तत्स्थानी प्राधिकारियों के भी रखे गये हैं। कुछ अन्तर अवश्य है कि और उसके लिये भी उपबन्ध रखे गये हैं। मूलाधिकारों और नागरिकता के अधिकारों के सम्बन्ध में हमेशा यही विचार किया गया कि ये सभी इकाइयों में एक समान होंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन प्रदेशों के संविधानों के सम्बन्ध में कुछ रूप-भेद करने की आवश्यकता पड़ी है। स्थिति को स्पष्ट करने के लिये मैं उसकी कुछ चर्चा करूंगा क्योंकि कुछ माननीय सदस्यों ने पूछा है, "यदि आप एक ही संविधान चाहते हैं तो आप रूप-भेद क्यों चाहते हैं? आपको भाग 6-क की आवश्यकता ही क्या है?" इस प्रश्न का उत्तर मैं आसानी से दे सकता हूं।

किन्तु कल सरदार पटेल ने इस सम्बन्ध में जो स्पष्ट विस्तृत वक्तव्य दिया है वह इस प्रकार के प्रश्नों का यथोचित उत्तर है।

श्रीमान, पहले मैं यह बताना चाहता हूं कि सम्बन्धित राज्यों के संविधानिक प्रधानों के सम्बन्ध में रूप-भेद करने की आवश्यकता पड़ी है। प्रान्तों में संविधानिक प्रधान राज्यपाल होगा। देशी राज्यों के इतिहास को तथा उनकी वर्तमान स्थिति को देखते हुए उनके लिये एक भिन्न प्रकार की व्यवस्था करनी पड़ी। चूंकि भिन्न प्रकार की व्यवस्था करनी थी इसलिये कुछ रूप भेद करने की आवश्यकता पड़ी और सभा के सामने एक संशोधन रखा गया। देशी राज्यों में संविधानिक प्रधान राजप्रमुख होगा। यह स्पष्ट हो जाना चाहिये कि चाहे संविधानिक प्रधान को जिस नाम से ही कहा जाये, जहां तक उसकी शक्तियों का सम्बन्ध है, वे बिल्कुल वही हैं जो प्रान्तों के राज्यपालों को प्रदान की गई हैं। इसलिये यद्यपि राजप्रमुख संविधानिक प्रधान होगा, उसकी शक्तियां किसी राज्यपाल से न तो कम होंगी और न अधिक।

इस शब्द की परिभाषा के सम्बन्ध में कुछ मतभेद हैं। यह कहा गया है कि "राजप्रमुख" शब्द का यह आशय है कि वह कई राजाओं का प्रमुख होगा, इसलिये ऐसे राज्यों के राजाओं के लिये यह काम में नहीं लाया जा सकता जहां एक ही राजा है। "राजप्रमुख" शब्द की परिभाषा करने से इस दोष का निवारण हो जायेगा और वह परिभाषा यथोचित अवसर पर सभा के सामने रखी जायेगी। विभिन्न राज्यों में जो विभेद है उसे परिभाषा में स्वीकार किया गया है और यह कहा गया है कि "राजप्रमुख" से अभिप्रेत होगा हैदराबाद का निजाम। जम्मू और काश्मीर तथा मैसूर के राज्यों में राजप्रमुख से महाराजा अभिप्रेत होगा किन्तु शर्त यह है कि उन्हें इस रूप में संघ का राष्ट्रपति स्वीकार करें। इसमें कोई बात आश्चर्यजनक नहीं है। अंग्रेजों के शासन-काल में जो व्यवस्था थी उसके अधीन भी स्वीकृति की शर्त थी। अब कोई नई शर्त नहीं रखी जा रही है। यद्यपि राज्यों के संविधानिक प्रधान के लिये इससे अच्छा कोई शब्द रखा जा सकता था किन्तु अभी तक जो प्रसंविदायें की गईं हैं उनमें इसी शब्द को प्रयोग किया गया है इसलिये "राजप्रमुख" शब्द को ही रखा जा रहा है।

विधायी शक्तियों के सम्बन्ध में किसी प्रकार का विभेद नहीं किया गया है। प्रान्तों और देशी राज्यों की विधायी शक्तियां बिल्कुल एक समान होंगी और इसकी आवश्यकता नहीं है कि मैं इस सम्बन्ध में अधिक कुछ कहूं।

वित्तीय व्यवस्था के सम्बन्ध में श्रीमान, मैं केवल एक शब्द कहूंगा। इस सम्बन्ध में भी हम जो उपबन्ध रख रहे हैं उनका आधार यह है कि प्रान्तों तथा केन्द्र के सम्बन्ध तथा देशी राज्यों और केन्द्र के सम्बन्ध बिल्कुल एक समान हों। जब इस सिद्धान्त का अनुसरण किया जायेगा तो इसका अर्थ यह होगा कि देशी राज्यों की वित्तीय व्यवस्था बहुत कुछ विश्रृंखल हो जायेगी। पिछले कुछ महीनों से किसी ऐसी व्यवस्था को रखने का प्रयास किया जाता रहा है जिससे एकरूपता का सिद्धान्त भी व्यवहार में आ जाये और देशी राज्यों की वित्तीय व्यवस्था भी विश्रृंखल न होने पाये। संघीय वित्त-एकीकरण समिति ने, जिस के सभापति सर वी.टी. कृष्णमाचारी

[श्री के. चेंगलाराय रेड्डी]

थे, इस प्रश्न पर पूर्ण रूप से विचार किया है और इस सम्बन्ध में लगभग सभी राज्यों ने अस्थाई रूप से एक करार पर हस्ताक्षर किये हैं। इस सम्बन्ध में मेरा एक निवेदन है। केन्द्र के साथ राज्य जो करार करेंगे उसकी अवधि केवल दस वर्ष रखी गई है। मेरा यह अनुरोध है कि दस वर्ष की यह अवधि भी बढ़ा दी जाये और पन्द्रह वर्ष की अवधि रखी जाये ताकि संघीय वित्त-विषयक करार के फलस्वरूप उन्हें जिस कठिनाई का सामना करना पड़ेगा उसे वे दूर कर सकें। सम्बन्धित क्षेत्रों में इस प्रस्ताव पर विचार किया गया है और मुझे आशा है कि हमारे इस सुझाव पर अधिकारी गम्भीरता से तथा सहानुभूति से विचार करेंगे।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, राज्यों की सीमाओं के पुनर्निश्चयन के सम्बन्ध में, कुछ मतभेद रहा है। आरम्भ में इस आदरणीय सभा ने खण्ड (3) को जिस रूप में पारित किया था उसके अधीन यह उपबन्ध था कि भाग-1 में उल्लिखित प्रान्तों की सम्मति ली जायेगी और भाग 3 में उल्लिखित राज्यों की सहमति प्राप्त की जायेगी। मैसूर की संविधान सभा का यह मत था कि देशी राज्यों की सीमाओं के पुनर्निश्चयन के सम्बन्ध में पहले राज्यों की सहमति प्राप्त की जाये। इसकी आवश्यकता नहीं है कि मैं यह बताऊं कि मैसूर की संविधान सभा ने यह निर्णय क्यों किया और इस प्रकार की सिफारिश क्यों की। इसे ध्यान में रखते हुए कि प्रान्तों की केवल सम्मति लेना ही आवश्यक समझा गया है हमारे सामने अब यह प्रस्ताव रखा गया है कि राज्यों के सम्बन्ध में भी यही किया जाये और इस विषय के सम्बन्ध में भाग 1 में उल्लिखित प्रान्तों और भाग 3 में उल्लिखित राज्यों में विभेद न किया जाये। मैं इस सम्बन्ध में अधिक कुछ न कह कर सभा का ध्यान सरदार पटेल के कल के वक्तव्य की ओर आकृष्ट करता हूं। उन्होंने निश्चित शब्दों में कल कहा कि चाहे राज्यों के विधान मंडलों की सहमति ली जाये अथवा प्रान्तों के विधान मंडलों की सम्मति ली जाये, जब कभी सीमाओं के पुनर्निश्चयन का प्रश्न उठेगा लोगों की इच्छाओं की उपेक्षा नहीं की जायेगी। उन्होंने यह भी कहा कि भारत सरकार तथा संसद सम्बन्धित राज्य की इच्छाओं की भी उपेक्षा नहीं करेंगे। इस आश्वासन को दृष्टि में रखते हुए मैं इस विषय पर अधिक और कुछ नहीं कहना चाहता।

समान्त करने के पूर्व मैं एक और महत्वपूर्ण प्रश्न के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करना चाहता हूं। इस समय जो प्रस्ताव विचाराधीन है उसका उद्देश्य भाग-1 में उल्लिखित प्रान्तों तथा भाग-3 में उल्लिखित राज्यों को समान स्तर पर रखना ही है। श्रीमान, इस प्रसंग में सरदार पटेल ने कहा कि प्रस्तावित अनुच्छेद 306-ख के सम्बन्ध में "लोग कुछ निराश हुए हैं। उसके सम्बन्ध में" इस सभा में माननीय सदस्य विभिन्न मत व्यक्त कर चुके हैं। मैं आदरपूर्वक निवेदन करना चाहता हूं कि अनुच्छेद 306-ख से प्रत्यक्षत: यह प्रकट होता है कि उसके द्वारा प्रान्तों और राज्यों में विभेद किया गया है। इसलिये सम्भवत: यह प्रश्न उठता है कि आखिर

यह विभेद क्यों किया जा रहा है। यदि उद्देश्य यह है कि प्रान्तों और राज्यों को समान स्तर पर रखा जाये तो इस अनुसूची के भाग-3 में उल्लिखित राज्यों को अनुच्छेद 306-ख में वर्णित नियंत्रण के अधीन क्यों रखा जा रहा है? यदि मैं यह न बताऊं कि जहां तक मैसूर की संविधान सभा का सम्बन्ध है उसने एकमत होकर यह सम्मति प्रकट की है कि यह अनुच्छेद मैसूर राज्य को लागू न किया जाये तो मैं अपने कर्तव्य का पालन न करूंगा।

श्रीमान, हम राज्यों के लोग समान संविधान की हमेशा मांग करते रहे हैं और उसके लिये आन्दोलन करते रहे हैं ओर यही आशा करते रहे हैं कि प्रान्तों और राज्यों के बीच विभेद नहीं किया जायेगा। दिखाई यह देता है कि इस अनुच्छेद 306-ख द्वारा विभेद किया गया है। मेरा निवेदन है कि इस समस्या को हल करने में हमारी हमेशा यही इच्छा रही है कि भारत की सुस्थिरता तथा सुरक्षा पर जरा भी आंच न आये। हम प्रत्येक प्रस्ताव पर इसी आधारभूत दृष्टिकोण से विचार करना चाहते हैं। यदि राज्य मंत्रणालय की यह धारणा है कि इस समय स्थिति को सुदृढ़ बनाने के लिये तथा राज्यों में और अन्यत्र लोकतन्त्र की जड़ों को सींचने के लिये इस प्रकार की शक्ति की आवश्यकता है तो मुझे उसकी इस धारणा पर कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु इसे ध्यान में रखना चाहिये कि यह खण्ड भाग 3 में उल्लिखित सभी राज्यों में समान रूप से प्रयोग में नहीं लाया जा सकता।

इस अवसर पर मैं केवल मैसूर के सम्बन्ध में बोल रहा हूं। पिछली कई दशाब्दियों से मैसूर में सुव्यवस्थित प्रशासन रहा है। मैसूर की अपनी स्थाई सेवा है, जिस पर मैसूर ही नहीं बल्कि भारत भी गर्व कर सकता है। मैसूर में देशी राज्यों से ही पहले नहीं बल्कि प्रान्तों से भी पहले 1881 में एक लोकतंत्रात्मक सभा स्थापित हो गई थी। 1907 में विधान परिषद् के नाम से दूसरी सभा अस्तित्व में आ गई। इस प्रकार पिछले कई वर्षों से मैसूर के लोगों का लोकतंत्रात्मक संस्थाओं से परिचय रहा है। यह सच है कि कार्यपालिका का पूरा प्राधिकार दीवान को ही प्राप्त था। किन्तु यह कथन अकाट्य है कि कई वर्षों से मैसूर को लोकतन्त्रात्मक संस्थाओं का अनुभव रहा है।

इसे दृष्टि में रखते हुए यह उचित नहीं होगा कि मैसूर के समान किसी राज्य को अनुच्छेद 306-ख के उपबन्ध लागू किये जायें। सरदार पटेल ने इस सभा में कृपा करके कल अपने वक्तव्य में कहा कि यह स्पष्ट है कि मैसूर, त्रावणकोर तथा कोचीन के राज्यों के सम्बन्ध में, जहां बहुत काल से लोकतन्त्रात्मक संस्थायें अस्तित्व में रही हैं और मंत्री विधान-मंडल के प्रति उत्तरदायी रहे हैं, भिन्न प्रकार का व्यवहार करने की आवश्यकता पड़ेगी। मुझे पूरी आशा है कि अनुसूची के भाग-3 में उल्लिखित अन्य राज्यों के सम्बन्ध में भी अनुच्छेद 306-ख द्वारा केन्द्र को जो शक्तियां प्रदान की जा रही हैं उन्हें प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। हमारे नेताओं की सूझ तथा राजनीतिज्ञता के कारण तथा देशी राज्यों के लोगों के सहयोग के कारण आज हमें वह दिन देखने को मिला है जब हम अपने कार्यों पर गर्व कर सकते हैं। भले ही यह अनुच्छेद 306-ख संविधान में समाविष्ट कर दिया जाये, मुझे आशा है कि भविष्य में केन्द्र को किसी कारण इस अनुच्छेद के उपबन्धों को प्रयोग में लाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। मुझे आशा है कि यह अनुच्छेद संविधान में एक निष्प्राण अनुच्छेद रहेगा। कम से कम मुझे यह आशा तो है ही कि अनुच्छेद 306-ख मैसूर राज्य को नहीं लागू किया जायेगा।

[श्री के. चेंगलाराय रेड्डी]

मैं सभा का अधिक समय नहीं लेना चाहता। कल यह कहा गया था कि राज्यों तथा प्रान्तों के लोगों के सहयोग के फलस्वरूप ही हम आज यह निर्णय करने में समर्थ हैं। हमें इस पर गर्व है और हमें इस पर हर्ष भी है। मैं राज्य-मंत्रालय को इस कार्य के लिये नम्रतापूर्वक बधाई दे चुका हूं। किन्तु अभी हमें इससे भी बड़ा कार्य सम्पन्न करना है। हम सहयोग से कार्य करते रहें ताकि वास्तविक अर्थ में स्वराज्य की स्थापना हो सके। अभी हमें सामाजिक तथा आर्थिक लोकतन्त्र को स्थापित करना है। हम अपने राजनैतिक स्वातन्त्र्य को तथा अपने संविधान को इस प्रकार व्यवहार में लायें कि भारत का सम्मान बहुत ऊंचा हो जाये। मुझे पूरा विश्वास है कि भविष्य में भी पहले के समान परिश्रम, सहयोग तथा तल्लीनता का परिचय दिया जायेगा और यह संविधान बड़ी सफलता के साथ कार्यान्वित होगा।

इन शब्दों के साथ मैं सिफारिश करता हूं कि मसौदा समिति ने सभा के समक्ष जिन संशोधनों को रखा है उन्हें स्वीकार कर लिया जाये और साथ ही मैं सम्बन्धित अधिकारियों से अपील करता हूं कि वे यदि किसी राज्य में विशेष स्थिति देखें तो इस संविधान के इन उपबन्धों को, जो अभी पारित होने जा रहे हैं, प्रयोग में लाते समय उस पर विचार करें।

***श्री जयनारायण व्यास** (संयुक्त राज्य: राजस्थान): अध्यक्ष महोदय, कल हमें सरदार वल्लभभाई पटेल का उत्कृष्ट वक्तव्य पढ़कर सुनाया गया और हमने कांग्रेस के प्रधान डॉ. पट्टाभी सीतारमैय्या का ओजस्वी भाषण भी सुना जिसमें उन्होंने सरदार पटेल के वक्तव्य का समर्थन किया और देशी राज्यों के लोगों के लिये उन्होंने जो कुछ किया है उसकी सराहना की। हमने कुछ अन्य माननीय सदस्यों के भी भाषण सुने, जिनमें श्री सिधवा जी एक थे, जिन्होंने देशी राज्यों के लोगों को पिछड़े हुए लोग कहा।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैंने यह नहीं कहा कि सभी देशी राज्य पिछड़े हुए हैं।

***श्री जयनारायण व्यास:** मुझे इसकी प्रसन्नता है कि वे हमें पिछड़ा हुआ नहीं समझते। हम पिछड़े हुए हो सकते हैं किन्तु श्रीमान, मैं आपको तथा आपके द्वारा भारत सरकार को तथा विशेषत: राज्य-मंत्रणालय को आश्वासन देता हूं कि हम कृतज्ञ लोग भी हैं और हम माननीय उप-प्रधानमंत्री, सरदार वल्लभभाई पटेल के कृतज्ञ हैं और हमें यह पूर्णतया विदित है कि 562 देशी राज्यों को सात राज्यों में परिणत करके उन्होंने देश का नक्शा ही बदल दिया है।

मैं संशोधनों के सम्बन्ध में अधिक कुछ नहीं कहना चाहता। मैं मुख्यत: अनुच्छेद 306-ख के सम्बन्ध में ही बोलूंगा जैसा कि प्रत्येक व्यक्ति कह चुका है, ऊपरी तौर पर वह अनुच्छेद घृणित प्रतीत होता है और दिखाई यह देता है कि यह देशी

राज्यों के लोगों अर्थात राज्यों के प्रशासन पर दस वर्ष तक निगरानी रखने के लिये बनाया गया है। किन्तु सरदार वल्लभभाई पटेल का वक्तव्य सुनने के पश्चात् इसका विरोध करने को जी नहीं चाहता। उन्होंने कई बातों की चर्चा की थी और मैं, राज्यों के कार्य का तथा थोड़े समय तक वहां के प्रशासन का अनुभव होने के कारण यह कह सकता हूं कि प्रशासकों को अनुभव न हाने के कारण भी इस अनुच्छेद को समाविष्ट करने की आवश्यकता समझी गई है। प्रशासकों के वास्तविक तथा काल्पनिक दोषों के कारण तथा अन्य बातों को भी ध्यान में रखकर इस अनुच्छेद को रखा गया है। सम्भवतः श्री सिधवा तथा अन्य लोगों को यह विदित न हो किन्तु राज्यों में बहुत कुचक्र रचे जाते हैं। राज्यों में सुयोग्य प्रशासक न हो किन्तु ऐसे कुचाली लोग होते हैं जैसे और प्रान्तों में नहीं होते और जो कानाफूसी कर के अथवा गन्दी चालें चल कर कुचक्र रचते रहते हैं। इस प्रकार के लोग हैं और यदि भारत सरकार वहां के प्रशासन को कुचक्रों से मुक्त करना चाहती है तो मैं उसे दोष नहीं दे सकता।

इसके अतिरिक्त मैं यह भी बताना चाहता हूं कि राज्यों का इतना शीघ्र एकीकरण हुआ है कि बहुत सी बातों पर विचार नहीं किया जा सका है। पहले से योजना बनाई जानी चाहिये थी, किन्तु पहले से योजना बनाने के लिये समय ही नहीं था। राज्यों का यह निर्माणकाल है। और अभी उनका पूर्ण निर्माण नहीं हुआ है। इस कारण भी विशेष प्रबन्ध की आवश्यकता है। श्रीमान, मैं भी उन लोगों में से हूं जो इसके लिये सहमत हुए थे कि जिन राज्यों में विधान मंडल नहीं हैं वहां यह प्रबन्ध तब तक रहे जब तक वहां विधान-मंडल न स्थापित हो जाएं और उसके पश्चात् केन्द्र के ये निर्बन्धन अथवा प्रबन्ध अथवा नियंत्रण, समाप्त कर दिये जाएं। किन्तु अब इस अवधि को बढ़ाकर दस वर्ष कर दिया गया है। जैसा कि श्री रेड्डी अभी बता चुके हैं, मुझे भी यह आशा है कि राज्यों के प्रशासन पर नियंत्रण रखने के लिये इस अवधि का आश्रय नहीं लिया जायेगा। वास्तव में इस राज्य के निवासी स्वयं इसके लिये सचेष्ट होंगे कि ये निर्बन्धन तथा नियंत्रण उनको लागू न हों।

राज्यों में कठिनाई यह थी कि राज्यों के लोगों को कभी अवसर ही नहीं दिया गया। एक वक्ता महोदय ने बताया कि राज्यों में पुस्तकालय खोलने पर भी निर्बन्धन लगाये गये थे। श्रीमान, यह सच है। मैं यह भी बताना चाहता हूं कि स्कूलों तथा छात्रालयों के खोलने पर भी निर्बन्धन थे। जिन लोगों के प्रदेश में स्कूलों, पुस्तकालयों, छात्रावासों के खोलने पर तथा समाचारपत्रों के निकालने तथा उन्हें पढ़ने पर निर्बन्धन हों उनके लिये संसार की गतिविधि को समझना बहुत कठिन होता है। किन्तु इस पर भी, मैं आपको बताना चाहता हूं कि देशी राज्य प्रजा परिषद् की 1927 में स्थापना होने के पश्चात् देशी राज्यों के लोगों में बहुत जागृति दिखाई देती है और वे अब वैसे नहीं रह गये हैं जैसे कि 1927 के पहले थे। श्रीमान यदि वहां के लोगों को अवसर दिया गया तो वे प्रान्तों के लोगों के पीछे नहीं रहेंगे। इसके विपरीत मैं समझता हूं कि दस वर्ष के पश्चात् अथवा दस वर्ष के पूर्व भी, एक समय ऐसा भी आ सकता है जबकि देशी राज्यों के लोग यह कहेंगे

[श्री जयनारायण व्यास]

कि कुछ प्रान्त बहुत पिछड़े हुए हैं और उन प्रान्तों पर निर्बन्धन लगाये जाने चाहिये न कि उन पर। श्रीमान, ऐसा समय भी आ सकता है।

जब लोग साधारणतया सभी राज्यों के पिछड़े हुए होने की चर्चा करते हैं तो मुझे दुख होता है। कुछ राज्य पिछड़े हुए हो सकते हैं किन्तु कुछ राज्य कुछ विशेष कारणों से पिछड़े हुए हैं और कुछ राज्य तो प्रान्तों से भी अधिक समुन्नत हैं। उदाहरण के लिये मैसूर के राज्य को लीजिये अथवा त्रावणकोर और कोचीन के राज्य को लीजिये। मैं निकटवर्ती अथवा पूर्व में या उत्तर में या दक्षिण में या पश्चिम में स्थित प्रान्तों को नहीं बताना चाहता किन्तु इतना अवश्य कहना चाहता हूं कि कुछ राज्यों में उनसे कहीं अच्छा प्रशासन है। यदि आप सांस्कृतिक दृष्टि से विचार करें तो आपको स्पष्ट हो जायेगा कि कुछ राज्यों में प्रान्तों से कहीं अच्छे सांस्कृतिक केन्द्र, इमारतें, आवास-गृह हैं और लोगों के लिये अधिक सुविधायें हैं। श्रीमान, मेरे अपने राज्य में—जी नहीं श्रीमान, मुझे खेद है, मेरी कमिश्नरी में—जो अब राजस्थान का भाग हो गई है बहुत अकाल पड़ते रहते हैं। किन्तु हमने जोधपुर को बंगाल नहीं होने दिया। हमने लोगों की रक्षा की, हमने उन पर बहुत धन व्यय किया हजारों लाखों रुपया नहीं बल्कि करोड़ों रुपया खर्च किया। जो लोग यह समझते हैं कि लोकतंत्र की दृष्टि से हम बहुत समुन्नत नहीं हैं उन्हें मैं यह बताना चाहता हूं कि मनुष्यत्व की दृष्टि से देशी राज्य कई प्रान्तों से अधिक समुन्नत रहे हैं, और मैं यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि यदि उन्हें अवसर दिया गया तो वे उस संस्कृति और मनुष्यत्व को बनाये रखेंगे जिन्हें संभवतः प्रान्त भूल गये हैं।

मैं एक दो बातों की ओर सभा का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। देशी राज्यों में कुछ सामन्तशाही लोग हैं। जिस कमिश्नरी का मैं रहने वाला हूं वहां 90 प्रतिशत भूमि सामन्तशाही जमींदारों की है उनमें से कुछ लोग स्वयं बहुत अच्छे हैं किन्तु सब बातों को देखते हए मैं यह कह सकता हूं कि राजपूताने की सामन्तशाही राष्ट्र के भविष्य के लिये बाधक सिद्ध होगी। मैं सरदार पटेल से प्रार्थना करता हूं कि वे इस ओर ध्यान दें और राज्यों पर नियंत्रण लगाते समय वे इन सामन्तशाही लोगों पर भी यथोचित नियंत्रण लगायें।

श्रीमान, मेरा यह भी निवेदन है कि अब नरेशों को नागरिकता के अधिकार दिये गये हैं और एक प्रकार से शासनाधिकार उनसे ले लिया गया है। कुछ मामलों में यह नागरिकता का अधिकार लोगों के लिये हानिकर भी हो सकता है। मैं यह नहीं कहता कि वे मानुषिक अधिकारों से वंचित किये जाएं किन्तु चूंकि देशी राज्यों के प्रशासन पर दस वर्ष तक निर्बन्धन लगाये गये हैं, इसलिये मेरे विचार से नरेशों के नागरिकता के अधिकार पर भी निर्बन्धन लगाया जाना चाहिये, अन्यथा अपने अधिकारों को स्वतन्त्रता से प्रयोग करने का अवसर मिलने पर वे राज्यों के प्रशासन पर एकाधिकार स्थापित करने के लिये सभी साधनों को अपनायेंगे। श्रीमान, मुझे आशा है कि प्रशासनों पर नियंत्रण लगाते समय इस ओर भी ध्यान दिया जायेगा।

मैं श्री सिधवा के इस कथन से सहमत नहीं हूं कि देशी राज्यों में प्रशासक नहीं मिलते हैं (*विघ्न*)। मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि यह सभी राज्यों के सम्बन्ध में नहीं कहा गया है बल्कि कुछ राज्यों के सम्बन्ध में ही कहा गया है। मैं यह बता चुका हूं कि कठिनाई यह है कि प्रान्तों में जैसे विधान मण्डल रहे हैं और लोकतन्त्र की परम्परा रही है वैसी देशी राज्यों की नहीं रही है। मैं श्री सिधवा को विश्वास दिलाता हूं कि यदि देशी राज्यों को अवसर दिया गया तो वे प्रान्तों से कहीं अच्छे प्रशासकों को जन्म दे सकेंगे। क्या आप महात्मा गांधी को भूल गये हैं? यह स्मरण रखिये कि उनका जन्म एक देशी राज्य में हुआ था। हम शेख अब्दुल्ला को भी नहीं भूल सकते। जब देश संकट में पड़ा हुआ था और जब शत्रु श्रीनगर से केवल चार मील की दूरी पर रह गया था और जब सेना श्रीनगर से बाहर चली गई थी तो उन्होंने श्रीनगर की रक्षा की और हिन्दुओं की रक्षा की तथा नाम पैदा किया। हम सर एस. विश्वेश्वरय्या जैसे प्रख्यात प्रशासक को भी नहीं भूल सकते जिनके प्रयत्नों के फलस्वरूप मैसूर में सुयोग्य प्रशासन स्थापित हुआ है। अभी तक हमें अवसर नहीं दिया गया है और अब हम यह चाहते हैं कि हमें अवसर दिया जाये। (*विघ्न*)। हमें अवसर दिया जायेगा क्योंकि हम स्वयं अवसर प्राप्त कर सकते हैं। एक काम हमने यह किया है कि हमने शासकों की सर्वसत्ता को समाप्त कर दिया है। दूसरी बात यह है कि अब शासक वेतन और भत्ते सीधे-सीधे राज्यों से नहीं पायेंगे। वे अपना हिसाब केन्द्र से तय करें। इसलिये अब शासकों को राज्यों के प्रशासन में तथा उनकी वित्तीय व्यवस्था में हस्तक्षेप करने की शक्ति नहीं है। यह हमने प्राप्त कर लिया है। अन्य लोगों के समान मेरा भी यह विचार है कि नरेशों पर कुछ नियंत्रण रखने की आवश्यकता है और वह अभी तक नहीं रखा गया है। मुझे विश्वास है कि अब राज्यों में विधान-मंडल स्थापित हो जायेंगे तो कई लोग प्रशासक और विधि निर्माता भी हो जायेंगे और फिर जिस प्रकार का समय अनुच्छेद 306-ख द्वारा हम पर नियंत्रण लगाये जा रहे हैं उस प्रकार नियंत्रण लगाने का अवसर हम सरदार पटेल को नहीं देंगे।

इन शब्दों के साथ मैं उपस्थित किये गये संशोधनों का समान्यत: समर्थन करता हूं और माननीय सरदार पटेल ने जो उत्कृष्ट वक्तव्य दिया और जिसके अनुसार राज्यों के लोग दस वर्ष से पूर्व भी अपने यहां सुधार कर सकते हैं, उसके लिये उन्हें कृतज्ञतापूर्वक धन्यवाद देता हूं। मैं राज्य मंत्रालय को एक बार और धन्यवाद देता हूं और श्रीमान, मुझे अपने विचार व्यक्त करने का अवसर प्रदान करने के लिये मैं आपको भी धन्यवाद देता हूं।

***कंवर जसवंत सिंह** (संयुक्त राज्य: राजस्थान): अध्यक्ष महोदय, भाग 6-क के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करने के लिये आपने मुझे जो अवसर दिया है उसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूं। कल माननीय पटेल ने जो वक्तव्य दिया उसके पश्चात् अब राज्यों के प्रतिनिधियों को अधिक कुछ कहने की आवश्यकता नहीं रह गई है। इसलिये मैं कुछ बहुत अनावश्यक बातों के सम्बन्ध में ही बोलूंगा।

[कंवर जसवंत सिंह]

पहली बात यह है कि अनुच्छेद 211-क के खण्ड (4) के उपखण्ड (ख) में कहा गया है कि राजप्रमुख अपने आवास-गृह का किराया नहीं देगा। श्रीमान, इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि लगभग सभी राज्यों में राजप्रमुखों के अपने आवास-गृह हैं और इसलिये किराया देने का प्रश्न ही नहीं उठता। जब मसौदा समिति इस मसौदे पर अन्तिम रूप से विचार करे तो वह कृपा कर के इस प्रश्न पर भी विचार करे।

खण्ड 10 (ख) के सम्बन्ध में मेरा यह निवेदन है कि उसमें त्रावणकोर-कोचीन राज्य के सम्बन्ध में 51 लाख रुपये के लिये उपबन्ध रखा गया है जो देवस्वम् निधि में दिया जायेगा। प्रसंविदा में इसका उल्लेख है कि यह धन संघ के खजाने से दिया जायेगा। अन्य राज्यों में भी इस प्रकार की राशियां देवस्थान विभाग पर व्यय की जाती हैं। मुझे ज्ञात है कि राजस्थान संघ के सम्बन्ध में उदयपुर के महाराणा को एक पत्र भेजा गया है जिस में देवस्थान विभाग के लिये एक बड़ी राशि की प्रत्याभूति दी गई है। जब एक राज्य के लिये इस प्रकार की व्यवस्था की गई है तो मेरे विचार से इस सम्बन्ध में इस स्थल पर एक उपबन्ध रखना चाहिये।

श्रीमान, जहां तक अनुच्छेद 302-क और अनुच्छेद 267-क का सम्बन्ध है, जो देशी राज्यों के शासकों के अधिकारों, विशेषाधिकारों तथा निजी थैलियों की राशियों के सम्बन्ध मैं है, मुझे उन्हें देखकर बहुत संतोष हुआ। शासकों ने जो सेवायें की हैं और जिस देश भक्ति से प्रेरित होकर उन्होंने हमारे आदरणीय नेता सरदार पटेल का परामर्श स्वीकार किया है उसे दृष्टि में रखकर उनकी प्रतिष्ठा का यथोचित ध्यान रखना चाहिये। उन्होंने अपनी शक्ति का तथा अपने राज्यों का इतनी शिष्टता के साथ परित्याग कर दिया कि यह सर्वथा उचित है कि संविधान में ही उन्हें अधिकारों, विशेषाधिकारों तथा आय-कर मुक्त निजी थैली की प्रत्याभूति दी जाये।

अब मैं अनुच्छेद 306-ख का प्रश्न उठाता हूं। श्रीमान, यद्यपि मैं एक देसी राज्य का निवासी हूं, परन्तु मैं इस उपबन्ध का स्वागत करता हूं। कुछ राज्य-संघों के लिये तो यह बहुत ही उपयुक्त उपबन्ध है। यह हो सकता है कि त्रावणकोर तथा मैसूर के समान समुन्नत राज्यों के लिये इस प्रकार के उपबन्ध की आवश्यकता न हो। किन्तु जहां तक मेरे प्रदेश का अर्थात् राजस्थान का सम्बन्ध है, यदि वहां के लिये इस प्रकार उपबन्ध नहीं रखा गया तो देश की सुरक्षा किसी समय संकट में पड़ सकती है। मैं राजस्थान के लिये इस उपबन्ध को इसलिये आवश्यक समझता हूं कि वह पाकिस्तान का सीमावर्ती प्रदेश है। पाकिस्तान तथा हमारे देश के बीच तनातनी होने के कारण यह आवश्यक है कि सीमा पर चौकसी रहे जिसके लिये केन्द्र के नियंत्रण की बहुत आवश्यकता होगी। इसके अतरिक्त वहां एक नवीन मंत्रिमंडल स्थापित किया गया है, जिसे यद्यपि एक राजनैतिक दल का समर्थन प्राप्त है किन्तु उसे राजनैतिक अथवा अन्य प्रकार का अनुभव बहुत कम है, और जैसा

कि कल सरदार पटेल ने अपने वक्तव्य में कहा था, राज्यों में राजनैतिक संगठनों का विभिन्न प्रकार का विकास होने के कारण भी इस प्रकार के नियंत्रण की आवश्यकता है।

इस के अतिरिक्त श्रीमान, हमने देखा है कि राजस्थान के मंत्रिमंडल ने पिछले छः मास में क्या कार्य किया है। इस कारण भी हम यह समझते हैं कि इस प्रकार के उपबन्ध की आवश्यकता है। प्रधान मंत्री तथ अन्य मंत्री भी इन स्थानों में, अर्थात् भूतपूर्व देशी राज्यों में जाते रहते हैं। मैं आपको बताऊंगा कि वे क्या करते हैं। वे आते हैं और सार्वजनिक सभाओं में भाषण देते हैं। वे नरेशों को तथा जागीरदारों को गालियां देते हैं और प्रचार करते हैं। इसके अतिरिक्त वे कोई सारवान कार्य नहीं करते। हमारे आदरणीय नेता सरदार वल्लभभाई पटेल की चेष्टा इसके बिल्कुल विपरीत रहती है। कोई भी ऐसा अवसर नहीं आया है जब उन्होंने देश-भक्ति से प्रेरित होकर शक्ति तथा राज्यों का परित्याग करने के लिये नरेशों की प्रशंसा न की हो। किन्तु दुर्भाग्य से अनुभव न होने के कारण तथा राजनैतिक सूझ और उदारता न होने के कारण, हमारे स्थानीय नेता यह नहीं समझते कि नरेशों ने स्वेच्छा से कितना त्याग किया है। वे यह चाहते हैं कि पहले जैसे बिगड़े हुए सम्बन्ध थे वैसे ही अब भी रहें। उन्हें अपनी प्रतिष्ठा की मिथ्या धारणा है। वे यह समझते हैं कि पहले जैसा नरेश किया करते थे उन्हीं के समान वे भी सज-धज के साथ निकलें और अपनी शक्ति का परिचय दें। वे यह समझते हैं कि ऐसा करने से वे लोगों में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ा सकेंगे और अपनी स्थिति सुदृढ़ कर सकेंगे।

मुझसे पहले बोलने वाले वक्ता महोदय पंडित जयनारायण व्यास ने जागीरदारों की चर्चा की। मैं सभा को आश्वासन देता हूं कि जागीरदार सबसे प्रथम भारतीय ही हैं। दुर्भाग्य से अथवा सौभाग्य से मैं भी एक जागीरदार हूं। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि यदि राजस्थान तथा अन्य स्थानों के जागीरदारों के प्रश्न को सरदार पटेल के समान कोई प्रतिष्ठित नेता सावधानी से हल करे तो, जब नरेशों के प्रश्न के समान जटिल प्रश्न हल हो गया है तो इसे भी हल करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। नरेश और हम लोग, जिनका नरेशों से निकट सम्बन्ध रहा है वैसे ही वफादार भारतीय हैं जैसे देश के कोई अन्य लोग। देशभक्ति में हम किसी से पीछे नहीं हैं और यदि आवश्यकता पड़ने पर देशभक्ति की कभी परख हुई तो हम खरे ही उतरेंगे।

इन शब्दों के साथ मैं समाप्त करता हूं।

*__श्री पी. गोविन्द मेनन__ (संयुक्त राज्यः त्रावणकोर और कोचीन): अध्यक्ष महोदय, देशी राज्यों के सम्बन्ध में भाग 6-क को संविधान में समाविष्ट करने के बारे में जो प्रस्ताव उपस्थित किया गया है उसका मैं समर्थन करता हूं और इस सम्बन्ध में अपने कुछ विचार व्यक्त करना चाहता हूं।

मेरा निवेदन है कि भाग 6-क के उपबन्धों के सम्बन्ध में, तथा राज्यों के बारे में जो उपबन्ध रखे गये हैं उन पर जो संशोधन प्रस्तावित किये हैं उनके सम्बन्ध

[श्री पी. गोविन्द मेनन]

में कल और आज इस सभा में बहुत कुछ कहा गया है। इस विषय के सम्बन्ध में बोलने के पूर्व मैं इस सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहता हूं कि इस उपबन्ध को संविधान में समाविष्ट करने का निश्चय कर के सभा ने एक बड़ा कदम उठाया है। जब सभा डॉ. अम्बेडकर के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेगी तो श्रीमान, एक ऐसी घटना घटित होगी जो भारत के पिछले कुछ वर्षों के इतिहास में अद्वितीय होगी। इस सभा ने अभी तक जो कार्य किया है उस पर वह गर्व कर सकती है किन्तु मैं उससे पूछता हूं कि यदि संविधान में भाग 6-क के समान कोई भाग न होता तो उसका स्वरूप कैसा होता?

जब भारत को शासन की बागडोर दी गई और इस संविधान सभा से समवेत होने के लिये कहा गया तो उस समय प्रान्तों के लिये एक संविधान अर्थात् 1935 का अधिनियम अस्तित्व में था। हमने भारत के भावी संविधान में बहुत कुछ इसी अधिनियम के उपबन्धों को उनका अनुकूलन करके, रखा है। इनके अतिरिक्त हमने मूलाधिकारों, निदेशक सिद्धान्तों तथा पृथक् निर्वाचन मंडलों के बारे में कुछ नये उपबन्धों को रखा है। किन्तु मेरा निवेदन है कि भाग 6-क को समाविष्ट करके हम एक बहुत महत्वपूर्ण घटना का, अर्थात् देशी राज्यों का भारत के अवशिष्ट भाग में समाविष्ट हो जाने का, उल्लेख कर रहे हैं। 1935 के अधिनियम के अधीन भारत के लिये एक बेमेल संघ की कल्पना की गई थी और देशी राज्यों का केन्द्र से नाता जोड़ने के लिये सम्राट के प्रतिनिधि ने बहुत काल तक नरेशों से बातचीत की थी। 1939 में युद्ध छिड़ जाने के कारण यह बातचीत समाप्त कर दी गई और पुरानी ही शासन-व्यवस्था चलती रही। 1946 में मंत्रि-प्रतिनिधि मंडल आया और उसके पश्चात् स्वातंत्र्य अधिनियम पारित हुआ और उसके फलस्वरूप देशी राज्य एक प्रकार से स्वतन्त्र हो गये।

इस परिस्थिति में सन् 1946 के अन्त में यह संविधान-सभा समवेत हुई और मैं यह स्मरण कराना चाहता हूं कि जब यह पहली बार समवेत हुई तो देशी राज्यों के प्रतिनिधि इसमें सम्मिलित नहीं हुए थे। इस सभा ने एक बातचीत करने वाली समिति नियुक्त की थी। इस सभा ने सबसे पहले जो कार्य किये थे उनमें से यह भी एक था। उसने भारतीय नरेशों के प्रतिनिधियों से बातचीत की और उनसे अनुरोध किया कि वे संविधान सभा में अपने प्रतिनिधि भेजें। जब यह बातचीत चल रही थी तो कुछ क्षेत्रों में संविधान-सभा की योजना को ही विनिष्ट करने का प्रयास किया जा रहा था। किन्तु हमारे नेताओं की दूरदर्शिता के कारण, देशी राज्यों के कुछ राजनीतिज्ञों की दूरदर्शिता के कारण, सारे भारत के लिये संविधान बनाने में सहयोग करने की भारत के लागों की आकांक्षा के कारण अप्रैल 1947 में देशी राज्यों के बारह सदस्य इस संविधान सभा के कार्य में भाग लेने के लिये आ गये।

इसके पश्चात् भी देशी राज्यों की स्थिति को स्पष्ट नहीं किया गया। वे अनिश्चित स्थिति में पड़े हुए थे। जिन लोगों के पास भारतीय संविधान के उस समय के

मसौदे की छपी हुई प्रतियां हैं उन्हें उसके विभिन्न अनुच्छेदों को देखने पर ज्ञात हो जायेगा कि उस समय यह विचार किया गया था कि देशी राज्य पृथक् ही रहेंगे। आप संविधान के मूल मसौदे के कई स्थलों पर भाग-3 में के राज्यों, भाग-1 में के राज्यों तथा विभिन्न करारों का उल्लेख पायेंगे जिन्हें करने पर ही भाग-3 में के राज्य भारतीय संघ में सम्मिलित हो सकते थे। 1947 में यह स्थिति थी। उस समय, जैसा कि श्री के.सी. रेड्डी ने बताया है, विभिन्न देशी राज्यों में संविधान सभाएं अस्तित्व में लाई गई थी और यह सभा जिस प्रक्रिया का अनुसरण कर रही थी वही देशी राज्यों की संविधान सभाओं में भी अपनाई गई थी, लक्ष्यसम्बन्धी प्रस्ताव पारित किये गये थे, अल्पसंख्यक समितियां मसौदा समितियां आदि नियुक्त की गई थीं।

किन्तु भारत को जब स्वतन्त्रता प्रदान की गई, अथवा जब भारत ने स्वतन्त्रता प्राप्त की तो, भारत में तेजी से घटनायें घटित हुईं और भारतीय नेताओं ने उस स्थिति का पोषण नहीं किया जो उन्हें शक्ति हस्तान्तरण के दिन दिखाई दी और इस प्रकार अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय दिया। इस समय एक समिति अर्थात् राव समिति स्थापित की गई जो साधारणतया अनुकरणीय संविधान समिति के नाम से कही जाती है। उस समिति को इस उद्देश्य से स्थापित किया गया कि वह यह बताये कि देशी राज्यों के लिये किस प्रकार का संविधान समुपयुक्त होगा। उस समिति में अधिकतर देशी राज्यों के ही सदस्य थे। उस समिति ने यह प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है कि देशी राज्यों का संविधान यथा-सम्भव प्रान्तों के संविधान के अनुरूप ही हो और यह भी कहा कि इस प्रस्ताव को कार्यान्वित करने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि देशी राज्यों के लिये प्रान्तों के अध्याय में जो रूपभेद किये जाएं उनका उल्लेख भारतीय संविधान के एक पृथक अध्याय में हो। इसी सुझाव को ध्यान में रखकर भारतीय संविधान में भाग 6-क को समाविष्ट का करने प्रस्ताव उपस्थित किया गया है।

इस अवसर पर मैं देशी राज्यों तथा प्रान्तों के भी कुछ लोगों की एक भ्रान्ति को मिटाना चाहता हूं। उन्हें यह भ्रम है कि भारतीय संविधान में देशी राज्यों के शासन के सम्बन्ध में एक भाग उच्च पदस्थ लोगों के कहने पर समाविष्ट किया जा रहा है और वास्तव में राज्य-मंत्रणालय उसे थोप रहा है और राज्यों के लोग विवश होकर उसे स्वीकार कर रहे हैं। मैं इस सभा में इस अवसर पर यह घोषित करना चाहता हूं कि उनका यह विचार गलत है। देशी राज्यों के लोग भारतीय स्वातंत्र्य-संग्राम के प्रारम्भ से ही प्रान्तों के लोगों के साथ सहयोग करते रहे हैं। देशी राज्यों में विभिन्न संविधान-सभाओं के अस्तित्व में आने का कारण यह था कि 1946 में मंत्रि-प्रतिनिधि मंडल ने जो वक्तव्य निकाले उनमें और भारतीय स्वातंत्र्य अधिनियम तथा मंत्रि-प्रतिनिधि मंडल की संविधान सभा की योजना में देशी राज्यों के लिये एक भिन्न प्रक्रिया रखी गई थी। मैं इस अवसर पर उस सभा का स्मरण कराता हूं जो 1946 में मैसूर में हुई थी। जब कि मंत्रि-प्रतिनिधि मंडल यहां उपस्थित था, जिसमें त्रावणकोर, कोचीन, पुडुकोटाह तथा मैसूर के जन-आन्दोलनों के प्रतिनिधि

[श्री पी. गोविन्द मेनन]

आये थे। उस सभा में लोक प्रतिनिधियों ने एक मत से यह प्रस्ताव स्वीकार किया था कि भारत की संविधान-सभा देशी राज्यों के लिये भी एक संविधान बनाये। अर्थात् राज्य-मंत्रणालय के योजना बनाने के पूर्व ही दक्षिण भारत के देशी राज्यों के लोक प्रतिनिधि मैसूर में मई, 1946 में समवेत हुए और उन्होंने यह निर्णय किया कि भारतीय संविधान सभा ही देशी राज्यों के लिये संविधान बनाये। इसके पश्चात्, जैसा कि मैं निवेदन कर चुका हूं, राव समिति ने भी, जिसमें अधिकतर देशी राज्यों के ही प्रतिनिधि थे यह निर्णय किया कि यह संविधान-सभा ही सारे भारत के लिये एक संविधान का निर्माण करे क्योंकि यह भारत के लोगों की जिनमें देशी राज्यों के लोग भी सम्मिलित हैं इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करती है।

इस प्रसंग में मैं उस प्रस्ताव को सुनाना चाहता हूं जिसे त्रावणकोर-कोचीन राज्य के विधान मंडल ने पारित किया था। वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित प्रतिनिधियों की उस सभा ने इस प्रस्ताव को पारित करने की आवश्यकता का अनुभव किया। वह प्रस्ताव यह था:—

"त्रावणकोर और कोचीन के संयुक्त राज्य की यह विधान-सभा उसमें सन्निहित शक्ति को प्रयोग करते हुए यह संकल्प करती है कि:

(1) त्रावणकोर-कोचीन राज्य भारतीय राज्य-संघ अर्थात् भारत के राज्यों में से एक राज्य होगा।

(2) त्रावणकोर-कोचीन राज्य के लिये एक पृथक संविधान का निर्माण करना उस राज्य के लोगों की आकांक्षाओं से और भारतीय संघ के एक संघांग के रूप में उस राज्य की स्थिति से असंगत है।

(3) इस राज्य के शासन के सम्बन्ध में संविधान में जो उपबन्ध रखे जाएं वे यथा सम्भव उन्हीं उपबन्धों के समान हों जो उन संघांगों के सम्बन्ध में हों जो प्रान्त कही जाती हैं; और भारतीय संविधान-सभा द्वारा निर्मित भारतीय संविधान इस राज्य को भी लागू होगा।"

इसे देखने के पश्चात् यह विचार करना निरर्थक है कि देशी राज्यों के लोगों की इच्छा इसके अतिरिक्त कुछ और है। उनकी यही इच्छा है कि भारत की संविधान सभा देशी राज्यों तथा प्रान्तों दोनों के लिये संविधान बनाये। देशी राज्यों के लोगों की हमेशा यही इच्छा रही है कि भारत में एकता हो और भारत सरकार देशी राज्यों तथा प्रान्तों दोनों की सरकार हो।

जब एक बार यह आधारभूत सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाता है और यह समझ लिया जाता है कि देशी राज्यों के लोगों की यह इच्छा है तो राज्य-मंत्रणालय ने पिछले दो या तीन वर्षों में जो कुछ किया है वह तर्कपूर्ण प्रतीत होगा। उनका

यह निर्णय है कि केन्द्र की विधायी तथा कार्यपालिका शक्ति का विस्तार देशी राज्यों तक होगा, सारे संघ के वित्त का एकीकरण होगा और भारत की संविधान सभा देशी राज्यों के संविधान का भी निर्माण करेगी। ये सब बातें इस निर्णय से सुसंगत हैं। मैं सभा को सूचित करना चाहता हूं कि इस पर भी देशी राज्यों में, तथा प्रान्तों में भी, कुछ लोगों को इस सम्बन्ध में भ्रम है। भारत सरकार के प्रभुत्व की उन की दुखद स्मृतियां फिर जाग्रत हो उठती हैं। मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि अंग्रेजों के शासनकाल में भारत सरकार का जिस प्रकार का प्रभुत्व था उससे संघ सरकार का प्रभुत्व बिल्कुल भिन्न होगा। यह आवश्यक है कि संघ सरकार का इस प्रकार का प्रभुत्व हो। 15 अगस्त, 1947 के पूर्व देशी राज्यों के लिये भारत सरकार एक विदेशी सरकार थी और अंग्रेजों की सर्वसत्ता का प्रतिनिधित्व करती थी। इस लिये उन दिनों भारत सरकार जो भी करती थी वह वास्तव में बाहर से हस्तक्षेप समझा जाता था। किन्तु इस संविधान के पारित होने पर भारत सरकार का स्वरूप ही बदल जायेगा। प्रान्तों के लोगों को यह न समझना चाहिये कि वह उन्हीं की सरकार होगी और देशी राज्यों के लोगों को यह न समझना चाहिये कि वह किन्हीं और लोगों की सरकार होगी। संविधान में जब कभी और जहां कहीं "संसद", "राष्ट्रपति" और "भारत सरकार" शब्द आये हैं उनके बारे में यही समझना चाहिये कि उनसे भारत के लोगों की, जिन में देशी राज्यों के लोग भी सम्मिलित हैं, सर्वसत्ता व्यक्त होती है। दूसरे शब्दों में देशी राज्य तथा प्रान्त अपनी सर्वसत्ता का एकीकरण करने तथा भारत में अखंड सर्वसत्ता स्थापित करने जा रहे हैं।

15 अगस्त, 1947 को यह हुआ कि प्रत्येक देशी राज्य सर्वसत्ताधारी राज्य हो गया और देशी राज्यों के नरेश स्वतंत्र हो गये। राज्य-मंत्रालय के पिछले दो या तीन वर्षों के प्रयत्नों के फलस्वरूप देशी राज्यों के नरेशों को अंग्रेजों से जो सर्वसत्ता और स्वतन्त्रता मिली थी वह भारत के लोगों को, देशी राज्यों के लोगों को, सौंप दी गई। इस आधारभूत तथ्य को नहीं भूलना चाहिये। इस वाद-विवाद में एक सदस्य के बाद दूसरे सदस्य ने राज्य मंत्रणालय के कार्यक्रम के दोषों को बताया है, किन्तु दोष बताते हुए हमें इसका स्मरण नहीं रहा कि राज्य-मंत्रणालय ने पिछले दो वर्षों में, अथवा इससे कुछ अधिक काल में, एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किया है। वह कार्य यह है कि उसने देशी राज्यों के नरेशों से अधिक लेकर उसे देशी राज्यों के लोगों को सौंप दिया है।

श्रीमान, इस तर्क में बहुत सार है कि शक्ति के हस्तान्तरण से तब तक लाभ न उठाया जाये जब तक शक्ति हस्तान्तरण के समय जो शर्तें रखी गई थीं उन्हें पूरा किया जाये। सरदार पटेल ने अपने वक्तव्य में कल हम से सारे चित्र को, अर्थात देशी राज्यों की पूरी योजना को, देखने के लिये प्रार्थना की और मेरे विचार से कोई भी तर्कप्रिय व्यक्ति इस पर आपत्ति नहीं करेगा। त्रावणकोर तथा अन्य देशी राज्यों के लोग हमेशा से भारत के लोगों की सर्वसत्ता का समर्थन करते रहे हैं। भारत के लोगों में देशी राज्यों के लोग भी सम्मिलित हैं।

इस कारण आज मैं बहुत हर्ष का अनुभव कर रहा हूं। यह देखकर कि संविधान में यह उपबन्ध रख कर हम भारत में एकता स्थापित करने जा रहे हैं और अब

[श्री पी. गोविन्द मेनन]

देशी राज्यों और प्रांतों में कोई अन्तर नहीं रह जायेगा मुझे उस आदमी के समान हर्ष हो रहा है जिसका जीवन स्वप्न पूरा हो गया हो। एक दो विषयों के सम्बन्ध में अन्तर किया गया है और यह सभी को विदित है। जहां प्रान्तों में राज्यपाल होंगे वहां देशी राज्यों में राजप्रमुख होंगे। उनके नियुक्ति के ढंग में भी कुछ अन्तर है। उनकी उपलब्धियों में भी कुछ अन्तर है। इसके अतिरिक्त हमारे विचाराधीन जो योजना है उसके अन्तर्गत प्रान्तों और देशी राज्यों के बीच, कोई अन्तर नहीं रखा गया है।

इस विषय के सम्बन्ध में सामान्यतः इन बातों को कहने के पश्चात् मैं एक बात अपने राज्य, अर्थात् त्रावणकोर-कोचीन राज्य के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं। प्रस्तावित संशोधनों के सम्बन्ध में श्री के.सी. रेड्डी ने जो कुछ कहा है उससे अधिक मैं और कुछ नहीं कहना चाहता क्योंकि उनसे अच्छी तरह मैं कुछ कह भी नहीं सकूंगा। सरदार पटेल ने कल अपने वक्तव्य में मैसूर राज्य की तथा त्रावणकोर-कोचीन राज्य की चर्चा की थी और कहा था कि उद्देश्य यह नहीं है कि अनुच्छेद 306-ख त्रावणकोर-कोचीन तथा मैसूर के समान थोड़े बहुत समुन्नत राज्यों को लागू किया जाये। उस वक्तव्य के लिये मैं सरदार पटेल का आभारी हूं। इस अवसर पर मैं यह कहना चाहता हूं कि त्रावणकोर-कोचीन राज्य में बहुत पहले से प्रतिनिधि संस्थाएं रही हैं। यदि मैं गलती नहीं कर रहा हूं तो मैं समझता हूं कि त्रावणकोर-राज्य में 1860 से ही प्रतिनिधि संस्थाएं रही हैं और कोचीन में 1937 से एक प्रकार का उत्तरदाई शासन रहा है। भारत के किसी देशी राज्य अथवा प्रान्त में वयस्क मताधिकार को व्यवहार में लाने के पूर्व ही इन दो राज्यों में वह व्यवहार में लाया गया है और एक वर्ष पूर्व कोचीन में तथा 6 मास पूर्व त्रावणकोर में उसके आधार पर निर्वाचन हुए हैं। मेरे विचार से मैं यह ठीक ही कह रहा हूं कि त्रावणकोर और कोचीन में भारतीय कांग्रेस तथा उसकी संस्थाओं को पहले पहल वयस्क मताधिकार के आधार पर होने वाले निर्वाचन में भाग लेना पड़ा। इस आधार पर निर्वाचन होने पर भी त्रावणकोर और कोचीन ने कांग्रेस के उम्मीदवारों को विधान-मंडलों के लिये बहुत बड़ी संख्या में निर्वाचित करके उस संस्था को सम्मानित किया।

इन राज्यों के समुन्नत होने के कारण ही कल सरदार पटेल ने यह कहा कि उद्देश्य यह नहीं है कि अनुच्छेद 306-ख के समान कोई उपबन्ध सभी देशी राज्यों को समान रूप से लागू किया जाये। इस वक्तव्य से मेरी यह धारणा हुई कि यदि अनुसूची के भाग-3 में के सभी राज्य मैसूर और त्रावणकोर-कोचीन के समान समुन्नत होते तो सम्भवतः अनुच्छेद 306-ख के समान किसी उपबन्ध को संविधान में समाविष्ट करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती।

मैं एक बात और कह कर समाप्त कर देना चाहता हूं। अनुच्छेद 306-ख के सम्बन्ध में देशी राज्यों के लोगों की विभिन्न भावनाएं हैं। त्रावणकोर-कोचीन के निवासी होने के कारण हमने यह विचार किया कि इसकी आवश्यकता नहीं है और विधान-सभा में हमने इस आशय का एक प्रस्ताव पारित किया। किन्तु हम केवल त्रावणकोर-कोचीन की ही स्थिति से परिचित हैं। सरदार पटेल तथा राज्य मंत्रणालय सभी राज्यों तथा प्रान्तों की स्थिति से परिचित हैं और उनका यह विचार

है कि इस प्रकार के उपबन्ध की आवश्यकता है। मतभेद होते हुए भी जब हम जो कुछ इस सभा में कहा गया है उसे स्वीकार कर रहे हैं तो वह इस कारण कि जिस व्यक्ति को अधिक सूचना तथा अनुभव प्राप्त हो उसी की बात रहनी चाहिये। साथ ही, जैसा कि मैं कह चुका हूं, हम इसके लिये आभारी हैं कि राज्यों की स्थिति में जो अन्तर है उसे राज्य-मंत्री ने स्वीकार किया है। इन शब्दों के साथ श्रीमान, जो संशोधन सभा में उपस्थित किये गये हैं उनका मैं हृदय से समर्थन करता हूं। श्रीमान, मैं आपको धन्यवाद देता हूं।

*__श्री हिम्मत सिंह के. महेश्वरी__ (सिक्किम और कूच बिहार राज्य): अध्यक्ष महोदय यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं सभा के केवल दो तीन मिनट लूंगा और केवल उस संशोधन के सम्बन्ध में बोलूंगा, जिसे मेरे माननीय मित्र श्री दास ने उपस्थित किया था, और जो कुछ भत्तों पर आय-कर के सम्बन्ध में है। विचाराधीन प्रस्तावों में शासकों की निजी थैली को बनाये रखने और उसे सभी करों से मुक्त रखने की प्रत्याभूति दी गई है। किन्तु अन्य भत्तों के सम्बन्ध में यह उन्मुक्ति नहीं है। इसका प्रभाव राजमाताओं, भूतपूर्व शासकों की विधवाओं पर पड़ेगा, जिन्हें अपने जीवन-काल तक ही भत्ते मिलेंगे। यदि उनके भत्तों से आय कर तथा उत्तर कर की राशि घटा दी गई तो उन्हें बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। उन महारानियों और रानियों के भत्ते, जिन के पति सौभाग्य से जीवित हों, आय कर से मुक्त होंगे और वे शासक की निजी थैली का भाग समझे जायेंगे। यदि दुर्भाग्य से इनमें से कोई महिला विधवा हो जाये तो मेरे विचार से उसकी स्थिति पहले के समान ही रहेगी और वे अपने लड़कों से भत्ते पाती रहेंगी और ये भत्ते शासक की निजी थैली का भाग होने के कारण आय-कर से मुक्त होंगे। इस प्रकार सधवा महारानियों और रानियों तथा उन विधवा महारानियों और रानियों के बीच, जिन के पति वर्तमान प्रसंविदाओं के अस्तित्व में आने के पूर्व मर गये हों, इन उपबन्धों द्वारा विभेद बरता जायेगा। श्रीमान, मेरे विचार से, राजपरिवार की इन महिलाओं के भत्तों की तुलना वेतनों से नहीं की जा सकती। ये भत्ते पोषण के लिये हैं। ये महिलाएं पहले सुख और सम्पन्नता में जीवन बिताती रही हैं। अब वे यह देखेंगी कि आय कर के कारण उनके भत्ते बहुत कम होते जा रहे हैं। सभा को यह विदित है कि राष्ट्रपति, राज्यपालों तथा कुछ अन्य प्रतिष्ठित लोगों के भत्ते आय कर से मुक्त किये जाने वाले हैं। केवल उनके वेतनों पर कर लग सकता है भत्तों पर नहीं।

इसलिये मैं माननीय उप-प्रधान मंत्री महोदय तथा इस सभा से अपील करता हूं कि वे इस विषय पर स्त्री-सम्मान की दृष्टि से तथा उदारता से विचार करें और जितने समय तक ये थोड़ी सी अभागिन महिलाएं जीवति रहें उतने समय तक उनके जीवन को दुखद न बनायें। कुछ देशी राज्यों में श्रीमान; इन अभागिन महिलाओं का जीवन इस समय भी बहुत दु:खद है। अपने पुत्रों से उनके सम्बन्ध बिगड़े हुए हैं। यदि उन के भत्तों को बहुम कम किया गया तो वे बहुत दुखी हो जायेंगी। क्योंकि वर्तमान शासकों से उन्हें किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलेगी। मुझे आशा है कि यह सभा इस पर विचार करेगी और कम से कम विधवाओं को आय कर तथा अन्य करों से मुक्त कर देगी।

*__अध्यक्ष:__ श्री गोकुल लाल असावा।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।

***अध्यक्षः** मैं उन्हें बुला चुका हूं।

***श्री गोकुल लाल असावा** (संयुक्त राज्यः राजस्थान): अध्यक्ष महोदय, इस ऐतिहासिक अवसर पर जब देशी राज्यों के लोगों के इतिहास का एक नवीन अध्याय आरम्भ होने जा रहा है, मैं अपने कुछ विचार व्यक्त करना चाहता हूं। सरदार साहिब के स्पष्ट तथा विस्तृत वक्तव्य के पश्चात् मेरे विचार से हमें बिना किसी कठिनाई अथवा संकोच का अनुभव किये हुए प्रस्तुत संशोधनों को, विशेषतः अनुच्छेद 306-ख को, स्वीकार कर लेना चाहिये। मेरे विचार से इस प्रकार के उपबन्धों को संविधान में समाविष्ट करने का किसी कारण विरोध नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त यद्यपि प्रसंविदा के उपबन्ध में कहा गया है कि राजप्रमुख तथा मंत्रिपरिषद् दोनों अपने कृत्यों के निर्वहन के सम्बन्ध में सामान्यतः भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन होंगे किन्तु वर्तमान अनुच्छेद में यह कहा गया है कि केवल राज्यों की सरकारें सामान्य नियंत्रण के अधीन रहेंगी। मेरे विचार से यह एक सुधार है।

एक बार और कह कर मैं समाप्त कर दूंगा। जहां तक मैं इस सभा में तथा इसके बाहर कुछ लोगों की भावनाएं समझ पाया हूं, आपकी आज्ञा से मैं यह कहना चाहता हूं कि उन्हें पहले और आज भी जिस बात से थोड़ी बहुत चिंता है वह सामान्य नियंत्रण का सिद्धान्त नहीं है किन्तु उसे प्रयोग में लाने का ढंग, उपाय तथा उस उपाय का विस्तार है। मुझे आशा है कि जिन लोगों पर सामान्य नियंत्रण आदि रखने का दायित्व होगा वे इस महत्वपूर्ण तथ्य को ध्यान में रखेंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से अब कोई महोदय नहीं बोलना चाहते। श्री मुंशी, क्या आप उत्तर देंगे?

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बईः जनरल): अध्यक्ष महोदय, सरदार पटेल की विस्तृत तथा ओजस्वी विवेचना के पश्चात् अब किसी विस्तृत उत्तर की आवश्यकता नहीं रह गई है। मैं केवल एक दो प्रश्नों की चर्चा मात्र करूंगा। पहले मैं अनुच्छेद 274 घ-घ को उठा रखने के लिये सभा की अनुमति चाहता हूं। कहा गया है कि उस में कुछ पारिभाषिक दोष रह गया है और मसौदा-समिति उस की परीक्षा करना चाहती है। जहां तक संशोधनों का सम्बन्ध है, मैं अपने माननीय मित्र श्री सन्तानम् द्वारा उपस्थित दो संशोधनों को, अर्थात् संशोधन संख्या 276 और 278 को, स्वीकार करने के लिये तैयार हूं। इन दो संशोधनों के अतिरिक्त मैं अन्य संशोधनों का विरोध करता हूं। उनकी व्याख्या की जा चुकी है और इसकी आवश्यकता नहीं है कि सभा इन संशोधनों को स्वीकार करे।

मैं एक दो विषयों की चर्चा करना चाहता हूं। जैसा कि प्रोफेसर असावा ने अभी कहा था अनुच्छेद 306-ख एक बहुत उपयोगी उपबन्ध है और मुझे विश्वास

है कि जिन सदस्यों को इस पर आपत्ति थी उन्हें भी अब संतोष हो गया होगा। अनुच्छेद 306-ख के सम्बन्ध में जो नीति है उसे अधिकृत रूप से सरदार पटेल ने बयान कर दिया है और मेरे विचार से इस बारे में अधिक कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। वक्तव्य में यह गया है और मैं स्वतन्त्र रूप से भी यह मत प्रकट करता हूं, कि कोई कारण नहीं है कि मैसूर तथा त्रावणकोर कोचीन के संघ को अनुच्छेद 306-ख लागू किया जाये, क्योंकि मैं इन राज्यों की स्थिति से परिचित हूं। जब तक ये राज्य भूतपूर्व दीवानों से प्राप्त सुस्थिर प्रशासन का परित्याग न करें तब तक इस उपबन्ध को लागू करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी और मुझे इस का हर्ष है कि जिस प्रकार वहां का प्रशासन इस समय चल रहा है उसके अधीन उस परम्परा की रक्षा होगी।

अपने मित्र श्री जयनारायण व्यास की केवल दो बातों के सम्बन्ध में मैं बोलना चाहता हूं। एक बात उन्होंने यह कही कि देशी राज्यों में सामन्तशाही पर नियंत्रण रखना चाहिये। उस पर केवल प्राधिकार-प्रयोग से नियंत्रण नहीं रखा जा सकता। विधि द्वारा, अथवा शक्तिप्रयोग से, उनकी जड़ उखाड़ने से उन पर नियंत्रण नहीं रखा जा सकता। देशी राज्यों में लोकतंत्रात्मक व्यवस्था स्थापित होने से उनका प्रभाव तथा उनकी प्रतिष्ठा कम हो गई है। किन्तु उन्हें बिल्कुल ही समाप्त नहीं किया जा सकता। लोगों को चाहिये कि वे उन सामन्तों को समाज के ही अंग बनाने का प्रयास करें। देश की स्थिति में जो परिवर्तन हुआ है उसके पूर्व यह कहा जा सकता था कि "सामन्तों को समाप्त कर देना चाहिये", किन्तु जो लोग क्रांति के पश्चात् भी सुरक्षित हैं वे अन्य लोगों के समान की गणराज्य के नागरिक हैं। किन्तु लोगों का और विशेषत: प्रशासन का यह कर्तव्य है कि वे विधि के शासन को इस प्रकार स्थापित करें कि सामन्तशाही के सभी अवशेष समाप्त हो जाएं। यह तुरन्त ही नहीं किया जा सकता और यदि तुरन्त ही कोई कदम उठाया गया तो उसका इन राज्यों के लोकतन्त्र पर, जो इस समय शैशवावस्था ही में हैं बड़ा बुरा प्रभाव पड़ेगा।

उन्होंने दूसरी बात यह कही कि नरेशों को नागरिकता का अधिकार नहीं प्रदान करना चाहिये। हमें हमेशा के लिये यह अच्छी प्रकार समझ लेना चाहिये कि वे सभी व्यक्ति, जिनका भारत में जन्म हुआ है भारत के नागरिक हैं। जैसा कि सरदार पटेल ने कहा है, इस देश में "रक्तहीन क्रान्ति" हुई है किन्तु उसके द्वारा हम विधि-बहिष्कृत लोगों का कोई वर्ग नहीं स्थापित करना चाहते थे। इस प्रकार के दृष्टिकोण से इस समस्या का तुरन्त हल होना तो दूर रहा वह सन्तोषजनक ढंग से भी हल नहीं हो सकेगी। अब देशी राज्यों में बिल्कुल भिन्न राज व्यवस्था स्थापित हो गई है और वहां के नवीन वातावरण में अब जनसाधारण को तथा उन लोगों को जो अभी तक शासक रहे हैं, घुल-मिल कर रहना है। केवल इस प्रकार ही हम इस क्रान्ति को पूर्णतया सफल कर सकते हैं।

श्रीमान, मैं अपने मित्र श्री गोविन्द मेनन के इस विचार से सहमत हूं कि यह एक ऐतिहासिक अवसर है और उसके कारण मुझे उतनी ही प्रसन्नता है जितनी कि उनको है। मुझे स्मरण है कि 1947 के आरम्भ में इस सभा में देशी राज्यों का प्रतिनिधित्व केवल श्री गोविन्द मेनन ही करते थे। उनका यह विचार था कि पुरानी व्यवस्था का समूल अन्त हो जाना चाहिये और देशी राज्यों को अन्य प्रदेशों

[श्री के.एम. मुंशी]

के साथ समाविष्ट कर देना चाहिये। अपने उद्देश्य को फलीभूत होते देख कर उन्हें कितनी प्रसन्नता हो रही होगी इसका मैं आसानी से अनुभव कर सकता हूं।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह एक ऐतिहासिक अवसर है। सरदार पटेल की प्रतिभा तथा राजनीतिज्ञता के कारण हम सारे भारत का एकीकरण करने में सफल हुए हैं (*वाह वाह*)। पाकिस्तान के पृथक् हो जाने के पश्चात् भी भारत एक विशाल देश है और वह इस समय इतना सुगठित तथा संगठित है जितना कि इतिहास में पहले कभी नहीं रहा है। अब यह हमारा कर्त्तव्य है, विशेषत: भावी संसद तथा भावी भारत सरकार का कर्तव्य है कि वे देश के विभिन्न भागों का इस प्रकार एकीकरण करें कि हमारा राष्ट्र एक सुगठित तथा सशक्त राष्ट्र हो सके। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि मुगल तथा ब्रिटिश काल के भग्नावशेष इन देशी राज्यों की विभीषिका का अन्त हो गया है और अब भारत के सर्वसत्ताधारी लोग उत्तरोत्तर शक्तिसम्पन्न होंगे और उन आदर्शों को प्राप्त करेंगे जिनका उन्होंने देश के अनुसरण के लिये हमारे संविधान की प्रस्तावना में उल्लेख किया है।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, क्या मैं जान सकता हूं कि सशस्त्र बलों को संघ के बलों में समाविष्ट करने के सम्बन्ध में मैंने जो संशोधन अर्थात् संशोधन संख्या 246 उपस्थित किया है उसके सम्बन्ध में श्री मुंशी को क्या कहना है?

***अध्यक्ष:** क्या आप उस संशोधन को स्वीकार कर रहे हैं?

***श्री के.एम. मुंशी:** मैं उस संशोधन को स्वीकार नहीं करता। मैं बता चुका हूं कि श्री सन्तानम् ने जो दो संशोधन उपस्थित किये हैं उनके अतिरिक्त मैं किसी अन्य संशोधन को स्वीकार नहीं करना चाहता।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या देशी राज्यों के सशस्त्र बल संघीय बलों में समाविष्ट नहीं किये जा सकते?

***श्री के.एम. मुंशी:** यह एक अनुच्छेद में स्पष्ट कर दिया गया है कि देशी राज्यों में जो बल रह गये हैं वे संघीय बलों के भाग समझे जायेंगे। यदि माननीय सदस्य 1935 के भारत-शासन-अधिनियम की संघ सूची को देखें तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि उसमें एक पृथक शीर्षक इस प्रकार है—"राज्य के सशस्त्र बल"। यह प्रविष्टि निकाल दी गई है। अब भारत की केवल एक सेना होगी। वह संघ की सेना होगी। अनुच्छेद 246 के अधीन राज्यों में जो सेनाओं की टुकड़ियां रह गई हैं वे संघीय सेना में समाविष्ट हो जायेंगी। किन्तु संगठन आदि की दृष्टि से उन्हें पूर्णतया समाविष्ट करने में अभी कुछ समय लगेगा। उस समय तक सभी बातों का विनियमन राष्ट्रपति करेंगे। साथ ही यदि संसद इस कार्य को शीघ्र ही सम्पन्न करना चाहे तो उसे इसके लिये इस अनुच्छेद द्वारा शक्ति दी गई है। इस समय जैसी स्थिति है उसमें उन्हें तुरन्त ही समाविष्ट नहीं किया जा सकता है। उन्हें पूर्णतया समाविष्ट करने में कुछ समय लगेगा। इसी कारण अनुच्छेद 246 का इस प्रकार मसौदा तैयार किया गया है।

*__अध्यक्षः__ अब मैं जो विभिन्न संशोधन उपस्थित किये गये हैं उन पर मत लूंगा। मैं जिस प्रक्रिया का अनुसरण करना चाहता हूं वह इस प्रकार है: मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा उपस्थित किये गये प्रत्येक संशोधन को उठाऊंगा और प्रत्येक पर अलग मत लेकर उसे निबटा दूंगा। इसके पश्चात् मैं पूरे भाग पर मत लूंगा।

संशोधन संख्या 217, अर्थात् अनुच्छेद 211-क के सम्बन्ध में कई संशोधन हैं। पहले दो, संशोधन संख्या 237 और 238 हैं। इन दो संशोधनों को मि. नजीरुद्दीन अहमद ने उपस्थित किया था। वे बहुत कुछ मसौदे के सम्बन्ध में हैं। मैं कह नहीं सकता कि वे उन्हें मतदान के लिये प्रस्तुत कराना चाहते हैं या नहीं। वे सभा में उपस्थित नहीं हैं। इसलिये मैं उन पर मत लूंगा।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 211-क में, 'modifications [रूपभेदों]' शब्द के स्थान पर 'adaptations, modifications [अनुकूलनों, रूपभेदों]' शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में,—

(1) प्रस्तावित अनुच्छेद 211-क की मद (3) में 'shall be omitted [लुप्त कर दिये जायेंगे]' शब्दों के स्थान पर 'shall not apply to this part [इस भाग को लागू नहीं होंगे]' शब्द रखे जाएं;

(2) प्रस्तावित अनुच्छेद 211-क की मद (4) के पैरा (क) में 'in clause (1) [खण्ड (1) में]' शब्दों के पश्चात् 'for the time being specified in the First Schedule [इस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित]' शब्द रखे जाएं।"

संशोधन गिर गया।

*__माननीय श्री के. सन्तानम्__ (मद्रास: जनरल): मेरे संशोधन संख्या 276 के सम्बन्ध में मुझसे श्रीमान, यह कहा गया है कि "राजधानी" शब्द के स्थान पर "सरकार का मुख्य स्थान" शब्द रखे जायेंगे।

*__श्री के.एम. मुंशी:__ यह एक शाब्दिक संशोधन है जिसे स्वीकार करने के लिये मैं तैयार हूं।

*__अध्यक्षः__ एक छोटे से परिवर्तन का सुझाव रखा गया है और वह यह है कि "राजधानी" शब्द के स्थान पर "सरकार का मुख्य स्थान" शब्द रखे जाएं।

मेरे विचार से इस पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती। यह केवल शाब्दिक परिवर्तन है। संशोधन संख्या 276 को श्री मुंशी स्वीकार कर चुके हैं।

प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्तावित अनुच्छेद 211-क की मद (4) के पैरा (ख) के स्थान पर यह रखा जाए:–

"खण्ड (3) के स्थान पर यह खण्ड रखा जायेगा, अर्थात्:–

'(3) Unless he has his own residence in the principal seat of Government of his State, the Rajpramukh shall be entitled to the use of an official residence without payment of rent, and there shall be paid to the Rajpramukh such allowances as the President may, by general or special order, determine.

[(3) राजप्रमुख जो जबकि राज्य की सरकार के मुख्य स्थान में उसका अपना निवास-गृह न हो, तब बिना किराया दिये पदावास के उपयोग का हक होगा तथा उसको ऐसे भत्तों और विशेषाधिकारों का हक होगा जैसे कि राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करें।]' "

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम संशोधन संख्या 287 को उठाते हैं, जिसे श्री गुरुव रेड्डी ने उपस्थित किया है।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी:** श्रीमान, मैं इस पर जोर नहीं देता कि उस पर मत लिया जाए।

संशोधन, सभा की अनुमति से, वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम संशोधन संख्या 292 को उठाते हैं।

***काका भगवंत राय** (पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य-संघ): श्रीमान, मैं अपने इस संशोधन को वापस लेना चाहता हूं।

संशोधन, सभा की अनुमति से, वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्तावित अनुच्छेद 211-क की मद (10) के पैरा (क) में 'The President by general or

special order [राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा]' शब्दों के स्थान पर 'Parliament by law [संसद विधि द्वारा]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 278 के सम्बन्ध में एक संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 293, प्रोफेसर सक्सेना ने उपस्थित किया है। मैं पहले उस पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 10 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 278 में प्रस्तावित अनुच्छेद 197 के खण्ड (1) में 'President after consultation with the Rajpramukh [राजप्रमुख से परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति]' शब्दों के स्थान पर' 'Parliament by law [विधि द्वारा संसद]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 278 को श्री मुंशी स्वीकार कर चुके हैं।

प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्तावित अनुच्छेद 211-क की मद 13 में उल्लिखित अनुच्छेद 197 के स्थान पर यह रखा जाये:-

'197. (1) There shall be paid to the judges of each High Court such salaries as may be determined by the Predident after consultation with the Rajpramukh. Salaries, etc. of judges.

(2) Every judge shall be entitled to such allowances and to such rights in respect of leave of absence and pension as may from time to time be determined by or under law made by Parliament and, until so determined, to such allowances and rights as may be determined by the President in consultation with the Rajpramukh:

Provided that neither the allowances of a judge nor his rights in respect of leave of absence or pension shall be varied to his disadvantage after his appointment.

[अध्यक्ष]

[197. (1) प्रत्येक उच्च-न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतन दिये जायेंगे जैसे कि राजप्रमुख से परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति निर्धारित करे। न्यायाधीशों के वेतन इत्यादि

(2) प्रत्येक न्यायाधीश को ऐसे भत्तों के, तथा अनुपस्थिति छुट्टी के और निवृत्ति वेतनों के सम्बन्ध में ऐसे अधिकारों का जैसे संसद् निर्मित विधि के द्वारा या अधीन समय-समय पर निर्धारित किये जायें तथा जब तक इस प्रकार निर्धारित न हों, तब तक ऐसे भत्तों और अधिकारों का, जैसे कि राजप्रमुख से परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति निर्धारित करे, हक होगा:

परन्तु न तो न्यायाधीश के भत्ते और न उसके अनुपस्थिति-छुट्टी या निवृत्ति-वेतन-विषयक उसके अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन किया जायेगा।]' "

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष**: प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 220 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 235-क के खण्ड (1) में 'until Parliament by law otherwise provides [जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे]' शब्दों के स्थान पर 'until the President by order otherwise provides [जब तक कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष**: प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्तावित अनुच्छेद 211-क की मद (13) में उल्लिखित अनुच्छेद 197 से 'after consultation with the Rajpramukh [राजप्रमुख से परामर्श के पश्चात्]' शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***श्री आर.के. सिधवा**: मैं अपना संशोधन अर्थात् संशोधन संख्या 246, वापस लेना चाहता हूं।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 220 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 235-क के खण्ड (2) के अन्त में 'and the Union shall bear the expenses thereof [और संघ उनका खर्च उठायेगा]' शब्द जोड़ दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 237 निकाल दिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 237 संविधान से निकाल दिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 223 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 274-घघघ में 'President may by order [राष्ट्रपति आदेश द्वारा]' शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law [संसद विधि द्वारा]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, अनुच्छेद 274 घघ उठा रखा जाये और उस पर किसी दूसरे दिन विचार किया जाये।

***अध्यक्षः** अब मैं अनुच्छेद 302-क पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 302 के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये, अर्थात्ः—

Rights and Privileges of Rulers of Indian States.

'302A. In the exercise of the power of Parliament or of the Legislature of a State to make laws or in the exercise of the executive power of the Union or of a State, due regard shall be had to the guarantee or assurance given under any such covenant or agreement as is referred to in article 267A of this Constitution with respect to the personal rights, privileges and dignities of the Ruler of an Indian State.

[अध्यक्ष]

देशी राज्यों के शासकों के अधिकार और विशेषाधिकार।

[302-क. संसद की या किसी राज्य के विधान-मण्डल की विधि बनाने की शक्ति के प्रयोग में, अथवा संघ या किसी राज्य की कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में, देशी राज्य के शासक के वैयक्तिक अधिकारों, विशेषाधिकारों और गरिमा के विषय में ऐसी प्रसंविदा या करार के अधीन, जैसा कि इस संविधान के अनुच्छेद 267-क में निर्दिष्ट है, दी गई प्रत्याभूति या आश्वासन का सम्यक् ध्यान रखा जायेगा।]' "

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 302-क संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं अनुच्छेद 306-ख के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उन पर मत लूंगा। संशोधन संख्या 251 का भाग (2) उपस्थित नहीं किया जा सकता क्योंकि वह अनियमित है। प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 225 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 306-ख में से—'during a period of ten years from the commencement thereof or during such longer or shorter period as Parliament may by law provide in respect of any State [इसके प्रारम्भ से दस वर्ष की कालावधि के भीतर अथवा किसी ऐसी दीर्घतर या अल्पतर कालावधि के भीतर जिसे राज्य के बारे में संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे]' शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैं अपना संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 252, वापस लेना चाहता हूं।

संशोधन, सभा की अनुमति से, वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 225 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 306-ख के परन्तुक में 'President may by order [राष्ट्रपति आदेश द्वारा]' शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law [संसद विधि द्वारा]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 299 के सम्बन्ध में कुछ संशोधन हैं। मैं प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना के पहले संशोधन पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 299 में प्रस्तावित अनुच्छेद 258 खण्ड (1) के अन्त में ये शब्द जोड़ दिये जायें:—

'after that agreement' has been approved by Parliament [उस करार को संसद से अनुमोदित कराने के पश्चात्]' "

***अध्यक्ष:** अब मैं प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना के दूसरे संशोधन पर मत लूंगा, जिस का आशय मेरे विचार से वही है जो श्री वी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन संख्या 300 का है।

प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 299 में अनुच्छेद 258 के प्रस्तावित खण्ड (1) के उपखण्ड (क), (ख) और (ग) की गणना उस खण्ड के उपखण्ड (ख), (ग) और (घ) के रूप में की जाये और यह उपखण्ड (क) के रूप में प्रविष्ट किया जाये:–

(a) questions arising from or connected with the vesting in the Union of assets and liabilities of such States related to any of the matters enumerated in the Union List; [संघ–सूची में प्रगणित विषयों में से किसी के सम्बन्ध में ऐसे राज्यों की आस्तियों तथा दायित्वों को संघ में निहित करने के बारे में जो प्रश्न उठें उनके;]' "

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267–क के सम्बन्ध में प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना के नाम से दो संशोधन हैं। मैं पहले संशोधन पर मत लूंगा। वास्तव में वह संशोधन नहीं है बल्कि एक खण्ड को निकालने का प्रस्ताव है। प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 301 में से प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267–क निकाल दिया जाये।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं दूसरे संशोधन पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 301 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267–क के खण्ड 2 में 'by order of the President [राष्ट्रपति आदेश द्वारा]' शब्दों के स्थान पर 'by Parliament by law [संसद विधि द्वारा]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अब मैं श्री बी. दास के संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है किः

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन 301 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267-क के खण्ड (2) के पश्चात् यह नवीन खण्ड जोड़ दिया जायेः–

'(3) Where any sums are guaranteed or assured to any Ruler's family members or relations such sums be treated as part of privy purse and as free of tax.

(3) जहां किसी राज्य के शासक के परिवार के लोगों को अथवा संबंधियों को कोई राशियां प्रत्याभूत अथवा आश्वासित की गई हों वहां ये राशियां निजी थैली का भाग तथा कर-मुक्त समझी जायें।]' "

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 301 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 267-क के खण्ड (1) में 'to any ruler [शासक को]' शब्दों के पश्चात् 'or his family relations [अथवा उसके परिवार के सम्बन्धियों को]' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अब प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 270-क के सम्बन्ध में प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना के संशोधन पर मैं मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है किः

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 302 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 270-क के खण्ड (1) के अन्त में 'and approved by Parliament [जिन का संसद अनुमोदन करेगी]' शब्द जोड़ दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** दो संशोधनों द्वारा अर्थात् संशोधन संख्या 276 और 278 द्वारा संशोधित रूप में भाग 6-क पर अब मैं मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित भाग 6-क, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

भाग 6-क, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं नवीन अनुच्छेद 235-क पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 235 के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये, अर्थात्:-

'235A. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution, a State for the time being specified in Part III of the First Schedule having any armed force immediately before the commencement of this Constitution may, until Parliament by law otherwise provides, continue to maintain the said force after such commencement subject to such general or special orders as the President may from time to time issue in this behalf.

Armed forces in States Part III of the First Schedule.

(2) Any such armed force as is referred to in clause (1) of this article shall form part of the forces of the Union.

[235क.(1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित कोई राज्य, जो कि इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले सशस्त्र बलों को रखता था, उक्त बलों को ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् ऐसे साधारण या विशेष आदेश के अधीन रह कर, जैसे कि राष्ट्रपति समय-समय पर इस बारे में निकाले, तब तक बनाये रख सकेगा जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे।

प्रथम अनुसूची के भाग (3) में के राज्यों में के सशस्त्र बल।

(2) कोई ऐसे सशस्त्र बल, जैसे कि इस अनुच्छेद के खंड (1) में निर्दिष्ट हैं, संघ के सशस्त्र बलों का भाग होंगे।]' "

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 235-क संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 236, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 236, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

"अध्यक्ष: प्रस्ताव यह है कि:

"नवीन अनुच्छेद 274-घघघ संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 274-घघघ संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं अनुच्छेद 306-ख पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 306 के पश्चात् ये नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:-

Temporary provisions with respect to States in Part III of the First Schedule.

'306B. Notwithstanding anything contained in this Constitution, during a period of ten years from the commencement thereof, or during such longer or shorter period as Parliament may by law provide in respect of any State, the Government of every State for the time being specified in Part III of the First Schedule shall be under the general control of, and comply with such particular directions, if any, as may from time to time be given by the President, and any failure to comply with such directions shall be deemed to be a failure to carry out the Government of the State in accordance with the provisions of this Constitution:

Provided that the President may by order direct that the provisions of this article shall not apply to any State specified in the order.

[306ख. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी इसके प्रारम्भ से दस वर्ष की कालावधि के भीतर अथवा किसी ऐसी दीर्घतर या अल्पतर कालावधि के भीतर, जिसे किसी राज्य के बारे में संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे, प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य की सरकार राष्ट्रपति के साधारण नियंत्रण के अधीन होगी, तथा ऐसे विशिष्ट निदेशों का, यदि कोई हों, अनुवर्तन करेगी जैसे कि राष्ट्रपति समय-समय पर दे, और ऐसे निदेशों के अनुवर्तन में किसी प्रकार की असफलता इस संविधान के उपबन्धों के अनुसार शासन चलाने में असफलता मानी जायेगी:

प्रथम अनुसूची के भाग 3 में के राज्यों के विषय में अस्थायी उपबन्ध।

परन्तु राष्ट्रपति आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि इस अनुच्छेद के उपबन्ध आदेश में उल्लिखित किसी राज्य को लागू न होंगे।]' "

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 306-ख संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं अनुच्छेद 258 पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 258 के खंड (1) के स्थान पर यह खंड रखा जाये:-

'(1) Notwithstanding anything contained in this Chapter, the Government of India may, subject to the provisions of clause (2) of this article, enter into an agreement with the Government of a State for the time being specified in Part III of the First Schedule with respect to—

(a) the levy and colletion of any tax or duty leviable by the Government of India in such State and for the distribution of the proceeds thereof otherwise than in accordance with the provisions of this Chapter;

(b) the grant of any financial assistance by the Government of India to such State in consequence of the loss of any revenue which that State used to derive from any tax or duty leviable under this Constitution by the Government of India or from any other sources;

[अध्यक्ष]

(c) the contribution by such State in respect of any payment made by the Government of India under clause (1) of article 267-A of this Constitution,

when an agreement is so entered into, the provisions of this Chapter shall in relation to such State have effect subject to the terms of such agreement.

When an agreement is so entered into, the provisions of this Chapter shall in relation to such State have effect subject to the terms of such agreement.

[(1) इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, भारत सरकार, खंड (2) के उपबन्ध के अधीन रहते हुए, प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य की सरकार से–

(क) ऐसे राज्य में भारत सरकार द्वारा उद्गृहीत किये जाने वाले किसी कर या शुल्क के उद्ग्रहण और संग्रह करने तथा उसके आगम के, इस अध्याय के उपबन्धों से अन्यथा, वितरण करने के;

(ख) भारत सरकार द्वारा इस संविधान के अधीन उद्गृहीत की जाने वाले किसी कर या शुल्क से अथवा अन्य किन्हीं स्रोतों से जो राजस्व यह राज्य पाता था उसकी हानि के लिये ऐसे राज्य को भारत सरकार द्वारा वित्तीय सहायता अनुदान करने के;

(ग) अनुच्छेद 267-क के खंड (1) के अधीन भारत सरकार द्वारा दिये जाने वाले किसी देय धन के विषय में ऐसे राज्य द्वारा अंशदान करने के,

विषय में करार कर सकेगी, तथा जब ऐसा करार किया जाये तब इस अध्याय के उपबन्ध ऐसे राज्य के संबंध में ऐसे करार के निबन्धनों के अधीन रह कर ही प्रभावी होंगे।]' "

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 258 संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं अनुच्छेद 267-क पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है किः

"भाग 9 के अध्याय 1 में, अनुच्छेद 267 के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये, अर्थात्ः–

'267A. (1) Where under any covenant or agreement entered into by the Ruler of any Indian State before the commencement of this Constitution, the payment of

Privy Purse sums of Rulers.

any sums, free of tax, has been guaranteed or assured by the Government of the Dominion of India to any Ruler of such State as Privy Purse—

(a) such sums shall be charged on, and paid out of, the Consolidated Fund of India; and

(b) the sums so paid to any Ruler shall be exempted from all taxes on income.

(2) Where the territories of any such Indian State as aforesaid are comprised within a State specified in Part I or Part III of the First Schedule there shall be charged on, and paid out of, the Consolidated Fund of that State such contribution, if any, in respect of the payments made by the Government of India under clause (1) of this article and for such period as may, subject to any agreement entered into in that behalf under clause (1) of article 258 of this Constitution, be determined by order of the President.

[267क.(1) इस संविधान के प्रारम्भ से पहले जहां किसी देशी राज्य के शासक द्वारा की गई किसी प्रसंविदा या करार के अधीन ऐसे राज्य के शासक को निजी थैली के रूप में किन्हीं राशियों की करमुक्त देनगी भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा प्रत्याभूत या आश्वासित की गई है वहां–

शासकों की निजी थैली की राशि।

(क) वैसी राशियां भारत की संचित-निधि पर भारित होंगी तथा उसमें से दी जायेंगी; तथा

(ख) किसी शासक को दी गई वैसी राशियां, सभी आय पर करों से विमुक्त होंगी।

(2) उपर्युक्त जैसे किसी देशी राज्य के राज्य-क्षेत्र जहां प्रथम अनुसूची के भाग (1) या भाग (3) में उल्लिखित किसी राज्य में समाविष्ट हैं वहां इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन भारत सरकार द्वारा दी जाने वाली देनगियों के विषय में ऐसा अंशदान, यदि कोई हो, उस राज्य की संचित-निधि पर भारित होगा और

[अध्यक्ष]

उससे दिया जायेगा और ऐसी कालावधि के लिये जैसी कि अनुच्छेद 258 के खंड (1) के अधीन उस बारे में किये गये किसी करार के अधीन रहकर राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित करे।]' "

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 267-क संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं अनुच्छेद 270-क पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 270 के पश्चात् यह नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जायेः—

'270A. (1) As from the commencement of this Constitution—

Succession to property, assets, liabilities and obligations of Indian States.

(a) all assets relating to any of the matters enumerated in the Union List vested immediately before such commencement in any Indian State corresponding to any State for the time being specified in Part III of the First Schedule shall be vested in the Government of India, and

(b) all liabilities relating to any of the said matters of the Government of any Indian State corresponding to any State for the time being specified in Part III of the First Schedule shall be the liabilities of the Government of India, subject to any agreement entered into in that benalf by the Government of India with the Government of that State.

(2) As from the commencement of this Constitution the Government of each State for the time being specified in Part III of the First Schedule shall be the successor of the Government of the corresponding Indian State

as regards all property, assets, liabilities and obligations other than the assets and liabilities referred to in clause (1) of this article.

[270क.(1) इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर–

(क) संघ सूची में प्रगणित विषयों में से किसी से संबद्ध जो आस्तियां प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य में ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले निहित थीं वे सब भारत सरकार में निहित होंगी, और

(ख) उक्त विषयों में से किसी से संबद्ध जो दायित्व प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य की सरकार के थे वे सब ऐसे करार के अधीन रह कर जैसा कि उस बारे में भारत सरकार उस राज्य की सरकार से करे, भारत सरकार के दायित्व होंगे।

(2) प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य की सरकार उन सब सम्पत्ति, आस्तियों, दायित्वों और आभारों के बारे में, जो इस अनुच्छेद के खंड (1) में निर्दिष्ट आस्तियों और दायित्वों से भिन्न हैं, तत्स्थानी देशी राज्य की इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर उत्तराधिकारिणी होगी।]' "

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 270-क संविधान का अंग बना लिया गया।

इसके पश्चात् सभा दोपहर के भोजन के लिये चार बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

दोपहर के भोजन के पश्चात् सभा अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में फिर समवेत हुई।

अनुच्छेद 3 (पुनर्उपस्थित)

***अध्यक्षः** अब हम संशोधन संख्या 226 आदि आनुषंगिक संशोधनों को उठायेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी से अनुरोध करता हूं कि वे मेरी ओर से इन संशोधनों को उपस्थित करें।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मेरे विचार से इस प्रस्ताव को रस्मी तौर पर सभा के सामने रखना होगा कि वह इन संशोधनों में जिन अनुच्छेदों का उल्लेख है उनको पुनर्उपस्थित करने की आज्ञा देती है या नहीं।

***अध्यक्षः** ये आनुषंगिक संशोधन हैं और इन संशोधनों से उत्पन्न होते हैं जो आज स्वीकार किये गये हैं। किंतु चूंकि ये उन अनुच्छेदों के संबंध में हैं जो पारित किये जा चुके हैं, इसलिये उन अनुच्छेदों को पुनर्उपस्थित करने के लिये सभा की स्वीकृति की आवश्यकता है। क्या मैं यह समझूं कि सभा इसके लिये आज्ञा देती है?

***माननीय सदस्यः** जी हां।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, संविधान के मसौदे के उन उपबन्धों के संबंध में, जिन्हें संविधान सभा स्वीकार कर चुकी है, मैं इन आनुषंगिक उपबन्धों को उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 3 के परन्तुक के खंड (क) और (ख) के स्थान पर यह रखा जायेः–

'where the proposal contained in the Bill affects the boundaries of any State or States for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule, or the name or names of any such State or States, the views of the Legislature of the State, or as the case may be, of each of the States both with respect to the proposal to introduce the Bill and with respect to the provisions thereof have been ascertained by the President.

[जहां विधेयक में अन्तर्विष्ट प्रस्थापना का प्रभाव प्रथम अनुसूची के भाग 1 या भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य या राज्यों की सीमाओं पर अथवा किसी ऐसे राज्य का राज्यों के नाम या नामों पर पड़ता हो वहां जब तक कि विधेयक की पुरःस्थापना की प्रस्थापना के तथा उसके उपबन्ध, इन दोनों के संबंध में, यथास्थिति, राज्य के विधान-मंडल अथवा राज्यों में से प्रत्येक के विधान-मंडल के विचार राष्ट्रपति ने निश्चित रूप से से न जान लिये हों तब तक]' "

संशोधन संख्या 227।

***अध्यक्षः** क्या हम उन्हें एक-एक करके नहीं उठायेंगे? इसके संबंध में तीन संशोधन हैं।

(संशोधन संख्या 253 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डीः** माननीय सरदार पटेल ने जो वक्तव्य दिया है उसे ध्यान में रखते हुए मैं संशोधन संख्या 290 उपस्थित नहीं करना चाहता।

***अध्यक्षः** श्री पातस्कर। संशोधन संख्या 291 ।

***श्री एच.वी. पातस्कर** (बंबईः जनरल): श्रीमान, मैं आरम्भ में ही यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैं जिस संशोधन को उपस्थित करना चाहता हूं वह उस विषय के सम्बंध में नहीं है जिसके बारे में अभी एक संशोधन उपस्थित किया गया है। वह उस पूरे अनुच्छेद के संबंध में है जो पुनर्उपस्थित किया गया है। चूंकि यह अनुच्छेद पुनर्उपस्थित किया गया है इस लिये मुझे आशा है कि यह संशोधन नियमित ठहराया जायेगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान, मेरी एक नियम-सम्बंधी आपत्ति है। हमने जो उपबन्ध रखे हैं उनसे, मेरे विचार से, यह असंगत है। कोई भी विधि सभा के बहुमत से पारित होगी। सभा के एक छोटे वर्ग का मत लेने की कोई प्रक्रिया नहीं है। यह संशोधन अनियमित है।

***श्री एच.वी. पातस्करः** मैं यह स्वीकार नहीं करता कि वह इस कारण अनियमित है क्योंकि मैंने जिस उपबन्ध का प्रस्ताव रखा है उस प्रकार के उपबन्ध को रखने की हमें स्वतंत्रता है। मेरे ध्यान में केवल यह बात आई कि यह मसौदा-समिति के उस संशोधन के अन्तर्गत नहीं आता जिसे अभी उपस्थित किया गया है। चूंकि यह अनुच्छेद फिर उपस्थित किया गया है इसलिये सभा को इसकी स्वतंत्रता है कि वह इसके उपबन्धों को संशोधित करे। इस संशोधन को केवल इस कारण अनियमित नहीं कहा जा सकता। चूंकि पूरा अनुच्छेद फिर उपस्थित किया गया है इसलिये मुझे अपना संशोधन उपस्थित करने का अधिकार है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** लोक-सभा में प्रतिनिधित्व के लिये कुछ राज्यों को एक साथ रखा जा सकता है। संभव है कि हम यह न बता सकें कि कौन सदस्य किस राज्य का प्रतिनिधित्व करता है। यदि यह खंड पारित भी किया गया तब भी उसे प्रयोग में लाना संभव न होगा।

***श्री एच.वी. पातस्करः** अपना संशोधन उपस्थित करते समय कारण बता कर मैं इसे स्पष्ट कर दूंगा। मैंने यह उपबन्ध रखा है कि विधेयक के उपबन्धों का जिन क्षेत्रों पर प्रभाव पड़ता हो उनके प्रतिनिधियों के बहुमत से उसका विषय तय होगा। इस पर कोई आपत्ति नहीं की गई है।

***अध्यक्षः** क्या वह एक नवीन बात नहीं होगी?

***श्री एच.वी. पातस्करः** नवीन बात अवश्य होगी।

***अध्यक्षः** हम संविधान में इस आशय का कोई भी उपबन्ध रख सकते हैं कि कोई प्रश्न...

***श्री एच.वी. पातस्करः** अपना संशोधन उपस्थित करने के पूर्व मैं अपना तर्क उपस्थित करना चाहता हूं। मेरे विचार से इसकी आवश्यकता है।

***अध्यक्षः** आप अपना तर्क उपस्थित करें।

***श्री एच.वी. पातस्करः** जहां तक उस संशोधन का सम्बंध है, जिसे माननीय सदस्य महोदय ने अभी उपस्थित किया है वह एक प्रकार से ठीक ही है। अनुच्छेद 3 के मूल-मसौदे के अधीन प्रथम अनुसूची के भाग 3 में के राज्यों की सहमति प्राप्त करना आवश्यक था। अनुच्छेद 3 में हमने यह उपबन्ध रखा था कि जब तक राष्ट्रपति सिफारिश न करे, और जब तक राष्ट्रपति ने भाग 1 में के राज्यों के विधान-मंडलों के विचारों को मालूम न किया हो, और भाग 3 में के राज्यों पर प्रभाव पड़ने पर उनकी सहमति नहीं प्राप्त की हो जब तक संसद के किसी सदन में कोई विधेयक नहीं उपस्थित किया जा सकेगा। अब मसौदा-समिति की ओर से जो संशोधन उपस्थित किया गया है उसमें भाग 3 में के राज्यों की सहमति प्राप्त करने के संबंध में कोई उपबन्ध नहीं है और उन्हें भाग 1 में के राज्यों के स्तर पर लाया गया है। इन दोनों के संबंध में राष्ट्रपति केवल भाग 1 में के राज्यों के विचारों को मालूम करेगा। श्रीमान यह एक प्रकार से ठीक ही है। किंतु मुझे यह भय है कि जहां तक इस अनुच्छेद के शब्दों से इसके उद्देश्य की पूर्ति का सम्बंध है, यह संविधान में बहुत कुछ निष्प्राण अनुच्छेद रहेगा। मेरी यही धारणा है। इसी कारण मैंने इस संशोधन को प्रस्तुत किया है।

इस प्रकार के उपबन्ध के इतिहास के लिये हमें पहले 1919 का भारत-शासन-अधिनियम देखना होगा। उसमें इसका प्रथम परिचय मिलता है कि एक विदेशी सरकार ने भी यह अनुभव किया कि प्रांतों की सीमाओं में परिवर्तन करके उन्हें फिर निश्चित करने की आवश्यकता है और इसलिये 1919 के अधिनियम में इसी के समान एक उपबन्ध रखा गया। किंतु फिर भी 1919 से लेकर 1935 तक इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाया गया और वह इस कारण कि इस प्रकार के परिवर्तन से प्रति दिन के शासन में बाधा पहुंचती है, जो कोई भी सरकार पसन्द नहीं करती। इसलिये यद्यपि इस प्रकार का एक उपबन्ध था और 1919 से लेकर 1935 के काल में क्षेत्रों के नये गुट बनाने में उतनी कठिनाइयां नहीं थीं जितनी कि अब हैं, और आगे चल कर होंगी, किन्तु यह कदम नहीं उठाया गया और वह इस कारण कि उस समय की सरकार प्रति दिन के शासन-कार्य में तल्लीन थी और वह नहीं चाहती थी कि उसे यह बोझ उठाना पड़े। जिलों में भी यदि कुछ क्षेत्र एक जिले से हटाकर दूसरे जिले में रखे जाते हैं तो हमेशा बहुत हलचल होती है। जिन लोगों पर प्रशासन का भार होता है वे यह नहीं चाहते है प्रतिदिन के शासन में किसी प्रकार की बाधा पड़े। इस कारण 1919 के अधिनियम में इस प्रकार का उपबन्ध होने पर भी इस ओर कोई कदम नहीं उठाया गया।

इसके पश्चात् 1935 का अधिनियम आया। संभवतः इसका अनुभव किया गया कि संविधान में इस प्रकार के उपबन्ध को रखने मात्र से भी कठिनाइयां उठ खड़ी होंगी, यद्यपि इरादा यह था कि सिंध के बम्बई प्रांत में मिले रहने में अथवा उड़ीसा के बिहार प्रांत में मिले रहने में जो दोष है उसे दूर कर दिया जाये। उसके लिये 1935 के भारत-शासन-अधिनियम में दो धाराएं रखी गईं और इस अधिनियम के आरम्भ होने के पूर्व ही इस व्यवस्था को करने के संबंध में भी उपबन्ध रखे गये। मुझे इस संबंध में कुछ भी संदेह नहीं है कि इस प्रकार के उपबन्ध को रखने पर भी कोई बात नहीं होगी। वर्तमान धारा द्वारा यह निर्धारित किया गया है

कि संसद विधि द्वारा इस प्रकार का परिवर्तन कर सकती है। अनुच्छेद 3 के पैरा (1) में जिस कार्यवाही की कल्पना की गई है उसका देश के एक छोटे से भाग पर ही प्रभाव पड़ेगा। अधिकांश सदस्य देश के अन्य भागों के होंगे और इस विषय में उनकी संभवत: कोई दिलचस्पी नहीं होगी। जब तक कि तत्कालीन सरकार, यह समझते हुए कि इस प्रकार के कदम से प्रति दिन के प्रशासन के लिये कठिनाइयां बढ़ जायेंगी, यह कदम उठाना आवश्यक न समझे, यह अनुच्छेद निष्प्राण ही रहेगा और इसके अधीन कोई कार्यवाही नहीं की जायेगी। क्योंकि अनुच्छेद 3 में उल्लिखित शर्तों को पूरा करने पर ही, अर्थात् संबंधित राज्यों के विचारों को मालूम करने पर, तथा इस संबंध में अन्य कार्यवाही करने पर, और राष्ट्रपति की अनुमति लेने पर ही इस प्रकार का विधेयक संसद के सामने रखा जा सकेगा और फिर भी कठिनाइयां उठ खड़ी होंगी। थोड़ी देर के लिये कल्पना कीजिये कि दक्षिण के एक छोटे से क्षेत्र की सीमाओं को निश्चित करने का प्रश्न है। अन्य क्षेत्रों के प्रतिनिधियों में से शायद ही कोई इसमें दिलचस्पी ले और यदि तत्कालीन सरकार की इस प्रकार का परिवर्तन करने में कोई दिलचस्पी नहीं होगी तो अधिकांश सदस्य सरकार का साथ देंगे और कहेंगे कि इस समय किसी प्रकार की कार्यवाही की आवश्यकता नहीं है और कोई कदम नहीं उठाया जाना चाहिये। इसका परिणाम यह होगा कि विधेयक पारित नहीं होगा। इस प्रकार जैसे 1919 से अब तक इस आशय का उपबन्ध निष्प्राण रहा है वैसे ही यह अनुच्छेद भी निष्प्राण रहेगा।

इसी कारण मैं इस संशोधन को उपस्थित कर रहा हूं। मैं यह नहीं चाहता कि कोई एक समूह ही इस संबंध में निर्णय करे। यदि कोई प्रांत किसी अन्य प्रांत से पृथक् किया गया, अथवा कोई क्षेत्र किसी प्रांत से पृथक् करके दूसरे प्रांत के साथ जोड़ा गया तो मैं यह चाहता हूं कि किसी एक क्षेत्र के प्रतिनिधि इसका निर्णय नहीं करें किन्तु उन सभी लोगों के मत से, जिन पर इस परिवर्तन का प्रभाव पड़ता हो, इस संबंध में निर्णय हो। मैं इस पर जोर देता हूं कि उन सभी के मतों से इसका निर्णय हो। यदि आप यह उपबन्धित करेंगे कि सभा में उन सभी सदस्यों के मत भी लिये जायेंगे, जिन प्रर इस का प्रभाव नहीं पड़ता और इस अनुच्छेद का आशय इसी प्रकार व्यापक रखेंगे तो मुझे विश्वास है कि अनुच्छेद 3 सदा निष्प्राण रहेगा और जैसे 1919 के अधिनियम तथा 1935 के अधिनियम के अधीन इस संबंध में कोई कार्यवाही नहीं की गई वैसे ही इस उपबन्ध के अधीन भी कोई कार्यवाही नहीं की जायेगी। मेरा निवेदन है कि नवीन संविधान के फलस्वरूप तथा अनुच्छेद 3 के उपबन्धों के फलस्वरूप अधिक कठिनाइयां उठ खड़ी होंगी।

***अध्यक्ष:** श्री पातस्कर, ऐसी स्थिति की कल्पना की जा सकती है जब प्रस्तावित विधि से प्रभावित होने वाले वाले राज्य अथवा राज्यों के प्रतिनिधि, इस प्रकार के परिवर्तन का विरोध करें और सभा के अन्य सदस्य उसके पक्ष में हों।

***श्री एच.वी. पातस्कर:** यह संभव नहीं है।

***अध्यक्ष:** चाहे यह संभव हो या असंभव, मैं आपके सामने एक काल्पनिक स्थिति रख रहा हूं। यदि इस प्रकार का कोई प्रश्न उठे तो क्या आप यह चाहते हैं कि कुछ सदस्य, जो उस विशेष राज्य के प्रतिनिधि होंगे सभा के अन्य सभी सदस्यों को हरा दें?

***श्री एच.वी. पातस्कर:** स्थिति ऐसी है कि इसकी संभावना नहीं है। मुझे यही दिखाई देता है कि अन्य लोगों को इस संबंध में अधिक दिलचस्पी नहीं होगी। यदि उनकी दिलचस्पी हुई भी तो इस प्रश्न का निर्णय उन लोगों के लिये छोड़ देना चाहिये जिन पर इसका प्रभाव पड़े। हाल ही में इस सभा के माननीय सदस्य श्री चलिहा से मुझे ज्ञात हुआ कि आसाम में दिमापुर नाम का एक स्थान है, जिसे एक क्षेत्र के साथ मिलाने के कारण एक विवाद खड़ा हो गया है। उस क्षेत्र के लिये भी एक भीषण आन्दोलन हुआ है। इस स्थिति में कोई भी सरकार परिवर्तन करना नहीं चाहेगी। इसलिये यह काल्पनिक स्थिति नहीं उत्पन्न होगी। यदि इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न भी हो तो अच्छा यह होगा कि इस प्रकार के प्रश्न का निर्णय उन लोगों के मत से हो जिन पर उस का प्रभाव पड़े और अन्य लोगों के मत से नहीं हो।

***अध्यक्ष:** यह स्थिति बहुत अनहोनी नहीं है। यदि यह प्रस्ताव रखा गया कि एक क्षेत्र को किसी अन्य क्षेत्र के साथ मिला दिया जाये और भाषा पर आधृत पृथक् प्रांतों का कोई प्रश्न न उठाया जाये तो यह स्थिति उत्पन्न हो सकती है। इस स्थिति पर विचार करना चाहिये।

***श्री एच.वी. पातस्कर:** मेरे संशोधन के अनुसार दोनों सम्बंधित राज्यों के मतों से इसका निर्णय होना चाहिये। मेरे संशोधन का यही उद्देश्य है और इसीलिये मुझे आशा है कि वह अनियमित नहीं है। मेरा संशोधन इस प्रकार है:

"सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 226 में अनुच्छेद 3 के परन्तुक के प्रस्तावित शब्दों के पश्चात् यह व्याख्या जोड़ दी जाये:–

'*Explanation*—Any such law shall be deemed to have been passed if a majority of the members of the House of the People representing the State or States affected by the provision of such a Bill support the same.

[*व्याख्या*–यदि इस प्रकार के विधेयक के किसी उपबन्ध से प्रभावित होने वाले राज्य या राज्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले लोक सभा के सदस्यों में से अधिकांश ऐसी विधि का समर्थन करें तो वह विधि पारित समझी जायेगी।]' "

माननीय श्री सन्तानम ने कहा कि उन प्रतिनिधियों का पता लगाने में कठिनाई होगी जो विधेयक से प्रभावित होंगे और जिनके मतों से इस संबंध में निर्णय होगा। मेरा निवेदन है कि इस सम्बंध में कोई कठिनाई नहीं होगी क्योंकि मैंने यह कहा है कि केवल लोक सभा के सदस्यों के ही मत लिये जायेंगे और संसद के सभी सदस्यों के अथवा उच्च सदन के सदस्यों के मत नहीं लिये जायेंगे।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से मुझे इसे कई कारणों से अनियमित घोषित कर देना चाहिये। पहला कारण यह है कि जो संशोधन उपस्थित किया गया उससे यह असम्बद्ध है। दूसरा कारण यह है कि जिस स्थिति की कल्पना की गई है उसके फलस्वरूप कई ऐसे प्रश्न उठते हैं जो संविधान के कई ऐसे अनुच्छेदों का खंडन करते हैं

जो पारित हो चुके हैं। उदाहरणार्थ इस संशोधन का यह उद्देश्य है कि इस प्रकार के विधेयक के किसी उपबन्ध से प्रभावित होने वाले राज्य या राज्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले लोक सभा के अधिकांश सदस्यों का मत प्रभावी होगा। पहले तो दूसरा सदन का प्रश्न पर विचार करने के अधिकार से वंचित हो जाता है। दूसरी बात यह है कि कठिनाई तब पैदा होगी जब विधि के पक्ष में मत न देकर इस स्थल पर उल्लिखित सदस्यों में से अधिकांश सदस्य इस प्रकार की विधि का विरोध करें और सभा के अधिकांश सदस्य भी उस विधि का विरोध चाहें। इसलिये इन कई कारणों से मेरे विचार से यह अनियमित है।

इसके अतिरिक्त इस सम्बंध में और कोई संशोधन नहीं है। क्या कोई सज्जन बोलना चाहते हैं?

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ श्रीमान, मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं। हमने इस विचार से यह अनुच्छेद को पुनः उपस्थित करने की आज्ञा दी कि ये संशोधन आनुषंगिक संशोधन हैं। विचाराधीन संशोधन किसी भी पारित अनुच्छेद का आनुषंगिक संशोधन नहीं है। हम सारे विषय पर ही फिर विचार करने जा रहे हैं। मेरे विचार से यह प्रयास संसद की शक्ति कम करने के लिये किया जा रहा है। इससे इस अनुच्छेद का एक प्रकार से निराकरण हो जायेगा।

*__अध्यक्षः__ मेरी यह धारणा रही है इससे संसद की शक्ति बढ़ती है।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ यदि संसद इस अनुच्छेद के अनुसार कार्य करेगा और यदि विधेयक को पुरःस्थापित करने के संबंध में राज्य या राज्यों की विधान-मंडलों की राय लेने के पश्चात् ही कदम उठाया जायेगा तो यह अनुच्छेद कभी भी प्रयोग में नहीं आ सकेगा। उसे प्रयोग में लाना असंभव हो जायेगा। यह समझ कर ही कि यह एक आनुषंगिक संशोधन है, हमने इस अनुच्छेद को पुनः उपस्थित करने की आज्ञा दी।

*__अध्यक्षः__ जिस रूप में परन्तुक (ख) पारित किया गया है, सहमति अपेक्षित है। यहां यह कहा गया है कि केवल परामर्श की अपेक्षा है। परामर्श से सहमति का अधिक मूल्य है। उससे संसद की शक्ति बढ़ती है। वह कम नहीं होती।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ संविधान के इस निर्वचन से मैं सहमत हूं, किंतु मेरे विचार से हमें धोखे की टट्टी नहीं खड़ी करनी चाहिये। हम यह क्यों कहें कि एक आनुषंगिक संशोधन के लिये हम इसे पुनः उपस्थित कर रहे हैं?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ इसका सार वही है जो मूल अनुच्छेद के परन्तुक (क) का है।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ यह हो सकता है किन्तु आपने यह क्यों कहा कि यह एक आनुषंगिक संशोधन है? सभा ने यही समझ कर आज्ञा दी कि यह एक आनुषंगिक संशोधन है।

*__श्री बी. दासः__ श्रीमान, मेरे मित्र श्री पातस्कर ने जो संशोधन उपस्थित किया है, और मेरे मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने जो आपत्ति की है, उससे यह संकेत मिलता

[श्री बी. दास]

है कि हममें से कुछ लोग पुराने अनुच्छेद 3, अथवा अनुच्छेद 3 के वर्तमान मसौदे से संतुष्ट नहीं हैं। मेरे मित्र श्री पातस्कर ने यह कोई नई बात नहीं कही कि उसमें भारत-शासन-अधिनियम के उपबन्ध ही दुहराये गये हैं। श्री पातस्कर यह चाहते हैं कि जो राज्य प्रभावित होते हैं और अन्य राज्यों के साथ मिलाये जाते हैं उसके प्रतिनिधियों का मत उस राज्य की विधान-सभा में अधिक प्रभावी होना चाहिये। मुझे उड़ीसा के प्रांत की स्थापना का कुछ अनुभव है। हमारे यहां 1920 का पुराना भारत-शासन-अधिनियम लागू था। तब हमारा प्रांत बिहार और उड़ीसा का प्रांत कहा जाता था। बिहार और उड़ीसा की विधान-परिषद् ने एक मत से यह प्रस्ताव पारित किया कि उड़ीसा के प्रांत को पृथक् कर देना चाहिये। इसी के समान एक प्रस्ताव मद्रास की विधान-सभा ने भी स्वीकार किया। तत्पश्चात् बिहार के महान नेता श्री सच्चिदानन्द सिन्हा ने पहले की भारतीय विधान-सभा के समक्ष यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि उड़ीसा को एक पृथक् प्रांत बना देना चाहिये, किसी नये राज्य की स्थापना से इस सभा के सदस्य अथवा जन साधारण उत्तेजित नहीं होते। सीमाओं को फिर से निश्चित करने से ही कहीं न कहीं कोई प्रश्न उठ खड़ा होता है और लोग उत्तेजित हो जाते हैं, चाहे वे बंगाल के हों अथवा बिहार के, चाहे वे महाराष्ट्र और गुजरात के हों अथवा आंध्र और उड़ीसा के। कोई न कोई प्रश्न अवश्य ही उठ खड़ा होता है। नेता उत्तरदाई अथवा अनुत्तरदाई वक्तव्य देते हैं और लोग उत्तेजित हो जाते हैं। मुझे स्वयं इस नवीन अनच्छेद 3 से अथवा अनुसूची 1 से, अधिक संतोष नहीं है जिसके द्वारा सरायकेला और खरसूआं के उड़ीसा के दो प्राचीन राज्य एक बार उड़ीसा में समाविष्ट किये जाने पर भी फिर बिहार में समाविष्ट कर दिये गये। हमारी यह धारणा है कि वहां के रहने वाले उड़िया लोगों में अपनी जाति के कोई चिन्ह नहीं रह जायेंगे। सारे मिदनापुर में, जिसकी जन संख्या के तीन-चौथाई लोग उड़िया हैं, एक भी उड़िया स्कूल नहीं है। वहां के लोग अब बंगाली कहे जाने लगे हैं। पुरुलिया जिले में भी बंगालियों ने इसी प्रकार की कठिनाइयां पैदा की हैं। ये समस्यायें हैं किंतु मैं केवल उस मनोविज्ञान की चर्चा करूंगा जो इस भय का आधार है। प्रश्न यह नहीं है कि मसौदा-समिति कैसी विधि बनाती है। जो लोग विभिन्न भाषाओं को बोलते हैं, अथवा जिनके प्राचीन संबंध होते हैं, उन पर इन बातों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। श्रीमान, उत्तरदाई अथवा अनुत्तरदाई राजनैतिक नेताओं के उत्तरदाई अथवा अनुत्तरदाई वक्तव्यों से इस प्रकार की बातें पैदा हो जाती हैं। अनुच्छेद 3 मुझे स्वयं बहुत पसन्द नहीं है क्योंकि उसके अधीन उन लोगों को जो सीमाओं में परिवर्तन करके अपनी जाति के लोगों से मिल जाना चाहते हैं, इसके लिये कोई अवसर नहीं मिलता। इसके अधीन मेरे मित्र श्री चलिहा को सीमाओं में परिवर्तन करने का अवसर नहीं मिलता। मैं केवल यह बता रहा हूं कि हम किस राय से ग्रस्त हैं किंतु हमें यह ज्ञात नहीं है कि वह अनुच्छेद 3 के उपबन्धों से कैसे दूर होगा।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जो अनुच्छेद पारित किया गया है, अथवा जो संशोधन उपस्थित किया गया है उनमें से किसी से भी मैं संतुष्ट नहीं हूं। वास्तव में यदि आप पूर्वीय सीमाओं की वर्तमान स्थिति के इतिहास को जानते होते तो आप इस अनुच्छेद के समान किसी अनुच्छेद को पारित नहीं करते। मैं तो यह चाहता हूं कि किसी राज्य के क्षेत्र को निश्चित करने अथवा उसे घटाने बढ़ाने की पूरी शक्ति राष्ट्रपति को प्राप्त हो। इस समय आसाम की

पूर्वी सीमा अर्थात् मैकमोहन पंक्ति बहुत ही अनिश्चित है। आप कह नहीं सकते कि सीमा कहां पर है। आप उसे जितना चाहें आगे बढ़ा सकते हैं और कोई यह नहीं कह सकता कि अमुक अमुक स्थान के आगे वह नहीं बढ़ाई जा सकती। यदि संसद की अनुमति ली जायेगी और उसकी सिफारिश के आधार पर राष्ट्रपति कार्यवाही करेगा तो इसमें बहुत समय लगेगा। उसे सीमा को तुरन्त ही निश्चित करना होगा। पूर्वी और उत्तरी सीमा पर हम निश्चित रूप ये यह नहीं कह सकते कि सीमा इस प्रकार है। कहा जाता था कि ब्रिटिश राज्य क्षेत्र की अन्तिम सीमा पर रीमा का बन्दरगाह है किंतु चीनियों ने वहां से उनका झंडा हटा दिया और उसे वहां फिर लगाने के लिये ब्रिटिश सेना की एक टुकड़ी भेजनी पड़ी। कहा जाता है कि हमारी सीमा वहां तक है किंतु यह नहीं कहा जा सकता कि वह कभी निश्चित की गई या नहीं की गई। कोई ऐसा उपबन्ध अथवा शक्ति निर्धारित की जानी चाहिये जिसके अधीन राष्ट्रपति सीमा निश्चित कर सके। बालीपाड़ा की सीमा ही को लीजिये। कोई कह नहीं सकता कि वह ठीक-ठीक कहां पर है। कोई कह नहीं सकता कि नागा सीमा ठीक-ठीक कहां पर है और कहां से बर्मा की सीमा आरम्भ होती है। इसलिये जिस रूप में यह अनुच्छेद रखा गया है, अथवा जिस रूप में यह संशोधन उपस्थित किया गया है उनसे मैं संतुष्ट नहीं हूं। राष्ट्रपति को सीमा निश्चित करने की कुछ शक्ति प्राप्त होनी चाहिये और यदि संभव हो तो मसौदा समिति इस संबंध में कोई ऐसा उपबन्ध रखे जिस के अधीन जहां कहीं सीमाएं अस्पष्ट हों वहां वे निश्चित की जा सकें, क्योंकि यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि मैकमोहन पंक्ति का अन्त कहां होता है और जनरल हर्ज का दुर्ग, अथवा हर्ज पंक्ति कहां पर है, इत्यादि।

***अध्यक्षः** मैं यह बताना चाहता हूं कि इस अनुच्छेद का विदेशी राज्यों की सीमाओं से कोई संबंध नहीं है। इसका संबंध भारत की भीतरी सीमाओं से है। इस प्रसंग में चीनियों आदि की चर्चा क्यों की जाये?

***श्री कुलधर चालिहाः** अच्छी बात है, श्रीमान्,

***अध्यक्षः** श्री ब्रजेश्वर प्रसाद, धोखे की टट्टी खड़ा करने का कोई प्रश्न नहीं है। आज प्रातः जो संशोधन स्वीकार किया गया था उसका सार यह था कि देशी राज्यों को प्रांतों के स्तर पर लाया जाये। इस विषय के संबंध में भाग 3 में के देशी राज्यों के साथ भाग 1 में के राज्यों से भिन्न श्रेणी में रखा गया है और यह संशोधन उन्हें एक ही श्रेणी में रखने के लिये रखा गया है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये ही यह संशोधन उपस्थित किया गया है और इसके द्वारा धोखे की कोई टट्टी खड़ी नहीं की जा रही है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** श्रीमान, मुझे खेद है कि मैं इसका आशय नहीं समझ पाया।

***अध्यक्षः** क्या कोई सज्जन कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** आपकी व्याख्या के पश्चात् हमें कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्षः** तब मैं संशोधन संख्या 226 पर मत लूंगा।

[अध्यक्ष]

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 3 के परन्तुक के खंड (क) और (ख) के स्थान पर यह रखा जाये:–

'Where the proposal contained in the Bill affects the boundaries of any State or States for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule, or the name or names of any such State or States, the views of the Legislature of the State or, as the case may be, of each of the States both with respect to the proposal to introduce the Bill and with respect to the provisions thereof have been ascertained by the President.

[जहां विधेयक में अन्तर्विष्ट प्रस्थापना का प्रभाव प्रथम अनुसूची के भाग 1 या भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य या राज्यों की सीमाओं पर अथवा किसी ऐसे राज्य या राज्यों के नाम या नामों पर पड़ता हो वहां जब तक कि विधेयक की पुर:स्थापना की प्रस्थापना के तथा उसके उपबन्ध, इन दोनों के संबंध में, यथास्थिति, राज्य के विधान-मंडल अथवा राज्यों में से प्रत्येक के विधान मंडल के विचार राष्ट्रपति ने निश्चित रूप से न जान लिये हों तब तक,]' "

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 47 (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 47 के खंड (2) की व्याख्या के स्थान पर यह व्याख्या रखी जाये:–

Explanation—For the purposes of this clause, a person shall not be deemed to hold any office of profit by reason only that he is the President or Vice-President of the Union or the Governor or Rajpramukh or Uprajpramukh of any State or is a Minister either for the Union or for any State.

[*व्याख्या*–इस खंड के प्रयोजन के लिये कोई व्यक्ति कोई लाभ का पद धारण किये हुए केवल इसलिये नहीं समझा जायेगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या

उपराष्ट्रपति अथवा किसी राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख या उपराजप्रमुख है अथवा या तो संघ का या किसी राज्य का मंत्री है।]"

श्रीमान यह केवल आनुषंगिक संशोधन ही है और इस में जिन नवीन शब्दों को रखा गया है वे "राजप्रमुख" और "उपराजप्रमुख" हैं। मुझे आशा है कि इसे स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

***श्री के. चेंगलाराय रेड्डी:** मैं यह बताना चाहता हूं कि अभी तक "उपराजप्रमुख" की परिभाषा नही की गई है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** हमने अभी राजप्रमुख की परिभाषा उपस्थित नहीं की है। हम अपने मित्र के संकेत का ध्यान रखेंगे और उपराजप्रमुख की परिभाषा को भी सम्मिलित कर लेंगे।

***अध्यक्ष:** तब मैं इस पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 47 के खंड (2) की व्याख्या के स्थान पर यह व्याख्या रखी जाए–

Explanation—For the purposes of this clause, a person shall not be deemed to hold any office of profit by reason only that he is the President or Vice-President of the Union or the Governor or Rajpramukh or Uprajpramukh of any State or is a Minister either for the Union or for any State.

[*व्याख्या*–इस खंड के प्रयोजन के लिये कोई व्यक्ति कोई लाभ का पद धारण किये हुए केवल इसलिये नहीं समझा जायेगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति अथवा किसी राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख या उपराजप्रमुख है अथवा या तो संघ का या किसी राज्य का मंत्री है।]"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 55 (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 55 के खंड (4) की व्याख्या के स्थान पर यह व्याख्या रखी जाये:–

Explanation—For the purposes of this clause, a person shall not be deemed to hold any office of profit by reason only that he is the President

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

or Vice President of the Union or the Governor of Rajpramukh or Uprajpramukh of any State or is a Minister either for the Union or for any State.

[*व्याख्या*–इस खंड के प्रयोजन के लिये कोई व्यक्ति कोई लाभ का पद धारण किये हुए केवल इसलिये नहीं समझा जायेगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति अथवा किसी राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख या उपराजप्रमुख है अथवा या तो संघ का या किसी राज्य का मंत्री है।]' "

***अध्यक्षः** क्या कोई सज्जन इस संबंध में कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मेरे विचार से "राष्ट्रपति" शब्द निकाला जा सकता है क्योंकि इसकी संभावना नहीं है कि राष्ट्रपति उपराष्ट्रपति पद के लिये खड़ा होगा।

***अध्यक्षः** श्री कृष्णमाचारी?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं कह नहीं सकता। हम इस प्रश्न की परीक्षा करेंगे।

***श्री ए. थानू पिल्ले** (त्रावणकोर और कोचीन का संयुक्त राज्य): पदासीन राष्ट्रपति निर्वाचन के लिये फिर खड़ा हो सकता है और इसलिये अनुच्छेद में "राष्ट्रपति" शब्द का उल्लेख होना चाहिये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, हम इसकी परीक्षा करेंगे। इस पर इस समय मत लिया जाये।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 55 के खंड (4) की व्याख्या के स्थान पर यह व्याख्या रखी जायेः–

Explanation—For the purposes of this clause, a person shall not be deemed to hold any office of profit by reason only that he is the President or Vice-President of the Union or the Governor or Rajpramukh or Uprajpramukh of any State or is a Minister either for the Union or for any State.

[*व्याख्या*–इस खंड के प्रयोजन के लिये कोई व्यक्ति कोई लाभ का पद धारण किये हुए केवल इसलिये नहीं समझा जायेगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या

उपराष्ट्रपति अथवा किसी राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख या उपराजप्रमुख है अथवा या तो संघ का या किसी राज्य का मंत्री है।]"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 67 (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 67 का खंड (9) निकाल दिया जाये।"

खंड (9) इस प्रकार है:–

"जब राज्यपरिषद् में प्रतिनिधि भेजने के प्रयोजनार्थ प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्यों को जोड़कर वर्ग बनाया जाये, तो इस अनुच्छेद के प्रयोजनार्थ यह समस्त वर्ग, एक राज्य समझा जायेगा।"

श्रीमान, इसकी अब आवश्यकता नहीं रहेगी क्योंकि इस प्रकार की आकस्मिक स्थिति के संबंध में अनुच्छेद 3-ख में उपबन्ध है। भाग 3 में के राज्यों की इस समय की स्थिति को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि छोटे राज्यों के संबंध में उपबन्ध रखने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ेगी। इसलिये अनुच्छेद 67 का खंड (9) निकाल दिया जाये।

***अध्यक्ष:** क्या कोई सज्जन इस संबंध में कुछ कहना चाहते हैं? प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 67 का खंड (9) निकाल दिया जाये।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 83 (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 83 के खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) के स्थान पर यह रखा जाये:–

'he is a Minister either for the Union or for such State.

[कि वह संघ का या ऐसे राज्य का मंत्री है।]' "

वास्तव में ये उपखंड (क) और (ख) बहुत लम्बे हैं। यह विचार किया गया है कि इस संशोधन से हमारे उद्देश्य की पूर्ति हो जायेगी।

***अध्यक्षः** क्या कोई सज्जन इस संबंध में कुछ कहना चाहते हैं? प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 83 के खंड (2) के उपखंड (क) और (ख) के स्थान पर यह रखा जाये:–

'he is a Minister either for the Union or for such State.

[कि वह संघ का या ऐसे राज्य का मंत्री है।]'"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 92 के खंड (3) के उपखंड (घ) के पैरा (3) में 'exercises or immediately [प्रयोग करता है अथवा ठीक पहले]' शब्दों के स्थान पर 'exercises jurisdiction within any areas included in the territory of India or which at any time [भारत राज्य-क्षेत्र में के अन्तर्गत किसी क्षेत्र के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है अथवा जो किसी समय]' शब्द रखे जायें।"

श्रीमान, यह अनुच्छेद 92 के संबंध में है जिसमें आनुषंगिक रूप से वार्षिक वित्तीय विवरण के संबंध में भी उपबन्ध हैं। इस स्थल पर न्यायाधीशों को दिये जाने वाले निवृत्ति-वेतनों के विषय का उल्लेख है। वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह समझा गया है कि इस प्रकार के संशोधन की आवश्यकता है। इसलिये श्रीमान, मैं इसे उपस्थित करता हूं।

अध्यक्षः प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 92 के खंड (3) के उपखंड (घ) के पैरा (3) में 'exercises or immediately [प्रयोग करता है अथवा ठीक पहले]' शब्दों के स्थान पर 'exercises jurisdiction within any area included in the territory of India or which at any time [भारत राज्य-क्षेत्र में के अन्तर्गत किसी क्षेत्र के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है अथवा जो किसी समय]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 100 (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 100 से खंड (2) निकाल दिया जाये।"

श्रीमान, अनुच्छेद 100 संसद में होने वाले वाद-विवाद पर निर्बन्धनों के संबंध में है। यह खंड अर्थात् खंड (2) इस प्रकार है:

"इस अनुच्छेद में 'उच्च न्यायालय' के निर्देश में, प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय उल्लिखित राज्य के किसी ऐसे न्यायालय के निर्देश का समावेश होगा, जो इस भाग के अध्याय 4 में दिये हुए किसी प्रयोजन के लिये उच्च न्यायालय है।"

आज प्रातः सभा ने जो कार्यवाही की है उसे ध्यान में रखते हुए इसकी आवश्यकता नहीं रह गई है। श्रीमान, मैं इस संशोधन को उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 100 से खंड (2) निकाल दिया जाये।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 248-ख (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"अनुच्छेद 248-ख के खंड (2) में 'Governor [राज्यपाल] शब्द के पश्चात् 'or Rajpramukh of the State [या राज्य का राजप्रमुख]' शब्द रखे जायें।"

मेरे विचार से इसकी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 248-ख के खंड (2) में 'Governor [राज्यपाल] शब्द के पश्चात् 'or Rajpramukh of the State [या राज्य का राजप्रमुख]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 263 (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"अनुच्छेद 263 के खंड (2) में 'Governor [राज्यपाल] शब्द के पश्चात् 'or Rajpramukh [या राजप्रमुख]' शब्द रखे जायें।"

यह खंड राज्यों की संचित निधि की अभिरक्षा के संबंध में है। इस सभा के भाग 6-क को पारित करने के कारण इसमें यह परिवर्तन करना आवश्यक हो गया है।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 263 के खंड (2) में 'Governor [राज्यपाल] शब्द के पश्चात् 'or Rajpramukh [या राजप्रमुख]' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

सप्तम अनुसूची (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सप्तम अनुसूची की सूची 1 में, प्रविष्टि 43 के पश्चात्, यह प्रविष्टि रखी जाये:–

'43A. Courts of Wards for the estates of Rulers of Indian States.

[43-क. देशी राज्यों की शासकों की संपत्ति के लिये प्रतिपालक-अधिकरण।]' "

श्रीमान, देशी राज्यों की वर्तमान स्थिति को देखते हुए और इसे भी ध्यान में रखते हुए कि बहुत से शासक अब वास्तव में शासक नहीं रह गये हैं बल्कि उनकी केवल संपत्तियां हैं, केन्द्रीय सरकार का इन संपत्तियों को प्रशासनिक करने का दायित्व हो जाता है, विशेषतया जब इन संपत्तियों के स्वामी अल्पवयस्क हों अथवा असमर्थ हों, इत्यादि। जिस उपबन्ध का इस समय प्रस्ताव रखा गया है वह सूची-2 की प्रविष्टि-25 के समान ही है जिसके अधीन प्रांतों का जमींदारों तथा अन्य बड़ी संपत्तियों के स्वामियों की संपत्तियों पर स्वामियों के अल्पवयस्क, असमर्थ आदि होने पर क्षेत्राधिकार रहता है। अब देशी राज्यों की संपत्ति के संबंध में भी उसी के समान एक उपबन्ध रखा जा रहा है। इस शक्ति को भारत सरकार को ही प्रयोग करना होगा क्योंकि कई कारणों से वह संबंधित राज्यों की सरकारों को नहीं सौंपी जा सकती है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सप्तम अनुसूची की सूची 1 में, प्रविष्टि 43 के पश्चात्, यह प्रविष्टि रखी जाये:–

'43A. Courts of Wards for the estates of Rulers of Indian States.

[43-क. देशी राज्यों की शासकों की संपत्ति के लिये प्रतिपालक अधिकरण।]'

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सप्तम अनुसूची की सूची-2 की प्रविष्टि-25 में ये शब्द और अंक जोड़ दिये जायें:–

'Subject to the provisions of entry 43A of List I.

[सूची 1 की प्रविष्टि 43-क के उपबन्धों के अधीन रहते हुए।]' "

चूंकि सभा मेरे पहले संशोधन को स्वीकार कर चुकी है इसलिये इस आनुषंगिक संशोधन की आवश्यकता है। इसकी विशेषतया इसलिये आवश्यकता है कि इसमें प्रविष्टि-25 के संबंध में राज्यों की शक्तियां निश्चित रूप से बताई गई हैं। श्रीमान, मैं इस संशोधन को उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"सप्तम अनुसूची की सूची-2 की प्रविष्टि-25 में ये शब्द और अंक जोड़ दिये जायें:-

subject to the provisions of entry 43A of list I.

[सूची-1 की प्रविष्टि 43-क के उपबन्धों के अधीन रहते हुए]' "

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 270 (पुनर्उपस्थित)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, दो अनुच्छेद और हैं। उनमें से एक अनुच्छेद 270 है और मुझे आशा है कि सभा उसे पुनर्उपस्थित करने की आज्ञा दे देगी। इसके अतिरिक्त एक अन्य अनुच्छेद, अर्थात् अनुच्छेद 67-क भी है जिसके संबंध में कोई विवाद नहीं है। मेरा यह सुझाव है कि इन दो अनुच्छेदों को उठाया जाये।

***अध्यक्षः** अब हम अनुच्छेद 270 को उठायेंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"अनुच्छेद 270 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जायेः

'270. (a) All property and assets vested in his Majesty for the purposes of the Government of the Dominion of India and all property and assets vested in His Majesty for the purposes of the Government of each Governor's Province shall, as from the commencement of this Constitution, vest respectively in the Government of India and the Government of each corresponding State, and

Succession to property, assets, liabilities and obligations.

(b) All liabilities and obligations of the Government of the Dominion of India and of the Government of each Governor's province shall, as from the commencement of this Constitution, be the liabilities and obligations, respectively, of the Government of India and the Government of each corresponding State, subject to any adjustment made or to be made by reason of the creation before the commencement of

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

this Constitution of the Dominion of Pakistan or of the provinces of West Bengal, East Bengal, West Punjab and East Punjab.

[270. (क) जो संपत्ति और आस्तियां भारत डोमीनियन की सरकार के प्रयोजनों संपत्ति, आस्तियों दायित्वों के लिये सम्राट में निहित थीं तथा जो संपत्ति और आस्तियां और आभारों का उत्तराधिकारों प्रत्येक राज्यपाल प्रांत की सरकार के प्रयोजनों के लिये सम्राट में निहित थीं, वे सब इस संविधान के आरम्भ से पहले पाकिस्तान की डोमीनियन के अथवा पश्चिमी बंगाल, पूर्वी बंगाल, पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब के प्रांतों के सृजन के कारण किये गये या किये जाने वाले किसी समायोजन के अधीन रह कर क्रमशः भारत सरकार और तत्स्थानी राज्य की सरकार में निहित होंगी; तथा

(ख) जो दायित्व और आभार भारत डोमीनियन की सरकार के तथा प्रत्येक राज्यपाल प्रांत की सरकार के थे, वे सब इस संविधान के प्रारम्भ से पहले पाकिस्तान की डोमीनियन के अथवा पश्चिमी बंगाल, पूर्वी बंगाल, पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब के प्रांतों के सृजन के कारण किये गये या किये जाने वाले किसी समायोजन के अधीन रह कर क्रमशः भारत सरकार तथा प्रत्येक तत्स्थानी राज्य की सरकार के दायित्व और आभार होंगे।]' "

***अध्यक्षः** जिस अनुच्छेद को आप उपस्थित कर रहे हैं वह भी मेरे विचार से एक स्वतंत्र अनुच्छेद है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** यह इस अध्याय का भाग है। मैं निवेदन कर चुका हूं कि इसका मसौदा भी फिर तैयार करने की अनुमति दी जाये।

***अध्यक्षः** अच्छा यह होगा कि मैं अनुमति मांगूं। सभा के पिछले एक सत्र में जिस अनुच्छेद 270 को स्वीकार किया गया था उसे संशोधित किया जा रहा है। क्या सदस्य इस अनुच्छेद को संशोधित करने की अनुमति देते हैं?

***माननीय सदस्यः** जी हां।

***अध्यक्षः** वह उपस्थित किया जा चुका है। आप आगे बढ़ सकते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** इस संशोधन को इस कारण उपस्थित किया गया है कि हमारे विधि-संबंधी परामर्श-दाताओं ने हमें बताया है कि सभा ने आरम्भ में जिस अनुच्छेद को अपनाया था वह दोषपूर्ण है। श्रीमान, यदि सभा मुझे आज्ञा दे तो मैं स्पष्टीकरण के लिये मूल अनुच्छेद को पढ़कर सुनाऊंगा।

वह इस प्रकार है:–

"इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर, भारत सरकार और प्रथम सूची के भाग-1 में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य की सरकार क्रमशः भारत-डोमीनियन

की सरकार की और तत्स्थानी राज्यपाल-प्रांतों की सब संपत्ति, आस्तियों, दायित्वों और आभारों की इस संविधान के प्रारम्भ से पहले पाकिस्तान की डोमीनियन के अथवा पश्चिमी बंगाल, पूर्वी बंगाल, पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब के प्रांतों के सृजन के कारण किये गये या किये जाने वाले किसी समायोजन के अधीन रह कर, उत्तराधिकारिणी होंगी।"

प्रस्तावित परिवर्तन इस कारण किया जा रहा है: पहले ये पारिभाषिक शब्द प्रयोग किये जाते थे कि भारत सरकार द्वारा तथा प्रांतों की सरकारों द्वारा प्रशासित होने वाली संपत्तियां तथा आस्तियां सम्राट में निहित होंगी। किंतु संबंधित सरकारों के दायित्वों तथा आभारों के बारे में भिन्न भाषा प्रयोग की जाती थी। यह समझा गया है कि इस संबंध में स्थिति स्पष्ट कर देनी चाहिये। मैं इस सभा के माननीय सदस्यों को, जो सम्राट के नाम से ही चिढ़ते हैं, बताना चाहता हूं कि इस संबंध में और कोई चारा नहीं है। यदि पहले विधि की यह शब्दावलि थी कि केन्द्रीय सरकार की अथवा प्रांतीय सरकारों की सब आस्तियां तथा संपत्ति सम्राट में निहित होंगी तो इन संपत्तियों तथा आस्तियों को इस संविधान द्वारा निर्मित होने वाली भावी भारत सरकार तथा राज्यों की सरकारों में निहित करने के लिये हमें इन्हीं शब्दों को प्रयोग करना होगा। माननीय सदस्यों को मैं बताना चाहता हूं कि इस विषय के संबंध में हमारे सभी विधि-संबंधी परामर्श-दाताओं का एक ही मत है और हमारे लिये अनुच्छेद में प्रस्तावित संशोधन करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है। मुझे आशा है कि इस अनुच्छेद को, संशोधित रूप में, स्वीकार करने में इस सभा के सदस्यों को कोई कठिनाई नहीं होगी क्योंकि उससे स्थिति बिल्कुल स्पष्ट हो जायेगी और अनुच्छेद 270 में जो विधि संबंधी दोष बताया गया है वह उसमें नहीं रह जायेगा।

***अध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य महोदय इस संबंध में कुछ कहना चाहते हैं? तब मैं इस नवीन अनुच्छेद 270 पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 270 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये:

'270. (a) All property and assets vested in his Majesty for the purposes of the Government of the Dominion of India and all property and assets vested in His Majesty for the purposes of the Government of each Governor's Province shall, as from the commencement of this Constitution, vest respectively in the Government of India and the Government of each corresponding State, and

Succession to property, assets, liabilities and obligations.

(b) all liabilities and obligations of the Government of the Dominion of India and of the Government of

[अध्यक्ष]

each Governor's Province shall, as from the commencement of this Constitution, be the liabilities and obligations, respectively, of the Government of India and the Government of each corresponding State, subject to any adjustment made or to be made by reason of the creation before the commencement of this Constitution of the Dominion of Pakistan or of the Provinces of West Bengal, East Bengal, West Punjab and East Punjab.

सम्पति, आस्तियों, दायित्वों और आभारों का उत्तराधिकार।

[270. (क) जो संपत्ति और आस्तियां भारत डोमीनियन की सरकार के प्रयोजनों के लिए सम्राट में निहित थीं तथा जो संपत्ति और आस्तियां प्रत्येक राज्यपाल-प्रांत की सरकार के प्रयोजनों के लिये सम्राट में निहित थीं, वे सब इस संविधान के प्रारम्भ से पहले पाकिस्तान की डोमीनियन के अथवा पश्चिमी बंगाल, पूर्वी बंगाल, पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब के प्रांतों के सृजन के कारण किये गये या किये जाने वाले किसी समायोजन के अधीन रहकर क्रमशः भारत सरकार और तत्स्थानी राज्य की सरकार में निहित होंगी; तथा

(ख) जो दायित्व और आभार भारत डोमीनियन की सरकार के तथा प्रत्येक राज्यपाल प्रांत की सरकार के थे, वे सब इस संविधान के प्रारम्भ से पहले पाकिस्तान की डोमीनियन के अथवा पश्चिमी बंगाल, पूर्वी बंगाल, पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब के प्रांतों के सृजन के कारण किये गये या किये जाने वाले किसी समायोजन के अधीन रहकर क्रमशः भारत सरकार तथा प्रत्येक तत्स्थानी राज्य की सरकार के दायित्व और आभार होंगे।]' "

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 270 संविधान का अंग बना लिया गया।

नवीन अनुच्छेद 67-क

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, क्या मैं अनुच्छेद 67-क उपस्थित कर सकता हूं?

***अध्यक्ष:** जी हां।

*श्री टी.टी. कृष्णमाचारी: मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद-67 के पश्चात् यह अनुच्छेद रखा जाये:–

'67A. Notwithstanding anything contained in clause (5) of article-67 of this Constitution, Parliament may by law provide for the representation in the House of the People of any State for the time being specified in Part II of the First Schedule or of any territories comprised within the territory of India but not included within any State on a basis or in a manner other than that provided in that clause.

Special representation to States in Part-II and territories other than States.

[67क. इस संविधान के अनुच्छेद 67 के खंड (5) में किसी बात के होते हुए भी संसद विधि द्वारा, लोक सभा में प्रथम अनुसूची के भाग (2) में इस समय उल्लिखित किसी राज्य के, अथवा भारत राज्य क्षेत्र में समाविष्ट किंतु किसी राज्य के अन्तर्गत न होने वाले किन्हीं राज्य क्षेत्रों के, प्रतिनिधित्व का उस खंड में उपबन्धित आधार या रीति से भिन्न उपबन्ध कर सकेगी।]' "

भाग-2 में के राज्यों तथा राज्यों से अन्य राज्य क्षेत्रों का विशेष प्रतिनिधित्व

मेरा माननीय सदस्यों से निवेदन है कि वे अनुच्छेद-67 के खंड (5) के उपखंड (ख) तथा उपखंड (ग) की भी शब्दावलि देखें, जिसमें लोक सभा में प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व को सीमित किया गया है। किंतु अनुच्छेद-67 के खंड (7) की शब्दावलि इस प्रकार है:

"संसद विधि द्वारा, राज्यों के अतिरिक्त अन्य प्रदेशों की लोक सभा में प्रतिनिधित्व के संबंध में उपबन्ध रख सकेगी।"

इन प्रदेशों के प्रतिनिधित्व के संबंध में विधि द्वारा उपबन्ध रखने का यह अर्थ नहीं है कि संसद खंड (5) के उपखंड (ख) और (ग) में वर्णित योजना का परित्याग कर सकती है।

इस संशोधन को प्रस्तुत करने का कारण यह है कि यद्यपि संसद को राज्यों के अतिरिक्त अन्य प्रदेशों के लोक सभा में प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने पड़े किन्तु सम्भावना इसकी भी है कि उपखण्ड (ख) और (ग) में निर्धारित शर्तों को भाग 2 में के कुछ राज्य पूरा न कर सकें। यह तर्क उपस्थित किया जा सकता था कि लोक-सभा में प्रतिनिधित्व के लिये प्रथम अनुसूची के भाग-2 में के इन प्रदेशों का एक समूह बनाया जा सकता था, किन्तु ऐसा करना हमेशा सम्भव नहीं होगा। मैं अधिक विस्तार से नहीं बताना चाहता कि किन कारणों से प्रेरित होकर यह संशोधन उपस्थित किया गया है। इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि हमारे विचार से ऐसी आकस्मिक स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है जिसमें हमें

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

विशेष क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व के लिये उपबन्ध रखने पड़ें चाहे वे क्षेत्र प्रथम अनुसूची के भाग-2 में के क्षेत्र हों अथवा राज्यों के अतिरिक्त अन्य प्रदेश हों। इन क्षेत्रों में लोक सभा में प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने में अनुच्छेद-67 के वर्तमान उपबन्धों से हमें कठिनाई होगी। इसलिये सभा से मेरा अनुरोध है कि वह मेरे सुझाव को स्वीकार कर ले—यद्यपि मैं बहुत कुछ पहले ही से मान ले रहा हूं—और यह अनुभव करे कि इस प्रकार के संशोधन की आवश्यकता है। जो संशोधन उपस्थित किये जा सकते हैं उनमें से कुछ को मैं पहले ही बता देना चाहता हूं। उनमें से एक यह है कि यह रियायत राज्य परिषद् के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में भी की जाये। मेरे विचार से अनुच्छेद-67 के खण्ड-4 से, जो कार्यवाही विषयक एक खण्ड है, संसद के लिये राज्यपरिषद् प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने में कोई रुकावट नहीं होती। मेरे विचार में हम जिस अनुसूची 3-ख को उपस्थित करने जा रहे हैं उसके उपबन्धों को दृष्टि में रखकर इस विषय की परीक्षा हो रही है। उसमें गणित के अनुपात का हिसाब लगाया जायेगा और राज्यों के लिये जहां तक हो सकेगा ठीक-ठीक स्थान निश्चित किये जायेंगे। यदि संसद अतिरिक्त प्रतिनिधित्व रखना चाहे तो उसमें इसके लिये भी गुंजाइश रहेगी। इसलिये सभा के अपने उन मित्रों के सामने, जो राज्य-परिषद के प्रश्न को भी उठाना चाहते हैं, यह सुझाव रखता हूं कि वे उसे नहीं उठायें। हम स्थिति की परीक्षा कर रहे हैं और आवश्यकता हुई तो हम एक उपयुक्त संशोधन उपस्थित करेंगे। किन्तु मेरे विचार से इस प्रकार के संशोधनों की इस समय आवश्यकता नहीं है। इस सम्बन्ध में इनमें से अधिकांश क्षेत्रों की, विशेषत: उन प्रदेशों की जो भाग-2 में उल्लिखित हैं, प्रबल इच्छा है कि राज्यपरिषद् के स्थान पर लोक सभा में ही उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो। मेरे विचार से इस समय जिन आकस्मिक स्थितियों की कल्पना की जा सकती है उनकी आवश्यकताएं इस उपबन्ध को राज्यपरिषद् को भी लागू करने से उतनी पूरी नहीं होंगी जितनी कि इस उपबन्ध से ही पूरी हो जायेंगी। इसलिये माननीय सदस्यों से मेरी प्रार्थना है कि सभा के विचाराधीन अनुच्छेद राज्य परिषद् को भी सम्मिलित करने के सम्बन्ध में जिन संशोधनों की सूचना दी गई है उन पर मत लेने के लिये वे जोर न दें।

श्रीमान, मैं इस संशोधन को उपस्थित करता हूं।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 306 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 67-क के सम्बन्ध में 'House of the People' [लोक सभा] शब्दों के पश्चात् 'and the Council of States [और राज्य परिषद्]' शब्द रखे जायें।"

श्रीमान, मेरे संशोधन द्वारा रूप-भेद होने के पश्चात् यह संशोधन इस प्रकार हो जायेगा:–

"इस संविधान के अनुच्छेद-67 के खण्ड (5) में किसी बात के होते हुए भी संसद विधि द्वारा, लोक सभा और राज्य परिषद् में प्रथम अनुसूची के भाग (2) में इस समय उल्लिखित किसी राज्य के, अथवा भारत राज्य-क्षेत्र में समाविष्ट किन्तु किसी राज्य के अन्तर्गत न होने वाले किन्हीं राज्य क्षेत्रों के, प्रतिनिधित्व का उस खण्ड में उपबन्धित आधार या रीति से भिन्न उपबन्ध कर सकेगी।"

श्रीमान, मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी इस खण्ड का उद्देश्य बता चुके हैं। वास्तव में सभा को स्मरण होगा कि जब हम दिल्ली प्रान्त के प्रश्न पर विचार कर रहे थे तो उस समय माननीय प्रधान मंत्री महोदय ने यह सुझाव रखा था कि यदि दिल्ली के लिये एक पृथक् विधान-मंडल स्थापित नहीं किया गया तो उसे संसद के सदनों में अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाये। यदि इस वचन को पूरा करना है तो न केवल लोक सभा में बल्कि उत्तर सदन में भी प्रतिनिधित्व के लिये उपबन्ध रखे जायें। दिल्ली के अतिरिक्त कई अन्य केन्द्र प्रशासित क्षेत्र भी हैं। केन्द्रीय प्रशासन के अधीन हम अधिक राज्यों को रखते जा रहे हैं। चन्द्रनगर शीघ्र ही संघ में समाविष्ट हो जायेगा। इसी प्रकार भारत की पूर्वी सीमा पर तिपरा तथा अन्य राज्य भी हैं जो सम्भवत: संघ में समाविष्ट हो जायेंगे। यदि विचार यह है कि इन क्षेत्रों को लोक सभा में प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाये तो कोई कारण नहीं है कि इन्हें राज्य परिषद् में भी प्रतिनिधित्व प्रदान नहीं किया जाये। यदि उत्तर सदन में भी केन्द्र प्रशासित क्षेत्रों में से प्रत्येक को कम से कम एक स्थान प्रदान किया जाता तो अधिक सरलता होती और मैं भी उस उपबन्ध को बहुत पसंद करता।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:__ अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जिस अनुच्छेद को उपस्थित किया है उसका समर्थन करने के लिये मैं उठा हूं। मेरे माननीय मित्र प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना सम्भवत: उत्तर सदन में प्रतिनिधित्व के अर्थ को बिल्कुल गलत समझे हैं। उत्तर सदन में एक संघांग के प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गई है, अर्थात् उसमें उन राज्यों का प्रतिनिधित्व हो सकेगा जिन्होंने मिलकर एक संघ बनाया हो। इस स्थल पर हम भाग-2 में के राज्यों के प्रतिनिधित्व के लिये उपबन्ध रख रहे हैं, जो पारिभाषिक रूप से संघांग नहीं है। संघांग वे राज्य हैं जो अनुसूची के भाग-1 तथा भाग-3 में उल्लिखित हैं। अनुच्छेद 67-क में उन क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध हैं जिनका भाग-2 में उल्लेख है, जैसे अंडमान और निकोबार द्वीप, अजमेर-मेरवाड़ा, कुर्ग और पंथ-पिप्लोदा। हम इन क्षेत्रों को संघांग नहीं कह सकते। इसलिये संघीय संसद के उत्तर-सदन में इन क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने का कोई अर्थ नहीं है।

*__माननीय श्री के. सन्तानम्:__ अध्यक्ष महोदय, जिस समय लोक-सभा के गठन तथा भाग-2 को निकालने के सम्बन्ध में विचार किया गया था उस समय इस पर भी विचार किया गया था। हमने यह विचार किया था कि लोक सभा के लिये छोटे-छोटे निर्वाचन क्षेत्र बनाना उचित नहीं होगा।

[माननीय श्री के. सन्तानम]

जहां तक राज्य परिषद का सम्बन्ध है अनुच्छेद 67 (4) में यह उपबन्धित है कि भाग-2 में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि ऐसी रीति से निर्वाचित होंगे, जैसे कि विधि द्वारा संसद निर्धारित करे इसलिये यद्यपि भाग-2 में के राज्यों के राज्य परिषद में प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे गये किन्तु लोक सभा में उनको प्रतिनिधित्व प्रदान नहीं किया गया और वह सम्भवत: इस कारण कि उनकी जनसंख्या पर्याप्त नहीं है। यदि उनकी जनसंख्या पर्याप्त होगी तो उन्हें स्वत: प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जायेगा। किन्तु जहां पर्याप्त जनसंख्या न हो उन क्षेत्रों के सम्बन्ध में यह विचार किया गया था कि उनको निकटवर्ती निर्वाचन क्षेत्रों के साथ मिला दिया जाये। अजमेर मेरवाड़ा तथा कुर्ग को निकटवर्ती निर्वाचन क्षेत्रों के साथ मिलाने में कोई कठिनाई नहीं है। यदि यह किया गया तो वहां के निवासी भी लोक-सभा के निर्वाचन में भाग ले सकेंगे। यद्यपि सुविधा के लिये भाग-1 तथा भाग-3 में का प्रत्येक राज्य किन्तु किसी विधि में यह उपबन्धित नहीं है कि लोक सभा के लिये प्रत्येक राज्य एक पृथक निर्वाचन क्षेत्र समझा जाये। भाग-1 और भाग-3 में के दो राज्यों के भी ऐसे सीमावर्ती क्षेत्र हो सकते हैं जिन्हें एक ही निर्वाचन क्षेत्र में रखा जाये।

इसलिये छोटे क्षेत्रों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने के सम्बन्ध में एक अनुच्छेद रख के हम संविधान को बिना किसी कारण कुरूप बना रहे हैं। सम्भव है कि प्रदेशों को समाविष्ट करने के लिये अथवा अन्य कारणों से भी हमें बहुत से केन्द्र प्रशासित-क्षेत्र बनाने पड़े। उदाहरणार्थ यदि भाषा पर आधृत प्रान्तों के निर्माण में हमें कई क्षेत्रों को केन्द्र प्रशासित क्षेत्रों के रूप में रखना पड़े, और यदि हम प्रत्येक क्षेत्र को एक पृथक् निर्वाचन क्षेत्र बनायें, तो लोक सभा के लिये छोटे-छोटे बहुत से निर्वाचन क्षेत्र हो जायेंगे। इसलिये मेरे विचार से, यह बिल्कुल ही अनावश्यक उपबन्ध है। इस उद्देश्य की पूर्ति अन्य संविधानिक साधनों से हो सकती है और मेरे विचार से, चूंकि लोक सभा के प्रतिनिधित्व को एक वैज्ञानिक आधार पर रखा गया है, इसलिये उसे इस प्रकार के किसी उपबन्ध से दूषित नहीं करना चाहिये। मैं यह नहीं कहता कि इसका दुरुपयोग किया जायेगा किन्तु किसी संविधान में यह नहीं देखा जाता कि किसी उपबन्ध का दुरुपयोग किया जायेगा अथवा नहीं बल्कि यह देखा जाता है कि उसका दुरुपयोग हो सकता है या नहीं इसलिये मेरा यह सुझाव है कि इस अनुच्छेद को निकाल दिया जाये।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी: अध्यक्ष महोदय, मैं श्री सन्तानम् के इस विचार से सहमत हूं कि अनुच्छेद-67 में बहुत सावधानी से शब्द रखे गये थे और उस समय यह विचार किया गया था कि खण्ड-5 के उपखण्ड (ख) और (ग) में जो शर्तें रखी गई हैं उन्हें किसी प्रकार कम नहीं किया जाये। मैंने इस सभा के माननीय सदस्यों से निवेदन किया था कि इस संशोधन को हमने एक निश्चित उद्देश्य से उपस्थित किया है। मैं यह कह कर किसी बुद्धिमत्ता का परिचय नहीं दूंगा कि मसौदा समिति तथा सम्बन्धित मंत्रियों का भी बिल्कुल यही मत है कि इस प्रकार के संशोधन की आवश्यकता है। इसलिये मैं अपने माननीय मित्र से अनुरोध करता हूं कि वे अपनी आपत्ति को वापस ले लें। साथ ही मैं यह भी कहूंगा कि वह मुझसे अच्छी तरह जानते हैं कि चूंकि इस प्रकार के विषय के सम्बन्ध में साधारणतया सरकार ही कदम उठायेगी इसलिये इसकी सम्भावना नहीं है कि लोक सभा के

लिये प्रतिनिधित्व निश्चित करने में इस सभा की इच्छाओं को पूरा नहीं किया जायेगा और संसद अकारण ही अनुच्छेद 67 की शर्तों को कम करने के लिये सहमत हो जायेगी। इसलिये संशोधन के उद्देश्य के सम्बन्ध में मैं अपने माननीय मित्र से इससे अधिक और कुछ नहीं कह सकता। मैं उन्हें यह आश्वासन देता हूं कि इस विषय पर बहुत सावधानी से विचार किया गया है और सावधानी से विचार करने के पश्चात् ही हमने इस नवीन अनुच्छेद को प्रविष्ट करने का निर्णय किया है। मुझे आशा है कि मैंने जो प्रस्ताव उपस्थित किया है उसे स्वीकार करने में सभा कोई आपत्ति नहीं करेगी।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची-13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या-306 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 67-क के सम्बन्ध में 'House of the People' [लोक सभा]' शब्दों के पश्चात् 'and the Council of States [और राज्य परिषद] शब्द रखे जायें।

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अब मैं अनुच्छेद 67-क पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद-67 के पश्चात् यह अनुच्छेद रखा जाये।

'67A. Notwithstanding anything contained in clause (5) of article- 67 of this Constitution, Parliament may by law provide for the representation in the House of the People of any State for the time being specified in Part II of the First Schedule or of any territories comprised within the territory of India but not included within any State on a basis or in a manner other than that provided in that clause.'

Special representation to States in Part-II and territories other than States.

[6क. इस संविधान के अनुच्छेद-67 के खण्ड (5) में किसी बात के होते हुए भी संसद विधि द्वारा, लोक सभा में प्रथम अनुसूची के भाग (2) में इस समय उल्लिखित किसी राज्य के, अथवा भारत राज्य-क्षेत्र में समाविष्ट किन्तु किसी राज्य के अन्तर्गत न होने वाले किन्हीं राज्य-क्षेत्रों के, प्रतिनिधित्व का उस खण्ड में उपबन्धित आधार या रीति से भिन्न उपबन्ध कर सकेगी।]' "

भाग (2) में के राज्यों तथा राज्यों से अन्य राज्य क्षेत्रों का विशेष प्रतिनिधित्व

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 67-क संविधान का अंग बना लिया गया।

तृतीय पठन के सम्बन्ध में कार्यक्रम

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं यह सुझाव रख सकता हूं कि अनुच्छेद 264-क, 296 और 299 पर कल विचार किया जाये?

***अध्यक्ष:** ये विवाद-ग्रस्त विषयों के सम्बन्ध में हैं और अच्छा यही होगा कि इन्हें हम कल उठायें। अब हम किसी अन्य अनुच्छेद को नहीं उठा सकते। इसलिये आज अब हम अपना कार्य समाप्त करें।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): जो संशोधन आज पारित किये जा चुके हैं उनके सम्बन्ध में कई अन्य सदस्यों के साथ मैं यह स्वीकार करता हूं कि इन पर जो वाद विवाद हुआ है उसे हम नहीं समझ पाये हैं। ये संशोधन हमारे पास कल रात साढ़े दस बजे भेजे गये। मुझे नींद से जगाना पड़ा। और आज प्रात: से ही हम यहां काम कर रहे हैं; जिसका परिणाम यह हुआ है कि हमें इन संशोधनों पर विचार करने के लिये कुछ भी समय नहीं मिला। मुझे इस प्रक्रिया पर कोई आपत्ति नहीं है क्योंकि शीघ्र विचार करने का कोई उपाय निकालना ही चाहिये किन्तु मैं यह सुझाव रखता हूं कि मसौदा समिति इन पर फिर विचार करे और यदि कुछ अनियमित बातों के ध्यान में आने पर कुछ परिवर्तन करने की आवश्यकता हुई तो, मेरे विचार से, इन संशोधनों पर फिर विचार किया जाये।

***अध्यक्ष:** आप कौन से संशोधनों की चर्चा कर रहे हैं?

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** जिन संशोधनों को स्वीकार किया जा चुका है उन पर विचार करने के लिये हमें कुछ भी समय नहीं मिला।

***अध्यक्ष:** किन्तु हम बहुत से संशोधनों को स्वीकार कर चुके हैं।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** जी हां, और मैं यह सुझाव रख रहा हूं कि उन पर मसौदा समिति फिर विचार करे और यदि उसे कुछ और अनियमित तथा असंगत बातें दिखाई दें तो उन पर आगे चल कर विचार किया जाये। हम पर अत्यधिक संशोधन लादे जा रहे हैं। यदि कोई व्यक्ति उनको समझना चाहे और उन पर विचार करना चाहे तो उसके लिये ऐसा करना असम्भव हो जाता है।

इसके अतिरिक्त कल के कार्य के सम्बन्ध में हमें ज्ञात नहीं है कि किन बातों पर विचार किया जायेगा। आज रात नौ या दस बजे हमें कुछ नये मसौदे दिये जायेंगे और हमसे यह आशा की जायेगी कि हम कल प्रात: तक उन पर विचार कर लें। मेरी समझ में नहीं आता कि इस प्रकार के संशोधनों के सम्बन्ध में मैं क्या करूं। इसलिये श्रीमान, मैं आदरपूर्वक निवेदन करता हूं कि आप इस पर विचार करें और हमें कृपा करके बतायें कि हमारे पास कोई नये मसौदे भेजे जा रहे हैं या नहीं। यदि भेजे जा रहे हैं तो नये मसौदों के सम्बन्ध में संशोधन भेजने के लिये हमें कितना समय दिया जायेगा।

*__अध्यक्षः__ मेरे विचार से हमने कल के लिये तीन अनुच्छेदों को, अर्थात् अनुच्छेद 264-क, 296 और 299 को रखा है। इन पर सभा में विचार हुआ है। इनमें से दो पर तो बहुत समय तक विचार हुआ है और तीसरे पर भी कुछ समय तक विचार हुआ है। कल यदि कोई नया प्रस्ताव उपस्थित किया जायेगा तो वह इन अनुच्छेदों के पश्चात् उपस्थित किया जायेगा।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ मैं यह बताना चाहता हूं कि पारित अनुच्छेदों में जो कमी रह गई है तथा जिन आनुषंगिक संशोधनों को करने की आवश्यकता है पर मसौदा समिति विचार कर रही है और सम्भव है कि हमें कल कुछ संशोधन उपस्थित करने पड़ें। मेरे माननीय मित्र को संविधान के सभी अनुच्छेदों की पर्याप्त जानकारी है और उन्हें उनके विषय पर आने में तथा यह समझने में अधिक कठिनाई नहीं होगी कि उन संशोधनों की आवश्यकता है जिनकी सूचना हम आज रात देंगे। वे केवल आनुषंगिक संशोधन ही होंगे। माननीय सदस्यों को इतनी देर में सूचना देने के लिए मैं मसौदा समिति की ओर से उनसे क्षमा मांगता हूं। इसका कारण केवल यह है कि हमारे पास बहुत कम समय है और हम यह चाहते हैं कि संघ सम्बन्धी अनुच्छेदों को यथाशीघ्र समाप्त कर दिया जाये।

*__अध्यक्षः__ कल हम पहले इन तीन अनुच्छेदों पर विचार करेंगे।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ और फिर अन्य अनुच्छेदों को उठायेंगे।

*__अध्यक्षः__ जहां तक मुझे विदित है, हमें अब केवल एक दो विषयों पर ही विचार करना है। प्रस्तावना पर अभी विचार नहीं हुआ है। मैं केवल उन बातों को बता रहा हूं जिन पर विचार करना है और जिन्हें मैंने लिख रखा है। इसके अतिरिक्त अनुसूची 1 भी है जिसमें राज्यों की परिभाषा की गई है और ये तीन अनुच्छेद भी हैं, जिन्हें बताया जा चुका है। मेरे विचार से एक अन्य अनुच्छेद, अर्थात् अनुच्छेद 280-क भी उपस्थित किया जायेगा, जो आर्थिक आपात के सम्बन्ध में है। राज्यों के सम्बन्ध में, विशेषतः कश्मीर के सम्बन्ध में एक अनुच्छेद, अर्थात अनुच्छेद 306-क भी उपस्थित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अनुसूची 3-ख भी है जो राज्य-परिषद् के स्थानों के वितरण के सम्बन्ध में है। इनके अतिरिक्त आनुषंगिक संशोधन भी उपस्थित किये जा सकते हैं क्या इनके अतिरिक्त भी अन्य कोई विषय है?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ मैं कह चुका हूं कि कुछ आनुषंगिक संशोधन भी हैं।

*__अध्यक्षः__ अन्य संशोधन आनुषंगिक संशोधन होंगे क्योंकि वे उन संशोधनों से उत्पन्न होंगे जिन्हें हम पारित कर चुके हैं।

*__श्री आर.के. सिधवाः__ क्या मैं जान सकता हूं कि क्या अनुसूची 1 और प्रस्तावना पर इस सत्र में विचार किया जायेगा। उसके सम्बन्ध में कुछ उलझन थी। इसलिये मैं जानना चाहता हूं कि बिना कुछ रस्मों को पूरा किये हुए क्या अनुसूची-1 उठाई जा सकेगी?

***अध्यक्षः** उन पर इस सत्र में विचार करना है क्योंकि हमें द्वितीय पठन समाप्त करना है। यदि आवश्यकता हुई और अनुसूची में कोई परिवर्तन किया गया तो हम उसे तृतीय पठन में संशोधित कर सकते हैं।

***श्री आर.के. सिधवाः** अनुसूची 1 बहुत महत्वपूर्ण है और उस पर एक या दो दिन लग सकते हैं। इसलिये जब तक कि मसौदा समिति कार्यकारिणी के प्रस्ताव के अधीन इसके लिये तैयार नहीं है तब तक इस समय उस पर समय नष्ट करने से और फिर इन पर तृतीय पठन के अवसर पर समय लगाने से कोई लाभ नहीं होगा।

***अध्यक्षः** किन्तु बिना सभी अनुच्छेदों तथा अनुसूचियों पर विराम किये हुए हम द्वितीय पठन को समाप्त नहीं कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): दूसरे सत्र में पहले दो दिनों में द्वितीय पठन को क्यों न समाप्त किया जाये? एक दिन के विचार के पश्चात् फिर तृतीय पठन आरम्भ किया जा सकता है।

***अध्यक्षः** मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करता हूं कि हम इस पर विचार कर रहे थे कि तृतीय पठन के अवसर पर किस प्रक्रिया का अनुसरण किया जायेगा और शनिवार को कौन से संशोधन सभा के समक्ष उपस्थित किये जायेंगे। यह कहा गया है कि शाब्दिक संशोधनों तथा अनुच्छेदों की पुनर्गणना तथा स्थानान्तरण के अतिरिक्त प्रत्येक अनुच्छेद की परीक्षा करते समय कुछ परिवर्तनों की आवश्यकता का अनुभव किया जा सकता है और सम्भव है हमें सम्बन्धित अनुच्छेदों में एक सीमा तक संशोधन करने पड़ें। यदि इसके लिये हम द्वितीय पठन को स्थगित रखें तो अगले सत्र में तृतीय पठन को करने में हमें कठिनाई हो सकती है। किन्तु उस सत्र में हमें तृतीय पठन करना ही है। इसलिये हम यह सुझाव रख रहे हैं कि ऐसे संशोधन जो बहुत कुछ आनुषंगिक ही हैं किन्तु केवल शाब्दिक संशोधन नहीं हैं तृतीय पठन के अवसर पर उठाये जायें और सीमित रूप से इन संशोधनों पर संशोधन भी उपस्थित किये जायें तथा उन पर विचार किया जाये। जब हम इन संशोधनों को निबटा लेंगे तब हम सारे संविधान पर सामान्य विचार-विमर्श करेंगे, अर्थात् हम उसका तृतीय पठन करेंगे। इसलिये हम नियमों के अधीन आवश्यक आनुषंगिक परिवर्तनों को करने की शक्ति ग्रहण कर रहे हैं। हो सकता है कि हम यह देखें कि किन्हीं आनुषंगिक परिवर्तनों को करने की आवश्यकता नहीं है। यदि यह बात हुई तो बहुत ही अच्छा है। किन्तु सम्भव है कि इसकी आवश्यकता पड़े और इसीलिये हम पहले से सावधान हो जाना चाहते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या सभा के वे सदस्य, जो मसौदा समिति के सदस्य नहीं हैं, तृतीय पठन के समय संशोधन में भेज सकते हैं?

***अध्यक्षः** जी नहीं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** हमारे नियमों में यह उपबन्धित है। यदि मसौदा समिति को परिवर्तन करने की इतनी अधिक शक्ति प्राप्त है तो.............

***अध्यक्षः** वह कोई ऐसे परिवर्तन नहीं कर सकती जिन्हें सभा स्वीकार नहीं करे।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** कुछ औपचारिक परिवर्तनों की आवश्यकता पड़ सकती है। नियमों में इस सम्बन्ध में स्पष्ट उपबन्ध हैं।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से अधिक स्वतंत्रता नहीं दी जा सकेगी। यदि माननीय सदस्य कोई ऐसे सुझाव रखना चाहेंगे जिनका उपबन्धों पर सारवान प्रभाव पड़ेगा, तो मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि मसौदा समिति उनकी ओर यथेष्ट ध्यान देगी और उन पर विचार किया जायेगा।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मैं केवल यह सुझाव रख रहा हूं कि मसौदा समिति का अन्तिम मसौदा हमारे पास समय पर भेजा जाये ताकि हम उस पर पूर्ण रूप से विचार कर सकें।

***अध्यक्षः** मैं समय-सारिणी के बारे में भी सोच रहा था। मेरे विचार से दूसरे पठन में संविधान जिस रूप में पारित किया गया है उस रूप में उसे इस मास की 31 तारीख से पहले छपने के लिये नहीं भेजा जा सकेगा। सारे संविधान पर बहुत सावधानी से विचार करने की आवश्यकता है। प्रत्येक अनुच्छेद, प्रत्येक शब्द की परीक्षा करनी है। इसमें समय लगेगा। इसलिये मसौदा समिति उसे 31 तारीख से पहले तैयार नहीं कर सकेगी। इसके पश्चात् लगभग एक सप्ताह छपने में लगेगा। हम उसे यथासम्भव शीघ्र अर्थात् 4 या 5 तारीख तक, भेजने का प्रयास करेंगे, किन्तु इससे पूर्व वह नहीं भेजा का सकेगा। जहां तक हो सकता है हम समय की बचत करने का प्रयास कर रहे हैं किन्तु हमारे मार्ग में कई कठिनाइयां हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान, आप अगला सत्र कब कर रहे हैं?

***अध्यक्षः** मैं सभा का सत्र 14 नवम्बर से लेकर 25 अथवा 26 नवम्बर तक करना चाहता हूं क्योंकि विधान सभा का सत्र 28 नवम्बर से होने जा रहा है और उसके लिये सदस्यों को आहूत किया जा चुका है। इसलिये हमें तीसरे पठन को उसके पहले समाप्त करना है। और प्रस्ताव यह है कि आवश्यक प्रश्नों तथा आनुषंगिक संशोधनों पर विचार करने के लिये दो या तीन दिन दिये जायें। मुझे आशा है कि दो दिन देने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, क्योंकि हम इसके लिये पहले से तीन दिन रख रहे हैं। सामान्य बहस के लिये हमें आठ या नौ दिन मिल जायेंगे। मेरा यह विचार है कि आठ दिन तक सामान्य बहस की जायेगी और अन्तिम दिन संपूर्ण संविधान को पारित करने की रस्म पूरी की जायेगी। यह सुझाव रखा जाता है कि जब संविधान को अन्तिम रूप से पारित किया जाये तो उस पर इस सभा का प्रत्येक सदस्य हस्ताक्षर करे।

***माननीय सदस्यः** जी हां, श्रीमान।

***अध्यक्षः** वह एक ऐतिहासिक लेख होगा और उचित यही होगा कि जिन सदस्यों का इस संविधान के निर्माण में हाथ रहा है उनमें से प्रत्येक उसकी प्रति पर हस्ताक्षर

[अध्यक्ष]

करे। उसे सुरक्षित रखा जायेगा। इसमें एक दिन लग जायेगा। इसलिये उसके लिये मैं एक दिन अलग रख रहा हूं। शेष 6 या सात दिनों में सामान्य बहस होगी।

*प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना: संविधान के हिन्दी संस्करण की क्या स्थिति है?

*अध्यक्ष: संविधान सभा ने एक उपबन्ध इस आशय का पारित किया है कि केन्द्र में ही नहीं बल्कि प्रान्तों में भी सभी विधेयक 15 वर्ष तक अंग्रेजी में पारित किये जायें। इसलिये हम इसे पारित करेंगे और आपने विभिन्न भाषाओं में इस का अधिकृत अनुवाद तैयार कराने का अधिकार मुझे दिया है। जहां तक हिन्दी संस्करण का सम्बन्ध है, आपने उसके सही होने को प्रमाणित करने के लिये मुझे उत्तरदाई ठहराया है। मैं इन अनुवादों को तैयार कराने के लिये कदम उठा रहा हूं। संविधान के प्रवर्तन में आने के पूर्व ही मैं हिन्दी के संस्करण को प्रकाशित करा देना चाहता हूं और अन्य अनुवादों को भी प्रकाशित कराना चाहता हूं किन्तु अन्य अनुवादों के सम्बन्ध में मैं निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकता।

*श्री एच.वी. कामत: क्या हम जनवरी 25-26 की अर्धरात्रि को कोई उत्सव करने जा रहे हैं?

*अध्यक्ष: अर्धरात्रि को या दोपहर को कोई उत्सव करने पर मैंने विचार नहीं किया है। किन्तु यह सुझाव रखा गया है कि हम सभी लोग संविधान की प्रति पर हस्ताक्षर करें। अभी तक हमने केवल यही सोचा है।

*श्री एच.वी. कामत: श्रीमान, मैं जनवरी 26 के सम्बन्ध में कह रहा हूं।

*अध्यक्ष: हम इस सम्बन्ध में अगली बैठक में निर्णय करेंगे। एक अन्य प्रश्न भी में जिस पर अभी तक विचार नहीं किया गया है। सम्भव है कि उसमें सदस्यों की दिलचस्पी हो। वह राष्ट्र-गान का प्रश्न है। संविधान सभा राष्ट्रीय पताका को स्वीकार कर चुकी है। वह संविधान का अंग नहीं था किन्तु संविधान सभा ने उसे स्वीकार किया था। इसी प्रकार संविधान सभा को सम्भवत: राष्ट्र-गान को भी एक प्रस्ताव द्वारा स्वीकार करना होगा। सरकार एक गान को राष्ट्र-गान के रूप में स्वीकार कर चुकी है, किन्तु संविधान सभा ने उसे अभी स्वीकार नहीं किया है। इस दिशा में हमने अभी कोई कदम नहीं उठाया है। मैं कह नहीं सकता कि क्या किया जाये, किन्तु सम्भव है कि हमें इस प्रश्न पर विचार करना पड़े।

*श्री एच.वी. कामत: हम अगले सत्र में तृतीय पठन के अवसर पर इस प्रश्न को उठा सकते हैं।

***अध्यक्ष:** मैं कह नहीं सकता कि सारी सभा राष्ट्र-गान के सम्बन्ध में निर्णय कर सकेगी या नहीं कर सकेगी। यदि यहां हम सभी गाना आरम्भ करें तो वह चाहे और जो कुछ हो गान नहीं होगा। विशेषज्ञों की किसी समिति को उसके सम्बन्ध में निर्णय करना है और अभी मैंने निश्चय नहीं किया है कि उसके सम्बन्ध में क्या किया जाये। यदि सभा की इच्छा हो तो हम इसके लिये एक समिति नियुक्त करने पर विचार कर सकते हैं।

***एक माननीय सदस्य:** एक नवीन राष्ट्र-गान बनाने के लिए।

***श्री सुरेश चन्द्र मजूमदार** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): पहले संचालन समिति की एक बैठक में यह निर्णय किया गया था कि यह गान संविधान का अंग नहीं समझा जायेगा और उसे तृतीय पठन के समय एक प्रस्ताव द्वारा स्वीकार किया जायेगा।

***अध्यक्ष:** मैंने भी यही कहा है।

***श्री सुरेश चन्द्र मजूमदार:** अब आप राष्ट्र-गान के सम्बन्ध में निर्णय करने के लिये एक समिति को गठित करने जा रहे हैं। सभा उस समिति के प्रतिवेदन पर विचार करेगी और दो गानों में से किसी एक गान को राष्ट्र-गान के रूप स्वीकार करेगी। मेरे विचार से यह काम संविधान-सभा के जीवन-काल में ही पूरा कर लिया जायेगा।

***अध्यक्ष:** मेरा विचार है कि तृतीय पठन के अवसर पर इस काम को पूरा कर लिया जायेगा।

***श्री बी. दास:** हममें से कुछ लोग "जन-गण-मन" को पसंद नहीं करते। हमारी प्रबल इच्छा है कि "वन्देमातरम्" ही राष्ट्र-गान के रूप में स्वीकार किया जाये, क्योंकि पिछले पचास साठ वर्षों में हमें उसी से प्रेरणा प्राप्त हुई है। किसी भी दशा में जब यह प्रश्न उपस्थित किया जाये तो उस समय हम अपने विचार प्रकट करना चाहेंगे।

***अध्यक्ष:** निस्संदेह यह आपका मत है। मैं यह कह चुका हूं कि सबसे अच्छा गान चुनने के लिये मैं एक समिति गठित करने का विचार कर रहा हूं।

***एक माननीय सदस्य:** क्या वह समिति एक नवीन गान को प्रस्तावित करेगी?

***अध्यक्ष:** समिति को एक नवीन गान रचने की भी स्वतंत्रता होगी।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** क्या यह समिति शीघ्र ही नियुक्त हो जायेगी?

***अध्यक्ष:** उसे इस बीच नियुक्त करना होगा। मैंने इस प्रश्न की व्यवहारिक बातों पर विचार नहीं किया है। इसलिये इस समय मैं कोई घोषणा नहीं कर सकता।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** अध्यक्ष महोदय मैं, यह समझता हूं कि अन्य देशों में साधारणतया राष्ट्र-गान को संविधान का अंग नहीं बनाया जाता और विशेषज्ञ

[माननीय श्री के. सन्तानम]

संगीतकारों से उसे रचने के लिये कहा जाता है और पुरस्कार भी दिये जाते हैं। इस समय अस्थाई रूप से हमने एक राष्ट्र-गान अपनाया है। मैं कह नहीं सकता कि इस समय इस सम्बन्ध में निर्णय करना उचित होगा या नहीं। मेरे विचार से अच्छा यह होगा कि हम उसे संसद के लिये छोड़ दें कि वह हर प्रकार की कार्यवाही करके विधि द्वारा इसको निश्चित करे।

***अध्यक्ष:** यह भी एक दृष्टिकोण है। जैसाकि मैं कह चुका हूं, मैंने अभी इस प्रश्न की व्यावहारिक बातों पर विचार नहीं किया है।

***श्री सीताराम एस. जाजू** (मध्य भारत): क्या विन्ध्य प्रदेश और भूपाल के सदस्य तृतीय पठन तक यहां आ जायेंगे?

***अध्यक्ष:** मैं आशा करता हूं कि वे आ जायेंगे और इसके लिये हम प्रयास कर रहे है किन्तु यदि वे न आयें तो लाचारी है।

अब हम कल दस बजे तक के लिये सभा स्थगित करते हैं।

इस के पश्चात् सभा शुक्रवार, तारीख 14 अक्तूबर, 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

GIPD–HS-178 PSD–15-11-52–000

Con. 3. X.7.49
320

अंक 10
संख्या 7

शुक्रवार
14 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
संविधान का मसौदा—(जारी) [अनुच्छेद 296, 299 अनुच्छेद 48, 62, 67, 109, 112, 119, 135, 144, 149, 230, 303 पर पुन: विचार और प्रथम अनुसूची पर विचार]	3063-3174
अल्पसंख्यक मंत्रणा-समिति के प्रतिवेदन के बारे में वक्तव्य	3129-3131

भारतीय संविधान सभा

शुक्रवार, 14 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टिट्यूशन हाल नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा-(जारी)

अनुच्छेद 296

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 296 पर आये हुए संशोधन नं. 15 को लेते हैं। इस अनुच्छेद पर बहुत से संशोधन आये हैं। कुछ संशोधन ऐसे हैं जो मसौदा समिति की तरफ से उपस्थित किये जाने वाले संशोधन पर रखे गये हैं। अन्य कई संशोधन ऐसे हैं जो सदस्यों द्वारा उपस्थित किये जाने वाले संशोधनों पर रखे गये हैं। इनमें बहुतेरे समान आशय के हैं। इसलिये मेरा ख्याल है कि ऐसे संशोधनों के सम्बन्ध में जो समान आशय के हैं सदस्यों को स्वविवेक से काम लेना चाहिये और उनके लिये आग्रह न करना चाहिये।

***श्री एच.वी. कामत:** आप के निर्णय को मैं शिरोधार्य करूंगा, श्रीमान।

***अध्यक्ष:** जहां तक साध्य हो मैं कोई निर्णय नहीं देना चाहता हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): मैं यह संशोधन रखता हूं। श्रीमान–

"कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 3165 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 296 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये–

'296. The claims of the members of the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes shall be taken into consideration consistently with the maintenance of efficiency of administration, in the making of appointments to services and posts in connection with the affairs of the Union or of a State.' "

Claims of Scheduled Castes and Scheduled Tribes to services and posts.

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

[296. संघ या राज्य के कार्यों से संसक्त सेवाओं और पदों के लिये नियुक्तियां सेवाओं और पदों के भरने में प्रशासन कार्य पटुता बनाये रखने की संगति के लिए अनुसूचित जातियों अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमवासियों के सदस्यों के दावों का ध्यान रखा जायेगा।]

***सरदार भूपेन्दर सिंह मान** (पूर्वी पंजाब: सिख): एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान, वह यह.......

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): मेरा भी एक औचित्य प्रश्न था श्रीमान। इस अनुच्छेद पर मैंने एक औचित्य प्रश्न उठाया था। यदि आपकी.......

***अध्यक्ष:** मैं आप दोनों की बातें सुनूंगा।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मान:** मेरा कहना यह है श्रीमान कि जब तक इसके लिए एक प्रस्ताव नहीं पास हो जाता है यह सभा अपने पूर्व निर्णयों से मुकर नहीं सकती है। इसी अनुच्छेद को सभा पहले पास कर चुकी है।

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद 296 को?

***सरदार भूपेन्द्र सिंह मान:** मेरा मतलब यह है कि उन सिद्धान्तों को जो इस अनुच्छेद में निहित हैं और जिन पर कि यह अनुच्छेद आधृत है उनको सभा स्पष्ट शब्दों में स्वीकार कर चुकी है। मैं अपनी बात को स्पष्ट किये देता हूं। अल्पसंख्यकों तथा मूलाधिकारों के लिए बनी मंत्रणा समिति के सभापति की हैसियत से माननीय सरदार पटेल ने 27 अगस्त सन् 1947 को सभा के समक्ष अपना जो प्रतिवेदन उपस्थित किया था उसमें दो बातें थीं। एक तो यह कि अल्पसंख्यकों की साफ-साफ परिभाषा दी गई थी और दूसरी यह कि चार बातों पर पृथक् पृथक् पूरी तरह विचार किया गया था। जिन चार बातों पर उसमें विचार किया गया था वह यह हैं। (1) विधान मंडलों में प्रतिनिधान तथा पृथक् और संयुक्त निर्वाचन (2) मंत्रिमंडल में अल्पसंख्यकों के लिए स्थान-संरक्षण (3) सरकारी नौकरियों में अल्पसंख्यकों के लिए जगहों का रक्षण और (4) अल्पसंख्यकों के अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए प्रशासकीय व्यवस्था। यह प्रतिवेदन सभा के समक्ष उपस्थित किया गया था जिसे आगे चलकर सभा ने स्वीकार किया था। इस प्रतिवेदन में जिसे कि सभा ने 1947 के अगस्त वाले अधिवेशन में पास किया था अल्पसंख्यकों के लिए मंत्रिमण्डल और सरकारी नौकरियों में जगहें सुरक्षित रखने के बारे में यह तय पाया था–

पैरा 9 में यह बात दी हुई है—कि अखिल भारतीय तथा प्रान्तीय सेवाओं में अल्पसंख्यकों को समुचित जगहें दी जायेंगी और इन नौकरियों के लिये नियुक्तियां करने में प्रशासन-कार्यपटुता बनाये रखने की संगति के अनुसार अल्पसंख्यकों के

दावों का ध्यान रखा जायेगा। इतना ही नहीं साफ-साफ और जोरदार शब्दों में यह बात भी कही गई थी कि इसके लिये एक समुचित उपबन्ध संविधान में या अनुसूची में अवश्य रखा जायेगा।

इन सब बातों को मान लेने के बाद मसौदा समिति ने इसके लिए एक विशेष अनुच्छेद 299 को यहां रखा जिसमें अल्पसंख्यकों के अधिकारों को मंजूर किया गया था। मंत्रणा-समिति ने 11 मई सन् 1949 को अल्पसंख्यकों को राजनैतिक रक्षण देने के बारे में सभा के समक्ष बाद में एक प्रतिवेदन उपस्थित किया था। इस प्रतिवेदन में भी समिति ने अपने पूर्व निर्णयों की पुष्टि की थी और उन पर जोर दिया था। हां इस प्रतिवेदन में यह जरूर किया गया था कि विधान मण्डलों में उनके लिये जगहों को सुरक्षित रखने की जो बात पहले मान ली गई थी उसे जरूर अमान्य कर दिया गया था किन्तु अन्य सभी अधिकार ज्यों के त्यों सुरक्षित रखे गये थे किन्तु इस अनुच्छेद के द्वारा हो यह रहा है कि जो अधिकार अल्पसंख्यकों को दिये जा चुके हैं वह अब छीने जा रहे हैं मेरा कहना यह है कि यह परिवर्तन एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है और इसके लिए एक विशेष प्रस्ताव पास किये बिना सभा अपने पूर्व निर्णयों को बदल नहीं सकती है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं उस औचित्य प्रश्न को समझ नहीं सका हूं जिसे माननीय मित्र श्री.......

***अध्यक्ष:** आप कृपया श्री नज़ीरुद्दीन अहमद को अपनी बात कहने दीजिये।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** कुछ समय पहले, जब कि माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने यह अनुच्छेद यहां उपस्थित किया था तो मैंने यह औचित्य प्रश्न उठाया था। गत 28 मई की सभा की कार्यवाही का मैं हवाला दे रहा हूं। उस दिन की कार्यवाही से पता चलता है कि अल्पसंख्यक सम्बन्धी मंत्रणा समिति ने एक विशेष उपसमिति नियुक्त की थी अल्पसंख्यकों के प्रश्न पर विचार करने के लिये। इस विशेष उपसमिति के सदस्य ये सज्जन थे–

माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू

माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

श्री के.एम. मुन्शी तथा

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर।

इस विशेष उपसमिति ने और बातों के साथ यह भी प्रतिवेदन में कहा था कि अल्पसंख्यकों के लिये विधान-मण्डलों में जगहें सुरक्षित रहनी चाहिये। उसने यह भी कहा था कि अखिल भारतीय तथा प्रान्तीय सेवाओं में उनके लिये जगहें तो सुरक्षित नहीं रखी जानी चाहिये पर इन सेवाओं के लिये नियुक्तियां करने में अल्पसंख्यकों के दावों का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिये जहां तक कि प्रशासन-कार्यपटुता को बनाये रखने की संगति के अनुसार ऐसा किया जा सकता हो।

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

इस बात को सभा ने स्वीकार किया था अगस्त सन् 1947 में। बाद में चल कर माननीय सरदार पटेल के 11 मई सन् 1949 के एक पत्र के आधार पर इस प्रश्न पर आंशिक रूप से पुन: विचार किया गया था। पुनर्विचार किया गया था केवल विधान मण्डलों में उनके लिये जगहें सुरक्षित रखने के प्रश्न पर न कि सेवाओं में उनके लिये जगहें सुरक्षित रखने के प्रश्न पर। सरदार पटेल ने यह प्रतिवेदन किया था कि अनुसूचित जातियों को छोड़कर अन्य अल्प संख्यकों के लिये विधान-मण्डलों में जगहें सुरक्षित रखने की जो पद्धति है वह उठा दी जानी चाहिये। सभा ने 26 मई सन् 1949 को सरदार पटेल के कहने पर इस आशय का एक प्रस्ताव पास किया था। मूल प्रतिवेदन, सरदार पटेल का पत्र, उनके द्वारा उपस्थित किये गये प्रस्ताव और सदस्यों की वस्तृतायें—इन सब को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि पुनर्विचार किया गया था केवल विधान मण्डलों में अल्पसंख्यकों के लिये जगहें सुरक्षित रखने के प्रश्न पर। मैं यह भी बता दूं कि इस प्रश्न पर पुनर्विचार करके जो निश्चय किया गया था उससे सभा के मुसलिम सदस्य पूर्णत: सहमत थे। मैं भी उनमें से एक था जिनका यह ख्याल था कि विधान मण्डलों में अल्प-संख्यकों के लिये जगहें सुरक्षित रखने से उनको कोई लाभ नहीं होगा। नौकरियों में उनके लिये जगहें सुरक्षित रखने के प्रश्न पर तो पुनर्विचार ही नहीं किया गया था। उस मौके पर जब मैंने इस बात का उल्लेख किया था तो डॉ. अम्बेडकर तथा कई अन्य सदस्यों ने यह ख्याल किया था कि स्थिति को मैं ठीक-ठीक समझ ही नहीं पाया हूं। श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने तो यहां तक कह दिया कि "अगर इस बात को आप दो दिन में नहीं समझ सकते हैं तो दो महीने में भी आप इसे नहीं समझ सकते हैं।" माननीय मित्र ने इस तरह दर्पपूर्ण भाषा में मुझ से यह बात कही थी। किन्तु मैं यह कहता हूं और जोर देकर कहता हूं कि उस समय जो किया गया था उसको समझने में भूल जिसने भी की हो पर मैंने नहीं की थी।

चूंकि आप खुद इस उपसमिति के एक विशिष्ट सदस्य थे और उस समय सभा में मौजूद थे जब कि यह प्रस्ताव पास किया गया था इसलिये आपसे सादर यह अनुरोध करूंगा कि आप ही यह बताइये कि इस प्रश्न पर भी उस समय क्या पुनर्विचार किया गया था? सरदार पटेल को वैधानिकता का पूरा ख्याल रहता है और उन्होंने इस सम्बन्ध में जो पत्र दिया था उसके पैरा 8 में खुद यह कहा था कि समिति इस बात को अच्छी तरह समझती है कि "अपने पूर्व स्वीकृत निर्णयों को आसानी से हमें नहीं बदल देना चाहिये।" वह बड़े दृढ़-विचार वाले व्यक्ति हैं और उन्होंने इस प्रश्न पर जो पुनर्विचार किया था वह खूब सावधानी के साथ और पर्याप्त कारणों के आधार पर ही किया था। इसलिये मैं यह निवेदन करूंगा कि अल्पसंख्यकों के लिये नौकरियों में जगहें देने के बारे में और विशेष प्राधिकारी नियुक्त करने के बारे में जो उपबन्ध अनुच्छेद 296 और 299 में रखे गये हैं वह खूब सोच समझ कर ही रखे गये हैं।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रास: जनरल): माननीय सदस्य औचित्य प्रश्न उपस्थित कर रहे हैं या कोई वक्तृता दे रहे हैं?

***अध्यक्ष:** वह औचित्य प्रश्न रख रहे हैं और उसे समझा रहे हैं।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:__ यदि किसी सदस्य की समझ में यह नहीं आया है तो इसे मैं स्पष्ट किये देता हूं। मेरा औचित्य प्रश्न यह है। अल्पसंख्यक समिति के निर्णयों के अनुसार सभा ने कई निर्णय किये थे। सरदार पटेल के कहने पर इन निर्णयों में केवल आंशिक रूप से कुछ परिवर्तन बाद में किया गया था। अल्पसंख्यकों के लिये सेवाओं में जगहें सुरक्षित रखने के प्रश्न पर जो बातें प्रतिवेदन में कहीं गई थीं उन पर इन परिवर्तनों का कोई असर नहीं पड़ता है। चूंकि इस प्रश्न पर केवल आंशिक रूप से पुनर्विचार किया गया था और वह भी बहुत कुछ उपचार के बाद, इसलिए यह स्पष्ट है कि प्रतिवेदन में कही गई अन्य बातों के बारे में अब हम कोई परिवर्तन नहीं कर सकते हैं। सभा से और खास करके आपसे अध्यक्ष महोदय मैं यह अनुरोध करूंगा कि इस पर विचार किया जाये कि क्या इस प्रश्न पर इस तरह मनमाने तौर पर यहां पुनर्विचार किया जा सकता है। सभा का पूर्व निर्णय अपनी जगह है और मैं नहीं समझता कि उसे हम अब उलट सकते हैं। मेरा औचित्य प्रश्न यही है।

*__अध्यक्ष:__ औचित्य प्रश्न की बात को और औचित्य प्रश्न के गुणदोष को— इन दोनों बातों को हमें अलग-अलग रखना होगा। फिलहाल मुझे विचार करना है केवल औचित्य प्रश्न पर जिसे यहां दो सदस्यों ने उठाया है। उनका कहना यह है कि सभा उपस्थित विषय के बारे में पहले कुछ निर्णय कर चुकी है और अब इस संशोधन के द्वारा उस निर्णय को बदलने की कोशिश की जा रही है। सभा के पूर्व निर्णयों पर पुनर्विचार करने के बारे में अपने नियमों में केवल एक ही नियम है और वह है नियम 32 और उसमें यह कहा गया है कि सभा के पूर्व स्वीकृत निर्णय पर पुनर्विचार उसी हालत में किया जा सकता है जब कि सभा में उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यों की कम से कम एक चौथाई इसके लिए राजी हो। इसलिये, सभा के पूर्व स्वीकृत निर्णय के बारे में पुनर्विचार करने पर एक मात्र प्रतिबन्ध यही रखा गया है कि उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यों की कम से कम एक चौथाई पुनर्विचार करने पर राजी हो। मेरा ख्याल है कि अच्छा यह होगा कि इस प्रश्न को मैं सभा के सामने रख दूं और उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की एक चौथाई अगर पुनर्विचार करने के पक्ष में हो तो इस पर पुनर्विचार करना सर्वथा नियमानुकूल माना जायेगा।

जहां तक कि औचित्य प्रश्न के गुणदोष का सम्बन्ध है, मेरा ख्याल है कि मुझे इस पर अभी या कभी भी कोई राय नहीं जाहिर करनी चाहिये। गुणदोष की बात का निर्णय भी सभा ही कर सकती है। फिलहाल औचित्य प्रश्न पर ही मुझे निर्णय देना है और मेरा निर्णय यह है कि उपस्थित एवं मतदान करने वाले सदस्यों की एक चौथाई अगर इसके पक्ष में हो तो इस पर पुनर्विचार किया जा सकता है।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ मेरा कहना तो यह था कि अनुच्छेद 296 और 299 सभा में कभी पास ही नहीं किये गये हैं।

*__अध्यक्ष:__ वह पूर्व स्वीकृत निर्णयों की बात कर रहे हैं, अनुच्छेद 296 और 299 की नहीं। अल्पसंख्यक सम्बन्धी मंत्रणा-समिति के प्रतिवेदन पर सभा पहले एक बार निर्णय कर चुकी है।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** मैं आपसे निर्णय इस प्रश्न पर मांगता था श्रीमान कि आया प्रस्तुत प्रस्ताव के द्वारा अपना पहले का निर्णय उलटता है या नहीं?

***अध्यक्षः** यदि सभा पुराने निर्णय को उलटना चाहे तो वह इसके द्वारा उलट जायेगा वरना यह बना रहेगा। किन्तु अभी विचाराधीन प्रश्न मेरे सामने केवल यह है कि पुराने निर्णय को बदलने के सवाल पर यहां विचार किया जा सकता है या नहीं?

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल): किसी विधेयक के खंड में और एक प्रस्ताव में अन्तर होता है।

***अध्यक्षः** इस बात पर आपको बहस करने की जरूरत नहीं है। मैं सभा से यह जानना चाहता हूं कि उसकी इस प्रश्न पर क्या राय है। प्रश्न यह है:–

"क्या सभा इस प्रश्न पर पुनर्विचार करने पर तैयार है।"

***माननीय सदस्यगणः** हां, तैयार हैं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** सो अब इस सम्पूर्ण प्रश्न पर पुनर्विचार किया जा सकता है, इस पर कोई रुकावट नहीं रह जाती है। अब हम उपस्थित संशोधन के गुणदोष पर विचार कर सकते हैं डॉ. अम्बेडकर इसे पेश कर चुके हैं और इस पर कई संशोधन आये हैं। अब आये हुए संशोधनों को एक एक करके लिया जायेगा। अब संशोधन नं. 16 को पेश करेंगे सरदार हुकुम सिंह।

***सरदार हुकम सिंह** (पूर्वी पंजाबः सिख): अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं:

"कि संशोधन सूची के (दूसरा भाग) संशोधन नं. 3163 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 296 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये–

'296. Subject to the provisions of the next succeeding article the claims of all minority communities shall be taken into consideration, consistently with the maintenance of efficiency of administration, in the making of approintments to services and posts in connection with the affairs of the Union or of a State for the time being specified in Parts I & III of the First Schedule.

Explanation.—Among others Muslims, Christians, Sikhs, Anglo-Indians and Parsees shall be recognised as minority communities.' "

[296. अगले अनुच्छेदों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संघ के या प्रथम अनुसूची के भाग 1 और 3 में अभी उल्लिखित राज्यों की सेवाओं या पदों के लिये नियुक्तियां करने में, प्रशासन-कार्यपटुता को बनाये रखने की संगति के अनुसार सभी अल्पसंख्यक समुदायों के दावों का ध्यान रखा जायेगा।]

व्याख्या–अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के साथ मुसलमान, ईसाई, सिख, ऐंग्लो-इंडियन और पारसी समुदायों को अल्पसंख्यक समुदाय माना जायेगा।]

इस बारे में एक वैकल्पिक संशोधन की भी सूचना मैंने दे रखी है पर इस संशोधन को मैं पेश नहीं करूंगा।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, इस बारे में सभा के सामने शुरू में जो मूल अनुच्छेद रखा गया था वह इस प्रस्तावित अनुच्छेद से कहीं भिन्न था और सर्वथा भिन्न था। वह इस प्रकार था–

"296. Subject to the provisions of the next succeeding article the claims of all minority communities shall be taken into consideration, consistently with the maintenance of effciency of administration, in the making of appointments to services and posts in connection with the affairs of the Union or of a State for the time being specified in Part I of the First Schedule."

[296. अगले आगामी अनुच्छेद के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, संघ के अथवा प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उस समय उल्लिखित रहे राज्य कार्यों से सम्बन्ध सेवाओं या पदों के लिये नियुक्तियां करने में, प्रशासन कार्य-पटुता को बनाये रखने की संगति के अनुसार सब अल्पसंख्यक समुदायों के दावों का ध्यान रखा जायेगा।]

संशोधन रखने में मेरा क्या उद्देश्य है यह बिल्कुल स्पष्ट है। इस सम्बन्ध में सभा ने पहले जो निर्णय कर लिया है मैं उसी निर्णय को कायम रखना चाहता हूं। मसौदा समिति ने यह परिवर्तन करना क्यों ठीक समझा है, इसे मैं समझ नहीं पाता हूं। जहां तक कि मूल अनुच्छेद 296 का सम्बन्ध है, वह अल्पसंख्यकों के लिये परिमाण का काम करता था। उसके द्वारा केवल यह होता था कि बहुसंख्यक समुदाय अपने सदभिप्राय की, अपनी नेकनीयती की पवित्र घोषणा करता था और अल्पसंख्यकों को इससे एक मानसिक संतोष प्राप्त हो जाता था। इसके सिवाय उसका और कोई मूल्य नहीं था। उसके द्वारा कोई ऐसा अधिकार नहीं प्राप्त होता था जिसको न्यायालय द्वारा कोई कार्यान्वित कर सकता हो। वह केवल आश्वासन के लिये था।

[सरदार हुकम सिंह]

किन्तु अब यह आश्वासन भी छीन लिया जा रहा है। मैं आपको यह भी साफ बता दूं कि जहां तक मेरा निजी सम्बन्ध है मैं नहीं समझता कि हमारे असाम्प्रदायिक राज्य के लिये यह अनुच्छेद किसी भी तरह कलंक स्वरूप था या यह कि अपनी राष्ट्रीयता के लिये यह दूषण था। अल्पसंख्यकों को हमेशा यही सलाह दी गई है कि वह बहुसंख्यक समाज पर पूर्णत: विश्वास करें। मूल अनुच्छेद 296, मेरी राय में, केवल इस बात का द्योतक था कि अल्पसंख्यक समुदायों को बहुसंख्यक समुदाय पर पूरा विश्वास है। अगर इस अनुच्छेद द्वारा प्रदत्त आश्वासनों का उल्लंघन कभी किया जाता है तो अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्य इस अनुच्छेद के बल पर केवल इतना ही कर सकते हैं कि बहुसंख्यक समुदाय का ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट कर सकते हैं और वह कुछ नहीं कर सकते हैं। किन्तु अब यह सहारा उठा लिया जा रहा है।

इस सम्बन्ध में और कुछ कहने के पहले माननीय सदस्यों से दो बातों की अपील करूंगा। वस्तुत: यह बड़े दुर्भाग्य की ही बात है कि अभी तो शासन अधिकारारूढ़ है उस पर पूरा पूरा भरोसा करने में सिख सम्प्रदाय अपने को असमर्थ पा रहा है। इनकी इस असमर्थता का कारण है। उनका यह ख्याल है कि अतीत में जो भी आश्वासन या वचन उनको दिये गये हैं उन पर कभी अमल नहीं किया गया है बल्कि उनको भंग ही किया है। दलील के लिये आप यह भी मान लीजिये कि मैं जो कुछ कह रहा हूं वह गलत है, मेरा कहना सही नहीं है और अपने वर्तमान नेता ऐसे हैं कि उन पर इस बात का पूरा भरोसा किया जा सकता है कि वह हर एक के साथ न्याय करेंगे। मैं पूछता यह हूं कि इस बात की क्या गारण्टी है कि हमारे वर्तमान नेता ही हमेशा अधिकार में बने रहेंगे। क्या आपको यह आभास नहीं मिलने लगा कि बहुत सम्भव है कि भिन्न आदर्शों और उद्देश्य के लोग शीघ्र ही अधिकारारूढ़ हो जायें? सभा को इस प्रश्न पर तटस्थ दृष्टि से विचार करना चाहिये और यह न समझना चाहिये कि अल्पसंख्यक यह आशंकायें इसलिये व्यक्त कर रहे हैं कि उन्हें वर्तमान अधिकारारूढ़ दल पर या वर्तमान नेताओं पर कोई आक्रोश है और वह उनकी निन्दा करना चाहते हैं।

दूसरी बात मैं उनसे यह कहना चाहता हूं कि आप अपने को अल्पसंख्यकों की स्थिति में रख कर उनके द्वारा समय-समय पर व्यक्त की गई आशंकाओं को जरा समझने की कोशिश कीजिये।

हो सकता है कि इस विषम और अप्रिय बात कहने के कारण मुझ पर साम्प्रदायिक होने का दोषारोप किया जाये। किन्तु मेरा यह मत है कि निहित-स्वार्थ वर्ग केवल तर्क के लिये ही राष्ट्रीयता की दुहाई देता है। बहुसंख्यक समाज की उग्रता को तो राष्ट्रीयता माना जाता है पर जब अल्पसंख्यक लोग अपनी असहायावस्था को व्यक्त करते हैं तो उसे साम्प्रदायिक कह कर उसकी निन्दा की जाती है। बहुसंख्यक समाज के लिए अल्पसंख्यकों को राष्ट्रीयता का उपदेश देना तो बहुत आसान है पर राष्ट्रीयता पर अमल करना उनके लिये बड़ा मुश्किल है। मूल अनुच्छेद 296 और 299 को स्वीकार किया गया था इसलिये कि अल्पसंख्यक-मंत्रणा-समिति ने इसके लिये 8 अगस्त सन् 1947 को सिफारिशें की थीं जिन्हें कि संविधान सभा ने उसी साल 27-28 अगस्त को स्वीकार किया था। इन अनुच्छेदों में इन

संरक्षणों के लिये चार निश्चित उपबन्ध रखे गये थे। पहला उपबंध इस बात के लिये रखा गया था कि संरक्षित स्थानों की व्यवस्था के साथ संयुक्त निर्वाचन किया जायेगा। यह उपबन्ध अनुच्छेद 292 में रखा गया था। मंत्रिमण्डल में इनके लिए संरक्षित जगहों की व्यवस्था तो नहीं रखी गई थी किन्तु अनुसूची 4 के द्वारा राज्यपालों को यह निदेश देने की व्यवस्था की गई थी कि मंत्रिमण्डल में जहां तक शक्य हो अल्पसंख्यक समुदाय के लोग भी लिये जायें। अनुच्छेद 296 के द्वारा यह उपबन्ध किया गया था कि सरकारी नौकरियों के लिये नियुक्तियां करने में अल्पसंख्यकों के दावों को ध्यान में रखा जाये। फिर अल्पसंख्यकों के लिये एक आयोग की नियुक्ति की व्यवस्था की गई थी और इसके लिये उपबन्ध रखा गया था अनुच्छेद 299 में।

जहां तक कि सिखों का सम्बन्ध है श्रीमान, मैं उनका खास तौर पर उल्लेख करना चाहता हूं क्योंकि मैं यह समझता हूं कि इस सम्बन्ध में वह बड़े ही भाग्यहीन रहे हैं। सन् 1947 में जब अल्पसंख्यकों को संरक्षण देने के प्रश्न पर निश्चय किया गया था उस समय सिखों को संरक्षण देने की बात यह कह कर टाल दी गई थी कि देश विभाजन के फलस्वरूप क्या स्थिति रहेगी इसका स्पष्ट चित्र अभी हमारे सामने नहीं आ पाया है। मैं यहां यह कह दूं कि विभाजन के सम्बन्ध में आयोग का निर्णय इसके पहले ही दिया जा चुका था। सिख लोग पश्चिमी पंजाब को छोड़कर अन्यत्र जाना आरम्भ कर चुके थे और किस स्थिति में उन्हें अपना घर द्वार छोड़ना पड़ा था इसे सभी जानते हैं। उन्होंने विभाजन की सारी मुसीबतें स्वेच्छा से अपनाई थीं और भारत में रहना पसन्द किया था। अपना घर द्वार और अपना सब कुछ वहां छोड़ कर वह पैदल हिन्दुस्तान पहुंच रहे थे। वह खुद अपने को ही लेकर यहां नहीं पहुंचे बल्कि सात जिलों को बचा कर वह अपने साथ लाये और भारतीय राज्य की सीमा वृद्धि की। इन सारी घटनाओं को देखते हुए तो यह समझ में नहीं आ सकता कि सिखों को संरक्षण देने की बात आखिर 28 अगस्त को अनिश्चित क्यों छोड़ दी गई थी। अगर इनके लिये विशेष रूप से कुछ नहीं करना था तो फिर इस प्रश्न को स्थगित रखने का प्रयोजन ही क्या था? अगर सिखों को संख्या के हिसाब से ही प्रतिनिधान देना था जैसा कि अन्य अल्पसंख्यकों के लिये किया गया है तो फिर इस प्रश्न को अगस्त में अनिश्चित क्यों छोड़ा गया था? इस लिये तो छोड़ा नहीं गया था कि इसके लिये यह जान लेना आवश्यक था कि कितने सिख यहां आ गये हैं क्योंकि इस जानकारी से इस प्रश्न का सरोकार ही क्या हो सकता था। तब सोचा यह गया कि इस मौके पर अगर यह बात कही जाती है तो उससे इस अभागे समुदाय हो बड़ा सदमा पहुंचेगा जिसे वह बरदाश्त न कर सकेगा। इसलिये इस प्रश्न को उस समय अनिश्चित छोड़ दिया गया और सिखों ने यह समझा कि चूंकि उन्हें बड़ी यातनायें झेलनी पड़ी हैं इसलिये उनका विशेष रूप से ख्याल किया जायेगा।

इसके बाद इस प्रश्न पर राय देने का दूसरा मौका आया अल्पसंख्यक-उपसमिति के सामने उस समय जब उसने अपना 23 नवम्बर सन् 1948 का प्रतिवेदन तैयार किया। सिखों को यह बताने के लिये कि उनके लिए खास तौर पर कुछ नहीं किया जा सकता है इस मौके को ठीक समझा गया और शायद इसलिये कि इस बीच में एक साल से अधिक बीत चुका था। उन पर विपत्ति आये एक साल से ज्यादा का अरसा बीत चुका था। इस मौके पर भी सिखों को सन्तोष देने के

[सरदार हुकम सिंह]

लिये इतना अवश्य कर दिया गया था कि संरक्षण तो उनको नहीं दिये गये पर उनक लिए कोरी सदिच्छायें व्यक्त कर दी गई थीं। उपसमिति ने अपने प्रतिवेदन में यह कहा था:–

"यह कहना हमारे लिये अनावश्यक है कि इस समस्या पर विचार करते समय हम इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि पंजाब के विभाजन के पूर्व और पश्चात् दोनों ही समय, सिख समाज को कितनी मर्मान्तिक यातनायें भुगतनी पड़ी हैं। पश्चिमी पंजाब में जो भयानक काण्ड हुआ है उसके फलस्वरूप उन्हें अपने कितने ही प्रियजनों के जीवन से तथा एक बड़ी भौतिक सम्पत्ति से हाथ धो बैठना पड़ा है। यह ठीक है कि इस सम्बन्ध में हिन्दुओं को भी इन्हीं की तरह समान आपत्तियों का सामना करना पड़ा है किन्तु सिखों पर एक बड़ा विशेष आघात इस बात का पड़ा है कि उन्हें कितने ही ऐसे स्थानों से हाथ धोना पड़ा है जो धार्मिक दृष्टि से उनके लिये विशेष रूप से पवित्र थे। हम इस बात को खूब समझते हैं कि इस विपत्ति से उन्हें कितनी शारीरिक यातनायें भुगतनी पड़ी हैं और उनकी भावना को कितना प्रबल आघात पहुंचा है पर हमारे दिमाग में यह बात अच्छी तरह आ गई है कि जो प्रश्न विचारार्थ हमें सौंपा गया है उसका निर्णय हमें एक भिन्न दृष्टिकोण से ही करना होगा।"

इसके बाद तीसरी मंजिल आई जब उपसमिति का प्रतिवेदन अल्पसंख्यक समिति के सामने पेश किया गया और उसने इस आशय का प्रस्ताव पास किया कि अनुसूचित जातियों को छोड़कर अन्य अल्पसंख्यकों के लिए विधान मण्डलों में स्थान रक्षण की जो पद्धति है वह अब उठा दी जाती है।

अन्य अल्पसंख्यक समदुायों से मैं क्षमा प्रार्थी हूं। उनको संरक्षण प्राप्त था पर सिखों के सवाल के उठते ही उन्हें भी इस संरक्षण से वंचित हो जाना पड़ा। समिति ने सिफारिश की कि अल्पसंख्यकों के लिए स्थान सुरक्षित करने की जो व्यवस्था विधि द्वारा लिपिबद्ध की गई उसे अब उठा देना चाहिये, मैं इस बात पर ज्यादा जोर देना चाहता हूं इसलिये कि अल्प-संख्यक उपसमिति तथा अल्पसंख्यक-समिति दोनों की ही यह सिफारिश थी कि स्थान रक्षण की व्यवस्था उठा दी जानी चाहिये। इनकी इस सिफारिश को संविधान सभा ने 26 मई सन् 1949 को स्वीकार कर लिया।

अनुच्छेद 292 के अधीन विधान मण्डलों के लिय स्थान रक्षण की जो व्यवस्था थी वह अब समाप्त कर दी गई है। इस अनुच्छेद में इस सम्बन्ध में अब संशोधन कर दिया गया है।

चौथी अनुसूची में इसके लिये एक निदेश-विलेख (Instrument of Instruction) रखा गया था वह भी 11 अक्तूबर के निर्णयानुसार हटा दिया गया है। संरक्षण के लिये बचे खुचे जो दो खण्ड अनुच्छेद 296 और 299 में रह गये हैं जिन पर कि पुनर्विचार करने का अभी अभी हमने फैसला किया है वह संविधान-सभा के निश्चय को प्रतिबिम्बित करते हैं। अत: जहां तक कि मैं समझ पाता हूं इस बात का कोई कारण नहीं है कि इनमें हम ऐसा परिवर्तन करें जैसा कि करने जा रहे हैं।

दूसरी बात मैं यह कहता हूं कि अल्पसंख्यक समिति ने इन दो अनुच्छेदों में किसी भी परिवर्तन की सिफारिश कभी नहीं की है। तीसरी बात मुझे यह कहनी है कि खुद अल्पसंख्यकों ने कभी भी इन परित्राणों को हटाने की बात को नहीं मंजूर किया है। अब तक हमेशा यही कहा गया है कि इन परित्राणों को तभी हटाया जायेगा जब कि अल्पसंख्यक समुदायों को ही इस बात का विश्वास हो जाये कि उनका हित इनको हटाने में ही है। इस सम्बन्ध में मेरा कहना यह है कि जहां तक कि इन दो अनुच्छेदों का—नं. 296 और 299 का—सम्बन्ध है, अल्पसंख्यक समुदायों ने कभी भी इनमें रखे गये परित्राणों को हटाने पर रजामन्दी नहीं जाहिर की है। अल्पसंख्यक-समिति ने अपने प्रतिवेदन में यह कहा है कि वह इस बात को अच्छी तरह जानती है कि सभा जो फैसला एक बार कर लेती है उसे जब तब हमें असानी से नहीं बदल देना चाहिये। फिर मैं पूछता हूं कि इस तरह हमेशा, आसानी से और बिना समझे बूझे आप पूर्व निर्णयों में क्यों परिवर्तन करते जा रहे हैं? मेरी प्रार्थना यही है कि डॉ. अम्बेडकर ने जो संशोधन रखा है उसे सभा अवश्य अस्वीकार कर दे और संशोधन को स्वीकार कर मूल परित्राणों को पूर्ववत् बना रहने दें।

गत तीन चार दिनों के अन्दर एक बड़ी गम्भीर बात चारों तरफ फैल गई है जिसका सम्बन्ध केवल सिखों से ही है। सबको यह बताया गया है कि अल्पसंख्यक समिति में जो सिख प्रतिनिधि थे उन्होंने लिखित रूप में यह स्वीकार किया है कि संविधान में और कोई संरक्षण रखने की वह मांग नहीं करेंगे यदि—यह एक बहुत बड़ा यदि है—उनके पिछड़े हुए वर्गों को—यानी मजहबी, रामदासी, कबीर पन्थी और सिकलीगर समुदायों को—अनुसूचित जातियों में शामिल कर लिया जाये यह बात सच हो सकती है। गत मई में, जैसा कि मैं कह चुका हूं स्थिति यह थी कि इन दो अनुच्छेदों को अर्थात् नं. 296 और 299 को सभा स्वीकार कर चुकी थी। संरक्षण का उपबन्ध तब तक था पर उस दिन इनको हटाना तय हो चुका था। चौथी अनुसूची का निदेश-विलेख भी हटा दिया गया है। अल्पसंख्यक उपसमिति की कार्यवाही को पढ़कर जहां तक मैं देख पाता हूं मुझे तो कहीं भी ऐसा उल्लेख नहीं मिलता है कि अनुच्छेद 296 और 299 का जिक्र हुआ हो या अल्पसंख्यकों से यह कहा गया हो कि वह इनको हटाने पर राजी हो जायें। अल्पसंख्यक समिति ने केवल विधान-मण्डलों में स्थान रक्षण की व्यवस्था को हटाने की बात स्वीकार की थी। यहां मैं यह बता देना चाहता हूं कि इन दो अनुच्छेदों में स्थान-रक्षण का कोई उपबन्ध नहीं है। अल्पसंख्यक समिति ने और किसी बात पर विचार ही नहीं किया। अनुच्छेद 296 और 299 में जो संरक्षण मूलक उपबन्ध थे उन पर तो समिति ने कभी विचार ही नहीं किया। उनको तो पास ही कर लिया गया था।

मैं आप से अपील करता हूं श्रीमान कि जरा सोचिये तो सही कि आखिर सिख प्रतिनिधियों को यह कैसे मालूम होता कि आखिर मौके पर इनमें परिवर्तन कर दिया जायेगा। अगर मैं सभा के पूर्व निर्णयों को रखने का आग्रह कर सकता हूं तो इसमें क्या हर्ज है? मैं यह तो नहीं कह रहा हूं कि सिखों को और परित्राण दिये जायें। मैं तो इन दिये गये परित्राणों को जो अब छीना जा रहा है उसके विरुद्ध अपनी आवाज उठा रहा हूं। अपनी बात से या समझौते से आज अगर कोई हट रहा है तो मसौदा समिति या शासनारूढ़ दल हट रहा है न कि सिख समाज।

[सरदार हुकम सिंह]

जहां तक इस प्रश्न का सम्बन्ध है मैं आपके सामने एक और बात रखता जो इस प्रसंग में विचारणीय है। तर्क के लिए थोड़ी देर के लिये आप यह भी मान लीजिये कि सिख प्रतिनिधियों ने परित्राणों को उठा देना मंजूर किया था तो इससे क्या यह समझा जाये कि उन्होंने ऐसा इसलिये किया था कि वह अपने पिछड़े हुए वर्गों को अनुसूचित जातियों में शामिल कराने के लिये बहुत ही आतुर थे? अगर यही बात है उनकी आतुरता से लाभ उठा कर क्या उन्हें इस बात पर राजी करना चाहिये कि वह सारे परित्राणों को छोड़ दें? मैं इसे नहीं मान सकता। पर मान लीजिये कि यह सच है पर मैं यह भी जानता हूं अनुसूचित जातियों ने पिछड़े हुए सिखों को अपने साथ शामिल करने का प्रबल विरोध किया था और इन्हें अनुसूचित जातियों में शामिल करने में सरदार पटेल को बड़ी कठिनाई उठानी पड़ी थी। सिख लोग इसके लिये सरदार पटेल के कृतज्ञ हैं। जैसा कि कहा जाता है, अपनी अन्य सारी मांगों का परित्याग करके सिख लोग अपने पिछड़े हुये वर्गों के लिये कहीं यह रियायत पा सके थे। पर इससे हुआ क्या? इस रियायत पर पहिली कैद यह लगा दी गई थी कि केवल पूर्वी पंजाब के पिछड़े सिखों को ही यह छूट मिलेगी। पटियाला यूनियन के पिछड़े हुए सिखों को यह रियायत नहीं दी गई। यह कैसी विचित्र बात है। मैं पूछता हूं कि धर्म के आधार पर यह भेदभाव बरतना भला कहां तक औचित्य संगत कहा जा सकता है? धर्म के आधार पर जो वर्ग अल्पसंख्यक हैं उनको आप संरक्षण नहीं देते हैं पर अनुसूचित जातियों को सरक्षण देते हैं इसलिये कि वह पिछड़ी हुई हैं। फिर क्या कारण है कि सिख समाज के पिछड़े हुए वर्गों को जो अन्य पिछड़े हुए लोगों की तरह ही समान अयोग्यता के शिकार हो रहे हैं, यह संरक्षण न दिया जाये? क्या केवल इसलिये कि वह सिख सम्प्रदाय के लोग हैं? क्या यही आपका असाम्प्रदायिक राज्य है? जिस मांग को पाने के लिये सिख लोग इतना आतुर थे, जिसे एक बड़ी कीमत चुका कर वह पा सके हैं और जिसे बड़े इतस्तत: के बाद अनिच्छा से दिया गया है वह भी आज अनिश्चित अवस्था में पड़ गई है। अनुसूची 10 को अब हटा दिया गया है जिसमें अनुसूचित जातियों को लिपिबद्ध करके दिखाना था। अनुच्छेद 301 के अधीन जब राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया जा रहा है कि राज्यपाल या शासक से परामर्श करके वही इस बात का ऐलान करेगा कि कौन-कौन जातियां अनुसूचित जातियां समझी जायेंगी। यह सभी समझ सकते हैं कि सिखों को अब फिर इस बात की जबदस्त कोशिश करनी पड़ेगी कि वह राज्यपाल को इस पर राजी करें कि राष्ट्रपति को वह यह परामर्श दे कि पिछड़े हुए सिखों को वह अनुसूचित जातियों में शामिल कर ले। मुझे चिन्ता इसी बात की है कि सिखों के पास अब कुछ भी नहीं रह गया है। उनको कोई और परित्राण नहीं प्राप्त रह गये हैं। फिर किस आधार पर वह अब राज्यपाल से यह अनुरोध करेंगे कि वह राष्ट्रपति को यह परामर्श दें कि सिखों को वह संरक्षण दे। इसलिये मेरा कहना यह है कि सिखों ने अगर कोई बचन दिया भी था तो उसे यहां दलील के रूप में न पेश करना चाहिये क्योंकि उसके बदले में उन्हें जो भी मिला था वह सब अब उनसे ले दिया गया है।

जब सिख लोग कांग्रेस को उसकी उन वचनों की याद दिलाते हैं जो उसने 1929 में, 1946 और 1947 में दे रखे थे तो उनसे यह कहा जाता है कि स्थिति

अब बिल्कुल बदल गई है। कैबिनेट मिशन की योजना में, जिसके फलस्वरूप इस संविधान सभा का जन्म हुआ है, सिखों को यहां के प्रमुख तीन समुदायों में एक माना गया था। परिस्थिति में एकमात्र परिवर्तन तो केवल यह हुआ है कि मुसलमानों को पाकिस्तान मिल गया है। क्या आप यह कहना चाहते हैं कि चूंकि मुसलमानों को पाकिस्तान मिल गया इसलिये सिख अब अल्पसंख्यक नहीं रह गये? भला आपका यह कहना कहां तक तर्कसंगत माना जा सकता है? अगर मैं यहां यह नहीं बता देता कि सिखों की भावनायें आज क्या हैं तो मैं अपने कर्तव्य पालन में चूक करता हूं। पाकिस्तान ने, वहां के अल्पसंख्यकों को मिटाने के लिये बर्बर, क्रूर और प्रत्यक्ष हिंसा का सहारा लिया किन्तु इसी समस्या को निपटाने के लिये हमने बड़ी चालाकी से और परोक्ष रूप से एक शांतिमय उपाय को अपना रखा है। अपनी परम्परा के अनुसार अहिंसात्मक हम अवश्य बने हुए हैं। सभा से मैं आग्रह करूंगा कि वह जरा मन्द गति से चले। बहुसंख्यक समुदाय से मैं यह अपील करूंगा कि, ठोस कार्रवाई के द्वारा, न कि केवल नारा लगाकर, वह अल्पसंख्यकों का विश्वास प्राप्त करें। अनुच्छेद 296 में ऐसा परिवर्तन करने से अल्पसंख्यकों के मन में जिन पर कि उस परिवर्तन का असर पड़ेगा एक बड़ी व्याकुलता पैदा हो गई है। मैं सभा से अनुरोध करूंगा कि वह समूचे मसौदे को उसी रूप में रहने दे जिसमें कि यह मेरे संशोधन में दिखाया गया है।

लोगों को यह भी बताया गया है कि हमारे नेता यह समझते हैं कि मूल अनुच्छेद 296 को रखने से तो संविधान ही सर्वथा कुरूप हो जायेगा। मैं इसे नहीं समझ पाता हूं। ऐंग्लो-इंडियन और अनुसूचित जातियों के उल्लेख से अपना संविधान अगर कुरूप नहीं हो पाता है फिर फिर सिखों के उल्लेख से ही इसमें क्या कुरूपता आ जायेगी? किन्तु अगर मेरी इस अपील के बावजूद भी सभा पुराने मसौदे को रखने का सुझाव देने वाले संशोधनों में से किसी को भी स्वीकार करना नहीं चाहती है तो मैं अन्तिम प्रार्थना इससे इस बात की करूंगा कि वह मेरे संशोधन नं. 256 को स्वीकार करे। यह संशोधन यों है:—

"सूची 2 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन नं. 23 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 296 के साथ यह खण्ड जोड़ दिया जाये—

'(2) Nothing in this article or in article 10 of the Constitution shall prevent the State from making any provision for the reservation of appointments or posts in favour of any minority community which, in the opinion of the State, is not adequately represented in the services under the State.' "

[(2) संविधान के इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 10 की कोई बात राज्य को, ऐसे किसी अल्पसंख्यक समुदाय को जिसको राज्य की राय में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधान नहीं प्राप्त है नियुक्तियों या पदों के लिये उपबन्ध करने से नहीं रोकेगी।]

राज्यों में जो कुछ हो रहा है उसकी पूरी जानकारी केन्द्र को होगी। वह हर बात को विस्तारपूर्वक जानता होगा। मेरा कहना यह है कि कुछ न कुछ स्वतन्त्रता तो उस आदमी को रहनी ही चाहिये जो मौके पर रह कर काम देखता है। प्रशासन को शान्तिपूर्वक चलाने के लिये तथा विभिन्न समुदायों के बीच अच्छा सम्बन्ध बनाये

[सरदार हुकम सिंह]

रखने के लिये यदि राज्य अपनी सेवाओं के लिए नियुक्तियां देने के सम्बन्ध में कुछ हेर फेर करने का निर्णय करता है तो उस पर संविधान के अधीन कोई रुकावट न रहनी चाहिये। कुछ उच्च पदस्थ व्यक्तियों का ख्याल यह है कि फिलहाल ऐसी कोई रुकावट उन पर नहीं आती है पर मुझे डर इस बात का है कि अनुच्छेद 10 के द्वारा इस सम्बन्ध में हेरफेर करने पर रुकावट आ सकती है क्योंकि उसमें कहा यह गया है कि सब नागरिकों को राज्याधीन नियुक्ति के विषय में अवसर समता प्राप्त रहेगी। इस बारे में मुझे आशंका न होती यदि अनुच्छेद 10 के खण्ड (3) में यह न कहा गया होता कि:

"इस अनुच्छेद की किसी बात से राज्य को पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधान राज्य की सम्मति में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों अथवा पदों के रक्षण के लिये उपबन्ध करने में कोई अवरोध न होगा।"

मेरा संशोधन नं. 256 भी कुछ इसी आशय का है जिस आशय का कि अनुच्छेद 10(3) है। मैंने इस संशोधन को उस समय जब कि अनुच्छेद 10 पर विचार हो रहा है पेश इसलिये नहीं किया कि उस समय अनुच्छेद 296 मौजूद था और तब इसकी कोई जरूरत नहीं थी। किन्तु अब चूंकि अनुच्छेद 296 में परिवर्तन किया जा रहा है इसलिये मैं यह अनुभव करता हूं कि राज्यों को यह स्वतन्त्रता तो मिलनी ही चाहिये और हमें यहां यह साफ साफ कह देना चाहिये कि यदि राज्य विभिन्न समुदायों को नियुक्तियां देने के बारे में कुछ हेर फेर करना चाहता है तो उसे इसकी स्वतन्त्रता होगी।

मैंने कुछ समाचार पत्रों में यह खबर पढ़ी है कि भारत सरकार के कानूनी सलाहकारों ने पूर्वी पंजाब की सरकार को यह सलाह दी है कि नौकरियों के बारे में वह किसी वर्ग विशेष के दावों पर विचार नहीं कर सकती है। इस समाचार को पढ़कर मेरी आशंका और बढ़ गई है और मुझे पक्का विश्वास हो गया है कि जब तक राज्यों को इस बारे में स्वविवेकानुसार चलने की कुछ स्वतन्त्रता नहीं प्राप्त रहती है वह चाहने पर भी इस बारे में कोई हेरफेर न कर पायेंगे। मैं पुनः सभा के सामने अपनी यह अपील रखता हूं। मैं यह नहीं मांग रहा हूं कि संविधान में सेवाओं के बारे में रक्षण का कोई उपबन्ध रखिये। संविधान को कुरूप करने वाली किसी बात की मांग नहीं कर रहा हूं। मैं तो केवल इस बात की मांग कर रहा हूं कि बहुसंख्यक समुदाय अपनी सद्भावना का आभास तो हमें दें। यदि इतना भी नहीं किया जाता है तो जहां तक कि अल्प संख्यक समुदायों का सम्बन्ध है उनका रहा सहा विश्वास भी उठ जायेगा।

***अध्यक्ष:** सात आठ संशोधन इस अनुच्छेद पर इस बात के आये हैं कि इसकी जगह संशोधनों द्वारा सुझाये गये अनुच्छेद रखे जायें। पहले मैं उन संशोधनों को लूंगा जिनको इसके स्थान पर अन्य अनुच्छेद रखने का सुझाव दिया गया है। उसके बाद अन्य संशोधन लिये जायेंगे। इसकी जगह दूसरा अनुच्छेद रखने का सुझाव देने वाला संशोधन नं. 28 अब लिया जाता है जो डॉ. अम्बेडकर के नाम में है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं इसे पेश नहीं करना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** अब लिया जाता है संशोधन नं. 24।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यह भी नहीं पेश किया जा रहा है।

***अध्यक्षः** तो अब आता है संशोधन नं. 25 जो सरदार भूपेन्दर सिंह मान के नाम में है।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** इसका सम्बन्ध है संशोधन नं. 23 से। चूंकि नं. 23 पेश नहीं किया गया है इसलिये मैं इसे नहीं पेश कर सकता हूं।

***अध्यक्षः** इस संशोधन में और संशोधन नं. 23 में थोड़ा-सा ही अन्तर है अन्यथा दोनों में प्रायः एक ही बात कही गई है। अगर आप इसे पेश करना चाहते हैं तो मेरी तरफ से अनुमति है।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** मैं इसे पेश कर रहा हूं, श्रीमान।

(संशोधन नं. 26 और 27 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** अब लिया जाता है संशोधन नं. 183 जो श्री ब्रजेश्वर प्रसाद का है।

***श्री आर.के. सिधवाः** अन्य संशोधनों का क्या होगा?

***अध्यक्षः** उनको मैं बाद में लूंगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहारः जनरल): मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमानः–

"कि संशोधन सूची 2 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन नं. 15 में (इसे बजाय नं. 23 कहने के, आपकी अनुमति से मैं इसे नं. 15 कहूंगा) प्रस्तावित अनुच्छेद 296 के स्थान पर यह रखा जायेः–

'296. (1) The maintenance of efficiency of administration shall be the only consideration in the making of appointment to services and posts in connection with the affairs of the Union or of a State.

(2) Parliament may by law prescribe the conditions under which the President may, if he deems necessary, appoint members of the Scheduled Tribes and the Scheduled Castes to services and posts in connection with the affairs of the Union or of a State.

(3) The provisions of clause (2) of this article shall apply in relation to such other backward classes as the President may on receipt of the report of a Commission

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

appointed under clause (1) of article 301 of this Constitution by order specify as they apply in relation to members of the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes.

(4) Parliament shall have the power to repeal, extend or modify any or all of the provisions of this article from time to time.' "

[296. (1) संघ या राज्य के कार्यों संसक्त सेवाओं और पदों के लिये नियुक्तियां करने में प्रशासन कार्य पटुता को बनाये रखने का ही एक मात्र ख्याल रखा जायेगा।

(2) संसद विधि द्वारा उन शर्तों को विनिहित कर सकती है जिनके अधीन राष्ट्रपति यदि वह आवश्यक समझें संघ या राज्य के कार्यों से संसक्त सेवाओं या पदों के लिये अनुसूचित जनजातियों या अनुसूचित जातियों के सदस्यों को नियुक्त कर सकता है।

(3) इस अनुच्छेद के खण्ड (2) के उपबन्ध ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के सम्बन्ध में जिनका राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खण्ड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लेख करे उसी तरह लागू होंगे जैसे कि वे अनुसूचित जनजातियों या अनुसूचित जातियों के सम्बन्ध में लागू होते हैं।

(4) समय समय पर इस अनुच्छेद के किसी या सभी उपबन्धों के निरसन, विस्तार या रूप भेद की शक्ति राष्ट्रपति को प्राप्त रहेगी।]

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** खण्ड (2) और (3) खण्ड (1) से असंगत हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** असंगत नहीं हैं। मैं समझाये देता हूं कि ये क्यों कर असंगत नहीं हैं। अगर ये असंगत हैं तो इसका निर्णय अध्यक्ष देंगे।

***अध्यक्ष:** उन्होंने एक औचित्य प्रश्न उठाया है जिस पर मुझे विचार करना होगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** पहले मुझे समझा तो लेने दीजिये। अगर उनका यह औचित्य प्रश्न है कि असंगत है तो मैं यह समझा देता हूं क्यों कर यह असंगत नहीं है। खण्ड (1) में यह कहा गया है कि नियुक्तियां देने में लोक सेवा आयोग ख्याल केवल इस बात का करेगा कि उस नियुक्ति से प्रशासन कार्यपटुता कहां तक बनी रहेगी और अभ्यर्थी की योग्यता कैसी है। लोक सेवा आयोग अल्पसंख्यक समुदायों के दावों को ध्यान में नहीं रखेगा। नियुक्तियां करते समय लोक सेवा आयोग अन्य और किसी भी बात से अपने को प्रभावित नहीं होने देगा। अनुसूचित आदिमजातियों या अनुसूचित जातियों के सदस्यों को नियुक्त करने की शक्ति राष्ट्रपति में और केवल राष्ट्रपति में निहित मैं रख रहा हूं केवल राजनैतिक आवश्यकता

के ख्याल से। लोक सेवा आयोग को हमें राजनैतिक झंझटों से सर्वथा मुक्त रखना होगा। मैं नहीं समझ पाता कि खण्ड (2) और (3) खण्ड (1) से असंगत क्योंकर हैं। आपका निर्णय पा जाने के बाद ही मैं आगे अपनी बात कहूंगा।

***अध्यक्षः** जिस रूप में यह भाषाबद्ध किया गया है उससे यह असंगत हो जाता है। 'परन्तु' यह आरम्भ में रख कर आप इसे संगत बना सकते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** अवश्य ही मैं मसौदा तैयार करने का काम नहीं करता हूं और न मैं श्री सन्तानम् जैसा योग्य वकील ही हूं।

***अध्यक्षः** आपके संशोधन को मैं अनियमित नहीं ठहराने जा रहा हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** जहां तक कि खण्ड (4) का सम्बन्ध है, इसका उद्देश्य यही है कि समूचा अनुच्छेद लचीला रहे ताकि शिक्षा का प्रसार होने पर और देशवासियों के जीवन स्तर में आर्थिक उन्नति होने पर, जब चाहे संसद उस उपबन्ध को हटा दे। जिस रूप में संशोधन नं. 15 को मसौदा समिति ने रखा है उसके मैं विरुद्ध हूं क्योंकि मैं नहीं चाहता हूं कि नियुक्तियां करते समय और अन्य अनावश्यक बातों का ख्याल किया जाये। मुझे डर इस बात का है कि अगर अन्य समुदायों के दावों का इसमें ख्याल किया जाता है तो फिर हमारे राज्य का समूचा ढांचा ही बिगड़कर खतरे में पड़ जायेगा।

यह बात मेरी समझ में अच्छी तरह आ गई है कि हमारे देश में अल्पसंख्यक कोई नहीं है। इसलिये किसी अल्पसंख्यक वर्ग के दावे का ख्याल नहीं किया जायेगा। हां यह पिछड़े हुए लोग अवश्य हैं। कुछ लोग ऐसे हैं जो सर्वथा पिछड़े हुए हैं, जिनको शताब्दियों से दबा कर पीड़ित रखा गया है। नौकरियों के सम्बन्ध में केवल ऐसे ही लोगों के दावों को ध्यान में रखा जायेगा। ऐसे लोगों की नियुक्ति का काम केवल राष्ट्रपति के हाथ में रहना चाहिये। इनको नियुक्त करने का दायित्व राष्ट्रपति पर होना चाहिये। मैं ऐसा अनुभव करता हूं कि अगर हम इस आशय का उपबन्ध रखते हैं कि नियुक्तियां देने में अनुसूचित आदिम जातियों और अनुसूचित जातियों के दावों को ध्यान में रखा जायेगा तो इसका नतीजा यह होगा कि लोक सेवा आयोग के सदस्यों पर इतना बड़ा भार पड़ जायेगा जिसको वहन करने की शायद उनमें क्षमता न होगी। आखिर अल्पसंख्यक समुदायों का दावा क्या है? अनुसूचित आदिम जातियों या अनुसूचित जातियों का दावा क्या है? कोई भी आदमी जो साधारण बुद्धि और सहज ज्ञान रखता है, वह क्या कभी भी उनके अमान्य दावों को मानने पर तैयार हो सकता है।

इनके दावे यह हैं। कोई कहता है कि हमको समता प्राप्त होनी चाहिये। कोई यह मांग करता है कि नौकरियों में हमें संख्या के आधार पर जगहें मिलनी चाहिये। यहां सभा भवन में एक तीसरी मांग यह की गई है कि चूंकि हमें शताब्दियों तक दबाया गया है और हम पर अत्याचार किये गये हैं इसलिये अब सवर्ण हिन्दुओं से इसके लिये प्रायश्चित करवाया जाये। इन लोगों के विरुद्ध किये गये अपराधों के लिये अगर इस तरह प्रायश्चित हम करते हैं तो फिर हमें सारी राज्य-व्यवस्था

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

ही इन लोगों को यानी अनुसूचित आदिम जातियों को और अनुसूचित जातियों को दे देनी होगी। लोक-सेवा-आयोग क्या इन दावों पर कोई ध्यान देने जा रहा है? मेरा ख्याल है कि इन बातों के लिये किसी समुदाय को दोषी ठहराना गलत होगा। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के विरुद्ध जो भी अन्याय हुआ है उसके लिये किसी समुदाय को दोषी ठहराना गलत होगा। अगर इस दोष का कोई भागी है वह इतिहास है। समय को, और समय के प्रवाह को ही इसके लिये दोषी ठहराया जा सकता है।

***श्री एच.वी. कामत:** आखिर इतिहास बनाता कौन है?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं समझाये देता हूं। इतिहास का निर्माण करते हैं अत्याचार करने वाले और अत्याचार सहने वाले। जिसके साथ अत्याचार किया जाता है उसकी यह भूल है कि वह अत्याचार को स्वीकार करता है। मेरे इस कथन पर अगर आप यह दलील रखते हैं कि वह इस स्थिति में नहीं थे कि सुसंगठित होकर प्रतिरोध करते तो हम यह कहेंगे कि उनमें राजनैतिक चेतना का अभाव था, संगठन का अभाव था जिसके कारण उन पर अत्याचार किया जा सका। इन अत्याचारों के लिये अगर कोई जिम्मेदार था तो व्यवस्था और समाज जिम्मेदार थे। अनुसूचित आदिमजातियों और अनुसूचित जातियों पर किये गये अन्यायों के लिये अगर कोई दोषभागी है वह युग धारा है और कोई नहीं। ऐसे किसी भी अन्याय के दोष सवर्ण हिन्दू नहीं हैं। हमें भी अन्याय का शिकार होना पड़ा है। क्योंकि यहां के निवासियों ने सवर्ण हिन्दुओं का भी शोषण किया है, उन पर अन्याय किये हैं। शताब्दियों तक हमारा देश पराधीन रहा है। चिरकाल से यह देश विदेशियों के हस्तक्षेप के अधीन रहा है और विदेशियों के अत्याचार इस पर हुये हैं। सवर्ण हिन्दुओं को यहां समृद्ध होने का फूलने फलने का कभी मौका नहीं मिला है। सारा दोष सवर्ण हिन्दुओं के मत्थे लादना सरासर गलत है और अन्याय है। वह खुद स्थिति के शिकार रहे हैं। मैं इस बात को नहीं मान सकता हूं कि सवर्ण हिन्दुओं ने किसी पर भी अत्याचार किया है।

मैं इस बात पर भी जोर देना चाहता हूं कि प्रस्तुत अनुच्छेद को हमें रखना चाहिये था राज्य की नीति के निदेशक तत्वों में। इसके द्वारा तो केवल सदिच्छा की घोषणा मात्र की कई है। सतुरां इसे हमें राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों में ही स्थान चाहिये था।

मेरी समझ से एक और कारण भी है जिसके लिये मुझे इसका विरोध करना पड़ रहा है। वह यह है कि इन लोगों के नैतिक, आर्थिक तथा भौतिक स्तर को समुन्नत करने के लिये जो कुछ हो सकता था हमने दिया है। मूलाधिकारों से सम्बन्ध रखने वाले अध्याय को हमने पास किया है। उनके लिये अनुच्छेद 110 को हमने पास किया है। केन्द्रीय और प्रान्तीय विधान मण्डलों में इनके लिये सुरक्षित जगहों का हमें उपबन्ध किया है। वयस्क मताधिकार की व्यवस्था की है। असाम्प्रदायिक राज्य के लिये जो भी बाते अपेक्षित हो सकती हैं उनकी हमने व्यवस्था की है। और आप क्या चाहते हैं? क्या आप राज्य को ही छिन्न भिन्न कर देना चाहते हैं?

मेरे दिमाग में यह बात भी साफ हो गई है कि अगर इस समय साहस के साथ इस सिद्धान्त को यहां साफ-साफ नहीं रख देते हैं। कि अपने असाम्प्रदायिक राज्य की बुनियाद को, अन्य बातों का ख्याल करके कभी हम बिगड़ने न देंगे तो देश का भविष्य सर्वथा अन्धकारमय हो जायेगा। मेरा अपना यह मत है कि ये लोग जो विधान मण्डलों और नौकरियों में स्थान रक्षण के लिये इतना शोर गुल मचा रहे हैं वह हरिजन समाज के मुट्ठी भर विशिष्ट आदमियों का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। अनुसूचित आदिम जातियों और अनुसूचित जातियों में जो राजनैतिक शक्ति सम्पन्न दल है वह इन्हीं लोगों को मिला कर बना है। मैं नहीं समझता कि इनकी इन मांगों और दावों से अनुसूचित जातियों के विशाल जनसमूह का कोई वास्ता है और इन मांगों की पूर्ति से उनको कोई फायदा पहुंच सकता है। इन जातियों के बारे में जो समस्या आज हमारे सामने है उनका समाधान नौकरियां दिला कर नहीं किया जा सकता है। इस समस्या के समाधान का उपाय तो यही है इन लोगों को हम अपने में मिला कर एक कर दें और सभी सम्प्रदायों को एक राष्ट्र के रूप में सुसम्बद्ध कर दें। ऐसा करने से देश में सुखसमृद्धि आ सकती है। मैं नहीं चाहता हूं कि मुसलिम लीग की राजनीति यहां के राजनीतिक रंगमंच पर पुनः अभिनीत की जाये। मेरे संशोधन का मूल उद्देश्य है अपने राज्य की नींव को पुख्ता करना। यहां सभा भवन में मैंने जो भी वक्तृतायें दी हैं उनमें हमेशा मैंने ऐसी बात पर जोर दिया है। राज्य के हितों को सुरक्षित रखने के लिए ही मैंने यह संशोधन पेश किया है।

(संशोधन नं. 280 ओर 309 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** यह है वह संशोधन जिनमें, डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित अनुच्छेद के स्थान पर अन्य अनुच्छेद रखने की बात कही गई है। पहले मैं इन्हीं संशोधनों को निपटा देना चाहता हूं। एक संशोधन जब स्वीकार कर लिया जायेगा तो बाकी छोड़ दिये जायेंगे। कुछ मिला कर दो ही संशोधन नं. 16 और 180—ऐसे आये हैं। सरदार हुकुम सिंह के संशोधन नं. 256 पर अलग मत लिया जायेगा।

***श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): खण्डों पर आम बहस होगी या नहीं?

***अध्यक्षः** इन पर आम बहस का मौका मैं दूंगा। अभी मैं इन संशोधनों को निपटा देना चाहता हूं ताकि संशोधनों के बारे में कोई गुंजलक न रह जाये। इस अनुच्छेद के स्थान पर अन्य अनुच्छेद रखने का सुझाव देने वाले कई संशोधन आये हैं। पहले मैं सरकार हुकुम सिंह के संशोधन नं. 16 को लेता हूं।

प्रश्न यह हैः

"कि संशोधन सूची (भाग 2) के संशोधन नं. 3163 के सम्बन्ध में, प्रस्तावित अनुच्छेद 296 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये।

[अध्यक्ष]

'296. Subject to the provisions of the next succeeding article the claims of all minority communities shall be taken into consideration consistently with the maintenance of efficiency of administration, in the making of appointments to services and posts in connection with affairs of the Union or of a State for the time being specified in Parts I & III of the First Schedule.

claims of minority communities to services and posts.

Explanation—Among others Muslims, Christians, Sikhs, Anglo-Indians and Parsees shall be recognised as minority communities.' "

[296. अगले आगामी अनुच्छेद के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, संघ या प्रथम अनुसूची के भाग 1 और 3 में अभी उल्लिखित राज्यों की सेवाओं या पदों के लिये नियुक्तियां करने में, प्रशासन-कार्य पटुता को बनाये रखने की संगति के अनुसार, सभी अल्पसंख्यक समुदायों के दावों का ध्यान रखा जायेगा।]

व्याख्या–अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के साथ मुसलमान, ईसाई, सिख, ऐंग्लो-इंडियन और पारसी समुदायों को अल्पसंख्यक समुदाय माना जायेगा।]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब प्रश्न यह है–

"कि सूची 2 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन नं. 23 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 296 के स्थान पर यह रखा जाये–

'296. (1) The maintenance of efficiency of administration shall be the only consideration in the making of appointment to services and posts in connection with the affairs of the Union or of a State.

(2) Parliament may by law prescribe the conditions under which the President may, if he deems necessary, appoint members of the Scheduled Tribes and the Scheduled Castes to services and posts in connection with the affairs of the Union or of a State.

(3) The provisions of clause (2) of this article shall apply in relation to such other backward classes as the President may on receipt of the report of a Commission

appointed under clause (1) of article 301 of this Constitution by order specify as they apply in relation to members of the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes.

(4) Parliament shall have the power to repeal, extend or modify any or all of the provisions of this article from time to time.' "

[296. (1) संघ या राज्य के कार्यों से संसक्त सेवाओं और पदों के लिये नियुक्तियां करने में प्रशासन-कार्य-पटुता को बनाये रखने का ही एक मात्र ख्याल रखा जायेगा।

(2) संसद् विधि द्वारा उन शर्तों को विनिहित कर सकती है जिनके अधीन राष्ट्रपति, यदि वह आवश्यक समझें, संघ या राज्य के कार्यों से संसक्त सेवाओं या पदों के लिये अनुसूचित जनजातियों या अनुसूचित जातियों के सदस्यों को नियुक्त कर सकता है।

(3) इस अनुच्छेद के खण्ड (2) के उपबन्ध ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के सम्बन्ध में जिनका राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खण्ड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लेख करे उसी तरह लागू होंगे जैसे कि वे अनुसूचित जनजातियों या अनुसूचित जातियों के सम्बन्ध में लागू होते हैं।

(4) समय-समय पर इस अनुच्छेद के किसी या सभी उपबन्धों के निरसन, विस्तार या रूप भेद की शक्ति राष्ट्रपति को, प्राप्त रहेगी।]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब रह गया केवल एक संशोधन नं. 15 का। इस पर आये संशोधनों को अब मैं लेता हूं।

***श्री गुप्तनाथ सिंह** (बिहार: जनरल): मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं श्रीमान:-

"कि ऊपर के संशोधन नं. 15 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 296 में, "The claims of the members of the Scheduled Castes & the Scheduled Tribes" (अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों के सदस्यों के दावों पर) शब्दों के स्थान पर "The claims of the members of the Scheduled Castes,

[श्री गुप्तनाथ सिंह]

Scheduled Tribes and such other castes who are educationally and socially backward" (अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और ऐसी अन्य जातियों के सदस्यों के दावों का जो शैक्षिक तथा सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं) शब्द रखे जायें।"

इस संशोधन पर अपनी बात कहने से पहले आरम्भ में ही मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि सम्प्रदायवाद, जातिवाद या अन्य किसी वाद के कुत्सित उपाय को अपनाने के मैं सर्वथा विरुद्ध हूं।

***श्री आर.के. सिधवा:** फिर भी आप पिछड़े हुए वर्गों के लिये यह संशोधन पेश कर रहे हैं?

***श्री गुप्तनाथ सिंह:** हां जनाब सिधवा साहब। पर धीरज के साथ मेरी बात तो सुनिये। यह साम्प्रदायिकता हमारे देश के लिये अभिशाप सिद्ध हो चुकी है। इस तरह की चीजों का कुफल हम भोग चुके हैं। फिर भी इन चीजों को हम जारी रखने जा रहे हैं। मानव और मानव के बीच जो भेदभाव और अन्तर बरता जाता है वह एक भयंकर विषवृक्ष है जिसे स्वतन्त्र भारत में कभी पनपने का हमें मौका ही न देना चाहिये। किन्तु अपने समाज का वर्तमान ढांचा ही कुछ ऐसा है कि बाध्य होकर हमें और हमारे नेताओं को रक्षण और संरक्षण के सिद्धान्त को स्वीकार करना पड़ रहा है। मैं जानता हूं कि इस व्यवस्था को हमने खुशी से नहीं रखा है। हम चाहते हैं कि यह व्यवस्था हमेशा के लिये ही उठा दी जाये। किन्तु भारतीय समाज के कतिपय वर्ग ऐसे हैं—हरिजन बंधु और आदिवासी मित्र—जो शताब्दियों से यहां उत्पीड़न सहते आ रहे हैं और चिरकाल से उन पर अत्याचार होता आ रहा है जिससे डर कर वह इन रक्षणों की मांग कर रहे हैं। उनकी यह मांग ठीक है। उनको रक्षण मिलना चाहिये और इतना पर्याप्त रक्षण मिलना चाहिये कि जिससे वह समाज के अन्य वर्गों के समक्ष आ सकें। ऐसा होने पर ही, मानव और मानव के बीच बरते जाने वाले इस भयंकर भेदभाव का अन्त होगा अन्यथा नहीं।

पर इस सम्बन्ध में मेरा कहना यह है कि देश में और भी बहुत से ऐसे वर्ग हैं जिनकी अवस्था आज अपने हरिजन और आदिवासी बन्धुओं से किसी तरह भी अच्छी नहीं है। देश के कुछ भागों में तो अवस्था इतनी खराब है कि इन लोगों की हालत हरिजनों और आदिवासियों से भी गई बीती है। मैं आप को बताना चाहता हूं कि ब्राह्मण लोग जो अपने को मानव समाज के उच्चतम स्तर पर अवस्थित मानते हैं, उनमें भी बहुत से ऐसे हैं जो अछूत हैं। आपको यह सुन कर आश्चर्य होगा कि ब्राह्मणों में भी अछूत वर्ग वर्तमान है और इसे अब्राह्मणों से भी छोटा समझा जाता है। आखिर इन सब बातों का मतलब क्या होता है? यह सब व्यर्थ की बातें हैं। किसी को हम छोटा समझते हैं और किसी को बड़ा। मानव समाज में इस तरह का भेदभाव अन्तर कभी न रहने देना चाहिये। किन्तु हमारा समाज इस भेदभाव को बनाये हुए है। हमारे समाज के लिये यह एक दुर्भाग्य की ही बात है। यही कारण है जो हमारे ये मित्र रक्षण, संरक्षण, आरक्षण आदि की मांग कर रहे हैं।

मैं जानता हूं और इसे आप भी जानते हैं श्रीमान कि रक्षण और नियंत्रण के कारण ही भ्रष्टाचार फैलता है। मैं आपके सामने इसके दो उदाहरण रखता हूं। केन्द्रीय शासन ने इस बात का ऐलान किया था कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिमजातियों और सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के लोगों को अध्ययन के लिये वह छात्रवृत्तियां देगी। पिछड़े हुए वर्गों में 'किसान' भी माना जाता है। 'किसान' शब्द का आम अर्थ कृषक और कोई भी आदमी कृषक हो सकता है चाहे वह ब्राह्मण हो या कायस्थ हो या और कोई भी हो। किन्तु संयुक्त प्रान्त में 'किसान' शब्द एक सीमित अर्थ में ही प्रयुक्त होता है। कृषक वर्ग के उस व्यक्ति को जो पिछड़ा हुआ है वहां किसान कहा जाता है। आपको यह जान कर आश्चर्य होगा कि श्रीमान कि इस छात्रवृत्ति के आवेदन पत्र देने वाले छात्रों में कुछ ऐसे भी थे जो समुन्नत वर्ग के थे, पर आवेदन उन्होंने इस आधार पर दिया था कि उनके पूर्वज किसान थे और वह भी खेतीबारी का ही काम करते हैं इसलिये उन्हें यह छात्रवृत्ति मिलनी चाहिये।

इसी तरह एक बार ऐसा हुआ था कि हरिजन कोष से मिलने वाली छात्रवृत्तियों के लिये कुछ ब्राह्मणों ने आवेदन पत्र दिये थे यह दावा करते हुये कि वह भी हरिजन हैं। इस तरह हम देखते यह हैं कि रक्षण और नियंत्रण की व्यवस्था से भ्रष्टाचार ही फैलता है सुतरां इस व्यवस्था को हमें कभी बढ़ावा नहीं देना चाहिये। किन्तु चूंकि हमारा समाज हठधर्मी हो गया है इसलिये इसका कुपरिणाम हमें भुगतना ही पड़ेगा। हमारे समाज का वर्तमान ढांचा ही कुछ ऐसा है कि उसमें इन खराबियों का पैदा होना अनिवार्य है। वर्तमान सामाजिक व्यवस्था के कारण ही दलित वर्गों के मन में अविश्वास और आशंका की भावना पैदा हो रही है। उनको डर इस बात का है कि संरक्षण का उपबंध न रहने से प्रशासकीय सेवाओं में उनको समुचित जगहें न मिल जायेंगी और इसीलिये रक्षण की वह मांग कर रहे हैं। मूल अधिकारों को तथा राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों को संविधान में रख देने से इनके अधिकार सर्वथा सुरक्षित हो जाते हैं पर फिर भी ये रक्षण की मांग पर आग्रह शील बने हुए हैं।

मैं आपकी निगाह में यह बात लाना चाहता हूं कि "शैक्षिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए" शब्द संविधान में कैसे आये हैं। अनुच्छेद 10 का खण्ड (3) यह कहता है–

> "इस अनुच्छेद की किसी बात से राज्य को पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में जिनका प्रतिनिधान राज्य की सम्मति में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों अथवा पदों के रक्षण के लिये उपबन्ध करने में अवरोध न होगा।"

सो, हमने उनको सभी अधिकार दे रखे हैं पर फिर भी इनके मन में अविश्वास बना हुआ है।

इस सम्बन्ध में सभा के सामने मैं एक घटना का उल्लेख करना चाहता हूं। बिहार के पड़ौसवर्ती एक प्रान्त में एक बहुत ही मेधावी छात्र ने जिसे मैं निजी तौर पर जानता हूं, एक पद के लिये आवेदन भेजा। वह काशी विश्वविद्यालय से एम. काम की परीक्षा पास कर चुका था। वह प्रान्त के लोक-सेवा-आयोग के सामने

[श्री गुप्तनाथ सिंह]

अभी हाल ही में मुलाकात के लिये हाजिर हुआ था। आयोग के सदस्य शायद इस बात को नहीं जानते थे कि वह अभागा अभ्यर्थी एक बहुत ही पिछड़े हुए वर्ग का आदमी था। वह अपने छात्र जीवन में हमेशा हर परीक्षा में प्रथम आया था। उसको नियुक्ति मिल गई पर एक महीने बाद ही प्रान्तीय सरकार का एक पत्र उसे मिला जिसमें यह सूचित किया गया था कि उसकी नौकरी खत्म कर दी गई है। उसने प्रान्तीय सरकार को तथा अपने विभाग को पत्र लिखा और जानना चाहा कि मामला क्या है। उसने पत्र में यह भी सुझाव दिया था कि अगर उसने कोई अपराध किया है तो उस पर मामला चलाना चाहिये। किन्तु सरकार ने उस सम्बन्ध में कोई सूचना देने से इनकार कर दिया। यह बात उस प्रान्तीय सरकार के लिये वस्तुतः एक बड़ी लज्जा की बात है।

इसी तरह ब्रिटिश अमलदारी में हमारे स्वनाम धन्य प्रान्त बिहार में एक बहुत ही पिछड़े हुए किसान वर्ग के एक व्यक्ति को डिप्टी कलेक्टर का पद केवल इसलिये नहीं दिया गया कि वह एक पिछड़े हुए सम्प्रदाय का आदमी था। (*बाधा*) धीरज रख कर मेरी बात तो सुनिये सिधवा साहब। आपको भी बोलने का मौका दिया गया था। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि यह सज्जन इस समय बिहार के एक उच्चकोटि के डिग्री कालिज में प्रिंसिपल हैं। सरकार की निर्वाचन समिति ने इन्हें डिप्टी कलेक्टरी का पद नहीं दिया पर आप हैं बहुत ही प्रतिभा सम्पन्न विद्वान और योग्य शिक्षण-प्रशासक।

आपके सामने मैं एक और घटना का उल्लेख करना चाहता हूं। वह......

***अध्यक्षः** इस तरह की घटनाओं का यहां उल्लेख करने में कोई लाभ है क्या? ऐसे बातें तो देश में सर्वत्र ही हो रही होंगी।

***श्री गुप्तनाथ सिंहः** अच्छी बात है श्रीमान। मैं इनका जिक्र न करूंगा। मैं यह चाहता हूं श्रीमान कि कृषक वर्ग, पशुपालक वर्ग और शिल्पी वर्ग को भी जो भारतीय समाज की रीढ़ है, सरकारी नौकरियों में काम करने का मौका मिलना चाहिये क्योंकि इनको अनुसूचित जनजातियों या अनुसूचित जातियों में शामिल नहीं किया गया है। सभा इस आशय के प्रस्ताव को स्वीकार कर चुकी है कि एक आयोग इस बात के लिये नियुक्त किया जाये कि वह इन पिछड़े हुए वर्गों की अवस्था का अध्ययन और छानबीन करे। यदि इन अभागों को भी मौका देने की बात इसमें रख दी जाये तो देश के लिये यह अच्छा होगा। ये लोग राष्ट्र के परम दक्ष और ईमानदार सेवक सिद्ध होंगे।

जब मैंने यह संशोधन भेजा था तो एक दिन मसौदा समिति ने इसे मान भी लिया था और कुछ दिन बाद डॉ. अम्बेडकर ने मेरे सुझाये गये शब्दों को अपने संशोधन नं. 26 में शामिल कर लिया था। उनके संशोधन में जो खामी रह गई थी उसे आपने समझा और मेरे संशोधन को प्रायः ज्यों का त्यों मान लिया। इसके बाद श्री मुंशी ने भी मेरे संशोधन में निहित सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया था। आज जब आपने उन्हें अनुवर्ती संशोधनों को पेश करने के लिये कहा तो पता

नहीं वह चुप क्यों रह गये। ये लोग मालिक हैं और जो चाहे कर सकते हैं। पर मैं इनसे यह अनुरोध अवश्य करूंगा कि मेरे द्वारा सुझाये गये शब्दों के रखने के औचित्य पर वह विचार अवश्य करें। उन्हें प्रस्तुत अनुच्छेद में मेरे इन शब्दों को भी रखना चाहिये।

आशा है कि जो बात मैंने कही है उस पर वह विचार करेंगे और कृषक और पशुपालक वर्गों को जिनकी अवस्था हरिजनों और आदिवासियों से भी गई बीती है, यह प्रमाणित कर देंगे कि वह उनके लिये भी कुछ करने जा रहे हैं ताकि उनको इस बात का विश्वास हो जाये कि उन्हें भी देश सेवा का मौका दिया जायेगा। आशा है कि साम्प्रदायिकता की यह बाढ़ अब रोक ली जायेगी और जातिवाद के जहरीले सांप का हम हनन कर देंगे और इस बात के लिये शीघ्र कार्रवाई की जायेगी कि अपना यह महिमा मंडित स्वतन्त्र देश उन लोगों के लिये स्वर्ग बन जाये जो शताब्दियों से यहां असमता का उत्पीड़न सहते आ रहे हैं।

(संशोधन नं. 18-22, 28, 29, 30, 31 और 32 पेश नहीं किये गये)

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं:-

"कि ऊपर के संशोधन नं. 23 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 296 में, "shall be taken into consideration consistently with the maintenance of efficiency of administration" (प्रशासन-कार्यपटुता को बनाये रखने की संगति के अनुसार. .. ध्यान रखा जायेगा) शब्दों की जगह "shall, consistently with the maintenance of efficiency of administration, be taken into consideration" शब्द रखे जायें।

जैसा कि आप देख रहे होंगे श्रीमान, यह संशोधन केवल शब्दों के हेरफेर के लिये ही रखा गया है। मेरा ख्याल है कि प्रस्तावित अनुच्छेद को इस रूप में भाषाबद्ध करना ज्यादा शुद्ध होगा जैसा कि मैंने सुझाया है। मसौदा समिति से साग्रह मैं इस बात की सिफारिश करूंगा कि वह इस सुझाव की यथार्थता पर विचार करे। अगर आपकी अनुमति हो श्रीमान, तो डॉ. अम्बेडकर द्वारा उपस्थित किये गये संशोधन पर कुछ बातें कहूं?

***अध्यक्षः** कहिए।

***श्री एच.वी. कामतः** समस्त देश को एक भारतीय राष्ट्र का रूप देने के लिये हमने आज एक कदम आगे की ओर उठाया है। करीब दो साल से कुछ ज्यादा हुआ कि यहां सभा में यह फैसला किया गया था कि जहां तक देश के विधान मण्डलों का सम्बन्ध है, इन निकायों में अल्पसंख्यकों के लिये स्थान सुरक्षित रहने चाहिये। पर इस बीच में देश में कुछ ऐसी घटनायें हो गई और जादू सी घटनायें हो गईं जो शायद कई दृष्टिकोण से ऐसी थीं कि देश के भाग्य का निबटारा करने वाली थीं। इनको देखकर अभी करीब दो महीने पहले माननीय सरदार बल्लभ भाई पटेल ने सभा में इस आशय का एक प्रस्ताव रखा था जहां तक मुसलमानों

[श्री एच.वी. कामत]

और सिखों का सम्बन्ध है उनके लिये विधान मण्डलों में संरक्षित जगहों की व्यवस्था को अब उठा देना चाहिये। सभा ने उनके इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। यह बुद्धिमतापूर्ण निर्णय था जो हमें एक राष्ट्रीयता की ओर एक कदम और आगे बढ़ाने वाला था। आज हम फिर एक और निर्णय कर रहे हैं जो हमें अपने लक्ष्य की ओर एक कदम और आगे बढ़ायेगा। आज हम निर्णय यह कर रहे हैं कि जहां कि सरकारी नौकरियों को सम्बन्ध है, इनमें मुसलमान-सिख आदि सभी अल्पसंख्यक समुदायों के लिये जो रक्षण की व्यवस्था है वह अब उठा दी जाती है। दो महीना पहले माननीय सरदार पटेल ने जो प्रस्ताव रखा था उसमें भी एक ही अपवाद रखा गया था और आज भी हम वही अपवाद रख रहे हैं। अपवाद यह रख रहे हैं कि अनुसूचित आदिमजातियों और अनुसूचित जातियों के लिये नौकरियों में संरक्षण की व्यवस्था रहेगी। हो सकता है कि सभा के कुछ सदस्य और बाहर के भी कुछ मित्र यह समझते हों कि यह प्रस्ताव ठीक नहीं है और इसे बुद्धिमत्तापूर्ण न मानते हों। पर बात यह है कि व्यावहारिक राजनीति में हमेशा हमें आदर्शों का ही ख्याल रख कर नहीं चलता पड़ता है बल्कि तात्कालिक स्थिति और आवश्यकता का ख्याल रख कर चलना पड़ता है। आज की स्थिति हमें इस पथ को अपनाने का आदेश देती है और हमें अपनाना ही होगा।

माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने यहां अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों के कष्टों का उल्लेख किया है और इस सिलसिले में यह कहा है कि हरिजनों की वर्तमान अवस्था के लिये एकमात्र इतिहास ही जिम्मेदार है और इसके लिये सवर्ण हिन्दुओं को दायी नहीं ठहराया जा सकता है। जहां तक मेरा निजी सम्बन्ध है मैं इस बात में नहीं जाऊंगा कि इसके लिए कौन कितना दोषी है। श्री ब्रजेश्वर प्रसाद का यह कहना है इसके लिये इतिहास जिम्मेदार है और अन्य बातों को सोच विचार कर फिर आगे आपने यह कहा है कि युगधारा इसके लिये जिम्मेदार है। पर मैं यह कहना चाहता हूं कि इसके लिये जिम्मेदार है वह दैवी शक्ति या वह सर्वोपरि शक्ति जो इस विश्व में काम कर रही है। आज दुनिया में जो कुछ हो रहा है उसके लिये जिम्मेदार है जातीयता जिसे आप विकासकारी शक्ति कहते हैं। आपने यह फरमाया है कि सवर्ण हिन्दुओं पर विदेशी शोषकों ने अत्याचार किये थे। किन्तु हम देख रहे हैं कि ये विदेशी शोषक एक दूसरी शक्ति द्वारा पराजित हो चुके हैं और इस दूसरी शक्ति पर अब एक तीसरी शक्ति ने आक्रमण कर दिया है। किसी अंग्रेज दार्शनिक का कहना है—"दुनिया में मत्स्य न्याय काम कर रहा है यानी एक छोटी मछली को बड़ी मछली खाती है और फिर उसको उससे बड़ी मछली खा जाती है।" किसी को निश्चित रूप से यह नहीं मालूम है कि यहां क्या हो रहा है। एक कोई बड़ी प्रक्रिया यहां काम कर रही है। मैं नहीं चाहता कि मैं इस गहन प्रश्न में जाऊं कि किसने किसको सताया और यह सिलसिला शुरू कैसे हुआ।

मैं तो केवल इतना ही कहना चाहता हूं श्रीमान् कि आज इस अनुच्छेद के पास हो जाने पर एक मात्र वर्ग जिसे कि थोड़ी बहुत आशंका रह जायेगी वह है पिछड़ा हुआ वर्ग जैसा कि माननीय मित्र श्री गुप्तनाथ सिंह ने कहा है। मैं यह

नहीं कहना चाहता हूं कि कौन वर्ग पिछड़े हुए हैं और कौन नहीं। कौन लोग किसानों में आते हैं और कौन वर्ग पिछड़े हुए हैं। इस पर मैं कुछ नहीं कहना चाहता हूं। किन्तु बात यह है कि हमने संविधान में "सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्ग" पद संहति का प्रयोग किया है। हो सकता है कि इन लोगों को अपने भविष्य के सम्बन्ध में कुछ आशंका हो, यह डर हो कि राज्य की नौकरियों में उन को भी जगह दी जायेंगी या नहीं। किन्तु मैं उनकी इस मिथ्या आशंका को दूर कर देना चाहता हूं संविधान के मूलाधिकार संबंधी अनुच्छेद 10 का उल्लेख करके जिसमें खण्ड (3) में यह कहा गया है कि:–

"इस अनुच्छेद की किसी बात से राज्य को पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में जिनका प्रतिनिधान राज्य की सम्मति में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है नियुक्तियों अथवा पदों के रक्षण के लिए उपबन्ध करने में कोई अवरोध न होगा।"

यह बात राज्य की नीति में निदेशक सिद्धान्तों में नहीं रखी गई है बल्कि इसे रखा गया है मूलाधिकार विषयक अध्याय 3 में। जब इस बात की उन्हें प्रत्याभूति दी गई है तो पिछड़े हुए किसी भी वर्ग को आशंकित होने की कोई जरूरत नहीं है। यदि नौकरियों में उनको प्रतिनिधान नहीं मिलता है तो इसके लिये वह सरकार के खिलाफ कार्रवाई कर सकते हैं। मेरा ख्याल है कि जहां तक नौकरियों का सम्बन्ध है इसके लिये पर्याप्त संरक्षण की व्यवस्था रहेगी कि उन्हें वहां समुचित जगह मिल पायें। मेरा ख्याल यह है कि अनुच्छेद 10 के द्वारा उन्हें इस अधिकार की प्रत्याभूति अवश्य प्राप्त हो जाती है। इसलिये सभा के समक्ष जो अनुच्छेद पेश है उस पर उन्हें कोई आपत्ति न होनी चाहिये।

अपनी बात समाप्त करने से पहले मैं केवल यही कहना चाहता हूं कि मुझे पूरी उम्मीद है कि संविधान के प्रारम्भ से दस साल बाद हमारे देश में जिसका एक प्राचीन इतिहास है, जो एक प्राचीन देश होते हुए भी चिरनवीन है, कोई वर्ग ऐसा न रह जायेगा जो सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ रह जायेगा। उस समय तक देश के सभी वर्गों का मानव स्तर इतना ऊंचा हो जायेगा जितना कि साधारणत: मानव के लिये अपेक्षित होता है। उस समय तक जातियों को अनुसूचित करने की जो कलंकित पद्धति है वह समाप्त हो जायेगी। इस दूषित पद्धति को जन्म दिया था अंग्रेजी राज्य ने जो सौभाग्य से अब यहां से उठ गया है। अंग्रेजी राज के जमाने में जो असंख्य बुराइयां यहां पैदा हो गई थीं उन्हें दूर करने के लिये हमने अनेक उपबन्ध यहां रखे हैं। केवल यही एक मात्र दूषण अब भी रह गया है। पर आशा है कि यह कोढ़ भी जल्दी ही मिट जायेगा और हम दुनिया के सामने एक भारतीय समुदाय के रूप में खड़े दिखाई देंगे।

(संशोधन नं. 184, 255 और 257 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** मैं देखता हूं कि अब कोई संशोधन नहीं रह गया है।

***श्री आर.के. सिधवा:** संशोधन नं. 36 रह गया है श्रीमान।

***अध्यक्ष:** वह अनुच्छेद के खण्ड (2) को हटाने की बात कहता है पर इस अनुच्छेद में कोई खण्ड (2) है ही नहीं।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्री गुप्तनाथ सिंह ने अपने संशोधन में पिछड़े हुए वर्गों का उल्लेख किया है।

***अध्यक्ष:** सभा के सामने जो अनुच्छेद है उसमें खण्ड (2) नहीं है। इसलिये इस संशोधन का सवाल ही नहीं उठता है। संशोधन नं. 24 पेश नहीं किया गया है।

***श्री आर.के. सिधवा:** संशोधन नं. 24 तो नहीं पेश किया गया है पर संशोधन नं. 28 को तो श्री गुप्तनाथ सिंह ने पेश कर दिया है।

***अध्यक्ष:** यह संशोधन श्री गुप्तनाथ सिंह के संशोधन पर बैठता कहां है?

***श्री आर.के. सिधवा:** मुझे अपने संशोधन में नं. 24 की जगह नं. 28 कह देना है। बस इतना बदल देने से यह संशोधन ठीक बैठ जाता है।

***अध्यक्ष:** पर खण्ड (2) इसमें कहां है?

***श्री आर.के. सिधवा:** मसौदा समिति ने आज सुबह एकाएक एक नया संशोधन रख दिया है। मुझे खुशी है कि खण्ड (2) को उसने हटा दिया है। किन्तु जब 'पिछड़े हुए वर्गों' शब्दों को रखने के लिए जब एक संशोधन आ चुका है तो इस संशोधन को पेश करने की अनुमति मिलनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** यह संशोधन तो बहुत पहले से है। खैर अगर आप अनुच्छेद पर बोलना चाहते हैं तो इसका मौका मैं आपको दूंगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** तो मैं चन्द शब्द इस पर कह सकता हूं श्रीमान?

***अध्यक्ष:** हां आप बोल सकते हैं। मैं यह देख लूं कि और कोई संशोधन् बच तो नहीं गया है। मैं नहीं समझता कि और कोई संशोधन अब रह गया है। मूल प्रस्ताव और संशोधनों पर अब विचार किया जा सकता है।

***श्री आर.के. सिधवा:** मुझे बड़ी खुशी है कि डॉ. अम्बेडकर ने संशोधन नं. 15 को यहां पेश किया। मुझे खुशी है कि पिछड़े हुए वर्गों के सम्बन्ध में अन्य सभी संशोधनों को यों ही छोड़ दिया गया और वह पेश नहीं किये। मेरे संशोधन में जैसा कि अभी अभी बताया गया है, पिछड़े हुए वर्गों से सम्बन्ध रखने वाले खण्ड को हटाने की बात कही गई है।

मैं इस बात को समझने की कोशिश करता आ रहा हूं कि आखिर पिछड़े वर्ग की परिभाषा क्या है? अनुच्छेद 301 में हमने यह बताया है कि जो वर्ग शैक्षिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है वह पिछड़ा हुआ वर्ग समझा जायेगा। आज देश में 88 प्रतिशत लोग अशिक्षित हैं। ये लोग अपनी वर्णमाला का क, ख, भी नहीं जानते हैं। यहां शिक्षित हैं केवल 12 प्रतिशत लोग। यहां के 88 प्रतिशत लोग सामाजिक दृष्टि से भी पिछड़े हुए हैं। तो क्या मैं यह समझूं कि यहां के 88 प्रतिशत लोग पिछड़े हुए हैं? अनुच्छेद 301 में यह साफ-साफ कहा गया है कि जो लोग शैक्षिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं वह इस अनुच्छेद के अन्तर्गत आते हैं। पर देश की 88 प्रतिशत आबादी को पिछड़ा हुआ कैसे कहा जा सकता है? माननीय मित्र गुप्तनाथ सिंह ने तो यहां तक कह दिया है कि किसान भी पिछड़े हुए वर्ग में हैं। उन्होंने एक ऐसे ब्राह्मण का भी जिक्र किया है जो अपने को पिछड़े हुए वर्ग का कहता था। मुझे भी एक ऐसी घटना मालूम है जिसको मैं यहां अभी बताऊंगा। यह सारी बातें की गई हैं केवल शक्ति और पद पाने के लिये और किसी बात के लिये नहीं। करीब दस साल की बात है कि एक व्यक्ति अधीनस्थ न्यायाधीश के पद पर आना चाहता था। वह पुश्कर ब्राह्मण समाज का आदमी था। उसने यह बात कही कि पुश्कर ब्राह्मण पिछड़े हुए वर्गों में हैं उसने पांच सौ आदमियों के हस्ताक्षर इकट्ठे कर अपनी यह बात मुख्य न्यायाधीश के पास पेश कर दी। न्यायाधीश ने हस्ताक्षरों के आधार पर यह बात मान ली और चूंकि कोई पुश्कर ब्राह्मण नौकरी में न्यायाधीश पद पर था नहीं इसलिये उसने उसे उस पर नियुक्त कर दिया।

मैं सभा को बताऊं कि तीस साल पहले पारसी समुदाय को भी बम्बई सरकार पिछड़ा हुआ वर्ग मानती थी। आप को मालूम है श्रीमान कि पारसी समुदाय एक बहुत ही समुन्नत समुदाय है। तीस साल पहले इस में 80 प्रतिशत लोग शिक्षित थे और आज इसमें करीब 99 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं। फिर भी तीस साल पहले बम्बई सरकार ने इसे पिछड़ा हुआ वर्ग घोषित कर रखा था। ब्रिटिश अमलदारी में यही होता था। कुछ आदमी जो नौकरियों में जाना चाहते थे उन्होंने अपना प्रभाव लगा कर अपनी गणना पिछड़े हुए वर्ग में करा दी जब कि देश के उस विशाल जन समूह का जो वस्तुतः पिछड़ा हुआ है नौकरियों में कोई प्रतिनिधान नहीं प्राप्त है। *(बाधा)*।

*__श्री गुप्तनाथ सिंहः__ आप बोलते तो बहुत हैं पर जनता को आप जानते बिल्कुल नहीं हैं। उनकी मनोदशा मैं जानता हूं।

*__श्री आर.के. सिधवाः__ मैं आप से बहस नहीं करना चाहता। मैं कह यह रहा था कि देश के एक छोटे से वर्ग के साथ अन्याय किया गया है। मैं जानता हूं कि आज अपने आदमियों को जैसे भी हो रखवाने की सभी कोशिश करते हैं और यह बुराई जोरों पर है और हमेशा इसी तरह रहेगी जब तक कि वास्तविक राम-राज्य यहां नहीं आ जाता है। अच्छे अच्छे शासन में भी यह बात किसी न किसी रूप में रहेंगी। जहां तक अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है मैंने कभी यह

[श्री आर.के. सिधवा]

मंजूर नहीं किया है कि इनका कोई समुदाय है। मैंने हमेशा यही माना है कि यह एक वर्ग है जिसके साथ अतीत काल में हिन्दू समुदाय ने बड़ा अन्याय किया है। इसलिये हम कुछ ऐसी व्यवस्था करना चाहते हैं कि ये भी अपने अन्य भाइयों के जीवन स्तर पर पहुंच जायें। अगर वह खुद भी यह चाहें कि उनको एक अलग समुदाय समझा जाये तो मैं इसका विरोध करूंगा। मैं उनको अलग नहीं मानता हूं। जहां तक अनुसूचित आदिम-जातियों का सम्बन्ध है वह अछूत नहीं हैं। उदाहरण के लिये भीलों को ही लीजिये, वह अछूत नहीं हैं। वह केवल पिछड़े हुए हैं। पर इन्हें भी अनुसूचित आदिम जातियों में शामिल किया गया है। इनके लिये जो विशेष पदाधिकारी नियुक्त किया जाने वाला है उसे इनकी तरफ विशेष रूप से ध्यान देने की जरुरत है।

मैं तो यही महसूस करता हूं कि अनुच्छेद 301 अपने संविधान के लिये एक कलंक ही है। मैं चाहता हूं कि इसे हटा दिया जाये। मैं नहीं चाहता हूं कि संविधान में 'पिछड़े हुए वर्ग' शब्दों का उल्लेख भी आये। इसका उल्लेख हमारी बुद्धि पर एक प्रबल लांछन होगा। जो लोग शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए हैं उनके लिये राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों वाले अध्याय में हमने इस आशय का उपबन्ध रखा है कि राज्य की यह कोशिश होनी चाहिये कि दस साल के भीतर देश का प्रत्येक पुरुष स्त्री और बालक शिक्षित बना दिया जाये। जब देश का प्रत्येक नागरिक शिक्षा की दृष्टि से समुन्नत हो जायेगा तो यहां पिछड़ा हुआ कौन समझा जायेगा। तब यहां कोई पिछड़ा वर्ग न रह जायेगा। सामाजिक दृष्टि से वह फिर समुन्नत हो जायेंगे। शिक्षित होने पर आदमी अपनी स्थिति को समाज में अच्छा बना लेता है। इसलिये मूल बात है शिक्षा जिसके लिये हमने निदेशक सिद्धान्तों में व्यवस्था कर दी है। इस बात को मैं मूल अधिकारों में रखना अधिक पसन्द करता। दस वर्ष के अन्दर यहां सभी शिक्षित हो जायेंगे और फिर आपको एक आदमी अशिक्षित नहीं मिलेगा। यह जरूर है कि इस लक्ष्य की प्राप्ति में कई कठिनाइयां सामने आयेंगी किन्तु मुझे विश्वास है कि हमारी वर्तमान सरकार यह जरूर करेगी कि दस साल के अन्दर सभी शिक्षित हो जायें, यहां का हर स्त्री पुरुष शिक्षित हो जाये। और तब हमें इस बात का गर्व होगा कि हमारा हर नागरिक अपनी जुबान में लिख पढ़ सकता है।

इसलिये श्री गुप्तनाथ सिंह के संशोधन का मैं विरोध करता हूं। इसका कोई प्रयोजन नहीं है। इसका प्रयोजन तभी है जब हम किसी पर कृपा करना चाहते हों और इसलिये उसे पिछड़े हुए वर्ग में शामिल करना चाहते हों। डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन हमारे प्रयोजन के लिये काफी है। जब इसमें किसी सीमित अवधि का उल्लेख नहीं किया गया है तो मुझे पूरा विश्वास है कि थोड़े समय के अन्दर ही ये अनुसूचित वर्ग इस हालत में न रह जायेंगे। ये सभी शेष समाज के स्तर पर पहुंच जायेंगे और हम यह देखेंगे कि अपने संविधान में इसके बाद अनुसूचित वर्गों का उल्लेख नहीं रह जायेगा। इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्तावित अनुच्छेद का समर्थन करता हूं और इस बात का विरोध करता हूं कि संविधान में नौकरियों के बारे में किसी तरह के शिक्षण का उपबन्ध रखा जाये या रक्षण

का उल्लेख भी किया जाये। जब विधान मंडलों के सम्बन्ध में हमने स्थान रक्षण की व्यवस्था को उठा लिया है, तो नौकरियों के बारे में हम किस मुंह से इस व्यवस्था को रखने की बात कह सकते हैं।

यह बात बहुत बुरी मालूम पड़ती है। हमारे नेता सरदार पटेल ने, अभी उस दिन जब विधान मण्डलों में प्रतिनिधान का प्रश्न उठाया गया था तो इस बात को यहां स्पष्ट कर दिया था। आज माननीय मित्र सरदार हुकम सिंह ने पारसी समाज को भी पिछड़े हुए वर्ग में रख दिया है इस आधार पर कि वह इस सम्बंध में विशेष अधिकार चाहते हैं। मेरे समाज में नौकरियां या विधान-मण्डलों के बारे में कभी किसी भी विशेषाधिकार की मांग नहीं की है। वे इन जगहों में आये अपनी योग्यता के बल पर और मैं आपको विश्वास दिला सकता हूं कि भारत-शासन में जितने भी पारसी हैं—भारत शासन की सेवाओं में कुछ पारसी हैं—वह अपनी योग्यता के बल पर आये हैं न कि किसी की कृपा के बल पर। देश का बहुसंख्यक समुदाय इस बात को जानता है और इस प्रश्न को हम उसी पर छोड़ते हैं। हम जानते हैं कि वे इस बात को समझ सकते हैं। अपने संविधान के अनुसार भविष्य में सेवाओं के लिये योग्यता के आधार पर ही नियुक्ति होनी चाहिये और किसी बात के आधार पर नहीं। मैं इस बात पर जोर देता हूं। एक समुदाय या दूसरे समुदाय पर कृपा दिखाने की पद्धति चलाई है यहां अंग्रेजी हुकूमत ने। हमने इस बात का अधिकार अब राष्ट्रपति को दिया है कि कौन लोग पिछड़े हुए हैं इसका निर्णय वही करेगा। आज बरसाती मेंढकों की तरह पिछड़े हुए वर्गों के नाम पर बहुत से संगठन उत्पन्न हो जायेंगे और अपना राष्ट्रपति एक बड़ी जटिल स्थिति में पड़ जायेगा क्योंकि सभी समुदाय उस पर इस बात के लिये जोर डालेंगे कि उनके समुदाय को पिछड़ा हुआ वर्ग माना जाये। मुझे दुख है कि यह खण्ड रखा गया है किन्तु उम्मीद यही करता हूं कि अनुच्छेद 301 जो संविधान में रखा गया है वह केवल नाम के लिये ही बना रहेगा पर इस पर कभी अमल नहीं किया जायेगा। इन शब्दों के साथ मैं मूल प्रस्ताव का प्रबल समर्थन करता हूं और सारे संशोधनों का विरोध करता हूं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महादेय, इस अनुच्छेद पर बोलने का मेरा कत्तई कोई इरादा नहीं था किन्तु जब मैंने यहां यह स्पष्ट आरोप लगाते सुना कि चूंकि कांग्रेस पार्टी का यहां बहुमत है इसलिए वह अपने उन वचनों की कोई परवाह नहीं करती है जो उसने सिखों को दे रखे हैं बल्कि उन्हें वह भंग कर रही है तो मुझे विवश हो कर बोलना पड़ा। सिखों की ओर से या उनके किसी प्रतिनिधि की ओर से इस आरोप को सुनकर मुझे घोर दु:ख हो रहा है। यह बात कही है सरदार हुकम सिंह ने। एक दूसरी जगह और दूसरे मौके पर मैंने उन्हें इस बारे में साफ साफ समझा दिया था किन्तु फिर भी वह यह प्रश्न उठा रहे हैं। आज मैं इस आरोप का जवाब दे देना चाहता हूं। और अन्य बातों के बारे में नहीं समझता कि मुझे बहस में जाने की या कुछ भी कहने की कोई जरुरत है पर जहां तक इस आरोप का सम्बन्ध है कि कांग्रेस ने सिखों को जो वचन दे रखे थे, उनको वह भंग कर रही है मैं स्थिति को जरूर समझ लेना चाहता हूं।

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

आपका आरोप यह है कि हम अपने वचनों को तोड़ रहे हैं हमने उस वचन को भंग किया जो सन् 1923 में हमने दिया था और फिर सन् 46 और सन् 47 में जो वचन हमने दिये उसे भी हमने भंग किया। मैं नहीं जानता कि किन वचनों का आप उल्लेख कर रहे हैं। अगर आपका संकेत हैं 1923 के वचन की ओर भारत तथा पाकिस्तान के विभाजन की ओर तो मैं उनको यह बता देना चाहता हूं कि विभाजन के विरुद्ध एक भी सिख की आवाज नहीं उठी थी। बल्कि तथ्य यह है कि पंजाब के विभाजन की मांग करने में सिख ही सबसे आगे थे। रावलपिंडी और मुलतान में खून खराबा होने पर सिख लोग बुरी तरह घबरा गये थे और वह बहुत विपत्ति में पड़ गये थे जो स्वाभाविक ही था। कांग्रेस ने उनके साथ पूरी हमदर्दी दिखाई थी। उस समय देश के अन्य भागों में ऐसी ही दु:खद घटनायें हो रहीं थी और उसके बाद खून खराबा शुरू हो गया लाहौर, अमृतसर तथा पंजाब के अन्य भागों में। भारत के विभाजन की बात हमने उसी समय स्वीकार की थी और सिखों की पूर्ण सहमति से स्वीकार की थी। सिख लोग सर्वसम्मति से एकमत हो विभाजन पर राजी थे। अब हम पर यह आरोप लगाना कि हमने वचन भंग किया और विश्वासघात किया एक ऐसी बात है जिसे समझने में मैं सर्वथा असमर्थ हूं सिख समुदाय के लिये जो एक वीर समुदाय है, हम पर इस तरह का दोषारोप करना कभी ठीक नहीं है। अगर सिख विभाजन के विरुद्ध होते तो हमें क्या हक था कि देश का और पंजाब का विभाजन करते? हम ऐसा कभी नहीं करते। जब उन्होंने भी यही कहा कि देश हित के लिये विभाजन करना ही ठीक है और हमें राय दी कि देश विभाजन की बात हमें मान लेनी चाहिये इस शर्त के साथ कि पंजाब का भी विभाजन किया जाये, हमने विभाजन को स्वीकार कर लिया। यह तो हुआ सन् 1929 के वचन के बारे में।

सन् 1946 के वचन की वह चर्चा करते हैं। अगर वह हवाला देते हैं अल्पसंख्यक समिति की सिफारिशों का तो उनकी बात मैं समझ सकता हूं। उसे मैं विस्तारपूर्वक समझाने की कोशिश करूंगा कि आखिरकार इस बारे में हुआ क्या है? पर मैं नहीं जानता कि सन् 1946 के वचन से उनका मतलब क्या है, कांग्रेस नेताओं ने आखिर क्या वचन उन्हें दिये हैं, यह मैं नहीं समझा पर अगर उन्हें वचन दिये तो मैं नहीं समझता कि कोई भी ऐसा कांग्रेसमैन होगा जो उस से हटेगा पर सिख नेताओं के.... उनमें से कुछ के मनोविज्ञान को समझने में असमर्थ हूं जो सब पर ही प्राय: विश्वास भंग का दोषारोप करते हैं और हमेशा यह शिकायत करते हैं कि अल्पसंख्यकों के साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा है।

आप सेना की ओर देखिये। क्या सिखों को वहां संख्या से बहुत अधिक प्रतिनिधान नहीं मिला है। हम उनके संरक्षण में हैं और उनका विश्वास करते हैं और एक भी ऐसा अफसर नहीं है जो हमारे लिये निष्ठा न रखता हो। व्यर्थ आप इस तरह की भावनायें क्यों पैदा करते हैं? आखिर आप चाहते क्या हैं?

जब अल्पसंख्यक समिति ने मंत्रणा समिति में अपना पहला निर्णय स्वीकार किया था उस समय मैं उसका सभापति नियुक्त किया गया था और मैं सभी अल्पसंख्यक

वर्गों को साथ लेकर चला था। अल्पसंख्यक समिति और मंत्रणा समिति के निर्णय प्राय: सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए थे। इन समितियों के कामों की इस सभा ने सराहना की थी। और इसके लिये मुझे धन्यवाद दिया था। समय बीतता गया और अल्पसंख्यक समुदाय खुद यह अनुभव करने लगे कि हमें अपने निर्णय पर पुनर्विचार करना चाहिये। महान देशभक्त ईसाई नेता के नेतृत्व में उन्होंने यह प्रस्ताव पास किया कि रक्षण की व्यवस्था को वह उठा देना चाहते हैं। किस रक्षण को उठाने का प्रस्ताव उन्होंने पास किया था? न सिर्फ नौकरियों में स्थान रक्षण की क्षुद्र व्यवस्था को बल्कि विधान मंडलों के लिये स्थान रक्षण को जो बड़ी व्यवस्था थी उसको भी वह नहीं रखना चाहते थे। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय दोनों विधान मण्डलों में वह यह व्यवस्था नहीं चाहते थे।

वह सब इस बात पर राजी थे कि संयुक्त निर्वाचन की व्यवस्था रखी जाये और पृथक् निर्वाचन की साम्प्रदायिक व्यवस्था से अब हमारा कोई भी वास्ता न रह जाये। उन्होंने जब यह इच्छा प्रकट करी तो मैंने अल्पसंख्यक समिति की और मंत्रणा समिति की एक बैठक बुलाई। उनके कहने पर ही यह निर्णय किया गया था। सिखों का कहना हमेशा यही था कि "अगर सभी अल्पसंख्यक इस पर राजी हों तो हम भी इस पर राजी हैं हम अपने लिये कोई अलग व्यवस्था नहीं चाहते हैं। हम अपने लिये कोई खास सुविधा नहीं चाहते हैं। हम अपने पांव पर खड़े रह सकते हैं।" हमेशा ही, कांग्रेस के अन्दर या बाहर सिखों का कहना यही रहा है।

जब यह प्रस्ताव लाया गया था और उस पर विचार होने जा रहा था तो पंजाब के कई सिख प्रतिनिधि मेरे पास आये और यह कहा कि जहां तक सिखों की अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है उनको वही सुविधा मिलनी चाहिए जो हिन्दू समाज के अनुसूचित जातियों को दी जा रही है। और इस सम्बन्ध में सिखों से पृथक व्यवस्था उनके लिये होनी चाहिये। उनकी इस बात का अनुसूचित जातियों के हर आदमी ने यह कह कर विरोध किया था कि सिखों में कोई अनुसूचित जाति नहीं है और अगर है तो वह सिख नहीं है। "इसलिये" उनका कहना यह था कि "आप उनके लिये पृथक् व्यवस्था नहीं कर सकते हैं। इसी सुविधा के लिये तो अनुसूचित जातियों के लोगों को बलात् सिख बनाया जा रहा है।" इस सम्बन्ध में उनकी शिकायत यह थी। दूसरी तरफ सिखों का कहना यह था कि "अनुसूचित जातियों के बहुत से लोग सिख बने हैं पर वह स्वेच्छा से बने हैं बलात् नहीं। वह स्वेच्छा से हमारे समाज में आये है अगर आप इनको सिख नहीं मानते है तो यह सबके सब हिन्दू समाज में वापस चले जायेंगे और हमारा नुकसान होगा।"

सिखों में किसी वर्ग को अछूत या अनुसूचित जाति का मानना हमारे विश्वास के विरुद्ध था क्योंकि सिख धर्म अस्पृश्यता को मानता नहीं है। सिखों में कभी कोई वर्ग अनुसूचित जाति कह कर नहीं स्वीकार किया गया है। पर चूंकि सिखों ने कांग्रेस के विरुद्ध और हमारे विरुद्ध लगातार इस बात की शिकायत करनी शुरू की तो अनुसूचित जातियों के लोगों को मैंने बड़ी कठिनाई से इस बात पर राजी किया कि शान्ति के लिये वह सिखों की बात मान लें। मंत्रणा समिति के सदस्यों

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

को भी इस बात को मानने पर राजी किया। और यह बात मंजूर की गई एक शर्त पर जिसको सिख प्रतिनिधियों ने लिखित रूप में स्वीकार किया। वह शर्त यह थी कि इसके बाद सिख लोग और कोई सवाल न उठायेंगे।

तत्पश्चात् जब यह प्रश्न मंत्रणा-समिति के सामने आया तो सरदार उज्जल सिंह ने यह सवाल उठाया कि "नौकरियों के बारे में हमारे लिये क्या किया गया है?" मैंने कहा "आप के प्रतिनिधियों ने लिखित रूप में यह स्वीकार किया है कि और कोई मांग वह नहीं अब आगे रखेंगे।" ज्ञानी करतार सिंह भी मंत्रणा समिति में उपस्थित थे और उन्होंने उठकर यह कहा कि "नहीं, इस सवाल को हम प्रान्तों में तय कर लेंगे। इसे यहां उठाने की जरुरत नहीं है।"

ऐसी सूरत में कांग्रेस पर वचन भंग का आरोप लगाने से क्या लाभ? आपने जो वचन दिया है उसे मत भंग कीजिये और दूसरों पर वचन भंग करने का दोषारोप न कीजिये। यदि अब आप यह कहते हैं जैसा कि सरदार हुकुम सिंह ने कहा है, कि ये लोग तो सिखों की अनुसूचित जातियों को फायदा पहुंचाना चाहते थे इसलिये उन्होंने यह शर्त मान ली थी पर इनका यह काम गलत था तो ठीक है। आप अपने वचन पर फिर विचार कर लीजिये और मैं अपने वचन पर पुनर्विचार कर लूंगा। आपने जो रियायत ली है उसे वापस कर दीजिये और आपको, अगर चाहते हैं तो वह टुकड़े मिल जायेंगे जिनकी मांग आप कर रहे हैं।

सेवाओं में आखिर आप क्या लेंगे? आज भी आखिर सिख क्या करते हैं? अन्य दूसरे समुदाय क्या कर रहे हैं? जहां तक सेवाओं का सम्बन्ध है सभी बड़ी-बड़ी जगहें या सभी जगहें जिनके लिये प्रतियोगिता के आधार पर नियुक्तियां होती हैं, उनके लिये साम्प्रदायिक आधार पर रक्षण की कोई व्यवस्था है नहीं। ऐसी जगहों के लिये अभ्यर्थी लिये जाते हैं लोक सेवा आयोग के द्वारा फिर आप लड़ रहे हैं क्या छोटी मोटी जगहों के लिये—चपरासी और क्लर्क की जगहों के लिए। क्या आपकी अब यह स्थिति हो गई है कि यह कहें कि सिख चपरासी या क्लर्क पर्याप्त संख्या में नहीं हैं। इस तरह अब अपने समुदाय को उन्नत बनाना चाहते हैं क्या? अगर यह बात है तो मुझसे कहिये। अपनी अनुसूचित जातियों के लिये आपको जो मिला है उसे छोड़ दीजिये और संविधान सभा को मैं इस बात के लिये राजी कर लूंगा कि आप जो चाहते हैं आपको वह दे दिया जाये पर इसके लिये आप पीछे पछतायेंगे।

आप कहते हैं कि पटियाला तथा पूर्वी पंजाब-राज्य-संघ में यह व्यवस्था नहीं है। किन्तु आज की शिकायत की सुनवाई यह सभा नहीं कर सकती है। अगर आपको ऐसी कोई शिकायत है तो हमें लिखकर भेजिये। हम लोग इस पर विचार करेंगे। किन्तु अपने वचन से पीछे न हटिये और दूसरों पर वचन भंग करने का दोषारोप न कीजिये। हम लोग वचन भंग करने वाले आदमी नहीं हैं। सिख समुदाय के प्रति हर तरह से सहानुभूति बरती जायेगी और हर तरह से उसका ख्याल रखा

जायेगा क्योंकि यह समुदाय एक खास इलाके में बसा हुआ है। यह एक छोटा समुदाय है पर एक बहादुर समुदाय है जो किसी भी विरोधी के सामने अपनी आन पर डटा रह सकता है। अपनी इस साहस भावना को बराबर यह कह कर नष्ट न कीजिये कि "हम चोट खाये हुए हैं, हम असहाय हैं, हम अल्पसंख्यक हैं, हम अनाथ हैं और कुछ भी नहीं कर सकते हैं।"

इस तरह का मनोभाव आपके समुदाय को ही हानि पहुंचायेगा और किसी को नहीं। समुदाय को नुकसान पहुंचाने से राष्ट्र को नुकसान पहुंचता है। आपको यह राय मैं बहुसंख्यक समुदाय के प्रतिनिधि के नाते नहीं दे रहा हूं बल्कि सिख समाज का एक भैवी होने के नाते दे रहा हूं। मैं आपको सलाह दूंगा कि हमेशा यह कह कर कि हमारे साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा है आप इस तरह का वातावरण न पैदा कीजिए अगर आप ऐसा करते हैं तो इससे सिख समुदाय को ही क्षति पहुंचेगी।

जब रक्षण व्यवस्था को उठाने का निर्णय मंत्रणा-समिति ने किया था तो हमने स्थिति को अच्छी तरह समझ लिया था और सभी समुदायों ने इसे अच्छी तरह समझ लिया था। मंत्रणा-समिति का निर्णय जब इस सभा के सामने स्वीकृति के लिये रखा गया था, तो मैंने यह साफ साफ समझा दिया था कि स्वतन्त्र भारत के असाम्प्रदायिक राज्य का जो यह संविधान बन रहा है उसमें साम्प्रदायिक आधार पर किसी उपबन्ध को रख कर उसे कुत्सित न होने दिया जायेगा। उस समय सब लोगों ने इस निश्चय को सहर्ष स्वीकार किया था।

यह कहा जाता है कि यदि प्रान्तों में कोई प्रबन्ध इस सम्बन्ध में किया जाता है तो संविधान सभा ने मूलाधिकार सम्बन्धी जो उपबंध रखे हैं वह उसमें बाधक होगा। मैं आपको बता दूं कि आपकी रजामन्दी से बिना कोई बात मन में रखे साफ गोई से अगर कोई व्यवस्था की जाती है तो उसमें कोई भी बात बाधक नहीं हो सकती है। मूलाधिकारों में जो उपबन्ध रखा गया है वह उस व्यक्ति के लिये जिसे नुकसान पहुंचा हो। किन्तु अगर पंजाब के लिये आप कोई घरेलू इन्तजाम पदों के बारे में समुदायों की रजामन्दी से करते हैं तो उस पर किसे आपत्ति होगी? किन्तु पहले यह कीजिये कि अपने प्रान्त में ऐसी कोई व्यवस्था करने के लिये अनुकूल वातावरण तो पैदा कर लीजिये। असल में सम्प्रदायों के बीच कलह का जो वातावरण अरसे से बना हुआ है वही उनमें अविश्वास भाव पैदा करता है और कठिनाइयां उत्पन्न करता है। आपको अपने प्रान्तीय काम के लिये हमारा समर्थन और सहानुभूति हमेशा मिलेगी क्योंकि आप के प्रान्त को बड़ी यातनायें झेलनी पड़ी हैं। इसे बड़ी चोट पहुंची है और अभी भी इसके जख्म भर नहीं पाये हैं। इस जख्म को अच्छा करने में, हम सबको और आप लोगों को तो खास तौर पर मदद देनी चाहिये। इसलिए हम सबको मिल कर इस बात की कोशिश करनी चाहिये कि इस प्रान्त के नैतिक बल को, इसकी शक्ति को समुन्नत करें क्योंकि वस्तुतः यह प्रान्त हमारा सीमावर्ती प्रान्त है। ऐसा होने पर आपको कोई शिकायत न रह जायेगी।

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

मैं पूछता यह हूं कि आखिर सिख-समुदाय पिछड़ा हुआ किस बात में है? क्या व्यापार की दृष्टि से यह पिछड़ा हुआ है? या उद्योग धंधा या अन्य किसी बात के ख्याल से ही यह पिछड़ा हुआ है? आप अपने को पिछड़ा हुआ क्यों समझते हैं? इस मनोभाव को ही आप भूल जाइये। अगर आपके साथ कोई अन्याय हुआ है तो हमसे कहिये। हम लोग यह देखेंगे कि आपके साथ कोई अन्याय न होने पाये।

सरदार हुकुम सिंह ने अभी फरमाया है कि "हम अपने वर्तमान नेताओं पर तो पूरा भरोसा करते हैं पर भविष्य का क्या होगा?" मैं कहता हूं आपमें साहस इस बात का होना चाहिये कि आप अपने भविष्य पर भरोसा कर सकें न कि वर्तमान नेताओं पर। वर्तमान नेताओं के उठ जाने पर आखिर क्या होगा? क्या सरदार हुकुम सिंह तब तक जीवित रह जायेंगे? फिर इस बात को क्यों उठाते हैं? हमें इस बात पर विश्वास करना होगा कि वर्तमान नेताओं के उठ जाने पर इनसे भी अच्छे नेता देश को मिलेंगे। अगर देश के भविष्य पर हमारा विश्वास है तो हम इस बात पर अच्छी तरह भरोसा कर सकते हैं कि भविष्य में यह देश ऐसे नेताओं को पैदा करेगा जो दुनिया के इतिहास में अपना नाम कर जायेंगे। हमने यह बात आज सिद्ध कर दी है। भविष्य में भी हम इसे दिखा देंगे। यह हिन्दुस्तान है। इसने महात्मा गांधी को पैदा किया उस अवस्था में जब राष्ट्र दासता की पाश में बंधा था और चारों ओर यहां दासता का जोर था। वह महात्मा यहां से एक अन्य देश को गये जहां हम लोग रास्ता नहीं चल सकते थे, जहां तीसरे दर्जे में भी सुरक्षा के साथ सफर करना हमारे लिये कठिन था, जहां हम सबके साथ अछूतों का सा व्यवहार किया जाता था और आज भी किया जा रहा है। वहां जाकर इस महात्मा पुरुष ने तमाम दुनिया में अपना नाम उजागर किया और संसार को एक नया अस्त्र प्रदान किया। वहां से फिर वह इस देश को वापस आये। यहां आकर उन्होंने सिख, मुसलमान, हिन्दू तथा अनुसूचित जातियों को ऊपर उठाया और देश को स्वतन्त्र बनाया। क्या आप सोचते हैं कि अपने वचनों को भंग कर के हम देश के नैतिक स्तर को उसकी प्रतिष्ठा और ख्याति को ऊंचा उठाने जा रहे हैं? हरगिज नहीं। हम सब इस बात पर सहमत हो चुके हैं कि हम परस्पर एक दूसरे का विश्वास करेंगे।

यह मैं जानता हूं कि जहां तक मुसलमानों का सम्बन्ध है, वातावरण अभी भी वैसा अच्छा नहीं है जैसा कि होना चाहिये। किन्तु इसके कई कारण हैं। इसके लिये कांग्रेस को जिम्मेदार नहीं कहा जा सकता है। अगर देश विभाजन न हुआ होता तो शायद हम अपने मतभेदों को अब तक दूर कर दिये होते। किन्तु देश का विभाजन हो गया और आपस की रजामन्दी से यह विभाजन हुआ जिसके फलस्वरूप कितनी घटनायें हुई पर विभाजन के बाद से पाकिस्तान में जो कुछ हो रहा है उसकी प्रतिक्रिया यहां होती है जिसके दबाव के लिये हमें रात दिन यहां संघर्ष करना पड़ता है।

एक असाम्प्रदायिक राज्य के शासन को ऐसी अवस्था में शान्तिपूर्वक चलाने में क्या बड़ी-बड़ी कठिनाइयां आती हैं इसे आप नहीं जानते हैं। आज दुनिया की ऐसी

स्थिति है कि हम अपनी इच्छानुसार कोई स्वतन्त्र कार्यवाही नहीं कर सकते हैं अन्याय किये जाने पर भी हमें प्रतीक्षा करनी पड़ती है, रुकना और सोचना समझना पड़ता है क्योंकि संयुक्त-राष्ट्र-संघ नाम से एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था स्थापित हो गई है जो दिन रात दुनियां की स्थिति पर निगाह रखती है और इस बात की कोशिश करती है कि शान्ति कैसे कायम रखी जा सकती है। संयुक्त राष्ट्र-संघ के काम के बारे में मैं कुछ भी नहीं कहना चाहता क्योंकि इसकी मुझे कोई जानकारी नहीं है। किन्तु हमारा पड़ौसी पाकिस्तान, चाहे कोई मौका हो, या न हो, हमेशा दुनियां में हमें बदनाम करने का और धमका कर कुछ पाने का मौका ढूंढा करता है। इसलिये हमें खास तौर पर सावधान रह कर चलने की जरुरत है। वचन भंग करते हैं वे लोग और इसका दोषारोप करते हैं हम पर। बिना अन्य देशों को इसका हवाला दिये या बिना इसका ख्याल किये कि अन्य देशों की प्रतिक्रिया क्या होगी हम इस समस्या के समाधान के लिये कोई कार्यवाही नहीं कर सकते हैं।

इसलिये मैं कह रहा हूं कि हमें सावधान होकर चलने की जरुरत है। ऐसी आभ्यंतरिक कठिनाइयां पैदा करके जिसमें कि विभिन्न समुदायों में यहां कलह हो सकता हो, आप हमारी कठिनाइयां और न बढ़ाइये। समस्या के समाधान में आप हमारी सहायता कीजिये और इसमें आपका लाभ होगा और सारे देश का लाभ होगा। नौकरियों के बारे में अल्पसंख्यक समुदायों के लिये छोटे मोटे उपबन्धों की मांग का परित्याग करके आप फायदे में रहेंगे और इसके लिये आपको पछताना न पड़ेगा। ऐसी बातों के लिये लड़िये जिनसे सारे देश को लाभ पहुंचता हो। इसकी चेष्टा कीजिये और इसके लिये जमीन तैयार कीजिये। दो प्रान्तों में आपके बड़े-बड़े स्वार्थ निहित हैं। बंगाल की समस्या भिन्न जरूर है पर पंजाब की तरह वहां भी कई समस्यायें वर्तमान हैं। इन समस्याओं का समाधान केन्द्र नहीं कर सकता है बल्कि इनका समाधान करना होगा इन प्रान्तों के निवासियों को ही। इसलिये मैं यह निवेदन करूंगा कि जो लोग देश हित का ख्याल रखते हैं उन्हें इस अविश्वास और असहमति के वातावरण को दूर करके एक अनुकूल वातावरण पैदा करने की कोशिश करनी चाहिये।

मैं यहां जवाब में बोलने के लिये जो आया हूं वह केवल इसी बात के लिये कि कांग्रेस पर लगाये गये आरोपों का जवाब में दे दूं। मुझे आपका आरोप सुनकर बड़ा दुख हुआ है। न तो मैंने और किसी भी कांग्रेस जन ने यहां केन्द्र में कोई भी ऐसी बात की है जिससे सिखों को हम पर अविश्वास करने का कारण मिल सकता हो। आप कुछ भी क्यों न करें पर हम कभी ऐसी बात न करेंगे जिससे आप हम पर अविश्वास कर सकें। इसलिये यहां मैं आखिरी बार संसद के एक जिम्मेदार सदस्य के नाते आपसे यह अपील करता हूं। आप जो भी चाहते हैं उसके लिये आप अवश्य कहिये पर अपनी गलतियों के लिये दूसरों को दोषी न बनाइये। मैं आपको बता देना चाहता हूं कि यदि आप अब भी यही महसूस करते हैं कि जो सुविधायें आपने हमसे प्राप्त की हैं वह ऐसी नहीं हैं कि उनके लिये आप अपनी इस मांग को छोड़ दें तो आप उन सुविधाओं को छोड़ दीजिये। अगर आप अपनी इस मांग को ही अच्छा समझते हैं तो आपको वह दे दी जायेंगी। किन्तु इस बात पर आप आपस में विचार करके एक फैसला कर लीजिये। किन्तु दोनों

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

ओर न चलिये। आपका एक वर्ग आकर पहले कुछ सुविधायें प्राप्त कर ले जाता है और अपने समुदाय के लोगों को यह वचन दे देता है कि उसे यह सुविधायें प्राप्त रहेंगी। इसके बाद एक दूसरा वर्ग आकर हम पर यह आरोप लगाता है कि हमने उसे अमुक-अमुक और सुविधायें नहीं दी हैं जिसके लिये वह आतुर है। इन मसलों को तय करने का यह तरीका नहीं है। पहले आप लोग मिल कर यह तय कर लीजिये कि आप चाहते क्या हैं। अगर आपने यह तय नहीं किया है तो यह आपकी गलती है हमारी नहीं। आखिर यह तो तय कीजिये कि आप चाहते क्या हैं। आप एक बहुत ही क्षुद्र बात मांग रहे हैं जिसका मंजूर करना संविधान में एक कलंक रखना होगा। अभी उस दिन हम सभी बातों पर सहमत हो गये थे और सबने खुशी-खुशी उसे मान लिया था। इसलिये आपने जो कुछ भी पहले तय कर लिया है उससे सन्तुष्ट रहिये और मैं आपको बताता हूं कि इसके लिये आपको कभी न पछताना पड़ेगा। *(प्रशंसा-ध्वनि)*

***अध्यक्ष:** बहस को जारी रखने की जरुरत है क्या?

***सदस्यगण:** नहीं, नहीं।

***श्री एच.वी. पातस्कर** (बम्बई: जनरल): मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान् कि इस प्रश्न पर अब मत लिया जाये।

***सरदार हुकुम सिंह:** मैं सादर यह कहना चाहता हूं श्रीमान् कि संविधान में कहीं भी ऐसी कोई बात मुझे नहीं दिखाई दी है जिसे हमने इतनी बड़ी कीमत चुका कर लेना मन्जूर किया हो।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): मैं आपसे यह अपील करना चाहता हूं श्रीमान् कि इस महत्वपूर्ण अनुच्छेद पर अभी पूरी तरह विचार नहीं किया गया है। यह देखना आपका काम है कि बहस बन्दी के प्रस्ताव को स्वीकार करना ठीक है या नहीं।

***अध्यक्ष:** मैं इसे देख रहा हूं और इस प्रस्ताव को मानने के लिये तैयार हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जो कुछ कहा गया है उससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्ष:** अब मैं श्री गुप्तनाथ सिंह के संशोधन नं. 17 पर मत लूंगा।

***श्री गुप्तनाथ सिंह:** मैं इसे वापस लेने की अनुमति मांगता हूं श्रीमान।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम आते हैं श्री कामत के संशोधन पर।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं इसे मसौदा समिति के सदविवेक पर छोड़ता हूं, श्रीमान।

***अध्यक्षः** इसमें केवल शाब्दिक हेर-फेर की बात कही गई है सुतरां उसे मसौदा समिति पर छोड़ा जा सकता है। अब मैं सरदार हुक्म सिंह के संशोधन नं. 256 पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:–

"कि सूची 2 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन नं. 23 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 296 के साथ यह खण्ड जोड़ा जाये।

'(2) Nothing in this article or in article 10 of the Constitution shall prevent the State from making any provision for the reservation of appointments or posts in favour of any minority community which, in the opinion of the State is not adequately represented in the services under the State.' "

[(2) संविधान के इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 10 की कोई बात राज्य को, ऐसे किसी अल्पसंख्यक समुदाय को, जिसको राज्य की राय में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधान नहीं प्राप्त है, नियुक्तियों या पदों के लिये उपबंध करने से नहीं रोकेगी।]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 3163 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 296 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये:—

'296. The Claims of the members of the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes shall be taken into consideration, consistently with the maintenance of efficiency of administration in the making of appointments to services and posts in connection with the affairs of the Union or of a State.' "

Claims of Scheduled Castes and Scheduled Tribes to services and posts.

[296. संघ या राज्यों के कार्यों से संसक्त सेवाओं और पदों के लिये नियुक्तियां करने में प्रशासन-कार्य पटुता बनाये रखने की संगति के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमवासियों के सदस्यों के दावों का ध्यान रखा जायेगा।]

सेवाओं और पदों के लिये अनुसूचित जातियों और आदिम जातियों के दावे।

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 296 यथा संशोधित रूप में संविधान का अंग समझा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 296 यथा संशोधित रूप में संविधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 299

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई: जनरल): मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान:–

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 299 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये–

Special Officer for Scheduled Castes, Scheduled Tribes, etc.

'299. (1) There shall be a Special Officer for the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes to be appointed by the President.

(2) It shall be the duty of the Special Officer to investigate all matters relating to the safeguards provided for the Scheduled Castes and Scheduled Tribes under this Constitution and report to the President upon the working of those safeguards at such intervals as the President may direct, and the President shall cause all such reports to be laid before each House of Parliament.

(3) In this article, the reference to the Scheduled Castes and Scheduled Tribes shall be construed as including the reference to such other backward classes as the President may on receipt of the report of a Commission appointed under clause (1) of article 301 of this Constitution by order specify and also to the Anglo-Indian community.' "

अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिमजातियों इत्यादि के लिये विशेष पदाधिकारी।

[299. (1) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लिये एक विशेष पदाधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के लिये इस संविधान के अधीन उपबन्धित परित्राणों से सम्बद्ध सब विषयों का अनुसंधान करना तथा उन परित्राणों पर कार्य होने के सम्बन्ध में ऐसी अन्तराविधियों में, जैसी कि राष्ट्रपति निदिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देना विशेष पदाधिकारी का कर्तव्य होगा तथा राष्ट्रपति ऐसे सब प्रतिवेदनों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवायेगा।

(3) इस अनुच्छेद में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के प्रति निर्देश के अन्तर्गत ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के प्रति निर्देश, जिनको कि राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खण्ड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लिखित करे तथा आंग्ल-भारतीय समाज के प्रति निर्देश भी हैं।]

इस संशोधन पर मुझे कुछ कहने की जरुरत नहीं है। विशेष प्राधिकारी की व्याख्या इस उद्देश्य से की जा रही है कि संविधान के अन्य अनुच्छेदों द्वारा जो राजनैतिक परित्राण दिये गये हैं उनकी वह देखभाल कर सके। इन शब्दों के साथ मैं यह अनुच्छेद उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्षः** पहले मैं उन संशोधनों को लूंगा जो श्री मुंशी के संशोधन के सम्बंध में आये हैं।

(संशोधन नं. 78 पेश नहीं किया गया।)

***श्री आर.के. सिधवाः** मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान्ः—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 64 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खण्ड (3) में 'to such other backward classes...'

किन्तु यहां 'पिछड़े हुए वर्ग' रखा नहीं गया है। श्री मुंशी ने केवल अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों का ही यहां उल्लेख किया है। अगर यह बात है तो मैं अपना संशोधन नहीं पेश करना चाहूंगा।

***अध्यक्षः** खण्ड (3) में श्री मुंशी ने यह कहा हैः—

"In this article, the reference to the Scheduled Castes and Scheduled Tribes shall be construed to including the reference to such other backward classes as the President may on receipt of the report etc."

(इस अनुच्छेद में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के प्रति निर्देश के अन्तर्गत ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के प्रति निर्देश जिनको राष्ट्रपति...... नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लिखित करे इत्यादि।)

***श्री आर.के. सिधवा:** तब मैं संशोधन रखता हूं श्रीमान:—

"to such backward classes as the President may on receipt of the report of a Commission appointed under clause (1) of article 301 of this Constitution, by order specify and'

[ऐसे अन्य पिछड़े हुए वर्गों के प्रति जिनको राष्ट्रपति का संविधान के अनुच्छेद 301 के खण्ड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लिखित करे, तथा] शब्दों को इस खण्ड से हटा दिया जाये।"

मैं इस पर ज्यादा नहीं बोलना चाहता क्योंकि अपने पहले के संशोधन पर बोलते समय मैं इस बात की चर्चा कर चुका हूं। मैं जानता हूं अनुच्छेद 301 के पिछड़े हुए वर्गों के लिये उपबन्ध किया गया है किन्तु मुझे इस बात का पूरा विश्वास नहीं है कि राष्ट्रपति के लिये यह बताना आसान होगा कि कौन-कौन लोग पिछड़े हुए माने जायेंगे। मैं यह महसूस करता हूं कि पिछड़े हुए वर्गों के लिये जो यह अनुच्छेद है वह केवल कोरा कागजी अनुच्छेद ही रह जायेगा और कभी इस पर अमल नहीं किया जा सकेगा। मैं जानता हूं कि पिछड़े हुए वर्गों के जो लोग लिये जायेंगे वह केवल ऐसे ही लोग होंगे जो अपने को उस वर्ग में इसीलिये शामिल करायेंगे कि उनकी वैयक्तिक समुन्नति हो सके और वह अपना निजी स्वार्थ सिद्ध कर सकें। मैं जानता हूं कि पिछड़े हुए वर्गों के लोग अपने को इसी लिये शामिल करायेंगे कि उनको चन्द नौकरियां मिल जायें। अपने गरीब समुदाय की उन्हें कोई चिन्ता न होगी। इसलिये 'पिछड़े हुए वर्ग' शब्दों के रखने पर मुझे प्रबल आपत्ति है। अनुच्छेद 301 में कहा गया है कि ".....सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए वर्गों की अवस्थाओं के, और उनकी कठिनाइयों के अनुसंधान के लिये....." इसका आखिर मतलब क्या होता है? यहां तो 80 प्रतिशत लोग अशिक्षित हैं। क्या ये सबके सब पिछड़े हुए माने जायेंगे? कभी-कभी तो ऐसा देखने में आता है कि, अशिक्षितों को शिक्षितों की अपेक्षा कहीं अधिक ज्ञान है, बातों को सोचने समझने का।

इसलिए मैं तो यही मानता हूं कि यहां पिछड़ा हुआ वर्ग बोल कर कोई वर्ग नहीं है। असल में अंग्रेजों की यह मंशा थी कि बहुतों को पिछड़ा हुआ वर्ग की संज्ञा देकर दुनिया के सामने उनका प्रदर्शन किया जाये और यह बताया जाये कि भारत इतना पिछड़ा हुआ है कि वह स्वराज्य के लायक नहीं है। मैं नहीं चाहता हूं कि अपने संविधान में "पिछड़ा हुआ वर्ग" पदसंहति को स्थान देकर उसे स्थायित्व दिया जाये। जितना ही शीघ्र हम इसे हटा दें उतना ही देश का भला होगा और दुनिया की निगाह में हमारी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के सिवाय और किसी के लिये कोई रक्षण की व्यवस्था न रहनी चाहिये। अगर कोई ऐसा वर्ग है जो यह महसूस करता है कि राज्याधीन सेवाओं में उसके वर्ग को उचित प्रतिनिधान नहीं मिला है तो उसके लिये उसे समुचित प्राधिकारियों के पास जाकर अपनी शिकायत करने की कोशिश करनी चाहिये। सरदार पटेल की वक्तृता सुनने के बाद, मैं यह नहीं समझता हूं कि किसी भी वर्ग के साथ,

जो सहानुभूति और न्याय पाने का अधिकारी है, कोई भी अन्याय किया जायेगा। और अगर कोई अन्याय किया जाता है तो हमारे नेता तो हैं ही वे लोग उसके हितों का जरूर बचाव करेंगे। इन शब्दों के साथ मैं संशोधन का समर्थन करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि वह उसे स्वीकार करे।

(संशोधन नं. 80, 258 और 284 पेश नहीं किये गये।)

***श्री एच.वी. कामतः** संशोधन नं. 65 का क्या हुआ?

***अध्यक्षः** उसी की ओर मैं आ रहा हूं। अब तक हमने उन संशोधनों को लिया है। जो श्री मुंशी द्वारा पेश किये गये संशोधन नं. 64 पर आये हैं। श्री मुंशी का संशोधन नं. 63 के बारे में है और नं. 63 है संशोधन नं. 43 के बारे में। नं. 63 में यह कहा गया है कि संशोधन नं. 43 की जगह उसे रखा जाये और नं. 64 में यह कहा गया है कि नं. 63 की जगह उसे रखा जाये। इसलिये संशोधन नं. 64 पर आये संशोधनों को मैंने पहले लिया है। अब अगर कोई सदस्य अपना अन्य संशोधन पेश करना चाहते हैं और वह नं. 64 के साथ ठीक बैठता तो उसे पेश करने की मैं अनुमति दूंगा अन्यथा नहीं। मैं केवल संशोधनों का नं. बोल दूंगा और उसके प्रस्तावक सदस्य यदि उसे पेश करना चाहें तो वे पेश कर सकते हैं।

नं. 44 जो श्री लक्ष्मी नारायण साहू और श्री कुलधर चालिहा के नाम से हैं।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसामः जनरल): मैं यह संशोधन पेश करता हूं श्रीमानः–

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खण्ड (2) के अन्त में 'for its approval, modification or addition.'

(उसके द्वारा अनमोदन, रूप भेद और अभिवर्धन के लिये) शब्द जोड़ दिये जायें।"

***अध्यक्षः** आप कौन सा संशोधन पेश कर रहे हैं?

***श्री कुलधर चालिहाः** मैं पेश कर रहा हूं संशोधन नं. 71 को।

***अध्यक्षः** ठीक है, अपनी बात कहिये।

***श्री कुलधर चालिहाः** अनुच्छेद में केवल इतना ही कहा गया है श्रीमान् कि प्रतिवेदन संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जायेगा। हमें यहां यह साफ साफ बता देना चाहिये कि इस सम्बन्ध में संसद की शक्तियां क्या होंगी। इसीलिये मैंने इन शब्दों को यहां जोड़ने का सुझाव दिया है क्योंकि उससे खण्ड और स्पष्ट हो जायेगा। मेरा निजी अनुभव यही है कि सदन के समक्ष ऐसे अनेक प्रतिवेदन रखे जाते हैं पर बहुत ही कम सदस्य ऐसे हैं जो उसको बारीकी से देखते हों या उसे अमल मे लाने के लिये कुछ करते हो, इसीलिये मैंने यहां उन शब्दों

[श्री कुलधर चालिहा]

को जोड़ने का सुझाव दिया है कि संसद का कर्तव्य क्या है यह यहां स्पष्ट हो जाये। मुझे विश्वास है कि मसौदा समिति और डॉ. अम्बेडकर इन शब्दों को यहां रख लेंगे। सभा से मैं इस बात की सिफारिश करता हूं कि वह मेरे इस संशोधन को स्वीकार करे।

***अध्यक्षः** और कोई सदस्य कोई संशोधन रखना चाहते हैं क्या? हां, आप भी तो कोई संशोधन रखना चाहते थे सरदार भूपेन्द्र सिंह जी मान?

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** हां नं. 67 और 69 को मैं पेश करना चाहता हूं जो श्री मुंशी के संशोधन नं. 63 से सम्बन्ध रखते हैं।

मैं ये संशोधन रखता हूं:

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खण्ड (1) में, 'by the President' (राष्ट्रपति नियुक्त करेगा) शब्दों के आगे 'and a Special Officer for minorities for each State for the time being specified in Part I and II and Part III of the First Schedule, who shall be appointed by the Governor or Rajpramukh of the State, as the case may be' (तथा प्रत्येक राज्य में जो प्रथम अनुसूची के भाग 1, 2 और 3 में अभी उल्लिखित हैं, अल्पसंख्यकों के लिये एक विशेष पदाधिकारी होगा। जिसे यथास्थिति, राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख नियुक्त करेगा) शब्द जोड़े जायें।"

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खण्ड (2) में, 'Under this Constitution and' (इस संशोधन के अधीन) शब्दों के आगे 'their representation in different Legislatures and services of the country' (देश के विभिन्न विधान मंडलों और सेवाओं में उनके प्रतिनिधान का,) शब्दों को रखा जाये।"

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 की व्याख्या के अन्त में 'Muslim, Christian and Sikh' (मुसलमान, ईसाई और सिख) शब्द जोड़ दिये जायें।"

मेरे पहले संशोधन में यह कहा गया है कि राज्यों में अल्पसंख्यकों के लिये विशेष पदाधिकारी रखने की जो बात शुरू में प्रस्तावित की गई थी उसके अनुसार ही हमें इस सम्बन्ध में व्यवस्था करनी चाहिये। मैं यह अनुभव करता हूं कि केन्द्र में जो अल्पसंख्यक पदाधिकारी होगा वह राज्यों से उतनी दूर रहेगा कि वह इस बात को नहीं देख सकेगा और न इसका अनुसंधान कर सकेगा कि संविधान पर किस तरह अमल किया जा रहा है। यदि राज्यों के लिये अल्पसंख्यक पदाधिकारियों

के रखने की व्यवस्था नहीं की जाती है तो अनुच्छेद 299 में परित्राण का जो उपबंध रखा गया है वह कभी प्रभावी नहीं हो सकेगा। आखिर और किसी बात से अधिक महत्व यह बात रखती है कि राज्यों में प्रशासन किस तरह चल रहा है, वहां के दैनिक जीवन में प्रशासन कहां तक संविधान पर अमल करता है। मैं यह अनुरोध अवश्य करूंगा कि न केवल केन्द्र में ही एक अल्पसंख्यक-पदाधिकारी रहना चाहिये बल्कि राज्यों में भी एक ऐसा पदाधिकारी होना चाहिये।

मेरे बाकी दो संशोधनों में यह कहा गया है कि अल्पसंख्यक-पदाधिकारी न केवल इस बात का ही अनुसंधान करेगा कि संविधान में रखे गये रक्षणमूलक उपबंधों पर कहां तक अमल किया जा रहा है बल्कि वह अल्पसंख्यकों से सम्बन्ध रखने वाली और बातों को भी देखेगा और इस बात का ख्याल रखेगा कि विधान मंडलों में और नौकरियों में उनको कहां तक प्रतिनिधान मिला है। अल्पसंख्यकों के बारे में यहां लोगों में में कुछ गलत फहमियां दिखाई देती हैं। कुछ मित्रों का कहना यह है कि चूंकि अल्पसंख्यक-मंत्रणा समिति ने यह फैसला किया है कि विधान-मण्डलों में इनके लिये स्थान रक्षण की व्यवस्था नहीं रखी जायेगी इसलिये देश में अब कोई अल्पसंख्यक रह ही नहीं जायेंगे। मैं अवाक इस बात से हूं कि आखिर कोरे कागजी प्रस्ताव से यह समस्या कैसे मिट जायेगी और वह भी करीब एक साल की लघु अवधि के अन्दर।

संविधान सभा के पूर्व के निर्णयों से जहां तक में समझ पाता हूं स्थिति यह है कि इस सभा ने यह मंजूर किया है कि देश में अल्पसंख्यक वर्ग हैं। इस सभा ने उन्हें क.ख. और ग. इन तीन गुटों में बांटा है। न केवल इतना ही, मेरे हाथ में अभी एक पुस्तिका है जिसे इंफारमेशन और ब्राडकास्टिंग की मिनिस्ट्री ने प्रकाशित कराया है। इसमें भी यही मत प्रकट किया गया है और कहा गया है कि ये लोग अल्पसंख्यक हैं धर्म के आधार पर। इसमें भारतीय संघ राज्य में मुसलमान, सिख, इसाई, पारसी और ऐंग्लो इंडियन ये पांच अल्पसंख्यक वर्ग बताये गये हैं। अब इस मत के विरूद्ध बहस करना अपनी बात से मुकरना है।

खुशी की बात यह है कि अब एक अनुकूल वातावरण पैदा कर दिया गया है और अल्पसंख्यकों ने बहुसंख्यक समुदाय की सद्भावना पर विश्वास कर लिया है। उनको यह भरोसा हो गया है कि उनका अस्तित्व सर्वथा समाप्त न हो जायेगा। हम यह आशा करके इस दिशा में आगे बढ़े हैं कि हमारे साथ अन्याय न होगा। किन्तु इस आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि अब कोई अल्पसंख्यक वर्ग यहां रह ही नहीं गया। आखिर परित्राण का उपबंध तो इसी बात के लिये ही रखा जाता है कि देश की शासन व्यवस्था में अल्पसंख्यकों को जो अंश मिलना चाहिये वह प्राप्त रहे। अब हमें इस बात का पक्का आश्वासन हो जाता है कि जहां तक शासन व्यवस्था का सम्बन्ध है, हमारे साथ कोई अन्याय नहीं होने पायेगा तो फिर यह स्वाभाविक है कि विधान मंडलों के लिये या अन्य जगहों के लिये हम राजनैतिक रक्षण पाने की मांग ही न करेंगे।

हम यह कहेंगे हमारा यह प्रयोग बड़े साहस का काम है। मैं इसके साफल्य की कामना करता हूं। मुझे विश्वास है कि यह अवश्य सफल होगा। इसे सफल होना ही चाहिये। यदि यह सफल होता है, अगर अल्पसंख्यकों की आशंकायें

[सरदार भूपेन्दर सिंह मान]

अन्ततोगत्वा मिथ्या सिद्ध हो जाती है तो मुझे बड़ी ही खुशी होगी। पर इस प्रयोग को सफल बनाने के लिए ही मैं यह कह रहा हूं कि अल्पसंख्यकों की सभी बातों का पुनरीक्षण होना चाहिये और सभी अल्पसंख्यकों के लिये अल्पसंख्यक-पदाधिकारी नियुक्त किये जाने चाहियें। आखिर ऐसी व्यवस्था कर के आप किसी को कुछ दे तो रहे नहीं हैं। आप यह तो कर नहीं रहे हैं कि किसी को कोई कोटा या अंश दे रहे हैं या किसी के लिये जगहें रक्षित रख रहे हैं आप तो केवल इतना ही कह रहे हैं कि अल्पसंख्यक-पदाधिकारी अल्प-संख्यकों के और अनुसूचित जातियों के मामले का पुनरीक्षण करेंगे।

आप तो अपने कंधों पर एक बहुत बड़े दायित्व का भार ले रहे हैं। आप हमें इस बात का वचन दे रहे हैं कि आपकी ओर से कोई ऐसी बात न होगी जिससे हम चिंता में पड़ सकते हो। फिर डॉ. अम्बेडकर से मैं यह पूछता हूं कि सभी अल्पसंख्यकों के मामलों की पुनरीक्षण की बात यहां रखने में आप क्यों सकुचा रहे हैं। मुझे पूरा यकीन है कि आप हमेशा ठीक और न्याय का ही बर्ताव करेंगे और अल्प-संख्यकों को उनका समुचित अंश अवश्य मिलेगा। फिर यहां यह उपबंध रखने में नुकसान ही क्या है कि इन सभी बातों पर समय-समय पर विचार किया जायेगा और उन्हें संसद के समक्ष रखा जायेगा? इससे यह होगा कि हम लोगों को संविधान के अधीन अपनी स्थिति पर पुनरीक्षण करने का अवसर मिल जायेगा। अगर ऐसा उपबंध नहीं रखा जाता है तो एक मात्र दूसरा उपाय यही रह जायेगा कि हम आन्दोलन करके आप के कान में यह बात डालें कि हमारे साथ यह अन्याय हो रहा है। मैं तो इसे सोच कर ही कांप जाता हूं, बजाय इसके लिए अल्पसंख्यक अपनी शिकायतों को जताने के लिये किसी अवैध उपाय का अवलम्बन करें, अच्छा यही होगा कि यह उपबंध रख दिया जाये ताकि उन्हें अपनी शिकायतों को जताने का एक सांविधानिक मार्ग मिल जाये। मैं यह विश्वास करता हूं कि उनके साथ कोई अन्याय नहीं होगा किन्तु केवल इस आधार पर एक सांविधानिक मार्ग को बन्द करना ठीक नहीं हो सकता है।

मैं आप से साग्रह यह अनुरोध करूंगा कि इन अनुच्छेदों का सर्वथा निराकरण न कर दीजिये; जो कुछ आप स्वीकार कर चुके हैं उस पर अब पुनः विचार न शुरू कीजिये। मैं अपने कर्तव्य से च्युत होऊंगा अगर यहां यह न कह दूं कि यदि इन अनुच्छेदों को—296 और 299 को—नराकृत किया जाता है तो जहां तक हमारे समुदाय का सम्बन्ध है, इसका बड़ा व्यापक और गहरा प्रतिघात पड़ेगा। हमें हमेशा जो मानसिक आश्वासन आप देते आये हैं वह इससे जाता रहेगा। आपने कहा यह था कि "चिन्ता न करो, कोई न कोई आदमी हमेशा इस बात को देखता रहेगा कि संविधान पर किस तरह अमल किया जा रहा है।" अब आप इस बात को वापस लिये ले रहे हैं और यह कह रहे हैं कि "न्याय हो या अन्याय हो, आपके मामले का पुनरीक्षण नहीं किया जायेगा।" मेरा ख्याल यह है कि आप के इस रुख से यह होगा कि आपके आश्वासन के फलस्वरूप जो अनुकूल मनोवैज्ञानिक वातावरण पैदा हो गया है उसको नुकसान पहुंचेगा। मैं ऐसा समझता हूं कि जहां तक कि अल्पसंख्यकों का सम्बन्ध है, संविधान किस तरह कार्यान्वित किया जा रहा है इसे देखने के लिये जो व्यवस्था आपने पहले की थी उसे यदि आप हटा

देते हैं तो हमारी जो यह रही सही आशा है कि वैधानिक रूप से संसद के समक्ष अपनी बात कहने का और अपने मामलों का समय समय पर पुनरीक्षण कराने का मौका हमें मिलेगा, वह भी जाती रहेगी। मेरा यह विश्वास है श्रीमान कि जिस उपबंध को रखने का सुझाव दे रहा हूं उसके रखने से अपना संविधान किसी तरह भी कुरूप न होगा जैसाकि लोग आमतौर पर कह रहे हैं।

अब अन्त में मैं उस आश्वासन का जिक्र करूंगा जिसके बारे में यह कहा जाता है कि उसे मेरे सम्प्रदाय के कुछ प्रतिनिधियों ने दे रखा है। इस बात से लोगों में एक धारणा पैदा हो गई है। और सरदार पटेल से असहमति व्यक्त करते हुए मैं यह कहूंगा कि एक गलत धारणा पैदा हो गई है। वस्तुत: जहां तक कि इस आश्वासन का सम्बन्ध है, (मैं उसे अस्वीकार नहीं करता हूं) इसकी बाबत मैंने उन प्रतिनिधियों से पूछा था और मुझे मेरे पास उस आश्वासन की प्रति मौजूद है। इसको लेकर मेरे सम्प्रदाय में और अन्यत्र भी कुछ गलत फहमी पैदा हो गई है जिसकी वजह से सिखों पर यह दोषारोप किया जा रहा है कि वह अपनी बात से हट रहे हैं। मैं इस गलत फहमी को दूर कर देना चाहता हूं। अनुच्छेद 296 और 299 को सभा ने उसी रूप में मंजूर किया था जिसमें कि मंत्रणा-समिति ने इसे मंजूर करने की सिफारिश की थी और इसके मसौदे में कोई अदल बदल नहीं किया गया था और यह भी ऊपर से मान लिया गया था कि अनुसूचित जातियों को इसमें शामिल कर लिया जायेगा। इन सब बातों को देख कर ही सिखों ने यह बात कही थी कि वह अब और किसी भी बात की मांग न करेंगे। किन्तु उनसे यह वचन लेकर अब अगर आप पीछे हटते हैं और सभा में इस प्रश्न पर पुनर्विचार प्रारम्भ करके अनुच्छेद 296 और 299 के उपबंधों से हटते हैं तो हम पर यह दोषारोप नहीं कर सकते हैं कि हम अपनी बात से हट रहे हैं। समझौते में जो ठीक ठीक शब्द रखे गये हैं उनको मैं पढ़कर सुनाये देता हूं। अगर समझौते में और कोई बात कही गई थी तो आप उसे सामने रखिये ताकि गलत फहमी दूर की जा सके। सिखों ने जो आश्वासन दिया उसके शब्द ये थे:—

> "पूर्वी पंजाब की विधान-सभा के हम सिख सदस्य अल्पसंख्यक-मंत्रणा-समिति की उप-समिति के प्रतिवेदन के प्रसंग में यह कहना चाहते हैं कि जहां तक कि प्रतिवेदन का सिख सम्प्रदाय की समस्याओं से सम्बन्ध है, उसमें जो बातें कहीं गई है उनके अलावा निम्नलिखित बातें भी उसमें आनी चाहिये......."

अल्पसंख्यक-मंत्रणा-समिति की कतिपय सिफारिशों को आपने स्वीकार किया जो बिल्कुल स्पष्ट शब्दों में रखी गई हैं। जहां तक कि नौकरियों में उनके अंश का प्रश्न है, उसके बारे में आपने यह कहा है कि यह भी दिया जायेगा और उसके लिये एक विशेष अनुच्छेद संविधान में रख दिया जायेगा आपने यह भी कहा है कि सभी अल्पसंख्यकों के लिये अल्पसंख्यक-पदाधिकारी नियुक्त किये जायेंगे। आपने यह सभी बातें मंजूर की थीं तब हमने यह वचन दिया था कि जो परित्राण दिये गये हैं उनके अलावा और किसी परित्राण की मांग हम न करेंगे।

***श्री आर.के. सिधवाः** क्या आप ने कहा? क्या देना मंजूर किया गया था?

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** जो परित्राण आपने दिये हैं वह अभी तक निराकृत नहीं किये हैं। यह परित्राण देना आपने मंजूर किया था सन् 1947 में।

***श्री आर.के. सिधवाः** उसके बाद बहुत सी नई बातें पैदा हो गई।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** मैं उसका भी जिक्र करने जा रहा हूं। इसके बाद मंत्रणा समिति ने अपना दूसरा प्रतिवेदन किया जो 11 मई सन् 1949 का था। यदि माननीय मित्र इसे ध्यान से पढ़े तो, जहां तक कि इन दो प्रस्तावों का सम्बन्ध है, उसमें इसका कोई उल्लेख उन्हें नहीं मिलेगा। जहां तक कि विधान-मण्डलों में स्थान-रक्षण की व्यवस्था का सम्बन्ध है, इस प्रतिवेदन में यह व्यवस्था जरूर हटा दी गई है। किन्तु नौकरियों में जगह देने की बात और अल्पसंख्यकों के लिये अलग अलग पदाधिकारी नियुक्त करने की बात इसमें ज्यों की त्यों बनी हुई है। माननीय मित्र से मैं कहूंगा कि इस सभा द्वारा मंजूर किये गये, मंत्रणा समिति के बाद वाले प्रतिवेदन से वह एक भी वाक्य या पंक्ति पेश तो करें जिससे यह जाहिर हो सके कि अनुच्छेद 296 और 299 को निराकृत किया गया है।

***श्री आर.के. सिधवाः** अल्पसंख्यक समिति का मैं शुरू से ही सदस्य रहा हूं पर मुझे नहीं याद आता है कि कभी भी यह प्रश्न वहां इस रूप से उठा हो जैसा कि माननीय मित्र बता रहे हैं।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** यदि माननीय मित्र की निगाह में यह बात न आ सकी हो तो इसमें मेरी क्या गलती है? किन्तु यह बात लिखित रूप में आ गई है और मेरे लिये यह बड़े महत्व की बात है आप.....

***अध्यक्षः** वह लेख्य क्या है जिसे पढ़कर आप अभी सुना रहे थे? आप किसी वचन का जिक्र कर रहे थे?

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** मैं कतिपय उन आश्वासनों का जिक्र कर रहा था जिन्हें कहा जाता है कि सिख समुदाय ने दे रखा है। कहा जाता है कि सिखों ने यह वचन दे रखा है कि वह और किसी बात की मांग न करेंगे और किसी रक्षण की मांग न करेंगे। वस्तुतः यह बात समाचार पत्रों में भी आ गई हैं। मानों हमने कोई ऐसा आश्वासन दे रखा है कि अब हम अपने अधिकारों की मांग न करेंगे।

***अध्यक्षः** वह लेख आपके पास है क्या?

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** हां मेरे पास है।

***अध्यक्षः** तो उसे पढ़कर सुनाइये।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** उसे मैंने पढ़ तो दिया है।

***अध्यक्षः** मैंने ठीक ठीक सुना नहीं। यदि आपने उस समूचे लेख्य को यहां पढ़ दिया है जिसका जिक्र सरदार पटेल कर रहे थे........

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** मेरे पास जो प्रति है वह यह है। यदि वह और कोई अन्य लेख है तो मैंने जो कुछ पढ़ा है यह शायद गलत पढ़ा है।

***अध्यक्षः** मेरा ख्याल है अच्छा यह होगा कि आप उसे पढ़कर सुना दें ताकि सरदार पटेल और कोई भी यह जान सकें कि आया यह वही लेख है या दूसरा।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** मैं कह चुका हूं कि मुझे उस लेख के बारे में कोई प्रत्यक्ष जानकारी नहीं है। सिख प्रतिनिधियों ने अपने आश्वासन को जिस लेख में दिया था उसके बारे में मैंने पता लगाया था और मुझे मालूम हुआ है कि यही वह लेख्य है जिसमें उन्होंने अपने आश्वासन दिये हैं।

***अध्यक्षः** लेख में क्या है यह तो हमें बताइये।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** हां मैं पढ़कर सुना देता हूं। यह यों है:

"पूर्वी पंजाब की विधान सभा के हम सिख सदस्य अल्पसंख्यक-मंत्रणा-समिति की उपसमिति के प्रतिवेदन के प्रसंग में यह कहना चाहते हैं कि जहां तक कि सिख समुदाय की समस्याओं का सम्बन्ध है, प्रतिवेदन में जो सिफारिशें की गई हैं उनके अलावा उसमें यह बातें भी होनी चाहिये।

(1) सिखों के पिछड़े हुए वर्गों को अर्थात् मजहबी, कबीर पन्थी, रामदासी, बाबरिया, सरेना और सिकलीगर जातियों को, राजनैतिक अधिकारों के मामले में अनुसूचित जातियों के बराबर रखा जाये। यह किया जा सकता है इस तरहः–

(क) इन वर्गों को, संविधान के प्रारूप में संख्याबद्ध किये गये अनुसूचित जातियों में शामिल करके, या

(ख) सभी अल्पसंख्यकों के लिये, जिसमें कि पूर्वी पंजाब की अनुसूचित जातियां भी शामिल हैं, स्थान रक्षण की व्यवस्था को उठा करके; या

(ग) सिखों के लिये रक्षित जगहों में से सिखों के इन पिछड़े हुए वर्गों के लिये जगहें रक्षित करके। सिखों में इन वर्गों की संख्या करीब दस प्रतिशत है। सिखों की जगहों से दस प्रतिशत जगहें इनको इस तरह मिलेंगी।

[सरदार भूपेन्दर सिंह मान]

(2) भाषा लिपि और संस्कृति के सम्बन्ध में या तो संविधान में प्रादेशिक आधार पर कोई व्यवस्था उपबन्धित होनी चाहिये या कार्यपालिका की कार्रवाई द्वारा इसको सद्यः तय कर देना चाहिये।

(3) पूर्वी पंजाब के बाहर जो सिख अल्पसंख्यक हैं उनको वही अधिकार मिलना चाहिये जो राजनैतिक अधिकारों के सम्बन्ध में अल्पसंख्यकों को दिया गया हो या दिया जाये।

हम सादर यह सुझाव देंगे कि इस सम्बन्ध में कोई अन्तिम निर्णय न किया जाये इससे पहले हमें अपनी बात कहने का मौका मिलना चाहिये ताकि हम अपनी बात का खुलासा कर सकें। हम यह भी कह देना चाहते हैं कि जहां तक संविधान में उपबन्ध रखने का सवाल है, हमें अब अन्य परित्राण की मांग नहीं करनी है। इस सुझाई गई व्यवस्था के होने से सिखों को जो सन्तोष मिलेगा उससे बड़ी मदद इस बात में मिलेगी कि सिख जनता राष्ट्रीय हितों का समर्थक बन जायेगी।"

***श्री आर.के. सिधवाः** इस पर हस्ताक्षर किसने किया है?

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** सिख सदस्यों ने तथा सिख प्रतिनिधियों ने इस पर हस्ताक्षर किये हैं। सवाल यह है कि हमें सिखों का विश्वास प्राप्त करना है। मैं फिर यह कहूंगा कि जो कुछ मंजूर किया जा चुका है उसे अब इनकार किया जा रहा है।

***श्री आर.के. सिधवाः** अनुच्छेद में तो ऐसी कोई बात नहीं है जिससे यह प्रकट होता हो कि किसी प्रदत्त अधिकार को अब अस्वीकार किया जा रहा है।

***अध्यक्षः** इस लेख्य की एक प्रति आप मुझे दीजिये। सरदार पटेल से पूछ कर मुझे यह तय करना है कि आया यह वही लेख्य जिसे सिख प्रतिनिधियों ने दिया है या कोई दूसरा है। सरदार पटेल से दरयाफ्त करके यह मैं आपको बताऊंगा।

***सरदार भूपेन्दर सिंह मानः** श्री सिधवा यह अच्छी तरह जानते हैं कि अध्यक्ष ने आज जो निर्णय किया है उसे देखते हुए यह कहना होगा इस मसले पर अब पुनर्विचार होने जा रहा है।

***अध्यक्षः** जहां तक इस पर पुनर्विचार करने का सम्बन्ध है, इस पर आपत्ति ही इस आधार पर उठाई गई थी कि इस पर निर्णय किया जा चुका है और मैंने यह कहा था निर्णय होने पर भी इस पर पुनर्विचार किया जा सकता है। किन्तु पुनर्विचार से मेरा मतलब यह नहीं था कि किसी बात से अब पीछे हटा जायेगा। पुनर्विचार करने के विरुद्ध यह आपत्ति उठाई गई थी कि इस पर पहले निर्णय किया जा चुका है और अब जो निर्णय किया जा रहा है वह पहले वाले निर्णय

से असंगत होगा। उस आपत्ति पर मैंने यह मत व्यक्त किया था कि फिर भी इस पर पुनर्विचार किया जा सकता है अगर 25 प्रतिशत सदस्य पुनर्विचार के पक्ष में हों।

*श्री **एच.वी. कामतः** मैं यह संशोधन पेश करता हूं श्रीमान:–

"कि संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खण्ड (2) के अन्त में 'for such action as Parliament may deem necessary' (ऐसी कार्रवाई के लिये जैसा कि संसद आवश्यक समझे) शब्द जोड़ दिये जायें।"

संभव है श्रीमान कि जब प्रतिवेदन इस अनुच्छेद के अधीन नियुक्त विशेष पदाधिकारी द्वारा राष्ट्रपति के समक्ष रखा जाय तो संसद इस बात को आवश्यक या अत्यावश्यक समझे कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों ने जितनी उन्नति कर ली है उसे देखते हुए देश के हित में सर्वोत्तम यह होगा कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों की संज्ञा को बिल्कुल उठा दिया जाये और इन सब को विशाल हिंदू संप्रदाय का अंग मान लिया जाये। अगर ऐसा करना जरूरी हुआ तो यह काम अकेले राष्ट्रपति पर नहीं छोड़ा जा सकता है। संविधान में ऐसा निर्णय लेने का अधिकार संसद को दिया गया है। संविधान के अनुसार, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों को सांविधानिक रक्षणों की प्रत्याभूति दी गई है सुतरां इस तरह का महत्वपूर्ण निर्णय केवल संसद ही कर सकती है। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि जो प्रतिवेदन संसद के सामने रखा जाये उस पर कार्रवाई राष्ट्रपति न करे। उस पर जो कुछ कार्रवाई करनी हो, वह संसद ही करे।

एक दूसरा संशोधन है नं. 75 का जो संशोधन नं. 63 के बारे में हैं। किंतु दुर्भाग्य से इस संशोधन की जगह एक दूसरा संशोधन रख दिया गया है नं. 64 को, जिसे श्री मुन्शी ने पेश किया है। किंतु, मेरा संशोधन इस संशोधन पर भी किंचित परिवर्तित रूप में लागू हो सकता है। संशोधन नं. 63 में जो व्याख्या है?....

अध्यक्षः संशोधन नं. 63 में कोई व्याख्या नहीं रखी गई है।

*श्री **एच.वी. कामतः** व्याख्या की जगह संशोधन नं. 64 में खंड (3) है। इस संशोधन में ऐंग्लो इंडियन समुदाय के लिये रक्षण प्रस्तावित किया गया है। मेरी तुच्छ राय यह है कि यहां ऐंग्लो इंडियन समुदाय का स्पष्ट उल्लेख बिल्कुल बे मौके हैं। हमने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों के लिये परित्राण उपबन्धित किये हैं पर....

अध्यक्षः मेरा ख्याल यह है कि वस्तुतः संशोधन नं. 75 की मूल बात खंड (3) में आ गई है। संशोधन नं. 64 के खंड (3) में अब ऐंग्लो इंडियन समुदाय नहीं शामिल किया गया है।

*श्री **एच.वी. कामतः** शामिल किया गया है श्रीमान्। उसमें अन्तिम शब्द रखे गये है "ऐंग्लो इंडियन समुदाय"। मैं चाहता हूं कि ये शब्द हटा दिये जायें।

***अध्यक्षः** ठीक है, ये शब्द तो आये हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** इसमें कहा यह गया है कि "अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों के प्रति निदेश के अन्तर्गत ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के प्रति निदेश, जिनको राष्ट्रपति आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लिखित करे, तथा ऐंग्लो इंडियन समुदाय के प्रति निदेश भी है।" ऐंग्लो इंडियन समुदाय न तो पिछड़ा हुआ वर्ग है और न अनुसूचित जाति है। मैं नहीं समझ पाता हूं कि अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के साथ इन्हें कैसे रखा जा सकता है। इस समुदाय के लिये तो एक मात्र परित्राण यही दिया जायेगा कि यदि राष्ट्रपति या राज्यपाल यह समझते हों कि इस समुदाय को विधान मंडलों में पर्याप्त प्रतिनिधान नहीं मिला है तो मनोनयन के द्वारा लोक सभा में और राज्यों के विधान मंडलों में इसके लिये प्रतिनिधान दिया जायेगा। और फिर यह व्यवस्था भी केवल दस साल के लिये रहेगी। इस अवधि के बाद यह परित्राण स्वतः समाप्त हो जायेगा।

जहां तक कि इस समुदाय को नौकरियों में जगहों के रक्षण की सुविधा देने का सवाल है मैं यह कहता हूं कि यह समुदाय पिछड़ा हुआ नहीं है और आज भी कई सेवाओं में तो इसे इतनी जगहें मिली हुई हैं जो इसकी आबादी को देखते हुए कहीं ज्यादा हैं। इसलिये मैं यह महसूस करता हूं कि खंड (3) में ऐंग्लो इंडियन समुदाय का उल्लेख करना सर्वथा अनावश्यक है। इसे धर्म के आधार समुदाय नहीं माना जा सकता है। अधिक से अधिक प्रजाति के आधार पर ही इसे एक समुदाय हम मान सकते हैं। मेरा ख्याल यह है कि हमें इस देश में, प्रजाति के आधार पर निर्मित समुदायों को कतई कोई बढ़ावा नहीं देना चाहिये। अगर वह किसी अल्पसंख्यक वर्ग में शामिल होना ही चाहते हैं तो उन्हें भारत के ईसाई समाज में शामिल होना चाहिये। एक पृथक ऐंग्लो इंडियन समुदाय के रूप में वह अपना अस्तित्व, यहां बनाये रहे इसका कोई कारण नहीं है। आशा है कि इस अनुच्छेद के खंड (3) में आवश्यक संशोधन परिवर्तन अवश्य कर दिये जायेंगे।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमानः

"कि संशोधन सूची 2 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जायेः

'299. (1) There shall be a special officer for the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes to be appointed by the President.

(2) The special officer in consultation with the President may appoint a special officer for each State who shall work exclusively under his superintendence, direction and control.

(3) The special officer appointed either for the Union or for a State shall not be a member either of the Scheduled Tribes, the Scheduled Castes or of such other backward classes as the President may on receipt of the report of a commission appointed under clause (1) of Article 301 of this Constitution by order specify.

(4) The salaries, allowances and pensions payable to the special officer for the Union and to the special officer for each State shall be expenditure charged on the revenues of India.

(5) It shall be the duty of the special officer for the Union to make annual recommendations as to the steps that should be taken by the Union and by each State to improve the economic, educational and cultural level of the Scheduled Tribes, the Scheduled Castes or of such other backward classes as the President may on receipt of the report of a commission appointed under clause (1) of Article 301 of this Constitution by order specify and as to the sums that should be separately allotted in the annual budget of the Union Government and of each State Government for the purpose; and the President shall cause all such recommendations to be laid before Parliament.

(6) Parliament shall have the power to reject or accept in whole or in parts any of the recommendations contained in the Report.

(7) All State Governments shall be bound to make annual allotment in their budgets of such sums as Parliament may deem to be necessary for the purpose of giving effect to the recommendations contained in the Report of the Special officer for the Union.

(8) Until the appointment of the Commission and consideration of its Report by the President under clause (1) of Article 301 of the Constitution the backward classes shall consist of such castes and communities as may be determined by the President.

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

(9) The President may delegate the power to the special officer for the Union to supervise and give effect to all or any recommendations made by the commission appointed under Article 301 and accepted by the President.

(10) All appointment to be made under clauses (1) and (2) of this Article shall be made from the following category of persons:

(a) Doctors

(b) Scientists

(c) Socialogists, and

(d) Anthropologists

(11) Parliament shall have the power to repeal or amend any or all of the provisions of this Article.' "

[299. (1) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लिये एक विशेष पदाधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) यह विशेष पदाधिकारी राष्ट्रपति के परामर्श से प्रत्येक राज्य के लिये एक विशेष पदाधिकारी नियुक्त कर सकता है जो बिल्कुल उसके ही अधीक्षण, निदेश तथा नियंत्रण में काम करेंगे।

(3) संघ या किसी राज्य के लिये नियुक्त विशेष पदाधिकारी न तो अनुसूचित जातियों का न अनुसूचित आदिमजातियों का या अन्य ऐसे किसी पिछड़े वर्ग का सदस्य होगा जिसे राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खंड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लिखित करेगा।

(4) संघ के विशेष पदाधिकारी को तथा प्रत्येक राज्य के विशेष पदाधिकारी को जो वेतन, भत्ते और निवृति वेतन देय होंगे वह भारतीय राजस्व पर प्रभारित व्यय होंगे।]

(5) संघ के विशेष पदाधिकारी का कर्तव्य होगा कि वह उस बारे में अपनी वार्षिक सिफारिश दे कि अनुसूचित जातियों की, अनुसूचित आदिम जातियों की या ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों की, जिनको राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खंड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर, उल्लिखित

करे, आर्थिक शैक्षणिक और सांस्कृतिक समुन्नति के लिये संघ द्वारा तथा प्रत्येक राज्य द्वारा क्या कार्रवाई की जानी चाहिये और कितनी रकमें संघ शासन के तथा राज्यों के वार्षिक बजट में उस प्रयोजन के लिये पृथक रखी जानी चाहिये, तथा राष्ट्रपति ऐसी सभी सिफारिशों को संसद के समक्ष रखवायेगा।

(6) संसद को उसकी शक्ति होगी कि वह प्रतिवेदन में दी गयी सिफारिशों को पूर्णत: या अंशत: स्वीकार अथवा अस्वीकार करे।

(7) संघ के विशेष पदाधिकारी के प्रतिवेदन में दी गई सिफारिशों को कार्यान्वित करने के प्रयोजन के लिये जितनी रकम संसद आवश्यक समझेगी उतनी रकम प्रति वर्ष अपने बजट में रखना सभी राज्य शासनों के लिये जरूरी होगा।

(8) तब तक जब तक कि संविधान के अनुच्छेद 301 के खंड (1) के अधीन आयोग नियुक्त न हो जाये और राष्ट्रपति प्रतिवेदन पर विचार न कर ले, पिछड़े हुए वर्गों में वह जातियां या समुदाय माने जायेंगे जिनको राष्ट्रपति विनिश्चित करे।

(9) अनुच्छेद 301 के अधीन नियुक्त आयोग द्वारा की गई तथा राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत सभी नियम किन्हीं सिफारिशों के प्रबंध के लिये तथा उनके कार्यान्वित करने के लिये राष्ट्रपति संघ के विशेष पदाधिकारी को अधिकार सौंप सकता है।

(10) इस अनुच्छेद के खंड (1) और (2) के अधीन की जाने वाली सभी नियुक्तियां इन श्रेणियों के लोगों में से की जायेंगी:

(क) डॉक्टर

(ख) वैज्ञानिक

(ग) समाज विज्ञानवेता, तथा

(घ) प्राणि विज्ञानवेत्ता।

(11) संसद को इस अनुच्छेद के किसी या सभी उपबन्धों को निरसित या स्थगित करने की शक्ति होगी।]

***सरदार हुकम सिंह:** मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान......

***श्री आर.के. सिधवा:** यह संशोधन तो एक पहले मौके पर अस्वीकृत हो चुका है। ईसाई, पारसी और सिख समुदायों को इसमें शामिल करने की बात नामंजूर हो चुकी है।

***अध्यक्ष:** यह संशोधन है अनुच्छेद 299 के बारे में। अनुच्छेद 299 पर तो अभी विचार ही नहीं किया गया है, फिर यह कैसे अस्वीकृत हो चुका है। हां इसी तरह का एक संशोधन अनुच्छेद 296 के संबंध में अस्वीकृत हो चुका है।

***श्री आर.के. सिधवा:** यहां भी ईसाई, सिख और पारसी समुदायों को शामिल करने की बात कही गई है। पहले के एक अनुच्छेद पर विचार करते समय सभा इस सिद्धान्त को नामंजूर कर चुकी है।

***सरदार हुकम सिंहः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन पेश करता हूं:—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खंड (2) की व्याख्या में 'means' शब्द के आगे 'the Muslims, the Christians, the Sikhs, the Parsees, the Anglo-Indians' शब्द रखे जायें।"

जिन बातों की चर्चा की जा चुकी है उनकी पुनरावृत्ति मैं यहां नहीं करूंगा किंतु.........

***श्री के.एम. मुन्शीः** मेरा एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान। मेरे संशोधन नं. 64 में है "परिमाणों से संबद्ध सब विषयों से"। यानी केवल उन्हीं परिमाणों से सम्बद्ध विषयों के बारे में जो संविधान में उपबन्धित किये गये हैं। मुसलमान, ईसाई, सिख और पारसी समुदायों के लिये कोई परित्राण नहीं उपबन्धित किये गये हैं। संविधान में अब तक जो परित्राण स्वीकृत हुए हैं वह है केवल ऐंग्लो इंडियन, तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिमजातियों के बारे में। इसलिये मेरा कहना यह है श्रीमान्, कि अन्य समुदायों के लिये कोई परित्राण नहीं उपबन्धित किये गये हैं और यह संशोधन अनियमित है।

***सरदार हुकम सिंहः** संविधान के अधीन परित्राण अवश्य उपबन्धित किये गये हैं।

***श्री के.एम. मुन्शीः** इन समुदायों के लिये कोई परित्राण नहीं उपबन्धित किये गये हैं।

***सरदार हुकम सिंहः** अनुच्छेद 23 के अधीन अल्पसंख्यकों के लिये परित्राण रखे गये हैं। यह अनुच्छेद भी तो आखिर संविधान में ही शामिल है।

***श्री के.एम. मुन्शीः** अनुच्छेद 23 है संस्कृति संबंधी मूल अधिकार के बारे में जिसके लिये परित्राण का काम दे सकता है उच्चतम न्यायालय न कि यह विशेष पदाधिकारी।

***अध्यक्षः** इस पदाधिकारी को इस बारे में प्रतिवेदन देने को तो कहा जा सकता है कि उपबन्ध पर कहां तक अमल किया गया है। फेडरल न्यायालय या उच्चतम न्यायालय में जाकर आप उससे इस बात पर फैसला पा सकते हैं कि संविधान के किसी अनुच्छेद विशेष का उल्लंघन किया गया है या नहीं। पर यह विशेष पदाधिकारी भी तो इस बारे में प्रतिवेदन दे ही सकता है कि आया संविधान के एक अनुच्छेद विशेष पर अमल किया गया है या नहीं। सरदार हुक्म सिंह का मतलब इसी बात से है।

***श्री के.एम. मुन्शीः** यह परित्राण नहीं हुआ श्रीमान्। मैं सादर कहूंगा कि यह परित्राण नहीं है। परित्राण का मतलब है राजनैतिक परित्राण से जो संविधान में उपबन्धित किया गया हो। मूलाधिकार तो सभी नागरिकों को ही प्राप्त हैं और अगर उनके अधिकार पर आघात पहुंचता है तो इसके लिए एक मात्र उपाय यह है कि वह उच्चतम न्यायालय से अपील करे। यदि विशेष पदाधिकारी को इसके अनुसंधान का अधिकार दिया भी जाता है तो इस अधिकार का कोई मूल्य नहीं है।

***अध्यक्ष:** प्रशासन-प्रयोजनों के लिए इसका एक मूल्य है। शासन, विशेष पदाधिकारी के इस प्रतिवेदन को कि अमुक अधिकार को प्रदत्त किया गया है पालन नहीं किया जा रहा है या उसको मान्यता नहीं दी जा रही, ध्यान में रखेगा और उसके बारे में कार्यवाही करेगा।

***सरदार हुकम सिंह:** और अगर किसी अधिकार की उपेक्षा की जाती है और इसकी शिकायत फेडरल न्यायालय में नहीं की जाती है तो शासन का यह फर्ज नहीं है क्या कि वह इस बात को देखे कि अल्पसंख्यकों के साथ समुचित व्यवहार किया जा रहा है या नहीं, उनके साथ न्याय किया जा रहा है या नहीं?

जवाब से मैं भयभीत नहीं हूं। जो बातें कही जा चुकी हैं उनको मैं नहीं दुहराऊंगा। मैं एक या दो बातें ही आप के सामने रखूंगा। अनुच्छेद 296 पर जो मेरा संशोधन था और भी आवश्यक हो गया है कि अनुच्छेद 299 के अधीन विशेष पदाधिकारी के यह अधिकार प्राप्त रहे कि वह सभी अल्पसंख्यकों को दिये गये परित्राणों की देख भाल करे न कि केवल अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के ही परित्राणों की। हमसे यहां कहा गया है कि हमें अपने नेताओं पर विश्वास करना चाहिये, अपने भविष्य पर भरोसा करना चाहिये। यह तो ठीक है, मैं मानता हूं। यह भी मान लेता हूं कि सभी लोग ईमानदार होंगे और शासन सब समुदायों के साथ न्याय करेगा। पर जब तक शासन को यह न मालूम हो कि कोई बात गलत तो नहीं हुई है, कहीं किसी के साथ अनुचित व्यवहार तो नहीं किया जा रहा है, किसी वचन का उल्लंघन तो नहीं किया गया है, और सबके साथ न्याय हो रहा है, या नहीं, तब तक शासन आखिर न्याय करने में समर्थ ही कैसे होगा? जब तक कि शासन को इन सब बातों की जानकारी का कोई साधन न हो, वह कैसे किसी अन्याय का या किसी भूल का सुधार कर सकता है? इसलिये मेरा निवेदन यह है कि भले ही इन सब अल्पसंख्यकों को शामिल करना और अनुच्छेद 296 में इनका उल्लेख देना अनावश्यक समझा गया हो, पर यह है बहुत जरूरी कि नियुक्त किया जाने वाला विशेष पदाधिकारी इन सब बातों को देखे और अपने प्रतिवेदन में यह बताये कि, जहां तक अल्पसंख्यकों का संबंध है, संविधान के उपबन्धों पर किस तरह अमल हो रहा है। यह न होना चाहिये कि विशेष पदाधिकारी केवल दो ही वर्गों के संबंध में ध्यान दे।

इस मौके पर मैं एक बात का जवाब दे देना चाहता हूं जिसकी चर्चा यहां की गई है। मैंने एक सवाल किया था पर उसका जवाब मुझे नहीं दिया गया। माननीय श्री मुन्शी से मैं यह अनुरोध करूंगा कि वह मेरे सवाल का जवाब दें। माननीय सरदार पटेल ने मुझ से यह कहा है कि अगर सिखों को इसका खेद है तो जो कुछ उन्हें दिया गया है उसे वापस कर दें और हमसे यह परित्राण ले लें। मैं यही जानना चाहता हूं कि उनको दिया क्या गया है। हमें यह बताया गया है कि हमारी चार पिछड़ी हुई जातियों को पिछड़े हुए वर्गों में शामिल कर लिया गया है। वह कहां किसी अनुसूची में शामिल किये गये हैं? मैं यही जानना चाहता हूं। पहले एक अनुसूची रखी गई थी और आपने पिछड़े वर्गों को उसमें शामिल कराने के लिये हमें अपनी सभी मांगों का परित्याग करना पड़ा। किंतु अब वह अनुसूची ही उड़ा दी गई है। अनुच्छेद 300-क के अनुसार यह बात राष्ट्रपति

[सरदार हुकम सिंह]

पर छोड़ी गई है कि राज्यपाल से परामर्श करके वह यह बताये कि कौन-कौन जातियां अनुसूचित जातियां मानी जायेंगी। इसके लिये मैंने कीमत जरूर चुकाई है जैसा कि कहा गया है। जो कुछ भी मेरे पास था उसका मैंने त्याग किया है पर इसके लिये संविधान में मुझे कुछ भी नहीं मिला है। मेरी शिकायत यही है और इसका जवाब मुझे मिलना चाहिये।

(संशोधन नं. 80 पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्षः** बस इतने ही संशोधन इस पर आये हैं। कोई सदस्य कुछ कहना चाहते हैं क्या?

***माननीय सदस्यगणः** नहीं श्रीमान्।

***श्री के.एम. मुन्शीः** जवाब में मुझे चन्द शब्द ही कहने हैं। जहां तक कि माननीय मित्र श्री चालिहा के संशोधन का सवाल है, उनको यह मालूम होगा कि विशेष पदाधिकारी का जो प्रतिवेदन संसद के सामने रखा जायेगा वह एक तरह से एक विशेषज्ञ का प्रतिवेदन होगा। अवश्य ही संसद को उस पर विचार करने का अधिकार होगा। कोई सदस्य उस पर बहस उठा सकता है पर यह तो निश्चित है कि विशेषज्ञ ने अपने प्रतिवेदन में तथ्य दिये होंगे उसमें संसद कोई परिवर्तन या परिवर्धन नहीं कर सकती है। उस प्रतिवेदन में तो केवल सामग्री रहेगी और संसद के समक्ष विचारार्थ वह रखी जायेगी। इसलिए मैं यह कहूंगा कि संशोधन नं. 71 यहां उपयुक्त नहीं होगा।

जहां तक कि श्री कामत के संशोधन नं. 80 का संबंध है, वस्तुतः मुझे बड़ा आश्चर्य इस बात पर है कि वह "and also to the Anglo Indian community" (ऐंग्लो इंडियन समुदाय के प्रति निदेश भी है) शब्दों को हटाना चाहते हैं। अनुच्छेद 297 और 298 के द्वारा संविधान ने इस समुदाय को कुछ परित्राण दिये हैं और इस अनुच्छेद का मुख्य अभिप्राय यही है कि संविधान द्वारा जो राजनैतिक परित्राण कतिपय समुदायों को दिये गये हैं उन पर किस तरह अमल किया जा रहा है इसका अनुसंधान किया जाये और इसे संसद के समक्ष रखा जाये। यदि ऐंग्लो इंडियन समुदाय को कोई परित्राण दिये गये हैं तो इस पदाधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह इस बात को देखे कि इन परित्राणों पर किस तरह अमल किया जा रहा है।

अब मैं लेता हूं सरदार हुकुम सिंह के संशोधन नं. 74 को जिसके द्वारा वह यह चाहते है कि ऐंग्लो इंडियन समुदाय के साथ मुसलमान, ईसाई, सिख और पारसी समुदायों को भी यहां शामिल कर लिया जाये। उस संबंध में सादर मैं यह निवेदन करूंगा कि अनुच्छेद 299 में जिन परित्राणों को देने की बात सोची गई वह कोई मूल अधिकार नहीं है जो सभी नागरिकों को प्राप्त रहेंगे। वह तो केवल राजनैतिक परित्राण हैं देशवासियों के कतिपय सुपरिभाषित वर्गों की रक्षा के लिये। अन्यथा तो विशेष पदाधिकारी को संविधान के सारे मूलाधिकारों के संबंध में ही इसको देखना होगा कि उन पर कहां तक अमल किया जा रहा है। जहां तक मैं अपने संशोधन को समझ पाता हूं यह केवल अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम

जातियों, ऐंग्लो इन्डियन समुदाय और पिछड़े वर्गों के लिए है जिसको मूलाधिकार संबंधी अनुच्छेद 10 में निश्चित परित्राण दिये गये हैं और विशेष पदाधिकारी को यह देखना चाहिये कि इन पर ठीक ठीक अमल किया गया है या नहीं। ऐसी हालत में संशोधन नं. 74 में सुझाये गये "मुसलमान, ईसाई, सिख इत्यादि" शब्दों को मंजूर करना संभव नहीं है।

अब मुझे एक ही बात कहनी रह गई है और वह है सरदार भूपेन्द्र सिंह मान के संशोधन नं. 67 के बारे में।

*__श्री एच.वी. कामत:__ संशोधन नं. 72 का क्या हुआ?

*__श्री के.एम. मुन्शी:__ नं. 72 में सुझाये गये "ऐसी कार्यवाही के लिये जैसी कि संसद को उचित प्रतीत हो" शब्दों को रखना अनावश्यक है। प्रतिवेदन जब संसद के सामने पेश हो जायेगा तो उस पर जैसा मैं कह चुका हूं, बहस की जा सकती है और प्रस्ताव रखा जा सकता है। यह बात जोकि यहां लिखित रूप में नहीं कही गई है पर यह स्वत: निहित है। इसलिये इन शब्दों को यहां रखने की कोई जरुरत नहीं है।

संशोधन नं. 67 के द्वारा भूपेन्द्र सिंह मान यह चाहते हैं कि प्रत्येक राज्य में एक विशेष पदाधिकारी होना चाहिये। इस अनुच्छेद में जिस विशेष पदाधिकारी की रखने की बात सोची गई है उसे यदि अन्य पदाधिकारियों के साहाय्य की अपेक्षा होगी तो इनको अवश्य नियुक्त किया जाये किंतु हर राज्य के लिये एक विशेष पदाधिकारी नियुक्त करने की जरुरत नहीं है। इससे तो स्थिति और जटिल हो जायेगी। प्रस्तुत व्यवस्था को इसी उद्देश्य से रखा जा रहा है कि देश भर में सर्वत्र एक सिद्धांत के आधार पर काम हो। हम नहीं चाहते हैं कि हर राज्य में बतौर स्थायी अभिभावक के विशेष पदाधिकारियों को रखा जाये। और फिर माननीय संशोधनकर्त्ता महोदय ने अपने संशोधन में 'minorities' (अल्पसंख्यक) शब्द को भी स्थान दिया है। अनुच्छेद 296 से हम ने इस शब्द को हटा दिया है और इस अनुच्छेद में इसे रखना सर्वथा अनुपयुक्त होगा। अपने भाषण के सिलसिले में आपने उन बातों का भी जवाब देने का प्रयास किया है जिन्हें सिखों को परित्राण देने के बारे में सरदार पटेल ने यहां कही हैं। सरदार पटेल ने जो कुछ कहा है, उसे मैं दुहराना नहीं चाहता हूं। मैं तो केवल एक बात के संबंध में ही कुछ कहूंगा जिसकी आपने यहां चर्चा की है और मेरा ख्याल है कि मुझे उसे जरूर कहना चाहिये। सिख प्रश्न पर छान बीन करने के लिए जो समिति नियुक्त की गई थी उसका मैं सदस्य रह चुका हूं। मंत्रणा समिति और अल्पसंख्यक समिति के नियुक्त काल से ही बातचीत के हर मौके से मेरा कुछ न कुछ संबंध बना रहा है। मैं सभा को यह विश्वास दिला सकता हूं कि मंत्रणा-समिति की गत बैठक में किसी भी अल्पसंख्यक समुदाय के लिए जो धर्म के आधार पर अल्पसंख्यक हो, परित्राण देने का कोई प्रश्न ही नहीं उठा था। सारी बातचीत ही इस आधार पर चली थी कि पिछड़े वर्गों को जो कि आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं, तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों को छोड़कर संविधान में और किसी को भी अल्पसंख्यक समुदाय नहीं माना जायेगा। माननीय सदस्य ने कतिपय सिखों द्वारा दिये गये एक वक्तव्य से कुछ अंश पढ़कर अवश्य सुनाया था। दुर्भाग्य की बात है कि जो थोड़ा समय मेरे पास रहा है उसमें मैं विभिन्न लेख्यों को सभा के

[श्री के.एम. मुन्शी]

सामने नहीं रख सका हूं। पर मैं सभा को यह विश्वास दिला सकता हूं कि जब यह मसला मंत्रणा-समिति के सामने पेश हुआ था उस समय सिख सदस्यों ने परित्राण के बारे में अपनी सभी मांगों को वापस ले लिया था इस बात के बदले में कि सिखों की अनुसूचित जातियों को अनुसूचित जातियों में शामिल कर लिया जाये और उनको वही विशेष सुविधायें दी जायें जिनकी हकदार हैं शेष अनुसूचित जातियां। अब इस संबंध में अगर कोई सवाल उठाया जाता है तो वह बाद की सूझ है।

इस संबंध में मैं और कुछ नहीं कहना चाहता हूं। जिस तरह के आरोप यहां लगाये गये हैं वह सर्वथा निराधार हैं। मुसलिम समुदाय के संबंध में भी बहस केवल प्रतिनिधान के प्रश्न पर हुई थी। जहां तक मुसलमानों का संबंध है, इनके बारे में भी नौकरियों को बाबत यही तय पाया था कि यह कोई परित्राण नहीं मांगेंगे। यह जरूर है कि यह बात लिखित रूप में समिति के प्रतिवेदन में नहीं दी गई है। समिति ने निर्णय ही इस आधार पर किया था कि संविधान में धर्म के आधार पर किसी भी समुदाय को अल्पसंख्यक समुदाय नहीं माना जायेगा इसी आधार पर सारी बातें हुई थीं और अब हम इससे पीछे नहीं हट सकते हैं।

***सरदार हुकम सिंहः** मेरे सवाल का जवाब मुझे नहीं मिला है। मैं यह पूछता हूं कि क्या सिखों की इन चार जातियों को अनुसूचित जातियों में शामिल कर लिया गया है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अवश्य ही शामिल किये जायेंगे।

***श्री के.एम. मुन्शीः** अनुच्छेद 300-क के अधीन राष्ट्रपति को अनुसूचित जातियों की सूची निकालने का अधिकार दिया है। उस सूची में इनको जरूर शामिल किया जायेगा।

***सरदार हुकम सिंहः** इस बात की गारंटी क्या है कि राष्ट्रपति इनको सूची में शामिल करेगा ही? संविधान में यह अधिकार पाने के लिये ही तो हमने सारी मांगों को छोड़ा है पर हमें यह मिला कहां?

***श्री के.एम. मुन्शीः** राष्ट्रपति को इसकी शक्ति प्राप्त है। यहां जो भी वचन दिया गया है राष्ट्रपति अवश्य उसका निर्वाह करेंगे। मंत्रणा-समिति के प्रतिवेदन में उसका यह निर्णय दिया हुआ है कि सिखों की अनुसूचित जातियों को देश की अनुसूचित जातियों का अंग माना जायेगा और अनुच्छेद 296 के अधीन जिसे कि हमने अभी स्वीकार किया है उसे सभी परित्राण दिये जायेंगे। अपने इस वचन के पीछे हटने की कोई बात नहीं है। आपको मैं विश्वास दिलाता हूं कि सिखों की अनुसूचित जातियों को वही सुविधायें प्राप्त रहेंगी जो शेष अनुसूचित जातियों को दी जायेंगी। मैं पुनः इस बात को दुहराता हूं कि सिखों की अनुसूचित जातियों को पंजाब की अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों की सूची में जरूर शामिल किया जायेगा।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों पर एक-एक करके मत लूंगा। जो कि ये सभी संशोधन, संशोधन नं 63 पर रखे गये हैं, नं. 64 के साथ भी यह ठीक बैठेंगे

और इसलिये इनको पेश करने की अनुमति दी गई है। इनमें से अगर कोई संशोधन मंजूर किया जाता है तो उसे हम ठीक जगह बिठा देंगे।

प्रश्न यह है:

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खंड (1) में 'by the President' (राष्ट्रपति नियुक्त करेगा) शब्दों के आगे 'and a special officer for minorities for each State for the time being specified in Part I, II and III of the first Schedule who shall be appointed by the Governor or Rajpramukh of the State as the case may be' (तथा प्रत्येक राज्य में जो प्रथम अनुसूची के भाग 1, 2 और 3 में अभी उल्लिखित हैं, अल्पसंख्यकों के लिये एक विशेष पदाधिकारी होगा जिसे, यथा स्थिति, राज्यपाल या राजप्रमुख नियुक्त करेगा) शब्द जोड़े जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खंड (2) में 'under this Constitution and' (इस संविधान के अधीन) शब्दों के आगे 'their representation in different Legislatures and services of the country' (देश के विभिन्न विधान मंडलों में और सेवाओं में उनके प्रतिनिधान का) शब्दों को रखा जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खंड (2) के अन्त में 'for its approval, modification or addition' (इसके द्वारा अनुमोदन, रूप भेद और अभिवर्धन के लिये) शब्द जोड़ दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खंड (2) के अन्त में 'for such action as Parliament may deem necessary' (ऐसी कार्रवाई के लिये जैसी कि संसद आवश्यक समझे) शब्द जोड़े जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खंड (2) की व्याख्या में 'means' शब्द के आगे 'the Muslims, the Christians, the Sikhs, the Parsees, the Anglo-Indians' (मुसलमान, ईसाई, सिख, पारसी, ऐंग्लो-इंडियन समुदाय) शब्दों को रखा जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 की व्याख्या में 'and include the Anglo-Indian Community' (तथा ऐंग्लो इंडियन समुदाय के प्रति निदेश भी है) शब्दों की जगह 'and includes such community or communities as the President may then specify' (तथा अन्य ऐसा या ऐसे समुदाय के प्रति, जिन्हें राष्ट्रपति उस समय उल्लिखित करे निदेश भी है) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 की व्याख्या के अन्त में 'Muslims, Christians and Sikhs,' (मुसलमान, ईसाई और सिख) शब्द जोड़े दिये जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि ऊपर के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खंड (3) में, 'to such other backward classes as the President may on receipt of the report of a Commission appointed under clause (1) of article 301 of this Constitution, by order specify and' (ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के प्रति निदेश, जिनको कि राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खंड (1) के अंधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लिखित करे) शब्दों को हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब लिया जाता है संशोधन नं. 80। इसे श्री मुन्नावाली ने पेश नहीं किया था। मेरा ख्याल यह है कि इस संशोधन की बात अन्य संशोधनों के अन्दर आ जाती है। अच्छा यही होगा कि इस पर राय ही ले लूं। प्रश्न यह है:

"कि ऊपर के संशोधन नं. 64 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के खंड (3) में, 'and also to the Anglo Indian Community' शब्दों को हटा दिया जाये।'

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"कि संशोधन सूची 2 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन नं. 63 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 299 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये:

'299. (1) There shall be a special officer for the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes to be appointed by the President.

(2) The special officer in consultation with the President may appoint a special officer for each State who shall work exclusively under his superintendence, direction and control.

(3) The special officer appointed either for the Union or for a State shall not be a member either of the Scheduled Tribes, the Scheduled Castes or of such other backward classes as the President may on receipt of the report of a commission appointed under clause (1) of Article 301 of this Constitution by order specify.

(4) The salaries, allowances and pensions payable to the special officer for the Union and to the special officer for each State shall be expenditure charged on the revenues of India.

(5) It shall be the duty of the special officer for the Union to make annual recommendations as to the steps that should be taken by the Union and by each State to improve the economic, educational and cultural level of the Scheduled Tribes, the Scheduled Castes or of such other backward classes as the President may on receipt of the report of a commission appointed under clause (1) of Article 301 of this Constitution by order specify and as to the sums that should be separately allotted in the annual budget of the Union Government and of each State Government for the purpose; and the President shall cause all such recommendations to be laid before Parliament.

[अध्यक्ष]

(6) Parliament shall have the power to reject or accept in whole or in parts any of the recommendations contained in the Report.

(7) All State Governments shall be bound to make annual allotment in their budgets of such sums as Parliament may deem to be necessary for the purpose of giving effect to the recommendations contained in the Report of the special officer for the Union.

(8) Until the appointment of the commission and consideration of its Report by the President under clause (1) of Article 301 of the Constitution the backward classes shall consist of such castes and communities as may be determined by the President.

(9) The President may delegate the power to the special officer for the Union to supervise and give effect to all or any recommensations made by the commission appointed under Article 301 and accepted by the President.

(10) All appointments to be made under clauses (1) and (2) of this Article shall be made from the following category of persons:

(a) Doctors

(b) Scientists

(c) Socialogists, and

(d) Anthropologists.

(11) Parliament shall have the power to repeal or amend any or all of the provisions of this Article.' "

[299. (1) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लिये एक विशेष पदाधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) यह विशेष पदाधिकारी राष्ट्रपति के परामर्श से प्रत्येक राज्य के लिये एक विशेष पदाधिकारी नियुक्त कर सकता है जो बिल्कुल उसके ही अधीक्षण, निदेश तथा नियंत्रण में काम करेगा।

(3) संघ या किसी राज्य के लिये नियुक्त विशेष पदाधिकारी न तो अनुसूचित जातियों का न अनुसूचित आदिमजातियों का या अन्य ऐसे किसी पिछड़े वर्ग का सदस्य होगा जिसे राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खंड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लिखित करेगा।

(4) संघ के विशेष पदाधिकारी को तथा प्रत्येक राज्य के विशेष पदाधिकारी को जो वेतन, भत्ते और निवृति वेतन देय होंगे वह भारतीय राजस्व पर प्रभारित व्यय होंगे।]

(5) संघ के विशेष पदाधिकारी का कर्तव्य होगा कि वह उस बारे में अपनी वार्षिक सिफारिश दे कि अनुसूचित जातियों की, अनुसूचित आदिम जातियों की या ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों की जिनको राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खंड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर, उल्लिखित करे, आर्थिक शैक्षणिक और सांस्कृतिक समुन्नति के लिये संघ द्वारा तथा प्रत्येक राज्य द्वारा क्या कार्रवाई की जानी चाहिये और कितनी रकमें संघ शासन के तथा राज्यों के वार्षिक बजट में उस प्रयोजन के लिये पृथक रखी जानी चाहिये तथा राष्ट्रपति ऐसी सभी सिफारिशों को संसद के समक्ष रखवायेगा।

(6) संसद को उसकी शक्ति होगी कि वह प्रतिवेदन में दी गयी सिफारिशों को पूर्णत: या अंशत: स्वीकार अथवा अस्वीकार करे।

(7) संघ के विशेष पदाधिकारी के प्रतिवेदन में दी गई सिफारिशों को कार्यान्वित करने के प्रयोजन के लिये जितनी रकम संसद आवश्यक समझेगी उतनी रकम प्रति वर्ष अपने बजट में रखना सभी राज्य शासनों के लिये जरूरी होगा।

(8) तब तक जब तक कि संविधान के अनुच्छेद 301 के खंड (1) के अधीन आयोग नियुक्त न हो जाये और राष्ट्रपति प्रतिवेदन पर विचार न कर ले, पिछड़े हुए वर्गों में वह जातियां या समुदाय माने जायेंगे जिनको राष्ट्रपति विनिश्चित करे।

(9) अनुच्छेद 301 के अधीन नियुक्त आयोग द्वारा की गई तथा राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत सभी नियम किन्हीं सिफारिशों के प्रबंध के लिये तथा उनको कार्यान्वित करने के लिये राष्ट्रपति संघ के विशेष पदाधिकारी को अधिकार सौंप सकता है।

(10) इस अनुच्छेद के खंड (1) और (2) के अधीन की जाने वाली सभी नियुक्तियां इन श्रेणियों के लोगों में से की जायेंगी:

(क) डॉक्टर

(ख) वैज्ञानिक

(ग) समाज विज्ञानवेता, तथा

(घ) प्राणि विज्ञानवेता।

(11) संसद को इस अनुच्छेद के किसी या सभी उपबन्धों को निरसित या स्थगित करने की शक्ति होगी।]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** कुल यही संशोधन हैं जो कि पेश किये गये हैं। अब मैं श्री मुंशी द्वारा यथा प्रस्तावित अनुच्छेद 299 (संशोधन नं. 64) पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:—

"संशोधन नं. 63 के संबंध में, अनुच्छेद 299 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाये:

Special officer for Scheduled Castes, Scheduled Tribes etc.

'299. (1) There shall be a Special Officer for the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes to be appointed by the President.

(2) It shall be the duty of the Special Officer to investigate all matters relating to the safeguards provided for the Scheduled Castes and Scheduled Tribes under this Constitution and report to the President upon the working of those safeguards at such intervals as the President may direct, and the President shall cause all such reports to the laid before each House of Parliament.

(3) In this article, the reference to the Scheduled Castes and Scheduled Tribes shall be construed as including the reference to such other backward classes as the President may on receipt of the report of a Commission appointed under clause (1) of article 301 of this Constitution by order specify and also to the Anglo-Indian community."

अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिमजातियों इत्यादि के लिये विशेष पदाधिकारी।

[299. (1) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लिये एक विशेष पदाधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लिये इस संविधान के अधीन उपबन्धित परित्राणों से संबद्ध सब विषयों का अनुसंधान करना तथा उन परित्राणों पर कार्य होने के संबंध में ऐसी अन्तराविधियों में, जैसी कि राष्ट्रपति निदिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देना विशेष पदाधिकारी का कर्तव्य होगा तथा राष्ट्रपति ऐसे सब प्रतिवेदनों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवायेगा।

(3) इस अनुच्छेद में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के प्रति निर्देश के अन्तर्गत ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के प्रति निर्देश, जिनको कि राष्ट्रपति इस संविधान के अनुच्छेद 301 के खंड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा उल्लिखित करे तथा आंग्ल-भारतीय समाज के प्रति निर्देश भी है।]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 299 यथा संशोधित रूप में संविधान में शामिल किया गया।

***अध्यक्षः** अब सभा स्थगित होती है। हम पुनः चार बजे समवेत होंगे।

इसके पश्चात् सभा भोजनार्थ, चार बजे तक के लिए स्थगित हो गई।

अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में, सभा भोजनोपरान्त 4 बजे समवेत हुई।

अल्पसंख्यक मंत्रणा-समिति के प्रतिवेदन के बारे में वक्तव्य

***अध्यक्षः** पहले इसके कि आज के कार्यक्रम में दिये गये अन्य अनुच्छेदों को हम लें, मैं एक बात कहना चाहता हूं। आज सवेरे जब यहां अनुच्छेद 296 और 299 पर विचार किया जा रहा था उस समय माननीय सरदार पटेल ने एक लेख्य का हवाला दिया था। सभा के माननीय सदस्य सरदार भूपेन्द्र सिंह मान ने एक लेख्य से कुछ अंश पढ़कर सुनाया था। आपका ख्याल था कि यह वही लेख्य है जिसका हवाला माननीय सरदार पटेल ने दिया था। चूंकि उस लेख्य के बारे में मुझे कुछ संदेह था इसलिये मैंने यह सोचा कि लेख्य के केवल एक अंश को ही कार्रवाई में शामिल करना ठीक नहीं होगा और माननीय सदस्य से मैंने इस बात का अनुरोध किया कि वह समूचा लेख्य पढ़कर सुना दें जो उनके हाथ में था और उन्होंने समूचे लेख्य को पढ़कर सुना दिया। इसके बाद मैंने इस संबंध में पूछताछ की और मुझे यह मालूम हुआ है कि यह वह लेख्य नहीं है जिसका हवाला माननीय सरदार पटेल ने अपने भाषण में दिया था। मैं उस लेख्य को पढ़कर सुना देना चाहता हूं जो कि सरदार पटेल के दिमाग में था ताकि जब दूसरा लेख्य कार्रवाई में आ गया है तो यह लेख्य भी इसमें दिखा दिया जाय जिससे कि उस लेख्य के कारण अगर किसी को कोई गलतफहमी हुई हो तो वह दूर हो जाये।

***सरदार सुचेत सिंह** (पटियाला तथा पूर्वी पंजाब राज्य-संघ): क्या इस लेख्य की प्रतियां सदस्यों को मिल सकती हैं?

***अध्यक्षः** अवश्य मिल सकती हैं। पर अभी तो मैं उसे पढ़कर ही सुनाये देता हूं। यह लेख्य पर तारीख दी हुई है 10 मई सन् 1949 की। मंत्रणा-समिति की बैठक हुई थी 11 मई सन् 1949 को और यह स्पष्ट है कि मंत्रणा समिति ने जो निर्णय किया था वह इस लेख्य के आधार पर ही किया था। इस पर हस्ताक्षर किये हैं तीन सदस्यों ने–सरदार उज्जल सिंह, माननीय सरदार योगिन्दर सिंह मान तथा सरदार गुरुवचन सिंह ने। अब मैं समूचे लेख्य को पढ़ देता हूं।

"पूर्वी पंजाब की विधान सभा के तथा संविधान सभा के सिख सदस्यों की एक बैठक 10 मई को दिल्ली में हुई जिसमें ये सदस्य उपस्थित थे:—

1-सरदार कपूर सिंह

2-ज्ञानी करतार सिंह

3-सरदार स्वरन सिंह

4-सरदार ईशर सिंह मझाइल

[अध्यक्ष]

5-सरदार उज्जल सिंह

6-सरदार योगिन्दर सिंह मान

7-भाई पियारा सिंह

8-सरदार इन्दर सिंह

9-सरदार गुरवचन सिंह वजवा

10-सरदार दलीप सिंह कंग

11-सरदार अजित सिंह

12-सरदार शिवसरन सिंह

13-सरदार नरोत्तम सिंह

14-संत नरीन्दर सिंह

15-सरदार हुकुम सिंह

16-सरदार तारा सिंह

17-सरदार रतन सिंह मोंगा

18-सरदार रतन सिंह लोगाढ़

19-सरदार गुरुवचन सिंह फिरोजपुर

20-सरदार सजन सिंह मिरगंदपुरी

21-सरदार जगजीत सिंह मान

22-सरदार सारदूल सिंह

पूर्वी पंजाब की विधानसभा के अध्यक्ष सरदार कपूर सिंह के सभापतित्व में यह बैठक हुई। अल्प संख्यक सिख समुदाय के लिए संविधान में परित्राण उपबन्धित करने के बारे में सर्व सम्मति से यह बातें स्वीकृत हुई थीं। इन बातों को उन सब सिख सदस्यों का भी समर्थन प्राप्त था जो इस बैठक में उपस्थित न हो सके थे।

1-सिख समुदाय के पिछड़े वर्गों को अर्थात् मजहबी, कबीर पंथी, राम दासी, बावरिया तथा सिकलीगर इत्यादि जातियों को, पूर्वी पंजाब तथा पेप्सू में, विधान मंडलों में प्रतिनिधान के बारे में और अन्य राजनैतिक रियायतों के बारे में वही सुविधायें मिलनी चाहिये जो कि अनुसूचित जातियों को दी जायें। इस प्रयोजन के लिये, या तो इन वर्गों को संविधान के प्रारूप में अनुसूचित जातियों की जो सूची दी गई है उसमें दिखाया जाये या सिखों के लिए जितनी जगहें रक्षित रखी गई हैं उनमें से आबादी के आधार पर इनके लिए जगह रक्षित रखी जायें।

2-पूर्वी पंजाब में, सिखों के लिए उनकी जनसंख्या के आधार पर जगहें रक्षित रखी जायें और अतिरिक्त जगहों के लिए चुनाव लड़ने का उन्हें अधिकार रहे।

3-पूर्वी पंजाब के सिवाय अन्य प्रांतों में तथा केन्द्र में, जहां संख्या के आधार पर प्रतिनिधान पाने का सिखों को हक हो, वहां उनके लिये जगहें रक्षित रहनी

चाहियें तथा जहां चुनाव द्वारा उनके पर्याप्त प्रतिनिधि न आ पाये हों। वहां मनोनयन के द्वारा उनके प्रतिनिधि लिये जायें ताकि संख्या के हिसाब से उनको ठीक प्रतिनिधान प्राप्त हो जाये।

4-पूर्वी पंजाब में स्थान रक्षण की व्यवस्था को उठाने पर सिख राजी हैं अगर सिखों को और हिंदू अनुसूचित जातियों को साथ मिला दिया जाये और उनकी जनसंख्या के आधार पर उनके लिये जगहें रक्षित रख दी जायें।

यदि ये बातें नहीं मंजूर होती हैं तो सिखों को परित्राण देने का समूचा प्रश्न, कांग्रेस द्वारा दिये गये आश्वासन के अनुसार, मध्यस्थ-निर्णयन पर छोड़ दिया जाये।

(हस्ताक्षर) उज्जल सिंह

ता. 10 मई सन् 1949 ई. (हस्ताक्षर) योगिन्दर सिंह मान

(हस्ताक्षर) गुरवचन सिंह वजवा

मैं इस पर कोई राय नहीं जाहिर करना चाहता हूं। दोनों लेखों को साथ साथ पढ़ने पर सदस्य स्वयं अपना निर्णय कर सकते हैं।

अनुच्छेद 48

***अध्यक्ष:** अब हम उन विभिन्न अनुच्छेदों को लेंगे जो आज के कार्यक्रम में दिये गये हैं और शुरू करेंगे अनुच्छेद 48 से। ये सभी संशोधन उन अनुच्छेदों पर आये हैं जो स्वीकृत हो चुके हैं। जहां भी आवश्यक होगा, पूर्व निर्णय को बदलने के लिये सभी की अनुमति ले ली जायेगी। अनुच्छेद 48।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 48 से लेकर अनुच्छेद 306 तक प्राय: सभी अनुच्छेदों पर, सिवाय 273-क और 302-क के, पुनर्विचार करने की जरुरत होगी क्योंकि ये सब पहले स्वीकृत हो चुके हैं। इसलिये मेरा कहना यह है कि अगर आप चाहें तो, इन सभी अनुच्छेदों पर पुनर्विचार करने की अनुमति सभा से मांग ली जाये।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सभा इन निर्णयों पर पुनर्विचार करने की अनुमति दे।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन रखता हूं:—

"कि अनुच्छेद 48 के खंड (3) में "the President shall have an official residence" (राष्ट्रपति के लिये पदावास रहेगा) शब्दों की जगह "the President

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

shall be entitled without payment of rent to the use of his official residences" (राष्ट्रपति को, बिना किराया दिये, अपने पदावासों के उपयोग का हक होगा) शब्द रखे जाये।"

मैं यह देखता हूं कि मेरे इस संशोधन पर एक संशोधन भेजा है माननीय मित्र श्री सिधवा ने। इस संबंध में मैं उनका ध्यान आकृष्ट करूंगा उस संशोधन की ओर जिसे सभा ने कल यहां भाग 6-क के बारे में स्वीकार किया है। मेरा मतलब है माननीय मित्र श्री सन्तानम् के संशोधन से जो यों है:–

"Unless he has his own residence in the capital of his State, the Rajpramukh shall be entitled to the use of an official residence without payment of rent and there shall be paid to the Rajpramukh such allowances... etc."

[राजप्रमुख को जब कि राज्य की सरकार के मुख्य स्थान में उनका अपना निवास गृह न हो, तब बिना किराया दिये पदावास के उपयोग का हक होगा तथा उसको ऐसे भत्तों... इत्यादि, इत्यादि।]

राजप्रमुख के संबंध में जब यह उपबन्ध स्वीकार किया जा चुका है तो इसी के अनुसार राज्यपाल के बारे में भी उपबन्ध रखना होगा। सभा इस संशोधन को कल स्वीकार कर चुकी है। यही कारण है कि मैं अपना यह संशोधन रख रहा हूं। आशा है कि श्री सिधवा, इस बात को देखते हुए कि भाग 6-क के संबंध में श्री सन्तानम् के संशोधन को पास कर जिस मार्ग का प्रदर्शन किया है हम उसी का अनुगमन कर रहे हैं, अपने संशोधन के लिये जोर नहीं देंगे।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, श्री संतानम् का संशोधन है राजप्रमुख के संबंध में। पर मेरे संशोधन में यह कहा गया है कि जहां तक राष्ट्रपति का संबंध है, उसे बिना किराया दिये गवर्नमेंट हाउस का, अपने आवास के रूप में उपयोग करने का हक होगा। मैं नहीं समझ पाता हूं कि आखिर श्री संतानम् के संशोधन से यह प्रयोजन कैसे हल होगा।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** माननीय मित्र श्री सिधवा से मैं यह कहूंगा कि यह फिर से संशोधन को देख लें। वह यों है:–

"राष्ट्रपति को, बिना किराया दिये, अपने पदावास के उपयोग का हक होगा।"

वस्तुत: श्री सिधवा के ध्यान में मूल बात नहीं आ पाई है। मेरे संशोधन में "official residence" शब्द प्रयुक्त हुए हैं। राष्ट्रपति को एक से अधिक पदावास

हो सकते हं। गवर्नर जनरल का एक पदावास है दिल्ली में और एक है शिमला में। इसीलिये इन शब्दों को यहां रखा गया है और विशेषज्ञ की राय यही है कि विधेयक में यही शब्द बिल्कुल ठीक बैठेंगे। इसलिये मैं यह अनुभव करता हूं कि इस में किसी परिवर्तन की जरुरत नहीं है। इसलिये श्री सिधवा से मैं यह अनुरोध करूंगा कि वह अपने संशोधन के लिये आग्रह न करें।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना__ (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, श्री सिधवा यह कहना चाहते हैं कि गवर्नमेंट हाउस का उपयोग केवल राष्ट्रपति के आवास के लिये ही किया जायेगा। किन्तु हो सकता है कि भावी संसद इसे और किसी उपयोग में भी लाना चाहे।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ मैं सोचता यह था कि अपने संशोधन के लिये जोर न दूं किन्तु प्रो. शिब्बनलाल की बात सुनकर मैं यह अनुभव कर रहा हूं कि मुझे इस पर जोर देना ही चाहिये। उनका कहना है कि गवर्नमेंट हाउस का उपयोग किसी अन्य प्रयोजन के लिये भी किया जा सकता है जैसा प्रो. सक्सेना चाहते हैं उसके हिसाब से तो इसका उपयोग कोई परिव्राजक भी कर सकता है। पर इस सम्बन्ध में किसी सन्देह की गुंजाइश नहीं रहने देना चाहता इसलिये मैं साफ तौर पर 'गवर्नमेंट हाउस' का उल्लेख यहां कर देना चाहता हूं जैसा कि मैंने अपने संशोधन में किया है इसका उपयोग अन्य प्रयोजनों के लिये भी किया जा सकता है जैसा कि प्रदर्शिनी के लिये इसका उपयोग हमने किया है। पर यह बात हमें यहां अवश्य रख देना चाहिये कि गवर्नमेंट हाउस का उपयोग राष्ट्रपति के आवास गृह के लिये किया जायेगा।

*__अध्यक्ष:__ किन्तु श्री कृष्णमाचारी के संशोधन से यह तो नहीं होता है कि राष्ट्रपति के आवास गृह के लिये इसका उपयोग वर्जित हो जाता हो। क्या इस मामले पर हमें किसी बहस की जरुरत है?

*__श्री एच.वी. कामत:__ अध्यक्ष महोदय, उच्च्तम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये बिना किराया के आवास गृह देने के बारे में जो उपबन्ध अभी उस दिन रखा गया था उसका मैंने विरोध किया था। किन्तु डॉ. अम्बेडकर ने जवाब में यह बताया कि जिन अनुच्छेदों को पास कर चुके हैं। उनमें राष्ट्रपति और राज्यपाल के लिये बिना किराये के आवास गृह का उपबन्ध रखा गया है। उन्होंने मुझसे कहा कि राज्यपाल और राष्ट्रपति के लिये बिना किराये के आवास गृह के उपबंध पर जब यहां विचार किया जा रहा था उस समय मुझे आपत्ति उठानी चाहिये थी। अब ऐसा मालूम पड़ता है कि खुद उनके दिमाग में ही यह सन्देह उत्पन्न हो गया है कि कहीं पहले के अनुच्छेदों का कोई और निर्वचन न किया जा सकता हो; कहीं यही अर्थ न किया जाये कि किराया देने पर ही उनको आवास गृह दिया जायेगा बिना किराया दिये नहीं। उस दिन उनका तर्क यह था कि जहां तक न्यायाधीशों का सम्बन्ध है, वह दूर दूर की जगहों से यहां राजधानी में आते हैं और उनको यह तकलीफ न देनी चाहिये कि दिल्ली में अपने लिये मकान ढूंढते फिरें। उस दिन आपने यही दलील पेश की थी किन्तु उनके इस तर्क के आधार पर उनसे मैं यह कहूंगा कि फिर तो मिनिस्टरों को भी, बिना उनसे किराया लिये आवास गृह देना अनुचित नहीं होगा। आखिर जब आप उच्चतम न्यायालय के

[श्री एच.वी. कामत]

न्यायाधीशों के लिये बिना किराया के आवास गृह की व्यवस्था कर रहे हैं, कार्यपालिका के प्रधान के लिये जब बिना किराया के आवास गृह की व्यवस्था कर रहे हैं तो मेरी समझ से तो बुद्धि संगत और तर्क संगत बात यही होगी कि मिनिस्टरों के लिये ऐसी ही व्यवस्था की जाये। आशा है कि सभा मेरे इस मन्तव्य से सहमत होगी कि संविधान में ऐसा उपबंध रहना चाहिये।

***अध्यक्ष:** सभा के सामने जो संशोधन पेश है उसके सम्बन्ध में यह प्रश्न उठता ही कहां है?

***श्री एच.वी. कामत:** अभी उस दिन जब डॉ. अम्बेडकर ने मुझे उत्तर दिया था तो उनको इस बारे में कोई सन्देह नहीं था। पर आज, ऐसा मालूम पड़ता है कि, उनको खुद कुछ सन्देह हो रहा है जो यह राज्यपालों के लिये तथा राष्ट्रपति के लिये बिना किराये के आवास गृह देने का संशोधन रख रहे हैं। फिर तो तर्क संगत यही है कि मिनिस्टरों को भी बिना किराया लिये आवास गृह दिया जाये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यदि अनुमति हो तो एक बात कहूं। राजप्रमुख के सम्बन्ध में इस बारे में जो उपबन्ध रख चुके हैं उसके अनुरूप उपबन्ध यहां रखने के लिये यह संशोधन रखना जरूरी है। राजप्रमुखों के आवास गृह के सम्बन्ध में जो खण्ड अभी उस दिन पेश किये गये थे उनमें हमने यह साफ साफ कहा है कि इनके आवास गृह के लिये इनसे कोई किराया न लिया जायेगा। राज्यपालों के सम्बन्ध में इस बारे में जो खण्ड हमने रखे हैं उनका इनसे मिलान करने पर हमने यह देखा कि वहां किसी तरह एक बात छूट गई है और वह यह कि बिना किराया लिये आवास गृह देने की बात वहां नहीं रखी गई है। इस खामी को दूर करने के लिये तथा राज्यपालों को और राष्ट्रपति को इस सम्बन्ध में राजप्रमुखों के स्तर पर लाने के लिये इस संशोधन की जरुरत पड़ी है।

मिनिस्टरों को बिना किराया के आवास गृह देने का जो प्रश्न है उस पर विचार करना है संसद को इस बात का कि उनको वेतन के साथ आवास गृह दिया जाये या नहीं और अगर दिया जाये तो किराया लेकर या बिना किराये के, विनिश्चयन संसद करेगी क्योंकि मिनिस्टरों का जो पद है वह राजनतिक पद है जो सदन की सदभावना और विश्वास पर निर्भर करता है और मेरा ख्याल है कि श्री कामत इस बात को आसानी से समझ सकते हैं कि मिनिस्टरों को संसद के क्षेत्राधिकार से बाहर रखना ठीक नहीं होगा।

अध्यक्ष: इस पर अब में मत ले लेना चाहता हूं। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 48 के खण्ड (3) में 'the President shall have an official residence' (राष्ट्रपति के लिये पदावास रहेगा) शब्दों की जगह 'the President shall be entitled to the use of Government House without payment of

rent' (राष्ट्रपति को बिना किराया दिये गवर्नमेंट हाउस के उपयोग का हक होगा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं श्री कृष्णमाचारी के संशोधन पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 48 के खण्ड (3) में 'The President shall have an official residence' (राष्ट्रपति के लिये पदावास रहेगा) शब्दों की जगह 'The President shall be entitled without payment of rent to the use of his official residences' (राष्ट्रपति को बिना किराया दिये अपने पदावासों के उपयोग का हक होगा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मैं अपना संशोधन नं. 360 पेश करता हूं श्रीमान। वह यों है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (5क) को हटा दिया जाये।"

इसको रखने का कारण यह है जैसा कि अभी उस दिन डॉ. अम्बेडकर की ओर से मैंने यहां कहा है, कि हम अनुसूची 3-क को नहीं रखना चाहते हैं और उस अनुसूची को भी नहीं रखना चाहते हैं जिसमें राज्यपालों के लिये अनुदेश रखे गये हैं। प्रस्तुत खण्ड में यह कहा गया है: "(5a) in the choice of his ministers and in the exercise of his functions under this Constitution to the President shall be personally guided by instructions set out in schedule IIIA." (अपने मिनिस्टरों को चुनने में तथा इस संविधान के अधीन अपने प्रकार्यों के प्रयोग में राष्ट्रपति अनुसूची 3-क में दिये गये अनुदेशों पर चलेगा।) किन्तु जब यह अनुसूची 3-क अब प्रस्तावित ही नहीं की जा रही है तो इस खण्ड का रखना भी अनावश्यक है। इसीलिये मैंने इसे हटाने का संशोधन रखा है।

***श्री एच.वी. कामतः** आपको याद होगा श्रीमान कि कुछ महीना पहले आपने यह महत्वपूर्ण प्रश्न यहां उठाया था कि आया राष्ट्रपति के लिये हमेशा अपने मंत्रिपरिषद् की राय को मानना अनिवार्य होगा क्या। हमारा संविधान इस प्रश्न पर खामोश है इसमें केवल इतना ही कहा गया है कि "राष्ट्रपति को सहायता और राय देने के लिये एक मंत्रिपरिषद् होगी" उस अवसर पर डॉ. अम्बेडकर ने यह कहा था कि इस बात के स्पष्टीकरण के लिये संविधान में कहीं न कहीं एक उपबन्ध आगे चल कर हम रख देंगे। मुझे तो ऐसा ही याद आता है। अध्यक्ष

[श्री एच.वी. कामत]

महोदय कृपा कर यह बता दें कि मेरा कहना सही है या गलत? संविधान में कहीं भी इस प्रश्न का स्पष्टीकरण नहीं किया गया है। आशा है डॉ. अम्बेडकर इसे स्पष्ट कर देंगे और इसे यों ही अस्पष्ट न रह जाने देंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं चाहता यह हूं कि इसके लिये नोटिस दिया गया होता ताकि मैं आवश्यक उद्धरण यहां रख सकता। फिर भी इस पर एक सामान्य वक्तव्य तो मैं दे सकता हूं। यह प्रश्न कि आया संविधान में ऐसी कोई बात रखी गई है जिससे राष्ट्रपति के लिये मंत्रिपरिषद् की राय को मानना लाज़िमी हो, एक ऐसा प्रश्न है जो विस्तृत प्रश्न की तुलना में बहुत छोटा-सा प्रश्न है। पहले मैं विस्तृत प्रश्न के सम्बन्ध में ही चन्द बातें कहना चाहूंगा:

जहां तक कि संसदात्मक लोकतन्त्र का सम्बन्ध है, प्रत्येक संविधान में राज्य के लिये ये तीन अंग-कार्यपालिका, न्यायपालिका तथा विधान मण्डल—आवश्यक माने गये हैं किसी भी संविधान में मुझे ऐसा एक भी उपबन्ध नहीं मिला है जिसमें यह कहा गया हो कार्यपालिका विधान मण्डल के आदेश का पालन करेगी और न किसी संविधान में ऐसा ही कोई उपबन्ध मिला है कि कार्यपालिका न्यायपालिका के आदेश का पालन करेगी। किसी भी संविधान में आपको इस तरह का उपबन्ध नहीं मिलेगा। इसका कारण यह है कि यह आम तौर से एक मानी हुई बात है कि संविधान के उपबन्धों को मानना राज्य के इन तीनों अंगों के लिये लाजिमी है। इसलिये हमें यह मान लेना होगा कि जो लोग कि संविधान को कार्यान्वित करते हैं अर्थात विधानमण्डल के सदस्य तथा कार्यपालिका और न्यायपालिका के सदस्य अपने प्रकार्यों को अपने परिसीमनों को और अपने कर्तव्यों को अच्छी तरह जानते हैं। इसलिये हमें यह मानना होगा कि अगर कार्यपालिका संविधान पर ईमानदारी से अमल करती है तो उसके लिए विधान मण्डल का आदेश मानना अनिवार्य है चाहे इसके लिए संविधान में कोई आदेश मूलक उपबन्ध कार्यपालिका के लिये भले ही न रखा गया हो।

इसी तरह कार्यपालिका अगर संविधान को ईमानदारी से कार्यान्वित करती है तो उसके लिये उच्चतम न्यायालय के न्यायिक निर्णयों के अनुसार काम करना अनिवार्य है। इसलिए मेरा कहना यह है कि यह मामला राज्य के एक अंग से सम्बन्ध रखता है। यह अंग अपनी सीमाओं के अन्दर रह कर कार्य करता है और साथ ही राज्य के अन्य अंगों के प्रभुत्व को भी स्वीकार करता है। यदि संविधान में इस अंग को भी प्रभुत्व प्रदान किया गया है तो इसका यह अर्थ है कि उसका एक सांविधानिक दायित्व है। यह दायित्व संविधान में निहित है।

मुझे स्मरण है श्रीमान कि आपने यह प्रश्न उठाया था और मैंने इस पर छानबीन की थी और इंग्लैण्ड की सर्वोपरि अदालत के दो निर्णयों को रख लिया था जिन्हें सभा के सामने में किसी दिन रखना चाहता था इस प्रश्न को स्पष्ट करने के लिये। किन्तु मुझे खेद है कि इसकी सूचना मुझे नहीं थी कि आज यह प्रश्न उठाया जायेगा। अस्तु, जो प्रश्न उठाया गया है उसका यही जवाब है।

किसी भी देश में कोई सांविधानिक शासन तब तक चल नहीं सकता है जब तक कि वहां का एक सांविधानिक पदाधिकारी इस तथ्य को न याद रखे कि उसका अधिकार संविधान द्वारा परिसीमित है तथा इस तथ्य को न याद रखे कि, उसके और अन्य किसी पदाधिकारी के बीच उठने वाले किसी प्रश्न के विनिर्णयन के लिये संविधान ने अगर किसी पदाधिकारी की व्यवस्था की है तो उस पदाधिकारी के निर्णय को मानना, उसके लिए तथा राज्य के अन्य अंग के लिये लाजिमी है। यह मंजूरी संविधान ने इसलिये दी है कि राष्ट्रपति अपने मंत्रियों की राय पर अवश्य चले और कार्यपालिका अपने कार्यपालिक अधिकारों के प्रयोग में संसद निर्मित विधियों का अतिक्रमण न करे तथा कार्यपालिका विधि पर अपना कोई ऐसा निर्वचन न दें जो संविधान द्वारा प्रतिष्ठापित राज्य की न्यायपालिका के निवर्चन से प्रतिकूल हो।

***श्री एच.वी. कामतः** यदि किसी खास मामले में राष्ट्रपति अपने मंत्रिपरिषद की सलाह पर नहीं चलता है तो क्या यह संविधान का उल्लंघन समझा जायेगा और क्या इसके लिए उस पर महाभियोग लगाया जा सकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** इसमें तो रंचमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल): डॉ. अम्बेडकर के कथन में मैं इतना और जोड़ देना चाहता हूं और बता देना चाहता हूं कि कई मामलों में राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की राय नहीं भी मान सकता है। यदि मंत्रिमंडल यह चाहता हो कि उसका विघटन कर दिया जाये तो राष्ट्रपति यह कह सकता है कि उसके स्थान पर वह अन्य मंत्रिमण्डल बिठायेगा जिस पर बहुमत का विश्वास हो और शासन को चालू रख सकता है। कुछ मामलों में उत्तरदायी शासन के हित में राष्ट्रपति अपने उत्तरदायी मंत्रियों की राय की अवहेलना कर सकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** जवाब में मैं केवल एक बात कहना चाहता हूं एक समय यह स्थिति जरूर थी। मेकाले लिखित इंग्लैण्ड के इतिहास में यह साफ-साफ बता दिया गया है कि सम्राट क्या कर सकता है। किन्तु मैं यह कहना चाहता हूं कि यह प्रश्न रूढ़ि से सम्बन्ध रखता है। कनाडा में जब मिस्टर मेकेंजी किंग ने मंत्रिमण्डल का विघटन करना चाहा था तो वहां यह प्रश्न उठा था। प्रश्न यह था कि आया गवर्नर जनरल के लिये विघटन का निर्णय देना लाजिमी है या उसे इस बात की स्वतन्त्रता है कि विरोधी पक्ष के नेता को बुला कर उसे मंत्रिमंडल बनाने को कहे। गवर्नर जनरल ने ब्रिटिश शासन की राय से मिस्टर मेकेंजी किंग की राय को स्वीकार किया था और मंत्रिमंडल को भंग कर दिया था।

***श्री एच.वी. कामतः** बजाय इसके कि डॉ. अम्बेडकर के किसी प्रसंगात कथन पर हम निर्भर करें, संविधान में इसके लिए उपबन्ध क्यों न रख लें?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** इस प्रश्न पर हम इस तरह विचार नहीं कर सकते हैं।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमद:__ हमने एक बहुत ही विवादास्पद विषय उठा लिया है। यह प्रश्न कि मंत्रिमण्डल और राष्ट्रपति संसद के निश्चय को मानने के लिए बाध्य हैं या नहीं, एक बड़ा विवादास्पद प्रश्न है। इस प्रश्न पर ब्रिटिश संविधान का निर्णय क्या है, यह चर्चा वस्तुत: यहां प्रासंगिक नहीं हो सकती है। ब्रिटिश संविधान बहुत सी चिर स्थापित रूढ़ियों को लेकर बना है। लिपिबद्ध विधियों को लेकर वह नहीं बना है। वहां, सम्राट् की तथा कार्यपालिका की क्या शक्तियां हैं इसे सारा देश अच्छी तरह जानता है। किन्तु हमारा संविधान बन रहा है लिपिबद्ध विधियों को लेकर। इसलिये मेरा ख्याल तो यही है कि हमें इन प्रश्न के स्पष्टीकरण के लिए एक न एक उपबन्ध अवश्य रख देना चाहिये। अन्यथा, हो सकता है कि कभी गतिरोध उत्पन्न हो जाये। इस सम्बन्ध में ब्रिटिश पार्लियामेंट की नजीर से हमें कोई सहायता नहीं मिल सकती है। जहां तक कि कनाडा की नजीर का सम्बन्ध है वह भी रूढ़ियों पर और एक चिरकालीन मान्यता पर ही आश्रित है। किन्तु हमारे यहां इसके लिये कोई पूर्ववर्ती उदाहरण या नजीर नहीं है जिसका हम सहारा ले सकें। पर इस विषय को यहां उठाना एक गड़ी हुई बात को उठाना है और मैं नहीं समझता कि इस पर हमें यह बहस और चलानी चाहिये। पर यह जरूर है कि डॉ. अम्बेडकर की राय को हम अपने लिए लाजिमी ही नहीं मान सकते हैं।

*__श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर__ (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस बहस में दखल देने की मेरी कोई इच्छा नहीं थी पर मैं यह देख रहा हूं कि यहां उपबन्ध रखने की आवश्यकता का जो प्रश्न उठाया गया है वह सर्वथा निस्सार है। अनुच्छेद 61 (3) में हमने यह कहा है कि मंत्रिपरिषद लोक सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी। यदि कोई राष्ट्रपति इस उत्तरदायित्व की पूर्ति में मंत्रिपरिषद को रुकावट डालता है जो वह संविधान को भंग करने का अपराधी है और उस पर महाभियोग चलाया जा सकता है। यह तो किसी कठोर बात को कोमल बनाने का ढंग है जो यहां यह कहा गया है कि अपने प्रकार्यों के पालन में राष्ट्रपति अपने मंत्रियों की सलाह से चलेगा। मंत्रिपरिषद सामूहिक रूप से उत्तरदायी रहेगी लोकसभा के प्रति। बजट के बारे में, या विधि बनाने के बारे में अथवा देश के प्रशासन से सम्बन्ध रखने वाले किसी भी विषय के बारे में स्थिति के अनुसार सारा काम करना होगा वस्तुत: लोक सभा को। इसलिये, अगर मंत्रिपरिषद को अपने दायित्वों का पालन करना है तो राष्ट्रपति को इस बात का ख्याल रखना होगा कि संविधान का पालन हो। इसलिये अनुच्छेद 61 तथा 62 (3) के द्वारा यह सर्वथा स्पष्ट हो जाता है कि उत्तरदायी शासन का दायरा क्या है? अन्यथा आपको एक बड़ी सूची इस बात की रखनी होगी कि किसका क्या दायित्व है; आपको यह बताना होगा कि संसद का विघटन अगर किया जाता है तो इसकी जिम्मेदारी होगी प्रधान मन्त्री पर; आप को यह भी बताना होगा कि ऐसे मौकों पर राष्ट्रपति को क्या क्या रायें माननी होंगी। कहने का मतलब यह है कि बहुत सी विस्तार की बातों का आपको उल्लेख देना होगा। आयरलैंड में कुछ ऐसा ही प्रयास किया गया था क्योंकि उन दिनों सम्राट के प्रति वहां अविश्वास भाव था। आयरलैंड का जो संविधान शुरू में बना था उसमें कुछ उपबन्ध रखे गये थे जिनमें इन सब विस्तार की बातों का उल्लेख था कि किसका क्या दायित्व होगा। यदि आप कनाडा, आस्ट्रेलिया या अन्य किसी देश के संविधान को देखें, जिसमें उत्तरदायी शासन की व्यवस्था रखी गई है या नाममात्र के भी उत्तरदायी शासन की व्यवस्था रखी गई

है तो आपको मालूम होगा कि कहीं भी इसके लिए विस्तृत उपबन्ध नहीं रखे गये हैं। जर्मनी के संविधान विशारदों ने जिन्होंने वहां का संविधान तैयार किया था, इसके बारे में कुछ परिभाषायें रखने का प्रयास किया था जिसके फलस्वरूप वह संविधान ही असफल हो गया जैसा कि हम सभी जानते हैं कि ज्यों ही वहां राष्ट्रपति तथा मंत्रियों के अधिकारों के बीच संघर्ष पैदा हुआ था उससे जर्मन संसद का ही खात्मा हो गया था। इसलिए, इन बातों को देखते हुए, मैं तो साहसपूर्वक यही कहूंगा कि संविधान के किसी अनुच्छेद में हमें विस्तारपूर्वक इन बातों को रखने की जरूरत नहीं है कि उत्तरदायी शासन की क्या-क्या जिम्मेदारियां होंगी और क्या प्रकार्य होंगे।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ अध्यक्ष महोदय, हमने एक ऐसा संविधान बनाया है जिसमें छोटे से छोटे विस्तार की बात के लिए उपबन्ध रख दिया है। हमारा संविधान इंग्लैण्ड के संविधान से भिन्न है, इस ख्याल से कि इंग्लैण्ड का संविधान आधृत है रूढ़ियों पर और अपना संविधान बना है लिपिबद्ध बातों को लेकर। इस तरह के महत्वपूर्ण मसले के बारे में संविधान में हमने कहीं भी यह नहीं कहा है कि राष्ट्रपति के लिये यह अनिवार्य होगा कि बहुमत प्राप्त दल के नेता को बुलाकर मंत्रिमंडल बनाने को कहे और न हमने यही कहा है कि मंत्रिपरिषद की राय मानना राष्ट्रपति के लिये आवश्यक होगा। वह अनुसूची जिसमें अनुदेशों का उल्लेख करना था वह भी अब हटा दी गई है। डॉ. अम्बेडकर ने हमें अभी यह समझाया है कि अन्य देशों में इस सम्बन्ध में रूढ़ियों के आधार पर काम होता है। अब यहां अनुसूची 4 पर विचार किया जा रहा था तो मैंने यह उम्मीद की थी कि इन बातों के लिए संविधान में कुछ न कुछ उपबन्ध जरूर रखे जायेंगे। दरअसल खुद डॉ. अम्बेडकर ने एक बार मुझसे यह कहा था कि हमें इन सब विस्तार की बातों के लिए संविधान में उपबंध जरूर रखना चाहिये क्योंकि लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था की दिशा में हम एक बहुत बड़ा प्रयोग शुरू करने जा रहे हैं। जब हम संविधान में छोटी-छोटी विस्तार की बातों के लिए उपबन्ध रख रहे हैं तो मैं यह महसूस करता हूं कि इन बुनियादी बातों को कि राष्ट्रपति के लिये यह लाजिमी होगा कि बहुमत प्राप्त दल के नेता को बुलाकर मंत्रिमण्डल बनाने को कहे तथा यह कि मंत्रिपरिषद की राय मानना उसके लिये जरूरी होगा, हमें संविधान में किसी न किसी रूप में अवश्य रख देना चाहिये।

*__अध्यक्ष:__ मेरा ख्याल है कि इस पर काफी बहस हो चुकी है। श्री कृष्णमाचारी। आप कुछ कहना चाहते हैं क्या?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ नहीं श्रीमान। डॉ. अम्बेडकर सारी बातों का जवाब दे चुके हैं।

*__श्री एच.वी. कामत:__ बहस के सम्बन्ध में आपकी अपनी प्रतिक्रिया क्या है? यह सवाल शुरू में उठाया था आपने ही।

*__अध्यक्ष:__ इसमें मेरी प्रतिक्रिया से कोई वास्ता नहीं है। इसका निश्चय करना है सभा को।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** इस प्रश्न पर फिर से विचार करने की अनुमति मिलनी चाहिये।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** यह संशोधन तो बिल्कुल आनुषंगिक है।

***अध्यक्षः** इस संशोधन पर मुझे मत लेना चाहिये। बस, यही मेरी प्रतिक्रिया है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (5-क) को हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं श्रीमानः "कि अनुच्छेद 67 का खण्ड (6) हटा दिया जाये।"

यह एक बड़ा ही महत्वपूर्ण खण्ड है, सुतरां माननीय मित्र श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने जिस सजगता के साथ मेरे संशोधन को निराकृत करने के लिये अपना संशोधन भेजा है उसे मैं समझ रहा हूं। किन्तु मैं सभा को यह अविलम्ब बता देना चाहता हूं कि इस महत्वपूर्ण खण्ड को, जिसमें वयस्क मताधिकार के आधार पर लोक सभा के निर्वाचन की व्यवस्था की गई है, हम यों ही बिना सोचे समझे हटाने का संशोधन नहीं रख रहे हैं। इस सम्बन्ध में सभा का ध्यान मैं आकृष्ट करूंगा 289-ख की ओर जिसमें यह कहा गया है:–

"The elections to the House of the People and to the Legislative Assembly of every State shall be on the basis of adult franchise; that is to say, every citizen, who is not less than twenty-one years of age on such date as may be fixed in this behalf by or under any law made by the appropriate Legislature and is not otherwise disqualified under this Constitution or any law made by the appropriate Legislature on the ground of non-residence, unsoundness of mind, crime or corrupt or illegal practice, shall be entitled, to be registered as a voter at any such election."

[326—लोक सभा तथा प्रत्येक राज्य की विधान सभा के लिये निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होंगे अपितु प्रत्येक व्यक्ति जो भारत का नागरिक है तथा जो ऐसी तारीख पर, जैसी कि समुचित विधान मण्डल द्वारा नियमित किसी विधि के द्वारा या अधीन इसलिये नियत की गई हो, इक्कीस वर्ष की अवस्था से कम नहीं है, तथा इस संविधान अथवा समुचित विधान मण्डल द्वारा

निर्मित किसी विधि के अधीन अनिवास, चित्त-विकृति, अपराध अथवा भ्रष्ट या अवैध आचार के आधार पर अनर्ह नहीं कर दिया जाता है, ऐसे किसी निर्वाचन में मतदाता के रूप में पंजीबद्ध होने का हकदार होगा।]

अनुच्छेद 67 के खण्ड (6) का समूचा सार भाग अनुच्छेद 289-ख में आ गया है और मसौदा समिति ने मतदाताओं की अनर्हता को रखने के लिये इसी स्थल को उपयुक्त समझा है। इसलिये अब अनुच्छेद 67 के खण्ड (3) को रखने की कोई जरूरत नहीं रह गई है। यही कारण है जो मैंने यह संशोधन रखा है।

(प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना ने अपना संशोधन नहीं पेश किया)

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 67 का खण्ड (3) हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमानः

"कि 67 के खण्ड (7) के स्थान पर यह खण्ड रखा जाये।

'The representation in the House of the People of the territories comprised within the territory of India but not included within any State shall be such as Parliament may by law provide.' "

[भारत राज्य-क्षेत्र में समाविष्ट किन्तु किसी राज्य के अन्तर्गत न होने वाले राज्य क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व लोक सभा में वैसा होगा जैसा कि संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे।]

मूल खण्ड (7) का पाठ यह था:

"Parliament may, by law, provide for the representation in the House of the People of territories other than States."

[संसद, विधि द्वारा राज्यों के अतिरिक्त अन्य प्रदेशों के, लोक सभा में प्रतिनिधित्व का उपबन्ध कर सकेगी।]

सभा को स्मरण होगा कि अभी कल हमने नया अनुच्छेद 67-क पास किया है जो कमोवेश अधिकार देने वाला अनुच्छेद है। इससे खण्ड (7) जैसे खण्ड को रखने की आवश्यकता समाप्त नहीं हो जाती है। सोचा यह है कि इस खण्ड को विशद् बनाकर इस रूप में रखने की जरूरत है जैसाकि संशोधन में सुझाया गया है।

***अध्यक्षः** इस पर कोई संशोधन नहीं है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 67 के खण्ड (7) के स्थान पर यह खण्ड रखा जाये:–

'(7) The representation in the House of the People of the territories comprised within the territory of India but not included within any State shall be such as Parliament may by law provide.' "

[भारत राज्य क्षेत्र में समाविष्ट किन्तु किसी राज्य के अन्तर्गत न होने वाले राज्य-क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व लोक सभा में वैसा होगा जैसा कि संसद विधि द्वारा उपबन्धित करे।]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं:

"कि अनुच्छेद 109 के परन्तुक के स्थान पर यह परन्तुक रखा जाये:–

'Provided that the said jurisdiction shall not extend to—

(i) a dispute to which a State for the time being specified in Part III of the First Schedule is a party, if the dispute arises out of any provision of a treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument which was entered into or executed before the date of commencement of this Constitution and has, or has been, continued in operation after that date;

(ii) a dispute to which any State is a party, if the dispute arises out of any provision of a treaty, agreement, covenant. engagement, *sanad*, or other similar instrument, which provides that the said jurisdiction shall not extend to such dispute.' "

[परन्तु उक्त क्षेत्राधिकार का विस्तार उस विवाद पर न होगा जिसमें:–

(1) प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित कोई राज्य एक पक्ष है, यदि वह विवाद किसी ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबन्ध, सनद या अन्य तत्सम लिखित के, जो इस संविधान के प्रारम्भ से पहले की गई या निष्पादित थी तथा ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रवर्तन में है या रख ली गई है, किसी उपबन्ध से पैदा हुआ है।

(2) कोई राज्य एक पक्ष है, यदि वह विवाद किसी ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा वचनबंध, सनद या अन्य तत्सम लिखित के, जो उपबन्ध करती है कि वैसा क्षेत्राधिकार ऐसे विवाद पर विस्तृत न होगा, किसी उपबन्ध से पैदा हुआ है।]

इस सम्बन्ध में सदस्यों से मैं इस बात का अनुरोध करूंगा कि, इस अनुच्छेद के पास किये जाने के पहले, संविधान के प्रारूप में यह अनुच्छेद जिस रूप में रखा गया था उसकी ओर वह दृष्टिपात करें। वह यह देखेंगे कि प्रारूप में ये परन्तुक ठीक इसी रूप में रखे गये हैं। किन्तु प्रारूप के अनुच्छेद 109 को जब हमने यहां पेश किया था उस समय महसूस यह किया था कि जिस परिस्थिति में हम हैं उसमें शायद हम सभा से यह अनुरोध नहीं कर सकते हैं कि इस परन्तुक (1) के आशय के किसी परन्तुक को वह स्वीकार करे। इसलिये सभा द्वारा उस समय स्वीकृत किये अनुच्छेद 109 में ऐसा परन्तुक नहीं है जिससे भाग 3 वाले राज्यों की बात आ जाती हो और उसमें केवल परन्तुक (2) को उस समय सभा ने रखा था। किन्तु अब परिस्थिति बदल गई है और हम यह आवश्यक समझ रहे हैं कि मूल मसौदे के परन्तुक (1) के आशय का एक परन्तुक हमें इस अनुच्छेद में रखना चाहिये और इसीलिये यह संशोधन मैंने रखा है। आशा है सभा इसे स्वीकार करेगी।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 109 के परन्तुक के स्थान पर यह परन्तुक रखा जाये:

'Provided that the said jurisdiction shall not extend to—

(i) a dispute to which a State for the time being specified in Part III of the First Schedule is a party, if the dispute arises out of any provision of a treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument which was entered into or executed before the date of commencement of this Constitution and has, or has been, continued in operation after that date;

(ii) a dispute to which any State is a party, if the dispute arises out of any provision of a treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad,* or ohher similar instrument which provides that the said jurisdiction shall not extend to such dispute.' "

[परन्तु उक्त क्षेत्राधिकार का विस्तार उस विवाद पर न होगा जिसमें:—

(1) अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित कोई राज्य एक पक्ष है, यदि वह विवाद किसी ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबंध, सनद या अन्य तत्सम लिखित के, जो इस संविधान के प्रारम्भ से पहले की गई या

[अध्यक्ष]

निष्पादित थी तथा ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रवर्तन में है या रख ली गई है, किसी उपबन्ध से पैदा हुआ है।

(2) कोई राज्य एक पक्ष है, यदि वह विवाद, किसी ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबंध, सनद या अन्य तत्सम लिखित के, जो उपबंध करती है कि वैसा क्षेत्राधिकार ऐसे विवाद पर विस्तृत न होगा, उपबन्ध से पैदा हुआ है।]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 112

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं आपसे यह अनुरोध करना चाहता हूं कि इस अनुच्छेद पर विचार अभी कल तक स्थगित रखा जाये। कई सदस्यों ने ऐसा आवेदन किया है कि इस अनुच्छेद की वह कुछ और छानबीन करना चाहते हैं। यदि इतना समय देने में असुविधा होती हो तो कृपा कर कल तक के लिये इसे अवश्य रोक लीजिये।

***अध्यक्ष:** तो इस पर विचार अभी रुका रहता है। अब हम लेंगे संशोधन नं. 365 को जो अनुच्छेद 119 पर आया है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** संशोधन नं. 365 को उपस्थित करते हुए मैं आपसे इस बात की अनुमति चाहता हूं कि इसमें अपने संशोधन नं. 388 को भी शामिल कर लूं जिसको मैंने आज भेजा है। मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान:–

"कि अनुच्छेद 119 के संख्याक्रम को बदल कर अनुच्छेद 119 के खण्ड (1) के रूप में रखा जाये और उसके साथ यह खण्ड और जोड़ दिया जाये:

'(2) The President may notwithstanding anything contained in clause (i) of the proviso to article 109 of this Constitution, refer a dispute of the kind mentioned in the said clause to the Supreme Court for opinion and the Supreme Court may, after such hearing as it thinks fit, report to the President its opinion thereon.' "

[(2) राष्ट्रपति, इस संविधान के अनुच्छेद 109 के परन्तुक के खण्ड (1) में किसी बात के होते हुये भी, उक्त खण्ड में वर्णित प्रकार के विवाद को उच्चतम न्यायालय को राय देने के लिये सौंप सकेगा तथा उच्चतम न्यायालय, ऐसी कार्रवाई के पश्चात् जैसी कि वह उचित समझे, राष्ट्रपति को उस पर अपनी राय प्रतिवेदित करेगा।]

यह खण्ड भी संविधान के प्रारूप में जो अनुच्छेद 119 रखा गया है उसका ही अंश है। मूल अनुच्छेद 119 की सारी बातें प्रायः यहां शब्दशः रखी गई हैं सिवाय इसके कि उसके अन्तिम तीन पंक्तियों में जरा सा अदल बदल कहीं कहीं कर दिया गया है। अनुछेद 119 को जिस रूप में सभा ने पास किया है उसमें यह खंड नहीं रखा गया है पर अब हम ऐसा महसूस कर रहे हैं कि यह खण्ड अब फिर इस अनुच्छेद में आ जाना चाहिये। इसको किस अभिप्राय से रखा जा रहा है यह बात स्वतः स्पष्ट है। इसके द्वारा अधिकार दिया जा रहा है राष्ट्रपति को इस बात का कि वह ऐसे मामले को, जैसाकि संशोधन में वर्णित है, उच्चतम न्यायालय को उसकी राय के लिये सौंप सकता है और उच्चतम न्यायालय उस पर अपनी राय राष्ट्रपति को प्रतिवेदित कर सकता है। वर्तमान अनुच्छेद 119 में और इस प्रस्तावित अनुच्छेद 119 में बड़ा महत्वपूर्ण अन्तर आ जाता है इस उपबन्ध से। इस अनुच्छेद को पहले जब पास किया गया था तब से बहुत सी और बातें जोड़ दी गई हैं जिससे संविधान का दायरा बहुत विस्तृत हो गया है। इस दायरे के विस्तृत होने से जो परिस्थिति अब पैदा हो गई है उसमें इस उपबन्ध का रखना जरूरी हो गया है।

*अध्यक्षः प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 119 के संख्या क्रम को बदल कर अनुच्छेद 119 के खण्ड (1) के रूप में रखा जाये और उसके साथ यह खण्ड और जोड़ दिया जाये:

'(2) The President may, notwithstanding anything contained in clause (1) of the proviso to article 109 of this this Constitution, refer a dispute of the kind mentioned in the said clause to the Supreme Court for opinion and the Supreme Court may, after such hearing as it thinks fit, report to the President its opinion thereon.' "

[(2) राष्ट्रपति, इस संविधान के अनुच्छेद 109 के परन्तुक के खण्ड (1) में किसी बात के होते हुए भी, उक्त खण्ड में वर्णित प्रकार के विवाद को उच्चतम न्यायालय को राय देने को सौंप सकेगा, तथा उच्चतम न्यायालय, ऐसी कार्रवाई के पश्चात् जैसी कि वह उचित समझे, राष्ट्रपति को उस पर अपनी राय प्रतिवेदित करेगा।]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं—

"कि अनुच्छेद 135 के खण्ड (3) में 'shall have an official residence' (पदावास रहेगा) शब्दों की जगह 'shall be entitled without payment of rent to

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

the use of his official residence' (बिना किराया दिये अपने पदावासों के उपयोग का हक होगा) शब्द रखे जायें।"

यह अनुच्छेद राज्यपाल के सम्बन्ध में है। राष्ट्रपति से सम्बन्ध रखने वाले अनुच्छेद 49 में इस सम्बन्ध में जो संशोधन रखा गया था उसे सभा ने स्वीकार किया है।

श्री एच.वी. कामतः मेरी तुच्छ राय में तो यहां एक विषमता रह गई है। केन्द्र के सम्बन्ध में तो हमने राष्ट्रपति और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को—दोनों को—ही बिना किराये का आवास गृह का उपबंध किया है। फिर यहां भी क्यों न राज्यपाल और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों—दोनों के लिये बिना किराये के आवासगृह का उपबन्ध करें? कवल राज्यपाल के लिये क्यों ऐसा किया जाये?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** किसी भी प्रस्ताव को निरर्थक बनाने के लिये तर्क का इस प्रकार उपयोग नहीं किया जाता है।

***अध्यक्षः** यह सवाल यहां नहीं उठता है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 135 के खण्ड (3) में 'shall have an official residence' (पदावास रहेगा) शब्दों की जगह 'shall be entitled without payment of rent to the use of his official residences' (बिना किराया दिये अपने पदावासों के उपयोग का हक होगा) शब्द रखे जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं—

"कि अनुच्छेद 135 के खण्ड (3) में 'Legislature of the State' (राज्य के विधान मण्डल) शब्दों की जगह 'Parliament' (संसद) शब्द रखा जाये।"

अब राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा। इसलिये यह महसूस किया आ रहा है कि यह ठीक नहीं होगा कि राज्यपाल के उपलब्धियों के विनिश्चयन का प्रश्न राज्य के विधान मण्डल को सौंपा जाये। शुरू में ऐसा किया गया था इसलिये कि हमने सोचा यह था कि राज्यपाल का निर्वाचन किया जाये। यह संशोधन और पहले ही आ जाना चाहिये था पर हमने यह देखा कि अब यह अन्तिम मौके पर ही रखा जा सकता है। इसीलिये अब मैं यह संशोधन रख रहा हूं ताकि राज्यपाल की उपलब्धियों का विनिश्चयन संसद विधि द्वारा करे।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** मुझे खुशी है कि यह परिवर्तन यहां किया जा रहा है। केवल यह जानना चाहता हूं कि राज्यपाल का वेतन कहां से दिया जायेगा, केन्द्रीय कोष से या प्रान्तीय कोष से?

*अध्यक्षः यह प्रान्तीय राजस्व पर प्रभारित होगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 135 के खण्ड (3) में 'Legislature of the State' (राज्य का विधानमण्डल) शब्दों की जगह 'Parliament' (संसद) शब्द रखा जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

---

*श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान:

"कि अनुच्छेद 144 का खण्ड (4) निकाल दिया जाये।"

यह खण्ड (4) उसी तरह का है जैसा कि अनुच्छेद 62 (5-क) जिसे हम हटा चुके हैं। इसे हटाने का कारण यह है कि सभा यह फैसला कर चुकी है कि संविधान में अनुसूची 4 नहीं रहनी चाहिये और यह खण्ड इस बात पर ही आधृत है कि अनुसूची 4 संविधान में रहे। सुतरां अब इसको रखने की आवश्यकता नहीं है।

*अध्यक्षः प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 144 का खण्ड (4) हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

---

*श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान:

"कि अनुच्छेद 149 का खण्ड (2) हटा दिया जाये।"

अनुच्छेद 149 का खण्ड (2) प्रायः वैसा ही है जैसा कि पूर्ववर्ती अनुच्छेद जिसे सभा लोक सभा के बारे में पास कर चुकी है। इस खण्ड में वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचन का उपबंध किया गया है और अब हम इसे दूसरे स्थल पर रख रहे हैं। संसद तथा राज्यों के विधान-मण्डलों के चुनाव के सम्बन्ध में सारी व्यवस्था अनुच्छेद 289-ख में रख दी गई है। इसलिये अब इस खण्ड की जरुरत नहीं रह गई है।

*प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः मैं अपना टाइप किया हुआ संशोधन नहीं उपस्थित कर रहा हूं। यह संशोधन यों है:-

"कि संशोधन सूची 4 (द्वितीय सप्ताह) का संशोधन नं. 369 हटा दिया जाये।"

*श्री नजीरुद्दीन अहमदः कुछ सदस्य, जिनमें मैं भी हूं, यह समझने में असमर्थ हैं कि आखिर क्यों यहां लोग अपने विचार बदल दिया करते हैं। जब अनुच्छेद 149 (2) यहां मौजूद था तो हमें अनुच्छेद 289-ख को नहीं पास करना चाहिये था। इनमें से एक अनुच्छेद को हटाने का ही संशोधन हमें तुरन्त पास कर लेना

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

था। जहां तक वर्तमान संशोधनों का सम्बन्ध है, यह आज ही सदस्यों के पास भेजे गये हैं। सदस्यों को इन पर विचार करने का अभी मौका भी नहीं मिल पाया है। इस तरह से जल्दबाजी में संशोधनों को रखने का परिणाम यह हो सकता है कि जगह-जगह असंगतियां आ जायेंगी जिनको हमें पुनः ठीक करना होगा। इन संशोधनों को समझना मुश्किल है और जिस तरह असंगति और द्वित्व के आधार पर अपने पूर्व स्वीकृत बातों के बारे में हम संशोधन कर रहे हैं उससे यह आशंका होती है कहीं इनको बिना विचारे ही न हम पास कर बैठें।

***अध्यक्षः** मेरा ख्याल है कि यह सभी अनुच्छेद पहले अलग एक दूसरे भाग में रखे गये थे जो निर्वाचन के बारे में था। पर अब आवश्यक यह समझा गया है कि निर्वाचन से सम्बन्ध रखने वाले इन सभी अनुच्छेदों को उठाकर इस स्थल पर रख दिया जाये।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** जब संशोधनों को पास किया गया था उस समय यह बात क्यों नहीं सोची गई?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष ने जो समझाया वह बिल्कुल ठीक है। पर असल में इन सभी बातों को हम एक अध्याय में रखना चाहते थे और जिस समय यह अध्याय रखा गया और पास किया गया था उस समय हमने इस अनुच्छेद को उठाने का संशोधन इसलिये नहीं पेश किया था कि सोचा यह गया कि द्वितीय पठन के समय जब इन पर बहस खत्म होगी उस समय ऐसा कर दिया जायेगा। हमने यह अनुभव किया कि और भी तरह-तरह की बातें यहां उठायी जायेंगी और इन सबके लिये एक संशोधन अन्त में रख दिया जायेगा। यही कारण है जो जब यह संशोधन आपके सामने रखा गया है।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 149 का खण्ड (2) हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं श्रीमानः

"कि अनुच्छेद 149 के खण्ड (4) में 'Legislature of the State' (राज्य का विधान-मण्डल) शब्दों की जगह 'Parliament' (संसद) शब्द रखा जाये।"

इस संशोधन को रखने का कारण यह है कि इस अनुच्छेद के खण्ड (2) के अधीन जो शक्ति राज्य के विधान मण्डल को प्राप्त है वह अब अनुच्छेद 289-ख के द्वारा संसद को दे दी गई है। मुझे विश्वास है कि माननीय मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद हमें इस बात के लिये दोषी न बतायेंगे कि उस समय हमने इन शब्दों की जगह 'संसद' शब्द रखने का संशोधन रख कर क्यों नहीं इस खण्ड को हटाने

का प्रस्ताव किया। हमने ऐसा नहीं किया क्योंकि हमने यह अनुभव किया कि बाद में चल कर हम यह सब ठीक तरह से कर सकेंगे और इसीलिये तब इसे छोड़ दिया था। यह बात नहीं है कि हम यह नहीं जानते थे कि हम जो कर रहे हैं वह अनुच्छेद 149 के खण्ड (4) के प्रतिकूल है।

***श्री एच.वी. कामतः** मसौदा समिति ने इसमें एक छोटी सी शाब्दिक भूल कर दी है। होना यह चाहिये कि "Legislature of a State" शब्दों की जगह "Parliament" शब्द रखा जाये। अगर यह संशोधन इसी रूप में स्वीकृत होता है तो खण्ड का रूप यह होगा:–

"With effect from such date as the Parliament may by law determine."

यहां 'Parliament' के आगे 'the' का प्रयोग गलत है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** माननीय मित्र का मैं बहुत ही अनुगृहीत हूं कि इन्होंने इस त्रुटि की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया। संशोधन को इस रूप में पढ़िये कि 'Legislature of a State' की जगह 'Parliament' शब्द रखा जाये।

माननीय मित्र का इसके लिये मैं अतिशय ही कृतज्ञ हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** क्यों न मान लीजिए कि आपके संशोधन पर मैंने यह संशोधन रखा है?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** यह एक बड़ा ही महत्वपूर्ण संशोधन है। इसमें कहा यह गया है:

" 'Upon the completion of each census, the representation of the several territorial constituencies in the Legislative Assembly of each State shall subject to the provisions of article 289 of this Constitution, be, readjusted by such authority, in such manner and with effect from such date as the Legislature of the State may by law determine...'

(प्रत्येक जनगणना की समाप्ति पर, प्रत्येक राज्य की विधान-सभा में विविध प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधान, इस संविधान के अनुच्छेद 289 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए ऐसे प्राधिकारी द्वारा, ऐसी रीति से और ऐसी तिथि से प्रभावी होने के लिये पुनर्व्यवस्थापित किया जायेगा जैसा कि उस राज्य का विधान-मण्डल विधि द्वारा निश्चय करे।)"

इसको रखने का अभिप्राय यह था कि नई जनगणना की समाप्ति पर और निर्वाचन क्षेत्रों के बन जाने पर प्रतिनिधित्व की व्यवस्था राज्य का विधान मण्डल करेगा। अब यह अधिकार संसद को दे दिया जा रहा है। संसद को यह अधिकार दिया जा रहा है। इसको तो मैं बहुत पसन्द करता हूं क्योंकि संसद की व्यवस्था

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

में एकरूपता रहेगी। पर मैं जानना यह चाहता हूं कि यह काम सम्पादित किस तरह किया जायेगा। हो सकता है कि प्रान्तों की आबादी और बढ़ जाये। अत: प्रश्न यह है कि निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन कैसे किया जायेगा। अवश्य ही प्रान्त यह तो चाहेंगे ही कि इस सम्बन्ध में कोई भी व्यवस्था की जाये इसके पहले उनको अपनी बात कहने का मौका दिया जाये और उसकी सुनवाई हो इसलिये कुछ न कुछ व्यवस्था इस बात के लिये होनी चाहिये कि संसद को इस बारे में कोई निर्णय करने से पहले, यह मालूम हो जाये कि सम्बन्धित राज्य के विधान-मण्डल की राय क्या है। आप मेरे ही प्रान्त को लीजिये। वहां की आबादी 6 करोड़ है और जगहें रखी गई हैं 500। अब मान लीजिये कि वहां की आबादी बढ़ जाती है। उस हालत में वहां निर्वाचन क्षेत्रों में पुन: परिवर्तन करना होगा। या ऐसे किसी प्रान्त को लीजिये जहां आबादी अभी कम है पर आगे चल कर बढ़ जाती है। ऐसे प्रान्त क्या अपने निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या में आबादी के हिसाब से वृद्धि कर सकेंगे? हमें इस बात का उपबन्ध करना ही होगा कि संसद कोई निर्णय करे इसके पहले राज्य के विधान-मण्डल को इस बारे में अपनी बात कहने का मौका जरूर दिया जायेगा।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के कथन के उत्तर में मैं केवल एक शब्द कहना चाहता हूं। पूर्वगामी एक संशोधन पर मैंने जो बात कही थी उसके जवाब में आप यह फरमाते हैं कि मैं हमेशा उनकी गलती ढूंढा करता हूं। वस्तुत: मैं उनका छिद्रान्वेषण नहीं कर रहा था बल्कि अपनी कठिनाई समझा रहा था। मेरी तरह सभा के अन्य कई सदस्यों को भी यही कठिनाई है। वस्तुत: श्री कृष्णमाचारी ही सदस्यों की गलती ढूंढा करते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अगर माननीय मित्र को मेरे कारण कुछ भी असुविधा हुई है तो इसके लिए मैं अवश्य उनसे क्षमा चाहूंगा। जहां तक कि माननीय प्रो. शिब्बललाल सक्सेना की बात का सम्बन्ध है मैं उनसे यह कहूंगा कि वह अनुच्छेद 290 को फिर पढ़ें। जहां तक इस बात का सम्बन्ध है कि राज्य के विधान-मण्डलों की राय संसद को मालूम होनी चाहिये, इरादा यही किया गया था कि इसके लिये एक न एक व्यवस्था रखी जायेगी। किन्तु अभी इस समय, अनुच्छेद 290 तथा अनुच्छेद 149 के खण्ड (4) में जो कुछ कहा गया है, उससे अधिक हम कुछ नहीं कह सकते हैं।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 149 के खण्ड (4) में 'the Legislature of a State' शब्दों की जगह 'Parliament' शब्द रखा जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं आपसे यह अनुरोध करना चाहता हूं श्रीमान कि संशोधन नं. 371 को अभी रोके रखिये क्योंकि यह भी संशोधन नं. 364 के समान

है जिसके सम्बन्ध में मेरा अनुरोध स्वीकार करके आपने कल तक स्थगित रखने की कृपा की है। अब मैं यह संशोधन रखता हूं:

"कि अनुच्छेद 230 में, अन्त में यह शब्द जोड़ दिये जायें:—

'or any decision made at any international conference, association or other body.'

[या किसी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, संस्था या अन्य निकाय द्वारा किये गये किसी विनिश्चयन के]"

मेरा ख्याल है कि माननीय मित्र श्री कामत इस संशोधन को अवश्य पसन्द करेंगे खास करके इस बात को देखते हुए कि अनुसूची 7 की सूची 1 की एतत्सम्बन्धी प्रविष्टियों के उपबंध को और विस्तृत करने पर आपका प्रबल आग्रह था। इस संशोधन के स्वीकृत होने पर इस अनुच्छेद का रूप यह होगा:–

" 'Notwithstanding anything in the foregoing provisions of this Chapter, Parliament has power to make any law for any State or part thereof for implementing any treaty, agreement or convention with any other country or countries or any decision made at any international conference, association or other body.'

[इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी संसद को किसी अन्य देश या देशों के साथ की हुई किसी संधि, करार या अभिसमय अथवा किसी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, संस्था या अन्य निकाय में किये गये किसी विनिश्चय के परिपालन के लिये किसी राज्य या उसके किसी भाग के लिए कोई विधि बनाने की शक्ति है।]"

मेरा ख्याल है कि इस संशोधन से अनुच्छेद सर्वथा पूर्ण हो जायेगा और उन सभी आवश्यकताओं की इससे पूर्ति हो जायेगी जिनके लिये संसद को, ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों को या अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के निर्णयों को जिनमें कि भारत भी एक पक्ष होगा कानून बनाने की जरूरत पड़ सकती है।

***श्री एच.वी. कामतः** माननीय मित्र श्री कृष्णमाचारी के कथन से मैं सर्वथा सन्तुष्ट हूं।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 230 में अन्त में यह जोड़ दिया जाये:–

'or any decision made at any international conference, association or other body' (या किसी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, संस्था या अन्य निकाय द्वारा किये गये किसी विनिश्चय के)"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** संशोधन नं. 373 के बारे में मैं आपसे इसे कल तक रोकने की अनुमति चाहूंगा, श्रीमान।

***श्री आर.के. सिधवा:** यह तो मैं समझ सकता हूं कि कुछ समय बाद कोई किसी संशोधन के बारे में अपना विचार बदल दे, किन्तु यह संशोधन तो अभी कल ही सभा के सामने रखा गया है और इतनी जल्दी माननीय मित्र ने इस बारे में अपना विचार बदल दिया है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** तो मैं इसे अभी उपस्थित किये देता हूं श्रीमान।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान। यह एक बड़ा ही महत्वपूर्ण खण्ड माना गया है और आज सवेरे ही हम लोगों को यह मिला है। इस सभा में योगदान देने के अलावा भी तो और भी कई बातें हमें देखनी पड़ती हैं। इन संशोधनों पर विचार करने के लिये हमें कुछ समय चाहिये। हम अभी एकाएक इस पर कोई विचार तो दे सकते हैं।

***अध्यक्ष:** अच्छी बात है, संशोधन कल तक रुका रहेगा।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान:–

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का उपखण्ड (ग) हटा दिया जाये।"

अनुच्छेद 303 को पेश करने से पहले मैं अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) (ख) में, जो रोक रखा गया है, एक बात पेश करने की अनुमति चाहता हूं। अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के मद (ख) और (ग) उस दिन रोक रखे गये थे और मेरा संशोधन नं. 375 के मद (ग) को हटाने की अनुमति चाहता है। मद (ख) को हमें पेश करना ही होगा और अगर आपकी अनुमति हो तो मैं इसे पेश करूं। इस पर कोई संशोधन नहीं आया है। यह ऐंग्लो इंडियनों को परिभाषा के बारे में में है। मैं यह प्रस्ताव रखता हूं:—

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का मद (ख) उस रूप में रखा जाये जिसमें कि प्रारम्भ में संविधान के प्रारूप में इसे रखा गया था।"

***श्री एच.वी. कामत:** उन लोगों के बारे में क्या होगा श्रीमान जिनके जनक पिता पक्ष में आस्ट्रेलियन या अमेरिकन वंश के हैं? 'ऐंग्लो' का मतलब है केवल इंग्लैंड से न कि यूरोप से। इसका मसौदा कुछ ठीक नहीं बन पाया है। उनका क्या होगा जो अमेरिकन, आस्ट्रेलियन या कैनाडियन वंश के होंगे। मैं नहीं समझ पाता हूं कि इस कठिनाई का हम कैसे हल करेंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यह परिभाषा दी गई है भारत शासन अधिनियम में। हमने तो उसे वहां से ही लिया है।

***श्री एच.वी. कामत:** भारत शासन अधिनियम में अगर कोई गलती है तो क्या हम उसे ठीक नहीं कर सकते हैं?

*__माननीय श्री के. सन्तानम्:__ "यूरोपीय वंश का" शब्दों के अन्दर अमेरिकन और आस्ट्रेलियन वंश के लोग भी आ जायेंगे।

*__श्री एच.वी. कामतः__ आप इस मसौदे से सन्तुष्ट हैं क्या श्रीमान। मुझे तो आश्चर्य है।

*__अध्यक्षः__ व्यक्तिगत रूप से मेरे सामने कोई प्रश्न न रखिये। जो भी सभा स्वीकार करती है उससे मैं सन्तुष्ट हूं। अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का मद (ख) 16 सितम्बर को स्थगित रखा गया था और........

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः__ इसका स्मरण तो हमें तब हुआ जब माननीय सदस्य ने अपना फिर से बनाया मसौदा पढ़कर सुनाया है। कार्यक्रम में यह नहीं दिया गया है। इससे यही जाहिर होता है कि कितनी लापरवाही यहां की जाती है।

*__अध्यक्षः__ अनुच्छेद 303 कार्यक्रम में है और इसमें किसी बात को सुधारने या हटाने का कोई संशोधन नहीं आ रहा है। ऐसी हालत में मैं नहीं समझता कि इसको और रोके रखने में कोई लाभ है। संशोधनों की जो दूसरी छपी हुई सूची है उसको मैंने देख लिया है। उसमें कोई भी संशोधन इस पर नहीं है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का उपखण्ड (ख), जिस रूप में कि संविधान के प्रारूप में वह शुरू में रखा गया है, स्वीकार किया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

---

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमानः

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का उपखण्ड (ग) हटा दिया जाये।"

यह भारतीय इसाइयों के बारे में है और अपने संविधान में 'भारतीय इसाई' कह कर कोई उल्लेख नहीं आया है क्योंकि शुरू में जो अधिकार उनको दिये गये थे उनका अब प्रस्तावित संशोधनों द्वारा निरसन कर दिया गया है। इसलिये अब इस परिभाषा को रखने की कोई जरूरत नहीं रह गई है।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमदः__ संशोधन क्या है श्रीमान?

*__अध्यक्षः__ संशोधन यह है कि 'इसाई' शब्द की जो परिभाषा अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (ग) में रखी गई है वह हटा दी जाये क्योंकि 'इसाई' शब्द संविधान में अब कहीं नहीं आता है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का उपखण्ड (ग) हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन रखता हूं कि:

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (3) की जगह यह उपखण्ड रखा जाये।

'(iii) 'Indian State' means any territory which the Government of the Dominion of India recognised as such a State.'

[(3) 'देशी राज्य' से अभिप्रेत है कोई ऐसा राज्यक्षेत्र जिसे भारत डोमिनियन की सरकार ऐसा राज्य अभिज्ञात करती थी।]"

यहां निर्देश हैं संविधान के प्रारूप के पृष्ठ 157 के प्रति तथा उस पर आये उपखण्ड के प्रति जिसे हम पास कर चुके हैं। जिस रूप में हमने इस उपखण्ड (3) को पास किया है यह दो भागों में विभक्त कर दिया गया है। एक में तो देशी राज्य की परिभाषा दी गई है संविधान के प्रारम्भ के पूर्व की अवधि के बारे में और दूसरे में, संविधान के प्रारम्भ के बाद की अवधि के बारे में। किन्तु अब इन दो अवधियों के लिये अलग-अलग परिभाषा देने की जरूरत नहीं रह गई है। इसलिये अब यह परिभाषा दी जा रही है।

***श्री एच.वी. कामतः** "भारत डोमिनियन की सरकार" रखना क्या जरूरी है श्रीमान? 'भारत सरकार' कहना क्या पर्याप्त न होगा?

***अध्यक्षः** इससे एक भ्रान्ति होती है। भारत सरकार से अभिप्रेत है वह भारत सरकार जो नये संविधान के अधीन काम करेगी और भारत डोमिनियन की सरकार से अभिप्रेत है वह सरकार जो संविधान के प्रारम्भ के पूर्व यहां अधिकारारूढ़ रही है। इस भ्रान्ति को बचाने के लिये ही यह संशोधन रखा जा रहा है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मुझे ऐसा मालूम होता है श्रीमान कि यहां 'डोमिनियन शब्द का प्रयोग भविष्य के सम्बन्ध में किया गया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मेरा ख्याल यह है कि यहां अन्त में 'such a State' शब्दों की जगह "an Indian State" शब्द रखना ज्यादा अच्छा होगा।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मुझे यह परामर्श मिला है कि अगर श्री सन्तानम् का संशोधन स्वीकार किया जाता है तो अर्थ स्पष्ट नहीं हो पायेगा। तथ्य यह है कि संविधान के प्रवर्तन में आ जाने पर 'देशी राज्य' को परिभाषित करने की कोई आवश्यकता नहीं रह जायेगी। संविधान के प्रारम्भ के पूर्व के सम्बन्ध में ही देशी राज्य का उल्लेख आयेगा। इसलिये संविधान के प्रवर्तन में जाने के बाद संविधान से इसका नाता जोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। यही कारण है कि हमने इसकी परिभाषा संक्षिप्त कर दी है। शुरू में सभा ने इसकी परिभाषा के लिये दो अलग-अलग पैरा रखे थे पर अब इसकी परिभाषा एक ही पैरे में दे दी गई है। मुझे यह भी बताया गया है कि 'as such' शब्दों को यहां जिस प्रयोजन के लिये प्रयुक्त किया है वह उसके लिए सर्वथा उपयुक्त हैं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** नये संविधान में भी "Indian States" (देशी राज्य) शब्द आये हैं और परिसम्पत्ति तथा देयता (assets & liabilities) के प्रयोजन के लिए, इनका निर्वचन देना ही होगा। इसलिय हमें यहां यह कहना होगा कि 'देशी राज्यों' से अभिप्रेत है वह राज्य क्षेत्र जो भारत डोमिनियन द्वारा देशी राज्य के नाम से अभिज्ञात था। यह संशोधन शाब्दिक मात्र है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** नये संविधान में जहां कहीं भी देशी राज्य के प्रति निर्देश आया है वहां इसे राज्य ही कहा गया है और उसका मतलब है पूर्ववर्ती तत्स्थानी राज्य से या तत्स्थानी प्रान्त से। संविधान के प्रवर्तन में आ जाने के बाद इस सम्बन्ध में जो स्थिति रहेगी उसके निर्वचन के लिये संविधान में कहीं भी 'देशी राज्य' शब्द नहीं रखे गये हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं एक बात जानना चाहता हूं। वह यह कि संविधान में कहां-कहां 'देशी राज्य' शब्द रखे गये हैं? हमें यह मालूम होना चाहिये कि किस प्रसंग में यह शब्द प्रयुक्त हुए हैं। तभी हम इसकी परिभाषा दे सकते हैं।

***अध्यक्ष:** श्री कृष्णमाचारी ने अभी दो स्थानों का उल्लेख किया तो है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यदि माननीय मित्र इसी वक्त यह देखना चाहते हैं कि किस प्रसंग में यह शब्द आये हैं तो मैं उनसे कहूंगा कि वह अनुच्छेद 273-क को देखें जो अभी रुका हुआ है तथा अनुच्छेद 267-क को देखें जो पास हो चुका है। इसके अलावा भी अन्य कई अनुच्छेदों में यह शब्द आये हैं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** 'such a State' शब्द जो रखे गये हैं इसमें आर्टिकल 'a' को तो कम से कम अवश्य हटा देना चाहिये।

***अध्यक्ष:** 'recognised as an Indian State' कहने में कुछ हानि है क्या?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** आर्टिकल का हटाना गलत होगा। यदि 'Indian State' शब्दों को आप रखते हैं तो 'an Indian State' कहना ही होगा क्योंकि केवल 'Indian State' कहना शुद्ध नहीं होगा। चाहे 'Indian State' शब्द रखिये या 'State' शब्द रखिये 'an' या 'a' आर्टिकल तो आपको रखना ही होगा। भारत शासन अधिनियम में क्या परिभाषा दी गई है यह मैं पढ़कर सुना दूं श्रीमान?

> "Indian State means any territory not being part of British Indian which his Majesty's Government recognised as being such a State whether described as a State, an estate, jagir or otherwise."

> [देशी राज्य से अभिप्रेत है वह राज्य क्षेत्र जो ब्रिटिश भारत का अंग नहीं है और जिसे सम्राट् की सरकार देशी राज्य के नाम से अभिज्ञात करती थी चाहे वह राज्य, इस्टेट, जागीर या अन्य नाम से वर्णित हो]

***अध्यक्ष:** मैं नहीं समझता कि अर्थ के बारे में कोई कठिनाई हो सकती है। यह तो केवल भाषा की बात है कि अंग्रेजी में इसे कैसे व्यक्त करते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** इन मामलों में कमोबेश हमने भारत शासन अधिनियम का ही अनुगमन किया है।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (3) की जगह यह उपखण्ड रखा जाये:

'(iii) 'Indian State' means any territory which the Government of the Dominion of India recognised as such a State.'

[(3) 'देशी राज्य' से अभिप्रेत है कोई ऐसा राज्य क्षेत्र जिसे भारत डोमिनियन की सरकार ऐसा राज्य अभिज्ञात करती थी।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान:–

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (ढ़) की जगह यह उपखण्ड रखा जाये:

'(nn) 'Rajpramukh' means—

(i) in relation to the State of Hyderabad, the person who for the time being is recognised by the President as the Nizam of Hyderabad;

(ii) in relation to the State of Jammu and Kashmir or the State of Mysore, the person who for the time being is recognised by the President as the Maharaja of that State; and

(iii) in relation to any other State for the time being specified in Part III of the First Schedule, the person who for the time being is recognised by the President as the Rajpramukh of that State,

and includes in relation to any of the said States any person for the time being recognised by the President as competent to exercise the powers of the Rajpramukh in relation to that State;'

["राजप्रमुख" से अभिप्रेत है:—

(1) हैदराबाद राज्य के सम्बन्ध में वह व्यक्ति जो राष्ट्रपति द्वारा हैदराबाद के निजाम के रूप में तत्समय अभिज्ञात है;

(2) जम्मू और कश्मीर राज्य या मैसूर राज्य के सम्बन्ध में वह व्यक्ति जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के महाराजा के रूप में तत्समय अभिज्ञात है; तथा

(3) प्रथम अनुसूची के भाग (ख) में उल्लिखित किसी अन्य राज्य के सम्बन्ध में वह व्यक्ति जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के राजप्रमुख के रूप में तत्समय अभिज्ञात है;

तथा उसमें उक्त राज्यों में से किसी के सम्बन्ध में, वह कोई व्यक्ति भी अन्तर्गत है जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के सम्बन्ध में राजप्रमुख की शक्तियां प्रयोग करने के लिये सक्षम तत्समय अभिज्ञात है;]

मूल परिभाषा, जिसके स्थान पर अब यह रखी जा रही है वह केवल शासक के बारे में थी। इसके बाद एक परिभाषा मैं राज्यपाल के बारे में रखना चाहता हूं जो यों है:—

" '(nnn) 'Ruler' in relation to an Indian State means the Prince, Chief or other person by whom any such covenant or agreement as is referred to in clause (1) of article 267A of this Constitution was entered into and who for the time being is recognised by the President as the Ruler of the State, and includes any person who for the time being is recognised by the President as the successor of such Ruler;'

["शासक" से किसी देशी राज्य के सम्बन्ध में अभिप्रेत है कोई राजा, प्रमुख या अन्य कोई व्यक्ति जिसने ऐसी कोई प्रसंविदा या करार, जैसा कि इस संविधान के अनुच्छेद 267 के खण्ड (1) में निर्दिष्ट है, किया था तथा जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य का शासक तत्समय अभिज्ञात है तथा उसके अन्तर्गत ऐसा कोई व्यक्ति भी है जो राष्ट्रपति द्वारा ऐसे शासक का उत्तराधिकारी तत्समय अभिज्ञात है;]"

जैसा कि पहले मैं कह चुका हूं, मूल अनुच्छेद 303 (1) के उपखण्ड (ढ़ढ़) को यहां दो भागों में विभक्त कर दिया गया है। यहां यह साफ-साफ व्यक्त किया गया है कि राजप्रमुख कौन है और राजप्रमुख का निर्देश करने में हैदराबाद के शासक के लिये 'निजाम' शब्द के प्रयोग की तथा जम्मू और कश्मीर तथा मैसूर के शासकों के लिये महाराजा शब्द के प्रयोग की अनुमति दी गई है। राजप्रमुख और शासक में यहां अन्तर भी कर दिया गया है क्योंकि यहां यह कहा गया है कि शासक एक ऐसा व्यक्ति होगा जो राजप्रमुख नहीं होगा। वह एक ऐसा व्यक्ति होगा जिसने भारत सरकार के साथ ऐसी कोई प्रसंविदा या करार, जैसा कि

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

अनुच्छेद 267-क में निर्दिष्ट है, किया था चाहे उसे शासन की शक्तियां भले ही न प्राप्त हों। इस अनुच्छेद 267-क को हमने कल ही पास किया है। इसके लिये यह उपबन्धित किया गया है कि वह ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य का शासक माना जाता हो। यह भी उपबन्धित किया गया है कि राष्ट्रपति उसके उत्तराधिकारी को भी शासक मानेगा।

*__श्री एच.वी. कामतः__ दुर्भाग्यवश इस संशोधन में दो त्रुटियां आ गई हैं श्रीमान। पहली त्रुटि यह रह गई है कि इसमें उप-राजप्रमुख और महाराज प्रमुख की परिभाषा नहीं दी गई है। मुझे यह मालूम हुआ है उदयपुर के महाराजा महाराज प्रमुख के नाम से अभिज्ञात हैं। इस संशोधन में इन दोनों की परिभाषा नहीं दी गई है। यह दोनों परिभाषायें यहां अवश्य आ जानी चाहियें और तभी यह अनुच्छेद पूर्ण हो सकता है।

*__अध्यक्षः__ उप-राजप्रमुख की परिभाषा के लिये एक संशोधन की सूचना आई है। यह संशोधन आगे चल कर आ रहा है। महाराज प्रमुख शब्द तो कभी व्यवहृत ही नहीं हुआ है।

*__एक माननीय सदस्यः__ उसे तो कोई शक्ति ही नहीं प्राप्त है।

*__माननीय श्री के. सन्तानम्ः__ शासक की परिभाषा के बारे में अन्तिम वाक्य में यह कहा गया है कि "तथा उसके अन्तर्गत ऐसा कोई व्यक्ति भी है जो राष्ट्रपति द्वारा ऐसे शासक का उत्तराधिकारी तत्समय अभिज्ञात है।" यदि वह ऐसे शासक का उत्तराधिकारी है तो वह अपने आप ही शासक हो जायेगा। शासक तथा उसका उत्तराधिकारी दोनों ही तो एक साथ शासक नहीं रहेंगे। मेरा ख्याल है कि अनुच्छेद के अन्तिम अंश से भ्रान्ति पैदा होगी। इससे यह अर्थ लगाया जा सकता है कि किसी राज्य के लिए शासक भी होगा और साथ ही उसका उत्तराधिकारी भी शासक माना जायेगा। यह एक असम्भव सी बात है। यदि कोई वास्तविक उत्तराधिकारी है तो वह तो अपने आप आगे चल कर शासक हो जायेगा। पर दोनों साथ ही शासक तो नहीं रह सकते हैं।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ माननीय मित्र जिस तरह से इस पर विचार कर रहे हैं उसमें दिक्कत यह आती है कि अपने आप उत्तराधिकार पाने की व्यवस्था अब नहीं रह गई है। उत्तराधिकारी वही होगा जिसे राष्ट्रपति उत्तराधिकारी माने।

*__माननीय श्री के. सन्तानम्ः__ मेरा मतलब यह है कि ज्यों ही कोई व्यक्ति उत्तराधिकारी स्वीकार किया जायेगा वह शासक बन जायेगा। अन्यथा किसी को उत्तराधिकारी स्वीकार करने का कोई अर्थ नहीं होता है।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः__ यहां कुछ भ्रान्ति इसलिये हो रही है कि बिना राज्य हुए भी कुछ लोग शासक माने जायेंगे। राजप्रमुख तो केवल राज्यों में ही होंगे पर शासकों का सम्बन्ध होगा जागीरों या जमींदारियों से जो पहले उनके पास रही हैं। हम लोगों का विचार यह है कि जो व्यक्ति जागीर का उत्तराधिकारी होगा वही

राष्ट्रपति द्वारा शासक माना जायेगा। यदि राष्ट्रपति उसे शासक नहीं मानता है तो वह शासक नहीं बन सकता है। किसी को उत्तराधिकार अपने आप नहीं मिल सकेगा। यदि राष्ट्रपति किसी को उत्तराधिकारी स्वीकार कर लेता है तो उसके बाद जब तक कि वह जगह खाली नहीं होती वह किसी और को उत्तराधिकारी नहीं मान सकता है। किसी को उत्तराधिकारी मानने के पहले उसके लिए खाली जगह होनी चाहिये। अनुच्छेद के शब्दों को लेकर मुझे तो कोई कठिनाई नहीं दिखाई देती है।

*__माननीय श्री के. सन्तानम्:__ मैं यह जानना चाहता हूं कि राज्यों को प्रान्तों में मिला देने से, जिसका राज्य समाप्त हो गया है वह शासक माना जायेगा या उत्तराधिकारी?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ सारी कठिनाई यह है कि यह व्यवस्था ही कुछ बड़ी जटिल है। वस्तुतः यह चकरा देने वाली व्यवस्था है। मैं यह मानता हूं कि उपखण्ड (ढ़ढ़) में जो परिभाषा दी गई है उसके अनुसार तथा अनुच्छेद 267-क के प्रयोजन के लिये वह व्यक्ति भी शासक ही माना जायेगा जिसका राज्य प्रान्त में मिल गया है।

*__माननीय श्री के. सन्तानम्:__ उसके पुत्र को भी फिर क्यों न शासक बनाया जाये।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ ऐसा भी हो सकता है।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ यदि अनुमति हो तो मैं यह कहूंगा श्रीमान कि शासक की परिभाषा यहां केवल इस सीमित प्रयोजन के लिये रखी जा रही है कि निजी थैली (प्रिवी पर्स) से उनको रकम दी जा सके। इसको रखने का और कोई मतलब नहीं है।

*__माननीय श्री के. सन्तानम्:__ मेरा प्रश्न यह है कि इसका यह मतलब तो नहीं होगा कि दो व्यक्तियों को एक साथ निजी थैली से रकम पाने का हक होगा? मैं इस बात को सुनिश्चित कर लेना चाहता हूं कि प्रसंविदा के अधीन एक समय एक ही व्यक्ति निजी थैली से रकम पाने का अधिकारी होगा।

*__अध्यक्ष:__ मेरा ख्याल है कि इस संशोधन के द्वारा यह बात सुनिश्चित हो जाती है क्योंकि केवल वही व्यक्ति इस थैली से रकम पाने का अधिकारी होगा जो राष्ट्रपति द्वारा शासक माना जायेगा।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ इसकी व्यवस्था तो उन उपबन्धों के अधीन रहेगी जो राष्ट्रपति द्वारा किसी को शासक माने जाने के बारे में रखे गये हैं। मुझे विश्वास है कि राष्ट्रपति एक ही व्यक्ति को शासक मानेगा न कि दो, तीन या चार व्यक्तियों को शासक मानेगा। यह पद संहिता यहां जानबूझ कर इसी उद्देश्य से रखी गई है कि राष्ट्रपति को यह अधिकार प्राप्त रहे।

*__माननीय श्री के. सन्तानम्:__ उस व्यक्ति को शासक या उत्तराधिकारी के नाम से अभिज्ञात किया जा सकता है:

***अध्यक्षः** श्री सन्तानम्। मैं समझता हूं संशोधन बिल्कुल स्पष्ट है। इस उपबन्ध के पीछे मूल विचार यह है कि शासकों को जो विशेषाधिकार दिये गये हैं वह उनको भी मिलें जो उनके उत्तराधिकारी स्वीकार किये जायेंगे। कहने का मतलब यह है कि अगर किसी व्यक्ति को शासक माना जाता है तो वह विशेषाधिकार जो उसे दिये गये हैं केवल उसी व्यक्ति को उत्तराधिकार में प्राप्त होंगे जिसे राष्ट्रपति उसका उत्तराधिकारी स्वीकार करेगा।

मैं नहीं समझता कि इस पर और बहस की कोई जरूरत है। अब मैं इस पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (ढ़ढ़) की जगह यह उपखण्ड रखा जाये:

'(nn) 'Rajpramukh' means—

(i) in relation to the State of Hyderabad, the person who for the time being is recognised by the President as the Nizam of Hyderabad;

(ii) in relation to the State of Jammu and Kashmir or the State of Mysore, the person who for the time being is recognised by the President as the Maharaja of that State; and

(iii) in relation to any other State for the time being specified in Part III of the First Schedule, the person who for the time being is recognised by the President as the Rajpramukh of that State;

and includes in relation to any of the said States any person for the time being recognised by the President as competent to exercise the powers of the Rajpramukh in relation to that State;

(nnn) 'Ruler' in relation to an Indian State means the Prince, Chief or other person by whom any such covenant or agreement as is referred to in clause (1) of article 267A of this Constitution was entered into and who for the time being is recognised by the President as the Ruler of the State, and includes any person who for the time being is recognised by the President as the successor of such Ruler;'

[(ढ़ढ़) "राजप्रमुख" से अभिप्रेत है:

(1) हैदराबाद राज्य के सम्बन्ध में वह व्यक्ति जो राष्ट्रपति द्वारा हैदराबाद के निजाम के रूप में तत्समय अभिज्ञात है;

(2) जम्मू और कश्मीर राज्य या मैसूर राज्य के सम्बन्ध में वह व्यक्ति जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के महाराजा के रूप में तत्समय अभिज्ञात है; तथा

(3) प्रथम अनुसूची के भाग (3) में उल्लिखित किसी अन्य राज्य के सम्बन्ध में वह व्यक्ति जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के राजप्रमुख के रूप में सत्समय अभिज्ञात है;

तथा उसमें उक्त राज्यों में से किसी के सम्बन्ध में, वह कोई व्यक्ति भी अन्तर्गत है जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के सम्बन्ध में राजप्रमुख की शक्तियां प्रयोग करने के लिये सक्षम तत्समय अभिज्ञात है;

(ढ़ढ़ढ़) "शासक" से किसी देशी राज्य के सम्बन्ध में अभिप्रेत है कोई राजा, प्रमुख या अन्य कोई व्यक्ति जिसने ऐसी कोई प्रसंविदा या करार, जैसा कि अनुच्छेद 267-क के खंड (1) में निर्दिष्ट है, किया था तथा जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य का शासक तत्समय अभिज्ञात है तथा उसके अन्तर्गत ऐसा कोई व्यक्ति भी है जो राष्ट्रपति द्वारा ऐसे शासक का उत्तराधिकारी तत्समय अभिज्ञात है;]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी: अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन रखता हूं:

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (द) की जगह यह उपखण्ड रखा जाये–

'(r) railway does not include:—

(a) a tramway wholly within a municipal area, or

(b) any other line of communication wholly situate in one State and declared by Parliament by law not to be a railway.'

[(द) रेल में यह शामिल नहीं हैं:

(क) किसी नगरक्षेत्र में ही पूर्णतया स्थित ट्रामवे, अथवा

(ख) संचार की कोई अन्य लीक जो किसी एक राज्य में पूर्णतया स्थित हो और जिसे संसद ने विधि द्वारा रेल न होना घोषित किया हो।]"

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

मूल परिभाषा यों रखी गई थी श्रीमान:

" 'A railway does not include a tramway whether wholly within a municipal area or not.'

[रेल में कोई ट्रामवे नहीं शामिल है चाहे वह किसी नगरक्षेत्र में पूर्णतया स्थित हो या नहीं।]"

अब पता यह चला है कई राज्यों में कुछ ऐसी रेलें हैं जो माने हुए अर्थ में रेलें नहीं हैं। वह रेल तथा ट्रामवे की बीच की चीज हैं। अब परिभाषा में ऐसा परिवर्तन कर दिया गया है कि संसद विधि द्वारा यह बता सके कि कौन से संचार के मार्ग रेल नहीं माने जा सकते हैं। यह परिवर्तन करना जरूरी हो गया है क्योंकि मूल परिभाषा जब बनाई थी तबसे कुछ ऐसा हुआ है कि अधिकांश देशी राज्यों ने रेलों को भारत सरकार को सौंप दिया है या करने वाले हैं। इन राज्यों में आज जो स्थिति है उसका हमें ख्याल रखना होगा और उसके लिए उपबन्ध करना होगा यही कारण है जो यह संशोधन सभा के सामने रखा जा रहा है।

श्री आर.के. सिधवाः ट्रामवे को कभी रेल नहीं कहते हैं। नगर क्षेत्र के स्थित ट्रामवे का यहां उल्लेख करना सर्वथा अनावश्यक है। ट्रामवे को ट्रामवे ही कहते हैं। मसौदा समिति के दिमाग में किसने यह बात ला दी है कि ट्रामवे रेलवे है। यहां इसका उल्लेख करना बड़ी बेतुकी बात है। इसलिए मैं यह महसूस करता हूं श्रीमान कि संशोधन का उपखण्ड (क) अनावश्यक है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मेरा ख्याल है कि माननीय की बात गलत है। उस समय भी जब कि मूल परिभाषा पर यहां बहस की जा रही थी मैंने यह बताया था कि यह कहना गलत है कि रेल में ट्रामवे शामिल नहीं है। रेलवे और ट्रामवे में सिवाय इसके और अन्तर ही क्या है कि ट्राम में एक या दो गाड़ियां रहती हैं पर रेलों में ज्यादा गाड़ियां रहती हैं। इसलिए यह संशोधन जरूरी है। अन्यथा बहुत से स्थानों में लोग अन्य लीकों को भी ट्रामवे मान सकते हैं और इसको लेकर विवाद खड़ा हो सकता है। हम नहीं चाहते हैं कि किसी भी विवाद की कोई गुंजाइश रह जाये। इसलिये यह परिभाषा ठीक परिभाषा है और इसको रखना ही उचित होगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** प्रस्तुत संशोधन के उपखण्ड (ख) को स्वीकार करने में मुझे कुछ कठिनाई है। अभी श्री कृष्णमाचारी ने अपनी अपील में यह कहा है......

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** माननीय मित्र से मैं यह कहूंगा कि इस संशोधन के समर्थन में पूर्ववक्ता विशेषज्ञ ने जो तर्क रखा है उसे आप स्वीकार कीजिए और मैंने जो कुछ कहा है उसकी आप उपेक्षा कीजिए।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** इससे अब यह स्पष्ट हो गया है कि श्री कृष्णमाचारी केवल सन्देश वाहक मात्र हैं। आखिर इस मसले को समझाने की जिम्मेदारी इन्होंने ले रखी है। इन्होंने यह बताया है कि 'State' शब्द से अभिप्रेत है देशी राज्य न कि प्रान्त अभिप्रेत है। किन्तु नई व्यवस्था में 'State' शब्द के अन्तर्गत प्रान्त भी आ जाते हैं। यहां **'स्टेट'** शब्द से शायद उनका मतलब है प्रथम अनुसूची के भाग 3 के राज्यों से। अगर यह बात है तो उसको यहां साफ-साफ बता देना चाहिए। अगर ऐसा नहीं किया जाता है तो होगा यह कि भाग एक वाले किसी प्रान्त में अगर कोई छोटी रेल है तो वह भी रेल नहीं मानी जायेगी। अगर अभिप्राय यह है कि देशी राज्यों की रेलों को इसमें शामिल न किया जाये क्योंकि इन्होंने अब तक शर्तें नहीं मंजूर की हैं तो यहां यह साफ-साफ कह देना चाहिए रेलों में देशी राज्यों की रेलें शामिल न मानी जायेंगी।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** समूचे संविधान में हमने सर्वत्र 'State' शब्द का ही प्रयोग किया है। जहां कहीं राज्यों में कोई अन्तर व्यक्त करना पड़ा है हमने यह कह कर उनका उल्लेख किया है कि भाग 1 के राज्य या भाग 2 अथवा 3 के राज्य। इसलिए श्री नज़ीरुद्दीन अहमद के कथन में सार क्या है इसे मैं नहीं समझ पाता हूं।

***अध्यक्षः** 'State' शब्द के प्रयोग के आधार पर अपना तर्क नहीं रखा है और न उन्होंने यह कहा ही है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** बहस के सिलसिले में आपने कई देशी राज्यों का जिक्र किया है। इससे मुझे भ्रम हो गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:–

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (द) की जगह यह उपखण्ड रखा जाये:—

'(r) 'railway' does not include:—

(a) a tramway wholly within a municipal area, or

(b) any other line of communication wholly situate in one State and declared by Parliament by law not to be a railway.'

[(द) रेल में यह शामिल नहीं हैं:

[अध्यक्ष]

(क) किसी नगरक्षेत्र में ही पूर्णतया स्थित ट्रामवे, अथवा

(ख) संचार की कोई अन्य लीक जो किसी एक राज्य में पूर्णतया स्थित हो और जिसे संसद ने विधि द्वारा रेल न होना घोषित किया हो।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं आपसे एक संशोधन पेश करने की अनुमति चाहता हूं जिसकी सूचना तो आई है पर वह सदस्यों के पास नहीं भेजा गया है। इसको संख्या-बद्ध नहीं किया गया है और यह है उप-राज्य प्रमुख के बारे में। मैं इसे पेश करता हूं। संशोधन यह है....

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) में यह उपखण्ड जोड़ दिया जाये...

'(y) 'Uprajpramukh' in relation to any State means the person who for the time being is recognised by the President as the 'Uprajpramukh' of that State.'

[(म) 'उपराजप्रमुख' से, किसी राज्य के सम्बन्ध में वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के उपराजप्रमुख के रूप में तत्समय अभिज्ञात है।]"

मैं कृतज्ञ हूं माननीय मित्र मैसूर के प्रधान मंत्री का जिन्होंने मेरा ध्यान इस त्रुटि की ओर आकृष्ट किया है।

महाराज प्रमुख के सम्बन्ध में जो प्रश्न माननीय मित्र श्री कामत ने उठाया है उसके बारे में मुझे इतना ही कहना है कि संविधान में कहीं भी महाराजप्रमुख का उल्लेख नहीं आया है जोकि एक ऐसा व्यक्ति मौजूद है जिसे महाराजप्रमुख कहा जाता हे। संविधानिक रूप से, ऐसे व्यक्ति के अस्तित्व को हमने स्वीकार नहीं किया है। इस परिभाषा को रखने की आवश्यकता इसलिये पड़ी है कि कल, पद सम्बन्धी अनर्हता को हटाने के बारे में जो संशोधन यहां रखे गये हैं उनमें दो स्थलों पर उपराजप्रमुख का उल्लेख हमें करना पड़ा है। आशा है सभा इसे स्वीकार करेगी।

श्री एच.वी. कामत: इस सम्बन्ध में एक छोटी सी कठिनाई है और वह यह है कि संस्कृत तथा हिन्दी भाषाओं के अनुसार-भाषा विज्ञान की दृष्टि से तथा शब्द व्युत्पत्ति की दृष्टि से—होना चाहिये उपराजप्रमुख (Uprajpramukh)। अन्यथा अंग्रेज तथा विदेशी पत्रकार इसे 'अपराजप्रमुख' पढ़ेंगे और मैंने उनको ऐसा उच्चारण करते सुना है।

***अध्यक्षः** अक्षर विन्यास को हम ठीक कर लेंगे। पर मैं नहीं समझता कि ठीक करने पर भी हम अनभिज्ञ आदमियों को अशुद्ध उच्चारण करने से रोक सकेंगे।

***श्री जयनारायण व्यास** (संयुक्त राज्य राजस्थान): अध्यक्ष महोदय, महाराजप्रमुख की स्थिति से मैं सहमत नहीं हूं। राजाओं की बैठकों का सभापतित्व महाराजप्रमुख ही करता है। अगर हम संविधानिक रूप से उसे महाराज प्रमुख नहीं स्वीकार करेंगे तो वह सारी बैठकें जो उसके सभापतित्व में होंगी अवैध होंगी।

***अध्यक्षः** क्या राजाओं की ऐसी बैठकें होती हैं जैसी कि नरेन्द्र मंडल की हुआ करती थीं?

***श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट** (राजस्थान): राजस्थान के कवेनेन्ट में एक आर्टिकल है जिसमें यह लिखा है कि राजाओं की जब कोई मीटिंग होगी जहां महाराणा उदयपुर हाजिर होंगे, तो वह महाराजप्रमुख की हैसियत से उसके सदर होंगे। यह स्पष्ट तौर से लिखा है तो उसमें उनकी कुछ हैसियत तो जरूर आती है। उनके हाथ में दूसरी एडमिनिस्ट्रेटिव पावर नहीं है। लेकिन इतना तो जरूर इसमें है और यह सोचने की बात है। इस पर दोबारा गौर करने की जरूरत है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** भाग 6-क में हमने इस तरह का कोई उपबन्ध नहीं रखा है।

***अध्यक्षः** क्या अपने संविधान में नरेशों की बैठक के लिये कोई उपबन्ध है?

***श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्टः** जिन राज्यों को मिला कर राजस्थान-संघ बना है उनके नरेशों की बैठक के लिये उपबन्ध किया गया है।

***एक माननीय सदस्यः** प्रसंविदा में इसके लिये एक उपबंध है।

***अध्यक्षः** पर संविधान में नहीं है।

***श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्टः** राजप्रमुख और उपराजप्रमुख शब्द प्रसंविदा में हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** प्रसंविदायें संविधान का ही अंग हैं। इन प्रसंविदाओं के अधीन ही तो नरेश भारतीय संघ में शामिल हुए हैं। इसलिये हमें इन्हें मानना ही होगा। इस प्रश्न पर सावधानी से विचार करने की आवश्यकता है।

***श्री एच.जे. खाण्डेकर** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): मेरा ख्याल है कि अभी इसे हमें स्थगित रखना चाहिये।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** यहां तो केवल परिभाषा रखने की बात है। जब तक कि संविधान में इसका प्रयोग नहीं होता है हम कैसे कह सकते हैं कि इसकी क्या परिभाषा होगी।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** इस संशोधन को तो हमें स्वीकार करना ही होगा क्योंकि, एक संशोधन को, जिसमें यह शब्द आया है, हम स्वीकार कर चुके हैं। अगर किसी ऐसे शब्द की परिभाषा का सवाल है जो संविधान में आया ही नहीं, तो इसका प्रस्तुत संशोधन से क्या सम्बन्ध है? माननीय मित्र का जो मत है उससे इस संशोधन को स्वीकार करने में कोई अड़चन नहीं पैदा होती है।

***अध्यक्ष:** तो उपराजप्रमुख की परिभाषा के बारे में कोई आपत्ति नहीं है। महाराजप्रमुख की परिभाषा के सवाल को अभी हम आगे के लिये छोड़ते हैं।

***श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट:** मैं चाहता हूं कि इस बात का यहां खुलासा हो जाना चाहिये नहीं तो हो सकता है कि यह कहा जाये कि जिस तरह राजप्रमुख और उपराजप्रमुख का स्पष्ट उल्लेख संविधान में दिया गया है उसी तरह महाराजप्रमुख का भी स्पष्ट उल्लेख आना चाहिये था।

***अध्यक्ष:** अपने संविधान में हमने केवल उपराजप्रमुख शब्द का प्रयोग किया है। प्रमुख के पूर्व विशेषण के रूप में किसी शब्द के रखने से कोई कठिनाई नहीं आ सकती है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मुझे मालूम हुआ था कि उदयपुर के महाराजप्रमुख को जो भत्ता दिया जायेगा वह अनुच्छेद 267-क के एक शासक के नाते निजी थैली से दिया जायेगा न कि महाराजप्रमुख होने के नाते। इसलिये उनके लिये संविधान में विशेष उपाधि के उल्लेख की जरूरत नहीं है।

***अध्यक्ष:** अब मैं इस पर मत लूंगा।

***श्री एच.जे. खांडेकर:** अगर उपराजप्रमुख कोई महिला हुई तो क्या स्थिति होगी? उसको किस नाम से पुकारा जायेगा।

***अध्यक्ष:** इस तरह तो कई समितियों की महिला चेयरमैन भी हमारे यहां हैं। जहां तक अंग्रेजी भाषा का सम्बन्ध है इस सम्बन्ध में कोई कठिनाई नहीं हो सकती है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) में यह उपखण्ड जोड़ दिया जाये:—

'(y) 'Uprajpramukh' in relation to any State means the person who for the time being is recognised by the President as the Uprajpramukh of that State.'

[(म) 'उपराजप्रमुख' से, किसी राज्य के सम्बन्ध में वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के उपराजप्रमुख के रूप में तत्समय अभिज्ञात है।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब हम लेते हैं अनुसूची को।

***श्री युधिष्ठिर मिश्र** (उड़ीसा के राज्य): अध्यक्ष महोदय, मेरा यह सुझाव है श्रीमान, कि प्रथम अनुसूची पर विचार कृपया कल तक के लिये स्थगित रखा जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** हां श्रीमान। इसे स्थगित रखा जा सकता है। यह सूची अभी आज सवेरे ही आठ बजे तो हम लोगों को मिली है।

***अध्यक्षः** अनुसूची उपस्थित तो कर ली जाये पर विचार इस पर किया जाये कल प्रातः।

प्रथम अनुसूची

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं यह संशोधन रखता हूं श्रीमान....

"कि प्रथम अनुसूची की जगह यह अनुसूची रखी जायेः–

'FIRST SCHEDULE

(Articles 1 and 4)

The States and the territories of India

PART I.

	Names of States	Names of Corresponding Provinces
1.	Assam	Assam
2.	Bengal	West Bengal
3.	Bihar	Bihar
4.	Bombay	Bombay
5.	Koshal-Vidarbh	Central Provinces and Berar
6.	Madras	Madras
7.	Orissa	Orissa
8.	Punjab	East Punjab
9.	United Provinces	Unitel Provinces

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

Territories of States

The territory of the State of Assam shall comprise the territories which immediately before the commencement of this Constitution were comprised in the Province of Assam, the Khasi States and the Assam Tribal Areas.

The territory of the State of Bengal shall comprise the territory which immediately before the commencement of this Constitution was comprised in the Province of West Bengal."

[प्रथम अनुसूची
(अनुच्छेद 1 और 4)
भारत के राज्य और राज्यक्षेत्र
भाग-1

राज्यों के नाम	तत्स्थानी प्रान्तों के नाम
1. आसाम	आसाम
2. बंगाल	पश्चिमी बंगाल
3. बिहार	बिहार
4. बम्बई	बम्बई
5. कौशल विदर्भ	मध्यप्रान्त और बरार
6. मद्रास	मद्रास
7. उड़ीसा	उड़ीसा
8. पंजाब	पूर्वी पंजाब
9. युक्त प्रदेश	संयुक्त प्रान्त

राज्यों के राज्यक्षेत्र

आसाम राज्य के राज्यक्षेत्र में वह राज्यक्षेत्र समाविष्ट होगा जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले आसाम प्रान्त, खासी राज्य, और आसाम आदिमजाति क्षेत्र के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट था।

पश्चिमी बंगाल राज्य के राज्यक्षेत्र में वह राज्यक्षेत्र समाविष्ट होगा जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले पश्चिमी बंगाल प्रान्त के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट था।]

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): हम लोग उड़ीसा का नाम उत्कल रखना चाहते थे श्रीमान।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** इसके लिये आप संशोधन पेश कर सकते हैं।

"The territory of the State of Bombay shall comprise the territory which immediately before the commencement of this Constitution was comprised in the Province of Bombay and the territories which by virtue of an order made under section 290A of the Government of India Act, 1935, were immediately before such commencement being administered as if they formed part of that Province or which immediately before such commencement were being administered by the Government of that Province under the provisions of the Extra Provincial Jurisdiction Act, 1947.

The territory of each of the other States shall comprise the territories which immediately before the commencement of this Constitution were comprised in the corresponding Province and the territories which, by virtue of an order made under section 290A of the Government of India Act, 1935, were immediately before such commencement being administered as if they formed part of that Province.

PART II.

Names of States.

1. Ajmer
2. Bhopal
3. Bilaspur
4. Coorg
5. Cooch-Behar
6. Delhi
7. Himachal Pradesh
8. Kutch
9. Manipur
10. Rampur
11. Tripura

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

Territories of States

The territory of the State of Ajmer shall comprise the territories which immediately before the commencement of this Constitution were comprised in the Chief Commissioners' Provinces of Ajmer-Merwara and Panth Piploda.

The territory of each of the States of Coorg and Delhi shall comprise the territory which immediately before the commencement of this Constitution was comprised in the Chief Commissioner's Province of the same name.

The territory of each of the other States shall comprise the territories which, by virtue of an order made under section 290A of the Government of India Act, 1935, were immediately, before the commencement of this Constitution administered as if they were a Chief Commissioner's Province of the same name.

PART III.

Names of States

1. Hyderabad
2. Jammu & Kashmir
3. Madhya Bharat
4. Mysore
5. Patiala & East Punjab States Union
6. Rajasthan
7. Saurashtra
8. Travancore-Cochin
9. Vindhya Pradesh

Territories of States

The territory of the State of Rajasthan shall comprise the territories which immediately before the commencement of this Constitution were comprised in the United State of Rajasthan and the territories which immediately before such commencement

were being administered by the Government of that State under the provisions of the Extra Provincial Jurisdiction Act, 1947.

The territory of the State of Saurashtra shall comprise the territories which immediately before the commencement of this Constitution were comprised in the United States of Kathiawar (Saurashtra) and the territories which immediately before such commencement were being administered by the Government of that State under the provisions of the Extra Provincial Jurisdiction Act, 1947.

The territory of each of the other States shall comprise the territory which immediately before the commencement of this Constitution was comprised in the corresponding Indian State.

PART IV.

The Andaman and Nicobar Islands.

[बम्बई राज्य के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट होगा वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले बम्बई प्रान्त के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट था तथा वह राज्यक्षेत्र जो भारत शासन अधिनियम 1935 की धारा 290-क के अधीन निकाले गये आदेश के आधार पर, इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले इस प्रकार प्रशासित थे मानो वह उस प्रान्त के अंग रहे हों अथवा जो प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1947 के उपबंधों के अधीन, इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले, उस प्रान्त की सरकार द्वारा प्रशासित थे।

अन्य राज्यों में से प्रत्येक के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट होंगे वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी प्रान्तों के राज्यक्षेत्र में, समाविष्ट थे तथा वह राज्यक्षेत्र जो भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 290-क के अधीन निकाले गये आदेश के आधार पर इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले, इस प्रकार प्रशासित थे मानो वह उस प्रान्त के अंग रहे हों।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

भाग 2

राज्यों के नाम

1. अजमेर
2. भोपाल
3. विलासपुर
4. कोड़गू
5. कूच बिहार
6. दिल्ली
7. हिमाचल प्रदेश
8. कच्छ
9. मनीपुर
10. रामपुर
11. त्रिपुरा

राज्यों के राज्य-क्षेत्र

अजमेर राज्य के राज्यक्षेत्र में वह राज्यक्षेत्र समाविष्ट होगा जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले अजमेर-मारवाड़ा और पंथ पिपलौदा के मुख्यायुक्तों के प्रान्तों के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट था।

कोड़गू और दिल्ली राज्यों में से प्रत्येक के राज्यक्षेत्र में वह राज्यक्षेत्र समाविष्ट होगा जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले, उसी नाम के, मुख्यायुक्त प्रान्त के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट था।

अन्य राज्यों में से प्रत्येक के राज्यक्षेत्र में वे राज्यक्षेत्र समाविष्ट होंगे जो भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 290-क के अधीन निकाले गये आदेश के आधार पर, इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले, इस प्रकार प्रशासित थे मानो कि वे उसी नाम के मुख्यायुक्त प्रान्त रहे हों।

भाग 3

राज्यों के नाम

1. हैदराबाद
2. जम्मू और काश्मीर
3. मध्य भारत
4. मैसूर
5. पटियाला तथा पूर्वी पंजाब राज्य-संघ

6. राजस्थान
7. सौराष्ट्र
8. तिरूवांकुर-कोचीन
9. विन्ध्य प्रदेश

राज्यों के राज्यक्षेत्र

राजस्थान राज्य के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट होंगे वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले राजस्थान के संयुक्त राज्य के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट थे तथा वह जो प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1947 के अधीन इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले उस राज्य की सरकार द्वारा प्रशासित थे।

सौराष्ट्र राज्य के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट होंगे वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले का काठियावाड़ (सौराष्ट्र) के संयुक्त राज्य के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट थे तथा वह जो प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1947 के उपबंधों के अधीन, इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले, उस राज्य की सरकार द्वारा प्रशासित थे।

अन्य राज्यों में प्रत्येक के राज्यक्षेत्र में वह राज्यक्षेत्र समाविष्ट होगा जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी देशी राज्य के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट था।

भाग 4

अन्दमान और निकोबार द्वीप

मैं नहीं समझता श्रीमान, कि जो संशोधन मैंने उपस्थित किया है उस पर कोई प्रकाश डालने की जरूरत है।

***श्री जयनारायण व्यासः** मैं यह जानना चाहता हूं श्रीमान कि सिरोही राज्य का भी कहीं उल्लेख किया गया है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1947 के अधीन सिरोही अंशतः प्रशासित हो रहा है बम्बई द्वारा और अंशतः राजस्थान द्वारा। यही कारण है जो उसका पृथक् उल्लेख नहीं किया गया है।

***श्री जयनारायण व्यासः** किन्तु सिरोही अभी न बम्बई में है और न राजस्थान में।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मुझे दो एक सुझाव रखने हैं। जहां तक पदसंहिता "भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 290-क के अधीन" का संबंध है, मेरा कहना यह है कि इसके साथ एक व्याख्या यह रख देनी चाहिये यहां मतलब है यथानुकूलित अधिनियम से। मेरा दूसरा सुझाव यह है कि भाग 2 में राज्यों को वर्णानुक्रम से नहीं रखा गया है। पर मैं देख रहा हूं कि यहां चौथे और पांचवें राज्य वर्णानुक्रम के हिसाब से ठीक नहीं रखे गये हैं। पांचवें राज्य का नाम पहले दिया जाना चाहिये और उसके नीचे आना चाहिये चौथे राज्य का नाम। इतना हो जाने से वर्णानुक्रम ठीक हो जायेगा।

***अध्यक्षः** आपका मतलब है कोड़गू और कूच बिहार से। ठीक है मेरा भी यही ख्याल है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** जहां तक कि श्री नज़ीरुद्दीन अहमद की पहली बात का सम्बन्ध है मैं यह बताना चाहता हूं कि एक पूर्व अवसर पर यह व्यक्त कर दिया गया है कि यथानुकूलित भारत शासन अधिनियम का संक्षिप्त नाम रहेगा 'भारत शासन अधिनियम, 1935 ।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं अब बैठक समाप्त होनी चाहिये। अब हम कल प्रातः पुनः समवेत् होंगे और संशोधनों को लिया जायेगा।

***श्री आर.के. सिधवाः** प्रस्तावना को भी क्या कल ही लिया जायेगा?

***अध्यक्षः** हां, जहां तक संभव होगा हम इसे कल ही समाप्त करने की चेष्टा करेंगे।

***श्री आर.के. सिधवाः** और भी कोई अनुच्छेद या संशोधन विचारार्थ लिया जायेगा क्या?

***अध्यक्षः** हां, एक या दो अनुच्छेद ऐसे हैं जिनको हम स्थगित छोड़ आये हैं।

***सेठ गोविन्द दास** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): क्या सबसे आखिर में प्रस्तावना पर विचार किया जायेगा?

***अध्यक्षः** हां, अन्त में उसी पर विचार किया जायेगा। कार्यक्रम में एक और अनुच्छेद 264-क भी है पर यह अभी तक सदस्यों को मिला नहीं है।

***श्री आर.के. सिधवाः** हर रोज नये अनुच्छेद, नये संशोधन और संशोधनों पर संशोधन यहां पेश किये जाते हैं। पर चूंकि मूल संशोधन पेश नहीं होते हैं इसलिये हम जो संशोधन भेजते हैं वह भी पेश नहीं होने पाते हैं।

***अध्यक्षः** इस तरह तो हमने किसी संशोधन को नहीं रोका है। जहां तक कि मेरे नियम के आधार पर संशोधन के पेश होने में कठिनाई आ सकती है, मैंने ऐसी कठिनाइयों को कभी बाधिक नहीं बनने दिया है।

अब सभा कल प्रातः 10 बजे तक के लिये स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा शनिवार ता. 15 अक्तूबर सन् 1949 के प्रातः 10 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

Con. 3. X.8.49
320

अंक 10
संख्या 8

शनिवार
15 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
संविधान सभा के नियम (संशोधन)	3175-3218
संविधान का मसौदा—(जारी) [प्रथम अनुसूची पर विचार]	3219-3236

भारतीय संविधान सभा

शनिवार, 15 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत् हुई।

---

*__एक माननीय सदस्यः__ क्या मैं जान सकता हूं यह सत्र कब समाप्त होगा?

*__अध्यक्षः__ मेरे विचार से अभी एक दिन के लिये तो काम है और इसलिये हमें सोमवार को अथवा रविवार को सभा की एक बैठक करनी होगी। आज सभा स्थगित करने के पूर्व हम इस सम्बन्ध में निर्णय करेंगे कि सभा की अगली बैठक कब हो। इस समय मैं केवल यह कह सकता हूं कि हमें एक दिन और बैठक करनी होगी। संभव है कल करनी पड़े या परसों, यह सभा की इच्छा पर निर्भर है।

*__सेठ गोविन्द दास__ (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): मेरा यह प्रस्ताव है कि हम कल बैठक करें न कि सोमवार को।

*__अध्यक्षः__ मैं यह जानने का प्रयास करूंगा कि सदस्यों की इच्छा क्या है।

*__श्रीमती ऐनी मैसकरीन__ (संयुक्त राज्य-तिरुवांकुर और कोचीन): हम ईसाई लोग चाहते हैं कि रविवार को कोई कार्य नहीं किया जाये।

*__अध्यक्षः__ रविवार को बैठक करने पर ईसाई सदस्यों को आपत्ति है।

*__माननीय सदस्यः__ एक बार, रविवार को हमने बैठक की है।

*__अध्यक्षः__ किन्तु उससे ईसाई सदस्य रविवार की बैठकों पर आपत्ति करने के अधिकार से वंचित नहीं होते। आज अन्त में मैं यह जानने का प्रयास करूंगा कि सभा की इच्छा क्या है।

*__श्री के.एम. मुन्शी__ (बम्बई : जनरल): श्रीमान, प्रथम अनुसूची के सम्बन्ध में मेरा यह निवेदन है.........

*__अध्यक्षः__ पहले हम श्रीमती जी. दुर्गाबाई के प्रस्ताव को निबटायेंगे, जो नियम 38-द के स्थान पर अन्य नियम रखने के सम्बन्ध में है।

संविधान सभा के नियम (संशोधन)

नवीन नियम 38-द और 38-दद

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करती हूं कि:

"संविधान सभा के नियमों के नियम 38-द के स्थान पर ये नियम रखे जायें:—

'38R. (1) When a motion that the Constitution be taken into consideration has been carried and the amendments to the Constitution moved have been considered, the President shall refer the Constitution as amended to the Drafting Committee referred to in sub-rule (1) of rule 38-L with instructions to carry out such re-numbering of the clauses, such revision of punctuation and such revision and completion of the marginal notes thereof as may be necessary and to recommend such formal or consequential or other necessary amendments to the Constitution as may be required.

Revision of the Constitution by the Drafting Committee and the consideration of the amendment recommended by them.

(2) After the Constitution has been referred to the Drafting Committee, the report of the Committee shall be presented to the Assembly by the Chairman or any other member of the Drafting Committee and thereafter the Chairman or other member of the Committee may move that the amendments recommended by the Committee in the Constitution so referred to them be taken into consideration:

Provided that no such motion shall be made until after the report of the Drafting Committee together with the copies of the Constitution as revised by them has been made available for the use of members and that any member may object to any such motion being made unless the report and the copies of the Constitution as so revised have been made available three clear days before the date on which the motion is made, and such objection shall prevail unless the President in his discretion allows the motion to be made.

(3) While making any motion referred to in sub-rule (2), the mover shall confine himself to an explanatory statement and at this stage there shall be no debate, and the President may, after such statement has been made, put the question.

(4) After the motion referred to in sub-rule (2) has been carried, any member may move an amendment which is either formal or consequential upon an amendment recommended in any provision of the Constitution by the Drafting Committee after the Constitution was referred to them under sub-rule (1) but shall not be allowed to move any other amendment.

(5) If notice of a proposed amendment has not been given two clear days before the day on which the motion referred to in sub-rule (2) is to be taken up for consideration, any member may object to the moving of the amendment, and such objection shall prevail unless the President in his discretion allows the amendment to be moved.

(6) Notwithstanding anything in these rules, all the amendments recommended by the Drafting Committee, after the Constitution was referred to them under sub-rule (1), shall be deemed to have been moved, and it shall not be necessary for the President to put each of those amendments separately to vote.

(7) The provisions of sub-rules (2) and (3) of rule 38-P shall apply to every amendment of which notice has been given under sub-rule (5), and notwithstanding anything in these rules it shall be in the discretion of the President to disallow any amendment of which notice has been so given.

(8) The President shall allot not more than two days for the consideration by the Assembly of all amendments after the motion referred to in sub-rule (2) has been carried and shall, at the time appointed by him for the close of the sitting of the Assembly on the last of the allotted days,

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

forthwith put every question necessary to dispose of all the outstanding matters in connection with those amendments, and in the case of amendments recommended by the Drafting Committee as such, he shall put only the question that the amendments so recommended be made or that the amendments so recommended as modified by any amendment or amendments adopted by the Assembly be made, as the case may be.

(9) For the purpose of bringing to a conclusion any proceedings relating to such amendments on the last of the allotted days, the President shall have power to select the amendments to be proposed.' "

मसौदा समिति द्वारा संविधान का पुनर्विलोकन और उसने जिस संशोधन की सिफारिश की हो उस पर विचार।

[38-द (1) जब यह प्रस्ताव कि संविधान पर विचार किया जाये पारित हो गया हो और संविधान संबंधी जो संशोधन उपस्थित किये गये हों उन पर विचार हो गया हो तब अध्यक्ष संविधान को, संशोधित रूप में, नियम 38 के उपनियम (1) में निर्दिष्ट मसौदा समिति के पास भेजेगा और आदेश देगा कि आवश्यकतानुसार खंडों की पुनर्गणना की जाये, विरामों को फिर से लगाया जाये और हाशिये के लेखों को दुहराया जाये और पूरा किया जाये और संविधान संबंधी ऐसे रस्मी अथवा आनुषंगिक अथवा अन्य आवश्यक संशोधनों की सिफारिश की जाये।

(2) संविधान को मसौदा समिति के पास भेजने के पश्चात् समिति के प्रतिवेदन को मसौदा-समिति का सभापति अथवा अन्य कोई सदस्य सभा में उपस्थित करेगा और तत्पश्चात् समिति का सभापति अथवा अन्य कोई सदस्य यह प्रस्ताव उपस्थित कर सकता है कि उसके पास जो संविधान भेजा गया था उसके संबंध में समिति ने जिन संशोधनों की सिफारिश की है, उन पर विचार किया जाये:

परन्तु जब तक मसौदा-समिति का प्रतिवेदन तथा उसके साथ उसके दुहराये हुए संविधान की प्रतियां सदस्यों के उपयोग के लिये उपलब्ध न की जायें तब तक इस प्रकार का कोई प्रस्ताव उपस्थित न किया जायेगा और प्रस्ताव उपस्थित करने के दिन से पूरे तीन दिन पहले यदि यह प्रतिवेदन और संविधान की दुहराई हुई प्रतियां उपलब्ध न की जायें तो कोई भी सदस्य इस पर आपत्ति कर सकता है, और जब तक कि अध्यक्ष स्वविवेक से प्रस्ताव उपस्थित करने की आज्ञा न दे तब तक यह आपत्ति अभिभावी होगी।

(3) उपनियम (2) में निर्दिष्ट किसी प्रस्ताव को उपस्थित करते समय प्रस्तावक अपने को व्याख्यात्मक वक्तव्य तक ही सीमित रखेगा और इस अवसर पर कोई वाद-विवाद नहीं होगा और अध्यक्ष, इस वक्तव्य के पश्चात् प्रस्ताव पर मत ले सकता है।

(4) उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव के पारित होने के पश्चात्, कोई भी सदस्य किसी रस्मी संशोधन को अथवा किसी ऐसे संशोधन के आनुषंगिक संशोधन को उपस्थित कर सकता है जिसकी मसौदा-समिति ने उपनियम (1) के अधीन उसके पास संविधान भेजे जाने पर किसी उपबन्ध के संबंध में सिफारिश की हो, किन्तु उसे किसी अन्य संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जायेगी।

(5) यदि किसी प्रस्तावित संशोधन की सूचना उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव पर विचार करने के दिन के पूरे दो दिन पूर्व नहीं की गई हो तो कोई भी सदस्य उस संशोधन के उपस्थित किये जाने पर आपत्ति कर सकता है और जब तक अध्यक्ष स्वविवेक से संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दे तब तक यह आपत्ति अभिभावी होगी।

(6) इन नियमों में किसी बात के होते हुए भी मसौदा-समिति ने, उसके पास उपनियम (1) के अधीन संविधान के भेजे जाने के पश्चात्, जिन संशोधनों की सिफारिश की हो, वे सब उपस्थित किये गये समझे जायेंगे और अध्यक्ष के लिये यह आवश्यक नहीं होगा कि वह उन संशोधनों में से प्रत्येक संशोधन पर पृथक् मत ले।

(7) नियम 38-त के उपनियम (2) और (3) के उपबन्ध ऐसे प्रत्येक संशोधन को लागू होंगे जिसकी उपनियम (5) के अधीन सूचना दी गई हो और इन नियमों में किसी बात के होते हुए भी अध्यक्ष स्वविवेक से किसी ऐसे संशोधन की आज्ञा नहीं दे सकता है जिसकी इस प्रकार सूचना दी गई हो।

(8) अध्यक्ष उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव के पारित होने के पश्चात्, सभी संशोधनों पर सभा के विचार करने के लिये दो दिन से अधिक नहीं देगा और दिये हुए दिनों में से अन्तिम दिन को सभा की बैठक समाप्त करने के लिये उसने जो समय निश्चित किया हो उस समय इन संशोधनों के संबंध में सभी रहे हुए प्रश्नों को निबटाने के लिये प्रत्येक प्रश्न पर मत लेगा और उन संशोधनों के संबंध में, जिनकी सिफारिश मसौदा-समिति ने की हो, वह केवल इस प्रश्न पर मत लेगा कि जिन संशोधनों की सिफारिश की गई है उन्हें किया जाये अथवा, यथास्थिति, जिन संशोधनों की सिफारिश की गई है उन्हें सभा द्वारा स्वीकृत किसी संशोधन अथवा संशोधनों द्वारा परिवर्तित रूप में किया जाये।

(9) दिये हुए दिनों में से अन्तिम दिन को इन संशोधनों के संबंध में किसी कार्यवाही को समाप्त करने के लिये अध्यक्ष को प्रस्तावित होने वाले संशोधनों को चुनने की शक्ति प्राप्त होगी।]' ”

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

श्रीमान, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं नियम 38-दद को भी उपस्थित करना चाहती हूं। वह इस प्रकार है:

"38-RR.(1) When the amendments to the Constitution referred to the Drafting Committee under sub-rule (1) of rule 38-R have been considered, any member may move that the Constitution as settled by the Assembly be passed, and to a motion so made no further amendment shall be allowed to be moved.

Passing of the Constitution.

(2) The President may fix a time-limit for speeches during the debate on a motion made under sub-rule (1).

(3) The President may in relation to any proceedings in connection with the passing of the Constitution under rule 38-R or this rule relax or suspend any of these rules.

['38-दद (1) जब नियम 38-द के उपनियम (1) के अधीन मसौदा-समिति को भेजे हुए संविधान-संबंधी संशोधनों पर विचार हो गया हो तब कोई भी सदस्य यह प्रस्ताव उपस्थित कर सकता है कि सभा ने संविधान को जिस रूप में निश्चित किया है उस रूप में वह पारित किया जाये और इस प्रकार उपस्थित किए हुए प्रस्ताव के संबंध में अन्य किसी संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जायेगी।

संविधान का पारण

(2) अध्यक्ष उपनियम (1) के अधीन उपस्थित किए हुए प्रस्ताव पर होने वाले वाद-विवाद में भाषणों के लिये काल-सीमा निश्चित कर सकता है।

(3) अध्यक्ष नियम 38-द अथवा इस नियम के अधीन संविधान के पारण से संबंधित किसी कार्यवाही के बारे में इन नियमों में से किसी को विस्तृत या निलम्बित कर सकता है।]' "

अध्यक्ष महोदय, माननीय सदस्यों को यह विदित है कि अब हमने सौभाग्य से संविधान के मसौदे का द्वितीय पठन समाप्त कर दिया है। अब हमें तुरन्त ही संविधान के मसौदे का तृतीय पठन आरम्भ करना है और संभवत: हम उसे अगले महीने आरम्भ करें। इसलिये संविधान के मसौदे के तृतीय पठन की तथा संविधान को पारित करने की प्रक्रिया निश्चित करने की आवश्यकता है।

श्रीमान, मुझे आशा है कि यह सदस्यों के ध्यान में आ गया होगा कि इन नियमों की एक विशेषता यह है कि इन नियमों में जिस प्रक्रिया को निर्धारित किया गया है उसके अधीन मसौदा-समिति तृतीय पठन के अवसर पर मसौदे में आनुषंगिक

अथवा अन्य आवश्यक संशोधन कर सकेगी। इन नियमों की एक अन्य विशेषता यह है कि इसके अधीन सदस्य तृतीय पठन के अवसर पर मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तावित संशोधनों पर केवल रस्मी अथवा आनुषंगिक संशोधन कर सकेंगे। श्रीमान, इनके द्वारा अध्यक्ष को स्वविवेक से किसी भी संशोधन के लिए आज्ञा देने तथा भाषणों के लिये समय निश्चित करने की शक्ति तथा इस प्रकार की अन्य शक्तियां भी दी गई हैं।

श्रीमान, इस सभा के माननीय सदस्यों ने इस संबंध में जिन संशोधनों की सूचना दी है उनमें से पन्द्रह-बीस को मैंने देखा है। श्रीमान, इनमें से कुछ संशोधनों के संबंध में मैं उस समय बोलूंगी जब वे उपस्थित किये जायेंगे किन्तु उनमें से कुछ संशोधनों का उद्देश्य उस खंड को निकालना है जिसके अधीन अध्यक्ष भाषणों के लिये समय निश्चित कर सकेगा, अथवा उनका उद्देश्य यह है कि दो दिन पहले सूचना देने का नियम हटा दिया जाये और उसके स्थान पर सात दिन अथवा पांच दिन पहले सूचना देने का नियम रखा जाये।

श्रीमान, यह हम सबको को विदित है कि इस संविधान को बनाने में हमने पूरे दो वर्ष और दस महीने लगा दिये हैं। हम सभी जानते हैं कि इसका भारत के वित्तीय साधनों पर बहुत भार पड़ा है और इसलिये हमें लम्बे भाषण देकर, अथवा संविधान को पारित करने में ढील देकर, समय नष्ट नहीं करना चाहिये। संविधान को शीघ्र पारित करने के उद्देश्य से इन नियमों द्वारा राष्ट्रपति को कुछ शक्तियां दी गई हैं।

इसलिये श्रीमान, मैं माननीय सदस्यों से अपील करती हूं कि वे अपने संशोधनों को वापस ले लें अथवा उन पर मत लिये जाने पर जोर न दें और संविधान को आसानी से पारित होने दें। इन शब्दों के साथ मैं सभा से सिफारिश करती हूं कि मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाये। श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करती हूं।

***अध्यक्षः** इस संबंध में कई संशोधन हैं। मि. नज़ीरुद्दीन अहमद।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, इन नियमों के संबंध में दुर्भाग्य से मुझे कुछ संशोधन उपस्थित करने हैं। मैंने अपने संशोधनों की संख्या कम करने का बहुत प्रयास किया किन्तु मैं असफल रहा। श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-द और 38-दद में 'Constitution' (संविधान) शब्द जहां कहीं आया है उसके स्थान पर 'Draft Constitution' (संविधान का मसौदा) शब्द रखे जायें।"

यह एक रस्मी संशोधन है। मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं किः

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) में—(1) 'considered'—(विचार हो गया हो) शब्दों के स्थान पर 'considered and disposed of' (विचार हो गया हो और निबटा दिये गये हों) शब्द रखे जायें;

(2) 'amended' (संशोधित रूप में) शब्दों के स्थान पर 'amended by the Assembly' (सभा द्वारा संशोधित रूप में) शब्द रखे जायें;

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

(3) 'clauses' (खंडों) शब्द के स्थान पर 'articles, clauses and sub-clauses' (अनुच्छेदों, खंडों और उपखंडों) शब्द रखे जायें; और

(4) 'to recommend' (सिफारिश की जाये) शब्दों के स्थान पर 'to submit a report recommending' (सिफारिश करते हुए प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाये) शब्द रखे जायें।"

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) के पश्चात् यह नवीन उपनियम प्रविष्ट किया जाये:—

'(1a) The Draft Constitution as revised by the Drafting Committee under sub-rule (1) shall indicate by suitable typographical arrangements the changes and omissions made by the Committee.'

[(1क) उपनियम (1) के अधीन मसौदा-समिति ने संविधान के मसौदे को दुहरा कर जिस रूप में रखा हो उसमें समिति ने जो परिवर्तन किये हों, अथवा उससे जो शब्द निकाले हों वे उपयुक्त छपाई द्वारा दिखाये जायेंगे।]"

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (2) में 'After the Constitution has been referred to the Drafting Committee the report of the Committee' (संविधान को मसौदा-समिति के पास भेजने के पश्चात् समिति के प्रतिवेदन को) शब्दों के स्थान पर 'the report of the Drafting Committee' (मसौदा-समिति के प्रतिवेदन को) शब्दों को रखा जाये।"

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (2) में 'in the Constitution' (इन दी कांस्टीट्यूशन) शब्दों के स्थान पर 'to the Constitution' (टू दी कांस्टीट्यूशन) शब्द रखे जायें।"

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (2) के परन्तुक में 'three clear days' (पूरे तीन दिन) शब्दों के स्थान पर 'seven clear days' (पूरे सात दिन)' शब्द रखे जायें।"

श्रीमान, मैं अपने संशोधनों का उद्देश्य स्पष्ट करना चाहता हूं। मैं निवेदन कर चुका हूं कि पहला संशोधन केवल रस्मी संशोधन है। मेरे विचार से मसौदे की शुद्धि की दृष्टि से उसे स्वीकार कर लेना चाहिये।

अन्य संशोधनों के संबंध में कठिनाई यह है कि अधिकारियों के संशोधन हमें कल दिये गये और हमें अपने संशोधन दफ्तर में कल पांच बजे के पहले देने

पड़े। वे छाप कर आज प्रातः ही सदस्यों को दिये गये। इसलिये, मेरे विचार से, मसौदा-समिति के सदस्यों को, अथवा इन नियमों को प्रस्ताविका महोदया को, इन संशोधनों को पढ़ने और इनके उद्देश्य को समझने का समय नहीं मिला। मैं अपने संशोधनों की कुछ बातों की ओर उनका ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास करूंगा।

संशोधन संख्या 2 के पहले भाग का उद्देश्य यह है "विचार हो गया हो" शब्दों के पश्चात् "निबटा दिये गये हों" शब्द रखे जायें। यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो यह खंड इस प्रकार हो जायेगा:–

"........संविधान-संबंधी जो संशोधन उपस्थित किये गये हों उन पर विचार हो गया हो और निबटा दिये गये हों।"

वास्तव में उपनियम (1) उस स्थिति के संबंध में है जब द्वितीय पठन के अवसर पर संशोधनों पर न केवल विचार हो गया हो बल्कि वे निबटा भी दिये गये हों। उन्हें निबटाने के पश्चात् ही संविधान का मसौदा मसौदा-समिति के पास भेजा जायेगा। इसलिये इस संशोधन की आवश्यकता है।

मेरे अगले संशोधन का उद्देश्य यह है कि "संशोधित रूप में" शब्दों के स्थान पर "सभा द्वारा संशोधित रूप में" शब्द रखे जायें। संशोधन दो प्रकार के होंगे और इसलिये भ्रम होने की संभावना है। सभा जिन संशोधनों को करेगी और मसौदा-समिति जिन संशोधनों का सुझाव रखेगी उनमें विभेद करने की आवश्यकता है। इन शब्दों को प्रविष्ट करने का उद्देश्य वही है। इन्हें रखने से खंड इस प्रकार हो जायेगा–

"........संविधान को सभा द्वारा संशोधित रूप में"

और सभा द्वारा किये हुए संशोधनों में तथा मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तावित संशोधनों में विभेद हो जायेगा।

कुछ समय पश्चात् हम मसौदा-समिति को "खंडों" की पुनर्गणना करने का अधिकार देने जा रहे हैं। मेरा निवेदन है कि यद्यपि पुराने नियम में "खंड" शब्द आया है किन्तु वह इस संविधान के प्रसंग में उपयुक्त नहीं होगा। हम इसके अनुच्छेदों को अनुच्छेद ही कहते आये हैं और खंड नहीं कहते आये हैं। अभी तक "खंडों" का अभिप्राय अनुच्छेदों के खंडों से रहा है। किन्तु यहां "खंड" शब्द के प्रत्यक्षतः "अनुच्छेद" अभिप्रेत है। इसी कारण मैंने यह संशोधन रखा है ताकि इस नियम की शब्दावली इस प्रकार हो जाये:

"........अनुच्छेदों, खंडों और उपखंडों की पुनर्गणना की जाये।"

यह अधिक व्याकरण-संगत तथा विधि-संगत होगा।

मेरे अगले संशोधन, अर्थात् दूसरे संशोधन के चौथे भाग का उद्देश्य यह है कि "सिफारिश की जाये" शब्दों के स्थान पर "सिफारिश करते हुए प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाये" शब्द रखे जायें। इस संशोधन की बहुत आवश्यकता है क्योंकि उपनियम (2) में हमने दो स्थानों पर "प्रतिवेदन" शब्द प्रयोग किया है। मसौदा-समिति का

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

यह प्रतिवेदन अन्तिम प्रतिवेदन होगा किन्तु उपनियम (1) में हमने प्रतिवेदन को उपस्थित करने के संबंध में कोई उपबन्ध नहीं रखा है। हमने केवल यह कहा है कि:

"..........ऐसे रस्मी तथा आनुषंगिक अथवा अन्य संशोधनों की सिफारिश की जाये जिनकी आवश्यकता हो।"

मैं चाहता हूं कि इसकी शब्दावली इस प्रकार हो:

".........ऐसे रस्मी तथा आनुषंगिक अथवा अन्य संशोधनों की, जिनकी आवश्यकता हो, सिफारिश करते हुए प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाये।"

वास्तव में उपनियम (2) में दो स्थानों पर प्रयुक्त शब्दों का आशय स्पष्ट करने के लिये इस स्थान पर भी "प्रतिवेदन" शब्द प्रस्तुत होना चाहिये।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, मेरे अगले संशोधन का उद्देश्य है कि एक और उपनियम, अर्थात् उपनियम 1 (क) प्रविष्ट किया जाय जिसकी शब्दावली इस प्रकार हो:–

"उपनियम (1) के अधीन मसौदा-समिति ने संविधा के मसौदे को दुहरा कर जिस रूप में रखा हो उसमें समिति ने जो परिवर्तन किये हों, अथवा उससे जो शब्द निकाले हों, वे उपयुक्त छपाई द्वारा दिखाये जायेंगे।"

इसकी बहुत आवश्यकता दिखाई देती है। हमें आखिर मसौदा-समिति के दुहराये हुए संविधान के मसौदे पर विचार करना होगा और अपने संशोधनों का सुझाव रखना होगा। इसका निर्णय करने के लिये कि किन संशोधनों की आवश्यकता होगी हमें यह जानना होगा कि वास्तव में मसौदा-समिति ने किन संशोधनों को प्रस्तावित किया है। हमें विदित है कि मसौदा-समिति सभा में किस ढंग से काम करती रही है। संविधान के मसौदे में अपने संशोधनों को न दिखाकर वह अनुच्छेदों को नये सिरे से लिखकर हमारे सामने रखती रही है और सदस्यों को यह समझने में बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ा है कि वास्तव में कौन से परिवर्तन किये गये हैं। इससे सदस्यों को संविधान के मसौदे के अनुच्छेदों की प्रस्तावित अनुच्छेदों से बहुत सावधानी से तुलना करनी होती है और अकारण परिश्रम करना होता है। इसलिये, मेरे विचार से मसौदा-समिति ने संविधान को जो अन्तिम मसौदा तैयार किया हो उसमें जो परिवर्तन किये गये हों उन्हें दिखाया जाये ताकि सदस्यों का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट हो सके और यदि आवश्यकता हुई तो वे उनके संबंध में आनुषंगिक अथवा रस्मी संशोधनों का सुझाव रख सकें। इससे उनका काम सरल हो जायेगा। इसका प्रबन्ध बहुत आसानी से किया जा सकता है, अर्थात् जो कोई परिवर्तन किये जायें उन्हें टेढ़े अक्षरों में छापा जाये अथवा उनके नीचे रेखा खींच दी जाय। हाशिये पर रेखा खींचने से लाभ नहीं होगा। यदि कुछ शब्द निकाले जायें तो वहां पर सितारा लगाया जा सकता है। ये बातें बहुत आसानी से की जा सकती हैं और इनके कारण सदस्यों के लिये बहुत सुविधा हो जायेगी क्योंकि वे यह देख सकते हैं कि कौन से परिवर्तन किये गये हैं और तदन्तर अपने संशोधन प्रस्तुत कर सकते हैं।

खंड (2) के संबंध में मेरा निवेदन है कि उसके आरम्भ के शब्द बिल्कुल अनावश्यक हैं और उनके कारण एक हद तक भ्रम भी होता है। उसमें कहा गया है:

"संविधान को मसौदा-समिति के पास भेजने के पश्चात् समिति के प्रतिवेदन को... सभा में उपस्थित करेगा।"

इसमें एक महत्वपूर्ण कदम का उल्लेख नहीं किया गया है। संविधान को मसौदा-समिति को भेजने के पश्चात् मसौदा-समिति अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। इसलिये हमें यह स्पष्ट कर देना चाहिये कि मसौदा-समिति का प्रतिवेदन मिलने के पश्चात् वह सभा में उपस्थित किया जायेगा। इस कारण मैंने यह सुझाव रखा है कि इन प्रारम्भिक शब्दों को निकाल दिया जाये। इसे स्वीकार करने पर उपनियम (2) इस प्रकार हो जायेगा: "मसौदा-समिति के प्रतिवेदन को.... सभा में उपस्थित करेगा।" अपने संशोधन संख्या 2 के भाग (4) में मैं यह सुझाव रख चुका हूं कि "प्रतिवेदन" शब्द समाविष्ट किया जाये।

अब श्रीमान, मैं परन्तुक को उठाता हूं। मुझे इस संबंध में एक बहुत बड़ी शिकायत है और वह यह है कि इस परन्तुक में यह उपबन्धित करने का प्रयास किया गया है कि मसौदा-समिति के दुहराये हुए संविधान के मसौदे को उस पर विचार करने के दिन से पूरे तीन दिन पहले सदस्यों के पास भेजा जायेगा। श्रीमान, इतने थोड़े समय में किसी भी माननीय सदस्य के लिये संविधान के दुहराये हुए मसौदे को पढ़ना तथा उसके संबंध में संशोधन प्रस्तुत करना बहुत कुछ असंभव ही होगा। श्रीमान, आप कृपा करके देखें कि सदस्यों को संविधान के मसौदे पर विचार करने के लिये केवल तीन दिन दिये गये हैं जबकि उपनियम (5) में यह उपबन्धित है कि हमें अपने संशोधनों की सूचना पूरे दो दिन पहले दे देनी चाहिये।

यदि हम संविधान पर 14 नवम्बर से विचार करना आरम्भ करेंगे तो हमें संविधान का मसौदा 10 नवम्बर को अर्थात् पूरे तीन दिन पहले मिलेगा और हमें अपने संशोधन 11 नवम्बर को अर्थात् पूरे दो दिन पहले भेज देने होंगे। इसलिये यह स्प्ष्ट है कि हमें प्रतिवेदन को पढ़ने, संशोधनों को तैयार करने और उन्हें सूचनालय को भेजने के लिये केवल एक दिन मिलेगा इससे बहुत सी अनर्गल बातें पैदा हो जायेंगी। मेरा निवेदन है कि इस नियम को इस रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। आप कृपया विचार करें कि 14 तारीख को सभा में उपस्थित होने के लिए हमें 10 नवम्बर को अपने-अपने स्थानों से रवाना होना होगा और प्रस्ताव यह है कि 10 नवम्बर को मसौदा-समिति के दुहराये हुए संविधान के मसौदे को सदस्यों के पास भेजा जायेगा। 10 नवम्बर को हम सड़क से, रेल से या आकाश से नई दिल्ली की यात्रा पर होंगे। मेरी समझ में नहीं आता कि 10 नवम्बर को संविधान के दुहराये हुए मसौदे की प्रतियां हमारे पास कैसे पहुंचेंगी। यदि वे हमारे घरों के पते से भेजी गईं तो उस समय तक हम अपने घरों से रवाना हो चुकेंगे और जब हम दिल्ली के मार्ग पर होंगे तो संविधान की प्रतियां हमारे घर के मार्ग पर होंगी। यदि वे 10 या 11 तारीख को हमारे दिल्ली के पते से भेजी गईं तो हमें संशोधनों को तैयार करने के लिये समय नहीं मिलेगा और न हम कार्यालय के विचारार्थ उन्हें दो दिन पूर्व सूचनालय ही को भेज सकेंगे।

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

यद्यपि मुझे मसौदा-समिति से इस कारण सहानुभूति है कि उसे अत्यधिक कार्य करना पड़ा है किन्तु साथ ही मैं यह भी बताना चाहता हूं कि सभा में कई लोगों की यह धारणा है कि वह समय-सारिणी का बिल्कुल भी अनुसरण नहीं कर पाई है। मसौदा-समिति का इरादा बार-बार बदलने के कारण ही उसके लिये अत्यधिक कार्य रहा है यद्यपि संभव है अन्य कारणों से भी देर हो गई हो किन्तु मेरा निवेदन है कि इस स्थिति का कुफल भोगने के लिये सदस्यों को विवश नहीं करना चाहिये। श्रीमान, मैं सभा से, तथा विशेषतया आपसे, पूछता हूं कि 10 तारीख को अन्तिम मसौदे की प्रति मिलने पर कोई भी सदस्य अपने संशोधनों को 11 तारीख को कैसे भेज सकेगा? इसलिये मेरा यह सुझाव है कि दुहराये हुए संविधान का अध्ययन करने के लिये, तथा अपने संशोधनों को भेजने के लिए, हमें सात दिन का समय दिया जाना चाहिये। क्या मैं यह सुझाव भी रख सकता हूं कि संविधान के अन्तिम मसौदे की प्रति के कारण हमें प्रत्येक अनुच्छेद के संबंध में प्रस्तुत किये हुए संशोधनों की एक तुलनात्मक सूची भी दी जाये ताकि हम संशोधनों का अध्ययन कर सकें और उन पर विचार करने के लिये तैयारी कर सकें।

मेरा यह सुझाव भी है कि संविधान के मसौदे को छपने के लिये भेजने के पूर्व उसकी साइक्लोस्टाइल की हुई प्रतियां तैयार की जायें और उन्हें उन सभी सदस्यों के पास भेजा जाये जो उन्हें देना चाहें। मुझे विश्वास है कि उनमें अधिक से अधिक छः सदस्यों की दिलचस्पी होगी। किन्त मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि यह सुविधा केवल इन थोड़े से सदस्यों को ही प्रदान की जाय। साइक्लोस्टाइल की हुई प्रतियां उन सभी सदस्यों के पास भेजी जाये तो उनके लिये कहें। यदि यह सब किया गया तो मेरे विचार से हम यथासमय कार्य समाप्त कर सकते हैं। अन्यथा सदस्यों के लिये तैयारी करना तथा समय पर संशोधनों को भेजना बहुत कठिन हो जायेगा। वास्तव में मुझे तो यह दिखाई देता है कि यह सब कार्य समय पर समाप्त करना बहुत कुछ असंभव ही है। मुख्य प्रश्न यह है कि संविधान का अन्तिम मसौदा सदस्यों के पास किस स्थान पर और किस समय भेजा जाये ताकि उन्हें भी अपना योग देने के लिये समय मिले। मेरा निवेदन है कि इन नियमों को स्वीकार करने के पूर्व इन बातों पर विचार किया जाये।

मसौदा-समिति ने सदस्यों के लिये एक कठिनाई और खड़ी की है और वह यह है कि इन कठिन नियमों को उपस्थित करने के लिये उसने एक महिला सदस्य को चुना है।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान, इसका इस विषय से क्या संबंध है?

***अध्यक्षः** उन्हें चुना नहीं गया। उन्होंने इन नियमों को उपस्थित करने की इच्छा स्वयं प्रकट की।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** कठिनाई यह है कि हम उनके साथ सख्ती नहीं कर सकते। आखिर किसी महिला सदस्य से व्यवहार करने में कुछ शिष्टता का परिचय देना ही पड़ता है। तथ्य यह है कि मसौदा-समिति ने अपने पक्ष के प्रतिपादन के लिए एक महिला को आगे बढ़ाया है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** माननीय सदस्य महोदय को मैं बताना चाहती हूं कि मैंने इस प्रस्ताव को अपनी इच्छा से उपस्थित किया है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** माननीय प्रस्ताविका से मैं इस संबंध में विवाद नहीं करना चाहता। ये संशोधन मसौदा-समिति की ओर से प्रस्तुत किये गये हैं। मसौदा-समिति ने साम्यवादियों की प्रणाली अपनाई है जो महिलाओं को आगे करके लड़ते हैं ताकि दूसरे पक्ष के लिये उन पर प्रहार करना असंभव हो जाये।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं अपनी माननीय मित्र श्रीमती दुर्गाबाई के इस विचार से सहमत हूं कि संविधान को शीघ्र पारित किया जाये। किन्तु मैं उनके एक विचार से असहमत हूं। उन्होंने कहा कि संविधान के निर्माण से देश को बहुत वित्तीय भार उठाना पड़ा। मैं यह जानता हूं कि हमने कुछ धन व्यय किया है। सभा को स्मरण होगा कि विधान-सभा ने 1946 में अथवा 1947 के आरभ में संविधान सभा के लिये अपने आयव्यक में एक करोड़ रुपया अलग रखा। पिछले सत्र में किसी समय इस सभा में या बाहर यह कहा गया था कि दो करोड़ से अधिक रुपया व्यय किया जा चुका है। जब मैंने यह सुना तो मैंने स्वयं हिसाब लगाया और मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि केवल साठ सत्तर लाख के लगभग खर्च हुआ है। मैं केवल इस सभा के संविधान निर्माण के कार्य के बारे में यह कह रहा हूं और इस सभा के विधाई कार्य के संबंध में कुछ नहीं कह रहा हूं। यदि आप विधानसभा के सत्रों को भी अपने हिसाब में सम्मिलित करें तो संभवत: व्यय की हुई राशि अधिक निकलेगी। किन्तु आयव्ययक में संविधान-निर्माण के लिये जो राशि रखी गई थी उसमें यह राशि सम्मिलित नहीं है। यदि बहुत बड़ी राशि भी व्यय हुई है तो मेरे विचार से इसके लिये इस सभा के सदस्यों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

सभा को स्मरण होगा कि जनवरी 1947 से लेकर अक्तूबर 1948 तक सभा को दो वर्षों में अधिक से अधिक 35 या 40 दिन के लिये समवेत् हुई। कोई न कोई कारण ऐसा आ गया कि मसौदा-समिति सामग्री तैयार नहीं कर सकी और 22 महीनों में हम केवल 40 दिन सम्मिलित हो सके। यदि हम अधिक समय तक कार्य करते और शीघ्र सत्र करते तो हम संविधान को बहुत पहले पारित कर दिये होते। आज भी संविधान को बिना समझे बूझे बहसों को कम करके पारित नहीं करना चाहिये। यदि उन्हें कम करना पड़े तो तर्कपूर्ण ढंग से कम करना चाहिये। इस उद्देश्य को आवश्यकतानुसार अधिक समय तक काम करने से पूरा करना चाहिये। हमने इसका अनुभव बहुत देर में किया है। यदि 1947 में अथवा 1948 में हम अधिक समय तक काम किये होते तो अभी तक हम इस संविधान को पारित कर चुके होते। मैं सदा रात्रि की बैठकों के पक्ष में रहा हूं। यदि हम प्रात: मध्याह्न तथा रात्रि को कार्य करें तो मुझे विश्वास है कि हम लगभग एक सप्ताह में अपना कार्य समाप्त कर सकते हैं। अब जब हम संविधान को समाप्त करने को हैं और जब तृतीय पठन आरम्भ करने में केवल कुछ दिनों ही की देर है, इस प्रकार के सुझाव से कोई लाभ नहीं होगा। मैं अपनी माननीय मित्र श्रीमती दुर्गाबाई को बताना चाहता हूं कि उन्होंने यह एक गलत बात कही है कि यह सभा देश का बहुत धन व्यय करने के लिये उत्तरदायी है। इसका दोष इस सभा पर नहीं है।

[श्री एच.वी. कामत]

कई परिस्थितियों के कारण तथा अन्य कारणों से भी यह धन व्यय हो गया। मेरे विचार से यह कोई बड़ी धन-राशि नहीं है। संविधान निर्माण के लिये आयव्ययक में जो राशि अलग रखी गई थी उससे अधिक धन हमने व्यय नहीं किया है।

श्रीमान, अब मैं अपने संशोधनों को उठाता हूं। श्रीमान, मेरे नाम से छः संशोधन हैं। श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (4) में 'which is either formal or consequential upon' (किसी रस्मी संशोधन को अथवा किसी ऐसे संशोधन के आनुषंगिक संशोधन को) शब्दों के स्थान पर 'to' (किसी ऐसे संशोधन के संशोधन को) शब्द रखे जायें।"

यदि इस संशोधन को सभा स्वीकार कर लेगी तो यह उपनियम इस प्रकार हो जायेगा:

"उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव के पारित होने के पश्चात्, कोई भी सदस्य किसी ऐसे संशोधन के संशोधन को उपस्थित कर सकता है जिसकी मसौदा-समिति ने उसके पास उपनियम (1) के अधीन संविधान भेजे जाने पर किसी उपबन्ध के संबंध में सिफारिश की हो, किन्तु उसे किसी अन्य संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जायेगी।"

यह संशोधन इस कारण उपस्थित किया गया है: श्रीमती दुर्गाबाई ने सभा के समक्ष जो योजना रखी है उसके अनुसार द्वितीय पठन के पश्चात् संविधान पर मसौदा-समिति विचार करेगी और जब कभी तृतीय पठन होगा तब उसे सभा में उपस्थित करेगी। मेरे विचार से तृतीय पठन आरम्भ करने से तीन दिन पूर्व संविधान का मसौदा सदस्यों के पास भेज दिया जायेगा। मैं इसे बिल्कुल स्वीकार करता हूं कि मसौदा-समिति में बुद्धिमान लोग हैं जो अपने विषय के विशेषज्ञ हैं और वास्तव में बहुत ज्ञानवान विशेषज्ञ हैं, किन्तु मुझे विश्वास है कि सभी मेरे इस विचार से सहमत होगी कि यह बात नहीं है कि वे गलती कर ही नहीं सकते। समय के अभाव के कारण, अथवा अत्यधिक कार्य होने के कारण, वे भी कुछ बातों की, अथवा संविधान के कुछ अनुच्छेदों की, या खंडों की, उपेक्षा कर सकते हैं। इसलिये जो बातें रह गई हों उन्हें रखने की ओर जो दोष रह गये हों उन्हें दूर करने की आवश्यकता पड़ सकती है। यदि संविधान के किसी अध्याय अथवा उप-अध्याय पर ध्यान देने के पश्चात् कुछ सदस्यों को यह दिखाई दे कि उसमें कुछ दोष अथवा कमी रह गई है, अथवा कोई बात छूट गई है, तो क्या यह उचित नहीं है कि उन्हें सभा में किसी संशोधन को प्रस्तुत करने, अथवा किसी संशोधन में रूप-भेद करने का अवसर दिया जाये?

मेरे माननीय मित्र श्रीमती दुर्गाबाई यह तर्क उपस्थित कर सकती हैं कि मसौदा-समिति के संशोधनों को सभा में तृतीय पठन के लिये उपस्थित करने के पूर्व सदस्य मसौदा-समिति के सम्पर्क में आ सकते हैं किन्तु यह भी हो सकता है कि वे पहले ही दिन यहां पहुंचे, अथवा जिस दिन संविधान का तृतीय पठन आरम्भ किया जाये उस दिन प्रातः ही यहां पहुंचे और उन्हें मसौदा-समिति के सम्पर्क में आने के लिए और उसके सामने अपना दृष्टिकोण रखने के लिये समय ही नहीं मिले। अपना मत लिखकर डाक द्वारा द्वारा भेजने का कोई अर्थ नहीं होगा

क्योंकि जब तक कोई व्यक्ति मसौदा-समिति से स्वयं विचार-विमर्श नहीं करेगा तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि लिखने से उसका दृष्टिकोण स्पष्ट हो जायेगा। यदि सदस्य उसके सम्पर्क में नहीं आ सके तो क्या उनकी बात सुनी ही नहीं जायेगी? इसी कारण श्रीमान, मैंने यह संशोधन उपस्थित किया है ताकि उन सदस्यों को, जिन्हें संविधान को सावधानी से पढ़ने के पश्चात् यह दिखाई दिया हो कि उसके किसी भाग में त्रुटियां हैं, अथवा कुछ बातें रह गई हैं, सभा में अपने संशोधन उपस्थित करने का अवसर मिले। श्रीमान, आप किसी भ्रामक अथवा अनावश्यक संशोधन को अनियमित घोषित कर ही सकते हैं और सभा को आपके निर्णय पर पूर्ण विश्वास है। यदि कोई सदस्य कोई ऐसा संशोधन उपस्थित करे जो अनावश्यक, अथवा अप्रासंगिक, अथवा भ्रामक अथवा अनर्गल हो तो, सभा को यह विदित है, उसके प्रस्ताव को आपका निर्णय शिरोधार्य होगा। आपके अधिकारों, विशेषाधिकारों और शक्तियों में हस्तक्षेप करने का कोई अर्थ नहीं होगा। आप श्रीमान, स्वविवेक से किसी भी संशोधन को अनियमित घोषित कर सकते हैं। इसलिये नियम 38-द के इस उपनियम (4) की कोई आवश्यकता नहीं है।

मेरा अगला संशोधन इस सूची का आठवां संशोधन है। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (6) में से 'and it shall not be necessary for the President to put each of those amendments separately to vote' (और अध्यक्ष के लिये यह आवश्यक नहीं होगा कि वह उन संशोधनों में से प्रत्येक संशोधन पर पृथक् मत ले) शब्द निकाल दिये जायें।"

मैंने अभी जो संशोधन किया था उसके फलस्वरूप ही यह संशोधन उत्पन्न होता है। श्रीमती दुर्गाबाई ने जो उपनियम उपस्थित किया है उसमें यह उपबन्धित है कि मसौदा-समिति द्वारा उपस्थित संशोधनों पर मत लेने के लिये उन्हें सभा के सामने एक साथ रखा जा सकता है। श्रीमान मैं अपने पहले संशोधन के संबंध में निवेदन कर चुका हूं कि सदस्यों को संशोधन उपस्थित करने का अधिकार दिया गया है और उन्हें दृष्टि में रखकर सभा यह निर्णय करती है कि मसौदा-समिति ने जिस संशोधन की सिफारिश की है उसमें रूप-भेद किया जा सकता है या नहीं। एक साथ उन पर मत लेने से कठिनाई उठ खड़ी होगी। यदि उन संशोधनों को सभा ने संशोधित नहीं किया हो तो उन पर एक साथ मत लिया जा सकता है। किन्तु यदि कुछ संशोधनों में सभा ने रूप-भेद कर लिया हो तो उन पर पृथक् मत लेने के अतिरिक्त और चारा ही क्या है? यह संभव है कि माननीय सदस्यों ने जिन संशोधनों को उपस्थित किया हो उनके द्वारा कुछ संशोधनों में रूप-भेद हो गया हो और सभा ने उन्हें उस रूप में स्वीकार किया हो।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ क्या मैं अपने माननीय मित्र को यह प्रक्रिया समझा सकता हूं? वही प्रक्रिया अपनाई जायेगी जिसका सभा प्रवर समिति के प्रतिवेदन पर विचार करते समय अनुसरण करती है। प्रवर समिति के प्रतिवेदन के भाग नहीं किये जाते और उसे एक पूर्ण प्रतिवेदन समझा जाता है। यदि सदस्य कोई संशोधन उपस्थित करते हैं और वह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो वह संशोधन समाविष्ट कर लिया जाता है। अन्यथा प्रवर समिति का प्रतिवेदन उसी प्रकार रहता है। यहां भी उसी प्रकार की प्रक्रिया अपनाई गई है।

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे विचार से इस उपनियम में इस आकस्मिक स्थिति के संबंध में उपबन्ध नहीं है। यदि मैं इस उपनियम को ठीक समझ पाया हूं तो, मेरे विचार से, इसमें उस स्थिति के संबंध में उपबन्ध नहीं हैं जब माननीय सदस्यों के संशोधनों को स्वीकार कर ले और इसके परिणामस्वरूप मसौदा-समिति के संशोधनों में रूप-भेद हो जाये। उप-नियम (6) में यह कहा गया है कि मसौदा-समिति ने जिन संशोधनों की सिफारिश की हो वे सब उपस्थित किये गये समझे जायेंगे और अध्यक्ष के लिये यह आवश्यक नहीं होगा कि वह उन संशोधनों में से प्रत्येक संशोधन पर पृथक् मत ले। मैं कह नहीं सकता कि जब मैंने अपना पहला संशोधन उपस्थित किया था और सभा के समक्ष अपना दृष्टिकोण रखा था तो उस समय मेरे माननीय मित्र यहां उपस्थित थे या नहीं। मैंने उसके द्वारा यह सुझाव प्रस्तुत किया था कि मसौदा-समिति की सिफारिशों पर किस प्रकार के भी संशोधनों को उपस्थित करने की आवश्यकता हो, चाहे वे आनुषंगिक हों या रस्मी हों या अन्य प्रकार आवश्यक हों, उन्हें उपस्थित करने का अधिकार प्रत्येक सदस्य को दिया जाना चाहिये। यदि मसौदा-समिति के संशोधनों में, माननीय सदस्यों के संशोधनों के स्वीकृत होने के फलस्वरूप रूप-भेद हो गया हो तो मसौदा-समिति के संशोधनों पर एक साथ मत नहीं लिया जा सकता। उन संशोधनों के समूहों को उठाना होगा और जिन संशोधनों में रूप-भेद हो जायेगा उन पर पृथक् मत लेना होगा। संशोधन संख्या 8 का उद्देश्य यही है।

मेरा संशोधन संख्या 9 इस प्रकार है:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (8) में से 'shall allot not more than two days for the consideration by the Assembly of all amendments after the motion referred to in sub-rule (2) has been carried and' [उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव के पारित होने के पश्चात्, सभी संशोधनों पर सभा के विचार करने के लिये दो दिन से अधिक नहीं देगा और] शब्द निकाल दिये जायें।"

यदि सभा इस संशोधन को स्वीकार कर लेगी तो यह उपनियम इस प्रकार हो जायेगा:

"अध्यक्ष, दिये हुए दिनों में से अन्तिम दिन को सभा की बैठक समाप्त करने के लिये उसने जो समय निश्चित किया हो उस समय, इत्यादि।"

श्रीमान, मुझे यह आशंका है, अथवा में यह कहूंगा कि यह मेरी धारणा है कि इस उप-नियम के पहले भाग से आपकी शक्तियों में अनुचित हस्तक्षेप होता है। मैं कह चुका हूं कि मैं सच्चे हृदय से इसके पक्ष में हूं कि अनावश्यक बहस तथा वाद-विवाद न हो और संविधान को शीघ्र पारित किया जाये। किन्तु क्या श्रीमान, यह आपकी शक्तियों का प्रश्न नहीं है और क्या इस विषय के संबंध में सभा अथवा उसका कोई भाग उन शक्तियों को छीन सकता है? यह अविवाद है कि आपको किसी बहस के लिये काल-सीमा निश्चित करने का अधिकार है। तब इस नियम में यह उल्लेख क्यों किया जाता है कि अध्यक्ष दो दिन से अधिक समय नहीं देगा? इस स्थान पर यदि "देगा" शब्द के स्थान पर "दे सकता है" शब्द

प्रयोग किये जाते तो वह अधिक शिष्ट भाषा होगी। क्या इस सभा के कार्य के संचालन के संबंध में अध्यक्ष को उच्चतम शक्ति प्राप्त नहीं है? वे सभा के कार्य का संचालन जिस प्रकार भी चाहें कर सकते हैं। यह कह कर कि वे दो दिन से अधिक समय नहीं देंगे उनके हाथ क्यों बांधे जा रहे हैं? इस संबंध में उन्हें स्वविवेक से निर्णय करने दिया जाये। यदि वे इसकी आवश्यकता समझें तो वे अवश्य ही तीन-चार दिन से भी अधिक समय दे सकते हैं। श्रीमान आपको स्मरण होगा कि नवम्बर 1948 में संविधान के प्रथम पठन के अवसर पर, बीमार पड़ने के पहले आप आरम्भ में संविधान के प्रथम पठन के लिये, अर्थात् डॉ. अम्बेडकर के प्रस्ताव पर विचार करने के लिये केवल दो दिन देना चाहते थे। बाद को आपने देखा कि सभा अधिक विचार करना चाहती है और इसलिये उस प्रस्ताव पर विचार करने के लिये आपने दो दिन और दे दिये। संभव है कि सभा के अधिकांश सदस्यों की यह इच्छा हो कि अधिक समय दिया जाये। श्रीमान, आपको जो शक्तियां दी गई हैं उनके द्वारा आप सभा के कार्य का नियमन करेंगे। इस नियम को आखिर रखा ही क्यों जा रहा है? इससे आपका निर्णय सीमित हो जायेगा। अथवा इससे अध्यक्ष में निहित शक्तियों का निराकरण हो जायेगा अथवा वे कम हो जायेंगी। यह मैंने तीसरे संशोधन के संबंध में कहा है। मैं चाहता हूं कि इस संबंध में निर्णय करने की शक्ति अध्यक्ष को दी जाये कि संशोधनों पर विचार करने के लिये तथा उन्हें निबटाने के लिये कितना समय रखा जाये। इस संबंध में अध्यक्ष की शक्तियों को सीमित करने की आवश्यकता नहीं है।

मैं अब संशोधन संख्या 10 को उठाता हूं जो इस प्रकार है:

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-दद का उप-नियम (2) निकाल दिया जाये।"

यह उपनियम नियम 38-दद के उपनियम (1) के अधीन उपस्थित किये हुए प्रस्ताव पर होने वाले वाद-विवाद में भाषणों के लिये काल-सीमा निश्चित करने के सम्बन्ध में है। मैं श्रीमती दुर्गाबाई का तथा इस सभा का ध्यान इस सभा द्वारा स्वीकृत नियमों के 34वें नियम की ओर दिलाता हूं जो इस प्रकार है: "सभा की प्रक्रिया तथा उसके कार्यसंचालन के सम्बन्ध में सभी मामलों में अध्यक्ष का निर्णय अन्तिम होगा।" मैं पूछता हूं कि क्या हमारे उद्देश्यों की पूर्ति के लिये यह पर्याप्त नहीं है? क्या एक अन्य नियम को, अर्थात् उपनियम (2) को, बनाने की अथवा पारित करने की आवश्यकता है? इस सभा के नियमों के इस 34वें नियम द्वारा अध्यक्ष को सभा के कार्य का अपनी इच्छानुसार नियमन अथवा संचालन करने के लिये पर्याप्त शक्ति प्रदान की गई है और उसमें यह उपबन्धित है कि इस सम्बन्ध में उसका निर्णय हमेशा अन्तिम निर्णय समझा जायेगा। नियमों में यह छोटी बात क्यों रखी जा रही है कि वह काल-सीमा निश्चित करेगा। यह शक्ति उसे स्वत: प्राप्त है। इस छोटी-सी बात को क्यों रखा जा रहा है? यह एक छोटी बात है। यह उनके कार्य-संचालन के ढंग में आ जाती है। श्रीमान, आपने कई अवसरों पर काल-सीमा निश्चिम की है और कार्य को शीघ्र समाप्त करने के लिये आप उसे फिर निश्चित करेंगे। इस उपनियम (2) की कोई आवश्यकता नहीं है। मेरे विचार से मसौदा-समिति के किसी सदस्य या किन्हीं सदस्यों की छोटी-छोटी बातें रखने की आदत के कारण सम्भवत: इसका यहां उल्लेख किया गया है। इस प्रकार के अनावश्यक विवरण से हमारे नियम तथा हमारा संविधान बोझल हो जायेगा। इसलिए, मेरे विचार से, इस उपनियम को निकाल देना चाहिये।

[श्री एच.वी. कामत]

अब मैं अपने संशोधन संख्या 11 को उठाता हूं। वह इस प्रकार है:

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-दद का उपनियम (3) निकाल दिया जाये।"

इस संशोधन के दो अंग हैं। पहले अंग के सम्बन्ध में मैं बोल चुका हूं। मैं सभा का ध्यान इस उपनियम की ओर दिलाता हूं जो इस प्रकार है: "अध्यक्ष नियम 38-द अथवा इस नियम के अधीन संविधान के पारण से सम्बन्धित किसी कार्यवाही के बारे में इन नियमों में से किसी को विस्तृत या निलम्बित कर सकता है।" यह एक हास्यास्पद और बिल्कुल ही अनावश्यक नियम है। श्रीमान, मैं यह कह चुका हूं कि सभा के कार्य का संचालन करने की शक्ति आपको स्वत: प्राप्त है और आप इस विषय का भी नियमन कर सकते हैं।

इस संशोधन का दूसरा अंग यह है। हम कई विषयों के सम्बन्ध में उपबन्ध रखते हैं और अन्तिम उपबन्ध में एकाएक कहते हैं कि इन नियमों के होते हुए भी सभी कुछ हो सकता है। हमने नियम 38 तथा 38-दद में कई विषयों के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे हैं और अन्त में हम यह कहते हैं कि अध्यक्ष इनमें से किसी नियम को विस्तृत या निलम्बित कर सकता है। जब यह कहा जाता है कि अध्यक्ष इन्हें विस्तृत कर सकता है तो इन नियमों को बनाया ही क्यों जाता है? क्या अध्यक्ष स्वविवेक से निर्णय नहीं कर सकता है? यह नियम बिल्कुल ही अनावश्यक है और इसे निकाल देना चाहिये।

मेरा संशोधन संख्या 12 अभी मैंने जिन संशोधनों को उपस्थित किया है उनका, अर्थात् संशोधन संख्या 10 और 11 का, आनुषंगिक संशोधन है। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:—

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-दद का उपनियम (1) नियम 38-द में उपनियम (10) के रूप में रखा जाये।"

नियम 38-दद का उपनियम (1) संविधान के तृतीय पठन के सम्बन्ध में है और उसमें यह उपबन्धित है कि कोई भी सदस्य यह प्रस्ताव उपस्थित कर सकता है कि सभा ने संविधान को जिस रूप में निश्चित किया है उस रूप में वह पारित किया जाये और इस प्रकार उपस्थित किये हुए प्रस्ताव के सम्बन्ध में अन्य किसी संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जायेगी। यह एक रस्मी उपबन्ध है और मेरे विचार से इसे नवीन नियम 38-दद में समाविष्ट करने की आवश्यकता नहीं है। नियम 38-द में जो उपबन्ध रखे गये हैं उनसे इसका आशय पूरा हो जाता है और इसकी आवश्यकता नहीं है कि इसे नियम 38-दद के एक उपबन्ध के रूप में पृथक् रूप से रखा जाये। ये सब नियम संविधान के अन्तिम पारण के सम्बन्ध में है। और इन विषयों के सम्बन्ध में नियमों की एक ही शृंखला पर्याप्त है। नियमों की दो शृंखलाओं की कोई आवश्यकता नहीं है।

अन्त में मैं केवल यह निवेदन करता हूं कि श्रीमती दुर्गाबाई के इस कथन से कोई भी असहमत नहीं हो सकता कि संविधान को शीघ्र पारित करना चाहिये। किन्तु यह एक गलत बात है कि विलम्ब के लिये इस सभा के सदस्यों को दोषी ठहराया जाये। इस सभा के सदस्य हमेशा इसके लिये इच्छुक रहे हैं कि इस संविधान को शीघ्र निबटा दिया जाये और बड़ी तत्परता से कार्य करते रहे हैं। सदस्यों ने संविधान पर अधिक काल तक वाद-विवाद जारी रखने पर कभी भी आपत्ति नहीं की। विलम्ब के लिये और चाहे कोई दोषी हो किन्तु इस सभा के सदस्य नहीं हैं। मैं यह नहीं बताना चाहता कि दोषी कौन हैं किन्तु यह कथन गलत है और अनुचित भी है कि इस सभा के सदस्य, चाहे वे कोई भी क्यों न हों, संविधान के पारण में विलम्ब करने तथा इस कारण हमारा बहुत धन व्यय करने के लिये दोषी हैं। इस संविधान को शीघ्र पारित करने के लिये हम अपनी पूरी योग्यता से सहयोग करते रहे हैं और जब थोड़े समय पश्चात् हमारा कार्य समाप्त हो जायेगा तो हमें प्रसन्नता होगी।

*__अध्यक्षः__ सभी संशोधन उपस्थित किये जा चुके हैं।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना__ (संयुक्त प्रान्त : जनरल): मैंने एक संशोधन की सूचना दी है।

*__अध्यक्षः__ मुझे कोई सूचना नहीं मिली है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः__ मैंने आज प्रातः सूचना दी थी।

श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-द के खण्ड (1) के अन्त में ये शब्द जोड़ दिये जायें:

'But the President shall have power to allow any other amendments to be moved according to his discretion.' (परन्तु अध्यक्ष को किन्हीं अन्य संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा स्वविवेक से देने की शक्ति प्राप्त होगी।)"

पहले नियम में हमने यह शब्द रखे हैं:

"जब यह प्रस्ताव कि संविधान पर विचार किया जाये पारित हो गया हो और संविधान-सम्बन्धी जो संशोधन उपस्थित किये गये हों उन पर विचार हो गया हो तब अध्यक्ष संविधान को, संशोधित रूप में, नियम 38-ठ के उपनियम (1) में निर्दिष्ट मसौदा-समिति के पास भेजेगा और आदेश देगा कि आवश्यकतानुसार खण्डों की पुनर्गणना की जाये, विरामों को फिर से लगाया जाये और हाशिये के लेखों को दुहराया जाये और पूरा किया जाये और संविधान सम्बन्धी ऐसे रस्मी अथवा आनुषंगिक अथवा अन्य संशोधनों की सिफारिश की जाये जिनकी आवश्यकता हो।"

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

श्रीमान, परिशिष्ट 1 में हमने कई ऐसी बातें रहने दी हैं जो उस समय तक बिल्कुल बदल जायेंगी जब हम तीसरे पठन के लिये यहां आयेंगे। सम्भव है कई प्रान्त मिल कर दो तीन प्रान्तों में ही परिणत हो जायें। मद्रास में सम्भव है केवल आंध्र और तामिलनाडु रहे और कर्नाटक के समान अन्य प्रान्तों का भी निर्माण हो जाये। यदि यह हुआ तो मसौदा-समिति को कुछ संशोधन उपस्थित करने पड़ेंगे। सदस्यों को भी इन संशोधनों पर विचार-विमर्श करने का अवसर मिलना चाहिये। इसलिये यह आवश्यक है कि अध्यक्ष को अन्य संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा स्वविवेक से देने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये। श्रीमान, हमें इसका पूरा विश्वास है कि आप केवल उन संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा देंगे जिनकी उन परिवर्तनों के कारण आवश्यकता होगी जो अब से लेकर अगले सत्र तक होंगे। इसलिये, मेरे विचार से, यह एक बहुत महत्वपूर्ण संशोधन है, क्योंकि यदि इसे स्वीकार नहीं किया गया तो उस समय तक प्रान्तों की सीमाओं में जो परिवर्तन होंगे उनके सम्बन्ध में विचार-विमर्श करने की आज्ञा अध्यक्ष सदस्यों को नहीं दे सकेगा। इसलिये मुझे आशा है कि मेरी बहिन श्रीमती दुर्गाबाई मेरे संशोधन को स्वीकार कर लेंगी और जो नये प्रान्त बनेंगे उनके सम्बन्ध में विचार-विमर्श करने का अवसर सदस्यों को प्रदान करेंगी।

मेरा दूसरा संशोधन इस प्रकार है:

"नियम 38-द के उपनियम (2) के परन्तुक में 'three clear days' (पूरे तीन दिन) शब्दों के स्थान पर 'five clear days' (पूरे पांच दिन) शब्द रखे जायें।"

मेरे मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने सात दिन का सुझाव रखा है। तीन दिन रखना एक अजीब बात है। यह कहा गया है कि प्रत्येक संशोधन की सूचना कम से कम पूरे दो दिन पहले दी जानी चाहिये। यदि नवीन संविधान की प्रतियां हमें सत्र आरम्भ होने के केवल तीन दिन पहले मिलीं तो उन्हें पढ़ने तथा संशोधनों को भेजने के लिये हमें केवल एक दिन मिलेगा। हमारे लिये यह सब करना असम्भव हो जायेगा। हमें कम से कम तीन दिन मिलने चाहियें। अच्छा तो यह होता कि हमें सात दिन दिये जाते किन्तु मैं जानता हूं कि इतना समय देना कठिन हो जायेगा। इसलिये मैं सात दिन दिये जाने के लिये जोर नहीं देता किन्तु मैं यह अवश्य चाहता हूं कि कम से कम पांच दिन जाने चाहियें।

श्रीमान, आपने बताया है कि संविधान का अन्तिम मसौदा इस महीने के अन्त तक छपने के लिये भेज दिया जायेगा और वह पांच या छः दिन में तैयार हो जायेगा जिससे पांच या छः नवम्बर तक छपी हुई प्रतियां उपलब्ध हो जायेंगी और फिर दो तीन दिन में वे सदस्यों के पास भेजी जा सकेंगी। यदि वे हमारे दिल्ली के पते से भेजी गईं तो सम्भवतः वे हमें उसी दिन मिल जायें किन्तु जो लोग उन्हें अपने घर पर चाहेंगे उन्हें वे तीन दिन में मिलेंगी। सदस्यों को कम से कम तीन या चार दिन मिल जायेंगे। इसलिये मेरे विचार से, इस स्थल पर तीन दिन के स्थान पर पांच दिन का उल्लेख होना चाहिये।

मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (3) में 'and at this stage' (और इस अवसर पर) शब्दों से आरम्भ होने वाले वाक्यांश से लेकर इस उपनियम के अन्त तक के शब्दों के स्थान पर यह रखा जाये:

'and at this stage the debates shall be controlled by the President according to his discretion' (और इस अवसर पर अध्यक्ष वाद-विवाद पर स्वविवेक से नियंत्रण रखेगा।)"

वर्तमान उपबन्ध बहुत ही अनुपयुक्त है। जब मसौदा-समिति किसी संशोधन को उपस्थित करे तो सदस्यों को उस पर अपना मत प्रकट करने का अधिकार होना चाहिये। हमने अध्यक्ष को स्वविवेक से निर्णय करके सदस्यों को बोलने की आज्ञा देने की शक्ति दी है। यदि कोई सदस्य किसी सारवान संशोधन का सुझाव रखे तो अध्यक्ष को उसे उपस्थित करने की आज्ञा देने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये। मुझे आशा है कि श्रीमती दुर्गाबाई इस संशोधन को स्वीकार कर लेंगी।

मेरा अगला संशोधन इस प्रकार है:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (6) में से 'and it shall not be necessary for the President to put each of those amendments separately to vote' (और अध्यक्ष के लिये यह आवश्यक नहीं होगा कि वह उन संशोधनों में से प्रत्येक संशोधन पर पृथक् मत ले) शब्द निकाल दिये जायें।"

यह संशोधन उपस्थित किया जा चुका है। मैं उसका केवल समर्थन करना चाहता हूं।

उचित यही है कि प्रत्येक संशोधन पर मत लिया जाये। इसमें अधिक समय नहीं लगेगा।

इसके अतिरिक्त मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करना चाहता हूं कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (4) के अन्त में यह जोड़ दिया जाये: 'except by the President according to his discretion' (उस दशा के अतिरिक्त जब अध्यक्ष ने स्वविवेक से आज्ञा दी हो)"

प्रस्तावित उपनियम 4 में कहा गया है कि:

"उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव के पारित होने के पश्चात्, कोई भी सदस्य किसी रस्मी संशोधन को अथवा किसी ऐसे संशोधन के आनुषंगिक संशोधन को उपस्थित कर सकता है जिसकी मसौदा-समिति ने उपनियम (1) के अधीन

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

उसके पास संविधान भेजे जाने पर किसी उपबन्ध के सम्बन्ध में सिफारिश की हो, किन्तु उसे किसी अन्य संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जायेगी।"

मैंने यह सुझाव रखा है कि इसमें "उस दशा के अतिरिक्त जब अध्यक्ष ने स्वविवेक से आज्ञा दी हो" शब्द जोड़ दिये जायें। इसके फलस्वरूप सारवान संशोधन भी उपस्थित किये जा सकेंगे, यद्यपि वे अध्यक्ष के स्वविवेक से आज्ञा देने पर ही उपस्थित किये जा सकेंगे। सम्भव है कि संशोधन केवल आनुषंगिक अथवा रस्मी ही न हों और ऐसे संशोधन भी हों जो सारवान हों। इसलिये अध्यक्ष को उन्हें भी उपस्थित करने की आज्ञा देने की शक्ति प्रदान करनी चाहिये। मैं इस संशोधन द्वारा सदस्यों को कोई अधिकार नहीं दे रहा हूं। किन्तु अध्यक्ष को स्वविवेक से निर्णय करने की शक्ति प्रदान कर रहा हूं। मुझे आशा है कि इस संशोधन पर आपत्ति नहीं की जायेगी।

इसके अतिरिक्त प्रस्तावित नियम 38-दद के सम्बन्ध में भी मैं दो संशोधन उपस्थित करना चाहता हूं। उपनियम दो में यह प्रस्तावित किया गया है कि "अध्यक्ष उपनियम (1) के अधीन उपस्थित किये हुए प्रस्ताव पर होने वाले वाद-विवाद में भाषणों के लिये काल-सीमा निश्चित कर सकता है।" इसका अर्थ यह है कि सब संशोधनों को निबटाने के पश्चात् तृतीय पठन के अवसर पर काल-सीमा निश्चित की जायेगी। अच्छा तो यह होता कि कोई काल-सीमा नहीं रखी जाती किन्तु यह सम्भव नहीं है। इसलिये अपने संशोधन में मैंने यह सुझाव रखा है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-दद के उपनियम (2) के स्थान पर यह रखा जाये:

'(2) Members desirous of participating in the debate on a motion made under sub-rule (1) shall notify their names to the President at least 36 hours before the motion is made and the President may fix a time limit on the duration of speeches on the motion after receiving all such names, but the time limit shall not be less than 40 minutes. The President shall have power to give longer time to any speaker in exceptional circumstances, and he may also order a speaker to cut short his speech according to his discretion.'

[(2) उपनियम (1) के अधीन उपस्थित किये गये प्रस्ताव पर होने वाले वाद-विवाद में जो सदस्य भाग लेना चाहेंगे वे प्रस्ताव उपस्थित होने से कम से कम 36 घंटे पूर्व अपने नामों की सूचना अध्यक्ष को देंगे

> और अब अध्यक्ष को ये सब नाम मिल जायेंगे तब वह भाषणों की काल-सीमा निश्चित करेगा किन्तु वह काल-सीमा 40 मिनट से कम की नहीं होगी। विशेष स्थिति में अध्यक्ष किसी वक्ता को अधिक समय दे सकेगा और वह किसी वक्ता को स्वविवेक से यह आदेश भी दे सकेगा कि वह अपने भाषण को शीघ्र समाप्त करे।]"

श्रीमान, मैं केवल यह चाहता हूं कि जो सदस्य वाद-विवाद में भाग लेना चाहें उन्हें इसके लिये अवसर मिलना चाहिये। प्रस्ताव उपस्थित करने के 36 घंटे पूर्व उन्हें अपने नाम भेजने का अवसर मिलना चाहिये। इससे श्रीमान, आपको विदित हो जायेगा कि कौन से सदस्य विचार-विमर्श में भाग लेना चाहते हैं। मेरा यह सुझाव है कि प्रत्येक वक्ता को कम से कम 40 मिनट दिये जाने चाहिये क्योंकि उसे पूरे संविधान के सम्बन्ध में बोलना होगा। आप यदि यह देखें कि कोई सदस्य महत्वपूर्ण तर्क उपस्थित कर रहा है अथवा सभा का समय नष्ट कर रहा है तो आप स्वविवेक से उसे अधिक समय दे सकते हैं, अथवा कम समय दे सकते हैं किन्तु जो कोई व्यक्ति वाद-विवाद में भाग लेना चाहे उसे उसके लिए अवसर मिलना चाहिये। यदि मेरा सुझाव स्वीकार कर लिया गया तो किसी को कोई शिकायत नहीं रहेगी। आपको यह विदित होगा कि कितने वक्ता भाग लेंगे और आप उसके अनुसार समय देंगे। इस प्रकार वाद-विवाद यथोचित रूप से हो सकेगा।

इसके अतिरिक्त मैंने खण्ड (2क) में यह भी कहा है कि:

> " 'The President shall have power to extend the duration of the daily sittings of the Assembly' (अध्यक्ष को सभा के प्रतिदिन की बैठकों के समय को बढ़ाने की शक्ति होगी।)"

इस समय हम प्रातः तीन घंटे बैठते हैं और दोपहर के पश्चात् केवल दो घंटे बैठते हैं और उसका कारण यह है कि हमारे दल की बैठकें होती हैं और अन्य बैठकें भी होती हैं। किन्तु अन्तिम पठन अर्थात् तृतीय पठन आरम्भ करने तक यह सब समाप्त हो जायेंगी और कोई कारण नहीं है कि हम अधिक समय तक नहीं बैठ सकें। श्रीमान, यह हम सभी को विदित है कि कामन्स सभा की बैठकें नौ दस घंटे तक होती हैं। यदि हम निश्चित समय में अपना संविधान समाप्त कर देना चाहते हैं तो हमें अपनी बैठकों का समय बढ़ाना चाहिये और आवश्यकता होने पर आठ या दस घंटे तक भी बैठना चाहिये। मैं चाहता हूं कि आपको यह शक्ति प्राप्त हो जाये ताकि आप बैठकों के समय को बढ़ा सकें। आपको विदित होगा कि वाद-विवाद में कितने वक्ता भाग लेंगे और आप इसका भी हिसाब लगा सकेंगे कि कितने समय की आवश्यकता होगी। इसे ध्यान में रखकर आप बैठकों का समय बढ़ा सकते हैं। मेरी इच्छा तो यह थी कि विधान सभा का सत्र 14 तारीख से आरम्भ होता और संविधान का अन्तिम पठन उसके पश्चात् आरम्भ किया जाता ताकि उसे पढ़ने के लिये, तथा छूटी हुई बातों तथा विराम आदि को देखने के लिये, हमें अधिक समय मिल जाता। किन्तु मुझे आशा है कि मसौदा-समिति शीघ्र कार्य में लग जायेगी और हमारे लिये सभी कुछ तैयार रखेगी।

श्रीमान, श्रीमती दुर्गाबाई के इस कथन से मुझे कुछ भी प्रसन्नता नहीं हुई कि हम इस कार्य पर बहुत धन नष्ट कर चुके हैं। पिछले तीन वर्षों में हमने जितने

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

भी कार्य किये हैं उनमें संविधान के निर्माण का कार्य सबसे महान है। हमने कितने ही जटिल प्रश्नों को हल किया है और उसे ध्यान में रखते हुए जितना समय लगा है और जितना धन व्यय हुआ है वह अधिक नहीं है। श्री कामत ने हमें बताया कि हमने इस संविधान पर लगभग 60, 70 लाख रुपया व्यय किया है। यह धन तीन वर्षों में व्यय हुआ है और यह कोई बड़ी धन-राशि नहीं है। अपने देश के इतिहास में आज प्रथम बार हम एक लोकतंत्रात्मक संविधान स्वीकार कर रहे हैं और देश के विभिन्न भागों को एक ही संघ में समाविष्ट करने में समर्थ हुए हैं। इसलिये मेरे विचार से इसमें जो समय लगा है और जो धन व्यय हुआ है वह नष्ट नहीं हुआ है। सब कार्य इन बैठकों में ही सम्पन्न नहीं हुआ है। बहुत सा काम इस सभा के बाहर मसौदा समिति ने समिति की बैठकों में किया है। मैं यह नहीं चाहता कि अब अन्त में हम किसी काम को जल्दी में करें ताकि हमारे विरोधी यह न कह सकें कि हमने संविधान जल्दी में पारित किया है। इसलिये मेरा निवेदन है कि मेरे संशोधनों की आवश्यकता है और मुझे आशा है कि श्रीमती दुर्गाबाई उन्हें स्वीकार कर लेंगी।

*__डॉ. बी. पट्टाभी सीतारमय्या__ (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, अब हम अपनी यात्रा की अन्तिम मंजिल के निकट आ पहुंचे हैं। जब रेलगाड़ी सीधी पटरियों पर चलती है तो वह नियमित ढंग से चलती है और अधिक से अधिक तेज चलकर फिर रुक जाती है। रेलवे स्टेशन के निकट आने पर उसे टेढ़ी-मेढ़ी पटरियों पर चलना होता है और उसके अगल-बगल भी पटरियां होती हैं तथा स्टेशन का सुपरिंटेंडेंट अपने कमरे में नकशे पर पटरियों के प्रत्येक जोड़ को देखता रहता है और वहां से गाड़ी को ठीक रास्ते पर रखता है। इसी दृष्टि से हम नियमों में प्रस्तावित परिवर्तनों को देखना है। हो सकता है कि वे रस्मी अथवा अनावश्यक प्रतीत हों किन्तु अब चूंकि हम अन्तिम मंजिल के निकट हैं इसलिये सदन के प्रत्येक सदस्य को उनकी ओर ध्यान देना चाहिये।

इस दृष्टि से मैंने उनकी शब्दावली की परीक्षा है। मेरे विचार से पैरा (1) में कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है। उसमें कहा गया है कि:

> "........और हाशिये के लेखों को दुहराया जाये और पूरा किया जाये और संविधान-सम्बन्धी ऐसे रस्मी अथवा आनुषंगिक अथवा अन्य आवश्यक संशोधनों की सिफारिश की जाये।"

"अन्य" और "आवश्यक" दोनों शब्दों के कारण मैं कुछ कठिनाई का अनुभव कर रहा हूं। इस स्थल पर "आवश्यक" शब्द जानबूझ कर रखा गया है। यदि उद्देश्य यह है कि अर्थ पूरा किया जाये तो "अन्य" शब्द से भिन्न अर्थ हो जाता है। इसलिये मेरा निवेदन है कि यदि आपका आशय "अथवा आवश्यक संशोधन" से है तो इस आवश्यकता का स्पष्ट शब्दों में वर्णन करना चाहिये। आवश्यकता अधिक भी हो सकती है और कम भी हो सकती है। यदि यह कहा जाये कि आवश्यकता के अन्तर्गत वे सब दशाएं आ जाती हैं जो मसौदे को मसौदा-समिति

के पास भेजने के पश्चात् उत्पन्न हुई हों तो इस शब्द से आशय पूरा हो जायेगा और संशोधन केवल रस्मी अथवा आनुषंधिक नहीं रह जायेगा। किन्तु "आवश्यक" शब्द का यह विस्तृत अर्थ करने में "अन्य" शब्द बाधक सिद्ध होता है। इसलिये श्रीमान, मैं चाहता हूं कि अध्यक्ष महोदय अथवा कोई सदस्य महोदय जो अधिकृत रूप से बता सकें हमें बतायें कि "आवश्यक" शब्द का क्या अर्थ है। यदि उसका अर्थ वही है जो मैंने किया है तो ठीक ही है किन्तु यदि वह अर्थ नहीं तो इस शब्द की आवश्यकता नहीं है। परन्तु यदि इसका वही अर्थ है तो "अन्य" शब्द को कृपा करके निकाल दिया जाये।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि नियमित रूप से मैंने किसी संशोधन की सूचना नहीं दी है। यह संशोधन सारवान तो है किन्तु है यह शाब्दिक ही। मुझे विश्वास है कि इन नियमों की प्रस्ताविका इसे स्वीकार कर लेंगी।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, अपनी माननीय मित्र श्रीमती दुर्गाबाई के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए मैं अपने माननीय मित्र मि. नजीरुद्दीन अहमद की एक दो आलोचनाओं का उत्तर देना चाहता हूं। यद्यपि, मैं देखता हूं कि वे सभा में उपस्थित नहीं हैं।

श्रीमान, संचालन समिति ने नियमों में इस संशोधन का प्रस्ताव इस उद्देश्य से किया है कि तृतीय पठन के अवसर पर सभा का कार्य शीघ्रता से तथा सुविधा के साथ हो और अनावश्यक रूप से वाद-विवाद में भी किसी प्रकार का निर्बन्धन न लगे। श्रीमान, तृतीय पठन के अवसर पर समय का बहुत महत्व होगा। हमें आशा है कि आप सम्भवत: 14 नवम्बर से ही सत्र आरम्भ करने का निर्णय करेंगे। इस दशा में हमें 26 नवम्बर तक संविधान का तृतीय पठन समाप्त कर देना होगा क्योंकि इस सभा की बैठक अन्यत्र 28 नवम्बर से होने जा रही है। तृतीय पठन के लिये कार्यक्रम निश्चित करने में इन सभी बातों की ओर ध्यान दिया गया है। इसलिये मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तावित रस्मी संशोधनों को स्वीकार करने के समान प्रारम्भिक कार्यों के लिये कुछ ही दिन रखे गये हैं। मसौदा-समिति को संविधान को दुहरा कर उसकी एक साफ प्रति भी तैयार करनी होगी। नियम 38-द के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किया गया है उसके द्वारा यह परिसीमन रखने का प्रयास किया गया है।

इस प्रकार के किसी विषय के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय आप ही को करना चाहिये, भले ही नियमों में हम यह निर्धारित कर दें कि इतने दिन दिये जाने चाहियें। इस विषय के सम्बन्ध में आप ही स्वविवेक से अन्तिम निर्णय करेंगे। स्वविवेक से निर्णय करने की शक्ति नियम 38-दद से और भी बढ़ जाती है। इसका निर्णय आप ही करेंगे कि नियम में जितना समय रखा गया है उतना ही दिया जाये अथवा अधिक समय दिया जाये। स्वविवेक से निर्णय करने की आपकी शक्ति को सीमित करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। किन्तु मेरे विचार से हमें एक कार्यक्रम के अनुसार, एक योजना के अनुसार, कार्य करना चाहिये। इस समय हमारे ध्यान में यह योजना आई है कि संविधान की एक साफ प्रति बनाने में मसौदा-समिति हमारे सामने जिन प्रारम्भिक परिवर्तनों को रखे उन पर विचार-विमर्श करने के लिये हमें कुछ दिन अलग रखने चाहियें और फिर तृतीय पठन के भाषण आरम्भ करने चाहियें जिनको इस सभा के सदस्य बहुत महत्व देते हैं।

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि जब तक तृतीय पठन आरम्भ किया जायेगा तब तक इस सभा में सारे देश का पूर्ण प्रतिनिधित्व हो जायेगा और उस समय हमारे इस कार्य की प्रशंसा होगी क्योंकि वह एक ऐसा कार्य है जो पीढ़ियों तक स्थाई रहेगा। इस कार्य में जिन माननीय सदस्यों का हाथ रहा है वे अवश्य ही बोलना चाहेंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि बहस करते समय हम स्वयं बता चुके हैं कि हमारे मार्ग में कौन-सी कठिनाइयां हैं और हमने एक प्रकार से उन लोगों के लिये इस मार्ग को प्रकाशित कर दिया है तो भविष्य में इस संविधान को प्रयोग में लायेंगे। इसलिये तृतीय पठन के अवसर पर वाद-विवाद के लिये जितने भी दिन अलग रखे जा सकें उतने अलग रखने चाहियें। यदि प्रारम्भिक बातों के लिये अधिक समय दिया गया तो तृतीय पठन के वाद-विवाद के लिये अधिक समय नहीं दिया जा सकेगा, यद्यपि बहुत से माननीय सदस्य उसमें भाग लेना चाहेंगे। इसलिये मेरे माननीय मित्र श्री कामत तथा प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना को इसे स्मरण रखना चाहिये, क्योंकि वे प्रारम्भिक वाद-विवाद के लिये अधिक समय रखना चाहते हैं।

श्री कामत ने एक बात कही है जिसे मैं अभी भी नहीं समझ पाया हूं, यद्यपि जब वे बोल रहे थे तो मैंने आपकी अनुमति से बीच में बोलकर उसकी व्याख्या की थी। जैसा कि मैंने उस समय उन्हें बताया था, इस स्थल पर यह कल्पना की गई है कि यदि आप इसके लिये सहमत हो गये कि सब कुछ मसौदा समिति के पास भेजा जाये और वह एक साफ प्रति तैयार करे, तथा आवश्यक आनुषंगिक संशोधनों को भी करे, और अन्य आवश्यक संशोधनों को भी करे, तो हम आशा करते हैं कि हम संविधान को तथा संशोधनों को पुस्तक रूप में निकाल सकेंगे और उसके साथ एक प्रतिवेदन भी जोड़ सकेंगे जिसमें, अथवा जिसके परिशिष्ट में, छोटे बड़े सभी परिवर्तनों की व्याख्या की जायेगी जिससे सभा सीधे-सीधे समझ सकेगी कि कौन से संशोधन किये गये हैं। यदि सदस्य यह देखेंगे कि वे इन संशोधनों को, अथवा इनमें से कुछ को, स्वीकार नहीं कर सकते तो वह संशोधन उपस्थित कर सकते हैं, किन्तु शर्त यह है कि आप यह समझें कि वे आवश्यक हैं और केवल मसौदे की शुद्धि के सम्बन्ध में अथवा भिन्न शब्दों में समान आशय के नहीं हैं। इस दशा में मसौदा समिति ने जो संशोधन उपस्थित किये हों वही पर्याप्त समझे जाने चाहियें। आप स्वयं इसका निर्णय करेंगे कि किन संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा दी जाये।

हमने जिस प्रक्रिया की कल्पना की है वह यह है कि जैसे पहले हमने संविधान के मसौदे पर विचार किया था वैसे ही हम इस पूरे मसौदे पर विचार करें और आपके विवेक के अधीन रहकर सदस्यों को संशोधन उपस्थित करने का अधिकार हो। उन संशोधनों के स्वीकार या अस्वीकार होने पर तदनुसार कार्यवाही होगी। यदि कोई संशोधन उपस्थित नहीं किये गये तो मसौदा समिति का प्रस्ताव बिना संशोधन के ही स्वीकार कर लिया जायेगा। इस दशा में जब कि इस सभा के सदस्यों का यह विचार हो कि मसौदा-समिति ने जिन परिवर्तनों का सुझाव रखा है और जिन्हें संविधान की साफ प्रति में समाविष्ट कर लिया गया है उन्हें स्वीकार कर लिया जाये और उनके विपरीत वे किन्हीं संशोधनों को उपस्थित न करें तो मसौदा

समिति के किये हुए प्रत्येक परिवर्तन पर मत लेकर निर्णय करने की प्रक्रिया का फिर अनुसरण करने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिये।

श्रीमान, हमारे आदरणीय नेता डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या ने जो प्रश्न उठाया है उसके सम्बन्ध में इस संशोधन का मसौदा तैयार करने वाले एक सदस्य के नाते मैं सभा से क्षमा चाहता हूं और यह निवेदन करता हूं कि हमने इसकी पूर्ण रूप से परीक्षा नहीं की है कि "अन्य" शब्द का क्या प्रभाव होगा। और मेरी अपनी यह धारणा है कि डॉक्टर महोदय का निर्वचन सही निर्वचन है। हमने "आवश्यक संशोधन" शब्द इस उद्देश्य से रखे कि मसौदा-समिति सभा के समक्ष जिस साफ प्रति को रखेगी उसमें यदि आप "आवश्यक संशोधनों" की आवश्यकता समझें तो आप "आवश्यक संशोधनों" को उपस्थित करने की आज्ञा दे सकते हैं। मेरा आपसे तथा सभा से अनुरोध है कि मेरे माननीय मित्र डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या का सुझाव स्वीकार कर लिया जाये और नियम 38-द के खण्ड (1) में प्रयुक्त "अन्य आवश्यक संशोधनों" पदावली में से "अन्य" शब्द निकाल दिया जाये।

जो अन्य संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनके गुण-दोषों पर मैं अपने विचार व्यक्त नहीं करना चाहता। मेरे विचार से उनके सम्बन्ध में मेरी माननीय मित्र श्रीमती दुर्गाबाई बोलेंगी। किन्तु मैं यह कहूंगा कि सम्भवत: मि. नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन संख्या 2 के अतिरिक्त, जिसमें मेरे मित्र ने "खण्ड" के स्थान पर "अनुच्छेद, खण्ड, और उपखण्ड" शब्द रखे हैं अन्य किसी संशोधन को स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं है। इस संशोधन से शब्दावली अवश्य अच्छी हो जाती है। इसके अतिरिक्त डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या ने भी जिस संशोधन का सुझाव रखा है उसे भी स्वीकार कर लिया जाये। मि. नज़ीरुद्दीन अहमद, श्री कामत और प्रो. सक्सेना ने जिन अन्य संशोधनों का सुझाव रखा है उन्हें स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। किन्तु यह मूल संशोधन की प्रस्ताविका की इच्छा पर निर्भर है कि वे मेरे सुझावों को स्वीकार या अस्वीकार करें। मुझे आशा है कि सभा यह अनुभव करेगी कि तृतीय पठन के लिये एक कार्यक्रम निश्चित करने की आवश्यकता है क्योंकि उस अवसर पर हमें सदस्यों को आवश्यक संशोधनों को उपस्थित करने के लिये अधिक से अधिक स्वतन्त्रता देनी होगी। साथ ही अन्तिम बार सभा के वाद-विवाद में भाग लेने तथा अपना पूर्ण योग देने के लिये हमें अधिक से अधिक सदस्यों को अवसर देना होगा। इसी को दृष्टि में रखकर इस प्रकार का नियम बनाया गया है।

अब मैं दो शब्द उन शक्तियों के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं जो अध्यक्ष में सन्निहित हैं और जिनका हमने निश्चित शब्दों में उल्लेख किया है। यह उल्लेख विशेषतया नियम 38-दद में किया गया है। मेरे माननीय मित्र श्री कामत ने खण्ड (2) और (3) पर इस कारण आपत्ति की है कि ये शक्तियां सन्निहित हैं और इनका निश्चित शब्दों में उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। यदि स्थिति यह है तो उनका निश्चित शब्दों में उल्लेख करने से भी कोई हानि नहीं होगी। इन शक्तियों का स्पष्ट उल्लेख करने से हम कई ऐसी कठिनाइयों को भी दूर कर सकते हैं जो पहले कई अवसरों पर, विशेषतया पिछले सत्र में उठ खड़ी हुई थीं। नियमों की कठोरता के कारण हमें कुछ कठिनाई का सामना करना पड़ा था। अध्यक्ष

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

में जो अत्यधिक शक्तियां निहित हैं उनसे वे बिना सभा की मंजूरी के लाभ उठाना नहीं चाहते थे। श्रीमान, मेरी यह धारणा है कि तृतीय पठन के अवसर पर अध्यक्ष को इस प्रकार की तथा निश्चित शक्तियों को देने की आवश्यकता पड़ेगी।

***श्री एच.वी. कामतः** मेरे माननीय मित्र डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या ने जिस "अन्य" शब्द को निकालने का प्रस्ताव किया है उससे वास्तव में कैसा भ्रम उत्पन्न होता है?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** भ्रम इस कारण उत्पन्न होगा कि आरम्भ में उद्देश्य यह था कि केवल रस्मी और आनुषंगिक संशोधन उपस्थित किये जायेंगे। अब से सम्भवत: 14 नवम्बर तक जो कुछ होगा यदि उसके सम्बन्ध में किसी अन्य प्रकार के संशोधनों की आवश्यकता हुई और अध्यक्ष का यह विचार हुआ कि इस प्रकार के रूप-भेद की आवश्यकता है तो माननीय सदस्यों को यह ध्यान में रखना चाहिये कि इसका निर्णय अध्यक्ष ही करेगा कि कौन से संशोधन आवश्यक है। तदन्तर वे पारित किये जायेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** "अन्य" शब्द के सम्बन्ध में आपकी क्या सम्मति है?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** हमारे आदरणीय नेता डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या की यह धारणा है कि अन्य शब्द "आवश्यक संशोधनों" का विशेषण बेकार में बनाया गया है और वास्तव में वह उनके पहले आने वाले शब्दों का अर्थात् "रस्मी अथवा आनुषंगिक" शब्दों का विशेषण हो जाता है और आवश्यक शब्द का विशेषण नहीं होता। मैं डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या के निर्वचन से सहमत हूं। यदि अध्यक्ष उससे सहमत हो तो वह सभा के सामने यह प्रस्ताव रख सकता है कि वह उसके सम्बन्ध में निर्णय करे।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** अनावश्यक और बेकार संशोधनों के सम्बन्ध में अध्यक्ष को पूर्ण शक्ति प्राप्त है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** यह हमेशा ही हमारे ध्यान में रहा है। यह संविधान सभा एक सम्पूर्ण-प्रभुत्व सम्पन्न निकाय है और अध्यक्ष को ऐसी सर्वोच्च शक्तियां प्राप्त हैं जिन पर नियमों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। किन्तु फिर भी हमने यह अनुभव किया कि इसका निश्चित शब्दों में उल्लेख कर देना चाहिये कि वह इन शक्तियों को क्यों और कैसे प्रयोग करेगा। हमने यही उचित समझा है कि अपने नियमों की सीमा के अन्दर रहते हुए जहां तक हो सके इसका उल्लेख कर दिया जाये।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यदि मसौदा-समिति कोई ऐसी गलती करे जो स्पष्ट हो और जो एक बड़ी गलती हो तो......

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** हमें भरोसा है कि जो कमी रह जायेगी उसे मि. नज़ीरुद्दीन अहमद पूरा कर देंगे।

***श्री कला वेंकट राव** (मद्रास : जनरल): मैं चाहता हूं कि मेरे एक प्रश्न का उत्तर दिया जाये। भाषा पर आधृत प्रान्तों का प्रश्न अभी हल नहीं किया गया है। उद्देश्य यह दिखाई देता है कि यदि आवश्यकता हुई तो तृतीय पठन के अवसर पर अनुसूची को संशोधित किया जाये। इन नियमों का उस पर क्या प्रभाव पड़ेगा? तृतीय पठन के अवसर पर किसी संशोधन द्वारा हम भाषा पर आधृत नवीन प्रान्त कैसे बना सकेंगे और जिस प्रक्रिया का प्रस्ताव श्रीमती दुर्गाबाई ने रखा है, और जिसका स्पष्टीकरण श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने किया है, उसमें इस सम्बन्ध में किस प्रकार का उपबन्ध है? श्रीमान, मैं चाहता हूं कि यह स्पष्ट कर दिया जाये कि क्या अनुसूची 1 में कुछ राज्यों को प्रविष्ट करने के सम्बन्ध में किसी संशोधन को उपस्थित किया जा सकेगा और क्या तदनुसार सारे अधिनियम में आनुषंगिक संशोधन किये जा सकेंगे। मैं यह चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में इन नियमों में स्पष्ट शब्दों में कोई उपबन्ध रख दिया जाये। मेरी यही प्रार्थना है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं पहले से इसका अनुमान नहीं लगाना चाहता कि माननीय अध्यक्ष महोदय अनुसूची 1 के सम्बन्ध में कैसा वक्तव्य देंगे किन्तु मेरा निवेदन है कि यह प्रश्न तथा अन्य प्रश्न भी "आवश्यक संशोधनों" शब्दों के अधीन उठाये जा सकेंगे। यदि सभा डॉ. पट्टाभी सीतारमय्या के सुझाये हुए संशोधनों को स्वीकार कर लेगी तो इस नियम का आशय स्पष्ट हो जायेगा। तब आनुषंगिक तथा आवश्यक दोनों प्रकार के संशोधन उपस्थित किये जा सकते हैं।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): क्या मेरे माननीय मित्र को विदित है कि विधान सभा के नियमों के अधीन प्रथम पठन तथा तृतीय पठन के अवसरों पर भाषणों के लिये कोई काल-सीमा नहीं होती? इस दशा में तृतीय पठन के अवसर पर हम सदस्यों को जितने समय तक वे चाहें उन्हें बोलने क्यों न दें?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मेरे मित्र को इस सम्बन्ध में जानकारी नहीं है। विधान सभा के वर्तमान नियमों में वित्त-विधेयक के सम्बन्ध में एक काल-सीमा निश्चित की गई है।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैं कह नहीं सकता कि अध्यक्ष महोदय ने कोई नये नियम बनाये हैं या नहीं। किन्तु यह मैं जानता हूं कि वे नियम सभा के समक्ष नहीं रखे गये हैं। जहां तक मुझे विदित है, कोई काल-सीमा नहीं है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि कोई वक्ता अप्रासंगिक बातें कर रहा हो अथवा उन्हीं तर्कों को बार-बार दुहरा रहा हो, अथवा सभा का समय बेकार में नष्ट कर रहा हो तो अध्यक्ष उसे रोक सकता है।

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव पर मत लेने के पूर्व मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। जैसाकि श्री कृष्णमाचारी बता चुके हैं, तृतीय पठन आरम्भ करने के पूर्व हमें सारी स्थिति पर विचार करना होगा। केवल हम दो सीमाओं का उल्लंघन नहीं कर सकते। एक सीमा इस ओर है और दूसरी उस ओर। अर्थात् 14 नवम्बर के पूर्व कार्य आरम्भ करना सम्भव नहीं है और 25 तारीख के आगे अथवा अधिक से अधिक 26 तारीख से आगे इस बहस को जारी रखना भी सम्भव नहीं है क्योंकि संविधान-सभा (विधाई) की बैठक 28 तारीख से होने जा रही है।

***श्री आर.के. सिधवा:** उसके पश्चात् भी हम रात की बैठकें कर सकते हैं।

***अध्यक्ष:** उन बारह दिनों में और यदि शनिवार की भी बैठक की जाये तो तेरह दिनों में, हमें पूरा तृतीय पठन समाप्त कर देना होगा। नियमों के इस संशोधन में यह समय-सारिणी निश्चित की गई है और हमें इन काल-सीमाओं का ध्यान रखना है। यदि हम इस ओर संशोधनों पर अधिक समय लगायेंगे तो हमें सामान्य वाद-विवाद के लिये उतना ही कम समय मिलेगा। यदि हम किसी वक्ता को अधिक समय दें तो हम अधिक वक्ताओं को अवसर नहीं दे सकेंगे। यदि हम संशोधनों को निबटाने के लिये तीन दिन अलग रखें—क्योंकि दो दिन का सुझाव रखा गया है और यदि संशोधनों के महत्व को देखते हुए एक दिन और रखें—तो केवल नौ दिन बचेंगे। अन्तिम दिन मैं कुछ रस्मों के लिये अलग रखना चाहता हूं। इसलिये केवल आठ दिन रह जायेंगे। चालीस मिनट प्रति वक्ता के हिसाब से साठ वक्ताओं को बोलने का अवसर मिल सकेगा।

***श्री एच.वी. कामत:** सभा प्रति दिन कितने घंटों के लिये समवेत् होगी?

***अध्यक्ष:** पांच घंटे के लिये।

***श्री आर.के. सिधवा:** हम दस घंटे बैठ सकते हैं।

***अध्यक्ष:** दस घंटे का अर्थ होगा कि 120 वक्ता बोल सकेंगे।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** हम दस घंटे बैठने के लिये तैयार हैं।

***अध्यक्ष:** यह आप पर निर्भर है। आप जितने समय तक बैठना चाहें बैठें मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।

***श्री एच.वी. कामत:** हम आठ घंटे बैठें।

***अध्यक्ष:** हम इसका निश्चय उसी समय करेंगे। मैं इस समय इस सम्बन्ध में निश्चय नहीं कर रहा हूं कि हम कितने घंटे बैठेंगे। मैं केवल हिसाब लगा रहा हूं। सभा कितने घंटे तक समवेत् रहे इस सम्बन्ध में वह स्वयं निर्णय करेगी। मैं यह वचन देता हूं कि मैं उसके मार्ग में बाधा नहीं डालूंगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि गणपूरक का प्रश्न रहेगा। (*हास्य*) और यह मेरी शक्ति से बाहर है कि मैं सदस्यों को सभा में आने के लिये बाध्य करूं।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल)**:** मैं एक प्रश्न के सम्बन्ध में आपका निर्णय अथवा माननीय प्रस्ताविका का उत्तर जानना चाहता हूं। संयुक्त प्राप्त का नाम बदलने के सम्बन्ध में भी संशोधन आ रहे हैं। मैं जानना चाहता हूं कि क्या आप तृतीय पठन के अवसर पर उन पर विचार करने की आज्ञा देंगे।

***अध्यक्ष:** मैं केवल यह कह सकता हूं कि यदि नाम बदलने के बारे में सामान्यत: सभी सहमत हों तो मैं बाधा नहीं डालूंगा। यदि वाद-विवाद हुआ और विभिन्न प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये तो जो नाम दिया गया है उसी नाम को मैं रहने दूंगा।

*__श्री महावीर त्यागी:__ यदि सभा इस प्रश्न को संयुक्त प्रान्त के सदस्यों के निर्णय के लिये छोड़ दे तो?

*__अध्यक्ष:__ मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी किन्तु मैं स्वयं संयुक्त प्रान्त के नाम के सम्बन्ध में हस्तक्षेप नहीं करना चाहूंगा।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ नाम बदलने का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है और मेरा यह सुझाव है कि इस सभा के सदस्यों को इस सम्बन्ध में निर्णय करने की स्वतंत्रता देना उचित नहीं होगा। इसका अधिकार सम्बन्धित प्रान्त की सरकार तथा वहां के विधान-मंडल को देना चाहिये। यहां बहस करके हम किसी प्रान्त का नाम नहीं बदल सकते। इस विषय पर साधारण तौर पर विचार नहीं करना चाहिये।

*__अध्यक्ष:__ मेरे विचार से आप ठीक कहते हैं। मैं यह कह चुका हूं कि यदि सभी पक्ष इस सम्बन्ध में सहमत हों तो मैं बहस का विरोध नहीं करूंगा।

*__श्री महावीर त्यागी:__ प्रान्त के प्रधान मंत्री का कथन पर्याप्त समझा जाना चाहिये।

*__अध्यक्ष:__ इस विषय मेरे विचार से हमें इस पर जोर न देना चाहिये कि मैं अथवा कोई सदस्य कोई वचन दे। जैसे-जैसे प्रश्न उठेंगे हम उन पर विचार करेंगे और निर्णय करेंगे।

मेरे विचार से मि. नजीरुद्दीन अहमद ने तथा कुछ अन्य सदस्यों ने भी यह कहा था कि संशोधनों की सूचना देने के लिए बहुत कम समय दिया जा रहा है। अब केवल तीन दिन दिये जा रहे हैं। मेरा यह सुझाव है कि अच्छा यह होगा कि श्री शिब्बन लाल सक्सेना का संशोधन स्वीकार कर लिया जाये जिसके अधीन यह समय बढ़ाकर पांच दिन कर दिया गया है। किन्तु सब कुछ छापेखाने के साधनों पर निर्भर रहेगा। हम अपनी ओर से यथासम्भव प्रयास करेंगे किन्तु यदि आप चाहेंगे कि पांच दिन दिये जायें और कार्यालय का भी यही विचार होगा तो मैं पांच दिन दिये जाने पर कोई आपत्ति नहीं करूंगा।

*__श्री एच.वी. कामत:__ श्रीमान, आप बैठकों के समय के सम्बन्ध में सभा से कुछ कह रहे थे जब श्री त्यागी बीच में बोल उठे थे और मेरे विचार से कुछ बात बिना कही रह गई है।

*__अध्यक्ष:__ यह सभा पर निर्भर रहेगा कि वह कितने घंटे तक बैठना चाहेगी किन्तु किसी दशा में भी हम 26 तारीख से आगे बैठक नहीं कर सकेंगे। यह निश्चित है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ क्या आप मेरे इस सुझाव को स्वीकार नहीं करेंगे कि जो सदस्य भी भाग लेना चाहें वे पहले से अपने नाम भेज दें?

*__अध्यक्ष:__ इसे नियमों में रखने की आवश्यकता नहीं है। यदि कोई सदस्य अपना नाम नहीं भेज सके तो मैं कह नहीं सकता कि आप यह चाहेंगे कि मैं उसे नहीं बोलने दूं। श्रीमती दुर्गाबाई अब उत्तर देंगी।

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाई:__ अध्यक्ष महोदय, इसके पूर्व कि मैं अपने माननीय मित्रों द्वारा प्रस्तावित संशोधनों को उठाऊं, मैं संशोधनों के कुछ प्रस्तावकों की दो बातों के सम्बन्ध में स्थिति स्पष्ट करना चाहती हूं। मैं उत्तर देने के लिये सभा का बहुत कम समय लूंगी।

मैंने एक माननीय सदस्य को मसौदा-समिति पर यह आरोप लगाते हुए सुना कि उसने इन नियमों को उपस्थित करने के लिए एक महिला को खड़ा किया है। मैं सभा को बताना चाहती हूं कि इसमें मसौदा-समिति का कोई हाथ नहीं है। इन नियमों पर संचालन-समिति ने विचार किया और इन्हें मंजूर किया और अब मैंने इन्हें सभा में उपस्थित किया है। एक अन्य सदस्य ने यह कहा कि मसौदा-समिति के कार्य का समर्थन करने के लिये एक महिला को खड़ा किया गया है। श्रीमान, मुझे खेद है कि इस सभा के कुछ माननीय सदस्यों के ध्यान में, पुरुष सदस्यों के ध्यान में, स्त्री-पुरुष का विभेद ही रहता है, यद्यपि यह महिला सदस्यों के ध्यान में कभी नहीं रहता। मैं चाहती हूं कि भविष्य में स्त्री-पुरुष की कोई चर्चा न हो।

जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनमें से कुछ को, जैसा कि सदस्यों को विदित है, मि. नजीरुद्दीन अहमद ने उपस्थित किया था। मैं सभा को बताना चाहती हूं कि मैं बड़े हर्ष से उनका संशोधन संख्या 2 (3) स्वीकार करती हूं जो इस प्रकार है:

"खण्डों' शब्द के स्थान पर 'अनुच्छेदों, खण्डों और उपखण्डों' शब्द रखे जायें।"

यद्यपि इस प्रश्न को मसौदा समिति हल कर सकती है किन्तु मैं बिना किसी संकोच के इस संशोधन को स्वीकार करती हूं।

श्री शिब्बन लाल सक्सेना ने संशोधनों की जिस सूची को उपस्थित किया है उसके संशोधन संख्या 2 को स्वीकार करने के लिये भी मैं तैयार हूं। माननीय अध्यक्ष महोदय ने भी यह सुझाव रखा है कि पूरे पांच दिन का समय दिया जाना चाहिये। इसलिये इस संशोधन को स्वीकार किया जा रहा है।

अन्य सभी संशोधनों के सम्बन्ध में, विशेषत: मि. नजीरुद्दीन अहमद के संशोधनों के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि उनमें जो प्रश्न उठाये गये हैं उन्हें मसौदा-कार हल कर सकते हैं क्योंकि वे या तो शाब्दिक संशोधन हैं या ऐसे संशोधन हैं जो व्याकरता अथवा विराम आदि से सम्बन्ध रखते हैं। इसलिये उन्हें मसौदा-समिति तथा मसौदा-कारों के हल करने के लिये छोड़ा जा सकता है। उन्होंने पूरे तीन दिन पूर्व सूचना देने के सम्बन्ध में जो संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या है, उपस्थित दिया है, उसका आशय श्री सक्सेना के संशोधन से पूरा हो जाता है, जिसमें उन्होंने तीन दिन के स्थान पर पांच दिन रखने का प्रस्ताव किया है।

श्री कामत के संशोधनों के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि वे यह चाहते हैं कि 'किसी रस्मी संशोधन को अथवा किसी ऐसे संशोधन के आनुषंगिक संशोधन

को' शब्द निकाल दिये जायें जिससे केवल सारवान संशोधन उपस्थित किये जा सकें। हम यह अनुभव करते हैं कि संविधान के मसौदे के द्वितीय पठन के अवसर पर हजारों सारवान संशोधन उपस्थित किये जा चुके हैं। अब किसी सारवान संशोधन का सुझाव रखने की शक्ति माननीय अध्यक्ष महोदय को दी गई है। इस प्रकार के संशोधनों को मसौदा-समिति ही उपस्थित करेगी। इसलिये उस अवसर पर इसकी आवश्यकता नहीं रहेगी कि सदस्य सारवान संशोधनों को, अथवा स्वतंत्र संशोधनों को, उपस्थित करें।

श्री कामत ने यह आपत्ति भी की है कि अध्यक्ष को भाषणों के लिये काल-सीमा निश्चित करने और नियमों को विस्तृत तथा निलम्बित करने की शक्ति क्यों दी जा रही है।

***श्री एच.वी. कामतः** मैंने उसकी शक्ति पर आपत्ति नहीं की। मैंने यह कहा था कि ये शक्तियां उसमें निहित हैं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि इसमें कोई संदेह नहीं कि इन सभी विषयों के सम्बन्ध में अध्यक्ष को पूर्ण शक्ति प्राप्त है। उसे काल-सीमा निश्चित करने की शक्ति भी प्राप्त है और स्वविवेक से किसी संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं देने की भी शक्ति है। किन्तु मैं यह चाहती थी कि जो नियम आज उपस्थित किये गये हैं वे स्वतंत्र नियम हों और उनके द्वारा संविधान के मसौदे के तृतीय पठन के लिये तथा उसे पारित करने के लिये पूरी प्रक्रिया निर्धारित कर दी जाये। इसलिये यदि पूरी प्रक्रिया निर्धारित की जा रही है तो यह कोई आपत्तिजनक बात नहीं है।

***श्री एच.वी. कामतः** इसकी आवश्यकता नहीं है यद्यपि यह आपत्तिजनक भी नहीं है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्री सिधवा ने यह आपत्ति की थी कि विधान-सभा के नियमों में काल-सीमा के सम्बन्ध में कोई उपबन्ध नहीं है इसलिये अध्यक्ष काल-सीमा निश्चित नहीं कर सकता है। मैं श्री सिधवा का ध्यान केवल विधान-सभा के नियमों के नियम 46 के उपखण्ड (4) की ओर दिलाती हूं।

***श्री आर.के. सिधवाः** उन्हें सभा ने पारित नहीं किया है। वे सभा के सामने नहीं रखे गये।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** हम उस सभा में उन्हीं नियमों का अनुसरण कर रहे हैं। इसलिये मैं उनका ध्यान उन नियमों की ओर दिलाती हूं जिनके अधीन अध्यक्ष को काल-सीमा निश्चित करने की शक्ति प्राप्त है। जब तक कि हम संविधान को शीघ्रता से पारित न करना चाहें और उसमें और विलम्ब करना चाहें तब तक सभी यह अनुभव करते हैं कि अध्यक्ष को ये शक्तियां अवश्य ही प्राप्त होनी चाहियें। कुछ सदस्यों ने मेरे इस कथन पर आपत्ति की है कि हमारे कार्य पर देश का बहुत राजस्व व्यय होता है। देश के जन-साधारण के नाम पर जिनकी हम यहां तथा अन्यत्र चर्चा करते हैं मैं इस सभा के अपने मित्रों से अपील करती हूं कि

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

इस कार्य को शीघ्र समाप्त किया जाये क्योंकि लम्बी प्रक्रिया के प्रश्नों में उनकी कोई दिलचस्पी नहीं है और वे उस दिन की बाट जोह रहे हैं जब वे इस संविधान से लाभान्वित होंगे। संविधान निर्माण के कार्य को शीघ्र समाप्त करने के लिये हम अध्यक्ष को अधिक शक्ति दें।

*श्री एच.वी. कामतः जनसाधारण के नाम पर जो सभा में विलम्ब करने के लिये दोषी हैं?

*श्रीमती जी. दुर्गाबाईः डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या ने जो प्रश्न उठाया था उसके सम्बन्ध में मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी स्थिति स्पष्ट कर चुके हैं। मैं बिना किसी संकोच के उनका यह सुझाव स्वीकार करती हूं कि "आवश्यक" शब्द के पूर्व जो "अन्य" शब्द प्रयुक्त है वह निकाल दिया जाये।

मेरे विचार से उन्होंने यह भी कहा था कि "आवश्यक संशोधन" शब्दों की व्याख्या की जाये। आवश्यक संशोधन वे संशोधन होंगे जिनकी देश में परिवर्तन होने के कारण आवश्यकता पड़ गई हो यदि अध्यक्ष उन्हें आवश्यक समझेगा जो वह मसौदा-समिति को उन्हें उपस्थित करने की आज्ञा देगा। यहां जो विभिन्न प्रश्न उठाये गये हैं उनका उत्तर देने के पश्चात् मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है कि मैंने जो प्रस्ताव किया है उसको सभा स्वीकार कर लेगी।

*अध्यक्षः अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है किः

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-द और 38-दद में 'Constitution' (संविधान) शब्द जहां कहीं आया है उसके स्थान पर 'Draft Constitution' (संविधान का मसौदा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

*अध्यक्षः प्रस्ताव यह है किः

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) में-

(1) 'Considered' (विचार हो गया हो) शब्दों के स्थान पर 'Considered and disposed of' (विचार हो गया हो और निबटा दिये गये हों) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

*अध्यक्षः प्रस्ताव यह है किः

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) में-

(2) 'amended' (संशोधित रूप में) शब्दों के स्थान पर 'amended by the Assembly' (सभा द्वारा संशोधित रूप में) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से भाग (3) स्वीकार कर लिया गया है।

प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) में—

(3) 'clauses' (खंडों) शब्द के स्थान पर 'articles, clauses and sub-clauses' (अनुच्छेदों, खण्डों और उपखंडों) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) में—

(4) 'to recommend' (सिफारिश की जाये) शब्द के स्थान पर 'to submit a report recommending' (सिफारिश करते हुए प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाये) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:—

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) के पश्चात् यह नवीन उपनियम प्रविष्ट किया जाये:

'(1a) the Draft Constitution as revised by the Drafting Committee under sub-rule (1) shall indicate by suitable typographical arrangements the changes and ommissions made by the Committee.'

[(1क) उपनियम (1) के अधीन मसौदा-समिति ने संविधान के मसौदे को दुहरा कर जिस रूप में रखा हो उसमें समिति ने जो परिवर्तन किये हों, अथवा उससे जो शब्द निकाले गये हों, वे उपयुक्त छपाई द्वारा दिखाये जायेंगे।]"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:—

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (2) में 'after the Constitution has been referred to the Drafting Committee the report of the Committee' (संविधान को मसौदा-समिति के पास भेजने के पश्चात् समिति के प्रतिवेदन

[अध्यक्ष]

को) शब्दों के स्थान पर 'the report of the Drafting Committee' (मसौदा-समिति के प्रतिवेदन को) शब्दों को रखा जाये।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (2) में 'in the Constitution' (इन दी कांस्टीट्यूशन) शब्दों के स्थान पर 'to the Constitution' (टू दि कांस्टीट्यूशन) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (2) के परन्तुक में 'three clear days' (पूरे तीन दिन) शब्दों के स्थान पर 'seven clear days' (पूरे सात दिन) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (4) में 'which is either formal or consequential upon' (किसी रस्मी संशोधन को अथवा किसी ऐसे संशोधन के आनुषंगिक संशोधन को) शब्दों के स्थान पर 'to' (किसी ऐसे संशोधन के संशोधन को) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (6) में से 'and it shall not be necessary for the President to put each of those amendments separately to vote' (और अध्यक्ष के लिये यह आवश्यक नहीं होगा कि वह उन संशोधनों में से प्रत्येक संशोधन पर पृथक् मत ले) शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (8) में से 'shall allot not more than two days for the consideration by the Assembly of all amendments after

the motion referred to in sub-rule (2) has been carried and' [उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव के पारित होने के पश्चात्, सभी संशोधनों पर सभा के विचार करने के लिये दो दिन से अधिक नहीं देगा और] शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-दद का उपनियम (2) निकाल दिया जाये।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-दद के उपनियम (3) निकाल दिया जाये।"

संशोधन गिर गया।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, संशोधन संख्या 122 पर मत लेने की आवश्यकता नहीं है। वह आनुषंगिक संशोधन ही है।

***अध्यक्ष:** मैं उस पर भी मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-दद का उपनियम (1) नियम 38-द में उपनियम (10) के रूप में रखा जाये।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं श्री शिब्बन लाल सक्सेना के संशोधनों पर मत लूंगा। वे घुमाये नहीं गये हैं इस कारण मैं उन्हें पढ़कर सुनाऊंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नवीन नियम 38-द के खण्ड (1) के अन्त में ये शब्द जोड़ दिये जायें:–

'But the President shall have power to allow any other amendments to be moved according to his discretion' (परन्तु अध्यक्ष को किन्हीं अन्य संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा स्वविवेक से देने की शक्ति प्राप्त होगी।)"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"नियम 38-द के उपनियम (2) के परन्तुक में 'three clear days' (पूरे तीन दिन) शब्दों के स्थान पर 'five clear days' (पूरे पांच दिन) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (3) में 'and at this stage' (और इस अवसर पर) शब्दों से आरम्भ होने वाले वाक्यांश से लेकर इस उपनियम के अन्त तक के शब्दों के स्थान पर यह रखा जाये:

'and at this stage the debates shall be controlled by the President according to this discretion' (और इस अवसर पर अध्यक्ष वाद-विवाद पर स्वविवेक से नियंत्रण रखेगा।)"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (6) में से 'and it shall not be necessary for the President to put each of those amendments separately to vote' (और अध्यक्ष के लिये यह आवश्यक नहीं होगा कि वह उन संशोधनों में से प्रत्येक संशोधन पर पृथक् मत ले) शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (4) के अन्त में यह जोड़ दिया जाये: 'except by the President according to his discretion' (उस दशा के अतिरिक्त जब अध्यक्ष ने स्वविवेक से आज्ञा दी हो।)"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित नियम 38-दद के उपनियम (2) के स्थान पर यह रखा जाये:

'(2) Members desirous of participating in the debate on a motion made under sub-rule (1) shall notify their names to the President

at least 36 hours before the motion is made and the President may fix a time limit on the duration of speeches on the motion after receiving all such names, but the time limit shall not be less than 40 minutes. The President shall have power to give longer time to any speaker in exceptional circumstances, and he may also order a speaker to cut short his speech according to his discretion.

(2a) The President shall have power to extend the duration of the daily sittings of the Assembly.'

[(2) उपनियम (1) के अधीन उपस्थित किये गये प्रस्ताव पर होने वाले वाद-विवाद में जो सदस्य भाग लेना चाहेंगे वे प्रस्ताव उपस्थित होने से कम से कम 36 घंटे पूर्व अपने नामों की सूचना अध्यक्ष को देंगे और जब अध्यक्ष को यह सब नाम मिल जायेंगे तब वह भाषणों की काल-सीमा निश्चित करेगा किन्तु वह काल-सीमा 40 मिनट से कम की नहीं होगी। विशेष स्थिति में अध्यक्ष किसी वक्ता को अधिक समय दे सकेगा और वह किसी वक्ता को स्वविवेक से यह आदेश भी दे सकेगा कि वह अपने भाषण को शीघ्र समाप्त करे।

(2क) अध्यक्ष को सभा के प्रतिदिन की बैठकों के समय को बढ़ाने की शक्ति होगी।]"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या ने एक संशोधन का सुझाव रखा है और वह यह है कि अन्तिम पंक्ति से पहली पंक्ति में जो "अन्य" शब्द प्रयुक्त हैं वह निकाल दिया जाये।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 38-द (1) की अन्तिम पंक्ति से पहली पंक्ति में जो 'other' (अन्य) शब्द प्रयुक्त है वह निकाल दिया जाये।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं श्रीमती दुर्गाबाई द्वारा उपस्थित प्रस्ताव पर, संशोधित रूप में, मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"संविधान सभा के नियमों के नियम 38-द के स्थान पर ये नियम रखे जायें:

Revision of the Constitution by the Drafting Committee and the consideration of the amendments recommended by them.

'38-R. (1) When a motion that the Constitution be taken into consideration has been carried and the amendments to the Constitution moved have been considered, the President shall refer the Constitution as amended to the Drafting

[अध्यक्ष]

Committee referred to in sub-rule (1) of rule 38-L with instructions to carry out such re-numbering of the articles, clauses and sub-clauses, such revision of punctuation and such revision and completion of the marginal notes thereof as may be necessary, and to recommend such formal or consequential or necessary amendments to the Constitution as may be required.

(2) After the Constitution has been referred to the Drafting Committee, the report of the Committee shall be presented to the Assembly by the Chairman or any other membar of the Drafting Committee and thereafter the Chairman or other member of the Committee may move that the amendments recommended by the Committee in the Constitution so referred to them be taken into consideration:

Provided that no such motion shall be made until after the report of the Drafting Committee together with the copies of the Constitution as revised by them has been made available for the use of members and that any members may object to any such motion being made unless the report and the copies of the Constitution as so revised have been made available five clear, days before the date on which the motion is made, and such objection shall prevail unless the President in his discretion allows the motion to be made.

(3) While making any motion referred to in sub-rule (2), the mover shall confine himself to an explanatory statement and at this stage there shall be no debate, and the President may, after such statement has been made, put the question.

(4) After the motion referred to in sub-rule (2) has been carried, any member may move an amendment which

is either formal or consequential upon an amendment recommended in any provision of the Constitution by the Drafting Committee after the Constitution was referred to them under sub-rule (1) but shall not be allowed to move any other amendment.

(5) If notice of a proposed amendment has not been given two clear days before the day on which the motion referred to in sub-rule (2) is to be taken up for consideration, any member may object to the moving of the amendment, and such objection shall prevail unless the President in his discretion allows the amendment to be moved.

(6) Notwithstanding anything in these rules, all the amendments recommended by the Drafting Committee, after the Constitution was referred to them under sub-rule (1), shall be deemed to have been moved, and it shall not be necessary for the President to put each of those amendments separately to vote.

(7) The provisions of sub-rules (2) and (3) of rule 38-P shall apply to every amendment of which notice has been given under sub-rule (5), and notwithstanding anything in these rules it shall be in the discretion of the President to disallow any amendment of which notice has been so given.

(8) The President shall allot not more than two days for the consideration by the Assembly of all amendments after the motion referred to in sub-rule (2) has been carried and shall, at the time appointed by him for the close of the sitting of the Assembly on the last of the allotted days, forthwith put every question necessary to dispose of all the outstanding matters in connection with those amendments, and in the case of amendments recommended by the Drafting Committee as such, he shall put only the question

[अध्यक्ष]

that the amendments so recommended be made or that the amendments so recommended as modified by any amendment or amendments adopted by the Assembly be made, as the case may be.

(9) For the purpose of bringing to a conclusion any proceedings relating to such amendments on the last of the allotted days, the President shall have power to select the amendments to be proposed.

Passing of the Constitution.

38-RR.(1) When the amendments to the Constitution referred to the Drafting Committee under sub-rule (1) of rule 38-R have been considered, any member may move that the Constitution as settled by the Assembly be passed and to a motion so made no further amendment shall be allowed to the moved.

(2) The President may fix a time-limit for speeches during the debate on a motion made under sub-rule (1).

(3) The President may in relation to any proceedings in connection with the passing of the Constitution under rule 38-R or this rule relax or suspend any of these rules.'

मसौदा-समिति द्वारा संविधान का पुनर्विलोकन और उसने जिस संशोधन की सिफारिश की हो उस पर विचार

[38-द (1) यह जब प्रस्ताव कि संविधान पर विचार किया जाये पारित हो गया हो और संविधान सम्बन्धी जो संशोधन उपस्थित किये गये हों उन पर विचार हो गया हो तब अध्यक्ष संविधान को, संशोधित रूप में नियम 38-द के उपनियम (1) में निर्दिष्ट मसौदा-समिति के पास भेजेगा और आदेश देगा कि आवश्यकतानुसार अनुच्छेदों, खंडों और उपखंडों की पुनर्गणना की जाय, विरामों को फिर से लगाया जाये और हाशिये के लेखों को दुहराया जाये और पूरा किया जाये और संविधान सम्बन्धी ऐसे रस्मी अथवा आनुषंगिक अथवा आवश्यक संशोधनों की सिफारिश की जाये।

(2) संविधान को मसौदा-समिति के पास भेजने के पश्चात् समिति के प्रतिवेदन को मसौदा-समिति का सभापति अथवा अन्य कोई सदस्य सभा में उपस्थित करेगा और तत्पश्चात् समिति का सभापति अथवा अन्य कोई सदस्य यह प्रस्ताव उपस्थित कर

सकता है कि उसके पास जो संविधान भेजा गया था उसके सम्बन्ध में समिति ने जिन संशोधनों की सिफारिश की है, उन पर विचार किया जाये:

परन्तु जब तक मसौदा-समिति का प्रतिवेदन तथा उसके साथ उसके दुहराये हुए संविधान की प्रतियां सदस्यों के उपयोग के लिये उपलब्ध न की जायें तब तक इस प्रकार का कोई प्रस्ताव उपस्थित नहीं किया जायेगा और प्रस्ताव उपस्थित करने के दिन से पूरे पांच दिन पहले यदि यह प्रतिवेदन और संविधान की दुहराई हुई प्रतियां उपलब्ध न की जायें तो कोई भी सदस्य इस पर आपत्ति कर सकता है, और जब तक कि अध्यक्ष स्वविवेक से प्रस्ताव उपस्थित करने की आज्ञा न दे तब तक यह आपत्ति अभिभावी होगी।

(3) उपनियम (2) में निर्दिष्ट किसी प्रस्ताव को उपस्थित करते समय प्रस्तावक अपने को व्याख्यात्मक वक्तव्य तक ही सीमित रखेगा और इस अवसर पर कोई वाद-विवाद नहीं होगा और अध्यक्ष, इस वक्तव्य के पश्चात् प्रस्ताव पर मत ले सकता है।

(4) उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव के पारित होने के पश्चात्, कोई भी सदस्य किसी रस्मी संशोधन को अथवा किसी ऐसे संशोधन के आनुषंगिक संशोधन को उपस्थित कर सकता है जिसकी मसौदा-समिति ने उपनियम (1) के अधीन उसके पास संविधान भेजे जाने पर किसी उपबन्ध के सम्बन्ध में सिफारिश की हो, किन्तु उसे किसी अन्य संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जायेगी।

(5) यदि किसी प्रस्तावित संशोधन की सूचना उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव पर विचार करने के दिन के पूरे दो दिन पूर्व नहीं की गई हो तो कोई भी सदस्य उस संशोधन के उपस्थित किये जाने पर आपत्ति कर सकता है और जब तक अध्यक्ष स्वविवेक से संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दे तब तक वह आपत्ति अभिभावी होगी।

(6) इन नियमों में किसी बात के होते हुए भी मसौदा-समिति ने, उसके पास उप-नियम (1) के अधीन संविधान के भेजे जाने के पश्चात्, जिन संशोधनों की सिफारिश की हो, वे सब उपस्थित किये गये समझे जायेंगे और अध्यक्ष के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि वह उन संशोधनों में से प्रत्येक संशोधन पर पृथक् मत ले।

(7) नियम 38-त के उपनियम (2) और (3) के उपबन्ध ऐसे प्रत्येक संशोधन को लागू होंगे जिसकी उपनियम (5) के अधीन

[अध्यक्ष]

सूचना दी गई हो और इन नियमों में किसी बात के होते हुए भी अध्यक्ष स्वविवेक से किसी ऐसे संशोधन की आज्ञा नहीं दे सकता है जिसकी इस प्रकार सूचना दी गई हो।

(8) अध्यक्ष उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रस्ताव के पारित होने के पश्चात्, सभी संशोधनों पर सभा के विचार करने के लिये दो दिन से अधिक नहीं देगा और दिये हुए दिनों में से अन्तिम दिन को सभा की बैठक समाप्त करने के लिये उसने जो समय निश्चित किया हो उस समय इन संशोधनों के सम्बन्ध में सभी रहे हुए प्रश्नों को निबटाने के लिए प्रत्येक प्रश्न पर मत लेगा और उन संशोधनों के सम्बन्ध में, जिनकी सिफारिश मसौदा-समिति ने की हो, वह केवल इस प्रश्न पर मत लेगा कि जिन संशोधनों की सिफारिश की गई है, उन्हें किया जाये अथवा, यथास्थिति, जिन संशोधनों की सिफारिश की गई है उन्हें सभा द्वारा स्वीकृत किसी संशोधन अथवा संशोधनों द्वारा परिवर्तित रूप में किया जाये।

(9) दिए हुए दिनों में से अन्तिम दिन को इन संशोधनों के सम्बन्ध में किसी कार्यवाही को समाप्त करने के लिये अध्यक्ष को प्रस्तावित होने वाले संशोधनों को चुनने की शक्ति प्राप्त होगी।

38-दद (1) जब नियम 38-द के उपनियम (1) के अधीन मसौदा-समिति को भेजे हुए संविधान-सम्बन्धी संशोधनों पर विचार हो गया हो तब कोई भी सदस्य यह प्रस्ताव उपस्थित कर सकता है कि सभा ने संविधान को जिस रूप में निश्चित किया है उस रूप में वह पारित किया जाये और उस प्रकार उपस्थित किए हुए प्रस्ताव के सम्बन्ध में अन्य किसी संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जायेगी।

संविधान का पारण

(2) अध्यक्ष उपनियम (1) के अधीन उपस्थित किये हुए प्रस्ताव पर होने वाले वाद-विवाद में भाषणों के किये काल-सीमा निश्चित कर सकते हैं।

(3) अध्यक्ष नियम 38-द अथवा इस नियम के अधीन संविधान के पारण से सम्बन्धित किसी कार्यवाही के बारे में इन नियमों में से किसी को विस्तृत या निलम्बित कर सकता है।]"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

संविधान का मसौदा–(जारी)

प्रथम अनुसूची–(जारी)

***अध्यक्ष:** अब हम प्रथम अनुसूची को उठायेंगे। प्रथम अनुसूची के सम्बन्ध में बहुत से संशोधनों की सूचना दी गई है। इनमें से कुछ संशोधन उस अनुसूची के सम्बन्ध में हैं जो मूल मसौदे में दी हुई थीं और कुछ डॉ. अम्बेडकर ने कल जो प्रस्ताव उपस्थित किया था उसके सम्बन्ध में हैं। कठिनाई यह है कि वे इस समय के तथ्यों से असम्बद्ध हैं। उदाहरणार्थ इनमें से कुछ संशोधनों का उद्देश्य ऐसे प्रान्तों का नामकरण है जो आज अस्तित्व में नहीं हैं और जिनके बारे में हम कह नहीं सकते कि वे अस्तित्व में भी आयेंगे या नहीं। वास्तव में यदि इस संविधान में ऐसे प्रान्तों के नाम रहने दिये गये, जो अस्तित्व में नहीं हैं, और उन प्रान्तों के नाम न रखे गये जो आज अस्तित्व में हैं, और इस रूप में हमने उसे पारित किया, तो बहुत बड़ी कठिनाइयां उठ खड़ी होंगी और मैं यह नहीं सकता कि संविधान को कैसे प्रयोग में लाया जायेगा। संविधान के ढांचे को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि उसे प्रयोग में लाना कठिन हो जायेगा। उदाहरणार्थ हम यह नहीं कर सकते कि किसी विधान-सभा का स्वरूप क्या होगा और वह विधान-सभा मद्रास की होगी, अथवा आन्ध्र देश की होगी, अथवा तमिलनाडु की होगी। संविधान के कई अन्य उपबन्धों के सम्बन्ध में भी यही कठिनाई उठ खड़ी होगी।

इसलिये माननीय सदस्यों के समक्ष मैं यह सुझाव रखता हूं कि इस अवसर पर, जब कि नये प्रान्तों के निर्माण के सम्बन्ध में, कोई निर्णय नहीं किया गया है, यह कोई समझदारी की बात नहीं होगी कि हम संविधान में ऐसे प्रान्तों के नाम रखें जिनके निर्माण के सम्बन्ध में, हम आगे चल कर प्रस्ताव रखेंगे, किन्तु जो इस समय अस्तित्व में नहीं हैं। इसी प्रकार ऐसे प्रान्तों के सम्बन्ध में भी जो अस्तित्व में हैं और जिनमें कुछ परिवर्तन करने के लिये कुछ संशोधनों की सूचना दी गई है अन्य कठिनाइयां उठ खड़ी हो सकती हैं।

वर्तमान प्रान्तों के कुछ क्षेत्रों को अन्य प्रान्तों में मिला देने के सम्बन्ध में भी कुछ संशोधन हैं। यदि हम संविधान को इसी रूप में पारित कर देंगे तो वे क्षेत्र अन्य प्रान्तों से स्वत: नहीं मिल जायेंगे। यदि हम संविधान में वर्णित राज्य-क्षेत्रों में ऐसे क्षेत्रों को मिला देंगे जो उल्लिखित प्रान्तों में इस समय सम्मिलित नहीं है तो भी इसी प्रकार की कठिनाइयां उठ खड़ी होंगी।

इसलिये माननीय सदस्यों के सामने मैं यह सुझाव रखता हूं कि वे इस अवसर पर किसी संशोधन को उपस्थित न करें क्योंकि संविधान के पारित होने पर उसको प्रयोग में लाने में उससे कठिनाइयां उठ खड़ी होंगी। मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि इस सभा में कुछ सदस्यों की, वास्तव में बहुत से सदस्यों की यह प्रबल इच्छा है कि कुछ नवीन प्रान्तों का निर्माण किया जाये अथवा प्रान्तों

[अध्यक्ष]

की सीमाएं बदली जायें किन्तु इन बातों को संविधान में समाविष्ट करने के पूर्व इन्हें पहले सम्पन्न कर लेना चाहिये। इसलिये उन माननीय सदस्यों से, जिन्होंने इन परिवर्तनों के सम्बन्ध में संशोधनों की सूचना दी है, मेरा यह निवेदन है कि वे वास्तविक स्थिति में परिवर्तन कर लें और फिर संविधान सभा से उन परिवर्तनों को संविधान में समाविष्ट करने को कहें। हमने नियमों में इस सम्बन्ध में उपबन्ध रखे हैं कि तृतीय पठन के अवसर पर जिस प्रकार के तथ्य होंगे उनके सम्बन्ध में संशोधन उपस्थित किये जा सकेंगे। यदि इस बीच कोई परिवर्तन हुए तो मसौदा-समिति अवश्य ही उनको ध्यान में रखेगी और सभा को उनके बारे में सूचना देगी। मुझे आशा है कि इस वक्तव्य के पश्चात् माननीय सदस्य इस प्रश्न पर इस दृष्टि से विचार करेंगे। यदि वे मुझ से सहमत हुए तो हम इन संशोधनों पर विचार नहीं करेंगे, क्योंकि यह भी सम्भव है कि अन्ततोगत्वा उनमें से बहुत से स्वीकार नहीं किये जायें। इस प्रकार सभा का कुछ समय भी बच जायेगा।

*श्री एच.वी. कामतः वर्तमान प्रान्तों के नाम बदलने के सम्बन्ध में मेरा आपसे निवेदन है कि प्रान्तों के नाम बदलने का प्रत्येक प्रश्न प्रान्तीय सरकारों, विधान मंडलों, प्रान्तीय कांग्रेस समितियों तथा इस सभा में सम्बन्धित प्रान्तों के प्रतिनिधियों के निर्णय के लिये छोड़ दिया गया है।

*अध्यक्षः मेरे विचार से केवल एक ही प्रान्त का नाम बदलने का प्रश्न है। उसके अतिरिक्त इस प्रकार का और कोई प्रश्न नहीं है।

*श्री एच.वी. कामतः मध्य प्रान्त और बरार के सम्बन्ध में भी यह प्रश्न है।

*श्री महावीर त्यागीः संयुक्त प्रान्त का नाम बदलने के सम्बन्ध में भी संशोधन है।

*अध्यक्षः उड़ीसा का नाम उत्कल रखने के सम्बन्ध में भी संशोधन है।

*श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः सभा के समक्ष जो मसौदा है उसमें दिये हुए किसी राज्य का नाम बदलने के सम्बन्ध में हम एक सिद्धान्त का अनुसरण करते आये हैं। वह यह है कि यदि पर्याप्त सदस्यों ने नाम बदलने की इच्छा प्रकट की हो और उस बदले हुए नाम का समर्थन सम्बन्धित प्रान्त के प्रधान मंत्री ने किया हो तो हम उस नाम को संशोधित अनुसूची में रख देते हैं। मध्य प्रान्त का नाम इसी प्रकार बदला गया है। उड़ीसा के कई सदस्यों से भी एक अभ्यावेदन प्राप्त हुआ है। हमें इस प्रश्न को उड़ीसा के प्रधान मंत्री के सामने रखना होगा। यदि वे सहमत हो जायेंगे और यदि आप आज्ञा देंगे ओर सभा आज्ञा देगी तो हम दुहराई हुई साफ प्रति में यथोचित परिवर्तन करके उड़ीसा का नाम उत्कल रख देंगे। उस प्रति पर अगले सत्र में विचार किया जायेगा। नामों के जिन परिवर्तनों का समर्थन सम्बन्धित प्रान्तों के प्रधान मंत्रियों ने किया है उनके सम्बन्ध में हम इस सिद्धान्त का अनुसरण करते आये हैं.........

***श्री आर.के. सिधवा:** मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो सुझाव रखा है उस पर मुझे बहुत आपत्ति है.........

***अध्यक्ष:** उन्होंने केवल स्थिति स्पष्ट की है।

***श्री आर.के. सिधवा:** हमें द्वितीय सदनों के प्रश्न को इस सभा के सदस्यों के निर्णय के लिये छोड़ने का अनुभव है। बाद में चीख-पुकार की गई थी और कहा गया था कि प्रान्त में किसी से परामर्श नहीं किया गया और सम्बन्धित प्रान्तों के बहुत से लोगों ने यह विचार प्रकट किया कि बिना वहां के लोगों से पूछे हुए द्वितीय सदन को रखकर गलती की गई है। इससे कहीं अधिक महत्व के प्रश्न के सम्बन्ध में, अर्थात् नाम बदलने के प्रश्न के सम्बन्ध में, मैं यह सुझाव प्रस्तुत कर चुका हूं कि न केवल प्रधान-मंत्रियों को बल्कि सारे प्रान्तीय मंत्रिमंडल को और वहां के विधान मंडल के सदस्यों को अपना मत प्रकट करने का अवसर देना चाहिये। यह कोई साधारण प्रश्न नहीं है। इस सभा में कोई भी सदस्य अपना सुझाव प्रस्तुत कर सकता है और प्रधान मंत्री भी अपना मत प्रकट कर सकता है। प्रधान मंत्री के मत का आदर करते हुए मैं निवेदन करना चाहता हूं कि यह भी सम्भव है कि......

***अध्यक्ष:** क्या मैं इस कठिनाई को दूर करने के लिए एक उपाय बता सकता हूं? जिन प्रान्तों का नाम बदलने का प्रस्ताव है उनकी सरकारों के नाम संविधान सभा की ओर से मैं इन प्रस्तावों को भेजना चाहता हूं और उनसे कहना चाहता हूं कि उन पर वे अपना मत प्रकट करें। जब हमें उनका मत प्राप्त हो जायेगा तो, यदि आवश्यक हुआ तो, हम तृतीय पठन के अवसर पर भी परिवर्तन कर सकते हैं।

***माननीय सदस्य:** अच्छी बात है, श्रीमान।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल)**:** मुझे हर्ष है कि आप प्रान्तीय सरकारों को आदेश दे रहे हैं और उनके सामने नामों का सुझाव रख रहे हैं। मेरा यह भी सुझाव है...........

***अध्यक्ष:** आप मेरा आशय नहीं समझ पाये हैं। मैं आदेश नहीं दे रहा हूं। यदि यहां कोई सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं तो मैं उन सुझावों को प्रान्तीय सरकारों के पास उनकी सम्मति के लिये भेज दूंगा।

***श्री एच.जे. खांडेकर:** श्रीमान, मेरा यह निवेदन है कि जिस प्रकार उत्तर सदन के सम्बन्ध में सम्बन्धित प्रान्तों के सदस्यों के मत पर विचार किया गया था उसी प्रकार इस प्रश्न के सम्बन्ध में भी उनके मत पर विचार किया जाये। मेरा अर्थ संविधान सभा के सदस्यों से है।

***अध्यक्ष:** ये सदस्य यहां उपस्थित हैं।

***श्री एच.जे. खांडेकर:** श्रीमान, मेरा भी अर्थ यही है। मैं यह चाहता हूं कि जिस प्रान्त का नाम बदला जाये वहां के संविधान सभा के सदस्यों की सम्मति ली जाये।

***अध्यक्षः** वे यहां उपस्थित रहेंगे और अपना मत प्रकट कर सकेंगे।

***श्री एच.जे. खांडेकरः** धन्यवाद, श्रीमान।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान, क्या आप यह चाहते हैं कि इस सम्बन्ध में निश्चित प्रस्ताव प्रस्तुत किये जायें?

***अध्यक्षः** जी नहीं: बहुत से संशोधनों की सूचना दी गई है। जो संशोधन प्राप्त हो चुके हैं उन्हें मैं ध्यान में रखूंगा।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम : जनरल): मैंने एक संशोधन की सूचना दी है जिसका आशय यह है कि "आसाम" शब्द के हिज्जे बदल दिये जायें क्योंकि उसका उच्चारण अंग्रेजी ढंग से किया जाता है। मैं चाहता हूं कि "आसाम" शब्द के स्थान पर "आसोम" शब्द रखा जाये।

***अध्यक्षः** इस सम्बन्ध में भी मैं प्रान्तीय सरकार से परामर्श करूंगा। अब हमें कौन-सा कार्य करना है। क्या मैं अब संशोधनों को उठाऊं?

***माननीय सदस्यः** जी हां, श्रीमान।

***श्री गोकुल भाई भट्ट** (राजस्थान): सभापति जी, मैं खुलासा चाहता हूं, यह जो शिड्यूल आया है हमारे सामने, उसमें एक हिस्सा हिन्दुस्तान का ऐसा रह गया है, जिसका अब तक कोई निर्णय नहीं हुआ है और वह है सिरोही। तो इसके विषय में अगर ड्राफ्टिंग कमेटी के कोई सदस्य कुछ खुलासा कर दें तो अच्छा होगा।

***अध्यक्षः** इस सम्बन्ध में एक संशोधन है किन्तु मैं स्वयं नहीं जानता कि वास्तव में स्थिति क्या है।

***श्री के.एम. मुन्शीः** श्रीमान, मेरे माननीय मित्र श्री गोकुल भाई भट्ट ने जो कुछ कहा है उसके सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि मैंने उपप्रधान मंत्री महोदय से पूछा था कि स्थिति क्या है। सिरोही के सम्बन्ध में अभी यह तय नहीं किया गया है कि वह किस प्रान्त के साथ मिलाया जायेगा। इस समय वहां का प्रशासन बम्बई की सरकार प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम के अधीन करती है।

***श्री जयनारायण व्यास** (राजस्थान): अध्यक्ष महोदय, मैं भाग 1 के अधीन दिये हुये लेख की ओर सभा का ध्यान आकृष्ट करता हूं, जिसमें बम्बई प्रान्त की परिभाषा की गई है। उस लेख की अन्तिम चार पंक्तियों में कहा गया है कि "कोई राज्य-क्षेत्र जो ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उस प्रान्त की सरकार द्वारा प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1947 के अधीन प्रशासित किया जा रहा था।" इस लेख में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि संविधान के प्रारम्भ के पूर्व उस प्रान्त द्वारा जो राज्य-क्षेत्र प्रशासित किया जा रहा था वह बम्बई प्रान्त में समाविष्ट किया जायेगा। इसका अर्थ यह है कि यदि सिरोही का बाल-शासक, अथवा शासक

की माता, अथवा वह शासक जिसका मामला बम्बई में विचाराधीन है, किसी प्रसंविदा पर हस्ताक्षर न भी करे तो उस दशा में भी सिरोही बम्बई प्रान्त में समाविष्ट कर दिया जायेगा। उस स्थिति में मैं श्री मुन्शी से प्रार्थना करूंगा कि ये पंक्तियां, अर्थात् यह कि "कोई राज्य-क्षेत्र जो ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उस प्रान्त की सरकार द्वारा प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1947 के अधीन प्रशासित किया जा रहा था।" निकाल दिया जाये ताकि सिरोही के लोगों को इस सम्बन्ध में कोई शंका न हो कि सिरोही समाविष्ट किया गया है।

*अध्यक्ष: यह केवल सिरोही के सम्बन्ध में ही नहीं है। यह अन्य क्षेत्रों के सम्बन्ध में भी है।

*श्री जयनारायण व्यास: यह सिरोही को भी लागू होगा और यह समझा जायेगा कि सिरोही को बिना किसी प्रसंविदा पर हस्ताक्षर हुए ही समाविष्ट कर लिया गया है। मैं केवल यही बताना चाहता हूं।

*अध्यक्ष: उस दशा में हम अपवाद कर सकते हैं।

*श्री के.एम. मुन्शी: मेरे माननीय मित्र श्री व्यास को यह समझना चाहिये कि इस पूरी अनुसूची का मसौदा वर्तमान स्थिति के आधार पर तैयार किया गया है। हम इस समय की स्थिति में फेरफार नहीं करना चाहते हैं। उद्देश्य यह भी नहीं है कि इस सम्बन्ध में कोई बदलाव नहीं किये जायें। जैसा कि माननीय अध्यक्ष महोदय बता चुके हैं, यदि आगे चल कर स्थिति में कुछ परिवर्तन हुए तो तृतीय पठन के अवसर पर उनका संविधान में उल्लेख कर दिया जायेगा। इस समय अनुसूची में जो कुछ कहा गया है वह स्पष्ट है और इसलिये इस अवसर पर सिरोही की चर्चा अप्रासंगिक है।

*श्री एच.वी. पातस्कर (बम्बई : जनरल): मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। क्या सिरोही बम्बई का एक भाग है अथवा वह एक पृथक् राज्य है?

*श्री के.एम. मुन्शी: मैं कह नहीं सकता। मैं इस प्रश्न के सम्बन्ध में अधिकृत रूप से कुछ नहीं कह सकता। जहां तक मुझे ज्ञात है वह केन्द्र को सौंप दिया गया है और केन्द्र ने उसे बम्बई सरकार को सौंप दिया है ताकि पूर्वोक्त अधिनियम के अधीन उसका प्रशासन हो सके। यदि मैं कोई गलती कर रहा हूं तो वह ठीक कर दी जाये। मेरी अपनी यही धारणा है।

*श्री शंकरराव देव (बम्बई : जनरल): श्रीमान, क्या यह आवश्यक नहीं है कि सभा को ठीक-ठीक स्थिति बताई जाये? कुछ सदस्यों की इस विषय में दिलचस्पी है और वे यह जानना चाहते हैं कि सिरोही बम्बई का एक भाग है अथवा प्रशासन के उद्देश्य से बम्बई को सौंपा गया है। क्या आप कृपा करके राज्य-मंत्रणालय से प्रार्थना करेंगे कि वह इस सम्बन्ध में एक वक्तव्य दे।

*श्री के.एम. मुन्शी: जी हां, मैं उससे प्रार्थना करूंगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल): क्या राज्य-मंत्रणालय को इसकी स्वतन्त्रता नहीं है कि वह 26 जनवरी तक समायोजन करे?

***श्री के.एम. मुन्शीः** श्री सन्तानम् ठीक कह रहे हैं। 26 जनवरी तक भारत सरकार को किसी राज्य के किसी भाग को किसी भी प्रान्त को सौंपने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त है। विधि के अन्तर्गत यही स्थिति है। जहां तक वर्तमान अनुसूची का सम्बन्ध है वह 26 जनवरी से लागू होगी। उस तारीख तक किसी राज्य का कोई भाग यदि प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम के अधीन बम्बई प्रान्त को सौंप दिया गया हो तो वह बम्बई का अंग समझा जायेगा। जो क्षेत्र अन्य प्रान्तों को सौंपे जायेंगे वे उनके अंग होंगे। श्री शंकरराव देव ने पूछा है कि सिरोही की वर्तमान स्थिति क्या है। मैं समझता हूं कि उसकी स्थिति इसी प्रकार है।

***श्री शंकरराव देवः** मैं यह जानना चाहता हूं कि 26 जनवरी के पश्चात् उसकी क्या स्थिति होगी?

***श्री के.एम. मुन्शीः** इस सम्बन्ध में 26 जनवरी के लगभग निर्णय किया जायेगा।

***श्री शंकरराव देवः** हममें से कुछ सदस्य चाहते हैं कि आप राज्य मंत्रणालय से कहें कि हम जानना चाहते हैं कि सिरोही के सम्बन्ध में उसका क्या उद्देश्य है और वह किस योजना को कार्यान्वित करना चाहता है।

***श्री के.एम. मुन्शीः** मैं सम्बन्धित अधिकारियों को इस प्रार्थना की सूचना दे दूंगा।

***श्री सारंगधर दास** (उड़ीस : राज्य): श्रीमान, मेरे नाम से भी कुछ संशोधन है जो उस श्रेणी के संशोधन नहीं है जिन्हें उपस्थित करने के लिये आपने कहा है। यदि मुझे अवसर दिया जा सकता है तो मैं उन्हें उपस्थित करना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मैं प्रत्येक संशोधन को उठाऊंगा और प्रत्येक सदस्य किसी भी संशोधन को उपस्थित कर सकेगा। पहला संशोधन श्री कुलाधार चालिहा का संशोधन संख्या 404 है– क्या आप उसे उपस्थित करना चाहते हैं?

***श्री कुलधर चालिहाः** जी हां, श्रीमान।

***अध्यक्षः** यह सुझाव रखा गया है कि इन संशोधनों को प्रान्तीय सरकारों के पास भेज दिया जाये।

***श्री एच.वी. कामतः** वे रस्मी तौर से उपस्थित किये जायं और फिर प्रान्तीय सरकारों के पास भेजे जायें।

***श्री आर.के. सिधवाः** श्रीमान, इस सम्बन्ध में आप सभा से पूछ लें कि उसकी इच्छा क्या है?

***अध्यक्षः** मैंने केवल एक सुझाव रखा है किन्तु यदि सदस्य अपने संशोधनों को उपस्थित करना ही चाहते हैं तो मैं उन्हें रोक नहीं सकता।

***श्री कुलधर चालिहाः** श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 380 में भाग 1 की मद 1 के स्थान पर यह रखा जाये।

'1. Asom' (आसोम)"

***अध्यक्षः** यदि कोई संशोधन उपस्थित कर दिया जाता है तो मुझे उसे किसी न किसी प्रकार निबटाना होता है। उस पर मत लेना होता है।

***श्री थिरुमल राव** (मद्रास : जनरल): आसाम का उच्चारण आसाम ही है। वे चाहते हैं कि उसके हिज्जे बदल कर उसे "आसोम" कहा जाये। यदि वे चाहें तो "आसाम" को "आसोम" कहें।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 405।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** प्रत्येक संशोधन को पृथक् निबटाया जाये और उस पर मत लिया जाये।

***अध्यक्षः** मैं प्रत्येक संशोधन को पृथक् उठाऊंगा। श्री चालिहा यदि आप अपना संशोधन उपस्थित करना चाहते हैं तो मुझे उस पर मत लेना होगा।

***श्री कुलधर चालिहाः** श्रीमान, मैं केवल यह चाहता हूं कि उसे सरकार के पास भेजा जाये।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 405। श्री ब्रजेश्वर प्रसाद क्या आप उसे उपस्थित करना चाहते हैं?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): जी हां, श्रीमान।

***श्री आर.के. सिधवाः** यदि वह उपस्थित कर दिया गया तो वह फिर सभा की सम्पत्ति हो जायेगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** जी हां, श्रीमान, यह मुझे विदित है। आप उसे अस्वीकार कर सकते हैं। मैं जानता हूं कि आप उसे अस्वीकार करेंगे।

***अध्यक्षः** यदि आप चाहें तो आप उसे अस्वीकार कर सकते हैं। वे यह खतरा उठाने के लिये तैयार हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** प्रथम अनुसूची के सम्बन्ध में मेरे नाम से सात संशोधन हैं। मैं सूची 14 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 335, 340, 348, 356,

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

357 की ओर संकेत कर रहा हूं। सूची 17 में मेरे नाम से दो संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 405 और 411 हैं। श्रीमान, यदि आपकी अनुमति हो तो मैं संशोधन संख्या 358 उपस्थित करना चाहता हूं। एक प्रक्रिया सम्बन्धी कठिनाई है।

***अध्यक्षः** जैसा कि मैं बता चुका हूं यदि आपका संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जायेगी जिसमें संविधान को प्रयोग में लाना असम्भव हो जायेगा। उसके फलस्वरूप हिन्दी-भाषी प्रदेशों का एक गुट बन जायेगा। उनका संविधान में किस प्रकार वर्णन किया जायेगा और उनका कौन-सा विधान-मंडल तथा राज्यपाल होगा? पांच राज्यों और प्रान्तों में इस समय पांच राज्यपाल हैं। आप अपने संशोधन द्वारा जिस राज्य का निर्माण करना चाहते हैं वहां कौन-सा विधान-मंडल कार्य करेगा? मैं बता चुका हूं कि यह कठिनाई उठ खड़ी होगी।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मैंने यह विचार किया था कि आपने वे बातें भाषाओं पर आधृत प्रान्तों के सम्बन्ध में ही कही थी।

***अध्यक्षः** जी नहीं। मैंने यह सुझाव सभा के सदस्यों के सामने शिष्टता के नाते रखा है अन्यथा मैं इन्हें अनियमित घोषित कर सकता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** श्रीमान, आपका कथन शिरोधार्य है।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या मैं यह जान सकता हूं कि प्रान्तों के नाम बदलने के सम्बन्ध में जो संशोधन हैं उन सबको क्या आपका सचिवालय सम्बन्धित प्रान्तों को भेजेगा?

***अध्यक्षः** जी हां, नाम बदलने के सम्बन्ध में जो संशोधन हैं वे सब उनके पास भेजे जायेंगे।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या वे सब अनियमित घोषित कर दिये गये हैं?

***अध्यक्षः** जी हां, वे सब संशोधन जो कुछ प्रान्तों को मिलाकर, अथवा कुछ प्रान्तों के भागों को उनसे पृथक् करके उन्हें अन्य प्रान्तों में मिलाकर नये प्रान्त बनाने के सम्बन्ध में हैं वे सब अनियमित घोषित कर दिये गये हैं। यदि किसी संशोधन के फलस्वरूप किसी वर्तमान प्रान्त की सीमा में परिवर्तन होता है तो वह अनियमित हैं क्योंकि वह वर्तमान स्थिति के अनुरूप नहीं है।

***पंडित बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): एक संशोधन मध्य भारत के एक सदस्य के नाम से था। उस समय यह कहा गया था कि डॉ. अम्बेडकर उसे स्वीकार करने के लिये तैयार हैं।

***अध्यक्षः** वह परिवर्तन हो जाने दीजिये तभी हम उस प्रश्न को उठायेंगे।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** क्या मैं संशोधन संख्या 406 उपस्थित कर सकता हूं जिसमें यह प्रस्ताव रखा गया है कि संयुक्त प्रान्त का नाम बलवर्त, आर्यावर्त, हिन्द अथवा बृज-साकेत रखा जाये?

***अध्यक्षः** नामों के सम्बन्ध में सभी संशोधन प्रान्तीय सरकारों के पास उनकी सम्मति जानने के लिये भेजे जायेंगे। इसलिये इसकी आवश्यकता नहीं है कि आप अपना संशोधन उपस्थित करें। राज्य-क्षेत्रों के परिवर्तन के सम्बन्ध में सभी संशोधनों को निबटाने के पश्चात् मेरे विचार से अब और कोई संशोधन नहीं रह जाता।

***श्री सारंगधर दासः** श्रीमान, क्या मैं जान सकता हूं कि मेरे संशोधन के सम्बन्ध में आपका निर्णय क्या है?

***अध्यक्षः** मैंने उसे अनियमित घोषित किया है क्योंकि उसका उद्देश्य यह है कि एक प्रान्त से कुछ राज्य-क्षेत्र पृथक् करके दूसरे प्रान्त के साथ मिला दिये जायें।

***श्री सारंगधर दासः** श्रीमान, वह एक प्रान्त से राज्य-क्षेत्र पृथक् करके दूसरे प्रान्त में मिलाने के सम्बन्ध में नहीं है। वह लोगों की इच्छा ज्ञात करने के सम्बन्ध में है जिसके फलस्वरूप किसी प्रान्त का कुछ भाग पृथक् करके दूसरे प्रान्त के साथ मिला दिया जायेगा अथवा नहीं मिलाया जायेगा। मैं इस सम्बन्ध में तर्क उपस्थित कर सकता हूं।

***अध्यक्षः** यह संविधान का अंग नहीं हो सकता। यह प्रस्ताव विधान-सभा में उपस्थित किया जा सकता है। आप उसे विधान सभा के समक्ष रख सकते हैं। यदि आपको वहां सफलता प्राप्त हुई और यह परिवर्तन हो गया तो यह संविधान का अंग हो जायेगा।

***श्री ए. थानू पिल्ले** (संयुक्त राज्य-तिरुवांकुर और कोचीन)**:** अनुच्छेद 3 में इस प्रकार के मामलों के सम्बन्ध में उपबन्ध हैं।

***अध्यक्षः** जी हां, यह बताने के लिये मैं आपका आभारी हूं।

***श्री युधिष्ठिर मिश्र** (उड़ीसा राज्य)**:** जिन संशोधनों की सूचना दी गई है उनमें से कुछ विभिन्न प्रान्तों की सीमाओं को बदलने के सम्बन्ध में हैं। किन्तु राज्यों के सम्बन्ध में मेरे विचार से आपको स्मरण होगा कि पिछली जनवरी को हमने भारत शासन अधिनियम, 1935, को संशोधित किया था और उसमें एक नवीन धारा अर्थात् धारा 290-क, रखी थी। उस धारा के अधीन ही प्रशासन के प्रयोजन के लिये ये राज्य निकटवर्ती प्रान्तों को सौंपे गये हैं। मेरा निवेदन है कि वे वैध रूप से उन प्रान्तों के अंग नहीं हैं बल्कि प्रशासन के उद्देश्य से उन्हें सौंपे गये हैं। इसलिये मेरा संशोधन संख्या 390 अनियमित नहीं घोषित किया जा सकता।

***अध्यक्षः** मैंने इस आधार पर निर्णय किया है कि हम अनुसूची को संशोधित करके वर्तमान स्थिति में परिवर्तन नहीं कर सकते। संविधान में हम केवल उन बातों को रख रहे हैं जो आज अस्तित्व में हैं और उन सब बातों को नहीं रख

[अध्यक्ष]

रहे हैं जिन्हें हम चाहते हैं, अथवा जो बाद में अस्तित्व में आयेंगी। इसलिये मैं यह कहूंगा कि ये संशोधन अनियमित हैं क्योंकि इनका उद्देश्य राज्य-क्षेत्रों में परिवर्तन करना है।

*श्री सारंगधर दासः** सरायकेला का क्या होगा?

***अध्यक्षः** इसकी स्वतन्त्रता है कि 26 जनवरी से पहले दूसरा निर्णय कर लिया जाय।

***श्री सारंगधर दासः** श्री जयनारायण व्यास ने सिरोही के सम्बन्ध में जो प्रश्न पूछा था उसके उत्तर में श्री मुन्शी ने बताया था कि उपप्रधान मन्त्री महोदय क्या करना चाहते हैं। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि मेरे संशोधन पर कोई वक्तव्य दिया जाये क्योंकि मेरी यह धारणा है कि ये दो राज्य लोगों की तथा नरेशों की इच्छा न होते हुये भी बिहार में मिला दिये गये थे। यह उस करार की प्रस्तावना के विरुद्ध है। जो नरेशों ने भारत सरकार के साथ किया था। पिछली मई को जब वे बिहार में समाविष्ट किये गये थे तो सरायकेला के नरेश ने राज्य-मंत्रणालय द्वारा नियुक्त अधिकारी से कहा था कि सरायकेला को प्रशासन की सुविधा के लिये अस्थाई रूप से समाविष्ट किया जा रहा है और संविधान को अन्तिम रूप से पारित करने के पूर्व लोगों की तथा नरेशों की इच्छा ज्ञात करने की आवश्यकता पड़ेगी। इसी कारण मैंने इस उपबन्ध का प्रस्ताव रखा है। यदि राज्य-मंत्रणालय इस आशय का वक्तव्य निकाले कि ये राज्य स्थाई रूप से बिहार में समाविष्ट कर दिये गये हैं, अथवा एक सीमा-आयोग इस प्रश्न पर विचार करेगा, अथवा लोगों की इच्छा जानने के लिये कोई अन्य उपाय निकाला जायेगा तो मुझे संतोष हो जायेगा और मैं अपना संशोधन वापस ले लूंगा।

***अध्यक्षः** मुझे विश्वास है कि राज्य-मंत्रणालय ने हाल में यह विज्ञप्ति निकाली थी कि वह उसी निर्णय को रहने देगा जो उसने पहले किया था। मेरे विचार से उसने इस आशय की एक विज्ञप्ति निकाली थी और वह हाल में प्रकाशित भी हुई थी।

***श्री युधिष्ठिर मिश्रः** जहां तक हम समाविष्ट राज्यों के प्रतिनिधियों का सम्बन्ध है हम इस सभा में उनका प्रतिनिधित्व करने आये हैं। आप संविधान में समाविष्ट राज्यों के सम्बन्ध में उपबन्ध रखने जा रहे हैं। यदि इस अवसर पर हम समाविष्ट राज्यों के प्रतिनिधि अपनी बात नहीं कहेंगे तो हम यहां आये किसलिये हैं? मेरा निवेदन है कि इस प्रश्न पर वाद-विवाद समाप्त कर देना उचित नहीं है।

***अध्यक्षः** मैं जो निर्णय सुना चुका हूं उसे नहीं बदल सकता।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, भाग 3 के सम्बन्ध में मुझे कुछ कहना है।

***अध्यक्षः** क्या भाग 3 के बारे में?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, हमने राजस्थान और सौराष्ट्र के राज्यों की परिभाषा की है और कहा है कि सौराष्ट्र के विषय में वे राज्य-क्षेत्र भी समाविष्ट

होंगे जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले काठियावाड़ से संयुक्त राज्य में थे और जो राज्य-क्षेत्र ऐसे प्रारम्भ से पूर्व तत्स्थानी देशों राज्य की सरकार द्वारा प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1947 के उपबन्धों के अधीन प्रशासित थे। जहां हमने राज्यों के नाम लिखे हैं वहां जम्मू और कश्मीर का नाम भी लिखा है। मैं स्थिति स्पष्ट करना चाहता हूं। मैं यह चाहता हूं कि इस स्थल पर यह लिख दिया जाय कि जम्मू और कश्मीर के विषय में वह राज्य-क्षेत्र समाविष्ट होगा जो 15 अगस्त 1947 के ठीक पूर्व अस्तित्व में था और जिस पर उस तिथि को जम्मू और कश्मीर के महाराजा प्रशासन करते थे। श्रीमान, इसकी आवश्यकता है क्योंकि हम सबको विदित है कि इस समय एक युद्ध विराम पंक्ति बनाई गई है और उस क्षेत्र का एक भाग आक्रमणकारियों के हाथ में है।

***अध्यक्षः** यह एक राजनैतिक प्रश्न है और इसे हम इस सभा के एक प्रस्ताव से हल नहीं कर सकते।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** तब जम्मू कश्मीर की स्थिति क्या होगी? उसका कौन-सा राज्य-क्षेत्र होगा?

***अध्यक्षः** इस समय हमारे हाथ में जो कुछ है वह है ही और आगे चल कर हमें यदि कुछ अधिक प्राप्त हो जायेगा तो हमारा अधिक क्षेत्र पर अधिकार हो जायेगा।

मेरे विचार से अब और कोई संशोधन नहीं है। यदि कोई सदस्य संशोधनों पर बोलना चाहते हैं तो वे बोल सकते हैं।

***माननीय श्री एन.वी. गाडगिल** (बम्बई : जनरल): श्रीमान, मेरे विचार से महाराष्ट्र के हम कुछ लोगों का यह कर्तव्य है कि इस अवसर पर हम अपनी स्थिति स्पष्ट कर दें। कार्यकारिणी समिति ने हाल में जो प्रस्ताव स्वीकार किया था वह यद्यपि बहुत सहायक है किन्तु उससे अधिक पथप्रदर्शन नहीं होता क्योंकि इस समय जब कि संघीय संविधान का निर्माण हो रहा है, उचित यह था कि संघांगों की सीमाओं को निश्चित करने के लिये कुछ सिद्धान्त निर्धारित किये जाते। साथ ही मैं यह भी अनुभव करता हूं कि यह समय बहुत अनकल समय नहीं है। मैं हमेशा यह कहता आया हूं कि यह प्रश्न समझदारी से, समझौते से तथा सद्भावना के वातावरण में हल किया जाना चाहिये। मैं इसका अनुभव करता हूं और आपने जो समिति नियुक्त की थी उसके समक्ष बोलते हुये मैंने कहा था कि इस प्रश्न पर विचार-विमर्श पांच वर्ष के लिये स्थगित कर देना चाहिये। मैं यह पहली बार नहीं कह रहा हूं। मैं जानता हूं कि क्या कठिनाइयां हैं। मैं यह केवल संयुक्त महाराष्ट्र के निर्माण के सम्बन्ध में ही नहीं कहता हूं बल्कि अन्य प्रान्तों के सम्बन्ध में भी कहता हूं। मुझे यह कहने का साहस इस कारण भी हो रहा है कि मैं देखता हूं कि वर्तमान खण्ड (2) से, उसके संशोधित रूप में, वास्तव में कुछ सुविधा हो गई है। आरम्भ में बहुत ही पेचीदी प्रथा रखी गई थी किन्तु अब किसी प्रान्त की सीमा निश्चित करने के लिये एक विधेयक प्रस्तुत किया जा सकता है। इस प्रकार का विधेयक संविधान को संशोधित करने वाला विधेयक नहीं समझा जायेगा अब स्थिति यह है कि इसके लिये संविधान में ही साधन उपलब्ध हैं। इसलिये प्रान्तों के निर्माण के सम्बन्ध में इस समय किन्हीं प्रश्नों को उठाने

[माननीय श्री एन.वी. गाडगिल]

की आवश्यकता नहीं है और डॉ. अम्बेडकर ने जिस अनुसूची को प्रस्तुत किया है उसे स्वीकार कर लेना चाहिये। मैं यह निवेदन करना चाहता था।

मैं एक सुझाव और प्रस्तुत करना चाहता हूं। यदि आप नामों का हिन्दीकरण चाहते हैं तो केवल कुछ प्रदेशों के नामों का ही जैसे कौशल, विदर्भ आदि का हिन्दीकरण न करिये। आप बम्बई को 'पश्चिम भारत'... और मद्रास को 'दक्षिण देश', कह सकते हैं, इत्यादि। यदि आप हिन्दीकरण चाहते हैं तो सभी नामों का, न कि कुछ नामों का, हिन्दीकरण कीजिये। कृपा करके मसौदा-समिति मेरे इस सुझाव को ध्यान में रखे। अन्यथा अनेक प्रकार की पेचीदगियां पैदा हो जायेंगी और जो लोग कुछ ही नामों का हिन्दीकरण चाहते हैं उनके प्रयास से हितसाधन न होकर हितहानि होगी। इसलिये मसौदा-समिति के सदस्यों से मेरा अनुरोध है कि इसे ध्यान में रखा जाय।

मेरे विचार से उचित यह होगा कि नवीन संविधान जब प्रयोग में आ जाये तभी सीमाओं को बदलने अथवा ठीक करने के प्रश्न पर विचार किया जाये। वास्तव में उसे हल करने में तभी सफलता भी प्राप्त हो सकती है, क्योंकि उस समय उन्हें निर्वाचकों से इसके लिये अधिकार भी प्राप्त रहेगा। जिन लोगों की यह धारणा है कि इस प्रश्न का एक विशेष हल ही उसका एकमात्र हल है उन्हें यह समझाना चाहिये और यह विश्वास दिलाना चाहिये कि इसका एक भिन्न हल भी है जिसके देश का अधिक हितसाधन हो सकता है। इसलिये इन सब बातों पर विचार करने के पश्चात् मेरा निवेदन है कि इस पूरे प्रश्न को इस समय स्थगित रखा जाये और यह अनुसूची जिस रूप में प्रस्तावित हुई है उस रूप में इसे स्वीकार कर लिया जाये और नामों के परिवर्तन के सम्बन्ध में मैंने जो सुझाव रखा है वह भी स्वीकार कर लिया जाये।

***श्री जयनारायण व्यास:** अध्यक्ष महोदय, आपका निर्णय शिरोधार्य है किन्तु मैं सिरोही के सम्बन्ध में दो साधारण बातें कहना चाहता हूं। एक बात यह है कि संविधान की दृष्टि से सिरोही इस समय 'शासन-विहीन भूमि' है। यह राज्य क्षेत्र न तो प्रथम अनुसूची के भाग 1 के अन्तर्गत आता है और न भाग 2 अथवा भाग 3 के अन्तर्गत आता है। मेरे विचार से मेरे विद्वान मित्र श्री मुन्शी इस विषय पर घोषणा करने के लिये राज्य-मंत्रणालय से कहने वाले हैं। मुझे आशा है कि यह घोषणा की जायगी। दूसरी बात यह है कि डॉ. अम्बेडकर ने अधिकृत रूप से जो दूसरा संशोधन प्रस्तुत किया है उसमें बम्बई प्रेसीडेंसी की ऐसी परिभाषा की गई है कि उसमें सिरोही सम्मिलित हो जाता है। प्रान्तातीत क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1947 को बम्बई को लागू करने का अर्थ यह है कि सिरोही ही सम्मिलित किया जा रहा है और कोई क्षेत्र नहीं सम्मिलित किया जा रहा है। इसलिये मुझे आशा है कि उस घोषणा में राज्य-मंत्रणालय, बम्बई की परिभाषा के सम्बन्ध में भी स्थिति स्पष्ट करेगा। अन्यथा सिरोही तथा राजपूताने के निवासी तथा सारे देश के लोग भी यही समझेंगे कि बिना यथोचित रस्मों को पूरा किये हुए सिरोही को चुपचाप बम्बई में समाविष्ट कर दिया जा रहा है। मैं केवल इतना ही निवेदन करना चाहता था।

***श्री युधिष्ठिर मिश्र:** श्रीमान, डॉ. अम्बेडकर ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसके अनुसार ऐसे राज्य, जिनके शासकों ने उनके सम्बन्ध में अपने क्षेत्राधिकार

तथा शक्तियों को केन्द्रीय सरकार को सौंप दिया है, प्रान्तों में समाविष्ट कर दिये गये हैं। पिछली जनवरी को भारत शासन अधिनियम, 1935 संशोधित किया गया और केन्द्रीय सरकार को प्रशासन के लिये इन राज्यों को किसी प्रान्त को सौंप देने की शक्ति दी गई। अनुच्छेद 290-क के उपबन्धों के अनुसार यद्यपि प्रशासन के लिये इन राज्यों को प्रान्तों में समाविष्ट कर दिया गया है किन्तु विधि का सहारा लेकर इन राज्यों के अस्तित्व को अब भी बनाये रखा जा रहा है। इसलिये मैं मसौदा-समिति ने यह स्पष्ट कराना चाहता हूं कि इस मसौदे में भी क्या पुरानी ही स्थिति बनाई रखी गई है अथवा अब वह स्थिति नहीं है।

श्रीमान, जब 14 दिसम्बर, 1948 को सरदार पटेल कटक गये थे तो उड़ीसा राज्यों के शासकों ने भारत सरकार से एक करार किया था और उस करार की प्रस्तावना में इन शासकों ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि प्रशासन के लिये उनके राज्यों को उड़ीसा प्रान्त को सौंप दिया जाये। सरायकेला के राजा ने जो करार किया था उसके शब्द मैं आपको पढ़कर सुनाता हूं। "चूंकि राज्य के तथा उसके लोगों के तात्कालिक हितों को दृष्टि में रखते हुये सरायकेला के राजा की यह इच्छा है कि राज्य का प्रशासन उड़ीसा प्रान्त के प्रशासन में यथाशीघ्र उस प्रकार समाविष्ट किया जाये जिस प्रकार भारत सरकार उसे समाविष्ट करना चाहे......" अब मसौदा-समिति ने जो संशोधन उपस्थित किया है उससे इस करार का खण्डन होता है। मैं मसौदा-समिति से प्रार्थना करता हूं कि वह इस पर विचार करे।

श्रीमान, मैं और श्री सारंगधर दास उड़ीसा राज्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं और इसलिये इस सम्बन्ध में हमारा विशेष उत्तरदायित्व है। सरायकेला और खरसवां इन दो राज्यों ने हमें अपना प्रतिनिधि चुना है। मेरे विचार से हमारे लिये उचित यही है कि हम सभा को संक्षेप में सूचित करें कि इन राज्यों की क्या इच्छा है। बहुत प्राचीन काल से इन दो राज्यों के लोगों के उड़ीसा प्रान्त के लोगों से सामाजिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्ध रहे हैं। भाषा तथा जाति की दृष्टि से भी वे उनके निकट सम्बन्धी हैं। उत्कल विश्वविद्यालय का क्षेत्राधिकार इन दो राज्यों तक भी है, यद्यपि वह कटक में स्थित है। इन दो राज्यों के न्यायालयों की भाषा उड़िया है और अभी हाल तक वहां के प्राथमिक स्कूलों में शिक्षा उड़िया के माध्यम से ही जाती थी। प्रशासन तथा राजनीति के प्रयोजनों के लिये भी 1948 के पूर्व ये दो राज्य उड़ीसा राज्य-समूह में सम्मिलित किये जाते थे। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि सरायकेला तथा खरसवां सहित उड़ीसा राज्यों के एकीकरण का आन्दोलन उड़ीसा में, उड़ीसा के नेताओं के नेतृत्व में, आरम्भ हुआ था।

*श्री ब्रजेश्वर प्रसादः इस मामले को राज्य-मंत्रणालय अन्तिम रूप से निबटा चुका है और जो परिपत्र निकाला गया था उसमें यह उल्लिखित था कि प्रान्तों की सीमाओं को फिर से निश्चित किया गया है। अब एक प्रान्त से कोई राज्य-क्षेत्र हटा कर दूसरे प्रान्त में नहीं मिलाया जा सकता। मेरे विचार से माननीय सदस्य महोदय अपने क्षेत्राधिकार का उल्लंघन कर रहे हैं।

*श्री युधिष्ठिर मिश्रः कम से कम इस सभा के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि इसका राज्य-मंत्रणालय से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसलिये मुझे इस सभा में अपने विचार व्यक्त करने का अधिकार है। श्रीमान, यदि आप यह कहते हैं कि मुझे यह अधिकार नहीं प्राप्त है तो मैं अपनी जगह पर जाकर बैठ जाऊंगा।

*__अध्यक्षः__ मैं यह बताना चाहता हूं कि आप जिन विचारों को यहां व्यक्त करना चाहते हैं उनका कहीं भी कोई प्रभाव नहीं होगा। यह सभा उड़ीसा की सीमाओं को नहीं बदल सकती।

*__श्री युधिष्ठिर मिश्रः__ यदि आप मुझे अपने विचार व्यक्त करने देंगे तो कम से कम मुझे यह संतोष हो जायेगा कि एक लोक-प्रतिनिधि के नाते मैंने लोगों के विचार सभा के सामने रख दिये हैं। इसी प्रकार इस वाद-विवाद में भाग लेने के लिये मैंने आपकी आज्ञा मांगी थी।

श्रीमान, उड़ीसा राज्यों में ही सबसे पहले छोटे-छोटे राज्यों को प्रान्तों में समाविष्ट करने का प्रश्न उठाया गया था और उन्हीं राज्यों में यह विचार परिपक्व हुआ था। जब माननीय सरदार पटेल कटक गये थे तो अखिल भारतीय देशी राज्य लोक-परिषद् ने उनको प्रादेशिक परिषद् तथा विभिन्न प्रजा मण्डलों के द्वारा बताया था कि वहां के लोगों की क्या इच्छा है और तदन्तर उन्होंने वहां के राज्यों के शासकों से एक करार किया था। यह आपको विदित ही है कि जनवरी 1948 में ये दो राज्य उड़ीसा के प्रान्त को सौंपे गये थे। दुर्भाग्य से कुछ घटनाओं के कारण इन राज्यों में गोलियां चलानी पड़ीं जिसके फलस्वरूप इन दो राज्यों को बिहार को सौंप दिया गया। इसके पूर्व इस प्रश्न पर बिहार और उड़ीसा में बड़ी तनातनी रही और भारत सरकार ने एक न्यायाधिकरण की नियुक्ति की घोषणा की जिसके सभापति बम्बई के उच्च न्यायालय के एक प्रतिष्ठित न्यायाधीश थे, और उसे इन दो राज्यों की भाषा, संस्कृति तथा प्रशासन-सम्बन्धी सुविधाओं के बारे में लोगों की इच्छाओं का पता लगाने का कार्य सौंपा। आशा यह की जाती थी कि न्यायाधिकरण इस प्रश्न को न्यायोचित ढंग से हल करेगा। किन्तु इन राज्यों के लोगों को यह जान कर बहुत आश्चर्य हुआ कि इन दो राज्यों को बिहार के साथ मिला दिया गया है और इस प्रकार वहां के लोगों को स्वयं निर्णय करने के अधिकार से वंचित किया गया है। उस समय यह ज्ञात हुआ था सरायकेला के राजा यह चाहते थे कि जब तक नया संविधान नहीं बन जाता और उसे स्वीकार नहीं कर लिया जाता तब तक प्रशासन के लिये अस्थाई रूप से उनका राज्य बिहार सरकार को सौंप दिया जाये।

श्रीमान, 1948 में जब संविधान सभा (विधाई) में मैंने एक प्रश्न पूछा था तो.....

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ माननीय सदस्य महोदय को उत्तर देने के लिये मुझे समय नहीं मिलेगा। मैं सरायकेला के महाराजा से मिला था और उन्होंने मुझ से कहा था कि वे सरायकेला को बिहार में समाविष्ट करना चाहते हैं।

*__श्री युधिष्ठिर मिश्रः__ सरायकेला के महाराजा ने राज्य-मंत्रणालय के पास जो आवेदन पत्र भेजा है उसे माननीय सदस्य महोदय पढ़ें। 1948 में सरदार पटेल ने कृपा करके मुझे यह उत्तर दिया था कि सरायकेला और खरसवां के प्रशासन को बिहार को थोड़े समय के लिये ही सौंपा जा रहा है। श्रीमान, मैंने देखा कि पिछले अगस्त में ये राज्य भारत शासन अधिनियम की धारा 290-क के अधीन बिहार को स्थाई रूप से सौंप दिये गये। यह जानने का प्रयास नहीं किया गया कि इन राज्यों के लोगों की क्या इच्छा है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** यह एक गलत बयान है।

***श्री युधिष्ठिर मिश्रः** जहां तक वहां के लोगों का सम्बन्ध है उनसे कुछ नहीं पूछा गया। यदि, जैसा कि मेरे मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद करते हैं, यह एक बलत बयान है तो मैं उनको चुनौती देता हूं कि इन राज्यों के लोगों की इच्छा का पता लगाने के लिये जनमत-संग्रह किया जाये। यदि वे इस चुनौती को स्वीकार करते हैं तो मैं इस समय सभा के समक्ष जो कुछ कह रहा हूं उस पर जोर नहीं दूंगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** माननीय सदस्य सरदार पटेल को लिखें और उनसे इस प्रश्न को फिर उठाने के लिये कहें।

***श्री युधिष्ठिर मिश्रः** मेरे मित्र एक भिन्न प्रश्न उठा रहे हैं।

***अध्यक्षः** मैं नहीं चाहता कि यहां चुनौतियां दी जायें और स्वीकार की जायें।

***श्री युधिष्ठिर मिश्रः** राज्य-मंत्रणालय ने इन राज्यों को बिहार को सौंपने का एकमात्र कारण यह बताया है कि यदि ये राज्य उड़ीसा को सौंपे जायेंगे तो प्रशासन सम्बन्धी असुविधा उत्पन्न हो जायेगी। श्रीमान जब मयूरभंज का राज्य उड़ीसा में समाविष्ट किया गया था तो उस समय यह असुविधा उत्पन्न नहीं हुई थी। इसलिये राज्य-मंत्रणालय ने जिस कारण से इन राज्यों को बिहार को सौंपा है वह निराधार है।

मैं एक-दो बातें और कह के अपनी जगह पर चला जाना चाहता हूं। इन दो राज्यों के सम्बन्ध में जो कदम उठाया गया है वह न तो उचित अथवा न्यायोचित है और न वैध ही है। मैं चाहता हूं कि प्रथम अनुसूची में परिवर्तन करके उनकी स्थिति में परिवर्तन किया जाये। मेरा निवेदन है कि मेरी इन बातों पर विचार किया जाये और इन दो राज्यों के भविष्य के सम्बन्ध में लोगों की इच्छानुसार निर्णय किया जाये।

(श्री चदुबंस सहाय बोलने के लिये उठे)

***श्री एच.वी. पातस्करः** मैं कुछ ही मिनटों में अपनी बात समाप्त कर दूंगा। मैं कल जा रहा हूं।

***अध्यक्षः** क्या हम कल बैठक कर रहे हैं?

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार : जनरल)**:** श्रीमान आज अपराह्न में तो नहीं कर रहे हैं।

***अध्यक्षः** (श्री जदुबंस सहाय से) अधिक समय न लीजियेगा।

***श्री जदुबंस सहाय** (बिहार : जनरल)**:** श्रीमान, उड़ीसा के मेरे माननीय मित्र ने अभी जो बातें कही हैं उनके कारण ही मुझे इस सामान्य वाद-विवाद में भाग लेना पड़ रहा है अन्यथा मेरा कोई ऐसा इरादा नहीं था। मैं विवरण नहीं देना चाहता

[श्री जदुबंस सहाय]

किन्तु अपने उड़ीसा के मित्रों से तथा अन्य मित्रों से भी इतना अवश्य कहना चाहता हूं कि यह मामला अन्तिम रूप से तय किया जा चुका है। प्रत्येक प्रश्न का आखिर कोई अन्तिम हल भी होना ही चाहिये। यदि उड़ीसा और बिहार के मित्र इस प्रश्न को लेकर विवाद करते रहे यद्यपि राज्य-मंत्री महोदय इसे अन्तिम रूप से तय कर चुके हैं, तो दोनों प्रान्तों के बहुत कटु सम्बन्ध हो जायेंगे। बिहार में हम लोग इस प्रश्न के अन्तिम रूप से हल किये जाने पर यह आशा करते हैं कि दो प्रान्तों के बीच पारस्परिक सद्भाव की अभिवृद्धि होगी क्यों कि यह न केवल दोनों प्रान्तों के कल्याण के लिये आवश्यक है बल्कि सारे देश के हितसाधन के लिये भी आवश्यक है। इसलिये श्रीमान, श्री युधिष्ठिर मिश्र ने अपने भाषण में जिस प्रश्न को उठाया है वह वास्तव में इस सभा में नहीं उठाया जाना चाहिये था।

प्रश्न वास्तव में यह है कि क्या सरायकेला और खरसवां की बिहार में समाविष्टि के विषय को फिर से उठाया जाये या नहीं। माननीय सरदार पटेल कटक गये, उन्होंने सब कुछ देखा तथा एक अधिकारी को नियुक्त किया और सरायकेला के राजा ने जिस प्रसंविदा पर हस्ताक्षर किये थे उसे भी देखा। इन सब बातों पर विचार करके सरदार पटेल के सुयोग्य पथप्रदर्शन से राज्य-मंत्रणालय ने यह अन्तिम निर्णय किया है कि सरायकेला तथा खरसवां के दो देशी राज्य बिहार में ही स्थाई रूप से समाविष्ट रहें। अब इस विषय को फिर उठाने का प्रश्न ही नहीं उठता। इस प्रश्न को फिर उठाने से दोनों प्रान्तों में से किसी का भी हितसाधन नहीं होगा। इसलिये उड़ीसा के अपने मित्रों से मेरा निवेदन है कि इस प्रश्न को उठाने से इन दो प्रान्तों की प्रशंसा नहीं होगी।

इसके अतिरिक्त उड़ीसा से प्रोत्साहन पाने पर सरायकेला के महाराजा ने, जो एक असंतुष्ट व्यक्ति हैं, ऐसे कारणों से, जो बिहार सरकार के नियंत्रण के बाहर थे, संविधान-सभा के सदस्यों को एक पुस्तिका की प्रतियां दी हैं। हमने यह समझा था कि उड़ीसा में आखिर लोग समझदारी से काम लेंगे किन्तु यदि उड़ीसा के राजनीतिज्ञ ही इस प्रकार के आन्दोलन को प्रोत्साहित करेंगे तो उससे न तो उड़ीसा का और न बिहार का हितसाधन होगा। उन्हें हमें सरायकेला के आदिवासियों की तथा अन्य लोगों की भी स्थिति में सुधार करने के लिये कुछ समय देना चाहिये। इन दो राज्यों के लोगों की आर्थिक स्थिति तथा शिक्षा-सम्बन्धी स्थिति में सुधार करने के लिये बिहार सरकार पूरी शक्ति लगा कर प्रयास कर रही है। यदि यह विवाद चलता रहा तो वह सरायकेला तथा खरसवां के राज्यों के लिये बहुत हानिकर सिद्ध होगा। इसलिये श्री युधिष्ठिर मिश्र की बातों का जवाब न देकर मैं उड़ीसा के अपने मित्रों से फिर अपील करता हूं कि वे दो प्रान्तों के बीच सद्भावना स्थापित करने में हमारी सहायता करें और जिस प्रश्न को राज्य-मंत्री महोदय ने अन्तिम रूप से हल कर दिया है उसे फिर नहीं उठायें।

***श्री एच.वी. पातस्कर:** अध्यक्ष महोदय, इस अनुसूची के सम्बन्ध में मेरे नाम से कई संशोधन थे किन्तु मैंने यह विचार किया, और यह ठीक ही विचार किया, कि उनको उपस्थित करने से कोई लाभ नहीं होगा। मेरे नाम से संशोधन संख्या 324 भी है जिसका उद्देश्य यह है कि महाराष्ट्र के नवीन राज्य के निर्माण के लिये एक अनुच्छेद, अर्थात् अनुच्छेद 3-क, रखा जाये किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से

विचार करने पर मैंने उसे भी उपस्थित नहीं किया, क्योंकि मैं जानता था कि वह स्वीकार नहीं किया जायेगा। मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि हमने इस प्रश्न पर विचार-विमर्श कार्यकारिणी समिति के एक प्रस्ताव के कारण स्थगित किया है जिसके फलस्वरूप उन प्रान्तों को स्थापित किया जा सकेगा जिनके बारे में श्रीमान, कुछ समय पूर्व एक आयोग नियुक्त करके आपने जांच करवाई थी।

जहां तक महाराष्ट्र का सम्बन्ध है कार्यकारिणी समिति के उस प्रस्ताव में कहा गया है कि तीन आदमियों की समिति, अर्थात् जे.वी.वी. समिति के प्रतिवेदन की शर्तों के अधीन रहते हुए महाराष्ट्र राज्य की स्थापना की जायेगी। उस प्रतिवेदन में कहा गया है कि किसी भी दशा में बम्बई का नगर महाराष्ट्र राज्य में सम्मिलित नहीं किया जायेगा। इस समय मैं कोई विवाद खड़ा करना नहीं चाहता। मैं केवल यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि बम्बई नगर के बिना महाराष्ट्र राज्य वहां के लोगों को कभी भी स्वीकार्य नहीं होगा। इसी व्यावहारिक दृष्टि से मैंने अपना संशोधन संख्या 324 उपस्थित नहीं किया। अच्छा यह होगा कि हम उस समय तक प्रतीक्षा करें जब कि वे लोग जो इस समय अविश्वास और सन्देह होने के कारण तथा अन्य कई कारणों से भी, बम्बई को महाराष्ट्र से हटाना चाहते हैं, पारस्परिक समझौते और सहयोग के फलस्वरूप बम्बई को अपनी पहली प्राकृतिक जगह, अर्थात् महाराष्ट्र में रहने देने के लिये सहमत हो जायेंगे। हम केवल महाराष्ट्रियों के हितसाधन के लिये नहीं बल्कि सारे देश के हितसाधन के लिये महाराष्ट्र की मांग करते हैं। इसमें प्रान्तीयता की कोई बात नहीं है। इसलिये जहां तक महाराष्ट्र का सम्बन्ध है मैं यह स्पष्ट शब्दों में कहना चाहता हूं कि मैं अपना संशोधन संख्या 324 केवल इस कारण नहीं उपस्थित कर रहा हूं कि मैं देखता हूं कि वर्तमान स्थिति में महाराष्ट्र प्रान्त को स्थापित करने की सम्भावना नहीं है।

*__माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा:__ श्रीमान, अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।

*__अध्यक्ष:__ प्रस्ताव यह है कि:

"अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्ष:__ क्या डॉ. अम्बेडकर बोलना चाहते हैं?

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर__ (बम्बई : जनरल): मुझे कुछ नहीं कहना है।

*__अध्यक्ष:__ तब मैं पूरी अनुसूची पर मत लूंगा क्योंकि बाद में कोई भी संशोधन नहीं उपस्थित किया गया।

*__श्री एच.वी. कामत:__ प्रान्तों के नामों के संशोधनों के अधीन रहते हुए।

*__अध्यक्ष:__ "अधीन रहते हुए" का कोई प्रश्न नहीं है। जैसा कि मैं कह चुका हूं, यह प्रश्न प्रान्तों के सामने रखा जायेगा। यदि हमें कोई ऐसा उत्तर मिला जिसके

[अध्यक्ष]

फलस्वरूप किसी परिवर्तन को करने की आवश्यकता पड़ी तो हम उस पर तृतीय पठन में विचार करेंगे। प्रस्ताव यह है कि:

"प्रथम अनुसूची को संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

प्रथम अनुसूची को संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्ष:** आज सभा स्थगित करने के पूर्व हमें समय-सारिणी निश्चित करनी है। कुछ सदस्यों ने आज प्रात: यह कहा था कि हम कल बैठक करें। ("नहीं" और "हां" की ध्वनियां)

***श्रीमती एनी मैसकरीन:** क्या हमें बहुसंख्यक दल की तानाशाही भुगतनी होगी?

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से माननीय सदस्य का यह कथन निराधार है। किसी बहुसंख्यक समुदाय की तानाशाही का कोई प्रश्न नहीं है। केवल समय-सारिणी निश्चित करने का प्रश्न है और निस्सन्देह इस सभा की समय-सारिणी को देखकर गिरजे जाने के लिये भी समय निकाला जा सकता है। इसमें कोई कठिनाई नहीं होगी। किन्तु यदि सदस्य रविवार को बैठक नहीं करना चाहते हैं तो यह दूसरी बात है।

***श्री आर.के. सिधवा:** यदि हमें अपना कार्य एक दिन में समाप्त करना है तो मेरी समझ में नहीं आता कि हम कल रविवार को बैठक क्यों नहीं करें।

***अध्यक्ष:** हम एक दिन में कार्य समाप्त नहीं कर सकेंगे। यदि हमने कल भी बैठक की तो फिर भी हमें सोमवार को बैठक करनी होगी और यदि हमने कल बैठक नहीं की तो हमें मंगलवार को बैठक करनी होगी। इसलिये यदि सदस्यों की इच्छा हो तो हम कल बैठक कर सकते हैं।

***कुछ माननीय सदस्य:** "जी नहीं, जी नहीं"

***अध्यक्ष:** तब मैं इस पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"सभा कल रविवार को समवेत् हो"

सभा में सदस्यों ने हाथ खड़े करके मत दिये, पक्ष में: 41, विपक्ष में : 35।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** तब हम कल बैठक करेंगे।

इसके पश्चात् सभा रविवार तारीख 16 अक्तूबर 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

GIPD–HS-191 PSD–3-12-52–320

Con. 3. X.9.49
320

अंक 10
संख्या 9

रविवार
16 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट
(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
संविधान का मसौदा–(जारी) [अनुच्छेद 264 क, 274 घघ और 302 कक पर विचार] [अनुसूची 3 और अनुच्छेद 13, 16, 27, 42, 280 क, 85, 111, 112, 203, 122, 130, 169, 213 क, और 215 क पर विचार]	3237–3332

भारतीय संविधान सभा

रविवार 16 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में प्रात: 10 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत् हुई।

संविधान का मसौदा (जारी)

***अध्यक्ष:** कार्यावली में बहुत से अनुच्छेद हैं। उनमें से कुछ विवादास्पद हैं और अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। उन पर शायद वाद-विवाद कुछ समय ले, किन्तु अन्य अनुच्छेद लगभग औपचारिक ही हैं। मैं कठिन तथा विवादास्पद अनुच्छेदों को पहले लेना चाहता हूं, जिससे कि हम उन्हें निबटा दें और फिर उन संशोधनों को ले लें जो केवल औपचारिक ही हैं। क्या हम 264क से आरंभ करें, डॉ. अम्बेडकर? क्या आपके लिये यह ठीक रहेगा?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): क्या मैं यह बता सकता हूं कि ये संशोधन हमारे पास आज प्रात: काल सवा नौ बजे पहुंचे थे और मुझे सभा को आते समय मार्ग में पढ़ने पड़े थे।

***अध्यक्ष:** सवा नौ बजे? वे कल रात को भेज दिये गये थे।

***कुछ माननीय सदस्य:** हमें वे नौ बजे प्रात:काल मिले।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रांत : जनरल): मेरा सुझाव यह है कि इस अनुच्छेद को दोपहर बाद ले लिया जाये, श्रीमान।

***अध्यक्ष:** दोपहर बाद शायद हम सत्र ही न करें। ऐसी स्थिति में मेरी समझ में नहीं आता कि क्या किया जाये।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** यह बहुत उलझे हुए अनुच्छेद हैं और उनसे कई विनिश्चयों पर जो सदन पहले कर चुका है पुन: विचार आरंभ हो जायेगा।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 264 क कई दिनों से हमारे सामने है; 274घघ भी कई दिनों से है; अनुच्छेद 302कक के विषय में भी यही बात है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं आज की कार्यावली के विषय में सामान्य रूप से कह रहा हूं। उनमें से अधिकांश में वे मामले पुन: उपस्थित हो जायेंगे जिन पर सदन पहले ही विचार कर चुका है। किसी के लिये, तीक्ष्णतम बुद्धि वाले के लिये भी इन परिवर्तनों को इतने समय में समझना कठिन है। ऐसा कोई संकेत नहीं किया गया है कि क्या परिवर्तन किये जाने हैं।

***अध्यक्ष:** निस्संदेह मैं समझता हूं कि अनुच्छेद 280क तो निस्संदेह नया अनुच्छेद है जो आज ही आया है। किन्तु अन्य अनुच्छेद कई दिनों से कार्यावली में चले आ रहे हैं।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्य प्रदेश और बरार : जनरल): 264क बिल्कुल नया अनुच्छेद है और हमारे पास इसकी सूचना आज 9 बजे पहुंची थी। इस अनुच्छेद पर संशोधन भेजना तो असंभव ही है। अत: मेरी प्रार्थना है कि इसे दोपहर बाद या कल लिया जाये।

***अध्यक्ष:** इसका अर्थ यह है कि हमें सत्र को दो तीन दिन के लिये बढ़ाना पड़ेगा। मेरे विचार में यह ठीक नहीं रहेगा। हम अनुच्छेद 264क को लेते हैं।

अनुच्छेद 264क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): श्रीमान, मैं संशोधन सं. 425 को पेश करता हूं।

"कि सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 307 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 264क के स्थान पर निम्न रख दिया जाये:

'264A. (1) No law of a State shall impose, or authorise the imposition of, a tax on the sale or purchase of goods where such sale or purchase takes place—

Restriction as to imposition of tax on the sale or purchase of goods.

(a) outside the State; or

(b) in the course of the import of the goods into, or export of the goods out of, the territory of India.

Explanation.—For the purposes of sub-clause (a) of this clause a sale or purchase shall be deemed to have taken place in the State in which the goods have actually been delivered as a direct result of such sale or purchase for the purpose of consumption in that State, notwithstanding the fact that under the general law relating to sale of goods the property in the goods has by reason of such sale or purchase passed in another State.

(2) Except in so far as Parliament may by law otherwise provide, no law of a State shall impose, or authorise

the imposition of, a tax on the sale or purchase of any goods where such sale or purchase taken place in the course of inter-State trade or commerce:

Provided that the President may by order direct that any tax on the sale or purchase of goods which was being lawfully levied by the Government of any State immediately before the commencement of this Constitution shall, notwithstanding that the imposition of such tax is contrary to the provisions of this clause, continue to be levied until the thirty-first day of March, 1951.

(3) No law made by the Legislature of a State imposing, or authorising the imposition of, a tax on the sale or purchase of any such goods as have been declared by Parliament by law to be essential for the life of the community shall have effect unless it has been reserved for the consideration of the President and has received his assent.'

वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर करारोप के बारे में निर्बन्धन

[264क.(1) राज्य की कोई विधि, वस्तुओं के क्रय और विक्रय पर, जहां ऐसा क्रय या विक्रय:

(क) राज्य के बाहर, अथवा

(ख) भारत राज्य-क्षेत्र में वस्तुओं के आयात अथवा उसके बाहर निर्यात के दौरान में, होता है वहां कोई करारोपण, न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी।

व्याख्या.—उपखंड (1) के प्रयोजनों के लिये क्रय या विक्रय उस राज्य में हुआ समझा जायेगा जिसमें ऐसे क्रय या विक्रय के परिणामस्वरूप उसी राज्य में उपयोग के लिये वस्तुओं का भुगतान उस राज्य में किया गया है चाहे फिर वस्तु-विक्रय सम्बन्धी साधारण विधि के अधीन उन वस्तुओं का स्वत्व हस्तान्तरण ऐसे क्रय या विक्रय के कारण किसी दूसरे राज्य में क्यों न हो चुका हो।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(2) जहां तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित करे उसके अतिरिक्त राज्य की कोई विधि किन्हीं वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर वहां कोई करारोपण न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी जहां ऐसा क्रय-विक्रय अन्तर्राज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान में होता है:

परन्तु राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्देश दे सकेगा कि वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर कोई कर जो किसी राज्य की सरकार द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले विधिवत् उद्गृहीत किया जा रहा था, इस बात के होते हुए भी कि ऐसे कर का आरोपण इस खंड के उपबन्धों के प्रतिकूल है, 1951 के मार्च के 31वें दिन तक उद्गृहीत किया जाता रहेगा।

(3) किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि ऐसी वस्तुओं के, जो संसद द्वारा समुदाय के जीवन के लिये आवश्यक घोषित की गई हैं, क्रय या विक्रय पर करारोपण करती या करना प्राधिकृत करती है, तब तक प्रभावी न होगी जब तक कि राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित किये जाने पर उसे उसकी अनुमति प्राप्त न हो गई हो।]"

श्रीमान, जैसा कि सबको ज्ञात है, विक्रय कर से भारत भर में व्यापार तथा वाणिज्य के विषय में बहुत कठिनाई हो गई है। यह पता लगा है कि बहुत से विक्रयकरों से, जो विविध प्रांतीय सरकारों ने लगाये हैं, या तो आयात अथवा निर्यात होने वाले माल में कमी हो गई है, या अन्तर्राज्यिक व्यापार अथवा वाणिज्य में कमी हो गई है। यह मान लिया गया है कि इस प्रकार की अराजकता को चलने नहीं देना चाहिये और प्रांतों को विक्रय-कर लगाने की स्वतंत्रता तो होनी चाहिये किन्तु कुछ ऐसे विनियम भी होने चाहियें जिससे कि प्रांतों द्वारा आरोपित विक्रय-कर उन उचित सीमाओं में रहेगा जो विक्रय-कर के लिये होनी चाहिये। अत: यह अनुभव किया जाता है कि कुछ विशिष्ट उपबंध होना चाहिये जिससे विक्रय-कर लगाने की प्रांतों की शक्ति पर कुछ सीमाएं लगा दी जायें।

पहली बार जो मैं सदन को बताना चाहता हूं वह यह है कि इस अनुच्छेद 264क में कुछ उपबंध हैं जो संविधान के विविध भागों की नकल ही हैं। उदाहरण के लिये, मेरे द्वारा प्रस्थापित अनुच्छेद 264क के उप-खण्ड (1) में, उप-खण्ड (ख) संविधान के उस अनुच्छेद की नकल ही है—विधायी सूची की प्रविष्टि कि आयात तथा निर्यात पर करारोपण केन्द्रीय सरकार का अनन्य क्षेत्र होगा। अतएव जहां तक उप-खण्ड (1) (ख) का संबंध है, कोई विवाद हो ही नहीं सकता कि यह प्रांतों के विक्रय कर लगाने के अधिकार का किसी अर्थ में भी अपहरण है।

इसी प्रकार उप-खंड (2) भी भाग 10क की पुनरावृत्ति है जिसे हमने हाल ही में पारित किया था और जो अंतर्राज्यिक वाणिज्य तथा व्यापार के उपबंधों के विषय में है। अतएव उपखंड (2) में भी कोई नई बात नहीं है। इसमें यही लिखा है कि यदि कोई विक्रय कर लगाया जायेगा तो वह भाग 10क के उपबंधों के विपरीत नहीं होगा।

उप-खंड (3) के विषय में यह स्वीकार कर लिया गया है कि कुछ ऐसी वस्तुएं हैं जो भारत भर में जनता के जीवनार्थ इतनी अपेक्षित हैं कि उन पर उन

प्रांतों द्वारा कर नहीं लगाया जाना चाहिये जिनमें वे पैदा होती हैं। अतः यह अनुभव किया गया कि यदि ऐसी वस्तु है, जो भारत भर में जनता के जीवनार्थ अपेक्षित हो, तो यह आवश्यक है कि सम्बद्ध प्रांत उस वस्तु पर कर लगाये इससे पूर्व, प्रांत द्वारा निर्मित विधि पर राष्ट्रपति की अनुमति मिलनी चाहिये ताकि राष्ट्रपति तथा केन्द्रीय सरकार यह देख सकें कि उस करारोपण से, जो वह प्रांत विशेष लगाना चाहता है, कोई कठिनाई न हो।

उपखंड (2) का परन्तुक भी महत्वपूर्ण है और सदन का ध्यान उस ओर आकृष्ट किया जा सकता है। यह बिल्कुल सत्य है कि कुछ विक्रय कर जो प्रांतों ने लगाये हैं अनुच्छेद 264क में समाविष्ट उपबंधों से सर्वथा संगत नहीं हैं। वे शायद उपबंधों से आगे बढ़ गये हैं। अतएव यह अनुभव किया जाता है कि जब संविधान का यह विधि-नियम लागू हो तब संविधान के उपबंधों से असंगत सब विधियां समाप्त हो जायेंगी। संविधान के आरंभ के दिन इससे विविध प्रांतों को, जिनमें ऐसे कर हैं तथा जिनके वित्त उनकी आय पर कुछ हद तक निर्भर हैं, कुछ वित्तीय कठिनाई हो जायेगी। इसलिये इस संविधान के सामान्य उपबंधों की व्याख्या के रूप में यह प्रस्थापना है कि चाहे किसी प्रांत द्वारा आरोपित विक्रय कर अनुच्छेद 264क के उपबंधों से असंगत हो, फिर भी वह विधि 31 मार्च 1951 तक लागू रहेगी, अर्थात् हम प्रांतों को कुछ मास और देना चाहते हैं जिसमें वे ऐसे फेर-बदल कर सकें जो उन्हें अपनी विधि को इस अनुच्छेद के उपबन्धों से संगत बनाने के लिये करने होंगे।

मैं नहीं समझता कि मेरे संशोधन के विषय में अधिक व्याख्या की आवश्यकता है किन्तु यदि कोई प्रश्न उठाया जायेगा तो मैं वाद-विवाद का उत्तर देते समय उस पर सहर्ष प्रकाश डालूंगा।

(संशोधन सं. 426 तथा 427 पेश नहीं किये गये।)

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रांत : जनरल): श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधन सं. 425 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 264क के खंड (1) की व्याख्या में, 'for the purpose of consumption in that State' ये शब्द हटा दिये जायें, और अन्त में निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये:-

'(4) The Union Parliament shall have power to amend the laws in respect of taxes on sale or purchase of goods with a view to bring uniformity in the laws made by the various States of the Union or in the interests of the Union as a whole, provided that no Bill for such amendment shall be moved in Parliament without the prior permission of the President, and the President before giving such permission shall obtain the views of the Governments of the various States concerned.'

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

[(4) संघ संसद की शक्ति होगी कि वह माल के क्रय या विक्रय पर करों के विषय में विधियों को संशोधित कर सके जिससे कि संघ के विविध राज्यों द्वारा निर्मित विधियों में या समस्त संघ के हितों में एकरूपता लाई जा सके, परन्तु ऐसे संशोधनों के लिये कोई विधेयक संसद में राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना पेश नहीं किया जायेगा, और राष्ट्रपति ऐसी अनुमति देने से पूर्व विविध सम्बद्ध राज्यों की सरकारों के विचारों का पता लगायेगा।]"

श्रीमान, यह संशोधन सं. 425 पहले के संशोधन सं. 307 के रूपभेद के रूप में है। यह कुछ अधिक व्यापक है और इसमें उन आपत्तियों का निराकरण किया गया है जो उस अनुच्छेद पर उठाई गई थीं। किन्तु मैं अनुभव करता हूं कि डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किया गया अनुच्छेद भी बहुत त्रुटिपूर्ण है, और इसका प्रभाव यह होगा कि कई प्रांतों की आय कुछ करोड़ रुपये कम हो जायेगी।

डॉ. अम्बेडकर ने हमारे समक्ष जो सिद्धान्त रखे हैं वे सरल हैं। पहली बात, निर्यात तथा आयात पर विक्रय-कर नहीं लगेगा; दूसरी बात, अंतर्राज्यिक व्यापार पर विक्रय-कर नहीं लगेगा; और तीसरी बात, जीवन की आवश्यक वस्तुओं पर विक्रय कर राष्ट्रपति के अनुमोदन के बिना नहीं लगेगा। किन्तु खंड (1) में, आयात तथा निर्यात की वस्तुओं पर विक्रय कर लगाने के विषय में राज्यों की शक्ति पर निर्बंधन लगाये जाने हैं; चाहे उसकी दर एक पैसा प्रति मन ही क्यों न हो। इसका परिणाम यह होगा कि कई प्रांतों की राजस्व की बड़ी-बड़ी राशियां उनके साथ से निकल जायेंगी। उदाहरण के लिये, मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री मुझे बता रहे थे कि वे मेंगनीज तथा अन्य खनिज पदार्थ राज्य से निर्यात करते हैं। बिहार अभ्रक तथा ऐसी अन्य वस्तुओं का निर्यात करता है। वे विक्रय कर के रूप में केवल एक दो पैसा प्रति मन लगा देते हैं। इससे प्रांत के कोष में एक करोड़ के लगभग रुपया आ जाता है।

अब हम कह चुके हैं कि यदि ये वस्तुएं राज्य में उपभोगार्थ हों तभी यह कर लगाया जा सकता है, अन्यथा नहीं; और इसका परिणाम यह होगा कि प्रांतों के वित्तों में भयानक कमी पड़ जायेगी। अतएव मेरे विचार में 'for the purpose of consumption in that State' शब्द हटा दिये जाने चाहियें और उस कमी को पूरा करने के लिये मैं एक नये खंड का सुझाव दे रहा हूं जो मैंने अभी पढ़ा था और जिसमें लिखा है "The Union Parliament shall have power to amend the laws in respect of taxes on sale or purchase of goods with a view to bring uniformity in the laws made by the various States of the Union or in the interests of the Union as a whole" यह तर्क किया जा सकता है कि यदि यह शक्ति यहां नहीं रखी गई तो कई राज्य ऐसे कर लगायेंगे जो वास्तव में आबकारी कर या उत्पादन कर ही होगा। मैं तो केवल यही चाहता हूं कि जब ऐसे कर लगाये जायें जिनसे केन्द्र को या व्यापार को हानि पहुंचे, तब खंड (4) में प्रदत्त यह शक्ति प्रयुक्त होगी और मैं यह भी कहता हूं कि राष्ट्रपति को अंतिम शक्ति होगी, ताकि आवश्यकता पड़ने पर केन्द्र हस्तक्षेप कर सके।

इसके साथ ही मैं यह भी नहीं चाहता कि इस अनुच्छेद 264क से प्रांतों को ऐसा कुचल दिया जाये कि वे अपने राष्ट्रनिर्माण के कार्यों—जैसे शिक्षा आदि को भी न चला सकें। अत: मेरे इस संशोधन से, कि 'for the consumption in that State' इन शब्दों को हटा कर खंड 4 जोड़ दिया जाये, केन्द्र को किसी प्रकार की हानि नहीं होगी और राज्य को भी कुछ आय हो जायेगी। वास्तव में वित्तीय उपबंधों संबंधी हमारे वाद-विवाद के समय आसाम जैसे राज्यों ने हमें बताया था कि वे खनिज तेल, पेट्रोलियम आदि उत्पन्न करते हैं किन्तु उन्हें कुछ भी नहीं मिलता है। प्रधान मंत्रियों के सम्मेलन में भी यह बात तय हो गई थी कि वे एक पाई तक का विक्रय-कर लगा सकते हैं जिसे उन्हें अपना प्रशासन चलाने के लिये कुछ आय मिल जाये। यह तो न्यायपूर्ण ही है कि जा प्रांत कोई वस्तु उत्पन्न करता है उसे उसके राजस्व का कुछ तो भाग मिलना ही चाहिये। वास्तव में मेरे प्रांत में चीनी होती है जिस पर कर नहीं है, पर गन्ना कर से ही हमें एक करोड़ रुपया मिलता है।

मैं नहीं समझता कि ऐसे निर्बन्धनों से केन्द्र को कुछ मिलेगा। किन्तु उनसे प्रांतों के मुख्य राजस्व स्रोत को हानि होगी। वास्तव में कुछ प्रांतों में राजस्व बहुत अधिक हैं। अतएव मेरे विचार में यह अनुच्छेद बहुत महत्वपूर्ण है और इसमें समुचित संशोधन होना चाहिये, और मैं नहीं समझता कि प्रांतों के साथ ऐसा अन्याय होना चाहिये जैसा इस अनुच्छेद में होता है। यदि मेरे संशोधन को स्वीकार कर लिया जायेगा तो केन्द्र और प्रांतों को–दोनों को लाभ होगा, और 'for the purpose of consumption in that State इन शब्दों को हटा देने से आयात तथा निर्यात शुल्कों में से केन्द्र का कुछ नहीं जायेगा। मेरे विचार में किसी प्रांतीय सरकार का यह विचार नहीं है कि उस कृत्य को हथिया ले, और इसके अतिरिक्त खण्ड (4) से संघ संसद को विक्रय कर की राशियों पर सीमा लगाने का सामर्थ्य होगा और उससे आयात तथा निर्यात पर प्रभाव नहीं पड़ेगा और यदि थोड़ा-सा कर लगा दिया जायेगा तो प्रांतों को लाभ हो सकेगा और यह उनके लिये बहुत अच्छा रहेगा।

उन प्रांतों के प्रति भी यह अन्याय है, जो पेट्रोलियम अथवा चाय जैसे मुख्य वस्तुओं को पैदा करते हैं, कि उन्हें उनमें से कोई आय न दी जाये। अब यदि आसाम को एक दो पैसा प्रति मन का थोड़ा-सा विक्रय-कर लगाने की अनुमति दे दी जाये तो उसे अपने प्रांत के लिये बहुत धन मिल जायेगा। इसी प्रकार बंबई जैसे प्रांतों को वहां उत्पन्न वस्तुओं पर विक्रय कर से कुछ धन मिल जायेगा और यदि ये सब देश भर में एकसम हों तो प्रांतों को भी लाभ होगा और अंतर्राज्यिक व्यापार तथा आयात एवं निर्यात में कोई कठिनाई नहीं होगी। मेरे विचार में मेरे संशोधन बहुत न्यायपूर्ण हैं और इन मामलों के लिये उपबंध कराने की कुछ व्यवस्था होनी चाहिये।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 18 के संशोधन संख्या 425 में, अनुच्छेद 264क के खंड (1) के पश्चात्, निम्न नया परन्तुक प्रविष्ट कर दिया जाये:—

'Provided that the Sale tax shall not exceed Rs. 3/2 percent of the sale price.'

[श्री महावीर त्यागी]

[किन्तु विक्रय कर विक्रय-मूल के 3/2 प्रतिशत से अनधिक होगा।]"

श्रीमान, इस संशोधन को पेश करते हुए मैं उन लोगों के नाम में जिनके प्रतिनिधि हम हैं, सदन की न्याय-भावना से अपील करता हूं। एक दृष्टिकोण से यह अनुच्छेद अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मैं समझता हूं कि यह संविधान राज्य तथा जनता के बीच एक संविदा है। इस संविदा का मसौदा बनाने का कार्य जनता के प्रतिनिधियों की इच्छा पर छोड़ा गया है। अतएव हमें उन प्रशासकीय कठिनाइयों से विचलित नहीं होना चाहिये जो विविध प्रांतों में, माननीय मंत्री बतायें वरन् हमें सामान्य नागरिकों की कठिनाइयों का ध्यान रखना चाहिये। संविधान नागरिक तथा राज्य के बीच एक संविदा है इसकी मुख्य शर्तें ये हैं कि नागरिक अमुक-अमुक कर देगा जब भी उसे विधि द्वारा ऐसा करने के लिये कहा जायेगा। यह सबसे बड़ा दायित्व है जो नागरिक अपने ऊपर लेने के लिये तैयार हैं। एक ओर भारत के नागरिक हैं और दूसरी ओर संविदे के दूसरे पक्षक, राज्य की ओर से डॉ. अम्बेडकर हैं। वे राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं तथा राज्य के दृष्टिकोण को ही पेश कर रहे हैं। राज्य, इस संविधान द्वारा शांति बनाये रखने का तथा जनता की समृद्धि को बढ़ाने का उत्तरदायित्व लेता है। जनता अनुपस्थित है, मैं उन लोगों के प्रतिनिधियों की सद्भावना को अपील करता हूं कि वे अपने लोगों के प्रति जिनके वे प्रतिनिधि हैं, सच्चे रहें तथा राष्ट्र के इस उच्चतम न्यायालय में उनके हितों का रक्षण करें। हम उनकी अनुपस्थिति में ही इस सदन में उनके भाग का निर्णय कर रहे हैं।

जब हम प्रांतीय सरकारों को किसी नागरिक की जेब से एक पाई लेने की अनुमति दें तो हमें देखना चाहिये कि वह राजी से ली जाये और प्रत्येक पाई अंततः उसकी जेब में ही वापस लौट जाये चाहे उस व्यक्ति को उसके बदले में कोई सुविधाएं मिलें या अधिक राशि मिल जाये। आज भारत में सैकड़ों कर लिये जा रहे हैं और जनता को वास्तव में इन करों में से कोई विशेष लाभ नहीं होता, न उन्हें अधिक समृद्धि प्राप्त होती है जिसकी आशा सरकार से करने के लिये उन्हें कहा जाता है और न कोई और ही सुविधा प्राप्त होती है। राज्य यहां भारत में थोड़ी सी सेवा अवश्य करते हैं किन्तु उसका जनता पर अतिरिक्त भार पड़ता है। उदाहरणार्थ रेलें जनता की सुविधा के लिये हैं किन्तु उन्हें वाणिज्यिक आधार पर चलाया जाता है तथा जनता को उनके लिये पैसा देना पड़ता है। तार, डाकघर, नहरें आदि सब सुविधाएं कहलाती हैं पर उनके लिये हमें अतिरिक्त धन देना पड़ता है। राज्य जनता को कोई भी मुफ्त सुविधा नहीं देता—केवल कुछ कुनीन पानी मिला कर निर्धन लोगों में मुफ्त बांट दिया जाता है। अन्यथा डॉक्टर भी शुल्क लेते हैं और लोगों से पैसा लेकर इलाज करते हैं। अतः हम देखते हैं कि राज्य कोई सुविधा मुफ्त नहीं दे रहा, केवल हम अपने नागरिकों को यह विश्वास दिला कर मानसिक संतोष दे रहे हैं कि वे स्वतंत्र हैं। वे स्वतंत्रता के मूल्य को नहीं जानते। सरकार करों के बारे में सफाई देती है कि वह युद्ध में सीमान्त की रक्षा करता है। जब भी युद्ध होता है तब अतिरिक्त कर लगाये जाते हैं।

अब, मेरा निवेदन है कि हमें गैर-सरकारी व्यक्तियों से जो कर मिलते हैं वह उन्हें वापस नहीं लौटते। यदि प्रांतीय सरकारों को विक्रय-कर उगाहने की अनुमति दी जाये तो उन्हें यह भी देखना चाहिये कि वे वाणिज्य में समृद्धि बढ़ायें और उन लोगों में व्यापक वैभव बढ़ायें जो वाणिज्य में लगे हुए हैं। अब वे दुकानदारों को या उन लोगों को जो खरीदते या बेचते हैं या सुविधाएं प्रदान करते हैं? वे उन्हें कोई लाभ नहीं पहुंचाते। क्या उन्होंने कोई नई मंडियां बनाई हैं या कोई नई सुविधाएं प्रदान की हैं? यह कर किसलिये है? जब प्रांतीय विषयों की सूची में विभिन्न करों का उल्लेख किया गया था तब यह समझा गया था कि विक्रय कर प्रांतों के लिये छोटी सी सहायता है। क्योंकि उनका राजस्व बढ़ने की संभावना नहीं है। प्रांत अधिकत: अपने भू-राजस्व पर निर्भर हैं जो कई वर्षों के लिये लगभग पर निश्चित ही है। अत: प्रांतीय सरकारों के काम बढ़ने के साथ-साथ यह अच्छा समझा गया था कि उन्हें अपने आय-व्ययक का संतुलन करने के लिये कुछ अतिरिक्त राजस्व दिया जाये।

अब श्रीमान उन्हें विक्रय-कर के रूप में यह थोड़ा-सा सहारा दिया गया था। मैं देखता हूं कि वस्तुस्थिति ऐसी है कि कुछ वर्षों में ही परिस्थिति बिल्कुल बदल गई है। विक्रय-कर राजस्व का मुख्य स्रोत बनता जा रहा है, उनसे भी बड़ा बन गया है जो उनके राज्य के मुख्य स्रोत थे। मेरे प्रांत में युद्ध से पूर्व कुल राजस्व मुश्किल से 13 करोड़ के लगभग था। अब वह लगभग 55 करोड़ बन गया है। ये अन्य कर भी जो प्रांतों ने अपने राजस्व के मुख्य स्रोत के अतिरिक्त लगाये हैं जनता पर ही पड़े हैं।

अब श्रीमान भारत में करों का भार सबसे अधिक है। भारत में युद्ध काल में भी इतने कर नहीं लगाये गये जितने कि आज हैं। और सरकार इन करों के बदले में सबसे कम सुविधाएं दे रही है। यह सदन उच्चतम प्राधिकारी है जिसमें प्रभुता की सब शक्तियां निहित हैं। हम उच्चतम न्यायालय के रूप में यह निश्चित करने के लिये बैठे हैं कि क्या हम प्रांतीय सरकारों को छूट दे सकते हैं कि वे जनता पर कर लगाये जायें तथा कोई उच्चतम सीमा उस पर न लगे। क्योंकि विक्रय कर पर कोई सीमा नहीं है इसलिये वे कर को बढ़ाये जा सकते हैं और अंततोगत्वा ऐसा वक्त आयेगा जब जनता अधिक कुछ देने में समर्थ नहीं रहेगी और इसका विपरीत प्रभाव हमारे केन्द्र के करों पर भी पड़ेगा। यदि प्रांतीय सरकारें अपने करों को वर्तमान गति से बढ़ाती गईं तो जनता की समस्त करदान की समर्थता का शोषण प्रांतीय सरकार द्वारा ही हो जायेगा तथा इससे केन्द्रीय सरकार को हानि पहुंचेगी। मेरा कहना यह है कि यदि हम सीमा निश्चित नहीं करेंगे तो प्रांतीय सरकारें कर बढ़ाये जायेंगी और यह उन लोगों के साथ घोर अन्याय होगा जो हमारी दया पर निर्भर हैं। और जिन्हें विरोध करने का या कर देने से इनकार करने का अधिकार भी नहीं होगा। उन्हें केवल इसी बात पर संतोष करना होगा कि आखिर उन पर वे ही लोग कर लगा रहे हैं जिनके लिये उन्होंने मत दिये थे। यह 'मत पेटिका लोकतंत्र' है जिसका लोगों पर यह प्रभाव पड़ेगा। अत: मेरा निवेदन है कि श्रीमान, दो पैसे रुपये की दर नियत कर देनी चाहिये, जो 3/2 प्रतिशत बैठता है, ताकि प्रांत इस कर की दर को न बढ़ा सकें।

[श्री महावीर त्यागी]

फिर मैं एक और दृष्टिकोण से भी सीमा नियत करना चाहता हूं। मेरा यह कहना है कि चाहे विविध प्रांतों के आय-व्ययक बहुत बढ़ गये हैं, फिर भी वे जनता को पुरानी सरकारों से अधिक सुविधाएं नहीं दे रहे हैं। परिणाम यह है कि यद्यपि वे अपने आय-व्ययकों को अवाध रूपेण बढ़ा रहे हैं क्योंकि उन्हें कर उगाहने की स्वतंत्रता है, फिर भी वे अपना व्यय घटाने के लिये कुछ नहीं कर रहे हैं; किसी प्रांत में व्यय घटाने की प्रवृत्ति है ही नहीं। आज व्यय इतने हैं जितने युद्धकाल में भी नहीं थे। मैं कहता हूं कि युद्ध एक आपात था और उन्हें अस्थायी रूप में कर लगाने पड़ते थे। श्रीमान, उस समय विदेशी शासन था। किन्तु आज जनता की सरकार है। यद्यपि युद्ध समाप्त हो गया है फिर भी प्रांतीय सरकारों ने अपना व्यय कम करना आरंभ नहीं किया है। उनकी अधिकांश आय खर्च-खाते में चली जाती है और उसका कोई भी अंश पूंजीखाते में खर्च नहीं होता जिसका उद्देश्य लोगों को समृद्ध बनाना होता है। यदि इस धन को पूंजीखाते में खर्च किया जाता तो मैं इसकी सराहना कर सकता था। खर्च खाते में से बहुत कम धन पूंजी खातों में जा रहा है। पूंजीखाते में जब भी कोई धन व्यय करना होता है तब उसे ऋण द्वारा प्राप्त किया जाता है।

इस प्रकार, श्रीमान, वे प्रांतों के साधनों को ही नहीं घटा रहे हैं, वरन् नागरिकों पर भी भार डाल रहे हैं। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि यदि इस प्रकार प्रांतों को आजादी दे दी जायेगी कि वे प्रांत के नागरिकों पर भार बढ़ाये जायें तो इसका प्रभाव समस्त देश की समृद्धि पर पड़ेगा। अतः जब हम नागरिकों तथा राज्यों के बीच विनिश्चय कर रहे हैं तब हमें वे सीमायें भी नियत कर देनी चाहियें जहां तक प्रांत जा सकते हैं। अतः मैं, दलीय पक्षपातों को त्याग कर, प्रांतीय सरकारों से अनुरोध करता हूं कि हमें, राष्ट्र के न्यायाधीशों के रूप में बैठे हुए नागरिकों के प्रति जो यहां उपस्थित नहीं हैं, न्याय करना चाहिये—पक्षपात हीन न्याय, पूर्ण न्याय, ठीक-ठीक तथा संतुलित न्याय करना चाहिये। उन्हें पूरा न्याय मिलना चाहिये।

आजकल की विक्रय-कर प्रणाली में कई त्रुटियां हैं। अब, दिल्ली में विक्रय कर नहीं है; संयुक्त प्रांत में मोटर गाड़ियों, रेडियो, बाइसिकलों आदि पर विक्रय कर है। जब भी मेरठ में किसी नागरिक को मोटर गाड़ी या बाइसिकल की अपेक्षा होती है वह वहां स्थानीय दुकान पर नहीं जाता। स्थानीय अधिकरण को हानि होती है। वह दिल्ली आ जाता है। मैं देखता हूं कि डॉ. अम्बेडकर मुझे चुप होने के लिये कह रहे हैं। वे अनुचित प्रभाव डाल रहे हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैंने यह बात समझ ली है।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या आप समझ गये? क्या आप इसकी सराहना भी करते हैं? क्या आप मेरी बात मानने के लिये तैयार हैं?

आपके पीछे जनता के प्रतिनिधि हैं। डॉ. अम्बेडकर मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि यदि आप न्यायी हैं, यदि आप न्याय को मान्यता देते हैं, तो आप अपने जीवन में आगे चल कर भारत के उच्चतम न्यायाधीश बन सकते हैं, यदि आप

नागरिक के प्रति न्याय करें। मेरा निवेदन है, श्रीमान, यही तरीका है जिससे कि कर लगाया जा रहा है। एक राज्य में दो आना रुपया कर है और दूसरे राज्य में दो पैसा रुपया कर है। एक राज्य में एक ही स्थान पर कर लगाया जाता है, दूसरे राज्य में कई स्थानों पर बिक्री के समय कर लगाता है। जुआधार के समान जो भी कुछ रकम देता है उसका कुछ अंश जुए के कोष में चला जाता है। इस प्रकार प्रांत प्रत्येक बिक्री के पीछे पड़े हुए हैं। यह तो अंधा कानून बनता जा रहा है।

मेरा निवेदन है कि यह बहुत गम्भीर मामला है। अच्छा हो यदि डॉ. अम्बेडकर समस्त अनुच्छेद पर पुनर्विचार करें तथा इसे 'एक रूप कर' बना दें तथा केन्द्रीय सरकार के हाथ में दे दें। केन्द्रीय सरकार के लिये सबसे अच्छी बात यह होती कि वे एक विधि बना देते। जिससे कि प्रांतों में करारोपण में एकरूपता आ जाती और कर एक ही स्थान पर वसूल होता और एक ही वस्तु के विषय में वसूल होता। इन शब्दों के साथ, श्रीमान, मैं आशा करता हूं कि सदन, उन आदेशों की परवाह न करते हुए जो उन्हें मिले हों, कृपया न्याय करेगा और इस मामले में स्वतंत्रतापूर्वक बोलेगा तथा मत देगा और नागरिकों के अधिकारों का रक्षण करेगा।

***अध्यक्ष:** कुछ ऐसे संशोधन हैं जो इस अनुच्छेद की मूल प्रस्थापना के विषय में हैं। मुझे पता नहीं है कि वे सब संशोधन अब ठीक बैठते हैं या नहीं किन्तु एक तो ऐसा है ही जो पेश हो सकता है। संशोधन सं. 385, श्री अजित प्रसाद जैन।

***श्री अमिय कुमार घोष** (बिहार : जनरल): मेरे नाम से संशोधन सं. 383 है।

***अध्यक्ष:** मैं पहले संशोधन सं. 385 को लेता हूं।

(संशोधन सं. 385 को पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** क्या आप संशोधन सं. 383 को पेश करना चाहते हैं।

***श्री अमिय कुमार घोष:** हां श्रीमान।

***अध्यक्ष:** जरा बताइये कि अब यह इसमें कैसे ठीक बैठता है।

***श्री अमिय कुमार घोष:** अध्यक्ष महोदय, हां, मेरा संशोधन सं. 383 पहले संशोधन सं. 307 पर था, अर्थात् अनुच्छेद 264-क के मूल मसौदे पर था, किंतु अब उस संशोधन पर दूसरा एक संशोधन पेश कर दिया गया है जिससे पहले की स्थिति में जरा भी अन्तर नहीं पड़ता, केवल इतनी सी बात है कि कुछ छोटी छोटी बातों को स्पष्ट करने के लिये पुराने अनुच्छेद में एक व्याख्या जोड़ दी गई हैं। अत: मेरा संशोधन उस संशोधन में भी ठीक बैठता है जो अभी डॉ. अम्बेडकर ने पेश किया है। अतएव मैं अपना संशोधन पेश करता हूं:

"कि सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 307 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 264क का खंड (2) हटा दिया जाये।"

[श्री अमिय कुमार घोष]

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि खंड (2) को हटा दिया जाये जो अन्तर्राज्यिक व्यापार तथा वाणिज्य के विषय में है तथा ऐसे वाणिज्य को विक्रय कर से मुक्त करता है। वास्तव में मेरा स्पष्ट विचार यही है कि यह संविधान चाहे किसी रूप में संथानीय हो किंतु असल में यह एकात्मक संविधान ही है। इस संविधान में सब शक्तियों तथा वित्त-साधनों को केन्द्र ने ले लिया है और प्रांतों के पास अपने साधन नहीं रहे हैं। वास्तव में संघ पर इतना बोझ डाल दिया है कि वह शायद अपने बोझ से ही टूट जाये। यह कहा जाता है कि हमें प्रांतीय स्वायत्तता प्राप्त है, किन्तु मैं बलपूर्वक कहता हूं कि इस संविधान के अन्तर्गत हमें जो प्रांतीय स्वायत्तता प्राप्त होगी वह 1935 के अधिनियम वाली से भी बुरी होगी। अब मैं इस प्रश्न पर आता हूं कि इस संविधान में प्रांतों को केवल एक ही कर-साधन प्राप्त है और वह है—विक्रय कर। किन्तु इस शक्ति को भी इस नये अनुच्छेद 264क द्वारा बहुत हद तक छीन लिया गया है।

अब मैं विशेषत: बिहार प्रांत के निर्देश से बोलूंगा, क्योंकि मुझे अन्य प्रांतों की विक्रय-कर स्थिति का ज्ञान नहीं है। जहां तक बिहार का संबंध है, मुझे बलपूर्वक कहना होगा कि यदि यह नया अनुच्छेद 264क रहेगा तो इस प्रांत को तत्काल 2 करोड़ रुपये की आय की हानि होगी। बिहार की प्रति व्यक्ति आय और उसके फलस्वरूप प्रति व्यक्ति व्यय भी समस्त भारत में न्यूनतम है, कारण यह है कि अब तक उसके वित्तीय साधन अपरिवर्तनशील थे। उसकी भू-राजस्व की आय भी निश्चित है। संयुक्त प्रांत, मद्रास तथा बम्बई जैसे अन्य प्रांतों में भू-राजस्व बढ़ता रहता है, किन्तु बिहार में स्थायी कर व्यवस्था के कारण भूमि से आय सदा एक-सी रहती है, वह लगभग दो करोड़ से कुछ कम है।

फिर आय का एक दूसरा स्रोत है—आबकारी, किन्तु यदि मद्य-निषेध होगा तो प्रांत के वर्तमान राजस्व में से साढ़े पांच करोड़ की हानि हो जायेगी और इस हानि को पूरा करने का एकमात्र वित्तीय साधन यह विक्रय कर ही रह जाता है। यह विक्रय कर ही एकमात्र लचकदार कर था जो राज्यों के पास शेष था जिससे वे अपने राजस्व को बढ़ा सकते थे, किन्तु वह भी उनसे छीना जा रहा है। बिहार के पास महान साधन हैं किन्तु उनके होते हुए भी वह भारत के निर्धनतम प्रांतों में से है। आज भारत में प्रयुक्त होने वाले कोयले तथा लोहे का तीन-चौथाई बिहार से आता है। इनके अतिरिक्त चीनी, सीमेंट, मिर्च, तम्बाकू आदि अन्य वस्तुऐं भी बिहार से बाहर जाती हैं; किन्तु यदि यह उपबन्ध रहेगा तो परिणाम यह होगा कि बिहार को इन चीजों पर कोई कर लगाने का अधिकार नहीं होगा तथा वह अपने धन से भी कोई लाभ नहीं उठा सकेगा। इस अनुच्छेद से सदा के लिये आय बढ़ाने का द्वार भी बन्द हो जाता है।

अतएव यही न्याय है कि बिहार को, जो प्रांत के श्रम द्वारा लोहा, कोयला आदि पैदा करता है तथा उन औद्योगिक क्षेत्रों में विधि व्यवस्था बनाये रखने के लिये बहुत धन व्यय करता है, उन में से कुछ आय भी मिलनी चाहिये। यह बात तो समझ में आ सकती है कि कोई ऐसा खंड रख दिया जाये कि उन सब वस्तुओं पर जो किसी प्रांत से बाहर जायें एक समान दर से कर लगेगा तथा उस कर में से एक अंश तो उस प्रांत को मिलेगा जो उसे पैदा करता है तथा शेष उस प्रांत को मिलेगा जहां वह वस्तु खर्च होती है। वर्तमान अनुच्छेद 264क के

अधीन लोहा, कोयला तथा अन्य वस्तुएं बिहार से बाहर जायेंगी, पर प्रांत को उन पर कर लगाने का अधिकार नहीं होगा। यह स्थिति प्रांत के प्रति अन्यायपूर्ण है। इसका प्रभाव प्रांत के वित्तीय साधनों पर बहुत बुरा पड़ेगा।

राज्य-सरकारें प्रधानतः जनता के प्रति उत्तरदायी हैं और वे कई सामाजिक कल्याण के कार्यों को करने के किये नैतिक रूप में बाध्य हैं। उन्हें विधि-व्यवस्था बनाये रखनी पड़ती है जिस पर महान व्यय होता है। उन्हें कमी, अशिक्षा, रोग तथा बेकारी को दूर करना होता है। इन कर्तव्यों को कैसे पूरा किया जाये? इन सब कार्यों के लिये धन खर्च करना पड़ता है। किन्तु आय नहीं होगी तो खर्च कहां से किया जायेगा?

अतः मैं इस अनुच्छेद 264क का विरोध करता हूं और मेरा निवेदन है कि जहां तक अंतर्राज्यिक व्यापार का संबंध है, विशेषतः बिहार का, मैं मसौदा समिति से प्रार्थना करता हूं कि वे इस विषय पर पुनःविचार करें। प्रतिदिन प्रांतों पर नये उत्तरदायित्व लादे जा रहे हैं और वे उन्हें पूरा करेंगे तो बहुत धन चाहिये, अधिक धन चाहिये। देश में स्थिति ऐसी है कि पुलिस तथा अन्य प्रशासकीय मामलों पर खर्च बढ़ते जाते हैं। वे कहां से पूरे हो सकते हैं जब तक कि हमारे अपने वित्तीय साधन न हों?

अतः, मैं इस अनुच्छेद 264क का विरोध करता हूं तथा निवेदन करता हूं कि जहां तक अन्तर्राज्यिक व्यापार तथा वाणिज्य का संबंध है, उन्हें विक्रय कर से मुक्त नहीं करना चाहिये तथा प्रांतों को ऐसे महत्वपूर्ण आय-साधन से वंचित नहीं करना चाहिये। इस अनुच्छेद से केवल बड़े व्यापारी को ही लाभ होगा जो सदा करों को देने से बचता रहता है, किन्तु छोटे व्यापारियों को तथा उपभोक्ताओं को कोई लाभ नहीं होगा। यदि विक्रय कर लगाने की शक्ति को इस प्रकार समाप्त करना है तो यही अच्छा है कि राज्यों को सर्वथा समाप्त ही कर दिया जाये। यदि आप राज्यों को बनाये रखना चाहते हैं तो आपको उन्हें अनाथ के समान नहीं बना देना चाहिये जो सदा झोली फैला कर संघ सरकार के सामने धन तथा सहायता की याचना करते रहें। उन्हें अपने पैरों पर खड़े होने की शक्ति देनी चाहिये और कुछ साधन देने चाहिये जिनसे वे अपनी विभिन्न योजनाओं को क्रियान्वित कर सकें। स्वस्थ्य राज्य से ही शक्तिशाली संघ बनता है।

फिर, श्रीमान, इस नये अनुच्छेद में लिखा है:—

"No law of a State shall impose, or authorise the imposition of, a tax on the sale or purchase of goods where such sale or purchase takes place—

* * *

(b) in the course of the import of the goods into, or export of the goods out of, the territory of India.

[राज्य की कोई विधि, वस्तुओं के क्रय और विक्रय पर, जहां ऐसा क्रय या विक्रय–

* * *

(ख) भारत राज्य-क्षेत्र में वस्तुओं के आयात अथवा उसके बाहर निर्यात के दौरान में, होता है वहां कोई करारोपण न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी।]"

[श्री अमिय कुमार घोष]

अब इससे व्यापारी को बचने की काफी गुंजाइश हो जाती है। निर्यात के समस्त मामलों में वस्तु के देश से निर्यात होने तक कई क्रय विक्रय हो जाते हैं। किन्तु इस खंड के अन्तर्गत ये सब क्रय विक्रय—वे मध्यवर्ती क्रय-विक्रय भी—विक्रय कर से मुक्त होंगे। यह बात समझ में आ सकती थी यदि निर्यात के समय ही, अर्थात् निर्यात के पहले अंतिम क्रय-विक्रय पर ही विक्रय-कर नहीं लगाया जायेगा। किन्तु वर्तमान रूप में इस खंड का तो यह अर्थ है कि सामान के भारत के राज्य क्षेत्र से बाहर भेजने के दौरान में जितने भी क्रय-विक्रय होंगे वे सब विक्रय-कर से मुक्त होंगे। अब आप इन क्रय-विक्रयों के विषय में कैसे जान सकते हैं कि वे किस प्रकार के हैं। 'क' किसी वस्तु को यह कहकर खरीदता है कि वह उसका निर्यात करेगा। किन्तु वह उसका निर्यात करने की बजाय 'ख' को बेच देता है तथा 'ख' भी उसे निर्यात करने का प्रयोजन बताकर ही खरीदता है, और इस प्रकार वह वस्तु एक हाथ में दूसरे हाथ में जाती है, एक प्रांत से दूसरे प्रांत में जाती है पर उस पर कर नहीं लगता और शायद अंत में वह वस्तु निर्यात होती ही नहीं है। आप इस क्रिया को कैसे रोक सकते हैं? यदि इस खंड को इसी रूप में पारित कर दिया जायेगा तो बहुत कठिनाई होगी तथा गड़बड़ होगी। अत: मेरा नम्र निवेदन है कि यहां निर्यात तथा आयात की स्पष्ट परिभाषा कर देनी चाहिये, और हमें कहना चाहिये कि निर्यात का अर्थ है 'अन्तिम क्रय-विक्रय' और आयात का अर्थ है 'प्रथम क्रय-विक्रय', और केवल इन्हीं क्रय-विक्रयों में वस्तु को विक्रय-कर से मुक्त किया जायेगा, अन्य स्थितियों में नहीं।

इन शब्दों के साथ, श्रीमान, मैं अपने संशोधन को सभा में स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***अध्यक्ष:** डॉ. कुंजरू, क्या आप इस अनुच्छेद पर संशोधन पेश करना चाहते हैं?

***पं. हृदय नाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांत : जनरल): हां, श्रीमान, किंतु मेरा संशोधन टाइप हो रहा है और आशा है वह शीघ्र ही तैयार हो जायेगा। आशा है आप मुझे कुछ समय देंगे, जिससे.....

***अध्यक्ष:** आप उसे बाद में पेश कर सकते हैं और इस बीच में हम कुछ चर्चा चला सकते हैं।

श्री जगत नारायण लाल।

***श्री जगत नारायण लाल** (बिहार : जनरल): श्रीमान, मैंने कोई संशोधन नहीं भेजा है, और न मेरा विचार किसी संशोधन के समर्थन में, जो पेश हो चुका हो, जोर देने का है। किंतु साथ ही मैं इस अनुच्छेद 264क के प्रस्तावक को एक सुझाव देना चाहता हूं कि वे कुछ बातों पर विचार करें जिन्हें सदन में काफी बड़ा वर्ग प्रबल रूप में अनुभव कर रहा है तथा जिनके कारण यहां पहले ही बताये जा चुके हैं।

इस प्रश्न पर कोई मतभेद नहीं है कि राज्यों को आयात या निर्यात पर कर न लगाने दिया जाये। किंतु जैसा कि कुछ सदस्य पहले कह चुके हैं, और मुझे उसी बात को दोहराना पड़ेगा कि जब तक कि 'in the course of' इन शब्दों को

स्पष्ट नहीं किया जायेगा जो खंड (1) के उप-खंड (ख) में है तब तक इन शब्दों से अवश्य काफी गड़बड़ी होगी। यह बताया गया है कि अमरीका के उच्चतम न्यायालय ने इस प्रश्न पर कुछ विनिश्चय किये हैं जिससे स्थिति स्पष्ट हो गई है। कई कारणों से हम चाहते हैं कि ये शब्द हटा दिये जायें। मेरा सुझाव है कि उनके स्थान पर 'at the initial stage of import into' तथा 'at the ultimate stage of export out of India' ये शब्द रख दिये जायें। मेरा सुझाव है इन शब्दों को रखा जाये, पहला कारण यह है कि इससे गड़बड़ दूर हो जायेगी, दूसरा कारण यह है कि वे कठिनाइयां दूर हो जायेंगी जो किसी वस्तु के एक हाथ से दूसरे हाथ में जाने से तथा अंततः उसका एक अंश निर्यात होने से पैदा हो जाती हैं। अन्यथा बहुत ज्यादा बड़बड़ी होगी और बहुत कठिनाई होगी।

पहले के कुछ वक्ताओं ने पहले ही बता दिया है कि यदि उप-खंड (1) में 'for the purpose of consumption in that State' इन शब्दों को रहने दिया जायेगा तो बिहार तथा मध्य-प्रदेश जैसे प्रांतों को क्या-क्या कठिनाइयां होंगी, और मैं इन युक्तियों को दोहराना नहीं चाहता। किंतु मैं यह बात अवश्य बताना चाहता हूं कि हमें कुछ महत्वपूर्ण राजस्व-साधनों की आवश्यकता है जिससे कि हम उन कार्यों को पूरा कर सकें जो कांग्रेस ने हमें सौंपे हैं—जैसे मद्य-निषेध आदि हैं—और विक्रय कर अत्यन्त महत्वपूर्ण राजस्व साधन है जो बढ़ता रहता है। केन्द्र को कोई हानि भी नहीं होती और उस पर कोई प्रभाव भी नहीं पड़ता, फिर यह कहना व्यर्थ है कि जिन प्रान्तों में लोहा, चीनी, कोयला, सीमेंट आदि बड़ी-बड़ी चीजें बनती हैं तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन होता है, वे प्रांत उनके विक्रय पर प्रांत में या बाहर कर न लगायें। अतः मैं चाहता हूं कि 'for the purpose of consumption in that State' ये शब्द हटा दिये जायें। अन्यथा उप-खंड (2) का परन्तुक हटा दिया जाना चाहिये जिसमें लिखा है कि वे कर एक वर्ष तक लगाये जा सकते हैं, और वे कर पहले के समान लगते रहने चाहियें।

मैं इस अनुच्छेद के प्रस्तावक को ये ही थोड़े से सुझाव देना चाहता हूं। मैं इस पर संशोधन के रूप में जोर नहीं देना चाहता, वरन! मैं इसे प्रस्तावक की सद्भावना पर छोड़ देता हूं। केन्द्र को हानि पहुंचाने की किसी की इच्छा नहीं है, फेडरल सरकार को भी करों से या कर लगाने की शक्ति से वंचित करके हानि पहुंचाने की कोई इच्छा नहीं है, और फेडरल सरकार को भी ऐसी इच्छा नहीं होनी चाहिये कि राज्यों को हानि पहुंचाई जाये—मुझे आशा है कि ऐसी इच्छा नहीं है। दोनों को मिलजुल कर काम करना चाहिये। दोनों का परस्पर संबंध है, क्योंकि फेडरल सरकार तथा राज्यों की सुरक्षितता तथा भलाई पर समूचे देश की सुरक्षितता तथा भलाई निर्भर है। अतः, श्रीमान, मैं इन अनुच्छेद के प्रस्तावक से अपील करता हूं कि वे इन दो सुझावों पर विचार करें तथा ऐसे परिवर्तन या रूप भेद कर दें जो समस्त सदन को स्वीकार्य हों तथा कोई ऐसी क्षोभ की भावना न हो और ऐसी भावना न हो कि राज्यों की कठिनाइयों पर पूरा ध्यान नहीं दिया गया है। जो कुछ कहा जा चुका है उसके अतिरिक्त मैं कुछ और नहीं कहना चाहता।

पंडित हृदय नाथ कुंजरू: अध्यक्ष महोदय, महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 264क के खंड (1) के पश्चात्, निम्न नये खंड प्रविष्ट कर दिये जायें:

'(1a) No law of a State shall impose or authorise the imposition of a tax on the sale or purchase of goods within a State except where such sale or purchase is made to or by a consumer.

(1b) Parliament may, by law, fix the maximum rate at which a sale tax may be levied by a State on the sale or purchase of goods.'

[(1क) राज्य की कोई विधि राज्य के भीतर ही वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर करारोपण न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी, सिवाय उस स्थिति के जब कि वह क्रय या विक्रय किसी उपभोक्ता द्वारा किया जाये।

(1ख) संसद, विधि द्वारा, अधिकतम दर निश्चित कर सकती है जिससे कोई राज्य वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर विक्रय कर लगा सकता है।]"

श्रीमान, डॉ. अम्बेडकर ने सदन के समक्ष जो संशोधन रखा है उससे राज्य को आयात तथा निर्यात पर कर लगाने का वर्जन है। इस प्रकार वह केन्द्रीय सरकार के हितों की रक्षा करता है। संशोधन से राज्य को यह भी वर्जन हो जाता है कि वह अंतर्राज्यिक व्यापार के दौरान में खरीदे गये या बेचे गये माल पर विक्रय कर नहीं लगा सकता। इस प्रकार वह उस राज्य के हितों की रक्षा करता है जिसमें अंततोगत्वा वे वस्तुएं बिकेंगी। किंतु वह उपभोक्ताओं के हितों का रक्षण बहुत सीमित रूप में ही करता है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये हुए संशोधन के खंड 3 में कहा गया है कि कोई विधान-मंडल ऐसी वस्तुओं के, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा समुदाय के जीवन के लिये आवश्यक घोषित की गई है, क्रय या विक्रय पर कोई कर नहीं लगायेगा, जब तक कि कर लगाने वाली विधि राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित किये जाने पर उसे उसकी अनुमति प्राप्त न हो गई हो।

यह संशोधन उपभोक्ताओं के हितों की भी रक्षा करता है, किंतु केवल उन वस्तुओं के विषय में जिन्हें केन्द्रीय सरकार समुदाय के जीवन के लिये आवश्यक घोषित कर दे। यह तो केन्द्रीय सरकार पर ही निर्भर होगा कि वह उस श्रेणी में समय-समय पर किन वस्तुओं को शामिल करेगी। अतएव यह अभीष्ट है कि उपभोक्ता के हितों की रक्षा के लिये कुछ और किया जाये।

कई प्रांतों में, श्रीमान, विक्रय कर तभी लगाया जाता है जब कि वस्तुएँ उपभोक्ता के पास पहुंचती हैं। किंतु सब प्रातों में यह बात नहीं है, और कर की दर पर सीमा भी नहीं है। मेरे विचार में जन साधारण के हित में यह अभीष्ट है कि संविधान में इन बातों का ध्यान रखा जाये।

मेरे संशोधन के प्रथम भाग में यह लिखा है कि वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर कर केवल तभी लगाया जाये जब कि क्रय या विक्रय किसी उपभोक्ता द्वारा किया जाये। मेरे संशोधन के दूसरे भाग में संसद को प्राधिकार दिया गया है कि वह कर लगाने की अधिकतम दर निश्चित कर सकती है। यह कहा जा सकता है कि जनता की सामान्य आर्थिक स्थिति से किसी राज्य की सरकार की विक्रय कर लगाने की शक्ति पर सीमा लग जायेगी। सर्वप्रथम तो यह निर्धारण करना बहुत कठिन है कि उपयुक्त दर क्या होनी चाहिये। दूसरी बात यह है कि यदि दर को अनुभव से ही निर्धारित करना है तो परीक्षण तथा त्रुटियां करनी होंगी, किसी वस्तु विशेष के कर की आय अधिक हो सकती है, किंतु दूसरी ओर, किसी अन्य वस्तु की बिक्री शायद गिर जाये। अतएव यह मामला किसी राज्य के वित्त-मंत्री के निर्णय पर ही नहीं छोड़ा जा सकता। यह इतना महत्वपूर्ण है कि इसे इसी समय निबटाना होगा।

कुछ देशों में बहु-मुखी विक्रय कर है। शायद इन देशों की आर्थिक स्थिति ऐसी है कि यहां ऐसे कर लगाये जा सकते हैं। किन्तु, भारत में, विशेषत: इस समय जब कि मूल्य बहुत चढ़े हुए हैं, यह स्पष्टत: अवांछित है कि उपभोक्ता के पास पहुंचने से पहले वस्तुओं के निर्माण में प्रत्येक पग पर क्रय या विक्रय पर कर लगे। मेरे विचार में इस पर सब सामान्यत: सहमत होंगे कि यह अभीष्ट है कि इस संबंध में राज्य की शक्ति पर कुछ निर्बंधन लगने चाहियें। और जहां ऐसा निर्बंधन लगाया भी गया है वहां यह वांछनीय है कि संसद को कर की अधिकतम सीमा निश्चित करने की शक्ति होनी चाहिये।

कई वक्ताओं ने शिकायत की है कि आजकल के विक्रय कर बहुत भारी हैं। इससे पता लगता है कि संबद्ध सरकार ऐसी दरों को निश्चित नहीं कर सकी है। जिनसे उपभोक्ताओं में संतुष्टता की भावना पैदा हो। अतएव कुछ और कार्यवाही करना आवश्यक है। इस संबंध में इतना ही करना काफी है कि संसद को यह शक्ति दे दी जाये कि वह, जहां आवश्यक हो, उच्चतम सीमा निर्धारित कर दे। वह विलासिता की वस्तुओं के विषय में चाहे वैसा न करे किन्तु ऐसी वस्तुओं के विषय में वह सीमा नियत कर सकती है जो, चाहे हमारी प्रधान आवश्यकताओं के लिये सर्वथा अपेक्षित न हों, फिर भी जिनकी ऐसी व्यापक मांग है कि जनता के लिये उनके बिना काम चलाना कठिन होगा।

श्रीमान, मेरे विचार में मैंने जो कुछ कहा है उससे मेरे संशोधन का प्रयोजन काफी स्पष्ट हो जाता है और यह सिद्ध हो जाता है कि संशोधन ऐसा है कि सदन उसका अनुमोदन कर सकता है। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं, डॉ. अम्बेडकर ने सदन के समक्ष जो संशोधन रखा है उसमें केन्द्रीय सरकार के हितों का तथा उन राज्यों के हितों का, जिनमें अन्य राज्यों से लाकर सामान बेचा जाएगा, पूरा रक्षण किया गया है। किन्तु उसमें उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा अंशत: ही की गई है। मेरे संशोधन द्वारा उपभोक्ता की भी उतनी ही पूरी रक्षा की जानी है जितनी डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में केन्द्रीय सरकार के हितों की तथा उस राज्य के हितों की, जिसमें वे वस्तुएं अंतत: बेची जायें, रक्षा की गई है।

*श्री बी.एम. गुप्ते (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि मुझे खंड (2) के वर्तमान रूप पर अपना असंतोष अभिव्यक्त करना है। मेरी शिकायत यह है कि इसमें प्रांतीय सरकारों की कठिनाइयों का समुचित ध्यान नहीं रखा गया है। हमारा राज्य सर्वकल्याणकारी राज्य है और ज्यों-ज्यों समय गुजरेगा वह अधिकाधिक वैसा बनता जायेगा, किन्तु अधिकांश कल्याण कार्य प्रांतों और स्थानीय निकायों के भाग में आता है। हम प्रशासन के एककों की सीढ़ी पर ज्यों-ज्यों नीचे उतरते हैं, वे जनता की आवश्यकताओं से अधिक सन्निकट दिखाई देते हैं, और आज भी प्रांतीय सरकारों को राष्ट्र-निर्माण के कार्यों को पूरा करने में बहुत कठिनाई पड़ती है। और कई प्रांतों में राज्यों में राज्यों के विलय के कारण उनकी कठिनाइयां बढ़ गई हैं।

उदाहरण के लिये, मेरे प्रांत बंबई का मामला लीजिये, आज बंबई में आगामी कुछ वर्षों के आय-व्ययकों में भारी घाटे की संभावना दिखाई दे रही है, और ऐसे समय उन्हें कुछ राजस्व-साधन प्रदान करने की बजाय हम उन साधनों पर भी निर्बंधन लगा रहे हैं जो उन्हें इस समय उपलब्ध हैं। अब, विक्रय कर सबसे अधिक महत्वपूर्ण और शायद सबसे अधिक लचकदार राजस्व साधन है और यदि हम उस साधन की आय को कम कर देंगे तो वे अपने घाटे को कैसे पूरा करेंगे? प्रांतीय सरकारों ने यह प्रस्थापना रखी थी कि प्रांतों तथा केन्द्र को एक मेज के चारों ओर समवेत् होकर समस्त स्थिति का सिंहावलोकन करना चाहिये और देश के वित्तीय साधनों के अधिक न्यायपूर्ण वितरण के लिये कोई व्यवस्था बना लेनी चाहिये, और यदि अधिक कुछ न हो, तो वित्तीय कठिनाइयों में से सबको न्यायपूर्ण अंश बंटाना चाहिये।

श्रीमान, आपने जो विशेषज्ञ वित्त-समिति नियुक्त की थी, उसका प्रतिवेदन उस प्रयोजन के लिये प्रशंसनीय अवसर था, किन्तु मस्विदा समिति ने उस प्रतिवेदन पर विचार नहीं होने दिया, पूर्व स्थिति को बनाये रखा तथा संविधान के आरम्भ से दो वर्ष में एक वित्त-आयोग नियुक्त करने का उपबन्ध कर दिया। वह सकारण हो सकता है। मैं उसे चुनौती नहीं देता, किन्तु मेरा कहना यह है कि वे ही कारण इन निर्बंधनों के आरोपण पर भी उसी प्रकार लागू होने चाहियें। यदि वित्तीय आयोग का काम बाद में हो सकता है, तो इन निर्बंधनों का आरोपण भी निस्संदेह बाद में हो सकता था। आखिर, प्रश्न यह नहीं है कि ये निर्बंधन उचित हैं या नहीं—वे उचित हो सकते हैं—किन्तु प्रश्न यह है कि क्या प्रांतों को प्रतिकर के रूप में अन्य साधन उपलब्ध कराये बिना इन निर्बंधनों को लगाना हमारे लिये औचित्यपूर्ण है। इन राजस्व-साधनों की अनुपस्थिति में प्रांत क्या करेंगे? वे सदा अनुदानों के लिये केन्द्र का मुख देखेंगे और प्रांतीय वित्त मंत्रियों की दशा हम अभागे भिखारियों के समान बना देंगे जो केन्द्रीय वित्त-मंत्री के द्वार पर ही पड़े रहेंगे। मेरे विचार में यह बहुत वांछनीय स्थिति नहीं है।

मुझे प्रसन्नता है कि इस उपबन्ध में एक रियायत कर दी गई है। वह रियासत यह है कि वर्तमान व्यवस्था 31 मार्च 1951 तक चल सकती है। मेरा कहना यह है कि अच्छा होता यदि यह अवधि उस समय तक बढ़ा दी जाती जब कि प्रथम वित्त-आयोग प्रांतों तथा केन्द्र के वित्तीय संबंधों में आवश्यक परिवर्तन कर चुका होता। हम निस्संदेह उस समय तक ठहर सकते थे। इसमें डेढ़ के स्थान पर तीन

लग जाते, जो छोटी-सी बात है। अन्यथा मैं अनुभव करता हूं कि प्रांतों के वित्तीय ढांचे में अवश्य ही गड़बड़ पड़ेगी। यह स्मरण रखना चाहिये कि इस गड़बड़ के प्रभावों से केन्द्र भी अछूता नहीं रह सकता।

आखिर केन्द्र तथा प्रांत एक ही व्यवस्था के अंग हैं। उदाहरण के लिये इस समय चीनी की स्थिति को लीजिये। केन्द्रीय सरकार ने दिल्ली से माल पर ताला लगाने का आदेश जारी किया, किन्तु लूट और गोलीकांड कलकत्ता और बम्बई में हुए। अत: हमें याद रखना चाहिये कि प्रांतों की आर्थिक कठिनाइयों से जो भी गड़बड़ होगी उसका अंततोगत्वा यही प्रभाव होगा कि केन्द्र की शक्ति कम होगी, चाहे केन्द्र कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो। और जैसा कि मैं एक बार कह चुका हूं, शक्तिशाली केन्द्र निर्बल एककों के सहारे खड़ा नहीं रह सकता।

***श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान, मैं अनुच्छेद 261क के विषय में डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का समर्थन करता हूं। इस अनुच्छेद की रचना बहुत-सी कठिनाइयों को दूर करने के लिये की गई हैं तथा इन परिस्थितियों में यही सर्वोत्तम दिखाई देता है। मुझे तो व्यक्तिगत रूप से यही अच्छा लगता है कि केन्द्र को ही प्राधिकृत कर दिया जाता कि वही कर लगाता, उसे स्रोत पर उगाहता—आयात या उत्पादन केन्द्रों पर—तथा उसे प्रांतों में बांट देता। इससे कम स्थानों पर हिसाब किताब रखने का खर्च पड़ता, किन्तु प्रांतीय सरकारें इस बात पर सहमत नहीं हुईं कि केन्द्र ही कर लगा कर फिर उसे बांटे, अत: अब जो अनुच्छेद रखा गया है वही सर्वोत्तम है। इसका उद्देश्य कुछ असंगतियों को हटा देना है, जो कुछ प्रांतों के विधान में हैं जहां प्रत्येक विक्रय पर करारोपण हो जाता है चाहे उस वस्तु का दूसरे प्रांत में जाकर उपभोग होता है। इसी प्रकार इससे कुछ अनुच्छेदों पर कर नहीं रहेगा जो एक प्रांत में पैदा होकर दूसरे प्रांत में जाते हैं—अर्थात् अंतर्राज्यिक क्रय-विक्रय पर कर नहीं लग सकेगा। इस समय, श्रीमान, मुझे दो मामलों का ज्ञान है जहां बंगाल में एक मिल पर, जो उड़ीसा में स्थित है, 25 लाख रुपये कर के रूप में लगाये गये हैं। चाहे वस्तुएं बंगाल के अतिरिक्त अन्य प्रांतों में बेची गईं थीं, फिर भी बंगाल ने 25 लाख रुपये कर लगा दिया, केवल इस कारण कि कम्पनी का सदर मुकाम बंगाल में है। इस धारा से ऐसे करों को हटा दिया जायेगा जो उन विक्रयों पर लगते हैं जो प्रांत के बाहर होते हैं।

जहां तक पं. हृदय नाथ कुंजरू का संबंध है, बंगाल ने इस कठिनाई को पहले ही दूर कर दिया है क्योंकि उसने पंजीबद्ध दुकानदारों की व्यवस्था कर दी है। जब दो पंजीबद्ध दुकानदारों के बीच माल बिकता है तब कोई विक्रय कर नहीं लिया जाता। जब माल किसी ऐसे व्यक्ति को बेचा जाता है जो पंजीबद्ध दुकानदार नहीं है तभी कर लिया जाता है; और इसलिये यह समझ लिया जाता है कि वह व्यक्ति, जो पंजीबद्ध दुकानदार नहीं है, उपभोग के लिये खरीद रहा है। अत:, बंगाल ने उन लोगों के लिये, जो क्रय पर कर नहीं देना चाहते, पंजीयन आवश्यक बनाकर इस कठिनाई को दूर कर दिया है।

[श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका]

मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये हुए अनुच्छेद का समर्थन करता हूं। विविध प्रांतों ने कुछ आशंकाऐं अभिव्यक्त की हैं, किन्तु मैं नहीं समझता कि उनका कोई औचित्य है। उन्हें यह मालूम होना चाहिये कि वे सुरक्षित रहेंगे क्योंकि प्रत्येक प्रांत में कुछ वस्तुऐं होती हैं जो अन्य प्रांतों को उपभोग के लिये जाती हैं। इसी प्रकार उन्हें पता होना चाहिये कि बहुत-सी ऐसी वस्तुऐं हैं जो विविध प्रांतों में उपभोग के लिये आती हैं। उदाहरण के लिये बम्बई के कपड़े का ही मामला लीजिये जब बंबई से कपड़ा जायेगा तब वे कोई विक्रय कर नहीं लगा सकेंगे और बिहार, जो बम्बई से बहुत-सा कपड़ा मंगवाता है उस पर कर वसूल कर सकेगा अतएव, अन्ततोगत्वा, ऐसा हिसाब बैठ जायेगा कि सब प्रांतों को लगभग वही मिल जायेगा जो उन्हें अब मिलता रहा है। सब कुछ एक दो वर्ष में ठीक-ठाक हो जायेगा और किसी भी प्रांत को कोई हानि नहीं होगी, किन्तु साथ ही समस्त प्रक्रिया सादी बन जायेगी। अत: मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित रूप में इस अनुच्छेद का समर्थन करत हूं।

***श्री गोपाल नारायण** (संयुक्त प्रांत : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अपने मित्र श्री महावीर त्यागी के संशोधन का समर्थन करने खड़ा हुआ हूं। उन्होंने ठीक बात कही है। कर लगाने में या करारोपण का कोई प्रस्ताव रखने में पहला विचार यह होना चाहिये कि क्या वह जनता के हित में है। हमें कर लगाते समय यह देखना है कि वह जनता के जनसाधारण के हित में खर्च किया जाये। यह तर्क किया जाता है कि हमने मद्य-निषेध किया है और इस नये कर का उद्देश्य उस कमी को पूरा करना है। मेरे अपने प्रांत में केवल आठ जिलों में हमने मद्य-निषेध किया है और वह भी सफल नहीं है। यह किसी अर्थ में मद्य-निषेध नहीं है।

हमें ऐसे करारोपण की आवश्यकता क्यों है? मैं कह सकता हूं, श्रीमान, कि चोटी पर भारी व्यय होने के कारण ही हम नये कर लगा रहे हैं। उस दिशा में हम केन्द्र में तथा प्रांतों में बचत नहीं कर रहे हैं। हम देखते हैं कि बचत समितियां स्थापित हुईं तथा उन्होंने अपने प्रतिवेदन पेश किये। मेरे अपने प्रांत में उन्होंने प्रतिवेदन पेश किया है कि हमें अपने खर्च में 6 करोड़ की कमी करनी चाहिये, और इस छह करोड़ में से मैंने देखा कि चार करोड़ तो सड़कों और मकानों के पूंजीगत व्यय में से कम करना था और शेष दो करोड़ अन्य दिशाओं से। यह पर्याप्त नहीं है। इस नये करारोपण से पहले हमें केन्द्र में तथा प्रान्तों में बचत करने का प्रयत्न करना चाहिये। हम जनसाधारण का कोई भला नहीं कर रहे हैं, वरन् उन पर करों का बोझ डालते जा रहे हैं। मेरे मित्र श्री त्यागी ने सभा का ध्यान इसी ओर आकृष्ट किया है। उन्होंने कहा है कि हमें देखना चाहिये कि इस कर से जनसाधारण को कोई लाभ होगा या नहीं। मेरे विचार में शासन के, प्रशासन के भारी खर्च के कारण उन पर अनावश्यक भार डाला जा रहा है। पहले हमें उसे कम करना चाहिये और फिर इस कर को लगाने का विचार करना चाहिये।

मैं एक बात और कहूंगा। डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में कुछ भेदभाव है। कुछ प्रांतों को उससे हानि पहुंचेगी। उस संशोधन में संयुक्त प्रांत, बिहार और मध्य प्रांत को सर्वाधिक हानि होगी। मेरे विचार में प्रांत और प्रांत के बीच कोई भेदभाव नहीं

होना चाहिये। यदि प्रांतों को हानि हो तो सभी प्रांतों को समान रूप से होनी चाहिये। एक प्रांत को हानि होगी और शायद दूसरे प्रांत को लाभ न हो। मैं डॉ. अम्बेडकर से अनुरोध करता हूं कि वे श्री त्यागी के संशोधन को स्वीकार कर लें।

इन थोड़े से शब्दों के साथ मैं श्री महावीर त्यागी द्वारा प्रस्तावित संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री युधिष्ठर मिश्र** (उड़ीसा के राज्य)**:** श्रीमान, अब प्रश्न पर मत लिये जायें।

***कई माननीय सदस्य:** नहीं नहीं।

***श्री महावीर त्यागी:** आप कृपया स्वविवेक का प्रयोग करें, श्रीमान। यह मामला बहुत महत्वपूर्ण है।

***अध्यक्ष:** आप तो पहले ही बोल चुके हैं और आपको फिर अवसर नहीं मिलेगा। मुझे समाप्ति प्रस्ताव पर मत लेने हैं।

प्रश्न यह है:

"कि प्रश्न पर अब मत लिये जायें।

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, सदन के समक्ष तीन संशोधन हैं: पहला संशोधन मेरे मित्र प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना का है। उनके संशोधन के अनुसार यह प्रस्थापना है कि विक्रय कर लगाने की शक्ति संसद में होनी चाहिये। इस प्रस्ताव पर दो मूल आपत्तियां हैं। पहली बात तो यह है कि इस मामले पर प्रांतीय मुख्य मंत्रियों तथा भारत सरकार के वित्त-विभाग में यह प्रस्थापना की गई थी कि विक्रय कर के आरोपण में जो कठिनाइयां होती हैं उन्हें दूर करने के लिये यह अधिक अच्छा हो यदि वह कर केन्द्र द्वारा ही लगाया जाये तथा उगाहा जाये और किसी मान्य सिद्धान्तों के अनुसार या किसी आयोग के प्रतिवेदन के आधार पर प्रांतों में बांट दिया जाये। सौभाग्य से या दुर्भाग्य से, प्रांतीय मुख्य मंत्रियों ने एक होकर इस सिद्धान्त का विरोध किया और मेरे विचार में श्रीमान, मेरे दृष्टिकोण से उनका विनिश्चय ठीक था।

यद्यपि मैं यह कहने के लिये तैयार हूं कि संविधान के मसौदे की योजना में जो वित्तीय व्यवस्था रखी गई है वह अन्य सब वित्तीय व्यवस्थाओं से, जिनका मुझे ज्ञान है, अच्छी है, किंतु मेरे विचार में यह तो कहना ही होगा कि उसमें एक त्रुटि है। त्रुटि यह है कि प्रांत बहुत अधिक हद तक अपने साधनों के लिये केन्द्र द्वारा दिये गये अनुदानों पर निर्भर होंगे। हम सबको यह मालूम ही है कि उत्तरदायी शासन के काम करने का एक तरीका यह भी है कि विधान मंडल को धन-विधेयक को परास्त कर देने की शक्ति प्राप्त होती है। हमने जो योजना रखी है उसके अधीन प्रांत का धन-विधेयक बहुत छोटी-सी चीज होगी। वे जो कर प्रत्यक्ष

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

रूप से लगा सकते हैं वे बहुत साधारण प्रकार के हैं और विधान-मंडल करों को मंजूर करने से इन्कार करके सरकार में 'अविश्वास' प्रकट करने के इस सामान्य उपाय से वंचित हो जाएगा। अतः मेरे विचार में बहुत से ऐसे साधनों को, जिन पर प्रांत निर्भर होते हैं, केन्द्र में एकत्र कर दिया गया है और यह संविधानिक शासन के दृष्टिकोण से अभीष्ट है कि कम से कम एक महत्वपूर्ण राजस्व-साधन को प्रातों के पास रहने दिया जाये। अतः मेरे विचार में, उस दृष्टिकोण से, प्रांतों के हाथों में विक्रय-कर रहने देने की प्रस्थापना अत्यन्त औचित्यपूर्ण है। ऐसी स्थिति में मेरे विचार में मेरे मित्र प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना का संशोधन गिर जाता है।

मेरे मित्र, श्री त्यागी के संशोधन के संबंध में, मैं यह कहना चाहता हूं कि उन्होंने जो कुछ कहा है उससे मुझे बहुत सहानुभूति है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि विक्रय-कर जब 1937 में आरम्भ हुआ था तब वह महत्वपूर्ण राजस्व साधन नहीं था। मैंने बंबई तथा मद्रास के विषय में आंकड़ों पर विचार किया है। 1937 में मद्रास में लगभग 2.35 करोड़ रुपये कर था। आज वह लगभग 14 करोड़ है। बंबई के विषय में भी यही स्थिति है कि 1937 में कर लगभग 3.5 करोड़ था, और आज वह लगभग 14 करोड़ है। यह स्वीकार करना होगा कि यह बहुत बड़ी वृद्धि है और मैं नहीं समझता कि राजस्व उगाहने के लिये विक्रय कर से खेल खेलना वांछित है, क्योंकि कर व्यवस्था में, जहां तक मेरा ख्याल है, दो सिद्धांतों के आधार पर परिवर्तन किया जा सकता है। एक तो यह है कि विविध वर्गों में अधिकतम न्याय हो। यदि एक श्रेणी पर दूसरी श्रेणी के अधिक कर हों तो व्यवस्था में परिवर्तन करके भार को बराबर बना देना और औचित्यपूर्ण होगा।

दूसरा महत्वपूर्ण सिद्धांत जो, मेरे विचार में, समस्त विश्व में मान्य है, यह है कि कोई करारोपण व्यवस्था ऐसी नहीं होनी चाहिये कि उससे जनता का जीवन-स्तर कम हो, और मेरे मन में जरा भी संदेह नहीं है कि विक्रय-कर का प्रांत की जनता के जीवन-स्तर से बहुत प्रगाढ़ संबंध है। किन्तु अपने मित्र के साथ पूर्ण सहानुभूति होते हुए भी मैं देखता हूं कि यदि उनके संशोधन को स्वीकार कर लिया जायेगा तो उसका अर्थ यह होगा कि प्रांतों की विक्रय कर लगाने की शक्ति स्वतंत्र और अबाध नहीं रहेगी। उस पर संसद द्वारा नियत उच्चतम सीमा रहेगी। मेरा ख्याल है कि यदि हम प्रांतों को विक्रय कर लगाने देते हैं तो प्रांतों को यह भी स्वतंत्रता होनी चाहिये कि वे प्रांत की बदलती हुई स्थिति के अनुरूप विक्रय कर की दर को घटा-बढ़ा सकें, केन्द्र की ओर से उच्चतम सीमा नियत कर देने से विक्रय कर को क्रियान्वित करने में बहुत बाधा पड़ेगी। मुझे संदेह नहीं है कि मेरे मित्र श्री त्यागी, यदि प्रांतीय विधान मंडल में जायें तो वे प्रांतीय सरकारों को यह बता समझा कर अपने आदर्शों को पूरा कर सकते हैं कि विक्रय कर का जनता के जीवन-स्तर पर बहुत प्रभाव पड़ता है, अतः उन्हें उसका आरोपण करने में बहुत सावधानी बरतनी चाहिये।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या मैं आपके लिये इतना असुविधाजनक बन गया हूं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** कदापि नहीं। यदि मैं कोई मुख्य मंत्री होता हो मैं भी वही रुख अपनाता जो आपने अपनाया है।

अब मैं अपने माननीय मित्र पं. कुंजरू के संशोधन को लेता हूं तो मेरा यह ख्याल है कि उनके संशोधन का प्रयोजन उप-खंड (1) की व्याख्या से लगभग पूरा हो जाता है, क्योंकि उसमें भी हमने इसी बात पर जोर दिया है कि विक्रय कर का मूलत: उपभोग पर कर होना चाहिये; और मैं नहीं समझता कि उनके संशोधन से इस मामले में कोई ज्यादा सुधार होगा।

मेरे विचार में, केवल एक बात है, जिसके विषय में मैं एक शब्द कहना चाहता हूं। मैं जानता हूं कि कुछ ऐसे 'मित्र हैं जो उप-खंड (1) की इस भाषा को पसन्द नहीं करते, 'in the course of export and in the course of import' अब मसौदा समिति ने ठीक ठीक भाषा चुनने के लिये बहुत समय खर्च किया है। जहां तक उनका संबंध है वे संतुष्ट हैं कि यही भाषा यथासाध्य सर्वोत्तम है। किन्तु मैं यह कहता हूं कि मसौदा-समिति इस भाषा पर पुन: विचार करेगी कि क्या कोई अन्य भाषा रखी जा सकती है जिससे वह आलोचना का कारण मिट सकेगी अनुच्छेद के इस भाग पर की गई है। श्रीमान मुझे आशा है कि अब सदन संशोधन को स्वीकार कर लेगा।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित इस प्रस्थापना पर मत लेने से पूर्व, मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं, विशेषत: इसलिये कि मेरे सामने माननीय वित्त मंत्री बैठे दिखाई दे रहे हैं। मैं प्रस्तावित अनुच्छेद के पक्ष में या विपक्ष में कुछ भी नहीं कहना चाहता हूं, पर मैं यह करना चाहता हूं कि प्रांतों में काफी प्रबल भावना है कि उनके राजस्व साधनों को बहुत कम कर दिया गया है, और विशेषत: गरीब प्रांतों की यह भावना है कि आय कर का वितरण ऐसा नहीं है जिससे उन्हें संतोष हो। मैं वित्त मंत्री से कहना चाहता हूं कि वे जब आय कर के वितरण के प्रश्न पर विचार करें तब इस बात का ध्यान रखें, जिससे कि यह न कहा जा सके कि भारत सरकार की नीति ऐसी है कि जिनके पास बहुत है उन्हें बहुत दिया जाता है और जिनके पास थोड़ा है जिनसे वह थोड़ा भी ले लिया जाता है।

अब मैं विविध संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 307 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 264क का खंड (2) हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधन सं. 425 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 264क के खंड (1) की व्याख्या में, 'for the purpose of consumption in that State' ये शब्द हटा दिये जायें, और अन्त में निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये:—

'(4) The Union Parliament shall have power to amend the laws in respect of taxes on sale or purchase of goods with a view to

[अध्यक्ष]

bring uniformity in the laws made by the various States of the Union or in the interests of the Union as a whole, provided that no Bill for such amendment shall be moved in Parliament without the prior permission of the President, and the President before giving such permission shall obtain the views of the Government of the various States concerned.'

[(4) संघ संसद को शक्ति होगी कि वह माल के क्रय या विक्रय पर करों के विषय में विधियों को संशोधित कर सके जिससे कि संघ के विविध राज्यों द्वारा निर्मित विधियों में या समस्त संघ के हितों में एकरूपता लाई जा सके, परन्तु ऐसे संशोधन के लिये कोई विधेयक संसद में राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना पेश नहीं किया जायेगा और राष्ट्रपति ऐसी अनुमति देने से पूर्व विविध संबद्ध राज्यों की सरकारों के विचारों का पता लगायेगा।]"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 के संशोधन सं. 425 में, अनुच्छेद 264-क के खंड (1) के पश्चात्, निम्न नया परन्तुक प्रविष्ट कर दिया जाये:–

'Provided that the sales tax shall not exceed Rs. 3/2 percent of the sale price.'

[किन्तु विक्रय-कर विक्रय-मूल्य के तीन रुपये दो आना प्रतिशत से अनधिक होगा।]"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 264 के खंड (1) के पश्चात्, निम्न नये खंड प्रविष्ट कर दिये जायें:—

'(1a) No law of a State shall impose or authorise the imposition of a tax on the sale or purchase of goods within a State except where such sale or purchase is made to or by a consumer.

(1b) Parliament may, by law, fix the maximum rate at which a sale tax may be levied by a State on the sale or purchase of goods.' "

[(1क) राज्य की कोई विधि राज्य के भीतर ही वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर करारोपण न करेगी और न करना प्रधिकृत करेगी, सिवाय उस स्थिति के जब कि वह क्रय या विक्रय किसी उपभोक्ता द्वारा किया जाये।

(1ख) संसद, विधि द्वारा अधिकतम दर निश्चित कर सकती है जिससे कोई राज्य वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर विक्रय कर लगा सकता है।]"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** फिर मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित मूल प्रस्थापना पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 307 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 264क के स्थान पर निम्न रख दिया जाये:–

'264A. (1) No law of a State shall impose or authorise the imposition of a tax on the sale or purchase of goods where such sale or purchase takes place—

Restriction as to imposition of tax on the sale or purchase of goods.

(a) outside the State: or

(b) in the course of the import of the goods into, or export of the goods out of, the territory of India.

Explanation.—For the purposes of sub-clause (a) of this clause a sale or purchase shall be deemed to have taken place in the State in which the goods have actually been delivered as a direct result of such sale or purchase for the purpose of consumption in that State, notwithstanding the fact that under the general law relating to sale of goods the property in the goods has by reason of such sale or purchase passed in another State.

(2) Except in so far as Parliament may by law otherwise provide, no law of a State shall impose, or authorise the imposition of, a tax on the sale or purchase of any goods where such sale or purchase takes place in the course of inter-State trade or commerce:

[अध्यक्ष]

Provided that the President may by order direct that any tax on the sale or purchase of goods which was being lawfully levied by the Government of any State immediately before the commencement of this Constitution shall, notwithstanding that the imposition of such tax is contrary to the provisions of this clause, continue to be levied until the thirty-first day of March, 1951.

(3) No law made by the Legislature of a State imposing, or authorising the imposition of, a tax on the sale or purchase of any such goods as have been declared by Parliament by law to be essential for the life of the community shall have effect unless it has been reserved for the consideration of the President and has received his assent.'

वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर करारोप के बारे में निर्बन्धन

[264-क (1) राज्य की कोई विधि, वस्तुओं के क्रय और विक्रय पर, जहां ऐसा क्रय या विक्रयः–

(क) राज्य के बाहर, अथवा

(ख) भारत राज्य-क्षेत्र में वस्तुओं के आयात अथवा उसके बाहर निर्यात के दौरान में,

होता है वहां कोई करारोपण, न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी।

व्याख्या.—उपखंड (1) के प्रयोजनों के लिये क्रय या विक्रय उस राज्य में हुआ समझा जायेगा जिसमें ऐसे क्रय या विक्रय के परिणामस्वरूप उसी राज्य में उपयोग के लिये वस्तुओं का भुगतान उस राज्य में किया गया है चाहे फिर वस्तु-विक्रय संबंधी साधारण विधि के अधीन उन वस्तुओं का स्वत्व हस्तांतरण ऐसे क्रय या विक्रय के कारण किसी दूसरे राज्यों में क्यों न हो चुका हो।

(2) जहां तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित करे उसके अतिरिक्त राज्य की कोई विधि किन्हीं वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर वहां कोई करारोपण न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी जहां ऐसा क्रय-विक्रय अन्तर्राज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान में होता है:

परन्तु राष्ट्रपति आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर कोई कर, जो किसी राज्य की सरकार द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले विधिवत् उद्गृहीत किया जा रहा था, इस बात के होते हुए भी कि ऐसे कर का आरोपण इस

खंड के उपबन्धों के प्रतिकूल हैं, 1951 के मार्च के 31वें दिन तक उद्गृहीत किया जाता रहेगा।

(3) किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि ऐसी वस्तुओं के, जो संसद द्वारा समुदाय के जीवन के लिये आवश्यक घोषित की गई है, क्रय या विक्रय पर करारोपण करती या करना प्राधिकृत करती है, तब तक प्रभावी न होगी जब तक कि राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित किये जाने पर उसे उसकी अनुमति प्राप्त न हो गई हो।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 264क संविधान में जोड़ दिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं चाहता हूं कि आप अनुच्छेद 280क को ले लें।

***पं. हृदय नाथ कुंजरू:** उस अनुच्छेद के आज लेने पर मुझे प्रबल आपत्ति है। मुझे यह संशोधन आज प्रातःकाल ही मिला है। इसमें जो विषय रखा गया है वह बहुत महत्वपूर्ण है और हमें इस पर विचार करने के लिये तथा संशोधनों को पेश करने के लिये समय मिलना चाहिये, यदि हम ऐसा करना चाहें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** इसके अतिरिक्त, इस अनुच्छेद का प्रयोजन एक नये प्रकार का आपात रखना है जो किसी व्यवस्था में भी अज्ञात है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मुझे आशा है कि आप इन बातों से सभा के कार्य में बाधा न पड़ने देंगे। अब, यदि माननीय सदस्य को संशोधन नौ बजे भी मिला है तब भी उनके पास 9 से बारह तक का समय था। मैं नहीं समझता कि इस संशोधन में कोई अस्पष्ट बात है। मेरे माननीय मित्र पं. कुंजरू से बहुत कम बुद्धि वाला व्यक्ति भी उसे पहली बार पढ़कर समझ सकता था। इसमें मुझे तनिक भी संदेह नहीं है।

***पं. हृदय नाथ कुंजरू:** श्रीमान, यह बहुत महत्वपूर्ण मामला है और डॉ. अम्बेडकर की अधीरता तथा कठोरता के कारण सदस्यों के अधिकारों का-उन अधिकारों का जो उन्हें नियमों के अधीन प्राप्त हैं-हनन नहीं होने देना चाहिये। मैं मांग करता हूं, श्रीमान कि हमें इस संशोधन पर विचार करने के लिये अधिक समय मिलना चाहिये, चाहे डॉ. अम्बेडकर की स्पष्ट इच्छा संशोधन को सदन में से जल्दबाजी में से पारित करवाने की है।

***अध्यक्ष:** मेरा सुझाव है कि हम उसी क्रम से चलें जिससे वह कार्यावली में है और अनुच्छेद 274घघ को ले लें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं उसके लिये तैयार हूं, श्रीमान, किन्तु मुझे कहना होगा कि हमारे पास समय इतना कम है कि मैं नहीं समझता कि इन नियम-संबंधी बातों को आवश्यकता से अधिक महत्व देना चाहिये।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** यह क्षोभ की बात है कि मसौदा समिति के सभापति से आशा की जाती है कि वे अपनी स्थिति के कारण दूसरों के अधिकारों को भी समझेंगे, किन्तु वे उनका मूल्य इतना कम बताते हैं।

अनुच्छेद 274 घघ

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:—

"कि सूची 17 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 400 के निर्देश से, अनुच्छेद 27 घ के पश्चात् निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जाये:—

Power of certain States in Part III of the First Schedule to impose restrictions on trade and commerce by the levy of certain taxes and duties on the import of goods into or the export of goods from such States.

'274DD. Notwithstanding anything contained in the foregoing provisions of this Part or in any other provisions of this Constitution, any State which before the commencement of this Constitution was levying any tax or duty on the import of goods into the State from other States or on the export of goods from the State to other States may, if an agreement in that behalf has been entered into between the Government of India and the Government of that State, continue to levy and collect such tax or duty subject to the terms of such agreement and for such period not exceeding ten years from the commencement of this Constitution as may be specified in the agreement:

Provided that the President may at any time after the expiration of five years from such commencement terminate or modify any such agreement if, after consideration of the report of the Finance Commission constituted under article 260 of this Constitution, he thinks it necessary to do so.'

प्रथम अनुसूची के भाग 3 के कतिपय राज्यों की ऐसे राज्यों में वस्तुओं के आयात तथा से वस्तुओं के निर्यात पर कुछ कर तथा शुल्क लगा कर व्यापार और वाणिज्य पर निर्बन्धनों के आरोपण की शक्ति।

[274घघ. इस भाग के पूर्वगामी उपबन्धों में, अथवा इस संविधान के अन्य उपबन्धों में, किसी बात के होते हुए भी प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित कोई राज्य, जो इस संविधान के प्रारम्भ से पहले दूसरे राज्यों से उस राज्य में वस्तुओं के आयात पर अथवा उस राज्य से दूसरे राज्यों को वस्तुओं के निर्यात पर कोई कर या शुल्क उद्गृहीत करता था, ऐसे कर या शुल्क को, यदि भारत सरकार और उस राज्य की सरकार में उस लिये करार हो जाये तो, ऐसे करार के निर्बंधनों के अधीन रहते हुए तथा इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष से अधिक ऐसी कालावधि के लिये, जैसी कि करार में उल्लिखित हो, उद्गृहीत और संगृहीत करता रहेगा।

परन्तु ऐसे प्रारम्भ से पांच वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी समय भी यदि राष्ट्रपति अनुच्छेद 260 के अधीन गठित वित्त आयोग के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ऐसे किसी करार का अन्त या रूपभेद करना आवश्यक समझे तो वह ऐसा कर सकेगा।]

श्रीमान, यह नया अनुच्छेद तो अनुच्छेद 258 के परिणामस्वरूप ही है, जिसे सदन स्वीकार कर चुका है तथा जिससे भारत सरकार को शक्ति दे दी गई है कि वह किसी थोड़े से समय के लिये कुछ वित्तीय परिवर्तन करने के प्रयोजनों के लिये भाग 3 के राज्यों से समझौते कर सकती है।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधन सं. 428 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 274घघ के परन्तुक में 'President' शब्द के स्थान पर 'Parliament' शब्द रख दिया जाये तथा 'he thinks' इन शब्दों के स्थान पर 'it thinks' ये शब्द रख दिये जायें।"

मैं केवल यही चाहता हूं कि राज्यों के साथ वित्तीय समझौते के विषय में संसद को प्राधिकार मिलना चाहिये, राष्ट्रपति को नहीं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): श्रीमान, प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना ने जो एक मात्र आपत्ति उठाई है उसके विषय में मैं कहना चाहता हूं कि हमने अनुच्छेद 258 की योजनानुसार कार्य किया है, जिसे सदन पहले ही पारित कर चुका है, और जिसमें लिखा है कि राष्ट्रपति ही समझौते करेगा, संसद नहीं।

वास्तव में यदि हम राज्य के नरेश के साथ या राज्य की कार्यपालिका के साथ समझौता करने के लिये संसद को बीच में लायेंगे तो इससे संसद की स्थिति गिर जायेगी जो राज्यों पर सर्वोच्चता की है। संसद राज्यों के साथ समझौते में पक्षक नहीं बन सकती: यह तो कार्यपालिका संबंधी व्यवस्था है जो उसी योजनानुसार बनाई गई है जिसकी वी.टी. कृष्णमाचारी समिति के प्रतिवेदन में सिफारिश की गई थी। उस समिति ने वित्तीय एकीकरण की अपनी योजना में उन भू-चुंगियों को लगभग हटा दिया है जो विभिन्न राज्यों में लगाई जाती थीं। केवल दो अपवाद रखे गये हैं, और एक मात्र अपवाद राजस्थान है जहां संघ के आंतरित वित्तीय ढांचे को देखने से पता लगा कि यदि राज्य का आयव्ययक संतुलित रखना है तो भारत सरकार को सहायता के रूप में या अनुदान के रूप में भारी राशियां देनी होंगी। अतएव उन्होंने आरम्भ में पांच वर्ष के लिये—शायद अन्त में यह दस वर्ष ही रहे—उन्हें भू-शुल्क लगाने की अनुमति दे दी है। यह मामला तो एक कार्यपालिका प्राधिकारी तथा दूसरे के बीच में तय होना है, और यदि श्री सक्सेना के संशोधन को स्वीकार किया जायेगा तो संसद की वह सर्वोच्च स्थिति नहीं रहेगी जो केन्द्र की कार्यपालिका के विषय में ही नहीं, वरन राज्यों की कार्यपालिका के विषय में भी उसे प्राप्त है। यह एक संक्रमणकालीन उपबन्ध है और उस योजना के अनुसार बना है जिसकी उस समिति ने सिफारिश की है जिसने राज्यों के वित्तों की योजना पर पूरा विचार किया है और ऐसे उपाय तथा साधन निर्धारित किये

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

हैं जिनसे यथासंभव शीघ्र ही पूर्ण एकीकरण हो सकता है। मैं यह अनुभव करता हूं कि विचाराधीन अनुच्छेद के विषय में कोई ऐसी संभव आपत्ति नहीं उठाई जा सकती जिसे सिद्ध किया जा सके।

***माननीय श्री के. सन्तानम** (मद्रास : जनरल): श्रीमान, मुझे हर्ष है कि इस अनुच्छेद के मसौदे में बहुत कुछ सुधार कर दिया गया है और इस अनुच्छेद के सिद्धांत तथा उद्देश्य का निश्चय ही अनुमोदन करता हूं। किन्तु इस संबंध में एक बात पर विचार करना है। इसमें लिखा है "कोई राज्य जो इस संविधान के आरम्भ से पहले दूसरे राज्यों से उस राज्य में वस्तुओं के आयात पर अथवा उस राज्य से दूसरे राज्यों को वस्तुओं के निर्यात पर कोई कर या शुल्क उद्गृहीत करता था।" मान लीजिये कुछ वस्तुएं बंबई बंदरगाह पर आती हैं और सीधी राजस्थान चली जाती हैं जहां उन पर भू-शुल्क लग सकता है। क्या वह अन्य राज्यों से राजस्थान को वस्तुओं के आयात की परिभाषा में आयेगा? वह भारत के बाहर से राजस्थान में आयात है। मेरे विचार में वर्तमान समझौतों के अनुसार ऐसी वस्तुओं पर भी भू-शुल्क लग सकता है। अतः मैं नहीं जानता कि क्या 'अन्य राज्यों को' और इसी प्रकार 'अन्य राज्यों से' इन शब्दों की आवश्यकता है या नहीं। वे सर्वथा अनावश्यक प्रतीत होते हैं। हमें केवल उन वस्तुओं के भू-शुल्क से मतलब है जो राज्य में आती हैं या राज्य से बाहर जाती हैं। वे कहां जाती हैं और कहां से आती हैं, मेरे विचार में, महत्वपूर्ण बातें नहीं हैं जहां तक कि हमारे इस उद्देश्य विशेष का संबंध है, और क्योंकि सब बातें उस समझौते में स्पष्ट परिभाषित होती हैं, अतः मेरे विचार में हमें ऐसे शब्द नहीं रखने चाहिये जिनसे व्यापारियों को कर से बचने का रास्ता मिल सके। क्योंकि वस्तुएं बम्बई से आती हैं अतः वे कहेंगे कि वे भारत के किसी राज्य से नहीं आतीं और वे बाहर से आती हैं और इस लिये उन पर समझौते के अधीन भू-शुल्क नहीं लगा ने चाहिये। मैं चाहता हूं कि मसौदा समिति इस बात पर विचार करे और देखे कि कर से बचने के लिये कोई मार्ग न रह जाये। आशा है मेरी बात स्पष्ट हो गई होगी। मेरी आपत्ति यह है कि 'अन्य राज्यों से' और 'अन्य राज्यों को' इन शब्दों को, जो इस खंड के प्रयोजन के लिये सर्वथा अनावश्यक हैं, हटा दिया जाये और इस प्रकार मुकदमेबाजी और कर से बचने का एक मार्ग बंद कर दिया जाये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** इसमें वर्तमान राज्यों को ध्यान में रखा गया है, जहां वे उन वस्तुओं पर शुल्क लगाते हैं जो राज्यों में आती हैं, चाहे वे बाहर से आयें या अन्दर से आयें, और यह तो केवल...

***माननीय श्री के. सन्तानम:** इस खंड का यह अर्थ होगा कि यह उन वस्तुओं पर लागू है जो भारत के किसी राज्य से दूसरे राज्य में जाये और यदि वस्तुएं बाहर से आयें और किसी राज्य में प्रविष्ट हों तो यह खंड लागू नहीं होगा और इसलिये सम्बद्ध राज्य उन पर भू-शुल्क नहीं लगा सकेगा। राज्य को भू-शुल्क लगाने से वंचित रखने की हमारी इच्छा नहीं है, अतः इस पर विचार किया जाये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** आखिर उस समझौते का उद्देश्य कुछ अधिकार देना ही तो है।

*__माननीय श्री के. सन्तानमः__ वह संविधान के खंड से सीमित है। यदि खंड से शुल्क लगाना वर्जित हो तो इस खंड के विरुद्ध कोई समझौता सफल नहीं हो सकता। इसी प्रकार मेरा सुझाव है कि हमें इस खंड का क्षेत्र विस्तृत बना देना चाहिये और समझौते को लागू होने देना चाहिये।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः__ हम इसे देख लेंगे।

*__श्री राज बहादुर__ (मत्स्य का संयुक्त राज्य): इस अनुच्छेद पर विचार करते समय मैं इस सभा के कुछ मिनट लेकर इन शुल्कों, करों आदि के विषय में राज्य-संघों की सामान्य जनता की भावनाओं को व्यक्त करना चाहता हूं। वास्तव में जब से देशी राज्यों की जनता में राजनैतिक चेतना आई है तब से ही सीमा कर राजनैतिक विरोधियों का विशेष लक्ष्य रहा है। यह बात अकारण नहीं थी कि आयात तथा निर्यात दोनों पर सीमा-शुल्क लगाने के विरुद्ध देशी राज्यों की जनता और उनके आंदोलन खड़े हुए थे। जनता में एक विशेष प्रकार की भावना के ही कारण यह विरोध उत्पन्न हुआ था। हम सदा से ही अनुभव करते रहे हैं कि इन सीमा-शुल्कों के कारण हमारे सब व्यापार और हमारे उद्योगों को बहुत हानि पहुंचती रही है। आज भी हमें लाभ नहीं होगा। वे राज्य बड़े-बड़े नहीं थे अतः उन्हें अपने आयव्ययक को संतुलित करने के लिये सीमा-कर लगाना पड़ता था। उसके अतिरिक्त यह राज्यों के प्रभुताधिकारों का भी अंग माना जाता था। किन्तु इन सीमा-शुल्कों से जनता के हितों का तो अनुसेवन नहीं होता था।

अब जब कि इस अनुच्छेद को संविधान में रखा जा रहा है, मैं अपनी भावना को तथा देशी राज्यों की अधिकांश जनता की भावना को व्यक्त करना चहता हूं कि वे अपने राज्यों में इन सीमा-शुल्कों से खुश नहीं हैं। वास्तव में बैलों, भैंसों, ऊंटों और गधों के निर्यात पर भी ये सीमा-शुल्क लग ही जाते हैं। राजस्थान में, यदि आप एक गधे का निर्यात करना चाहें तो आपको 7 रुपये देने होंगे। यदि आप बैल का निर्यात करें तो 15 देने होंगे तथा ऊंट के 25 देने होंगे। हमारे यहां जो अतिरिक्त या बचे हुए डंगर-ढोर हैं उन्हें भी हम निर्यात नहीं कर सकते। हमारे यहां जो गधे हैं उनका भी निर्यात नहीं हो सकता जब तक कि सीमा-शुल्क के रूप में कुछ दिया न जाये। जहां तक घरेलू तथा अन्य उद्योगों का संबंध है, इन सीमा-शुल्कों के कारण उन्हें बहुत हानि पहुंची है।

अतः इस अनुच्छेद पर विचार करते समय मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूं कि केन्द्र को हमारी सहायता करनी चाहिये। हम इन सीमा-शुल्कों को जारी रखना नहीं चाहते। हमारा प्रांत एक घाटे का प्रांत है तथा वहां स्तर बहुत नीचा है, अतः जितनी जल्दी इन सीमा-शुल्कों को तथा सीमा-शुल्क विभाग को हटा दिया जायेगा उतना ही हमारे लिये अच्छा रहेगा। आज भी ऐसे निर्बंधनों के कारण ही अन्तर्राज्यिक वाणिज्य तथा व्यापार पर प्रभाव पड़ रहा है। अन्य प्रांतों से हमारे व्यापार पर स्पष्ट ही बहुत ज्यादा प्रभाव पड़ रहा है। उपभोग की वस्तुओं पर सीमा-शुल्क लगने के कारण हमारे यहां उनका मूल्य अन्य प्रांतों से अधिक है। इन सब बातों के कारण सड़क पर सामान्य व्यक्ति या गांवों के साधारण व्यक्ति अपने जीवन में प्रति दिन इस कर से जो भार पड़ता है, उसे अनुभव करते हैं। इन शब्दों के साथ, श्रीमान, मैं नेताओं से तथा केन्द्रीय सरकार से प्रार्थना करना चाहता हूं कि वे इस बात पर विचार करें और हमारे नये संघ की सहायता करें जिससे कि हम इस रोग से यथा संभव शीघ्र छुटकारा पा सकें।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि संशोधन सं. 428 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 274घघ के परन्तुक में 'President' शब्द के स्थान पर 'Parliament' शब्द रख दिया जाये तथा 'he thinks' इन शब्दों के स्थान पर 'it thinks' ये शब्द रख दिये जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 17 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 400 के निर्देश से, अनुच्छेद 274घ के पश्चात् निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जाये:—

'27DD. Notwithstanding anything contained in the foregoing provisions of this Part or in any other provisions of this Constitution, any State which before the commencement of this Constitution was levying any tax or duty on the import of goods into the State from other States or on the export of goods from the State to other States may, if an agreement in that behalf has been entered into between the Government of India and the Government of that State, continue to levy and collect such tax or duty subject to the terms of such agreement and for such period not exceeding ten years from the commencement of this Constitution as may be specified in the agreement:

Power of certain States in Part III of the First Schedule to impose restrictions on trade and commerce by the levy of certain taxes and duties on the import of goods into or the export of goods from such States.

Provided that the President may at any time after the expiration of five years from such commencement terminate or modify any such agreement if, after consideration of the report of the Finance Commission constituted under article 260 of this Constitution, he thinks it necessary to do so.'

[274घघ. इस भाग के पूर्वगामी उपबन्धों में, अथवा इस संविधान के अन्य उपबन्धों में, किसी बात के होते हुए भी प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित कोई राज्य, जो इस संविधान के प्रारम्भ से पहले दूसरे राज्यों से उस राज्य में वस्तुओं के आयात पर अथवा उस राज्य से दूसरे राज्यों को वस्तुओं के निर्यात पर कोई कर या शुल्क उद्गृहीत करता था, ऐसे कर या शुल्क को, यदि भारत सरकार और उस राज्य की सरकार में उस लिये करार हो जाये तो, ऐसे करार के निर्बंधनों के अधीन रहते हुए तथा इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष से अनधिक ऐसी कालावधि के लिये, जैसी कि करार में उल्लिखित हो, उद्गृहीत और संगृहीत करता रहेगा:

प्रथम अनुसूची के भाग 3 के कतिपय राज्यों की ऐसे राज्यों में वस्तुओं के आयात तथा से वस्तुओं के निर्यात पर कुछ कर तथा शुल्क लगा कर व्यापार और वाणिज्य पर निर्बन्धनों के आरोपण की शक्ति।

परन्तु ऐसे प्रारम्भ से पांच वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी समय भी यदि राष्ट्रपति अनुच्छेद 260 के अधीन गठित वित्त-आयोग के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ऐसे किसी करार का अन्त या रूपभेद करना आवश्यक समझे तो वह ऐसा कर सकेगा।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्थापित अनुच्छेद 274घघ संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 274घघ संविधान में जोड़ दिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यदि मेरे माननीय मित्र पं. कुंजरू को कोई आपत्ति न हो तो हम नये अनुच्छेद 280क को ले सकते हैं। उन्हें आधा घंटा और मिल चुका है।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में हम इसे कुछ देर में ले सकते हैं।

अनुच्छेद 302 कक

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 302क के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:–

'302AA. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution and subject to the provisions of article 119 thereof, neither the Supreme Court nor any other court shall have jurisdiction in any dispute arising out of any provision of a treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument which was entered into by any Ruler of an Indian State and to which the Government of the Dominion of India or any of its predecessor Governments was a party and which has or has been continued in operation after the date of commencement of this Constitution, or in any dispute in respect of any right accruing under any of the provisions of this Constitution relating to any such treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument.

Bar of jurisdiction of courts with respect to certain treaties, agreements, etc.

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

(2) In this article—

(a) 'Indian State' means any territory recognised by His Majesty or the Government of the Dominion of India as being such a State; and

(b) 'Ruler' includes, the Prince, Chief or other person recognised by His Majesty or the Government of the Dominion of India as the Ruler of any Indian State.'

कतिपय सन्धियों, करारों इत्यादि से उद्भूत विवादों में न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप का वर्जन।

[302कक. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी किन्तु अनुच्छेद 119 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए न तो उच्चतम न्यायालय और न किसी अन्य न्यायालय को किसी सन्धि, करार, प्रसंविदा, वचन-बन्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से, जो इस, संविधान के प्रारम्भ से पहले किसी देशी राज्य के शासक द्वारा की गई या निष्पादित की गई थी तथा जिसमें भारत डोमीनियन की सरकार या इसकी पूर्वाधिकारी कोई भी सरकार एक पक्ष थी तथा जो ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रवर्तन में है या बनी रही है, उद्भूत किसी विवाद में अथवा ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचन-बन्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से सम्बद्ध इस संविधान के उपबन्धों में से किसी से प्रोद्भूत किसी अधिकार, या उद्भूत किसी दायित्व या आभार के विषय में किसी विवाद में क्षेत्राधिकार होगा।

(2) इस अनुच्छेद में:–

(क) "देशी राज्य" से अभिप्रेत है कोई राज्य-क्षेत्र जो सम्राट या भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा, इस संविधान के प्रारम्भ से पहले, ऐसा राज्य अभिज्ञात था, तथा

(ख) "शासक" के अन्तर्गत है, राजा, मुखिया या अन्य कोई व्यक्ति जो सम्राट या भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा, ऐसे प्रारम्भ से पहले किसी देशी राज्य का शासक अभिज्ञात था।]"

जहां तक इस अनुच्छेद का सम्बन्ध है। यह स्वयं स्पष्ट ही है। इसका मंशा यह है कि उच्चतम न्यायालय और किसी अन्य न्यायालय को किसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबद्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से जिसे भारत डोमीनियन की सरकार या इसकी पूर्वाधिकारी किसी सरकार ने किया हो उद्भूत किसी विवाद में क्षेत्राधिकार से वंचित कर दिया जाये......

***एक माननीय सदस्यः** विनिश्चय कौन करेगा?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** विचार यह है कि इस मामले में न्यायालय विनिश्चय नहीं करेगा। इस पर केवल अनुच्छेद 119 के उपबंध लागू हैं जिसके अनुसार राष्ट्रपति कोई मामला उच्चतम न्यायालय को भेज कर उसकी राय पूछ सकता है और उच्चतम न्यायालय ऐसे मामले पर अपनी राय राष्ट्रपति को बताने के लिये बाध्य होगा। सदन को यह भी याद होगा कि इस संविधान में कुछ अनुच्छेद हैं, विशेषतः 302क तथा 267क हैं, जहां इन संधियों, करारों, सनदों आदि का निर्देश है, और वे भी न्यायालयों के क्षेत्राधिकार से बाहर हैं। सदन यह बात मानेगा कि यह अत्यावश्यक है कि ऐसे मामलों को न्यायालय के समक्ष पेश होने वाला विवादास्पद मामला न बनने दिया जाये, ऐसा न हो कि उससे वे प्रबंध उलट पुलट हो जायें जो संक्रमणकाल में राज्यों के शासकों तथा भारत सरकार के बीच के संबंधों का निर्धारण करने के लिये भारत सरकार ने स्वीकार किये हैं। संविधान के पारित होने के पश्चात् स्थिति स्पष्ट हो जायेगी। लगभग समस्त राज्य भाग 6क के क्षेत्र में आ गये हैं और उन पर इस संविधान के उपबन्ध लागू होंगे, और सिवाय उन संधियों आदि के जिन का स्पष्ट उल्लेख सविधान में किया गया है और जैसा कि मैं कह चुका हूं दो अनुच्छेद 267क तथा 302क हैं, उन करारों का संविधान के क्रियान्वित होने पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा, और क्योंकि इस संविधान में न्यायपालिका को बहुत शक्तियां दी गई हैं, अतः आवश्यक है कि इस संविधान के पारित होने से पूर्व जो चीज हो चुकी है और जो संयोगवश संविधान के पारित होने के बाद प्रभावी हो, तो वह न्यायालय में विवाद का कारण नहीं बननी चाहिये। मेरे विचार में इस सदन के सदस्य यह समझ जायेंगे कि यह अत्यावश्यक उपबंध है कि ऐसे व्यक्ति अनावश्यक झगड़े पैदा न कर सकें जो यह अनुभव करें कि उन पर कुप्रभाव पड़ा है या उन्हें हानि हुई है और वे एसे अधिकारों को मान्यता दिलवाने के लिये न्यायालय में न जा सकें जो इस संविधान के उपबंधों से लगभग समाप्त ही हो गये हैं, सिवाय उन मामलों के जो संविधान के कुछ अनुच्छेदों से लक्षित हैं। श्रीमान, मुझे आशा है कि सदन बिना विरोध के इस अनुच्छेद को पारित कर देगा।

(संशोधन 403 पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्षः** इस पर कोई संशोधन नहीं है। क्या कोई सदस्य इस अनुच्छेद के विषय में कुछ कहना चाहता है? मैं इस पर मत ले लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 302क के पश्चात् निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:–

'302AA. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution and subject to the provisions of article 119 thereof, neither the Supreme Court nor any other court shall have jurisdiction in any dispute arising out of any provision of a treaty,

Bar of jurisdiction of courts with respect to certain treaties, agreements, etc.

[अध्यक्ष]

agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument which was entered into by any Ruler of an Indian State and to which the Government of the Dominion of India or any of its predecessor Governments was a party and which has or has been continued in operation after the date of commencement of this Constitution, or in any dispute in respect of any right accruing under any of the provisions of this Constitution relating to any such treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument.

(2) In this article—

(a) 'Indian State' means any territory recognised by His Majesty or the Government of the Dominion of India as being such a State; and

(b) 'Ruler' includes, the Prince, Chief or other person recognised by His Majesty or the Government of the Dominion of India as the Ruler of any Indian State.'

कतिपय सन्धियों, करारों इत्यादि से उद्भूत विवादों में न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप का वर्जन।

[302कक. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी किन्तु अनुच्छेद 119 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए न तो उच्चतम न्यायालय और न किसी अन्य न्यायालय को किसी सन्धि, करार, प्रसंविदा, वचन-बन्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से, जो इस, संविधान के प्रारम्भ से पहले किसी देशी राज्य के शासक द्वारा की गई या निष्पादित की गई थी तथा जिसमें भारत डोमीनियन की सरकार या इसकी पूर्वाधिकारी कोई भी सरकार एक पक्ष थी तथा जो ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रवर्तन में है या बनी रही है, उद्भूत किसी विवाद में अथवा ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचन-बन्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से सम्बद्ध इस संविधान के उपबन्धों में से किसी से प्रोद्भूत किसी अधिकार, या उद्भूत किसी दायित्व या आभार के विषय में किसी विवाद में क्षेत्राधिकार होगा।

(2) इस अनुच्छेद में:—

(क) "देशी राज्य" से अभिप्रेत है कोई राज्य-क्षेत्र जो सम्राट या भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा, इस संविधान के प्रारम्भ से पहले, ऐसा राज्य अभिज्ञात था, तथा

(ख) "शासक" के अन्तर्गत है, राजा, मुखिया या अन्य कोई व्यक्ति जो सम्राट या भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा, ऐसे प्रारम्भ से पहले किसी देशी राज्य का शासक अभिज्ञात था।]"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 302कक संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुसूची 3

***अध्यक्षः** हम अन्य अनुच्छेदों तथा अनुसूची 3 को ले सकते हैं। वे छोटी चीजें हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अनुसूची 3 और अन्य अनुच्छेद पहले पारित हो चुके हैं तथा उन पर पुनर्विचार होना है। हमें सदन की अनुमति लेनी होगी।

***अध्यक्षः** आप पुनरारंभ करने के लिये अनुमति मांगेंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, आज की कार्यावली में, पहली मद अनुच्छेद 13 से आरम्भ करके तीसरी अनुसूची तक लगभग सभी मदें, सिवाय अनुच्छेद 264क, 274घघ, 302कक के जो पारित हो चुके हैं तथा 280क के जो उठा रखा गया है, अन्य सब मदें उन अनुच्छेदों तथा अनुसूचियों पर पुनर्विचार करने के विषय में हैं, जो पहले पारित हो चुकी थीं। अतएव मैं प्रार्थना करना चाहता हूं कि आप सदन में इस प्रस्थापना पर मत लें कि वे इन अनुच्छेदों पर पुनर्विचार की अनुमति देना चाहते हैं या नहीं।

***अध्यक्षः** मैं मान लेता हूं कि सदन इन अनुच्छेदों पर पुनर्विचार की अनुमति देता है।

***माननीय सदस्यगणः** हां।

***अध्यक्षः** हम अनुसूची 3 को लेंगे।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रदेश तथा बरार : जनरल): अनुच्छेद........

***अध्यक्षः** पहले हम इस अनुसूची को समाप्त कर लें।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं संशोधन 401 तथा 402 को साथ पेश करता हूं:

"कि शपथ के प्रपत्र की मद 4 में, तृतीय अनुसूची में, 'judges of the Supreme Court' इन शब्दों के पश्चात् 'and the Comptroller and Auditor-General of India' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

"कि शपथ के प्रपत्र की मद 4 में, तृतीय अनुसूची में, 'Supreme Court of India' इन शब्दों के पश्चात्, '(or Comptroller and Auditor-General of India)' ये कोष्ठक तथा शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

यह केवल एक भूल है जो हम अब ठीक करना चाहते हैं। शपथ का जो प्रपत्र उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये रखा गया है वही, सदन द्वारा, स्वीकृत हो जायेगा तो भारत के महालेखापरीक्षक के लिये भी रखा जायेगा।

***अध्यक्षः** अनुसूची 3 के इस संशोधन पर कोई संशोधन नहीं है।

प्रश्न यह है:

"कि शपथ के प्रपत्र की मद 4 में, तीसरी अनुसूची में 'judges of the Supreme Court' इन शब्दों के पश्चात्, 'and the Comptroller and Auditor-General of India' ये शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

"कि शपथ के प्रपत्र की मद 4 में, तीसरी अनुसूची में 'Supreme Court of India' इन शब्दों के पश्चात्, '(or Comptroller and Auditor-General of India)' ये कोष्ठक तथा शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुए।

अनुच्छेद 13

***अध्यक्षः** हम अनुच्छेद 13 को ले लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** क्या मैं प्रार्थना कर सकता हूं, श्रीमान.......

***श्री एच.वी. कामतः** इस संशोधन के विषय में, श्रीमान......

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** क्या मैं प्रार्थना कर सकता हूं, श्रीमान कि आप पहली मद को, बाद में, अंत में ही ले लें।

***अध्यक्षः** हम मद 1 को बाद में लेंगे। हम अनुच्छेद 16 से आरम्भ कर सकते हैं।

अनुच्छेद 16

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान मैं संशोधन सं. 393 को पेश करता हूं जो यह है:

"कि अनुच्छेद 16 को हटा दिया जाये।"

कारण यह है कि हमने अनुच्छेद 16 को मूलाधिकारों के अध्याय से लेकर भाग 10क के अध्याय में, जिसका शीर्षक 'भारत के राज्य-क्षेत्र में व्यापार, वाणिज्य तथा समागम' है, रख दिया गया है। अब यह अनुच्छेद 274क के रूप में जरा भिन्न शक्ल में रखा गया है जो इस प्रकार है:

" 'Subject to the other provisions of this Part, trade, commerce and intercourse throughout the territory of India shall be free.'

[भाग के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए भारत-राज्यक्षेत्र में सर्वत्र व्यापार, वाणिज्य और समागम अबाध होगा।]"

इस अनुच्छेद और अनुच्छेद 16 में यही अंतर है, कि अनुच्छेदों की भाषायें ही भिन्न हैं, और लिखा है कि संसद की शक्तियों के अधीन रहते हुए, व्यापार, वाणिज्य तथा समागम आदि अबाध होंगे। यह बात भाग 10क में रख दी गई है, अनुच्छेद 16 को मूलाधिकारों में रखना व्यर्थ है, अत: मैंने यह संशोधन पेश किया है।

क्या, श्रीमान, मैं इस सदन के सदस्यों को यह भी बता दूं, जिन्हें मेरे ख्याल में इस बात का पता ही है, कि इस अनुच्छेद को, जो बहुत कम अधिकार प्रदान करता है, मूलाधिकारों, में रखने के मूल विचार के पीछे एक इतिहास है। इसका कारण यह था कि जिस समय हमने मूलाधिकारों की रचना की थी उस समय हमारा ख्याल यह था कि संविधान का ढांचा दूसरा ही होगा। फिर भी जो अधिकार प्रदान किया गया है वह संसद द्वारा निर्मित विधि के अधीन होगा। अतएव इस प्रकार के अनुच्छेद के लिये, जो अन्य अनुच्छेदों के समान सच्चे अर्थ में मूलाधिकार नहीं हैं, समुचित स्थान व्यापार तथा वाणिज्य का अध्याय है। मेरे विचार में सदन को ऐसे अनुच्छेद को हटाने में कोई आपत्ति नहीं होगी तो मूलाधिकारों के अनुच्छेदों में अब व्यर्थ-सा ही है।

(संशोधन सं. 416 पेश नहीं किया गया।)

*__पंडित ठाकुर दास भार्गव__ (पूर्वी पंजाब : जनरल): क्या मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी से एक प्रश्न पूछ सकता हूं। उनके अनुसार, अनुच्छेद 274क अब अनुच्छेद 16 का स्थान ले रहा है। क्या मैं जान सकता हूं कि अनुच्छेद 25 अनुच्छेद 274क पर लागू होगा या नहीं?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ यदि मेरे माननीय मित्र कुछ दिन ठहरेंगे तो वे देखेंगे कि मैं एक दूसरा संशोधन भी पेश करूंगा जिसमें लिखा होगा कि अनुच्छेद 25 अनुच्छेद 274क पर लागू नहीं होगा और अनुच्छेद 16 पर भी नहीं। विधि की साधारण प्रक्रिया, इस संविधान के अधीन उच्चतम न्यायालय को जो सामान्य शक्ति दी गई है कि वह यह देखें कि इस संविधान के प्रत्येक उपबन्ध का पालन किया जाये वही प्रक्रिया तथा शक्ति अनुच्छेद 274क से 274ङ तक सब पर लागू होगी।

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

कोई विशेष उपबन्ध जो लागू होता, अनुच्छेद 16 के विषय में बहुत निर्बन्धित होगा। यदि संसद विधि द्वारा उस शक्ति का न्यूनन कर देती, तो अनुच्छेद 25 क्या विशेष अधिकार प्रदान कर सकता था, क्योंकि अनुच्छेद 16 के अधीन वही चीज़ उच्चतम न्यायालय को जा सकती थी जो संसद जाने देती।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान, जैसा कि मैं अनुच्छेद 16 को समझता हूं, वह भारत के समस्त राज्य-क्षेत्र में व्यापार, वाणिज्य तथा समागम की स्वतन्त्रता प्रदान करता है। मैंने अपने माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी की वक्तृता को बहुत ध्यान से सुना था और मैं अनुभव करता हूं कि यद्यपि हमने अनुच्छेद 274क या अन्य किसी अनुच्छेद के अधीन कुछ शक्तियां दे दी हैं फिर भी मैं इस विचार को बहुत अच्छा नहीं समझता कि मूलाधिकारों में, जिन पर हमने सदन में दो तीन बार अच्छी तरह विचार किया है, कोई परिवर्तन किया जाये। मान लीजिये कि आपने 264क द्वारा वह समान स्वतन्त्रता दे दी है जैसी कि अनुच्छेद 16 में दी गई है, फिर भी अनुच्छेद 16 को भी रहने दीजिये। हां, मैंने श्री टी.टी. कृष्णमाचारी की इस युक्ति को सुना है कि उच्चतम न्यायालय में जाकर यह तर्क करना आवश्यक नहीं है कि मूलाधिकारों में हस्तक्षेप नहीं हुआ है। किन्तु मैं स्पष्ट नहीं समझा हूं कि क्या अनुवर्ती अनुच्छेदों से वैसा ही पूर्ण न्याय होगा जैसा कि अनुच्छेद 16 में रखा गया था मैं नहीं चाहता कि संविधान निर्माण के अंतिम चरण में हम मूलाधिकारों को छेड़ें, जिन्हें हमने इतने विचार-विमर्श तथा ध्यान के बाद पारित किया था।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं एक दो शब्द कहना चाहता हूं।

श्रीमान, मुझे सचमुच खेद है कि इस अनुच्छेद को मूलाधिकारों में से निकाल दिया गया है मेरा यह अभिप्राय है कि व्यापार तथा वाणिज्य की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। और न प्रांतीय विधान मंडल को और न संसद को ही इस मूलाधिकार को कम करने का अधिकार होना चाहिए। मुझे सचमुच खेद है कि यह अनुच्छेद अंशत: अनुच्छेद 274क में समाविष्ट कर दिया गया है। मैं चाहता था कि मसौदा समिति के सदस्य अनुच्छेद 274क को हटाने का संशोधन पेश करते, अनुच्छेद 16 को नहीं।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** श्रीमान, अनुच्छेद 16 भी एक ऐसा उपबंध है जो अनुच्छेद 25 के प्रभाव के अंतर्गत था और यह नागरिकों का बहुत महत्वपूर्ण मूलाधिकार है कि भारत के राजक्षेत्र में समागम अबाध होगा। इससे यह निश्चय हो जाता है कि प्रांतीय सीमाओं से किसी प्रकार के आवागमन में बाधा नहीं पड़ेगी और प्रत्येक व्यक्ति भारत के गणराज्य की नागरिकता से पूरा लाभ उठा सकेगा। किन्तु क्योंकि हमने भाग 10क के कुछ उपबंधों को पारित कर दिया है अत: यह सच है कि कुछ हद तक यह स्वतन्त्रता कम कर दी गई है और जब इन अनुच्छेदों पर विचार किया जा रहा था तब मैंने कहा था कि इस अधिकार को छीना जा रहा है, किन्तु साथ ही अनुच्छेद 16 को अपने स्थान पर रहने दिया

गया था। हमें यह अधिकार प्रिय है क्योंकि यह उन अधिकारों में से है जो अनुच्छेद 25 के अधीन समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय द्वारा क्रियान्वित किये जा सकते हैं, यद्यपि हमने यह विनिश्चय नहीं किया है कि यह प्रक्रियायें कैसी होंगी, क्योंकि मूलाधिकार नये उपबन्ध हैं; किन्तु फिर भी हमारा यह ख्याल है कि कोई ऐसा तरीका निकाल लिया जायेगा जिससे इस गणराज्य के नागरिकों को अनुच्छेद 25 के अन्तर्गत सस्ता और सुगम न्याय प्राप्त हो सकेगा।

अब इस अनुच्छेद को मूलाधिकारों में से निकाला जा रहा है और उसके स्थान पर 274क रखा जा रहा है। मुझे भय है कि हमें अन्यायपूर्ण उपाय द्वारा उन सस्ते उपचारों से वंचित किया जा रहा है जो अनुच्छेद 16 द्वारा हमें मिले थे। केवल यही एक धारा नहीं है जिससे सत्र के अन्त में इस सदन में अधिकारों तथा उपचारों को छीना जा रहा है। अनुच्छेद 13 पर भी एक संशोधन है। हम यह भी देख चुके हैं कि अनुच्छेद 307 के अधीन सरकार सब अधिकारों को किस प्रकार अनुकूलन तथा रूप भेद करने के बहाने, छीन रही है तथा ऐसे रूप में बदल रही है जो सरकार को उचित जान पड़ता है।

मुझे खेद है कि मैं सहमत नहीं हूं कि अनुच्छेद 16 को इस मूलाधिकार के स्थान से हटाना चाहिये, क्योंकि इसे क्रियान्वित करने में उच्चतम न्यायालय को प्राप्त समुचित कार्यवाहियां शायद आसान तथा सस्ती हों। मैं चाहता हूं कि यह अनुच्छेद 16 हटाया न जाये।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** अध्यक्ष महोदय, मुझे भय है कि मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव अनुच्छेद 274क के मुकाबले में अनुच्छेद 16 का समर्थन करने में गलती कर रहे हैं क्योंकि यदि वे अनुच्छेद 304 को देखेंगे जो संविधान के संशोधन के विषय में है तो उन्हें पता चलेगा कि अनुच्छेद 16 में संशोधन करने की प्रक्रिया वही है जो 274क के विषय में है। एक ओर 274क में संसद साधारणत: परिवर्तन कर सकती है, उधर अनुच्छेद से संसद को शक्ति मिल जाती है कि वह भारत के समस्त राज्यक्षेत्र में व्यापार तथा वाणिज्य की स्वतन्त्रता को सीमित करने की विधि बना सकती है। 274क में वाणिज्य की स्वतन्त्रता संविधान में संशोधन किये बिना तो, कम से कम छिन नहीं सकती, 16 से संसद को स्वतंत्रता ही मिल जाती है। आप 16 तथा 274क को साथ नहीं रख सकते क्योंकि वे असंगत हैं। एक को या दूसरे को हटाना पड़ेगा। अत: उन्हें यह निश्चय करना है। कि 16 को हटाया जाये या 274क को।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** 274क एक पवित्र घोषणा है। घोषणा–आज्ञप्ति पर शायद अमल न हो सके। अनुच्छेद 25 के अधीन उपचार सस्ता और आसान है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** 274क में लिखा है कि यह स्वतन्त्र होगा और फिर सामान्य उपचार तो है ही। किसी को अधिकार है कि वह संविधान के किसी अनुच्छेद को क्रियान्वित करवाने के लिये उच्चतम न्यायालय में जा सकता है, केवल मूलाधिकार को ही नहीं। उच्चतम न्यायालय संविधान के प्रत्येक अनुच्छेद का संरक्षक है। 16 केवल पवित्र घोषणा–मात्र जिससे संसद को सब शक्तियां दे दी गई हैं

[माननीय श्री के. सन्तानम]

अनुच्छेद 274क में लिखा है कि संविधान का संशोधन न हो तो व्यापार अबाध होगा, और उस पर केवल वे ही सीमायें होंगी जो अनुवर्ती खंडों में उपबंधित हैं। अत: संगति के लिये तथा व्यापार की स्वतन्त्रता के लिये यह आवश्यक है कि अनुच्छेद 16 हट जाना चाहिये।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम : जनरल): श्रीमान, मैंने श्री सन्तानम को बहुत ध्यान से सुना है, किन्तु मैं उनकी बात समझने में या उनके विचारों को स्वीकार करने में कठिनाई अनुभव करता हूं। यह आवश्यक है कि समस्त राज्य-क्षेत्र में समागम के अधिकार अबाध होने चाहियें। ऐसे अधिकारों को सदा विधि में समाविष्ट कर देना चाहिये और यदि उन्हें छीन लिया जाये तो शायद हम महान अधिकार से वंचित हो जायेंगे जिसे बाद में कम किया जा सकता है संशोधन द्वारा हटाया जा सकता है। हम देख चुके हैं कि उसमें कैसे धीरे-धीरे परिवर्तन किया गया है—पहले एक धारा द्वारा, फिर दूसरी धारा द्वारा और तीसरी धारा द्वारा। हम उस क्रम को देख चुके हैं। यदि इसे छीन लिया गया तो हम यहां चर्चा तक भी नहीं कर सकेंगे कि हमें ऐसा अधिकार प्राप्त है। अतएव इन मूलाधिकारों को किसी प्रकार रहने देना चाहिये। इसलिये मैं इसे हटाने का विरोध करता हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, बहुत आदर के साथ मेरा निवेदन है कि मैं इस संबंध में श्री सन्तानम के तर्कों को नहीं समझ सका हूं। अनुच्छेद 16 को मूलाधिकार के अंग के रूप में रखा गया था कि व्यापार अबाध होगा। फिर किसी प्रकार मसौदा समिति के दिमाग में आया कि उसने ऐसा ही एक उपबन्ध, अनुच्छेद 274क रख दिया, और शायद वह अनुच्छेद 16 के अस्तित्व को बिल्कुल ही भूल गई। यदि उसे इसका पता होता या याद होता तो 274क को पारित करते समय ही अनुच्छेद 16 का निरसन भी कर दिया जाता। किन्तु बाद में उन्होंने देखा कि अनुच्छेद 274क और 16 में पुनरावृत्ति हो गई है। मेरा निवेदन है कि अब प्रश्न यही है कि अनुच्छेद 16 को हटाया जाये या 274क को। व्यक्तिगत रूप से मैं कहता हूं कि अनुच्छेद 274क को हटाना होगा। क्योंकि संविधान में 16 की स्थिति 274क से अधिक अच्छी है। अनुच्छेद 16 अनुच्छेद 25 के उपबंधों के अधीन है जिससे यह अधिकार न्याय्य बन जाता है। यह स्पष्ट नहीं बताया गया है कि इसका क्या औचित्य है कि उसे न्याय्य अधिकारों में से हटा कर अनुच्छेद 274क में रख दिया जाये। यह बहुत संदिग्ध है और शायद इससे कई सांविधानिक वकीलों की तथा उच्चतम न्यायालय की बुद्धि चकरायेगी कि यह न्याय्य है या नहीं। यदि यह न्याय्य है तो अनुच्छेद 16 को हटा कर यहां रखने का कोई कारण नहीं है। मेरा निवेदन है कि अनुच्छेद 274 क को हटाया जाये और 16को रखा जाये जिससे कि वह स्पष्टत: न्याय्य रहे।

***पं. ठाकुर दास भार्गव:** वह समुचित कार्यवाहियों से न्याय्य होगा, घोषणात्मक दावे से अवश्यमेव न्याय्य नहीं होगा।

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तावित संशोधन पर आपत्ति बिल्कुल गलतफहमी के कारण उत्पन्न हुई है। जैसा कि श्री सन्तानम पहले ही कह चुके हैं कोई उपबंध मूलाधिकारों के अध्याय में है, केवल इसी कारण उसमें कोई विशेष पवित्रता या बल नहीं आ जाता विशेषत: जब अनुच्छेद 16 में ही यह अपवाद है "Subject to any law made by Parliament"।

मूलाधिकारों में अनुच्छेद 16 की यह भाषा थी:

"Subject to any law made by Parliament, trade, commerce and intercourse throughout the territory of India shall be free."

अतएव इस अनुच्छेद में संसद को खुली छुट्टी दे दी गई थी, यद्यपि उसका नाम मूलाधिकार रखा गया है। यह ऐसा अधिकार है जिसका अतिक्रमण या न्यूनन संसद इच्छानुसार कर सकती है। अनुच्छेद 16 का प्रभाव यह था।

इस उपबंध को अंतर्राज्यिक व्यापार संबंधी अध्याय में ले जाने का कारण स्पष्ट करना अपेक्षित है। जब संविधान सभा ने केबिनेट मिशन की प्रस्थापनाओं के अन्तर्गत कार्य आरम्भ किया था तब यह अनुभव किया गया था कि यदि हम अंतर्राज्यिक उपबन्ध को मूलाधिकार के रूप में न रखेंगे तो व्यापार की स्वतन्त्रता भी न रह सकेगी। उस समय की परिस्थितियां ऐसी थीं कि हमने व्यापार-स्वातंत्र्य के खंड को मूलाधिकारों के अध्याय में रखना ही अभीष्ट समझा क्योंकि जब संविधान सभा ने अपना कार्य आरम्भ किया था तब उसकी शक्तियां सीमित थीं। इस प्रकार यह अध्याय मूलाधिकारों में रखा गया।

सदन को स्मरण होगा कि मूलाधिकारों की समिति बनी थी उस समय भारत की स्थिति के विषय में बाद के बहुत से परिवर्तन नहीं हुए थे और संविधान सभा को विस्तृत शक्तियां प्राप्त नहीं हुई थीं। अब संविधान सभा के कार्यों पर किसी प्रकार का निर्बन्धन लगाने का प्रश्न नहीं है और हम अब स्वतन्त्र तथा स्वाधीन भारत के लिये जैसा संविधान चाहें बना सकते हैं। इन परिस्थितियों में व्यापार-स्वातन्त्र्य संबंधी विषय में नये अनुच्छेद बनाये गये हैं जो अनुच्छेद 274क से आरंभ होते हैं। हमने अनुच्छेद 274क में रखा है कि भारत भर में व्यापार तथा वाणिज्य, उस भाग के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अबाध होगा। अत: संसद द्वारा निर्मित व्यापार स्वातंत्र्य संबंधी विधान उस अध्याय के उपबंधों के अधीन होंगे।

केवल इस कारण कि व्यापार-स्वातंत्र्य का उपबंध संविधान के इस भाग में है या उस भाग में है, उस अधिकार में कोई अंतर नहीं पड़ता। अनुच्छेद 274ख, 274ग और 274घ में व्यापार-स्वातंत्र्य के आवश्यक अपवाद तथा सीमायें हैं। एक और भी बात है जो आप इस संबंध में देख सकते हैं। अनुच्छेद 274ग से व्यापार-स्वातंत्र्य के अधिकार का क्षेत्र कम होने या निर्बंधित होने की बजाय बढ़ जाता है।

[श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर]

उसमें लिखा है:

"Notwithstanding anything contained in article 274B of the Constitution, neither Parliament nor the Legislature of a State shall have the power to make any law giving or authorising the giving of preference to one State over another or making any discrimination or authorising the making of any discrimination..."

इस उपबंध में राज्य सरकार तथा केन्द्रीय सरकार की शक्तियों को निर्बंधित किया गया है जिससे मूलाधिकार का क्षेत्र विस्तृत हो जाता है। यदि आप व्यापार-स्वातंत्र्य को संविधान के अर्थ में मूलाधिकार कहना चाहें।

चाहे कोई उपबंध विशेष को मूलाधिकार कहें या नहीं, मेरे मित्र पं. भार्गव ने न्याय्यता के विषय में जो आपत्ति उठाई है वह न्याय्यता भी इस बात पर निर्भर नहीं है कि कोई उपबंध मूलाधिकारों में है या संविधान में कहीं अन्यत्र है। जहां तक उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार का संबंध है, उस संविधान के निर्वचन के विषय में पूर्ण क्षेत्राधिकार प्राप्त है। उच्चतम न्यायालय से प्रत्येक मामले में यह विनिश्चय करने के लिये कहा जा सकता है कि कोई विधि विशेष संविधान से संगत है या नहीं है।

अत: मेरा निवेदन है कि किसी अनुच्छेद के मूलाधिकारों संबंधी अध्याय में होने से उसमें कोई गुण विशेष नहीं आ जाता। मेरे विचार में जब अनुच्छेद 274 सदन के समक्ष था तब मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर ने बताया था कि व्यापार तथा वाणिज्य संबंधी सब उपबंधों को एक ही अध्याय में रखने से क्या लाभ होंगे। इन आधारों पर मेरा निवेदन है कि मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो प्रस्थापना रखी है उस पर आपत्ति में बिल्कुल कोई बल नहीं है।

***अध्यक्ष:** क्या श्री कृष्णमाचारी कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** नहीं, श्रीमान। श्री कृष्णस्वामी अय्यर ने सब बातों का उत्तर दे दिया है।

***अध्यक्ष:** तो फिर मैं इस पर मत लेता हूं, अर्थात संशोधन सं. 393 पर मत लेता हूं जो अनुच्छेद 16 को हटाने के विषय में है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 16 को हटा दिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 16 संविधान से हटा दिया गया।

अनुच्छेद 27

***अध्यक्षः** फिर हम संशोधन सं. 417 को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं संशोधन सं. 394 और 417 को साथ पेश करना चाहता हूं क्योंकि वे दोनों अनुच्छेद 27 के विषय में हैं। मैं सबसे पहले सं. 394 को पेश करूंगा।

"कि अनुच्छेद 27 के खंड (क) में, 'अनुच्छेद 16' ये शब्द तथा अंक हटा दिये जायें।"

सदन ने अनुच्छेद 16 को हटाने का जो संशोधन 393 अभी स्वीकार किया है, उसी के परिणामस्वरूप यह संशोधन है।

***अध्यक्षः** हम इसे अभी निबटा देते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** हां, श्रीमान।

***अध्यक्षः** अभी-अभी जो विनिश्चय किया गया है, उसी के परिणामस्वरूप यह संशोधन है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 27 के खंड (क) में, 'अनुच्छेद 16' ये शब्द तथा अंक हटा दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं अपना संशोधन सं. 417 पेश करता हूं जो इस प्रकार है:

"कि अनुच्छेद 27 के परन्तुक में, 'subject to the terms thereof' इन शब्दों के पश्चात्, 'and to any adaptations and modifications that may be made therein under article 307 of this Constitution' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

श्रीमान, यह अनुच्छेद 307(2) की भाषा के कारण आवश्यक हो गया है, जिसे हम पारित कर चुके हैं, जिसमें हमने राष्ट्रपति को अधिकार दिया है कि वह विद्यमान विधियों को ऐसे अनुकूलित तथा परिवर्तित कर सकता है कि वे इस संविधान के उपबंधों से तथा मूलाधिकारों से संगत बन जायें।

***अध्यक्षः** इस पर कोई संशोधन नहीं है। क्या कोई इस पर कुछ कहना चाहता है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** संशोधनों के लिये बिल्कुल समय ही नहीं है।

***अध्यक्षः** यह तो 15 तारीख से चल रहा है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** नहीं, हमें यह आज सवेरे ही मिला है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** नौ बजे।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में यह तो लगभग पहले संशोधनों के परिणामस्वरूप ही है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** इस संशोधन के प्रभाव की थाह पाना असम्भव है जब तक कि किसी में डॉ. अम्बेडकर जैसी प्रतिभा न हो।

***अध्यक्षः** मैं इस पर मत ले लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 27 के परन्तुक में, 'subject to the terms thereof' इन शब्दों के पश्चात्, 'and to any adaptations and modifications that may be made therein under article 307 of this Constitution' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 42

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 42 के खंड (1) में, 'may be exercised by him' इन शब्दों के स्थान पर 'shall be exercised by him either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान, इस संशोधन के पश्चात् अनुच्छेद 42 का खंड (1) इस प्रकार बन जायेगा:

"The executive power of the Union shall be vested in the President and shall be exercised by him either directly or through officers subordinate to him in accordance with the Constitution and the law."

श्रीमान, यह आवश्यक प्रतीत हुआ है और इससे कोई गम्भीर परिवर्तन नहीं होता। यह काफी....

***माननीय श्री के. सन्तानमः** श्रीमान, क्या इसका यह अर्थ है कि विधान-मंडल द्वारा पारित विधेयक पर राष्ट्रपति के अधीनस्थ कोई अधिकारी हस्ताक्षर कर सकता है?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** खंड में लिखा है "in accordance with the Constitution and the law"। यदि संविधान और विधि से यह अनुमति हो कि विधेयकों का कोई और भी, जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करे, प्रमाणीकरण कर सकता है तो यह भी संभव होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** संशोधन से इसकी अनुमति मिल जाती है। आप संविधान से राष्ट्रपति को यह अनुमति दे रहे हैं कि वह अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों के द्वारा अपने कृत्यों को करवा सकता है।

***अध्यक्ष:** यह कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियों के विषय में है, विधायिनी शक्तियों के विषय में नहीं। मेरा अनुमान है कि विधेयकों पर हस्ताक्षर करना विधायिनी शक्तियों के अन्तर्गत आता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** हां, यह कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियों के विषय में है। मैं आपका आभारी हूं, श्रीमान।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** यदि आप और दूसरा उदाहरण चाहते हैं तो युद्ध की घोषणा का प्रश्न है क्या इसे मुख्य समादेशक कर सकता है? क्या यह शक्ति किसी को प्रदान की जा सकती है? मैं नहीं समझा कि इस संशोधन की अनुपस्थिति में कार्यपालिका का प्रमुख अपने पदाधिकारियों द्वारा कुछ कार्य करने की शक्ति से वंचित हो जायेगा। मैं इसे आवश्यक नहीं समझता। मैं नहीं समझता कि किसी अन्य संविधान में ऐसा उपबन्ध होगा।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं प्रस्ताव करता हूं:

> "कि अनुच्छेद 42 के प्रस्थापित खंड (1) में, जो सूची 18 के संशोधन सं. 418 में है, 'either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द हटा दिये जायें।"

'may' शब्द को बदल कर 'shall' बनाने पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। यह आवश्यक है और ठीक है।

***एक माननीय सदस्य:** आपके संशोधन की संख्या क्या है?

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे संशोधन की कोई संख्या नहीं है, क्योंकि मैंने इसकी सूचना आज सवेरे ही दी थी। मुझे सूची 18 कल रात ही मिली थी अत: मैं उस पर अपना संशोधन आज प्रात: ही भेज सका था।

श्रीमान, जब इस अनुच्छेद पर विचार हो रहा था तब यह स्पष्ट किया गया था कि राष्ट्रपति अपनी कार्यपालिका सम्बन्धी शक्ति का प्रयोग व्यक्तिगत रूप में या सीधा नहीं करेगा, किन्तु निस्संदेह इस संविधान के अनुसार ही करेगा। राष्ट्रपति तो कार्यपालिका सत्ता का प्रतीक मात्र है। इसका यह अर्थ नहीं है कि वह दिल्ली में बैठकर ऐसे आदेश देता रहेगा कि अमुक-अमुक को बन्दी बना लिया जाये। उसके साथ या अधीन काम करने वाले मंत्री या पदाधिकारी संविधान

[श्री एच.वी. कामत]

तथा विधि के अनुसार कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करेंगे। मैं समझ नहीं पाता कि मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर तथा श्री टी.टी. कृष्णमाचारी इस प्रकार का संशोधन पेश करना क्यों आवश्यक समझते हैं। यह व्यर्थ है और मेरा सदन से यह निवेदन है कि 'either' से आरम्भ होने वाले तथा 'him' पर समाप्त होने वाले शब्दों को हटा दिया जाये, जिससे कि अनुच्छेद ऐसा बन जायेगा:–

"The executive power of the Union shall be vested in the President and shall be exercised by him in accordance with the Constitution and law."

हमारे प्रयोजन के लिये यही काफी है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मेरा निवेदन है कि यह संशोधन केवल जल्दबाजी में ही नहीं रखा गया है, वरन पूर्णत: प्रयोजनहीन भी है। इसे पर्याप्त विचार के बिना ही पेश कर दिया गया है। मैं सदन का ध्यान अनुच्छेद 130 (1) की ओर आकृष्ट करूंगा जहां राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित की गई है और वह उसका प्रयोग संविधान तथा विधि के अनुसार कर सकता है। इसका अर्थ स्पष्टत: यही है कि वह उस शक्ति का प्रयोग संविधान के अनुसार, अर्थात् अभिकर्ताओं की सहायता से कर सकता है। वास्तव में सरकारों के बहुत से विभाग इसी प्रयोजन के लिये होते हैं जैसे न्यायालय, पुलिस, जेल आदि हैं। क्या यह मान लिया जाये कि यदि हम यह स्पष्ट नहीं करेंगे कि राष्ट्रपति अपनी शक्तियों का अभिकर्ताओं के द्वारा प्रयोग करेगा, तो उसे स्वयं व्यक्तिगत रूप से ही पहल करनी होगी? ऐसा मानना बेहूदगी बात होगी। सब बातों को स्पष्ट करने का प्रयत्न तो विस्तार की बातें कहने में अत्युक्ति करना है। मेरा निवेदन है कि जब हम राज्यपालों या राष्ट्रपति को शक्ति देते हैं तो हम उसके नाम से उसकी कार्यपालिका को काम करने देते हैं। इससे सिद्ध होता है कि राष्ट्रपति तथा राज्यपाल केवल वैधानिक सत्ताएं हैं तथा भूषणात्मक प्रतीक हैं। सब काम राष्ट्रपति के नाम से किये जाते हैं। अनुच्छेद 42 (1) का यही आशय है कि कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग राष्ट्रपति द्वारा संविधान के अनुसार किया जा सकता है। यही स्पष्ट आशय है। फिर 'may' शब्द के स्थान पर 'shall' रखने का क्या उद्देश्य है? 'may' शब्द का प्रयोग अत्युचित है।

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे विचार में 'shall' शब्द उस शक्ति के सांविधानिका प्रयोग के निर्देश से है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** इस प्रयोजन के लिये 'may' शब्द काफी है। इस शक्ति का प्रयोग स्वेच्छा पर निर्भर है और यदि उसका प्रयोग किया जाये तो संविधान के अनुसार होना चाहिये। राष्ट्रपति उसका प्रयोग न करे यह सम्भव है, और यदि वह करेगा तो संविधान के अनुसार ही करेगा। उस प्रयोजन के लिये 'may' शब्द काफी है। आखिरी वक्त में ही इस संशोधन की त्रुटियों को ढूंढना कठिन है। मैं पूछता हूं कि मसौदा समिति कब अपना काम समाप्त करेगी जिससे कि हमें कुछ आराम और संतोष मिल सके। हम यथासंभव शीघ्र घर जाना चाहते हैं। किन्तु मसौदा

समिति हमें ऐसा नहीं करने देगी। जैसा मैं बार-बार निवेदन कर चुका हूं, उन्हें अपना निश्चय कर लेना चाहिये तथा सदन को अपने मसौदों की पूरी रूपरेखा दे देनी चाहिये और प्रतिदिन इस प्रकार के नये संशोधन पेश नहीं करने चाहिये। सदस्यों के लिये इन परिस्थितियों में काम करना बहुत कठिन है।

*__अध्यक्षः__ मैं सर अलादि कृष्णस्वामी अय्यर से कहने वाला हूं कि वे स्थिति को स्पष्ट करें। किन्तु ऐसा करने से पहले मैं उनसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूं जो मेरे ध्यान में आया है। इसमें लिखा है 'through officers subordinate to him'। क्या इसका यह अर्थ है कि राष्ट्रपति प्रान्तों में संघ की ओर से पदाधिकारी रखेगा, या इसका यह अर्थ है कि केवल प्रान्तीय पदाधिकारी होंगे जो राष्ट्रपति के अधीनस्थ के रूप में काम करेंगे? क्या यह विचार है कि, अमरीका के समान, दो भिन्न-भिन्न प्रकार के पदाधिकारी होंगे, एक संघ के लिये और दूसरे प्रांतों के लिये?

*__श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यरः__ पूर्णतः फेडरल विषयों के लिये तो आप पूर्णतः फेडरल सरकारी अभिकरण रख सकते हैं; किन्तु समवर्ती विषयों के सम्बन्ध में आप प्रांतीय अभिकरणों से काम चला सकते हैं। यदि फेडरल सरकार प्रांतीय अभिकरणों से संतुष्ट नहीं है, तो संविधान में उपबन्ध है कि फेडरल सरकार समवर्ती विषयों के लिये अपने अभिकरण रख सकती है। केवल प्रांतीय विषयों के सम्बन्ध में समस्त प्रांतीय अभिकरण को यह काम सौंप दिया गया है। वहां आप अपने अधीनस्थ अधिकारियों का प्रयोग करते हैं, चाहे वे सीधे अधीन न हों। जब प्रांतीय अभिकरण का प्रयोग किया जाये तब भी हस्तक्षेप की शक्ति है ही। जहां तक फेडरल विषयों के क्रियान्वित करने का सम्बन्ध है उसे प्रांतीय अभिकरण के प्रयोग करने का अधिकार होगा।

जो व्यापक प्रश्न उठाया गया है उसके विषय में मैं बाद में कुछ कहना चाहता हूं।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ अध्यक्ष महोदय, मैं उस संशोधन का विरोध करने खड़ा हुआ हूं जो मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने पेश किया है। मेरा मत यह है कि यह संशोधन केवल अविचारपूर्ण ही नहीं है जैसा कि मेरे मित्र श्री नज़ीरुद्दीन अहमद ने इसे बताया है, वह भयानक भी है। राष्ट्रपति की कार्यपालिका शक्ति उसके हाथों में होनी चाहिये और केवल उसी के हाथों में होनी चाहिये, उसे संविधान के अंतर्गत विशेष कृत्य करने होंगे; उसे विशेष शक्तियों का प्रयोग करना होगा। मेरे मित्र, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद की इस बात से मैं सहमत नहीं हूं कि राष्ट्रपति केवल आभूषणात्मक प्रधान है। यदि वह ऐसा ही होता तो मुझे श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संधोधन को स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होती, किन्तु मैं तो संविधान का यह अर्थ समझता हूं कि राष्ट्रपति को बहुत महान शक्तियां प्राप्त हैं। अतः मेरा यह ख्याल है, श्रीमान, कि यह जोखम की बात है—मेरे विचार में केवल अविचारपूर्ण ही नहीं है—कि राष्ट्रपति को यह अधिकार दे दिया जाये कि वह अपनी शक्तियों को, जो उसे संविधान के अधीन प्राप्त हैं, कार्यपालिका पदाधिकारियों के हाथों में सौंप दे।

***पं. ठाकुर दास भार्गवः** अध्यक्ष महोदय, इस संशोधन के विषय में, मेरा समाधान नहीं हुआ है कि यह संशोधन आवश्यक है। वास्तव में जब हम अनुच्छेद 42 के अधीन राष्ट्रपति की शक्तियों के प्रयोग की तथा 'may be exercised by him' इन शब्दों के प्रयोग की बात करते हैं तो हम यह समझते हैं कि इन शक्तियों का प्रयोग राष्ट्रपति लगभग अव्यक्तिगत प्रणाली से करेगा। जहां तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का सम्बन्ध है, उसका प्रयोग राष्ट्रपति या राज्यपाल या प्रधान मंत्री या कई अन्य अधिकारी करेंगे। यह बात नहीं है कि राष्ट्रपति उनका प्रयोग व्यक्तिगत तौर पर करेगा। कई नियम तथा विनियम हैं जिनसे कई अधिकारियों को संघ की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। यदि ये शब्द रहेंगे तो यह तर्क उठ खड़ा होगा कि शक्तियों का प्रयोग या तो वह स्वयं करे या उसके अधीनस्थ अधिकारी ही करें। जब वे अधिकारी इन शक्तियों का प्रयोग करते हैं तो कई बार राष्ट्रपति को पता भी नहीं होता कि वे शक्तियां उसके नाम में प्रयुक्त हो रही हैं। अतः मेरा निवेदन है कि 'by him' इन शब्दों का अर्थ यह है कि या तो राष्ट्रपति उनका प्रयोग कर सकता है या उन शक्तियों को प्रदान कर सकता है।

दूसरा यह प्रश्न उठ सकता है कि उसके द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग वे ही लोग कर सकते हैं जिन्हें वे दी गई हैं, क्योंकि एक सिद्धान्त है कि प्रदत्त शक्तियों को आगे प्रदान नहीं किया जा सकता। इससे और भी बहुत-सी कठिनाइयां उत्पन्न हो जायेंगी यदि हम यह मान लें कि उसके द्वारा इन शक्तियों का प्रयोग या तो व्यक्तिगत है या उसके अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा है। अतएव मेरा निवेदन है कि जो शब्द रखे गये हैं वे बहुत काफी हैं और उनसे कोई अस्पष्टता उत्पन्न नहीं होती है। इसके अतिरिक्त, श्रीमान, मैं यह भी नहीं मानता कि 'shall' शब्द का प्रयोग आवश्यक है। विशेष प्रसंग में इस 'may' शब्द का अर्थ भी 'shall' ही होता है।

जहां तक श्री कामत द्वारा उठाये गये प्रश्न का सम्बन्ध है कि शक्तियों का प्रयोग संविधान और विधि के अनुसार होगा, 'may' शब्द का सम्बन्ध किसी प्रकार भी 'in accordance with the Constitution and the law' इन शब्दों से नहीं है। मेरा निवेदन है कि हम जो स्वीकार कर चुके हैं वे काफी हैं और उनसे सब आवश्यक योजन पूरे हो जाते हैं और कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, प्रश्न यह है कि यदि यह संशोधन किया जायेगा तो हानि होगी? यदि मैं उस दृष्टिकोण से उसे देखूं तो मेरे विचार में यह संशोधन केवल व्यर्थ ही नहीं, हानिकारक भी है। वास्तव में किसी ने अभी तक यह नहीं सोचा कि यह अनुच्छेद 42 अपूर्ण है। इसमें लिखा है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होगी और वह उसका प्रयोग संविधान तथा विधि के अनुसार कर सकता है। अब संशोधन में लिखा है कि इस शक्ति का प्रयोग वह स्वयं करेगा या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करेगा। क्या यह आवश्यक है? क्या संविधान और विधि में यह नहीं लिखा कि राष्ट्रपति को जो पदाधिकारी दिये जायेंगे उनका प्रयोग वह अपने प्रयोजन के लिये करेगा? वास्तव में खंड में लिखा है: "in accordance with the Constitution and law" क्योंकि

संविधान तथा विधि में उल्लिखित है कि राष्ट्रपति किस प्रकार अपनी शक्तियों का प्रयोग स्वयमेव या पदाधिकारियों के द्वारा करेगा, अत: मेरे विचार में ये शब्द नितान्त अनावश्यक हैं। मैं नहीं समझता कि कोई संशोधन आवश्यक है।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अयंगर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान, मुझे उस आपत्ति को समझने में, जो इस संशोधन पर उठाई गई है, कुछ कठिनाई अनुभव होती है। अनुच्छेद 42 में लिखा है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होगी। हमें सबको पता है कि राष्ट्रपति को बहुत-सी शक्तियां दी गई हैं किन्तु वास्तव में वह उनका प्रयोग नहीं करता। वह उनका प्रयोग केवल उनके आदेश पर करता है जो विधान-मंडल के प्रति उत्तरदायी होते हैं। यह पहली बात है जो, मैं चाहता हूं, सदन को समझ लेनी चाहिये।

दूसरी बात यह है कि संविधान में ही लिखा है कि कार्यपालिका कार्यवाही, जो वास्तव में कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग ही है, वास्तव में राष्ट्रपति द्वारा सीधी नहीं की जा सकती। अनुच्छेद 64 (1) को देखिये, उसमें लिखा है:

> " 'All executive action of the Government of India shall be expressed to be taken in the name of the President.'
>
> [भारत-सरकार की समस्त कार्यपालिका कार्यवाही राष्ट्रपति के नाम से की हुई कही जायेगी।]"

अतएव वस्तुस्थिति से यह अपेक्षित है कि असंख्य मामलों में संविधान या विधि से राष्ट्रपति को शक्ति प्राप्त होती है, किन्तु उसका वास्तविक प्रयोग अन्य लोगों पर छोड़ दिया जाता है जो उसके प्रति उत्तरदायी समझे जाते हैं। निस्संदेह, वह इन अधिकारियों द्वारा की गई कार्यवाही का उत्तरदायित्व लेता है। कार्यरूप में प्रशासन के दृष्टिकोण से यह असम्भव है कि राष्ट्रपति उन सब शक्तियों का प्रयोग कर सके जो संविधान द्वारा उसमें निहित हैं। उदाहरण के लिये उन शक्तियों को ही लीजिये जो विधान के विषय में उसके कृत्यों के प्रयोग के सम्बन्ध में हैं। कई मामलों में, उदाहरण के लिये सभा को आहूत करने तथा उसका विघटन करने के विषय में वह कार्यवाही करता है किन्तु उन शक्तियों का प्रयोग वह अपने सांविधानिक परामर्शदाताओं की मंत्रणा पर करता है। और साधारणत: वह उन सब शक्तियों का प्रयोग नहीं कर सकता जो उसमें निहित हैं। इस पर क्या आपत्ति है कि वह अपने अधीनस्थ अधिकारियों से, जो उसके प्रति उत्तरदायी हैं, ऐसी शक्तियों के प्रयोग के लिये कह दे? क्योंकि उसके लिये उन आदेशों के जारी होने से पहले उन्हें देखना भी नितांत अनावश्यक है, अत: हमें उसे अधिकार देना चाहिये कि वह ऐसे अधिकारियों को चुन ले जिन पर उसे विश्वास है और जिन्हें इस शक्ति का प्रयोग करने का काम सौंपा जा सकता हो।

निस्संदेह मैंने इस आपत्ति पर विचार किया है; विधान-मंडल द्वारा पारित होने के पश्चात् विधेयकों पर अपनी अनुमति देने के विषय में वह क्या करेगा? साधारणत: हम राष्ट्रपति से आशा करते हैं कि वह अपनी अनुमति के प्रतीकस्वरूप, अपनी

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अयंगर]

अनुमति अभिव्यक्त करने के लिये उन विधेयकों पर हस्ताक्षर करे। स्वभावत: ऐसे मामले में वह साधारणत: पदाधिकारियों से नहीं कहेगा कि वे उसकी ओर से हस्ताक्षर करें; किन्तु यदि यह मान लिया जाये कि ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो जायें जब कि वह उस प्रकार की अनुमति पर अपने हस्ताक्षर न कर सके, तो उसके लिये यह कहना भी आवश्यक हो सकता है कि उसके नाम में अनुमति पर कोई अन्य व्यक्ति हस्ताक्षर कर दे। मैं नहीं समझता कि इसमें कोई ऐसी बात है जो वैधानिक रूप में अनुचित हो, या सांविधानिक रूप में भी अनुचित हो, कि कोई अन्य व्यक्ति विधान-मण्डल द्वारा पारित विधेयक पर अनुमति सूचक हस्ताक्षर कर दे, जबकि राष्ट्रपति ऐसा करने में असमर्थ हो या वह समझता हो कि विशेष परिस्थितियों में अन्य लोग उसकी ओर से हस्ताक्षर कर सकते हैं। मेरे विचार में उन कठिनाइयों को दूर करने के लिये, जो वास्तव में पैदा होंगी, इन शब्दों को जोड़ना आवश्यक है।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या मेरे मित्र श्री गोपालस्वामी अयंगर का प्रयोजन 'in accordance with the Constitution and the law' इन शब्दों से पूरा नहीं हो जाता? राष्ट्रपति अन्य व्यक्तियों को या अभिकर्ताओं को जो कुछ शक्ति प्रदान करेगा वह संविधान और विधि के अनुसार होगी।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अयंगर:** उस स्थिति में वह जब भी किसी अधिकारी को कोई प्राधिकार देना चाहेगा, हमें संसद से विधि बनवानी पड़ेगी। किन्तु यदि संसद उसके लिये प्राधिकार दे सकती है तो संविधान ही ऐसा क्यों न कर दे?

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर:** श्रीमान, कुछ बातों को जो मैं कहना चाहता था पहले ही मेरे मित्र श्री गोपालस्वामी अयंगर ने कह दिया है। इसमें कोई नई बात नहीं है कि वर्तमान उपबन्ध को भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 7 के अनुरूप बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। यद्यपि श्री नजीरुद्दीन अहमद ने अपनी साहित्यक बुद्धिमत्ता से मसौदा समिति को असावधान कह कर डांटा है, पर मैं उनका ध्यान उस भाषा की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं जो संसदीय मसौदाकार ने भारत शासन अधिनियम की धारा 7 में प्रयोग की है। मैं धारा को पढ़ रहा हूं:

"Subject to the provisions of this Act, the executive authority of the Federation shall be exercised on behalf of His Majesty by the Governor either directly or through officers subordinate to him............"

अतएव ऐसा स्पष्ट उपबन्ध रखने में, कि कार्यपालिका प्राधिकार का प्रयोग पदाधिकारियों के द्वारा भी किया जा सकता है, कोई नई या विचित्र बात नहीं है।

जहां तक साधारण कार्यपालिका शक्ति का सम्बन्ध है, वह राष्ट्रपति में निहित है। जहां तक कार्यपालिका प्रशासन को चलाने के उत्तरदायित्व का सम्बन्ध है वह मंत्रियों में निहित है। जहां तक शासकीय अभिकरणों से काम लेने का प्रश्न है,

वह संविधान के आधार में ही स्पष्टत: निहित है। मेरा ख्याल है कि संशोधन के बिना जो उपबन्ध है उसके अधीन भी राष्ट्रपति के लिये यह पूर्णत: सम्भव होगा कि वह कोई शासकीय अभिकरण नियुक्त कर दे, यद्यपि शासकीय अभिकरण के कार्यों का अन्तिम उत्तरदायित्व राष्ट्रपति पर होगा जो केबिनेट की मंत्रणा पर चलता है। वास्तव में, जब मूल अनुच्छेद की रचना की गई थी तो वह आयर के संविधान के अनुच्छेद 12 के आधार पर की गई थी। वह अनुच्छेद इस प्रकार है:

"There shall be a President........ who shall exercise and perform the powers and functions conferred on the President by this Constitution and by law."

*__श्री एच.वी. कामत:__ यह युक्ति तो आपके विचारों के विपरीत है।

*__श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर:__ विद्यमान संधोधन में कहा गया है कि राष्ट्रपति इस शक्ति का प्रयोग या तो स्वयं या अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों के द्वारा कर सकता है।

*__श्री एच.वी. कामत:__ मेरे पास यहां आयर के संविधान की प्रति है। उसमें पदाधिकारियों का कहीं भी उल्लेख नहीं है।

*__श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर:__ यदि केवल आप मेरी बात सुनने की कृपा करें तो आप यह आपत्ति नहीं उठाते। मैंने कहा था कि ऐसे स्पष्ट उपबन्ध के बिना भी राष्ट्रपति को क्षमता होगी कि कोई शासकीय अभिकरण बना दे या रख ले, और ऐसे भी संविधान हैं जिनमें इसका स्पष्ट उपबन्ध नहीं है, और मैंने आयर के संविधान के अनुच्छेद 12 का निर्देश दिया था, जिससे किसी हद तक श्री कामत के दृष्टिकोण का समर्थन होता है। कुछ ऐसे भी वकील हैं जो ऐसी अवस्था में भी विरोधी पक्ष का विरोध करते हैं जबकि विरोधी पक्ष उनकी बात पर उनके पक्ष में कोई बात स्वीकार कर ले। मेरे मित्र श्री कामत का यही रुख मालूम होता है। मैंने तो यही कहा था कि यह तो केवल रचना का प्रश्न है और उपबन्ध को स्पष्ट करने का प्रश्न है। संसदीय मसौदाकार ने भारत शासन अधिनियम की धारा 7 में पदाधिकारियों को स्पष्ट निर्देश किया था। आयर के संविधान में पदाधिकारियों का कोई निर्देश नहीं है। पदाधिकारियों का कोई निर्देश न करने पर भी, राष्ट्रपति को पूर्ण क्षमता होगी कि वह कार्यपालिका के कृत्यों को पूरा करने के लिये शासकीय अभिकरणों का प्रयोग करे, यद्यपि अंततोगत्वा कार्यपालिका में निहित कृत्यों के निर्वहन के विषय में उत्तरदायित्व राष्ट्रपति तथा कार्यपालिका पर ही आयेगा, चाहे किसी विधि के अंतर्गत हो या कार्यपालिका के कृत्यों सम्बन्धी संविधान के साधारण सिद्धांतों के अंतर्गत हो।

अतएव मेरा निवेदन है कि श्रीमान, जो बात निहित है उसे स्पष्ट करने में कोई हानि नहीं है। वहां 'पदाधिकारी' शब्द का प्रयोग किया गया है। 1935 के भारत शासन अधिनियम के सम्बन्ध में आपको चाहे कोई भी आपत्ति हो, साधारणत: इस भाषा को यहां रखने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती। मैं तो और भी आगे बढ़कर यह बल देना चाहता हूं कि सांविधानिक दृष्टि से ऐसे उपबन्ध की

[श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर]

आवश्यकता है। राष्ट्रपति अपने कृत्यों को कितनी हद तक प्रदान कर सकता है इस प्रश्न पर अमरीका में वाद-विवाद हो चुका है। उदाहरण के लिये, यदि राष्ट्रपति में कोई शक्ति निहित हो तो ये प्रश्न उठ सकते हैं कि क्या यह सम्भव है कि वह अपने प्राधिकार को प्रदान कर सकता है या फिर प्रत्येक मामले में वह प्रश्न राष्ट्रपति के समक्ष पेश होना चाहिये। हमें बताया गया है कि वास्तव में राष्ट्रपति से लगभग 2,000 हस्ताक्षर प्रतिदिन करवाने पड़ेंगे तभी प्रधानात्मक पद्धति चल सकती है। अभी हाल ही में अमरीकी संविधान के विषय में प्रकाशित एक पुस्तक में बताया गया है कि राष्ट्रपति के हस्ताक्षरों की बहुत से विधेयकों पर आवश्यकता होती है, जिनके विषय में उसे कुछ भी पता नहीं होता।

अत: हमें इन दो प्रश्नों को अलग-अलग करना पड़ेगा: अंतिम उत्तरदायित्व का प्रश्न और उस अभिकरण विशेष का प्रश्न जो किसी सरकारी संस्था या किसी ढांचे के काम करने में नियोजित किया जा सकता है। अत: किसी विधि में यह उपबंध किया जा सकता है कि एक अभिकरण विशेष आदेशों को क्रियान्वित करेगा। वहां भी उसका यह अर्थ नहीं है कि देश की सरकार पर उस विधिरूप अभिकरण के समुचित रूप से काम करने का उत्तरदायित्व नहीं है। चाहे वह विधिरूप अभिकरण हो या प्रशासकीय अभिकरण हो। इन सब मामलों में कार्यपालिका को कोई विशेष शासकीय अभिकरण नियोजित करने की मनाही नहीं है; 'पदाधिकारी' शब्द रख कर हमने उन सब परिकल्पनाओं को समाप्त कर दिया है जो अमरीकी संविधान में शक्ति-प्रदान करने के विषय में चल रही थीं।

यह संभव है कि यह ध्यान रखते हुए कि हमारी व्यवस्था मुख्यत: ब्रिटिश विचारों पर आधारित है, ऐसे उपबन्ध के बिना भी, शासकीय अभिकरण का नियोजन किया जा सकता है। अन्य अधिराज्य-संविधानों में इस आशय का एक साधारण उपबन्ध है कि शक्ति रानी में निहित है। आस्ट्रेलिया और कनाडा के संविधानों में भी ऐसा ही है। यह तो केवल भाषा विशेष का प्रयोग है और मुझे उस पर कोई आपत्ति दिखाई नहीं देती। सामान्य व्यक्ति को अमरीकी विधि या संविधान या अधिराज्यों के संविधानों के उपबन्धों के प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। इस देश में सामान्य जन को स्पष्ट बताने के लिये कि शासकीय अभिकरण का प्रयोग किया जा सकता है, यह उपबंध अच्छा है।

***श्री एच.वी. कामत:** एक बात स्पष्ट करना चाहता हूं, श्रीमान, कि क्या मैं अपने मित्र श्री अलादि कृष्णस्वामी से पूछ सकता हूं कि क्या संसार के किसी अन्य संविधान में राज्य के कार्यपालिका प्रधान के अधीनस्थ अधिकारियों को इस प्रसंग में निर्देश किया गया है।

***अध्यक्ष:** उन्होंने भारत शासन अधिनियम से एक धारा पढ़ कर सुनाई थी।

***श्री एच.वी. कामत:** भारत शासन अधिनियम किसी स्वतंत्र राज्य का संविधान नहीं है।

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर:** इस प्रश्न का स्वतंत्रता से कोई सम्बन्ध नहीं है।

***श्री एच.वी. कामतः** यह मूर्खतापूर्ण उपबन्ध है।

***अध्यक्षः** मैं इस पर मत लूंगा। श्री कामत का संशोधन वास्तव में इसका निराकरण ही है।

***श्री एच.वी. कामतः** नहीं श्रीमान्।

***श्री एच.वी. कामतः** बहुत अच्छा, पहले मैं आपके संशोधन पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि संशोधन सं. 418 में, अनुच्छेद 42 के प्रस्थापित खंड (1) में, 'either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द हटा दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** फिर, मैं श्री कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तावित प्रस्थापना पर मतदान लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 42 के खंड (1) में, 'may be exercised by him' इन शब्दों के स्थान पर 'shall be exercised by him directly or through officers subordinate to him' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में एक बज चुका है और हम अब स्थगित हो जायेंगे। मैं सदस्यों को बताना चाहता हूं कि हम अन्य अनुच्छेदों को, जिनकी सूचना आज की कार्यावली में दी गई है, आज मध्याह्नन्तर के साढ़े चार बजे लेंगे।

***पं. हृदय नाथ कुंजरूः** हम जब आज सत्र करने के लिए राजी हुए थे तो मेरे विचार में यही समझा गया था कि सत्र केवल प्रातःकाल ही होगा। मैं नहीं समझता कि कोई मध्याह्नान्तर सत्र के लिये तैयार था। अतएव मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि दूसरा सत्र कल प्रातःकाल कर लें। आज मध्याह्नन्तर में हमें कुछ काम है जो हमने इसलिये ले लिए थे कि सामान्यतः सभा मध्याह्नन्तरों में समवेत् नहीं होती।

***अध्यक्षः** कुछ भी हो, मैं यह नहीं समझा था कि हम आज दोपहर बाद नहीं बैठेंगे। यह अनिश्चित रहने दिया गया था और हमें अब निश्चय करना है कि हम दोपहर बाद बैठेंगे या नहीं। यह देखते हुए कि कई सदस्य द्वितीय पठन को समाप्त करना चाहते हैं और उनमें से कई दीपावली के कारण चले जाना चाहते हैं, मेरे विचार में हमें आज दोपहर बाद बैठना चाहिये। यदि हम आज दोपहर बाद नहीं बैठेंगे तो संभव है कि हम कल भी समाप्त न कर सकें।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अयंगरः** वास्तव में, श्रीमान, हमने और कई अन्य सदस्यों ने भी आज सायंकाल 5 बजे सरकारी भवन में भोज के लिये निमंत्रण स्वीकार कर लिये हैं। यदि हम 4.30 बजे आरंभ करेंगे तो मेरे विचार में हम कुछ कार्य नहीं कर सकेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** उस स्थिति में हम चार बजे समवेत् हो सकते हैं।

***अध्यक्षः** सदन का अपने सदस्यों पर पहला दावा है। अतएव में आज सायंकाल के साढ़े चार बजे का समय निश्चित करता हूं। सदन सायंकाल के साढ़े चार बजे तक के लिये स्थगित रहेगा।

तत्पश्चात् सभा साढ़े चार बजे तक के लिये मध्याह्न भोजनार्थ स्थगित हुई।

सभा मध्याह्न भोजन के पश्चात् साढ़े चार बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में पुनः समवेत हुई।

अनुच्छेद 280क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 280 के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जाये:–

'280A (1) If the President is satisfied that a situation has arisen whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof is threatened, he may be a proclamation make declaration to that effect.

Provisions as to financial emergency

(2) The provisions of clause (2) of article 275 of this Constitution shall apply in relation to a proclamation issued under clause (1) of this article as they apply in relation to a proclamation of Emergency issued under clause (1) of the said article 275.

(3) During the period any such proclamation as is mentioned in clause (1) of this article is in operation, the executive authority of the Union shall extend to the giving of directions to any State to observe such canons of financial propriety as may be specified in the directions, and to the giving of such other directions as the President may deem necessary and adequate for the purpose.

(4) Notwithstanding anything contained in this Constitution—

(a) any such direction may include—

(i) a provision requiring the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving in connection with the affairs of a State;

(ii) a provision requiring all Money Bills to which the provisions of article 182 of this Constitution apply to be reserved for the consideration of the President after they are passed by the Legislature of the State;

(b) it shall be competent for the President during the period any proclamation issued under clause (1) of this article is in operation to issue directions for the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving in connection with the affairs of the Union including the judges of the Supreme Court and the High Courts.

(5) Any failure to comply with any directions given under clause (3) of this article shall be deemed to be a failure to carry on the Government of the State in accordance with the provisions of this Constitution.'

[280क (1) यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जिससे भारत अथवा उसके राज्य-क्षेत्र के किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में हो तो वह उद्घोषणा द्वारा उस बात की घोषणा कर सकेगा। वित्तीय आपात के बारे में उपबन्ध

(2) अनुच्छेद 275 के खंड (2) के उपबन्ध इस अनुच्छेद के अधीन निकाली गई उद्घोषणा के सम्बन्ध में वैसे ही लागू होंगे जैसे कि वे अनुच्छेद 275 के अधीन निकाली गई आपात की उद्घोषणा के लिये लागू होते हैं।

(3) उस कालावधि में जिसमें कि खंड (1) में वर्णित कोई उद्घोषणा प्रवर्तन में रहती है संघ की कार्यपालिका शक्ति किसी राज्य को वित्तीय औचित्य सम्बन्धी ऐसे सिद्धान्तों का पालन करने के लिये निदेश देने तक जैसे कि निदेशों में उल्लिखित हों तथा ऐसे अन्य निदेश देने तक, जिन्हें राष्ट्रपति उस प्रयोजन के लिये देना आवश्यक और समुचित समझे, विस्तृत होगी।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(4) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी–

(क) ऐसे किसी निदेश के अन्तर्गत–

(1) राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किन्हीं वर्गों के वेतनों और भत्तों में कमी की अपेक्षा करने वाले उपबन्ध,

(2) धन-विधेयकों अथवा अन्य विधेयकों को, जिनको अनुच्छेद 182 के उपबन्ध लागू हैं, राज्य के विधान-मंडल के द्वारा उनके पारित किये जाने के पश्चात् राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित रहने के लिये उपबन्ध, भी हो सकेंगे,

(ख) उस कालावधि में, जिसमें कि इस अनुच्छेद के अधीन निकाली गई उद्घोषणा प्रवर्तन में हैं, उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के सहित, संघ के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किसी वर्ग के वेतनों और भत्तों में कमी के लिये निदेश निकालने के लिये राष्ट्रपति सक्षम होगा।

(5) इस अनुच्छेद के खंड (3) के अधीन दिये गये निदेशों का पालन करने में असफलता को भी इस संविधान के उपबंधों के अनुसार राज्य का शासन चलाने की असफलता समझा जायेगा।)"

श्रीमान, इस देश की वर्तमान आर्थिक तथा वित्तीय स्थिति को देखते हुए इस सभा में मुशकिल से ही कोई ऐसा सदस्य होगा जो ऐसे उपबन्ध की आवश्यकता पर आपत्ति करे जो इस नये अनुच्छेद 280क में रखा गया है और इसलिये इस अनुच्छेद को हमारे संविधान के मसौदे में रखने का औचित्य बताने पर मैं अधिक समय खर्च करना नहीं चाहता। मैं तो केवल यही कहना चाहता हूं कि यह अनुच्छेद लगभग उसी अधिनियम के आधार पर बनाया गया है जो संयुक्त राज्य अमरीका में 1930 में या उस समय के लगभग पारित हुआ था और जिसे राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम कहते हैं जिससे राष्ट्रपति को आर्थिक तथा वित्तीय दोनों प्रकार की कठिनाइयों को दूर करने के लिये ऐसे ही उपबंध बनाने की शक्ति दी गई थी, जब कि महान आर्थिक संकट के कारण अमरीकी लोगों पर वे कठिनाइयां आ पड़ीं थीं। उदाहरण के लिये, हमने संविधान में ऐसा उपबंध रखना आवश्यक क्यों समझा इसका कारण यह है कि हमें पता है कि अमरीका संविधान के अधीन उस विधान को जो पारित किया गया, थोड़े समय बाद ही उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई और उच्चतम न्यायालय ने समूचे विधान को असंविधानिक घोषित कर दिया जिसका परिणाम यह है उच्चतम न्यायालय की घोषणा के पश्चात्, राष्ट्रपति वह काम नहीं कर सकता जो वह राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम के उपबंधों के अधीन करना चाहता था। यदि हमारे राष्ट्रपति को ऐसे ही वित्तीय तथा आर्थिक आपात

का सामना करना पड़ जाये तो शायद ऐसी ही कठिनाई उसके सामने भी आ सकती है। उस कठिनाई को रोकने के ही लिये हमने सोचा कि संविधान में ही स्पष्ट उपबंध रख देना अधिक अच्छा होगा और यही कारण है कि यह अनुच्छेद पेश किया गया है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ श्रीमान, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:—

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'has arisen' इन शब्दों के स्थान पर 'is imminent' ये शब्द रख दिये जायें।"

यदि मेरे संशोधन को स्वीकार कर लिया जाये तो अनुच्छेद इस प्रकार बन जायेगा:

"If the President is satisfied that a situation is imminent whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof is threatened, he may by a proclamation make a declaration to that effect."

इस संशोधन के लिये मेरी युक्ति यह है कि स्थिति उत्पन्न हो जाने के पश्चात् तो बहुत गड़बड़ हो सकती है और शायद लोगों को देश के प्रत्यय में भरोसा ही न रहे। अनुच्छेद में लिखा है कि यदि स्थिति पैदा हो गई है और अराजकता फैल चुकी है, तो लोगों को राज्य के प्रत्यय में भरोसा ही न रहेगा। मैं चाहता हूं कि 'has arisen' [पैदा हो गई है] इन शब्दों के स्थान पर 'is imminent' [पैदा होने वाली है] ये शब्द रख दिये जायें।

मेरा दूसरा संशोधन सं. 441 है जो इस प्रकार है:—

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (3) में, 'operation' शब्द के पश्चात् 'Parliament shall have power to make laws in respect of subjects contained in the State List as if they were subjects in the Concurrent List and" ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाये तो अनुच्छेद इस प्रकार बन जायेगा:—

'During the period any such proclamation as is mentioned in clause (1) of this article is in operation Parliament shall have power to make laws in respect of subjects contained in the State List as if they were subjects in the Concurrent List, and the executive authority of the Union shall extend to the giving of directions to any State to observe such canons of financial propriety as may be

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

specified in the directions, and to the giving of such other directions as the President may deem necessary and adequate for the purpose."

श्रीमान, मेरे इन संशोधनों का उद्देश्य केवल यही है कि अनुच्छेद में जो दो त्रुटियां हैं उन्हें दूर किया जाये। यद्यपि यह अनुच्छेद असाधारण है और इसमें वित्तीय आपात का उपबन्ध है, हमारे देश की वर्तमान स्थिति में, मेरे विचार में यह शक्ति कार्यपालिका के हाथ में होनी चाहिये। मैंने केवल इसकी तुलना अनुच्छेद 275 से करने का प्रयत्न किया है। मैं तो यह चाहता था: कि सर्वप्रथम, खंड (1) में 'has arisen' इन शब्दों के स्थान पर 'is imminent' ये शब्द रख देने चाहिये जिससे कि हम स्थिति गम्भीर होने से पूर्व ही उपाय कर सकें। अतएव ज्यों ही वित्तीय आपात पैदा होने वाला हो, हम आवश्यक उपाय कर सकते हैं, यदि 'has arisen' के स्थान पर 'is imminent' ये शब्द रख दिये जायें।

फिर राष्ट्रपति को शक्ति होनी चाहिये कि वह सब राज्य-विषयों को समवर्ती सूची के विषय मान कर उनके संबंध में विधान बना सके। यह सर्वथा संभव है कि राज्य को अपने किसी विधान से बाध्य होकर, अपनी ही विधियों से बाध्य होकर किसी विशेष प्रकार से कार्य करना पड़े और उन्हें राष्ट्रपति के निर्देशों का पालन करने का वैधानिक प्राधिकार प्राप्त न हो। मैं यह चाहता हूं कि संसद को राज्यों की उन विधियों में परिवर्तन करने की शक्ति होनी चाहिये और इसलिये मैं चाहता हूं कि उस कालावधि में संसद को सूची 2 के विषयों पर विधियां बनाने की शक्ति होगी, मानो कि वे विषय समवर्ती सूची में थे, ताकि आपात का सामना करने के लिये आवश्यक वित्तीय उपाय किये जा सकें। मेरे विचार में, यदि यह नहीं किया जायेगा तो केवल एक आदेश मात्र से राष्ट्रपति को क्षमता नहीं हो जायेगी कि वह आदेश पारित कर सके या उनका पालन करवा सके क्योंकि संभवत: वे राज्यों की विधियों के अनुकूल न हों और राष्ट्रपति के लिये उन विधियों को बदलना संभव न हो। इसके अतिरिक्त शायद वे प्रांत भी उन पर सहमत न हों। अत: मैं तो यही चाहता हूं कि संसद को ये शक्ति मिल जानी चाहिये कि उन मामलों में संसद विधि बना सकती है।

मेरे विचार में श्रीमान, यह संशोधन आवश्यक है। हम यह शक्ति चाहते हैं। क्या मैं यह भी कह सकता हूं कि इस अनुच्छेद से विधान मंडलों की भी कोई शक्तियां नहीं छिनतीं और मेरे विचार में राज्य के हितों के लिये यह आवश्यक है, विशेषत: जब हम वित्तीय कठिनाई में हों।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान, क्या मैं संशोधन सं. 438 में एक मौखिक परिवर्तन करने के लिये आपकी अनुमति मांग सकता हूं? मैं 'chaos' के स्थान पर 'breakdown' शब्द का प्रयोग करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** हां। (*बाधा*)।

***श्री एच.वी. कामतः** मुझे ‘chaos’ के स्थान पर ‘breakdown’ शब्द रखने के लिये अध्यक्ष महोदय की अनुमति मिल गई है। श्रीमान, मैं सूची सं. 19 के संशोधन सं. 438, 442 और 444 को पेश करता हूं। संशोधन सं. 438 यह है:

“कि प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, ‘whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof is threatened’ इन शब्दों के स्थान पर ‘which threatens India or any part thereof with financial breakdown or economic disaster’ ये शब्द रख दिये जायें।”

संशोधन सं. 442 यह है:

“कि उसी सूची के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क का खंड (4) हटा दिया जाये।”

संशोधन सं. 444 यह है:

“कि उसी सूची के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क का खंड (5) हटा दिया जाये।”

इस नये अनुच्छेद 280क से संघ के राष्ट्रपति को काफी आपात-शक्तियां दी गई हैं, जो उन शक्तियों से अधिक हैं जो उसे संविधान के द्वारा अनुच्छेद 275, 276 तथा 280 तक के अनुच्छेदों से प्राप्त हुई है। इस अनुच्छेद में ऐसी आकस्मिकता या स्थिति की कल्पना की गई है जहां भारत का या उसके किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय खतरे में हो। मैं अनुभव करता हूं कि यह आकस्मिकता या भारत के अथवा उसके किसी भाग के वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय को खतरा आपात की उद्घोषणा के लिये पर्याप्त आधार नहीं माना जाना चाहिये। आपात की घोषणा का औचित्य तो तभी हो सकता है जब कि अधिक गम्भीर परिस्थितियां हों, अर्थात् जब वित्तीय गतिरोध का या आर्थिक व्यवस्था के ठप्प होने का खतरा हो। यह तो बहुत ज्यादती है कि राष्ट्रपति को भारत के या उसके किसी प्रांत या राज्य के वित्तीय स्थायित्व को खतरा होने की स्थिति में ऐसी विस्तृत शक्तियां दे दी जायें।

आज प्रात:काल, आपने ठीक ही कहा था, श्रीमान, कि कई प्रांतों ने आय कर की आय के गलत वितरण के विषय में शिकायत की है या कर रहे हैं, और कि उनके राजस्वों का आज सवेरे नया अपहरण किया गया था, जब कि इस सदन ने विक्रय-कर का अनुच्छेद स्वीकार किया था, कुछ माननीय सदस्यों का यही ख्याल था। मद्रास जैसे कुछ प्रांतों में, और अंशत: मध्य प्रदेश में भी, मद्य-निषेध आरंभ कर दिया गया है। उससे प्रांतों के राजस्वों में कमी हो गई है, और उन्हें मद्य-निषेध के लिये कर्मिवृंद आदि रख कर अतिरिक्त खर्च भी करना पड़ा है।

[श्री एच.वी. कामत]

मान लीजिये इन परिस्थितियों में भविष्य में स्थिति खराब हो जाती है। विश्व की आर्थिक स्थिति खराब हो सकती है, बिगड़ सकती है। हम यथासंभव प्रयत्न करेंगे कि हमारी आर्थिक स्थिति सुधरे किन्तु संसार भर में अवमूल्यन हुए हैं तथा हमारे अपने रुपये का भी अवमूल्यन हो चुका है, अत: कोई भी ज्योतिषी बन कर नहीं कह सकता कि निकट भविष्य में हमारी स्थिति सुधर जायेगी। मान लीजिये कि बुरी से बुरी बात हो जाती है, आर्थिक स्थिति और भी बिगड़ जाती है, और प्रांत, मद्यनिषेध के कारण आय कम हो जाने से और अन्य अतिरिक्त कारणों से, अपनी रचनात्मक योजनाओं को क्रियान्वित नहीं कर सकते हैं, और मान लीजिये कि वे अपना खर्च भी नहीं चला पाते, और उनके आय-व्ययक घाटे में चलते हैं, कल्पना कीजिये, यह असंभावित नहीं है—घाटे के आय-व्ययकों की शृंखला—अधिक घाटा न सही—प्रतिवर्ष थोड़ा ही घाटा सही—राष्ट्रपति ऐसी स्थिति का मतलब यह लगा सकता है कि प्रांत या राज्य विशेष का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय खतरे में है। क्या मैं पूछ सकता हूं कि क्या राष्ट्रपति के लिये यह पर्याप्त आधार होगा कि वह सब शक्तियां अपने हाथ में ले लें, जो वह आपात की उद्घोषणा करते ही ले सकता है? मैं कहता हूं, श्रीमान, कि यदि हम वास्तव में प्रांतीय स्वायत्तता की योजना को क्रियान्वित करना चाहते हैं तो हमारे एककों के साथ यह व्यवहार नहीं करना चाहिये। निस्संदेह आप ध्यान रखिये कि वित्तीय रूप में, या आर्थिक रूप में हमारी अच्छी स्थिति रहे। किन्तु प्रशासन अपनी योजनाओं को सफल नहीं बना सकते, और नफे के आय-व्ययक तैयार नहीं कर सकते, इन छोटे-छोटे बहानों को लेकर आपात की उद्घोषणा कर देना और उसके फलस्वरूप सब शक्तियों को अपने हाथ में ले लेना राष्ट्रपति के लिये बुद्धिमानी नहीं होगी—मैं अधिक कठोर भाषा का प्रयोग नहीं करूंगा।

मैं मानता हूं, मैं स्पष्टत: स्वीकार करता हूं कि यह उपाय उस समय अपनाना चाहिये जब वित्तीय व्यवस्था ठप्प ही हो जाये—निस्संदेह वह अधिक खराब स्थिति है, वह आर्थिक अस्थायित्व से कहीं अधिक भयानक स्थिति है। आर्थिक स्थायित्व का अर्थ कोई कुछ भी नहीं समझ सकता या कुछ भी समझ सकता है। यदि वित्त-व्यवस्था के ठप्प हो जाने की या आर्थिक सत्यानाश की आशंका हो, तो निस्संदेह मैं मान सकता हूं कि राष्ट्रपति को कुछ आपात-शक्तियां दे दी जायें, किन्तु अन्यथा नहीं; किसी प्रांत के आर्थिक स्थायित्व या वित्तीय स्थायित्व के संकट में होने मात्र से ऐसा नहीं होना चाहिये। सदन से मेरा निवेदन है कि यदि व्यवस्था के ठप्प हो जाने का या सत्यानाश का ही खतरा हो तब ही राष्ट्रपति को आपातिक शक्तियां देनी चाहियें।

मुझे भय है, कि आज सदन में उपस्थिति कम है अत: संभव है कि हम इस अनुच्छेद को पूरी तरह विचार किये बिना तथा ध्यान दिये बिना ही पारित कर देंगे। यह दुर्भाग्य की बात है कि दीपावली इतनी निकट है। माननीय सदस्य दीवाली पर अपने घरों को प्रकाशित करने के लिये अधिक आतुर हैं, जितने कि वे उस अंधकार को प्रकाशित करने के लिये नहीं हैं जो अंतिम दिनों में इस सदन में छा गया प्रतीत होता है। मुझे आशा है कि उपस्थिति कम होने के बावजूद भी जो सदस्य यहां उपस्थित हैं वे इस मामले पर ध्यानपूर्वक विचार करेंगे कि क्या

राष्ट्रपति को ऐसी शक्तियां प्रदान करना आवश्यक है जब कि वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय केवल संकट में हो।

अब मैं संशोधन 442 और 444 को लेता हूं जिसका उद्देश्य खंड 4(क) को हटाना है—यह 4 (क) होना चाहिये; यहां अशुद्ध छप गया है; मैंने संशोधन सं. 442 भेजा था जिसमें प्रस्थापित नये खण्ड के खंड 4(क) का निर्देश था, समूचे खंड (4) का नहीं—और प्रस्थापित नये अनुच्छेद के खंड 5 का निर्देश था। सदन देखेगा कि राष्ट्रपति को आपात की उद्घोषणा होने पर, इन परिस्थितियों में, काफी शक्तियां मिल जाती हैं। खंड (3) के अंतिम भाग में लिखा है कि "and to the giving of such other directions as the President may deem necessary and adequate for the purpose." इस उपबंध से उसे शक्ति मिल जाती है कि वह जो चाहे कर सकता है जब तक कि वह आदेश पर यह लिखता रहे "मेरा समाधान हो गया है कि यह इस प्रयोजन के लिये आवश्यक और समुचित है।" वह जो चाहे कर सकता है और कोई भी न्यायालय में या संसार में अन्यत्र कहीं भी जाकर उसके अधिनियमों या आज्ञप्तियों या अध्यादेशों पर आपत्ति नहीं कर सकता। इस बात को देखते हुए मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह है कि इस अनुच्छेद में खंड 4(क) को रखने की कोई आवश्यकता ही नहीं है, क्योंकि खंड 4(क) में वेतनों और भत्तों की कमी का विषय है तथा धन-विधेयकों के विषय में कुछ उपबन्ध हैं जो कि ऐसे मामले हैं जो खंड (3) के दूसरे भाग में समाविष्ट उपबंध के क्षेत्र में आ सकते हैं अत: इसे आसानी से हटाया जा सकता है और इससे खंड (क) के आशय में कोई फर्क नहीं जायेगा तथा उनमें से कोई भी शक्तियां कम नहीं होंगी जो इस खंड द्वारा राष्ट्रपति को वित्तीय आपात में मिलती हैं।

खंड (5) तो केवल आनुषंगिक उपबंध है। इसे यहां क्यों रखा गया है, मैं नहीं समझ पाता; मुझे इस खंड के लिये कोई कारण नहीं दिखाई देता। यदि सदन अनुच्छेद 277क तथा 278 को देखेगा जो इस सदन ने कुछ मास पूर्व स्वीकार किया था, तो मेरे माननीय साथी देखेंगे कि इस आकस्मिकता की, कि राज्य का शासन इस संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता, स्पष्टत: अनुच्छेद 277 क तथा 278 में कल्पना कर ली गई थी। अब, श्रीमान, राज्य के राज्यपाल को यह निश्चय करना होगा कि राज्य का शासन इस संविधान के उपबंधों के अनुसार चलाया जा सकता है या नहीं, और राज्यपाल को प्रतिवेदन देना होगा। 278 के पहले खंड में लिखा है:—

> " 'If the President, on receipt of a proclamation issued by the Governor of a State under article 188 of this Constitution, is satisfied that a situation has arisen in which the government of the State cannot be carried on in accordance with the provisions of this Constitution, he may by proclamation etc. etc.'

[यदि इस संविधान के अनुच्छेद 188 के अन्तर्गत राज्य के राज्यपाल द्वारा की गई उद्घोषणा के प्राप्त होने पर राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जिसमें कि उस राज्य का शासन इस संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता, तो वह उद्घोषणा द्वारा........ आदि]"

[श्री एच.वी. कामत]

यह बहुत स्पष्ट है। इस नये अनुच्छेद 280क के अधीन राष्ट्रपति द्वारा निर्देश जारी करने के पश्चात् जब कि उसे भारत में या उसके किसी भाग में वित्तीय आपात का ख्याल हो, तब इस खंड (5) की क्या अपेक्षा है? राज्यपाल घटनास्थल पर है ही और यदि वह ईमानदार तथा सावधान राज्यपाल है तो वह राष्ट्रपति को समय-समय पर सूचना दे सकता है, देगा ही, वह सूचना देने के लिये बाध्य है कि इन निदेशों को कैसे कार्यान्वित किया जा रहा है। हम यहां पूर्णतया अनावश्यक शब्दजाल को रख रहे हैं उससे क्या लाभ है—मैं अधिक कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहता? हमने कई अनुच्छेद स्वीकार किये हैं जहां हमने आपात की शक्तियों का उपबंध किया है, और यदि राज्यपाल अनुभव करता है या उसका समाधान हो जाता है कि राज्य का शासन संविधान के अनुसार नहीं चलाया जा सकता तो वह राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे देगा। हम यह क्यों कहें 'निदेशों का पालन करने में असफलता आदि'? इसका निर्णय कौन करेगा? खंड (5) में निर्देशित मामला मुख्यत: यही है। इसका निर्णय कौन करेगा—राष्ट्रपति या राज्यपाल या कोई अन्य प्राधिकारी? इसे स्पष्ट करिये, इसे अस्पष्ट मत छोड़िये। यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि यह असफलता है, तो इसे स्पष्ट कीजिये कि यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि यह असफलता है, तो इसका अर्थ यह है कि राज्य सरकार असफल रही है। अन्यथा यह कहिये कि राज्य का राज्यपाल असफलता या अन्यथा स्थिति के विषय में राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देगा।

किन्तु खंड (5) सर्वप्रथम तो अनावश्यक, व्यर्थ है और दूसरी बात, यह अत्यन्त अस्पष्ट है। यह कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है कि कौन प्राधिकारी या व्यक्ति यह निश्चय करेगा कि असफलता हुई है या नहीं और इसे इतना अस्पष्ट छोड़ना भयानक है। इसे इतना स्पष्ट कीजिये कि संदेह का नाम भी न रहे कि राष्ट्रपति ही यह निर्णय करेगा कि असफलता हुई है या नहीं। यदि इसे अस्पष्ट रहने दिया जायेगा तो इससे हमारी ही बुद्धिमानी पर आक्षेप होगा। मुझे आशा है कि डॉक्टर अम्बेडकर की विद्वत्ता, सद्भावना तथा विवेकशीलता से इतनी पूरी तरह भिन्न नहीं है कि वे मेरी बात के औचित्य को न समझ सकें। मैं मानता हूं कि वे विद्धान हैं, किन्तु मुझे आशा है कि उनकी विद्वत्ता मानवीय विवेकशीलता के अन्य अंगों से पूरी तरह भिन्न नहीं है; और मैं आशा करता हूं कि वे मेरे प्रस्तावित संशोधनों पर काफी ध्यान देंगे। मैं उन्हें सदन के विचार के लिये अपने पूरे दिल से पेश करता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन सं. 439, 440 तथा 443 को पेश करता हूं। वे ये हैं:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'threatened' शब्द के पश्चात् 'or is likely to be threatened' ये शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280 के खंड (2) के स्थान पर, निम्न रख दिया जाये:—

'(2) The proclamation issued under clause (1) of this article shall continue till such time it is revoked by the President.

[इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा उस समय तक जारी रहेगी जब तक कि राष्ट्रपति उसे समाप्त न कर दें।]"

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (4) के उप-खंड (क) की कंडिका (2) के स्थान पर, निम्न रख दी जाये:-

'(ii) a provision requiring all Bills to be reserved for the consideration of the President after they are passed by the Legislature of the State;' "

मैंने जो संशोधन पेश किये हैं, उनके विषय में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। श्रीमान, मेरा यह मत है कि जब वित्तीय आपात का काल हो जब प्रान्तीय स्वायत्तता का पूर्णत: निलम्बन हो जाना चाहिये। इस विषय में कोई हिचक नहीं होनी चाहिये। मेरा यह मत है कि आपातकाल तब तक रहना चाहिये जब तक कि राष्ट्रपति स्वविवेक से उसे आवश्यक समझे। उद्घोषणा तब तक रहनी चाहिये जब तक कि आपात रहे। संसद के पास जाकर उससे यह पूछना व्यर्थ है कि कालावधि को बढ़ाया जाये या नहीं। राष्ट्रपति और केवल राष्ट्रपति ही यह सबसे अच्छी तरह निर्णय कर सकता है कि आपात समाप्त हुआ है या नहीं। राष्ट्रपति पर अविश्वास मत कीजिये—वह राज्य का प्रथम नागरिक है। वह संसद के किसी सदस्य से अधिक सच्चे अर्थ में भारत की जनता का प्रतिनिधि है। वह केन्द्र तथा प्रान्तों के विधान-मंडलों के प्रतिनिधियों द्वारा चुना जाता है। वह किसी एक निर्वाचन क्षेत्र से नहीं चुना जाता। अत: यह उचित ही है कि शक्ति केवल राष्ट्रपति के हाथों में होनी चाहिये।

मेरा यह ख्याल है कि हमारे ऐसा करने से किसी सांविधानिक अभिसमय का उल्लंघन नहीं होगा। क्योंकि संघानीय संविधान का आशय ही शक्तियों का पार्थक्य ही तो है। नये संविधान में हमारी संसद सम्पूर्ण-प्रभुत्व संपन्न निकाय नहीं होगी। मैं अमरीकी राष्ट्रपति का उदाहरण देता हूं। उसको बहुत-सी शक्तियां प्राप्त हैं। कोई यह नहीं कह सकता कि वह तानाशाह है या स्वेच्छाचारी है या कि उसे शक्तियां देने से संघवाद के किसी सिद्धान्त का अतिक्रमण हो गया है। अतएव मेरे ख्याल में उसके हाथों में शक्ति होनी चाहिये कि वह किसी परिस्थिति को, जो भविष्य में वित्तीय अस्थायित्व या गतिरोध के कारण उत्पन्न हो जाये, संभाल सके।

हमने कुछ वर्ष पूर्व ही अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की है। क्या यह ठीक या उचित है कि हम अपने किसी नये विचार या कल्पना की वेदी पर अपनी स्वतन्त्रता

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

को बलिदान कर दें? हमारा राज्य ऐसे समय पर स्वतंत्र हुआ है जब कि राजनैतिक आकाश चिन्ता से भरा है। केवल इस देश की ही नहीं संसार के सब भागों की राजनैतिक तथा आर्थिक स्थिति सर्वनाश के निकट है।

अतएव हमारे संविधान में इन बातों का ध्यान रखना होगा।

श्रीमान, एक और बात है जिसका मन में ध्यान रखना चाहिये। संसदीय शासन की यह प्रणाली हमारे लोगों की आत्मीयता के सर्वथा विपरीत है। हमारे प्राचीन विधि-निर्माता ऋषि मुनि थे, संसद-वेत्ता नहीं थे। अतएव ऐसे देश में, जहां साक्षरता नहीं है, जहां जीवन स्तर बहुत नीचा है और जहां लोग सांप्रदायिक आवेगों के शिकार हैं, वहां वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित संसद की बजाय मुझे राष्ट्रपति में अधिक श्रद्धा है। अतएव मेरे मतानुसार हमें संसद-वाद या किसी आदर्श-वाद की वेदी पर राज्य के हितों को बलिदान नहीं करना चाहिये। आदर्श केवल कल्पनायें ही हैं। वे धुंधले और अस्पष्ट हो सकते हैं। किन्तु राज्य एक ठोस कल्पना है, और हम राज्य के हितों का बलिदान नई विचारधाराओं की वेदी पर नहीं कर सकते। जर्मन दार्शनिक हीगल ने लिखा है कि "राज्य पृथ्वी पर भगवान ही है।" अतएव मेरा यह मत है कि यदि महत्वपूर्ण प्रश्नों को संसद द्वारा निर्णय के लिये छोड़ दिया जाये तो राज्य का अंत ही हो जायेगा। केवल अत्यन्त विकसित समाज में ही संसद प्रभावशाली भाग ले सकती है। भारत जैसे देश में उसका कार्य अवश्य गौण होगा। भविष्य में आने वाले लम्बे समय तक, कार्यपालिका और केवल कार्यपालिका का ही हमारे राष्ट्रीय जीवन में आधिपत्य होगा। यदि संविधान में इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया जाता, तो संविधान टूट जायेगा और देश में अराजकता तथा गड़बड़ हो जायेगी।

***अध्यक्षः** क्या आपने संशोधन संख्या 443 को पेश किया है?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** हां, श्रीमान, तीनों संशोधन।

***अध्यक्षः** सब संशोधन पेश किये जा चुके हैं और उन पर तथा अनुच्छेद पर अब चर्चा हो सकती है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त तथा बरार : जनरल)**:** अध्यक्ष महोदय, कल, जब मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने मुझे बताया था कि वित्तीय आपात संबंधी एक खंड पेश होना है तो मैंने अनुभव किया कि शायद विधान-मंडल के अधिकारों तथा विशेषाधिकारों में कुछ और कमी की जाने वाली है। किन्तु जब यह अनुच्छेद मुझे कल रात को मिला तो मुझे स्वीकार करना होगा कि मैंने देखा कि यह अनुच्छेद उचित ही है; और अब जो परिस्थितियां हैं, और हो सकती हैं, उनमें मैं अवश्य अनुभव करता हूं कि यदि यह अनुच्छेद नहीं रखा जाता तो हमारा संविधान पूर्ण नहीं बनता। मैं मसौदा समिति को बधाई देता हूं कि इस अंतिम अवसर पर भी उसने समझ लिया कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है, और इसलिये राष्ट्रपति को यह असाधारण शक्तियां दी जानी चाहियें। मेरे मित्र श्री कामत को अनावश्यक

आशंका है कि राष्ट्रपति इन शक्तियों का दुरुपयोग करेगा। श्री कामत ने कहा कि केवल घाटे का आयव्ययक होने मात्र से ही राष्ट्रपति यह घोषणा कर सकता है कि देश के वित्तीय स्थायित्व में आपात है। यदि हमारा राष्ट्रपति ऐसा है जो बजट में घाटा देखकर ही वास्तव में यह घोषणा कर दे कि वित्तीय आपात है, तो मुझे कहना होगा कि वह राष्ट्रपति उस उच्च पद को धारण करने के योग्य नहीं है जो उसे प्राप्त होगा, और मैं यह भी कह सकता हूं कि इसका उत्तरदायित्व सदन पर तथा उन लोगों पर होगा जो राष्ट्रपति का निर्वाचन करेंगे। किन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि दोनों सदन वास्तव में योग्य और प्रसिद्ध, न्यायप्रिय तथा ठीक प्रकार के व्यक्ति को ही चुनेंगे जो उन शक्तियों का ठीक प्रकार प्रयोग करेगा और जो इस अनुच्छेद के उपबंधों को न्यायिक निर्वचन करेगा। मुझे ऐसी कोई आशंका नहीं है, चाहे भारत संघ का राष्ट्रपति कोई भी हो।

श्रीमान, खंड में क्या लिखा है? उसमें लिखा है:–

" 'If the President is satisfied that a situation has arisen whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof is threatened, he may be a proclamation make a declaration to that effect.'

[यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिससे भारत अथवा उसके राज्य-क्षेत्र के किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में हो तो वह उद्घोषणा द्वारा उस बात की घोषणा कर सकेगा।]"

अब हमें दो ढाई वर्ष की स्वतंत्रता के अनुभव से पता है कि हमें जो राजनैतिक स्वतन्त्रता मिली है वह सम्पूर्ण है किन्तु जहां तक हमारी आर्थिक स्थिति का सम्बन्ध है, हमें अन्य देशों, के वित्तों पर निर्भर रहना पड़ता है क्योंकि हमने अपने वित्तों को अभी स्थिर नहीं बनाया है। मेरा इससे यह मतलब नहीं है कि अब आपात है। मैं केवल यही कह सकता हूं कि हमारे सामने यह आर्थिक स्थिति है, और चाहे इसके कारण कुछ भी हों, परन्तु उन कारणों को हमने पैदा नहीं किया है। किन्तु जिन परिस्थितियों में हम रहते थे या शासित होते थे उनके कारण और अंतर्राष्ट्रीय स्थिति के कारण, वर्तमान आर्थिक स्थिति उत्पन्न हुई है। यह आपात नहीं है किन्तु वास्तविक आपात उत्पन्न हो सकता है जिससे कि वित्तीय स्थायित्व पर असर पड़े, और यदि ऐसा अनुच्छेद हो तो हमारी बात सर्वथा उचित होगी, और मुझे जरा भी संदेह नहीं है कि उस समय इस अनुच्छेद से बहुत सहायता मिलेगी।

श्री कामत ने खंड (4) पर शोर मचाया है, किन्तु मैं उस अनुच्छेद का स्वागत करता हूं। उसमें क्या लिखा है? उसमें लिखा है कि राष्ट्रपति को शक्ति होगी कि आवश्यकता पड़ने पर वह कर्मचारियों के वेतनों तथा भत्तों को कम कर सकेगा।

***श्री एच.वी. कामतः** मुझे यही कठिनाई प्रतीत हुई कि यह शक्ति खंड (3) के अंतर्गत नहीं दी गई थी।

***श्री आर.के. सिधवा:** किन्तु खंड (4) में लिखा है:

" 'Notwithstanding anything contained in this Constitution—

any such direction may include (i) a provision requiring the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving in connection with the affairs of a State.'

[इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी–

ऐसे किसी निदेश के अंतर्गत (1) राज्य के कार्यों के संबंध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किन्हीं वर्गों के वेतनों और भत्तों में कमी की अपेक्षा करने वाले उपबंध भी हो सकेंगे।]"

आज हमें भली भांति ज्ञात है कि हमारे कर्मचारियों को केवल भारी वेतन ही नहीं मिलते वरन् उनकी संख्या भी अत्यधिक हैं। किन्तु उसके अतिरिक्त यह बहुत सुखद उपबंध है, और हमें, सबको इस बात का स्वागत करना चाहिये कि राष्ट्रपति को यह शक्ति दी गई है, क्योंकि हम जानते हैं कि संविधान में, हमने न्यायाधीशों के वेतनों का उपबंध कर दिया है और उन्हें आपात में कम नहीं किया जा सकता। हम न्यायाधीशों के उच्च वेतनों पर आपत्ति करते रहे हैं, और जब मसौदा समिति यह उपबंध रखती है कि वित्तीय अस्थायित्व के होने पर, राष्ट्रपति को वेतनों के भी कम करने का अधिकार होगा, तो हम कहते हैं, कि यह उचित नहीं है। मुझे यह सुन कर बहुत खेद है। दूसरी ओर मुझे मसौदा समिति की सराहना करनी होगी। मैं ऐसा व्यक्ति हूं कि जहां सराहना की आवश्यकता होती है वहां मैं सराहना करता हूं, यद्यपि मैं आवश्यकता पड़ने पर अपने कुछ विचारों को भी अभिव्यक्त कर देता हूं। न्यायाधीशों के विषय में भी, (ख) में हमने कहा है कि राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के वेतनों को कम कर सकता है। मैं इस अनुच्छेद का स्वागत करता हूं। यह बात मेरे ध्यान में ही नहीं आई थी कि ऐसा उपबंध आवश्यक है, किन्तु इसे पढ़ने के बाद तथा यह देखने के बाद कि हमारे चारों ओर क्या हो रहा है, और क्या होने वाला है, मैं अनुभव करता हूं कि यह अत्यावश्यक है। हमें भावी घटनाओं को देखना चाहिये। हमें यह भी देखना चाहिये कि भविष्य में क्या होने वाला है। हम सदा अपने विचारों को वर्तमान तक ही सीमित करके संतुष्ट नहीं हो सकते हैं। राजनीतिज्ञ वह है जो भावी घटनाओं को पहले ही देख लेता है। राजनीतिज्ञ वह है जो यह पहले ही देख लेता है कि क्या होने वाला है।

हम जानते हैं कि हमने राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है, किन्तु जब तक हमारी स्थिति में पूर्णत: स्थायित्व नहीं आ जाता, तब तक हमारी प्राप्त की हुई राजनैतिक स्वतन्त्रता की ऐसी स्थिति रहेगी, हम मानवता की यथेष्ट सेवा नहीं कर सकेंगे। आज हम जानते हैं कि हमने इतनी विधियां पारित की हैं और हम जानते हैं कि विक्रय-कर संबंधी अनुच्छेद के विषय में कई सदस्यों को कुछ आशंका थी। और मैं अनुभव करता हूं कि उनकी यह भावना उचित ही है कि उन्हें अपने वित्तों को कम करना होगा और इसलिये वे अपनी बहुत-सी विकास योजनाओं को लागू नहीं कर सकेंगे। किन्तु फिर भी मैंने उस अनुच्छेद का समर्थन किया था

क्योंकि उससे देश का हित होगा। और जब भी कभी विधान मंडलों की या राष्ट्रपति की शक्तियों को कम करने का प्रश्न उठेगा तब ही हम उसके गुणावगुण पर विचार करेंगे, और वर्तमान प्रश्न के गुणावगुण कर विचार करके मैं अनुभव करता हूं कि यह अनुच्छेद पूर्णत: उचित है और मुझे विश्वास है कि राष्ट्रपति, चाहे वह कोई भी हो, अपनी शक्तियों का ठीक प्रयोग करेगा, और इस अनुच्छेद का निर्वचन ठीक अर्थ में और ठीक तरीके से और देश के लाभार्थ तथा इस देश की जनता के लाभार्थ ही करेगा। इन शब्दों के साथ मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन, अनुच्छेद 280क का समर्थन करता हूं।

मैं कुछ और कहना नहीं चाहता। किन्तु यदि आप अनुच्छेद को तथा खंड (4) के उपखंड (2) के उपबंधों को देखें तो आपको पता लगेगा कि वह धन विधेयकों के भी संबंध में है। राष्ट्रपति को यह देखने की शक्ति दी गई है कि यदि वह अनुभव करता है कि अनुच्छेद 174 तथा 182 के उपबंधों के कारण देश के वित्तीय स्थायित्व को खतरा हो सकता है तो वह निस्संदेह अपनी शक्ति का प्रयोग करेगा और इस अनुच्छेद 280क को लागू करने में रोक लगा देगा। किन्तु जैसा कि अनुच्छेद की प्रस्तावना में लिखा है यह तभी होगा जब कि आपातिक स्थिति हो जहां तक कि वित्तीय स्थायित्व का संबंध है। मुझे ऐसी कोई आशंका नहीं है कि इस अनुच्छेद का राष्ट्रपति दुरुपयोग करेगा, और इन शब्दों के साथ मैं इसका समर्थन करता हूं।

***पं. हृदय नाथ कुंजरू:** अध्यक्ष महोदय, संशोधन के प्रस्तावक ने संशोधन का औचित्य न बताने का यह बहाना बना दिया कि यह निश्चित है कि प्रत्येक सदस्य इसकी आवश्यकता को समझता है। अपने उत्तरदायित्व से पीछा छुटाने का उसके लिये यह बहुत सीधा रास्ता था। उन्होंने संशोधन की सफाई पेश करने का दिखावा करने के लिये अमरीकी राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम का निर्देश किया। अब, उस अधिनियम का उद्देश्य अमरीकी राष्ट्र को उस महान आर्थिक संकट से पार कराना था जो 1930 के लगभग संयुक्त राज्य अमरीका में तथा अन्य देशों में भी आया था। क्या इस संशोधन में कोई ऐसी बात है जिससे कि भारत सरकार आर्थिक संकट आने पर उसका सामना वैसे ही कर सकेगी, जैसे राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने करने का प्रयत्न किया था? संशोधन का सारा उद्देश्य यह मालूम होता है कि व्यय को कम किया जाये और प्रान्तीय सरकारों को अपने किसी विद्यमान राजस्व-स्रोत को छोड़ने से रोका जाये। क्या ऐसे संशोधन की तुलना किसी प्रकार संयुक्त राज्य के राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम से पासंग भर भी की जा सकती है?

श्रीमान मुझे विश्वास है कि इस सदन को प्रत्येक सदस्य यह स्वीकार करेगा कि केन्द्रीय सरकार को जो शक्तियां प्रदान की जा रही हैं वह अत्यन्त कठोर शक्ति हैं। अत: हमारे लिये यह समझना आवश्यक है कि क्या कारण है कि संविधान के द्वितीय पठन पर वाद-विवाद के अंत में अनुच्छेद 280क को संविधान में प्रविष्ट करने की प्रस्थापना की गई है। इस मामले को संविधान के अन्य वित्तीय उपबंधों के साथ भी निबटाया जा सकता था। किन्तु ऐसा नहीं किया गया इससे पता लगता है कि वित्तीय अनुच्छेदों पर विचार किया गया था तब ऐसी आवश्यकता अनुभव नहीं की गई थी कि केन्द्रीय सरकार को प्रान्तों के आय-व्ययकों पर पूर्ण

[पं. हृदय नाथ कुंजरू]

नियंत्रण रखने की शक्ति दी जाये। उस समय के बाद, इस संशोधन को रखने क्या आवश्यकता पैदा हो गई है। श्रीमान, संशोधन के खंड (4) में ऐसे मामले हैं जो राष्ट्रपति द्वारा दिये गये निदेशों में रखे जा सकते हैं जब कि यह उद्घोषणा की जा चुकी हो, कि भारत का या उसके किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में है। राष्ट्रपति को शक्ति होगी कि वह किसी राज्य को निदेश दे सके कि वह राज्य 'वित्तीय औचित्य के ऐसे नियमों' का पालन करे जो उसके निदेश में उल्लिखित हों। खंड (4) में, उदाहरण है कि राष्ट्रपति कैसे निदेश दे सकता है। इस खंड के उपखंड (क) से राष्ट्रपति को शक्ति मिलती है कि वह राज्य को आदेश देकर सब सरकारी सेवकों के या उनके किसी वर्ग के वेतनों तथा भत्तों को कम कर सकता है। श्रीमान, हमें कुछ ही वर्ष पूर्व गम्भीर आर्थिक कठिनाई में से गुजरना पड़ा था। इसका प्रभाव केवल केन्द्रीय सरकार पर ही नहीं, वरन्, प्रान्तों पर भी पड़ा था। क्या फिर प्रान्त अपना व्यय करने में पीछे थे? क्या उन्होंने अपने सरकारी सेवकों के वेतन कम करने में अनिच्छा दिखाई थी या उन्होंने केन्द्रीय सरकार के उदाहरण को मान कर सब प्रकार के सरकारी कर्मचारियों के वेतनों को प्रसन्नता से कम कर दिया था? हमारे सामने यह अनुभव होते हुए ऐसा संशोधन सदन में प्रस्थापित करना हमारे लिये आवश्यक क्यों हुआ? क्या कारण है कि सब विगत अनुभवों की उपेक्षा करके हम प्रान्तों में पूर्ण अविश्वास दिखायें तथा उनसे ऐसा व्यवहार करें जैसे कि वे बच्चे हैं और राष्ट्रपति मास्टर हैं?

श्रीमान, उपखंड (क) की मद (2) में लिखा है कि राष्ट्रपति आदेश दे सकता है कि धन-विधेयकों या अन्य विधेयकों को, जिनको अनुच्छेद 182 के उपबंध लागू हैं, राज्य के विधान मंडल के द्वारा उनके पारित किये जाने के पश्चात् उसके विचार के लिये रक्षित किया जाये।

सदन को ज्ञात है कि धन-विधेयक की क्या परिभाषा है। धन-विधेयक किसी विधेयक को कह सकते हैं जिसमें अन्य बातों के अतिरिक्त किसी कर के आरोपण, समाप्ति, परिवर्तन, विनियमन आदि का उपबन्ध हो। मेरे विचार में इन शब्दों से हमें पता लग जाता है कि हमारे समक्ष जो संशोधन पेश किया गया है, उसका क्या आशय है। प्रांत स्वयं कोई ऐसी बात कर ही क्यों सकता है जिससे भारत का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में पड़ जाये। हद से हद वह अपनी हानि कर सकता है। किन्तु यदि हम प्रांतीय सूची में उल्लिखित राजस्व-स्रोतों को देखें तो हमें पता लगेगा कि ऐसा कोई स्रोत है ही नहीं जिसके प्रयोग से केन्द्र या प्रांत के वित्तीय स्थायित्व को खतरा हो सकता हो। यदि कोई प्रांत अपनी मूर्खता से अपने आपको कठिन वित्तीय स्थिति में डाल देता है तो उसे अपनी गलतियों से पाठ क्यों न सीखने दिया जाये?

शायद, श्रीमान, सदन को इसमें दिलचस्पी होगी यदि प्रांतीय आय के मुख्य स्रोतों को गिना दूं। वे ये हैं: मुख्यत: भू-राजस्व, संघ सूची में उल्लिखित मुद्रांक-शुल्कों के अतिरिक्त अन्य मुद्रांक शुल्क, कृषि-भूमि के उत्तराधिकार के विषय

में शुल्क, कृषि आय पर आय-कर, मद्यसारिक, पानों आदि पर उत्पादन-शुल्क, विक्रय कर जिसमें विद्युत के उपभोग पर कर भी शामिल हैं, और विलास तथा प्रमोद पर तथा प्रमोद वस्तुओं पर कर।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यानों पर कर का क्या हुआ?

***पं. हृदय नाथ कुंजरू:** मैंने उसका उल्लेख इसलिये नहीं किया है कि यान-कर आदि प्राय: स्थानीय निकायों के लाभार्थ प्रयुक्त होते हैं। अब, इन राजस्व-स्रोतों में से प्रान्त किनका दुरुपयोग कर सकते हैं? कुछ प्रांतों ने केन्द्र के अनुमोदन से जिस नीति को अपनाया है यदि उस पर अन्य प्रांत भी चलेंगे तो भू-राजस्व अवश्यमेव कम हो जायेंगे और उसके कम होने पर केन्द्रीय सरकार को शिकायत नहीं हो सकती। प्रांतों की सरकारों ने अब तक मुद्रांक-शुल्क की दरों को बढ़ाने की या विक्रय-कर अथवा कृषि आय का यथासंभव प्रयोग करने की कोई अनिच्छा प्रकट नहीं की है।

केवल एक ही कर है जिसके विषय में केन्द्रीय सरकार तथा कुछ प्रांतीय सरकारों में गम्भीर मतभेद हो गया है, वह है मद्यसारिक पानों तथा कुछ पिनक वाले पदार्थों पर उत्पादन-शुल्क। मुझे पता लगा है कि भारत सरकार द्वारा बार-बार मंत्रणा देने पर भी कुछ प्रांत मद्य-निषेध की नीति पर चल रहे हैं। जिससे कुछ समय के पश्चात् उत्पादन-कर से सब राजस्व पूर्णत: समाप्त हो जायेगा। केन्द्रीय सरकार की मंत्रणा शायद बिल्कुल ठीक हो। भारतीय वित्त के विद्यार्थियों के मत में विद्यमान स्थिति में ऐसा आवश्यक हो सकता है कि प्रांतों को पूर्ण मद्य-निषेध के उपायों को पूरा करने में धीरे-धीरे चलना चाहिये। केन्द्र तथा प्रांत दोनों ही वित्तीय कठिनाइयों में फंसे हुए हैं, और यह ठीक नहीं मालूम होता कि ऐसे समय पर किसी प्रांत को कोई बड़ा राजस्व स्रोत छोड़ देने का प्रयत्न करना चाहिये। सिद्धान्तानुसार यह अभीष्ट हो सकता है कि मद्यसारिक पानों तथा पिनक लाने वाले पदार्थों के प्रयोग को बिल्कुल बंद कर दिया जाये, किन्तु हमें संसार की सब अच्छी वस्तुएं एक दम प्राप्त नहीं हो सकतीं। अत: प्रांतों के लिये यह आवश्यक होगा कि वे संयम रखें तथा इस सुधार के लिये समुचित समय आने तक ठहरे रहें।

किन्तु यदि वे केन्द्रीय सरकार की बात नहीं सुनते तो क्या इसी कारण अनुच्छेद 280क द्वारा भारत सरकार को ऐसी कठोर शक्ति दे दी जाये कि एक बार राष्ट्रपति द्वारा यह उद्घोषणा होते ही कि समूचे भारत का भी नहीं, केवल उसके एक भाग का वित्तीय स्थायित्व संकट में है, प्रांत केन्द्रीय सरकार की इच्छा के विरुद्ध कुछ न कर सकें? जब भी प्रांत और केन्द्रीय सरकार के बीच गम्भीर मतभेद हो, तभी राष्ट्रपति से यह घोषणा करवाई जा सकती है कि प्रांत का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में है, फिर अनुच्छेद 280क के सभी परिणाम प्रकट हो जायेंगे। प्रांत के आय-व्ययक पर केन्द्र का पूर्ण नियंत्रण हो जायेगा और केन्द्र प्रांतीय सरकार तथा प्रांतीय विधान-मंडल दोनों को आदेश दे सकेगा कि वे किन वित्तीय नीतियों को अपनायें।

यह अनुच्छेद भारत के साधनों का केन्द्र तथा प्रान्तों में अधिक अच्छा विभाजन करने के विषय में नहीं है। इसका उद्देश्य केन्द्रीय सरकार को ऐसी शक्ति प्रदान

[पं. हृदय नाथ कुंजरू]

करना नहीं है जिससे कि वह बेकारों की सहायता, या सार्वजनिक निर्माण, या उनमें से किसी समस्या को हल कर सके जिनके हल से आर्थिक संतोष उत्पन्न होगा और भारत की समृद्धि बढ़ेगी। इसका उद्देश्य बिल्कुल भिन्न है। संशोधन के प्रस्तावक ने इस संशोधन के औचित्य को सिद्ध करने के लिये कोई कारण नहीं बताये हैं, अतः हमें ही यथाशक्ति यह सोचना है कि संविधान में ऐसा अनुच्छेद रखने के लिये केन्द्रीय सरकार क्यों सहमत हुई है। इन प्रांतों के हाल ही के वित्तीय इतिहास को देखते हुए मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि केन्द्रीय सरकार क्यों चिंतित है कि उसे प्रांतों पर वित्तीय नियंत्रण रखने की शक्ति मिल जाये, केवल वही कारण हो सकता है जो कि मैंने बताया है।

यह तो सदन को ही निश्चय करना है कि क्या इस संविधान को एकात्मक प्रकार का संविधान बना दिया जाये, जब कि उस दिन हमारे प्रधान मंत्री ने अमरीकी प्रतिनिधि-सभा तथा सीनेट के समक्ष अपने अभिभाषण में कहा था कि यह संविधान संघानवाद के सिद्धान्त पर आधारित है जो कि हमने अमरीकी संविधान से लिया है। यदि संविधान संघानीय हो तब भी क्या केन्द्रीय सरकार के लिये यह बुद्धिमानी होगी कि वह प्रांतों के वित्तीय स्वविवेक को कुचलने का प्रयत्न करे, चाहे उनके उपायों से उनकी हानि ही क्यों न हो? प्रांतों में लोकतंत्र कैसे स्थापित होगा, विधान-मंडलों के सदस्यों में उत्तरदायित्व की भावना कैसे पैदा होगी, मंत्री अनुभव से पाठ कैसे सीख सकेंगे, जब तक कि उन्हें अपनी गलतियों के परिणामों का सामना करने के लिये अवसर न दिया जाये। यदि केन्द्र प्रत्येक बात में हस्तक्षेप करना चाहता है, यदि वह चाहता है कि वह ऐसा पूर्ण नियंत्रण रख सके कि कोई ऐसी बात न होने दी जाये जिससे किसी प्रांत के या भारत के हितों को हानि हो, तो हमें लोकतंत्र से विदा लेनी चाहिये। केन्द्र तो यही चाहेगा कि उसे संविधान में जितना नियंत्रण सौंपा गया है वह उससे भी अधिक नियंत्रण रखे, यदि हम विगत अनुभव से या तथ्य से निर्णय करेंगे तो यही बात पता लगेगी। किन्तु इससे ठीक काम नहीं चलेगा और मैं यह कह सकता हूं कि प्रस्तावक ने इस संशोधन के स्वीकार करने के लिये जरा भी औचित्य सिद्ध नहीं किया है।

***श्री के.एम. मुंशी** (बंबई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अपने माननीय मित्र, पंडित कुंजरू की भावनाओं को, जो उन्होंने इस 280क के विरोध में प्रकट की हैं, आसानी से समझ करता हूं, किन्तु वे भी उस गम्भीर स्थिति को समझ जायेंगे जिसका निर्देश मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर ने पहले ही कर दिया है। संसद में, अर्थात् इस सदन के दूसरे अंग में जो बहस एक पखवारे पहले हुई थी, उससे स्पष्ट पता लग गया था कि देश गर्त के किनारे पर ही है, और मैं नहीं समझता कि आज हमारे समक्ष जो कठिनाई है वह उससे किसी प्रकार भी कम महत्वपूर्ण है, जो फ्रांस में, 1937 में आई थी जब कि उसने जून 1937 की विधि पारित की थी या जब कि 1933 में संयुक्त राज्य अमरीका ने ऐसा ही उपाय किया था। मैं राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम की प्रस्तावना को, जो अमरीका में स्वीकार किया गया था, पढ़कर सुना देता हूं।

"A national emergency productive of widespread unemployment and disorganization to industry which burdens the State and foreign commerce and affects the public welfare and undermines the standard of living of the American people is hereby said to exist.'

[एतद्द्वारा यह घोषित किया जाता है कि आर्थिक आपात है जिससे विस्तृत बेकारी तथा उद्योग का विघटन उत्पन्न होता है जिससे राज्य के तथा विदेशी वाणिज्य पर भार पड़ता है और लोक कल्याण पर प्रभाव पड़ता है और अमरीकी लोगों का जीवनस्तर गिरता है।]"

यदि मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू उन वक्तृताओं को पढ़ेंगे जो अवमूल्यन की बहस में इस सदन के सदस्यों तथा वित्त मंत्री ने दी थीं, तो मुझे भरोसा है कि उन्हें विश्वास हो जायेगा कि इस समय देश में जैसी स्थिति है उसमें केन्द्र के हाथों में वैसी ही विस्तृत शक्तियां होनी चाहियें जो अनुच्छेद 280क में निहित हैं। उनकी यह आशंका वास्तविक नहीं है कि कार्यकर्ता बढ़ जायेंगे, क्योंकि जब केन्द्र अनुच्छेद 280 के अंतर्गत काम करेगा तो वह राज्य के कर्मचारियों के द्वारा ही काम चलायेगा। वह प्रांतीय व्यवस्था के स्थान पर अपनी व्यवस्था को नियोजित नहीं करेगा। दूसरी युक्ति भी पूर्णत: ठीक नहीं है कि प्रांत केन्द्र की अनुमति के बिना कुछ भी नहीं कर सकते। साधारण परिस्थितियों में जब कि देश के वित्त स्थिर हों, जब तक देश का प्रत्यय स्थिर है, तब तक इस अनुच्छेद को लागू करने की कोई संभावना नहीं है। इसे तभी लागू किया जायेगा जब कि वित्तीय आपात होगा और तब तक प्रांतों को पूरी स्वतन्त्रता है कि वे जो चाहें करें। यह 'मास्टर' के समान दृष्टिकोण नहीं है जैसा कि इसे बताया गया है। दृष्टिकोण यह है कि जब देश की वित्तीय व्यवस्था टूट जायेगी तब केन्द्र हस्तक्षेप करेगा।

संविधान के इस अनुच्छेद में एक सर्वोच्च तथ्य को स्वीकार किया गया है कि देश की आर्थिक व्यवस्था एक है तथा अखंड है। यदि कोई प्रांत आर्थिक रूप में ठप्प हो जाता है तो इसका प्रभाव केन्द्र की वित्त व्यवस्था पर पड़ेगा, यदि केन्द्र कठिनाई में होगा तो सब प्रान्त ठप्प हो सकते हैं। अत: प्रान्तों तथा केन्द्र की पारस्परिक निर्भरता इतनी अधिक है कि देश की समूची वित्तीय अखंडता एक है और ऐसा समय आ सकता है जब कि एकात्मक नियंत्रण सर्वथा अपेक्षित हो जाये।

श्रीमान, मैं यह भी कहना चाहता हूं कि अब तक इस सदन ने जो विविध अनुच्छेद पारित किये हैं उनमें उपबंध है कि आपात में, साधारण समयों में भी, केन्द्र तथा प्रांतों के बीच कुछ एकीकरण होगा। मैं केवल अनुच्छेद 226 का निर्देश दूंगा। जिसके अनुसार उच्च सभा के मतदान से यह निश्चय हो सकता है कि राज्य सूची की किसी मद को केन्द्र को हस्तांतरित कर दिया जाये। हमारे यहां मनोनीत राज्यपाल होंगे जिन्हें हमने निर्वाचित राज्यपाल के स्थान पर स्वीकार किया है। हमने अनुच्छेद 275 तथा 278 में आपात की धारायें रखी हैं: जब प्रान्त का

[श्री के.एम. मुंशी]

सांविधानिक ढांचा टूट जाये तब केन्द्र हस्तक्षेप कर सकता है। उदाहरण के लिये, जब देश के किसी भाग में आंतरिक उपद्रव का संकट हो तब केन्द्र आपात-विधान द्वारा हस्तक्षेप कर सकता है। परन्तु क्या यह सुझाव दिया जा रहा है कि यदि समूचे देश की वित्तीय व्यवस्था ठप्प हो जाये तो केन्द्र को चुप बैठे रहना चाहिये और कुछ नहीं करना चाहिये? अतएव मेरा निवेदन है कि हमने जो ढांचा बनाया था उसे हमने किसी प्रकार छोड़ा नहीं है।

केवल एक शब्द और कह कर मैं समाप्त कर दूंगा: मेरे मित्र पं. कुंजरू ने कहा था कि अनुच्छेद के प्रस्तावक डॉ. अम्बेडकर ने इसका उद्देश्य नहीं समझाया। मेरे विचार में इसका उद्देश्य तो इससे स्वयं ही प्रकट हो जाता है। केवल इसी सरकार की यह इच्छा नहीं है कि वे प्रांतों में हस्तक्षेप करें, वरन भारत की प्रत्येक सरकार की यह इच्छा होनी चाहिये कि वह देखें कि भारत के वित्तीय स्थायित्व को हर कीमत पर और प्रत्येक परिस्थिति में बनाये रखा जाये। किसी सरकार के समक्ष यही प्रधान भावना है, चाहे यह सरकार हो या कोई और।

हमने प्रस्तावना में, जो कल सदन के समक्ष आयेगी, लिखा है कि भारत के सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोग इस संविधान को बनाते हैं। सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोग सब लोग नहीं हैं, वरन् भारत के सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोग जो एक इकाई के रूप में अपने उच्चतम निकाय, संविधान-सभा के द्वारा काम करते हैं, वे ही समस्त देश के लिये संविधान का निर्माण कर रहे हैं। कोई प्रान्तीय स्वायत्तता नहीं है, उनके द्वारा या उनके लिये कोई संधान नहीं बन रहा है; वे पवित्र शब्द नहीं हैं। प्रत्येक सरकार को भारत के सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करना होगा। वित्तीय आपात में इससे बड़ा विशेषाधिकार कोई नहीं हो सकता कि सब वित्तीय मामलों पर केन्द्र का नियंत्रण तथा निदेश हो, जैसा कि 280क में रखा गया है। यही उद्देश्य है, और मेरा निवेदन है कि यह ऐसा उद्देश्य है जिसके बिना संविधान अपूर्ण रहेगा और मैं सदन से अनुरोध करता हूं कि वह इस अनुच्छेद को एकमत से स्वीकार कर ले।

***अध्यक्ष:** क्या आपको कुछ कहना है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: यदि आप समझते हैं कि मेरा बोलना आवश्यक है तो मैं बोल दूंगा।

***अध्यक्ष:** नहीं, नहीं। मैं यह नहीं कहता। तो फिर मैं संशोधन पर मत लेता हूं।

***श्री एच.वी. कामत:** मेरा सुझाव है कि डॉ. अम्बेडकर 'threatened' शब्द के स्थान पर 'gravely threatened' इन शब्दों को रखने पर विचार करें।

***अध्यक्ष:** आपने अपना सुझाव दे दिया था। वे विचार कर लेंगे कि वह विचार-योग्य है या नहीं। मैं नहीं समझता कि डॉ. अम्बेडकर को सुझाव देने के रूप में आपको दूसरा भाषण करने की अनुमति मिलनी चाहिये।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी (आसाम : जनरल): मैं अपना एक मात्र भाषण देना चाहता था।

***अध्यक्ष:** परन्तु मैं वाद-विवाद को पहले ही समाप्त कर चुका हूं।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'has arisen' इन शब्दों के स्थान पर 'is imminent' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'whereby the financial stability or credit of India or any part of the territory thereof is threatened' इन शब्दों के स्थान पर 'which threatens India or any part thereof with financial breakdown or economic disaster' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'threatened' शब्द के पश्चात् 'or is likely to be threatened' ये शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (2) के स्थान पर निम्न रख दिया जाये:–

'(2) The proclamation issued under clause (1) of this article shall continue till such time it is revoked by the President.'

[इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा उस समय तक जारी रहेगी जब तक कि राष्ट्रपति उसे समाप्त न कर दे।]"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (3) में, 'operation' शब्द के पश्चात्, 'Parliament shall have power to make laws in respect of subjects contained in the State list as if they were subjects in the Concurrent List, and' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (4) हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (4) के उप-खंड (क) कंडिका (2) के स्थान पर निम्न रख दी जायेः—

'(ii) a provision requiring all Bills to be reserved for the consideration of the President after they are passed by the Legislature of the State.' "

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (5) को हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं डॉ. अ‍ॅबेडकर के मूल संशोधन पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 280 के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जायेः–

Provisions as to financial emergency.

'280A. (1) If the President is satisfied that a situation has arisen whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof

is threatened, he may by a proclamation make a declaration to that effect.

(2) The provisions of clause (2) of article 275 of this Constitution shall apply in relation to a proclamation issued under clause (1) of this article as they apply in relation to a Proclamation of Emergency issued under clause (1) of the said article 275.

(3) During the period any such proclamation as is mentioned in clause (1) of this article is in operation, the executive authority of the Union shall extend to the giving of directions to any State to observe such canons of financial propriety as may be specified in the directions, and the giving of such other directions as the President may deem necessary and adequate for the purpose.

(4) Notwithstanding anything contained in this Constitution—

(a) any such direction may include—

(i) a provision requiring the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving in connection with the affairs of a State;

(ii) a provision requiring all Money Bills or other Bills to which the provisions of article 182 of the Constitution apply to be reserved for the consideration of the President after they are passed by the Legislature of the State.

(b) it shall be competent for the President during the period any proclamation issued under clause (1) of this article is in operation to issue directions for the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving

[अध्यक्ष]

in connection with the affairs of the Union including the judges of the Supreme Court and the High Courts.

(5) Any failure to comply with any directions given under clause (3) of this article shall be deemed to be a failure to carry on the Government of the State in accordance with the provisions of this Constitution.'

वित्तीय आपात के बारे में उपबन्ध।

[280क. (1) यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जिससे भारत अथवा उसके राज्य-क्षेत्र के किसी भी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में हो तो वह उद्घोषणा द्वारा उस बात की घोषणा कर सकेगा।

(2) अनुच्छेद 275 के खंड (2) के उपबन्ध इस अनुच्छेद के अधीन निकाली गई उद्घोषणा के सम्बन्ध में वैसे ही लागू होंगे जैसे कि वे अनुच्छेद 275 के अधीन निकाली गई आपात की उद्घोषणा के लिये लागू होते हैं।

(3) उस कालावधि में जिसमें कि खंड (1) में वर्णित कोई उद्घोषणा प्रवर्तन में रहती है संघ की कार्यपालिका शक्ति किसी राज्य को वित्तीय औचित्य सम्बन्धी ऐसे सिद्धान्तों का पालन करने के लिये निदेश देने तक, जैसे कि निदेशों में उल्लिखित हों तथा ऐसे अन्य निदेश देने तक, जिन्हें, राष्ट्रपति उस प्रयोजन के लिये देना आवश्यक और समुचित समझे विस्तृत होगी।

(4) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी–

(क) ऐसे किसी निदेश के अन्तर्गत–

(1) राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किन्हीं वर्गों के वेतनों तथा भत्तों में कमी की अपेक्षा करने वाले उपबन्ध,

(2) धन-विधेयकों अथवा अन्य विधेयकों को, जिनको अनुच्छेद 182 के उपबन्ध लागू हैं, राज्य के विधान-मंडल के द्वारा उनके पारित किये जाने के पश्चात् राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित करने के लिये उपबन्ध, भी हो सकेंगे,

(ख) उस कालावधि में, जिसमें कि इस अनुच्छेद के अधीन निकाली गई उद्घोषणा प्रवर्तन में है, उच्चतम न्यायालय

और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के सहित, संघ के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किसी वर्ग के वेतनों और भत्तों में कमी के लिये निदेश निकालने के लिये राष्ट्रपति सक्षम होगा।

(5) इस अनुच्छेद के खण्ड (3) के अधीन दिये गये निदेशों का पालन करने में असफलता को भी इस संविधान के उपबन्धों के अनुसार राज्य का शासन चलाने की असफलता समझा जायेगा।]"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 280क संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 85

***अध्यक्षः** अब हम अन्य मदों को लेंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 85 के खंड (3) के स्थान पर निम्न खंड रख दिया जाये:—

'(3) In other respects, the privileges, immunities and powers of each House of Parliament and of the members and the Committees of each House shall be such as may from time to time be defined by Parliament by law, and until so defined, shall be those of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom and of its members and committees at the commencement of this Constitution.'

[(3) अन्य बातों में, संसद के प्रत्येक सदन की तथा प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी, जैसी संसद, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे, तथा जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं, तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के प्रारम्भ पर इंग्लिस्तान की पार्लियामेंट के हाउस ऑफ कामन्स की तथा उसके सदस्यों और समितियों की हैं।]"

इस परिवर्तन को करने का कारण यह है कि उप-खंड का क्षेत्र विस्तृत करना है क्योंकि मूल खंड में केवल सदस्यों के विशेषाधिकारों तथा उन्मुक्तियों का उल्लेख था। वर्तमान खंड में यही करने का प्रयत्न किया गया है कि इसे प्रत्येक सदन के सब सदस्यों और समितियों पर लागू कर दिया गया है। यह इसलिये आवश्यक हो गया है कि हमने अनुसूची 7, सूची 1, प्रविष्टि मैं संसद की विधायिनी शक्ति का उपबन्ध 69क में किया है। वह विधायिनी शक्ति इस प्रकार है:

"संसद के प्रत्येक सदन के तथा प्रत्येक सदस्यों के और समितियों के विशेषाधिकार, के उन्मुक्तियां और शक्तियां।"

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

अनुच्छेद 85 के उप-खंड (3) को उस प्रविष्टि के अनुरूप बनाने के लिये, यह संशोधन पेश किया गया है। सदन के माननीय सदस्य कृपया ध्यान दें कि इसका उद्देश्य सदनों के सदस्यों के तथा समितियों के विशेषाधिकारों, उन्मुक्तियों तथा शक्तियों को विस्तृत करना ही है और यह ऐसा मामला नहीं है जिस पर विवाद हो क्योंकि यह सदन द्वारा 69क, सूची 1, अनुसूची 7 की स्वीकृति के फलस्वरूप ही है।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** खंड (4) में भी समितियों को वही विशेषाधिकार दिये गये हैं जो कि सदस्यों को दिये गये हैं।

***अध्यक्षः** यह सदन के सम्बन्ध में भी है, केवल सदस्यों के लिये ही नहीं है।

एक और संशोधन है जिसकी सूचना श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने दी है। किन्तु वह एक अन्य संशोधन—सं. 397 में आ जाता है। अतः इसका प्रश्न नहीं उठता।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** किन्तु अगले पृष्ठ पर दो भाग (क) तथा (ख) हैं।

***अध्यक्षः** हां, 3 (ख) है। परन्तु क्या यह संविधान का विषय है? राष्ट्रपति श्वेत-पत्र निकालेगा, यह संविधान का विषय नहीं है। यदि राष्ट्रपति को श्वेत-पत्र निकालने का सुझाव दिया जायेगा तथा यदि सभा में प्रस्ताव पारित होगा तो वह श्वेत-पत्र निकाल देगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** सारा प्रयोजन तो यह जानने का है कि हाउस ऑफ कामन्स के सदस्यों की शक्तियां तथा विशेषाधिकार क्या हैं।

***अध्यक्षः** आप राष्ट्रपति से श्वेत-पत्र निकालने के लिये कह सकते हैं, किन्तु यह संविधान का अंग नहीं बन सकता।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मैं इस संशोधन में मौखिक परिवर्तन कर सकता हूं।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में, हम इसे छोड़ दें तो अच्छा रहेगा।

***श्री आर.के. सिधवाः** श्रीमान, जब इस अनुच्छेद पर पिछली बार चर्चा हुई थी, तब हमें निश्चित ज्ञान नहीं था कि हाउस ऑफ कामन्स के सदस्यों के विशेषाधिकार क्या हैं। मैंने 'मे' की पुस्तक 'संसदीय प्रक्रिया' से मालूम करना चाहा परन्तु मुझे पता नहीं लग सका। अतः, हमें कुछ पता होना चाहिये कि हाउस ऑफ कामन्स के सदस्यों के विशेषाधिकार क्या हैं। अन्यथा संसद में संघर्ष पैदा हो सकता है। संसद के निर्माण के पश्चात् दो तीन वर्ष तक भी शायद ये विशेषाधिकार लिखित रूप में न आ सकें, क्योंकि मुझे पता है कि अब तक विशेषाधिकारों का कोई अधिनियम नहीं बन सका है, यद्यपि भारत शासन अधिनियम, 1935 के अन्तर्गत यह उपबन्ध है कि सदस्यों के विशेषाधिकारों का अधिनियम बनेगा; दो प्रांतों के अतिरिक्त वे न केन्द्र में और न किसी प्रान्त में ही अब तक लिखित रूप में बने हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान, मैं आपकी अनुमति से अपने मित्र श्री सिधवा को सूचना दे सकता हूं कि वह चर्चा हुई थी उसके बाद मैंने कुछ खोज की है और मुझे पता लगा है कि दक्षिण अफीका की संसद ने उन्मुक्तियों तथा विशेषाधिकारों को परिभाषित करने वाला एक अधिनियम पारित किया है। मेरे पास एक प्रतिलिपि है। यदि वे चाहें तो उन्हें यह पढ़ने के लिये दे सकता हूं। बाद में हमारी संसद के लिये भी उन विशेषाधिकारों को रखना संभव हो सकता है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** श्रीमान, संशोधन सं. 419 में, "Provincial Parliament" ये शब्द हैं। यह मुद्रण की त्रुटि है। यहां 'Provincial' नहीं, 'Provisional' शब्द होना चाहिये। यह अलग संशोधन है जिसे किसी ने भी पेश नहीं किया है। क्या मैं इसे पेश कर सकता हूं?

***अध्यक्षः** मेरे विचार में अंतर्कालीन (Provisional) संसद को वे सब शक्तियां तथा विशेषाधिकार होंगे जो स्थायी संसद को होंगे। अत: यह प्रश्न वास्तव में नहीं उठता।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या हम यह शक्ति संसद पर ही नहीं छोड़ सकते कि वही विनिश्चय कर ले?

***अध्यक्षः** अनुच्छेद में यही तो लिखा है। संसद ही शक्तियों तथा विशेषाधिकारों को परिभाषित करेगी, किन्तु जब तक संसद इस विषय में विधान पारित न करे तब तक हाउस ऑफ कामन्स के विशेषाधिकार तथा शक्तियां ही लागू होंगी। अत: यह केवल अस्थायी बात है। हां, हो सकता है कि संसद इस विषय पर कभी भी विधान न बनाये और इसलिये सदस्यों को सावधान होना चाहिये।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या अंतर्कालीन संसद को अधिकार होगा कि इन शक्तियों को परिभाषित कर दे?

***अध्यक्षः** निस्संदेह, उसे अधिकार होगा, यदि वह चाहे।

***श्री बी. दासः** श्रीमान, इस संशोधन सं. 419 में, 'Provincial' संसद है या 'Provisional' संसद है?

***अध्यक्षः** यह गलती है। 'Provisional' संसद होना चाहिये। जब श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने यह गलती बताई थी तो मैं उनकी बात को समझा नहीं था। यह मुद्रण की गलती है। अतएव, अंतर्कालीन संसद को वही अधिकार है जो स्थायी संसद को है। क्या इस पर वाद-विवाद आवश्यक है? अत:, मैं संशोधन पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 85 के खंड (3) के स्थान पर निम्न खंड रख दिया जाये:—

'(3) In other respects, the privileges, immunities and powers of each House of Parliament and of the members and the

[अध्यक्ष]

committees of each House shall be such as may from time to time be defined by Parliament by law, and until so defined, shall be those of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom and of its members and committees at the commencement of this Constitution.'

[(3) अन्य बातों में, संसद के प्रत्येक सदन की तथा प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी; जैसी संसद, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे, तथा जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं, तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के प्रारंभ पर इंगलिस्तान की पार्लियामेंट के हाउस ऑफ कामन्स की तथा उसके सदस्यों और समितियों की हैं।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 111

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 111 के खंड (1) के परन्तुक के स्थान पर निम्न परन्तुक रख दिया जाये:–

'Provided that no appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment, decree or final order of one judge of a High Court.'

[किन्तु उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के निर्णय, आज्ञप्ति या अंतिम आदेश की कोई अपील उच्चतम न्यायालय को नहीं जायेगी।]"

इससे वर्तमान स्थिति स्पष्ट हो जाती है। वर्तमान उपबन्ध कुछ लम्बा चौड़ा है। वर्तमान उपबन्ध, जिसे यह संशोधन हटाना चाहता है, यह है:—

"Provided that no appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment, decree or order of one judge of a High Court or of one judge of a Division Court thereof, or of two or more judges of a High Court, or of a Division Court constituted by two or more judges of a High Court, where such judges are equally

divided in opinion and do not amount in number to a majority of the whole of the judges of the High Court at the time being.' "

यह अनुभव किया जाता है कि यह आवश्यक नहीं है क्योंकि यह मूल लेटर्स पेटेंट से लिया गया था, जिसका संशोधन 1928 में हो चुका था। संशोधित लेटर्स पेटेंट, जिस रूप में वह हमारे न्यायालयों में लागू था, इस लम्बे चौड़े परन्तुक से आसान है, और उसका आशय लगभग वही था जो हम अनुच्छेद 111 के परन्तुक के रूप में रखना चाहते हैं, पुराने परन्तुक का आशय नहीं था। मैं नहीं समझता कि इस मामले विशेष में वाद-विवाद की कोई गुंजाइश है, क्योंकि इस संशोधन का उद्देश्य उस सीमा को, जो उच्चतम न्यायालय को जाने वाली अपीलों के विषय में रखी गई थी, अधिक आसान बनाना तथा निर्बन्धित करना है। यदि माननीय सदस्य इस स्पष्टीकरण से संतुष्ट हैं तो यह स्वीकृत हो सकता है। किन्तु यदि वे समस्त प्रश्न का स्पष्टीकरण चाहते हैं कि उच्च न्यायालयों में न्याय-मंडलियों की शक्तियों पर लेटर्स पेटेन्ट का क्या प्रभाव पड़ा था और हमने उसमें से क्या-क्या चीजें ली हैं तो, मेरे विचार में, मेरे माननीय साथी श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर इस विषय में सदस्यों को संतुष्ट करने के लिये तैयार हैं।

श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव करता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 111 के खंड (1) के परन्तुक के स्थान पर निम्न परन्तुक रख दिया जाये:–

'Provided that no appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment, decree or final order of one judge of a High Court.'

[किन्तु उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के निर्णय, आज्ञप्ति या अंतिम आदेश की कोई अपील उच्चतम न्यायालय को नहीं जायेगी।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 112 तथा 203

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 364 के निर्देश से, अनुच्छेद 112 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:–

'112. (1) The Supreme Court may, in its discretion, grant special leave to appeal from any judgment, decree, determination, sentence or order in any cause or matter passed or made by any court or tribunal in the territory of India.

Special leave to appeal by the Supreme Court.

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

(2) Nothing in clause (1) of this article shall apply to any judgment, determination, sentence or order passed or made by any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.'

[112. (1) उच्चतम न्यायालय, स्वविवेक से, भारत राज्य-क्षेत्र में के किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा किसी वाद या विषय में दिये हुए किसी निर्णय, आज्ञप्ति, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश की अपील के लिये विशेष इजाजत दे सकेगा।

अपील के लिए उच्चतम न्यायालय की विशेष इजाजत

(2) सशस्त्र बलों से सम्बद्ध किसी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा पारित या दत्त किसी निर्णय, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश को खंड (1) की कोई बात लागू न होगी।]"

अनुच्छेद 112 के खंड (1) पर मेरा संशोधन बहुत सादा है। इसका उद्देश्य यह है कि मूल अनुच्छेद में 'final order' इन शब्दों को हटा दिया जाये, और 'determination, sentence or order' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें। जहां तक खंड (2) का सम्बन्ध है, यह संशोधन माननीय सदस्यों के लिये बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिये। इसका उद्देश्य यह है कि उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार से (जो उसे अनुच्छेद 112 द्वारा दिया गया है) सैनिक न्यायालय के विनिश्चयों को निकाल दिया जाये जो सशस्त्र बलों से सम्बद्ध मामलों के विषय में हों या सेना अधिनियम से शासित मामलों के विषय में हों। मैं समझता हूं कि यही स्थिति संयुक्त राज्य ब्रिटेन में है जहां न्यायालय सैनिक-न्यायालयों के निर्णयों में हस्तक्षेप नहीं करते। मुझे एकदम स्वीकार करना पड़ेगा कि जब यह अनुच्छेद तैयार हुआ था तथा सदन के समक्ष पेश किया था तब यह बात हमारे ध्यान में नहीं आई थी, किन्तु अब प्रतिरक्षा विभाग ने इस ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है तथा उन्होंने हमें विश्वास दिला दिया है कि ऐसा उपबन्ध, जो अन्य देशों में लागू है, हमारे संविधान में भी होना ही चाहिये।

श्रीमान, यदि आप मुझे अनुमति देंगे तो मैं एक और अनुच्छेद भी पेश करना चाहता हूं जो इसी विषय में है, ताकि सारे मामले पर एक साथ ही विचार किया जा सके।

श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 203 में, निम्न खंड जोड़ दिया जाये:

(4) Nothing in this article shall be deemed to extend the powers of superintendence of a High Court over any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.'

[(4) इस अनुच्छेद की कोई बात उच्च न्यायालय को सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या अधिकरण पर अधीक्षण की शक्तियां देने वाली न समझी जायेगी।]"

अनुच्छेद 203 का खंड (4) तथा अनुचछेद 112 का खंड (2) उसी विषय में है। अनुच्छेद 203 के विषय में इसका उद्देश्य सैनिक न्यायालयों पर उच्च न्यायालयों के क्षेत्राधिकार का वर्जन करना है, जबकि उच्चतम न्यायालय के विषय में ऐसा ही निर्बंधन अनुच्छेद 112 के अधीन लगाया जाना है। इन दो नये संशोधनों को पेश करने का कारण प्रतिरक्षा मंत्रालय द्वारा अभिव्यक्त विचार हैं कि सैनिक न्यायालयों के विनिश्चयों के विषय में ऐसा रक्षण आवश्यक है क्योंकि वे न्यायालय सशस्त्र बलों के विषय में होते हैं और अन्य देशों में जो कुछ होता है उनका उदाहरण हमारे समक्ष पेश किया गया था। अतः हमने अनुभव किया कि अनुच्छेद 112 तथा 203 में ऐसा उपबन्ध रखना ठीक प्रतीत होता है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 421 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 112 के खंड (2) को हटा दिया जाये।"

मैं इस विषय में डॉ. अम्बेडकर के विरुद्ध विश्वासघात का आरोप लगाना चाहता हूं। कुछ समय पूर्व मैंने अनुच्छेद 112क पर एक संशोधन पेश किया था जिसमें मैं विशेषतः यह चाहता था कि ऐसा उपबन्ध रखा जाये कि सैनिक न्यायालयों द्वारा मृत्यु दण्ड प्राप्त व्यक्ति उच्चतम न्यायालय को अपील कर सकें। डॉ. अम्बेडकर ने मुझे आश्वासन दिया था कि ऐसे व्यक्ति अनुच्छेद 112 के अंतर्गत आ जाते हैं और उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 112 के अधीन दी गई शक्तियों के अंतर्गत उन व्यक्तियों पर ध्यान दे सकता है। शायद इस सदन की चर्चा पत्रों में छपी थी और प्रतिरक्षा विभाग ने, सैनिक न्यायालयों द्वारा मृत्यु दंड प्राप्त लोगों का इस अनुच्छेद से जो रक्षण होगा, उसके विरुद्ध अपने हाथ मजबूत करने चाहे हैं। श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने अभी कहा है कि यह आवश्यक है क्योंकि प्रतिरक्षा विभाग ऐसा चाहता है। शायद उन्होंने यहां के वाद-विवाद की रिपोर्ट पढ़ ली है और इसलिये उन्होंने इस उपबन्ध की मांग की है।

अतएव, मेरे विचार में, श्रीमान, यह उचित नहीं है। मैंने अपना संशोधन उस दिन इसी आश्वासन पर वापिस ले लिया था कि वह इस अनुच्छेद में आ जायेगा, और अब बिल्कुल उल्टा उपबन्ध रखा जा रहा है और वह स्वीकार होने वाला है। मैंने कई न्यायाधीश-अधिवक्ताओं को देखा है तथा सुना है जो इन सैनिक न्यायालयों से सम्बद्ध होते हैं और वे कहते हैं कि वे ही अभियोजन की तैयारी करते हैं और वे ही मुकदमों को सुनते हैं और फिर निर्णय देते हैं, और यदि कोई न्यायाधीश-अधिवक्ता अपने ही तैयार किये हुए मुकदमों के विरुद्ध प्रायः विनिश्चय करे तो सैनिक प्राधिकारी उसे ही हटा देते हैं। वे इस बात को पसन्द नहीं करते कि इन मुकदमों को खारिज किया जाये। मेरे विचार में, श्रीमान, यह गम्भीर मामला है। हाल ही में युद्ध के पश्चात् ब्रिटेन में भी इन सैनिक न्यायालयों के प्रशासन पर गौर करने के लिये एक आयोग नियुक्त किया गया था तथा उसने भी यह सिफारिश की थी कि प्रक्रिया को अधिक सभ्य बना देना चाहिये और अनुशासन के नाम में लोगों की हत्या नहीं की जानी चाहिये। मैंने देखा है कि न्यायाधीश अधिवक्ताओं की वर्तमान प्रक्रिया न्याय-सिद्धान्त के सब नियमों के विरुद्ध

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

है और मेरे विचार में जिन लोगों को मृत्यु दण्ड दिया जाये उन्हें तो अवश्य ही उच्चतम न्यायालय में अपील करने का अधिकार होना चाहिये। मेरे विचार में यह उपबन्ध अन्याया पूर्ण ही नहीं है, वरन् उस वचन के भी विरुद्ध है जो डॉ. अम्बेडकर ने मुझे पहले दिया था।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ अध्यक्ष महोदय, मुझे इस खंड के विषय में संदेह है। मैं इस बात पर सर्वथा सहमत हूं कि सशस्त्र बलों को रक्षण दिया जाना चाहिये और कि सैनिक विधि का पुनरीक्षण उच्चतम न्यायालय द्वारा नहीं होना चाहिये। उस हद तक मैं सहमत हूं, किन्तु मैं बहुत से मामले बता सकता हूं जिनमें बहुत से सशस्त्र बलों का बहुत से नागरिक लोगों से संघर्ष हुआ था। श्रीमान, बहुत से सैनिक मोटर-चालकों के मामले थे जिन्होंने दुर्घटनाएं करके कई नागरिकों को मार डाला था और उन पर सैनिक न्यायालयों द्वारा मुकदमे चलाये गये जब 90 प्रतिशत मामलों में बेचारे असैनिकों को ही हानि उठानी पड़ी। उन्हें कोई प्रतिकर या न्याय प्राप्त नहीं हुआ और न सैनिक चालक को ही किसी तरह कोई दण्ड दिया गया। अतएव मेरा कहना यह है कि मसौदा समिति नगर की जनता के हित में कृपया इस बात का ध्यान रखे और यहां कोई प्रबन्ध या उपबन्ध कर दे कि इन दुर्घटनाओं से हानि उठाने वाली जनता की रक्षा की जा सके। उन पर सैनिक विधि से मुकदमा नहीं चलना चाहिये। मैं बहुत से मुकदमों के हवाले दे सकता हूं और यदि इन मुकदमों को असैनिक न्यायालयों में पेश किया जाता तो उचित न्याय हो सकता था। व्यवहार तथा दण्ड न्यायालयों में उन्हें प्रतिकर मिल जाता है और वहां दोषी को दण्ड दिया जाता है। इसी त्रुटि के कारण कई चालक इतने तेज चलाते हैं कि वे कई नागरिकों को मार डालते हैं। मैं माननीय डॉ. अम्बेडकर का ध्यान इस मामले की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं। शायद इस मामले पर पहले उनका ध्यान नहीं गया, किन्तु वह बहुत महत्वपूर्ण मामला है और हम सशस्त्र बलों की रक्षा तो करना चाहते हैं और उनकी अपील उच्चतम न्यायालय को नहीं आनी चाहिये, किन्तु असैनिकों की भी समान रूपेण रक्षा करनी चाहिये।

*__श्री बी. दास:__ मैं चाहता हूं कि डॉ. अम्बेडकर इस बात को स्पष्ट कर दें कि भारत के राज्य-क्षेत्र में न्यायाधिकरण का अर्थ आय-कर न्यायाधिकरण से है या विविध लेख न्यायाधिकरणों से है। यदि शक्ति का विस्तार किया जाये तो आयकर न्यायाधिकरण को एक दम विघटित कर दिया जाना चाहिये। हमारे यहां आयकर न्यायाधिकरण है जो अंतिम प्राधिकारी है।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ क्या ये बातें प्रसंगानुकूल हैं? आयकर न्यायाधिकरण कहां से आ गया?

*__श्री बी. दास:__ इस अनुच्छेद में लिखा है:

" 'The Supreme Court may, in its discretion, grant special leave to appeal from any judgment, decree, determination, sentence or order in any cause or matter passed or made by any court or tribunal in the territory of India.'

[उच्चतम न्यायालय स्वविवेक से भारत राज्य-क्षेत्र में के किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा किसी वाद या विषय में दिये हुए किसी निर्णय, आज्ञप्ति, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश की अपील के लिये विशेष इजाजत दे सकेगा।]"

मैं आपसे केवल यह आश्वासन चाहता हूं कि 'न्यायाधिकरण' का अर्थ आयकर न्यायाधिकरण नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** आपने अन्य व्यक्तियों के विषय में भी कहा था। जहां तक मुझे याद है, इसका संशोधन इस लिये किया गया था कि आयकर के मामले भी उच्चतय न्यायालय में जा सकें। मैं जानता हूं कि इसमें संशोधन किया गया है।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** श्रीमान, मेरे विचार में खंड (2) अत्यन्त विस्तृत तथा अनावश्यक दिखाई देता है। वह इस प्रकार है:

" 'Nothing in clause (1) of this article shall apply to any judgment, determination, sentence or order passed or made by any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.

[सशस्त्र बलों से सम्बद्ध किसी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा पारित या दत्त किसी निर्णय, निर्धारण, दंडादेश या आदेश को खंड (1) की कोई बात लागू नहीं होगी।]"

जहां तक सैनिक व्यक्तियों और सैनिक अपराधों का सम्बन्ध है, वे उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार से विमुक्त रह सकते हैं; किन्तु सशस्त्र बलों के विषय में बहुत-सी विधियां हैं जो इन अधिनियमों के अधीन उन मुकदमों के विषय में हैं जिनमें अभियुक्त असैनिक लोग होते हैं या ऐसे सैनिक व्यक्ति होते हैं जो असैनिक अपराधों के दोषी हों। उदाहरण के लिये, कटक क्षेत्र अधिनियम के विषय में या प्रादेशिक बल अधिनियम के विषय में, कुछ ऐसे अपराध हैं जिनमें असैनिक लोग अभियुक्त होते हैं और कोई कारण नहीं है कि ऐसे दण्डादेश उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत न हों। अत: मेरे विचार में, इस खंड की भाषा बहुत विस्तृत है और उसमें संशोधन की आवश्यकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना ने जो बातें कहीं हैं उन्हें देखते हुए, मेरे लिये यह आवश्यक हो गया है कि मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तावित संशोधन के विषय में मैं कुछ कहूं। यह सर्वथा सत्य है कि जब हमने अनुच्छेद 112 पर विचार किया था तथा मेरे माननीय मित्र प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना ने संशोधन पेश किया था, उस समय मैंने यह अवश्य कहा था कि अनुच्छेद 112 के अधीन उच्चतम न्यायालय को क्षेत्राधिकार होगा कि वह सैनिक न्यायालय के आदेश के विरुद्ध अपील को सुन सके। सिद्धान्त में वह बात अब भी ठीक है और मुझे इस विषय में कोई संदेह नहीं है, किन्तु मैं केवल यही बात कहना

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

भूल गया था कि हमारे उच्च न्यायालयों तथा ब्रिटिश न्यायालयों तथा प्रिवी परिषद् के निर्णयों के अनुसार यह सुमान्य सिद्धान्त है कि यद्यपि असैनिक न्यायालयों को विधि के अधीन क्षेत्राधिकार प्राप्त है पर वे सैनिक न्यायालय के निर्णय या आदेश को उलटने के लिये उसका प्रयोग नहीं करेंगे। मैं उन कारणों पर यहां कुछ नहीं कहना चाहता कि उच्चतर प्राधिकार वाले असैनिक न्यायालयों ने यह क्यों कहा है कि उन्हें क्षेत्राधिकार प्राप्त होते हुए भी वे उसका प्रयोग नहीं करेंगे, किन्तु तथ्य तो यही है और मैंने सोचा था कि यदि हमारे भारत के न्यायालय भी उसी विनिश्चय कर चलें जो ब्रिटिश न्यायालयों ने दिया है—लार्ड सभा, बादशाह की मंडली डिवीजन तथा प्रिवी परिषद् ने भी यही निर्णय दिया है और मैं यह भी कह सकता हूं कि हमारे फेडरल न्यायालय ने भी दो तीन मामलों में यही निर्णय दिया है–तो खंड (2) की आवश्यकता ही नहीं रहेगी; किन्तु दुर्भाग्य से प्रतिरक्षा मंत्रालय यह अनुभव करता है कि ऐसे महत्वपूर्ण मामले को संदेह की स्थिति में नहीं छोड़ना चाहिये और विधि रूप उपबन्ध होना चाहिये कि कोई असैनिक न्यायालय—चाहे उच्च न्यायालय हो या उच्चतम न्यायालय हो—किसी ऐसे न्यायालय या न्यायाधिकरण के विषय में, जो सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि के अधीन बना हो, ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग नहीं करेगा।

यह प्रश्न केवल परिकल्पना का ही नहीं है, वरन् इसका बहुत क्रियात्मक महत्व है क्योंकि इसमें सशस्त्र बलों के अनुशासन का प्रश्न अंतर्ग्रस्त है। यदि सशस्त्र बलों के विषय में कोई चीज आवश्यक है तो वह अनुशासन है। प्रतिरक्षा मंत्रालय यह अनुभव करता है कि यदि सशस्त्र बलों का कोई व्यक्ति उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय से यह आशा कर सकता है कि वह ऐसे न्यायालय या न्यायाधिकरण के विनिश्चय के विरुद्ध उसकी सहायता कर सकता है जो सशस्त्र बलों में अनुशासन रखने के लिये बनाया गया है, तो अनुशासन समाप्त ही हो जायेगा। मुझे कहना होगा कि यह ऐसी युक्ति है जिसका कोई उत्तर नहीं है। इसी कारण इस संशोधन विशेष द्वारा अनुच्छेद 112 में खंड (2) को जोड़ दिया गया है और उच्च न्यायालयों की अधीक्षण की शक्तियों विषयक उपबंधों में भी ही उपबन्ध जोड़ दिया गया है। अनुच्छेद 112 में खंड (2) जोड़ने के लिये मेरा यही औचित्य है।

किन्तु मैं यह भी कहना चाहता हूं कि इस खंड (2) से उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय की शक्तियां पूर्णत: समाप्त नहीं हो जातीं। विधि सशस्त्र बलों के सदस्य को पूरी तरह उस विधि विशेष के अधीन निर्मित न्यायाधिकरण की ही कृपा पर नहीं छोड़ देती है। क्योंकि, अनुच्छेद 112 के खंड (2) के होते हुए भी उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय को क्षेत्राधिकार के प्रयोग का अधिकार होगा, यदि सैनिक न्यायालय उस क्षेत्राधिकार से आगे बढ़ जाये जो उसे सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि द्वारा प्रदत्त है। उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करने का अधिकार होगा कि क्या क्षेत्राधिकार का प्रयोग उस विधि के अंतर्गत किया गया है जिससे यह न्यायालय या न्यायाधिकरण बना था। दूसरी बात यह है कि यदि सैनिक न्यायालय साक्ष्य के बिना भी निर्णय दे दे तो भी उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय को अपील पर विचार करने का अधिकार

होगा ताकि वह मालूम कर सके कि साक्ष्य है या नहीं। हां, उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय को इस बात पर विचार करने का अधिकार नहीं होगा कि साक्ष्य पर्याप्त है या नहीं है। यह मामला इन न्यायालयों के क्षेत्राधिकार से बाहर है। साक्ष्य है या नहीं, इस मामले पर वे विचार कर सकते हैं। इसी प्रकार मैं कह सकता हूं कि सशस्त्र बलों के व्यक्ति को अधिकार होगा कि वह न्यायालयों से अपील कर सके कि वे लेख निकाल कर वह विचार कर सकें कि क्या उसके विरुद्ध सैनिक न्यायालय की कार्यवाहियां संसद-निर्मित किसी विधि के अधीन की गई हैं या वे मनमानी हैं। अतः मेरे विचार में, प्रतिरक्षा मंत्रालय द्वारा उठाई गई कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए, यह अनुच्छेद आवश्यक है। इससे ऐसे नियम को मान्यता मात्र दी गई है जो पहले ही लागू है और जिसे समस्त बड़े न्यायालयों ने मान्यता दी है, इससे कुछ अधिक नहीं होता।

मुझे बताया गया है कि कुछ लोग सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि के विषय में कठिनाई अनुभव करते हैं। कहा जाता है कि सशस्त्र बलों में कई ऐसे व्यक्ति हैं जो वास्तव में 'मोर्चे वाले व्यक्ति' नहीं हैं, वे मोर्चे से पीछे रहते हैं। मुझे उन लोगों में विभेद करना असम्भव दिखाई देता है जो वास्तव में शस्त्र धारण करते हैं और अन्य लोग जो सेना अधिनियम के अधीन भर्ती किये जाते हैं, क्योंकि सशस्त्र बलों में अनुशासन इतना ही आवश्यक है जितना उन लोगों में अनुशासन बनाये रखना आवश्यक है जो सशस्त्र बलों में समाविष्ट नहीं हैं।

मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा ने यह प्रश्न उठाया है कि कभी सशस्त्र बलों का कोई सदस्य कोई अपराध कर देता है, तेज सवारी चला कर या और काम करके किसी को मार डालता है तो उस पर प्रायः सैनिक न्यायालय में मुकदमा चलता है और उसे साधारण दंड विधि न्यायालय के समक्ष लाने के लिये कोई कार्यवाही नहीं की जाती। खैर, मुझे पता नहीं है, किन्तु मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि जहां तक सशस्त्र बलों के सदस्य का सम्बन्ध है वह दुहरे क्षेत्राधिकार के अधीन होता है। निस्संदेह वह सैनिक विधि के अधीन निर्मित न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत है। साथ ही वह देश की सामान्य विधि से विमुक्त नहीं है। उदाहरण के लिये यदि कोई व्यक्ति ऐसा अपराध करता है जो भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत अपराध है और सेना अधिनियम के अधीन भी अपराध है तो उस पर दोनों अधिनियमों के अधीन मुकदमा चल सकेगा। यदि सेना का कोई सदस्य ऐसे मुकदमे से बच गया है तो इसका यही कारण है कि लोगों ने उस मामले का पीछा नहीं पकड़ा। विधि की सामान्य परिकल्पना यह है कि कोई व्यक्ति सशस्त्र बलों का सदस्य बन जाने से देश की सामान्य विधि के क्षेत्राधिकार से नहीं बच जाता। वह उसके अधीन रहता है, किन्तु उसके अतिरिक्त उस पर उस अधिनियम का दायित्व भी आ पड़ता है जिसके अधीन वह भर्ती हुआ है।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या उसे एक ही अपराध के लिये दो दण्ड मिल सकते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** हां, हां।

***श्री आर.के. सिधवाः** इसे स्पष्ट क्यों नहीं कर देते?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यह बिल्कुल स्पष्ट है। भारतीय दंड संहिता की धारा (2) में लिखा है। "प्रत्येक व्यक्ति"। "प्रत्येक व्यक्ति" का अर्थ है ऊंचा या नीचा सशस्त्र या शस्त्रहीन।

***अध्यक्षः** श्री टी.टी. कृष्णमाचारी। क्या आप इसके पश्चात् कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** नहीं, श्रीमान्

***अध्यक्षः** मैं संशोधनों पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 421 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 112 के खंड (2) को हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मैं संशोधन सं. 421 में प्रस्थापित अनुच्छेद 112 पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 364 के निर्देश से, अनुच्छेद 112 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जायेः—

'112. (1) Special leave to appeal by the Supreme Court. The Supreme Court may, in its discretion, grant special leave to appeal from any judgment, decree, determination, sentence or order in any cause or matter passed or made by any court or tribunal in the territory of India.

(2) Nothing in clause (1) of this article shall apply to any judgment, determination, sentence or order passed or made by any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.'

[112. (1) अपील के लिए उच्चतम न्यायालय की विशेष इजाजत। उच्चतम न्यायालय, स्वविवेक से, भारत राज्य-क्षेत्र में के किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा किसी वाद या विषय में दिये हुए किसी निर्णय, आज्ञप्ति, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश की अपील के लिये विशेष इजाजत दे सकेगा।

(2) सशस्त्र बलों से सम्बद्ध किसी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा पारित या दत्त किसी निर्णय, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश को खंड (1) की कोई बात लागू न होगी।]"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 112, संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 203 में, निम्न खंड जोड़ दिया जाये:—

'(4) Nothing in this article shall be deemed to extend the powers of superintendence of a High Court over any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.'

[(4) इस अनुच्छेद की कोई बात उच्च न्यायालय को सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण पर अधीक्षण की शक्तियां देने वाली न समझी जायेगी।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 122क

***श्री टी.टी. कृष्णामाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 122क में, 'In this Chapter' इन शब्दों के पश्चात्, 'and in Chapter VII of Part VI of this Constitution' ये शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

यह बहुत साधारण-सा मामला है। अनुच्छेद 122क में संविधान के निर्वचन का विषय है, जहां तक उच्चतम न्यायालय का सम्बन्ध है। अब हम यह कहना चाहते हैं कि यह खण्ड उच्च न्यायालय विषयक अध्याय पर भी लागू होगा, जहां तक विधि के सारवान प्रश्न के निर्देश से संविधान के निर्वचन का सम्बन्ध है। यह ऐसी भूल है जिस पर उस समय ध्यान नहीं गया था अब यह अनुच्छेद पारित किया गया था और यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें कोई सारवान प्रश्न अंतर्ग्रस्त हो। यह तो उस भूल का ही सुधार करना है।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 122क में, 'In this Chapter' इन शब्दों के पश्चात्, 'and in Chapter VII of Part VI of this Constitution' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 130

***अध्यक्षः** हम अनुच्छेद 130 को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 130 के खंड (1) में, 'may be exercised by him' इन शब्दों के स्थान पर, 'shall be exercised, by him either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान, आज सदन ने अनुच्छेद 42 के विषय में जो राष्ट्रपति के विषय में है, कुछ चर्चा के पश्चात् एक ऐसा ही अनुच्छेद पारित किया है। हम राज्यपाल की कार्यपालिका शक्तियों के विषय में भी ऐसे ही शब्द रखना चाहते हैं।

***अध्यक्षः** श्री कामत का दूसरे अनुच्छेद पर एक संशोधन था। शायद इस पर भी ऐसा संशोधन है। क्या इस पर चर्चा करना आवश्यक है?

***श्री एच.वी. कामतः** मेरे विचार में वे गलती को दोहरा रहे हैं। मैं अपने संशोधन को पेश नहीं करता।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 130 के खंड (1) में, 'may be exercised by him' इन शब्दों के स्थान पर, 'shall be exercised by him either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 169

***अध्यक्षः** हम अनुच्छेद 169 को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 169 के खंड (3) के स्थान पर, निम्न खंड रख दिया जाये:–

'(3) In other respects, privileges, immunities and powers of a House of the Legislature of a State and of the members and the committees of a House of such Legislature shall be such as may from time to time be defined by the Legislature by law, and until so defined, shall be those of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom and of its members and committees at the commencement of this Constitution.'

[(3) अन्य बातों में राज्य के विधान-मंडल के प्रत्येक सदन की, ऐसे विधान मंडल के तथा प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की, शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी, जैसी वह विधान-मंडल, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे, तथा जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के आरम्भ पर इंग्लिस्तान की पार्लियामेंट के हाउस ऑफ कामन्स की तथा उसके सदस्यों और समितियों की हैं।]"

यह उसी संशोधन के समान है जो अनुच्छेद 85 के खंड (3) पर प्रस्तावित किया गया था और सदन ने उसे स्वीकार किया था और हमारा उद्देश्य विधान-मंडल के सदनों की शक्तियों के विषय में, विधान-मंडलों के सदनों की समितियों के सदस्यों की शक्तियों और विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों के विषय में ऐसे ही उपबन्ध रखना है।

***अध्यक्षः** हमने संसद के विषय में अभी ऐसा ही उपबन्ध पारित किया है। यह राज्यों के विधान मंडलों के सम्बन्ध में है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 162 के खंड (3) के स्थान पर, निम्न खंड रख दिया जायेः—

'(3) In other respects, privileges, immunities and powers of a House of the Legislature of a State and of the members and the committees of a House of such Legislature shall be such as may from time to time be defined by the Legislature by law, and until so defined, shall be those of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom and of its members and committees at the commencement of this Constitution.' "

[(3) अन्य बातों में राज्य के विधान-मंडल के प्रत्येक सदन की, ऐसे विधान मंडल के तथा प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की, शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी, जैसी वह विधान-मंडल, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे, तथा जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के आरम्भ पर इंग्लिस्तान की पार्लियामेंट के हाउस ऑफ कामन्स की तथा उसके सदस्यों और समितियों की हैं।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 213क

***अध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 213क को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 213क के खंड (1) में, 'for the purposes of this Constitution' इन शब्दों के स्थान पर 'for all or any of the purposes of this Constitution' ये शब्द रख दिये जायें।"

यह संशोधन प्रथम अनुसूची के भाग 2 के राज्यों के उच्च न्यायालयों के सम्बन्ध में है और यह भाषा मूल भाषा का विस्तार मात्र है और इस विस्तार पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती। मुझे वैधानिक परामर्शदाताओं ने मंत्रणा दी है कि यह आवश्यक है अत: यह संशोधन पेश किया जा रहा है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मुझे भय है कि हम बहुत से व्यर्थ संशोधन रख रहे हैं।

***अध्यक्ष:** क्या कोई कुछ कहना चाहता है? श्री सन्तानम् का ख्याल है कि यह अनावश्यक है और पं. भार्गव का भी यही ख्याल है। श्री कृष्णमाचारी, क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** इस मामले में मुझे भय है कि हमें अपने परामर्शदाताओं की बात को मानना होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** चाहे उन्होंने मूल प्रारूप में कोई गलती भी कर दी हो फिर भी, जब तक अनिवार्य न हो तब तक हमारे समक्ष इस समय कोई संशोधन पेश नहीं किया जाना चाहिये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मुझे भय है कि हमने एक अन्य अनुच्छेद में एक और गलती की है यदि मैं अपने माननीय मित्र भी सन्तानम के तर्क को स्वीकार करूं। हमने 303, खंड (1) मद (11) उप-मद (2) में गलती की है। उसमें परिभाषा में लिखा है:

"any other court in the territory of India which may be declared by Parliament by law to be a High Court for all or any of the purposes of this Constitution."

यदि हम उच्च न्यायालय की परिभाषा में ये शब्द रखें तो, चाहे यह इस सदन के माननीय सदस्यों को कितना ही अनावश्यक क्यों न जंचे, फिर भी मैंने सोचा कि इसे उसी परिभाषा के अनुरूप बनाना सबसे अच्छा रहेगा जो इस सदन के अनुच्छेद के निर्वचन में सचमुच मुख्य अंग होगी।

***एक माननीय सदस्यः** यदि वे नितान्त आवश्यक हैं तो उन्हें तीसरे पठन के समय पेश किया जा सकता है।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता कि इस पर कोई वास्तविक विरोध है किन्तु सदस्य इसे अनावश्यक समझते हैं:

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 213क के खंड (1) में, 'for the purposes of Constitution' इन शब्दों के स्थान पर 'for all or any of the purposes of this Constitution' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 215 क

***अध्यक्षः** हम 215क को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 215क को हटा दिया जाये।"

यह अनुच्छेद अनुसूचित और आदिम जातीय क्षेत्रों के विषय में है। वह इस प्रकार है:

"In this Constitution the expression 'scheduled areas' means the areas specified in Parts I to VII of the Table appended to paragraph 18 of the Fifth Schedule in relation to the States to which those parts respectively relate subject to any order made under sub-paragraph (2) of that paragraph."

फिर आदिमजातीय क्षेत्रों की परिभाषा पुनः दी गई है।

श्रीमान, सदन ने पंचम तथा षष्ट अनुसूची पारित कर दी है जिनमें वे सब बातें आ जाती हैं जो अनुच्छेद 215क के दो खंडों में अंतर्विष्ट हैं।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 215क को हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** प्रस्तावना को लेने से पूर्व एक और मद लेनी है।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान, मुझे इस पर आपत्ति है कि प्रस्तावना को दिन के अंत में लिया जाये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** हमने प्रस्तावना को पेश नहीं किया है। मेरा सुझाव है कि अनुच्छेद 13 को कल तक के लिये उठा रखा जाये।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, आपने 445 को नहीं रखा।

***अध्यक्ष:** यह आज की कार्यावली में नहीं है। मेरे विचार में इसमें, अनुच्छेद 13 के अतिरिक्त, सब अनुच्छेद आ जाते हैं जो आज की कार्यावली में हैं। सुझाव यह है कि हम अनुच्छेद 13 को कल लें क्योंकि कुछ सदस्यों ने संशोधनों की सूचना दी है और वे विचारार्थ कुछ अधिक समय चाहते हैं। श्री सिधवा—क्या आपने 302कक का निदश किया है? यह कल आ रहा है। क्या हम प्रस्तावना को कल ले लें?

***माननीय सदस्यगण:** कल।

***अध्यक्ष:** आज जो पत्र घुमाया गया है उसमें कुछ अन्य अनुच्छेद भी हैं। हमें उन्हें कल प्रस्तावना के साथ ही निबटाना होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मसौदा समिति विचार कर सकती है कि क्या उनमें से कोई अनिवार्य है; अन्यथा वे आनुषंगिक संशोधनों के रूप में तीसरे पठन में पेश हो सकते हैं। हमें ऐसे संशोधनों पर समय खर्च नहीं करना चाहिये।

***अध्यक्ष:** जो खंड पारित हो चुके हैं उन पर संशोधनों के विषय में अधिक कुछ नहीं है। अन्य सारवान प्रस्थापनायें हैं। हां, मसौदा समिति स्वभावत: विचार तो करेगी ही कि इन संशोधनों पर जोर दिया जाये या नहीं।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या हम यह समझ लें कि कल सायंकाल तक हम सत्र को समाप्त कर देंगे?

***अध्यक्ष:** यह सब आप पर निर्भर है। मसौदा समिति आपसे अलग नहीं है। उसमें सदन के सब शामिल हैं।

तो फिर हम कल किस समय तक के लिये स्थगित होंगे? हम कल कब समवेत् होंगे?

***माननीय सदस्यगण:** कल प्रात:काल, नौ बजे।

***अध्यक्ष:** बहुत अच्छा, यदि सदन की यही इच्छा है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। हम 9 बजे समवेत् हो सकते हैं, ताकि हमें इसको समाप्त करने के लिये चार घंटे मिल जायें।

सदन कल प्रात: के 9 बजे तक के लिये स्थगित होता है।

तत्पश्चात् सभा सोमवार, तारीख 17 अक्तूबर 1949 के 9 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

GIPD–HS-195 PSD–27-11-52–320.

पुस्तक संख्या 8 खण्ड X से XII -06 अक्टूबर,1949 से 24 जनवरी,1950

खण्ड X से XII (क) पुस्तक संख्या-8 दिनांक 24.01.1949

भारतीय संविधान सभा
(भारतीय विधान परिषद)
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट
(हिन्दी संस्करण)

लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली द्वारा पुनर्मुद्रित

खण्ड XII
पुस्तक सं. 10

24.1.1950

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली द्वारा पुनर्मुद्रित

द्वितीय पुनर्मुद्रण 2014

जैनको आर्ट इण्डिया, 13/10, डब्ल्यूईए, करोल बाग, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित

भारतीय संविधान सभा

अध्यक्ष :

माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद

उपाध्यक्ष :

डा. एच.सी. मुखर्जी

संवैधानिक सलाहकार :

सर बी. एन. राव, *सी.आई.ई.*

सचिव :

श्री एच.वी.आर. आयंगर

सी.आई.ई., आई.सी.एस.

संयुक्त सचिव :

श्री एस.एन. मुखर्जी

उप सचिव :

श्री जुगल किशोर खन्ना

अवर सचिव :

प्रो. बाल कृष्ण

मार्शल :

सूबेदार मेजर हरबन्स राय जैदका

Con. 3. XII.1.49
320

अंक 12

संख्या 1

मंगलवार
24 जनवरी
सन् 1950 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	4253
राष्ट्रगान के सम्बन्ध में वक्तव्य	4253
नवीन सदस्यों का निर्वाचन	4253-4255
भारत के राष्ट्रपति का निर्वाचन	4255-4260
संविधान के हिन्दी संस्करण पर हस्ताक्षर	4260-4261
संविधान पर हस्ताक्षर	4261-4262

भारतीय संविधान सभा

मंगलवार, 24 जनवरी, सन् 1950 ई.

भारतीय संविधान-सभा, कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रात: ग्यारह बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्यों ने शपथ ग्रहण की और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:—

श्री रत्नप्पा भरमप्पा कुम्भार (बम्बई राज्य)

डॉ. वाई.एस. परमार (हिमाचल प्रदेश)

राष्ट्रगान के सम्बन्ध में वक्तव्य

*__अध्यक्ष:__ इस सभा ने अभी एक प्रश्न पर विचार नहीं किया है। वह प्रश्न राष्ट्र-गान का प्रश्न है। एक समय यह विचार किया गया था कि इस विषय को सभा के समक्ष रखा जाये और वह एक प्रस्ताव द्वारा इसके सम्बन्ध में निर्णय करे। किन्तु अब यह समझा गया है कि राष्ट्र-गान के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव स्वीकार करके रस्मी तौर से निर्णय करने के स्थान पर मैं ही एक वक्तव्य दे दूं। इसलिये मैं यह वक्तव्य देता हूं।

जिस गान के शब्द तथा स्वर 'जन-गण-मन' के नाम से विख्यात हैं वह भारत का राष्ट्रगान है किन्तु उसके शब्दों में सरकार की आज्ञा से यथोचित अवसर पर हेर फेर किया जा सकता है। वंदे मातरम्' के गान का जिस का भारतीय स्वतन्त्रता के संग्राम में ऐतिहासिक महत्व रहा है, 'जन, गण, मन' के समान ही सम्मान किया जायेगा और उसका पद उसके समान ही होगा (*हर्षध्वनि*)। मुझे आशा है कि इससे सदस्यों को संतोष हो जायेगा।

नवीन सदस्यों का निर्वाचन

*__श्री बी. दास__ (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान, पिछली बार, सभा विसर्जित करने के पूर्व हमने आपको, अर्थात् संविधान सभा के माननीय अध्यक्ष को उन स्थानों को भरने के लिये, जिन्हें ऐसे लोगों ने रिक्त किया है जो अब इस सभा के

[श्री बी. दास]

सदस्य नहीं रह गये हैं, प्रान्तीय सरकारों तथा भारत सरकार को निर्देश देने के लिए पूर्ण शक्ति प्रदान की थी। इसके अतिरिक्त हमने समाचार-पत्रों में पढ़ा कि माननीय प्रधान मंत्री महोदय ने संसद के लिये अधिक महिलाओं को निर्वाचित करने के सम्बन्ध में एक वक्तव्य दिया है। अधिक महिलाओं को निर्वाचित करने के सम्बन्ध में हमने राष्ट्रपति डॉ. पट्टाभी सीतारमय्या का भी एक वक्तव्य देखा है।

*__एक माननीय सदस्यः__ श्रीमान, मुझे एक औचित्य प्रश्न करना है।

*__श्री बी. दासः__ अब इस अवसर पर कोई औचित्य प्रश्न नहीं किया जा सकता। मेरा निवेदन है कि वर्तमान स्थिति यह है कि संयुक्त प्रान्त से महिलाओं की तीन रिक्त स्थानों के लिये दो महिलाएं भेजी गई हैं। उड़ीसा प्रान्त से कोई महिला सदस्य नहीं भेजी गई है। अन्य किसी प्रान्त ने महिला सदस्यों को भेजने के लिये विशेष प्रयास नहीं किया है। महिलाओं की संख्या जन संख्या की 50 प्रतिशत है। मैं नहीं चाहता कि अगले निर्वाचन में वे हमसे इस कारण संघर्ष करें। मैं नहीं चाहता कि स्त्रियों और पुरुषों के बीच भीषण संघर्ष हो।

*__अध्यक्षः__ मेरे विचार से यदि आप केवल एक प्रश्न पूछें तो मैं उसका उत्तर दे दूंगा।

*__श्री एच.वी. कामत__ (मध्यप्रान्त और बरारः जनरल): श्रीमान, क्या मैं आपसे प्रार्थना कर सकता हूं कि कृपा करके बताया जाये कि इस सभा में हैदराबाद का प्रतिनिधित्व करने के लिये क्या कोई कदम उठाये गये हैं और यदि उठाये गये हैं तो इस समय इस सम्बन्ध में स्थिति क्या है? वही एक ऐसा राज्य है जिसका अभी तक कोई प्रतिनिधि नहीं आया है।

*__अध्यक्षः__ मैं प्रश्नों का उत्तर एक-एक करके दूंगा। जहां तक उन स्थानों को भरने का सम्बन्ध है, जो ऐसे सदस्यों के हट जाने से रिक्त हुए हैं जो प्रान्तीय विधान मंडलों के भी सदस्य हैं, तत्विषयक नियमों को संशोधित किया गया है और उन नियमों के अनुसार निर्वाचन किये गये हैं। सभा के निर्णय के अधीन तथा उन नियमों के अधीन महिलाओं के लिये कोई स्थान रक्षित नहीं किये गये हैं। यह निर्वाचकों पर ही निर्भर है कि वे महिलाओं को निर्वाचित करें या न करें। जो व्यक्ति निर्वाचित हुए हैं वे इस सभा में आये हैं। हम किन्हीं निर्वाचकों को केवल महिलाओं को ही निर्वाचित करने के लिये विवश नहीं कर सकते थे।

दूसरे प्रश्न के सम्बन्ध में मैं कह नहीं सकता कि कौन से कदम उठाये गये हैं और कौन से कदम नहीं उठाये गये हैं। वास्तव में इस विषय से सरकार का ही सम्बन्ध है।

*__श्री एच.वी. कामतः__ क्या मैं जान सकता हूं कि आपके कार्यालय से क्या कोई निदेश दिये गये थे?

***अध्यक्षः** इस सभा में जिन लोगों को सदस्य भेजने का अधिकार था उन सभी से हमने कहा कि वे अपने प्रतिनिधि भेजें। उनसे यह कहा गया था और उसके पश्चात् और कोई कदम नहीं उठाया गया है।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): क्या मैं जान सकता हूं कि उन स्थानों को, जिन्हें अनुसूचित जातियों के सदस्यों ने रिक्त किया था, आदिवासियों के सदस्यों द्वारा भरने के लिए आपने, अथवा आपके कार्यालय ने, क्या कोई निदेश दिये थे?

***अध्यक्षः** मेरे विचार से इस प्रकार के कोई निदेश नहीं दिये गये थे।

***श्री एच.जे. खांडेकरः** किन्तु कुछ प्रान्तों को यह निदेश दिया गया था कि हरिजनों द्वारा रिक्त किये हुए स्थान आदिवासी सदस्यों द्वारा भरे जायें।

***अध्यक्षः** मैं कह नहीं सकता।

***श्री एच.जे. खांडेकरः** क्या इस प्रकार के कोई निदेश उड़ीसा को दिये गये थे?

***अध्यक्षः** मैं कह नहीं सकता।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेनाः** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): क्या मैं यह जान सकता हूं कि क्या संविधान का कोई हिन्दी अनुवाद तैयार किया गया है?

***अध्यक्षः** जी हां, वह तैयार है।

***श्री एच.जे. खांडेकरः** क्या मैं आपसे प्रार्थना कर सकता हूं कि आप उड़ीसा के सम्बन्ध में इसकी पूछताछ करें कि इस सभा के एक हरिजन के स्थान के लिये क्या कोई आदिवासी सदस्य निर्वाचित किया गया है?

***अध्यक्षः** यदि मैं इस पद पर रहा तो मैं इस सम्बन्ध में अवश्य पूछताछ करूंगा।

भारत के राष्ट्रपति का निर्वाचन

***अध्यक्षः** अब निर्वाचन का परिणाम घोषित किया जायेगा। निर्वाचनाधिकारी तथा संविधान सभा के सचिव श्री एच.वी.आर. आयंगर उसे घोषित करें।

***श्री एच.वी.आर. आयंगर** (निर्वाचनाधिकारी तथा संविधान सभा के सचिव): अध्यक्ष महोदय मुझे माननीय सदस्यों को यह सूचित करना है कि भारत के राष्ट्रपति-पद के लिए केवल एक मनोनयन पत्र प्राप्त हुआ है। उम्मीदवार का नाम डॉ. राजेन्द्र प्रसाद है (*उच्च और लगातार हर्षध्वनि*)। उनका नाम पंडित जवाहरलाल

[श्री एच.वी.आर. आयंगर]

नेहरू ने प्रस्तावित किया है (*पुन: हर्षध्वनि*)। और उसका समर्थन सरदार वल्लभभाई पटेल ने किया है (*लगातार हर्षध्वनि*)। राष्ट्रपति के निर्वाचन सम्बन्धी नियमों के नियम 8 के उपनियम (1) के अधीन मैं घोषित करता हूं कि भारत के राष्ट्रपति पद के लिये डॉ. राजेन्द्र प्रसाद नियमानुसार निर्वाचित किये गये (*लगातार हर्षध्वनि*)।

*__माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू__ (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं अपनी ओर से तथा इस आदरणीय सभा के प्रत्येक सदस्य की ओर से आपको जो उच्च सम्मान प्रदान किया गया है उसके लिये बधाई देता हूं। तीन वर्ष से कुछ अधिक समय पूर्व हमने आपके नेतृत्व में संविधान सभा का कार्य आरम्भ किया था। इन तीन वर्षों में इस देश में ऐसी घटनाएं घटित हुईं कि उनसे देश का स्वरूप ही बदल गया। हमने उपद्रव का और संकट का सामना किया और भारतीय गणराज्य के लिये संविधान का निर्माण करते रहे। अब हमने वह कार्य समाप्त किया है। वह अध्याय हम समाप्त कर चुके हैं। हमें अब नये कार्य करने हैं। एक दो दिन में एक नवीन अध्याय का आरम्भ होगा। इन तीन संकटपूर्ण वर्षों में आपने हमें अपने सुयोग्य नेतृत्व का परिचय किया। किन्तु हममें से बहुत से लोगों को आप पिछले तेतीस वर्षों में स्वातन्त्र्य संग्राम के मोर्चे पर डटे रहने वाले भारतीय सैनिक के रूप में भी अपनी परिचय दे चुके थे (*हर्षध्वनि*)। श्रीमान, हम आपको अपना नेता समझकर, भारतीय गणराज्य का प्रधान समझ कर तथा एक ऐसा सखा समझ कर आपका स्वागत करते हैं जिन्होंने पिछली पीढ़ी में इस देश के संकटों तथा कष्टों का अडिग होकर सामना किया है। इस सभा ने आज एक कार्य सम्पन्न कर दिया है और अब इस सभा का अस्तित्व नहीं रहेगा, अथवा यों कहिये कि इसका स्वरूप बदल जायेगा और अब यह भारतीय गणराज्य की संसद का रूप धारण कर लेगी। बहुत पहले से हमारे ऊपर जिसका भार था उसे आज हमने पूरा कर दिया है। अब हमें अन्य कार्यों को पूरा करना है। जिस स्वप्न को हम वर्षों से देखते आ रहे थे वह आज पूरा हो गया है। किन्तु हमें अन्य स्वप्नों को तथा अन्य कार्यों को पूरा करना है और उन्हें पूरा करने के लिए अभी तक जितना परिश्रम किया गया है उससे कहीं अधिक परिश्रम करना है। हम सभी को यह जानकर संतोष हुआ है कि भविष्य के कार्यों और संघर्षों में हमें भारतीय गणराज्य के प्रधान के रूप में आपका नेतृत्व प्राप्त रहेगा। श्रीमान, इस गणराज्य के प्रति, जिसके आप सम्मानित राष्ट्रपति होंगे, मैं अपनी वफादारी तथा सत्यनिष्ठा प्रकट करता हूं (*लगातार हर्षध्वनि*)।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल__ (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय तथा मित्रो! यदि श्रीमान, आपकी आज्ञा हो तो इस पवित्र अवसर पर, जब आप राष्ट्र के प्रतिनिधियों के एकमत से राज्य के प्रधान चुने जा रहे हैं मैं भी आपकी

प्रशंसा में अपना योग देना चाहता हूं। माननीय प्रधान-मंत्री महोदय ने जो शब्द कहे हैं उनमें से प्रत्येक का मैं समर्थन करता हूं और आपको जो ऊंचा सम्मान प्रदान किया गया है। उसके लिये आपको बधाई देता हूं। तीन वर्ष से आप संविधान सभा के अध्यक्ष की हैसियत से काम करते रहे हैं और सदस्यों ने देखा है कि आपने इस सभा के कार्य का संचालन किस प्रकार किया है। अत्यधिक कार्य करने के कारण आपका स्वास्थ्य गिरने लगा था और एक समय तो हमें बहुत चिन्ता होने लगी थी। किन्तु परमात्मा की कृपा से आप को स्वास्थ्य-लाभ हुआ और आज यह हमारा सौभाग्य है कि आप भारतीय गणराज्य के प्रधान तथा प्रथम राष्ट्रपति निर्वाचित हुए हैं। भारत के इतिहास में आज का दिवस बहुत ही शुभ दिवस है। हमें इसमें कुछ भी संदेह नहीं है कि आपके बुद्धिबल, शान्त स्वभाव तथा सुन्दर व्यवहार के फलस्वरूप इस देश के मान तथा इसकी प्रतिष्ठा में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी तथा आपके ओजस्वी नेतृत्व में हमारा देश संसार के राष्ट्रों के बीच एक सम्मानित पद प्राप्त करेगा। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि वह हमें आपके प्रति सत्यनिष्ठा से वफादार होने, तथा ईश्वर ने आप पर जिस महान कार्य का भार डाला है उसमें पूर्ण सहयोग देने के लिये सद्बुद्धि प्रदान करे। हमें भविष्य में एक ही नाव में बैठकर तूफान का सामना करना है और समुद्र को पार करना है। आपको अपने मृदुल स्वभाव तथा निर्मल हृदय के कारण इस सभा के ही नहीं बल्कि सारे देश के प्रत्येक वर्ग का स्नेह प्राप्त है। आपको जो सम्मान प्रदान किया गया है उसके आप सर्वथा योग्य ही हैं। (*हर्षध्वनि*)।

***श्री बी. दासः** अध्यक्ष महोदय.........

***अध्यक्षः** श्री दास के बोलने के पूर्व मैं सदस्यों से निवेदन करना चाहता हूं कि इस प्रकार के अवसर पर यहां बैठकर ऐसी भावनाओं से परिपूर्ण भाषणों को सुनकर, जिनके योग्य मैं नहीं हूं, मुझे संकोच का ही अनुभव हो रहा है। इसलिये मैं सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि यदि वे बोलना ही चाहते हैं तो वे कुछ वाक्य कह कर ही संतोष कर लें।

***श्री बी. दास** (उड़ीसाः जनरल)**:** श्रीमान, मैं परमात्मा को धन्यवाद देता हूं कि आप भारतीय गणराज्य के प्रथम राष्ट्रपति निर्वाचित हुए हैं। दो हजार पांच सौ वर्ष पूर्व आपके प्रान्त में गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था, जिन्होंने सारे एशिया को शान्ति का संदेश सुनाया था। इस शताब्दी में भी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने अहिंसा द्वारा विश्व-शान्ति स्थापित करने का उपदेश दिया है। आप उनके एक महान अनुयायी हैं। मैं आपको बहुत वर्षों से जानता हूं। इसलिये मुझे पूरी आशा है कि भारत शासन करते हुए तो आप महात्मा गांधी के सिद्धांतों को व्यवहार में लायेंगे ही किन्तु सारे संसार को भी उनका संदेश सुनायेंगे। मनुष्यों के लोभ के कारण लोग सर्वत्र दुःखी हैं। भारत के उत्थान की भी आवश्यकता है। यह परमात्मा की ही

[श्री बी. दास]

इच्छा है कि आप हमारा पथप्रदर्शन कर रहे हैं और हमें अहिंसा के मार्ग से शान्ति की ओर तथा मनुष्यता के एक उच्च स्तर की ओर ले जा रहे हैं। मुझे आशा है कि आपके नेतृत्व में भारत विश्व शान्ति स्थापित करने तथा मनुष्यों को सुखी बनाने में समर्थ होगा।

*डॉ. एच.सी. मुखर्जी (पश्चिमी बंगाल: जनरल): श्रीमान, मैं एक विशेष राजनैतिक संगठन का सदस्य हूं किन्तु मैं यह कह सकता हूं कि इस प्रतिष्ठित पद के लिये आपका एकमत से निर्वाचित होना यह सिद्ध करता है कि आप को किसी बहुसंख्यक राजनीतिक दल ने नहीं निर्वाचित किया है बल्कि सारे राष्ट्र ने निर्वाचित किया है। आपकी सत्यनिष्ठा तथा निस्वार्थ सेवा के कारण ही सारे राष्ट्र ने आपको इस उच्चतम पद पर प्रतिष्ठित किया है। मैं कोई लम्बा भाषण नहीं देने जा रहा हूं क्योंकि आप यह नहीं चाहते हैं। मैं केवल ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि अपना कर्तव्य पालन करते हुए आप जो कार्य करें उससे आपका अपना अन्त:करण संतुष्ट हो और जिस राष्ट्र ने आपको निर्वाचित किया है वह संतुष्ट हो। आपसे राष्ट्रपिता अवश्य ही संतुष्ट होंगे क्योंकि जो कुछ हो रहा है उसे देखकर वे अवश्य ही प्रसन्न हो रहे होंगे। अन्त में मैं प्रार्थना करता हूं कि आपसे ईश्वर भी संतुष्ट हों। आप जो कार्य भी करें उसमें आप को ईश्वर का आशीर्वाद प्राप्त हो।

*मि. हुसैन इमाम (बिहार: मुस्लिम) अध्यक्ष महोदय, आज का दिन हम सभी के लिये और विशेषतया हम बिहारियों के लिये बहुत खुशी का दिन है क्योंकि आज शताब्दियों के पश्चात् आपके समान महान व्यक्तित्व रखने वाला बिहारी भारत की सेवा के लिये आगे बढ़ सका है। श्रीमान, इस सभा में हम सभी को आप नेकी का तथा बुद्धिमता और सहृदयता का परिचय मिला है और हम सभी को आपके निर्वाचित होने से प्रसन्नता हुई है। हम सभी लोग, चाहे हमारी जाति तथा हमारा धर्म और समुदाय कोई भी क्यों न हो, सच्चे हृदय से आपको बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि आप इस पद पर रह कर इसका मान तथा इस की प्रतिष्ठा बढ़ायेंगे और भारत के लोगों का हितसाधन करेंगे।

*अध्यक्ष: मैं आशा करता हूं कि सभा मुझे अब बहस बन्द करने की आज्ञा देगी क्योंकि इन तीन वर्षों में मैं पहली बार इसके लिये आग्रह कर रहा हूं।

*श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले (मद्रास: जनरल): श्रीमान, मैं सुदूर दक्षिण में स्थित भारत के तमिलनाडु प्रान्त से आया हूं और इस अवसर पर मैं आपको भारत के उच्चतम पद के लिये एक मत से निर्वाचित होने के लिये सच्चे हृदय से बधाई देता हूं क्योंकि इसी पद की छत्रछाया में भारत के भविष्य का स्वरूप निश्चित होगा। श्रीमान, आप हमेशा महात्मा गांधी के पद चिह्नों का ही अनुसरण

करते रहे हैं और भारत के पददलित लोगों के उत्थान के लिये आपने उन्हीं का आदर्श अपने सामने रखा है। श्रीमान, मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि आप दीर्घायु हों और पददलित, पीड़ित तथा अछूत लोगों को और उन लोगों को जो अब कानून की निगाह में अछूत नहीं रह गये है, ऊपर उठाते रहें।

***अध्यक्ष:** सभी सदस्य इस काल में मेरे साथ सहयोग करते आये हैं और मुझे आशा है आज अन्तिम दिन वे मुझे उससे वंचित न रखेंगे। इसलिये माननीय सदस्यों से मेरा अनुरोध है कि अब वे बहस बन्द करें और मुझे अधिक लज्जित न करें।

(सेठ गोविन्द दास बोलने के लिये माइक्रोफोन पर आये)

(विघ्न)

***अध्यक्ष:** मुझे आशा है कि यह सभा जिस प्रकार सभी अवसरों पर मेरे साथ सहयोग करती रही है उसी प्रकार इस अवसर पर भी मेरे साथ सहयोग करेगी। जो सदस्य बोलना चाहते हैं उनसे मैं प्रार्थना करता हूं कि वे न बोलें।

मैं इसे स्वीकार करता हूं कि यह एक पवित्र अवसर है। बहुत काल तक संग्राम करने के पश्चात् हमने एक मंजिल तय की है और अब हम दूसरी मंजिल की ओर बढ़ने जा रहे हैं। आपने कृपा करके मुझे बहुत बड़ी जिम्मेदारी सौंपी है। मेरा हमेशा यही विचार रहा है कि बधाई उस अवसर पर नहीं दी जानी चाहिये जब कोई व्यक्ति किसी पद पर नियुक्त किया जाता है बल्कि उस अवसर पर दी जानी चाहिये जब वह अपनी सेवा से निवृत होता है। मैं उस समय तक प्रतीक्षा करूंगा जब कि आपने मुझे जो सौंपा है उससे मैं निवृत्त हो जाऊंगा और इस पर विचार कर सकूंगा कि सभी ओर से तथा सभी मित्रों द्वारा मेरा जिस प्रकार विश्वास किया गया और मेरे प्रति जिस प्रकार सद्भावना दिखाई गई उसके योग्य मैं रहा या नहीं रहा। इन प्रशंसापूर्ण भाषणों में मैंने सीमित करने का प्रयास किया है किन्तु फिर भी मुझे उन्हें सुनना ही पड़ा और उन्हें सुनते हुए मुझे महाभारत के एक कथानक का स्मरण हो आया। उस ग्रन्थ में बहुत ही विषम स्थितियों का तथा उनके फलस्वरूप जो जटिल समस्याएं उठ खड़ी होती हैं और श्री कृष्ण उन्हें किस प्रकार हल करते हैं उसका वर्णन है। एक दिन अर्जुन ने यह प्रण किया कि सूर्यास्त के पूर्व मैं अमुक कार्य समाप्त कर दूंगा और यदि समाप्त न कर पाया तो चिता जला कर भस्म हो जाऊंगा। दुर्भाग्य से वे उसे पूरा नहीं कर सके। तब प्रश्न यह उठा कि क्या किया जाये। अपना प्रण पूरा करने के लिये उन्हें भस्म हो जाना चाहिये था किन्तु पांडव यह कैसे होने देते। साथ ही अर्जुन भी अपने प्रण पर अटल थे। श्री कृष्ण ने यह कहकर यह समस्या हल की थी "यदि आप बैठकर अपनी प्रशंसा करें, अथवा अन्य लोगों से अपनी प्रशंसा

[अध्यक्ष]

सुनें तो वह आत्मघात करने और भस्म होने के समान ही है। इसलिये आज ऐसा ही करें और आपका प्रण पूरा हो जायेगा।" प्राय: इसी भावना से मैंने इसी प्रकार के भाषणों को सुना है। मैंने यह अनुभव किया है कि मैं कई बातों को पूरा नहीं कर सका हूं और कई कार्यों को नहीं कर सका हूं और यह भी विचार किया है कि उन्हें पूरा करने का एक उपाय यह है कि इस प्रकार का आत्मघात कर लिया जाये। किन्तु यहां स्थिति भिन्न है। जब हमारे प्रधान मंत्री अथवा उपप्रधान मंत्री मेरे सम्बन्ध में भावना से कुछ कहते हैं तो मेरे लिये भी अपनी भावना का परिचय देना आवश्यक हो जाता है। हम पच्चीस वर्ष से अधिक काल तक बढ़ी घनिष्टता से एक साथ रहे हैं और हमने एक साथ कार्य किया है और संघर्ष किया है। हम कभी विचलित नहीं हुए और साथ ही सफल भी हुए हैं। आज मैं एक आसन पर बैठा हूं तो वे भी मेरे निकट ही अन्य आसनों पर बैठे हुए हैं तथा अन्य मित्र, जिनके साथ सम्बन्ध रहने का मुझे उतना ही गर्व है उन के निकट बैठेंगे और मेरी सहायता करते रहेंगे। जब मैं यह विचार करता हूं कि मुझे इस सभा के सभी सदस्यों तथा इस सभा के बाहर अनेक मित्रों की सद्भावना प्राप्त है तो मुझे विश्वास होता है कि जो कर्तव्य मुझे सौंपा गया है उसे मैं संतोषजनक ढंग से पूरा कर सकूंगा—इस कारण नहीं कि मैं उसे पूरा करने में समर्थ हूं बल्कि इस कारण कि सभी लोगों के प्रयत्नों के फलस्वरूप वह पूरा हो जायेगा।

इस समय देश को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है और मेरी यह धारणा है कि अब हमें जो कार्य करना है वह उस कार्य से भिन्न है जो हम दो वर्ष से करते आये हैं। उसके लिये अधिक लगन, अधिक सावधानी, अधिक तन्मयता और अधिक बलिदान की आवश्यकता है। मुझे आशा है कि देश ऐसे स्त्री पुरुषों को प्रतिनिधि बना कर भेजेगा जो कर्तव्य भार उठा सकेंगे और लोगों की ऊंची से ऊंची आकांक्षाओं को पूरा कर सकेंगे। इसके लिये ईश्वर हमें शक्ति दे।

संविधान के हिन्दी संस्करण पर हस्ताक्षर

***अध्यक्ष:** अब केवल दो कार्य शेष रह गये हैं। उनमें से एक संविधान के हिन्दी रूपान्तर का प्रमाणीकरण है। माननीय सदस्यों को स्मरण होगा कि इस सभा के एक प्रस्ताव द्वारा मुझे यह अधिकार दिया गया था कि मैं संविधान का अनुवाद हिन्दी में कराऊं और 26 जनवरी के पूर्व छपा दूं और प्रकाशित करा दूं। यह कार्य पूरा हो गया है। सभा ने अन्य भाषाओं में भी अनुवाद तैयार कराने, उन्हें छपाने तथा प्रकाशित कराने का अधिकार मुझे दिया था। वह कार्य आरम्भ तो किया गया है किन्तु अभी पूरा नहीं हुआ है।

मैं श्री घनश्याम सिंह गुप्त से निवेदन करता हूं कि वे हिन्दी अनुवाद को मुझे दें ताकि मैं उसे रस्मी तौर पर सभा के समक्ष रखूं और उसका प्रमाणीकरण कर दूं।

(माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्त ने अध्यक्ष महोदय को संविधान के हिन्दी अनुवाद की प्रतियां समर्पित कीं। तत्पश्चात् महोदय ने उन पर हस्ताक्षर किये।)

संविधान पर हस्ताक्षर

*__अध्यक्षः__ अब सदस्यों को केवल संविधान की प्रतियों पर हस्ताक्षर करने हैं। तीन प्रतियां तैयार हैं। एक अंग्रेज़ी की प्रति है जो हाथ से लिखी गई है और जिस पर कलाकारों ने चित्र अंकित किये हैं। दूसरी प्रति अंग्रेज़ी की छपी हुई प्रति है। तीसरी प्रति हाथ से लिखी हुई हिन्दी की प्रति है। तीनों प्रतियां मेज पर रख दी गई हैं। सदस्यों से प्रार्थना है कि वे एक-एक कर के आयें और प्रतियों पर हस्ताक्षर करें। विचार यह है कि इस सभा में वे इस समय जिस क्रम से बैठे हुए हैं उसी क्रम से उन्हें बुलाया जाये। प्रधान-मंत्री महोदय को सार्वजनिक कार्य के लिये शीघ्र जाना है, इस लिये मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि वे पहले हस्ताक्षर करें।

(माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू ने तत्पश्चात् संविधान की प्रतियों पर हस्ताक्षर किये।)

श्री अलगू राय शास्त्री (संयुक्त प्रान्तः जनरल): माननीय सभापति जी, मैं आप से एक प्रार्थना करना चाहता हूं और वह यह कि अब इस विधान-परिषद् का कार्य समाप्त हो गया है और उसका कार्यालय बन्द हो जायेगा। तो मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि जो कर्मचारी इसके कार्यालय में कार्य करते रहे हैं उनकी सेवायें किसी न किसी रूप में जारी रहनी चाहिये। ऐसा न हो कि 26 जनवरी को जब सारा देश आमोद-प्रमोद मनावे तो ये कर्मचारी उसमें हिस्सा न ले सकें जिसके कि वे पात्र हैं। बस, मैं इतना ही निवेदन करना चाहता हूं।

*__अध्यक्षः__ मैं इस सम्बन्ध में इतना कहना चाहता हूं कि इस सवाल को मैंने पहले ही से अपने सामने रखा है और गवर्नमेंट के लेजिस्लेटिव डिपार्टमेंट से और दूसरे डिपार्टमेंटों से लिखा पढ़ी की है कि जितने लोग हमारे दफ्तर में काम करते थे उनको, जहां तक हो सके, और दफ्तरों मैं जगहें दे दी जायें और इस बात की कोशिश हो रही है। मैं आशा करता हूं कि उनमें से अगर सब नहीं तो ज़्यादा से ज़्यादा आदमी काम में लग जायेंगे और जो बाकी रह जायेंगे उनके लिये भी कोशिश की जायेगी।

सदस्य अब दाहिनी ओर से अर्थात् जैसे कि वे अब बैठे हुए हैं, मद्रास की ओर से एक-एक करके आयें और एक-एक करके हस्ताक्षर करें।

(सदस्यों ने तत्पश्चात् संविधान की प्रतियों पर हस्ताक्षर किये।)

***अध्यक्ष:** माननीय सदस्यों से मेरा निवेदन है कि वे अपनी जगहों पर बैठ जायें और जब उनके नाम पुकारे जायें, यहां आकर हस्ताक्षर करें। श्री खन्ना क्रमानुसार सदस्यों के नाम पुकारेंगे।

(तत्पश्चात् अवशिष्ट सदस्यों ने संविधान की प्रतियों पर हस्ताक्षर किये और उसके पश्चात् अध्यक्ष महोदय ने उन पर हस्ताक्षर किये।)

***अध्यक्ष:** क्या किसी सदस्य महोदय ने अभी हस्ताक्षर नहीं किये हैं? यदि किसी ने नहीं किये हैं तो वे बाद में दफ्तर में जाकर हस्ताक्षर कर सकते हैं।

***माननीय सदस्य:** बन्दे मातरम्।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास: जनरल) श्रीमान यदि आपकी आज्ञा हो तो हम सभी "जन, गण, मन" गान गाना चाहते हैं।

***अध्यक्ष:** जी हां, आप गायें।

(श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी ने अन्य सदस्यों के साथ "जन, गण, मन" गान गाया। सभी सदस्य खड़े रहे।)

***अध्यक्ष:** "बंदे मातरम्।"

(तत्पश्चात् लक्ष्मीकांत मैत्र ने अन्य सदस्यों के साथ "बन्दे मातरम्" का गान गाया। सभी सदस्य खड़े रहे।)

***अध्यक्ष:** अब सभा अनिश्चित तिथि तक के लिये स्थगित की जाती है।

इसके पश्चात् संविधान सभा अनिश्चित तिथि तक के लिये स्थगित हो गई।

GIPD–HS-348PSD–8-12-53–320.